भारत के ऐतिहासिक एवं पर्यटन स्थल

रमेश चन्द्र

यह पुस्तक भारत और पड़ौसी देशों के 757 नगरों के इतिहास; भारतीय धर्म, संस्कृति, पुरातत्व तथा पर्यटन और साहसिक स्थलों का एक झरोखा है। नगरों के इतिहास और पर्यटन दोनों बातों को एक ही जगह समेटती हुई यह पुस्तक देश में अपनी तरह की पहली पुस्तक है और अपनी विस्तृति में अत्यधिक सूचनाप्रद तथा ज्ञानप्रद है। भारतीय इतिहास तथा पुरातत्व विज्ञान के छात्रों, शोधकर्ताओं, भारतीय प्रशासनिक सेवा (I.A.S.) तथा अन्य प्रतियोगी परीक्षाओं के उम्मीदवारों एवं पर्यटकों के लिए यह बहुत लाभदायक है। यह उनके लिए किसी एक ही जगह आसानी से उपलब्ध न होने वाली अनूठी जानकारी उपलब्ध कराती है। पुस्तक में दी गई सूचना प्रसिद्ध इतिहासकारों के शोध तथा विश्वविद्यालय-स्तरीय पाठ्य-पुस्तकों और देश के भिन्न-भिन्न राज्यों के पर्यटन कार्यालयों द्वारा उपलब्ध कराई गई सूचना पर आधारित है, अतः प्रामाणिक और संग्रहणीय भी है।

आई.ए.एस. और अन्य प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए विशेष रूप से उपयोगी

भारत के ऐतिहासिक एवं पर्यटन स्थल

रमेश चन्द्र

नीलकंठ प्रकाशन

नई दिल्ली-110 030

पूज्य माता-पिता को,
जिनका आशीर्वाद ही मेरी शक्ति है
और
पत्नी तथा बच्चों को,
जो मेरे प्रेरणा-स्रोत हैं।

I. पुस्तक प्रयोग विधि

पाठकों की सुविधा के लिए इस पुस्तक में स्थलों को पहले देश के राज्यों में बाँटा गया है। राज्यों और उनके अंतर्गत सभी स्थलों को शब्दकोश की भाँति देवनागरी लिपि के वर्णों के क्रम से रखा गया है। पुस्तक के हर पृष्ठ के ऊपरी बाएँ कोने पर राज्य का नाम और दाएँ कोने पर उस पृष्ठ के पहले स्थल का नाम दिया गया है। इनके अतिरिक्त पुस्तक के अंत में भी इन स्थलों की एक वर्णक्रमानुसार सूची दी गई है।

पुस्तक में वर्णित किसी स्थल को खोजने के लिए कृपया निम्नलिखित बातों पर ध्यान दें :

1) स्थलों का वर्णक्रम इस प्रकार देखें :
अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ, औ, अं, क, क्ष, ख, ग, घ, ङ, च, छ, ज, ज्ञ, झ, ञ, ट, ठ, ड, ड़, ढ, ढ़, ण, त, त्र, थ, द, ध, न, प, फ, ब, भ, म, य, र, ल, व, श, श्र, शृ, ष, स, ह।

2) व्यंजनों में पहले अनुनासिक (ँ) युक्त, फिर अनुस्वार (ं) युक्त और सबसे बाद में मात्रा वाले व्यंजनों को उनके क्रम से रखा गया है।

3) आधे वर्णों का क्रम पूरे वर्णों के बाद रखा गया है। तदनुसार मद्रास (म+द्+रास), प्रवरपुर (प्+र+वरपुर), ब्रह्मगिरि (ब्+र+ह्मगिरि) आदि को इसी क्रम से देखें।

4) पूरे वर्णों के बाद जो वर्ण स्पष्ट रूप से आधा दिखाई देता है, वह पहले और संयुक्त व्यंज़न में प्रयुक्त आधा वर्ण बाद में दिया गया है, यथा प्लासी और प्रतापगढ़ में से पहले प्लासी और फिर प्रतापगढ़ (प्+र+ता+प+गढ़) दिया गया है।

5) मोटे तौर पर वर्ण उसी क्रम से देखें, जिस क्रम से उनका स्थल के नाम में उच्चारण होता हो।

6) यदि इस विधि से कोई स्थल विशेष न मिले, तो पुस्तक के अंत में दी गई स्थलों की वर्णक्रमानुसार सूची देखें, जिसमें स्थल के साथ उसकी पृष्ठ संख्या भी दी गई है।

पुरोवाक्

वर्तमान युग सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का युग है। आज पहले की तुलना में यह कहीं अधिक सार्थक हो गया है कि हम राष्ट्रीय गौरव-स्थलों का परिचय न केवल राष्ट्र-प्रेमियों को अपितु विश्व के कोने-कोने से आने वाले समस्त पर्यटकों को भी कराएँ। "ग्लोबलाइजेशन" अर्थात् "भूमंडलीकरण" के इस युग में बाजारवाद के साथ-साथ परस्पर एक इकाई की तरफ अग्रसर होने और सद्भाव एवं समन्वय के लिए समर्पित होने की आवश्यकता पर भी बल दिया जा रहा है। आज विश्व की समस्त बाधाओं, दीवारों तथा अवरोधों को हटाकर हम संपूर्ण विश्व के एकीकरण की परिकल्पना को साकार करना चाहते हैं। भाषा के, सभ्यता के, रीति-रिवाजों के, परंपराओं के, खान-पान की वस्तुओं के, वेश-भूषा के, इतिहास के तथा इसी प्रकार सांस्कृतिक वैविध्य एवं निजता के बावजूद हम भाव एवं विचार के एक धरातल पर आना चाहते हैं। वास्तव में वैश्वीकरण के इस स्वप्न को चरितार्थ एवं साकार करने की दिशा में विश्व के अनेक राष्ट्र अब मन-वचन-कर्म से समर्पित हो चुके हैं। भारत तो यों भी "वसुधैव कुटुम्बकम्" की अवधारणा को जन्म देने वाले राष्ट्रों में जाना जाता है। भारतीय संस्कृति अनेकता में एकता तथा विविधता में एकरूपता की संकल्पना को पुष्ट करने वाली विलक्षण संस्कृति है। उसी अक्षुण्ण, अमर तथा अक्षर संस्कृति को, यहाँ के सांस्कृतिक-ऐतिहासिक स्थलों को, गरिमामयी इमारतों तथा गौरवान्वित करने वाले पर्यटन-स्थलों को, धर्म एवं शिक्षा-स्थलों को, राज्यों तथा राज्यों में स्थित शहरों को वर्णक्रमानुसार वर्णित करने वाला **यह अनूठा एवं अपूर्व ग्रंथ समस्त पर्यटन-लोक को चौंकाने वाला ग्रंथ है। इस ग्रंथ के लेखक श्री रमेश चन्द्र निसंदेह साधुवाद के पात्र हैं। उनके ज्ञान, उनकी प्रतिभा तथा उनके भौगोलिक-ऐतिहासिक बोध का यह सहज, स्पष्ट एवं प्रेरक प्रस्तुतीकरण न केवल प्रशंसनीय है अपितु स्तुत्य भी है। 'गागर में सागर' भरने की लैखकीय कला ने, चित्रात्मक भाषा ने, तथ्यात्मक समझ ने और सांस्कृतिक-सामाजिक पैठ ने इस पुस्तक के माध्यम से पर्यटन व्यवसाय की दिशा में अपूर्व एवं विलक्षण प्रतिमान स्थापित किए हैं।** श्री रमेश चन्द्र मूलतः भाषा, साहित्य एवं अनुवाद सेवी हैं। मानक भवन में कार्यरत लेखक की मानक दृष्टि एवं मानक सूझ-बूझ भी इस ग्रंथ की पृष्ठभूमि बनी हैं।

छह सौ से अधिक पृष्ठों के शोधात्मक वृति से तैयार किए गए इस सूचनात्मक, बोधात्मक एवं रचनात्मक ग्रंथ को यदि ऐतिहासिक, पुरातात्विक एवं सांस्कृतिक पर्यटन-स्थलों का 'एन्साइक्लोपीडिया' कहा जाए, तो तनिक भी अतिशयोक्ति नहीं होगी। यह ग्रंथ तमाम प्रतियोगी परीक्षाओं के विद्यार्थियों के लिए, राजनीति के खिलाड़ियों के लिए, इतिहासविदों, प्रशिक्षकों एवं अध्यापकों के लिए, प्रशासनिक सेवाओं में कार्यरत अधिकारियों के लिए, शोधार्थियों तथा पर्यटन-स्थलों का परिचय कराने वाले 'गाइड-कर्म' को समर्पित राष्ट्र-सेवियों के लिए, भौगोलिक बोध कराने वाली प्रतिभाओं के लिए तथा समाज एवं संस्कृति के चिंतकों के लिए रामबाण का काम करेगा। **वैज्ञानिक पद्धति तथा सुव्यवस्थित प्रक्रिया से तैयार की गई इस महत्त्वपूर्ण रचना की विशिष्टिताओं के संदर्भ में यही कहा जा सकता है—"हरि अनंत, हरि कथा अनंता"। वास्तव में जिसे भारत के स्वर्णिम अतीत का, विकासशील वर्तमान का तथा उज्ज्वल भविष्य का प्रामाणिक एवं रोचक बोध करना हो, उसे इस पुस्तक की शरण में जाना ही होगा। मैं समझ नही पा रहा हूँ कि क्या है जो इस की परिधि से बाहर रह गया है ? यही कारण है कि लेखक की स्पष्ट एवं सुलझी दृष्टि ने इसकी निर्विवाद उपादेयता को अधिक सशक्त बना दिया है।** इससे लेखक की बहुज्ञता का, सूक्ष्म दृष्टि का, गहन अध्ययन का, शोधक वृति का, ऐतिहासिक पकड़ का तथा सांस्कृतिक बोध का सहज ही परिचय हो जाता है। भारत के 757 नगरों के बहुआयामी पक्षों का ऐसा प्रामाणिक एवं दस्तावेजी लेखा-जोखा, भारतीय शासकों और उनके कालक्रम का तथ्यात्मक विवरण; राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री तथा भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशन स्थलों आदि संबंधी सूचनाएँ इस ग्रंथ को चार चाँद लगाते हैं, तो पुस्तक के अंत में दी गई स्थलों की वर्णक्रमानुसार सूची इसकी शक्ति एवं लेखक के गहन अनुभव का बोध कराती है।

कुल मिलाकर मैं श्री रमेश चन्द्र को शत्-शत् बधाई देता हूँ तथा पूरी निष्ठा एवं साधना से तैयार किए गए इस ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं पार्यटनिक अनुष्ठान को नमन करता हूँ। **एक रचनात्मक प्रेरणा का बीज-वपन इस पुस्तक के माध्यम से हुआ है।** लेखक वास्तव में अभिनंदन के पात्र हैं। **ऐसी दुर्लभ पुस्तक की प्रकाशन संस्था को भी हार्दिक बधाई !**

12 अप्रैल, 2000 ई०
रामनवमी

डॉ. पूरनचन्द टण्डन
निदेशक, भारतीय अनुवाद परिषद्

प्रस्तावना

नगरों के इतिहास की जिज्ञासा प्रबुद्ध व्यक्तियों की आम वृत्ति होती है। यह वृत्ति तब अधिक प्रखर रूप में सामने आया करती है, जब वह किसी नगर के पर्यटन दौरे पर हो। ऐसे समय यदि उसकी उस नगर विशेष के इतिहास तथा पर्यटन संबंधी जिज्ञासाओं का समाधान मिल जाए, तो उसे एक विशेष संतुष्टि होती है।

भारत और पड़ौसी देशों के 757 नगरों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को समेटते हुए इस पुस्तक में इसी तरह की जानकारी दी गई है। इसमें इन नगरों के कालक्रमिक इतिहास, शासकों, युद्धों, युद्ध-स्थलों, संधियों; पुरातात्विक स्थलों, शिला तथा स्तंभ लेखों, मठों, विहारों, चैत्यों, गुफाओं, शिल्पों; भौगोलिक स्थितियों, पर्यटन स्थलों, पशु-पक्षी विहारों, अभयारण्यों, समुद्री तटों, नदियों, सरोवरों, पार्कों, उद्यानों; स्कैटिंग, ट्रैकिंग, ग्लाइडिंग, राफ्टिंग, स्कीइंग, स्विमिंग, विंड सर्फिंग, बोटिंग स्थलों; पर्वतीय क्षेत्रों, रज्जु मार्गों, ग्लेशियरों तथा अन्य साहसिक स्थलों; धार्मिक स्थलों, जगह-जगह के धार्मिक विश्वासों, संस्कृतियों, मान्यताओं तथा मनोरंजन व ज्ञान-विज्ञान के स्थलों के साथ-साथ विभिन्न स्थानों पर उपलब्ध सुविधाओं की पूरी जानकारी दी गई है। इस प्रकार यह पुस्तक न केवल नगरों के इतिहास और पर्यटन के क्षेत्र के एक अभाव की पूर्ति करती है, बल्कि देश के धर्म, भूगोल, पुरातत्व, संस्कृति आदि का दिग्दर्शन कराकर सामान्य ज्ञान का विपुल भंडार भी खोलती है।

इस पुस्तक को ऐसी सब विशेषताओं से युक्त कर मुझे चिर संतोष मिला है। फिर भी मैं यह कहना चाहूँगा कि इसका सृजन इतिहास आदि की अनेक पुस्तकों का शोध करके किया गया है, जिनमें कई जगह घटनाओं, उनके कालों और उनकी विस्तृतियों तथा राजाओं के शासन कालों के बारे में तथा एक जैसी जानकारी न होकर अलग-अलग तरह की तथा कई जगह भ्रांति-मूलक जानकारियाँ देखने में आई हैं। किसी पुस्तक में कोई जानकारी या घटना अधूरी मिलती है, तो किसी में कोई। ऐसी स्थिति में घटनाओं को भिन्न-भिन्न स्रोतों से लेकर इस पुस्तक में उन्हें पूरा प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। इस प्रयास में किसी घटना, उसके काल अथवा उसकी विस्तृति के बारे में यदि कोई त्रुटि रह गई हो, तो पाठक इसे मेरी इसी विवशता के रूप में लें।

इस पुस्तक के सृजन के लिए जहाँ मेरे बड़ों तथा शुभचिंतकों का आशीर्वाद रहा है, वहीं मेरी धर्म-पत्नी तथा बच्चों का भी अकथनीय सहयोग रहा, जिसे मैं कभी भुला नहीं सकता। मैं अपने इस कार्य की इतिश्री इसी एहसास के साथ करता हूँ।

— रमेश चन्द्र

विषय-सूची

उड़ीसा

उत्तर प्रदेश

कर्नाटक

त्रिपुरा

दमन एवं दीव

दादरा और नगर हवेली

नागालैंड

पंजाब

पश्चिमी बंगाल

पांडिचेरी

बिहार

महाराष्ट्र

राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली

लक्षद्वीप समूह

सिक्किम

हरियाणा

हिमाचल प्रदेश

IV. भारतीय शासक और उनका कालक्रम

3250 - 2700 ई०पू०	सिंधु घाटी सभ्यता
2500 - 700 ई०पू०	आर्य सभ्यता
650 ई०पू०	शिशुनाग (मगध का राजा, राजधानी राजगृह)
599 - 527 ई०पू०	महावीर (वैशाली) (जैन धर्म के प्रवर्तक)
567 - 487 ई०पू०	महात्मा बुद्ध (लुंबिनी) (बौद्ध धर्म के प्रवर्तक)

हर्यंक कुल (547 ई०पू० - 345 ई०पू०)

547 - 495 ई०पू०	बिंबिसार (मगध का राजा)
495 - 462 ई०पू०	अजातशत्रु (मगध का राजा)
462 - 345 ई०पू०	अजातशत्रु के उत्तराधिकारी
345 ई०पू०	कालाशोक (शिशुनाग का पुत्र और हर्यंक कुल का अंतिम राजा, जिसको महापदम नंद ने मार दिया था।)

नंद वंश (345 ई०पू० - 322 ई०पू०)

345 - 335 ई०पू०	महापदम नंद (मगध का राजा)
335 - 322 ई०पू०	महापदम नंद के आठ पुत्र

मौर्य वंश (322 ई०पू० - 185 ई०पू०)

322 - 298 ई०पू०	चंद्रगुप्त मौर्य (मगध का शासक)
298 - 273 ई०पू०	बिन्दुसार
273 - 232 ई०पू०	अशोक
232 - 185 ई०पू०	अशोक के उत्तराधिकारी
185 ई०पू०	बृहदरथ (मौर्य वंश का अंतिम शासक)

सुंग वंश (185 ई०पू० - 73 ई०पू०)

185 - 148 ई०पू०	पुष्यमित्र सुंग

148 ई०पू०	अग्निमित्र
73 ई०पू०	देवभूमि (सुंग वंश का दसवाँ व अंतिम शासक)

कण्व वंश (73 ई०पू० - 28 ई०पू०)

73 ई०पू०	वासुदेव
28 ई०पू०	ससारामन वंश का चौथा और अंतिम शासक

सातवाहन (28 ई०पू० - 154 ई०)

28 ई०पू० - 106 ई०	सिमुक, कृष्ण, श्री शातकर्णी, ...हाला (सतरहवाँ राजा)
106 - 130 ई०	श्री गौतमीपुत्र शातकर्णी
130 - 154 ई०	श्री पुल्लुमवी
154 ई०	यज्ञश्री शातकर्णी

200 - 320 ई० भारतीय इतिहास का अंध काल

कुषाण वंश (40 ई० - 176 ई०)

40 - 75 ई०	कडफीसियस I
75 - 78 ई०	कडफीसियस II
78 - 102 ई०	कनिष्क
102 - 138 ई०	हुविष्क
152 - 176 ई०	वासुदेव

गुप्त वंश (320 ई० - 647 ई०)

320 - 335 ई०	चंद्रगुप्त I
335 - 375 ई०	समुद्रगुप्त
375 - 380 ई०	रामगुप्त
380 - 413 ई०	चंद्रगुप्त विक्रमादित्य (चंद्रगुप्त II)
413 - 455 ई०	कुमारगुप्त
455 - 467 ई०	स्कंदगुप्त
467 - 540 ई०	उत्तराधिकारी

छठी शताब्दी ई० पुष्यभूति(हूण)

वर्धन वंश(राजधानी थानेसर, फिर कन्नौज)

525 से 600 ई० तक	नरवर्धन, राज्यवर्धन प्रथम और आदित्यवर्धन
605 - 606 ई०	प्रभाकरवर्धन

605 - 606 ई०	राज्यवर्धन द्वितीय
606 - 647 ई०	हर्षवर्धन(शिलादित्य)
647 - 650 ई०	ध्रुवसेन द्वितीय(ध्रुवभट्ट बालादित्य) से धारसेन चतुर्थ तक(राजधानी वल्लभी)

चौहान वंश

सातवीं शताब्दी से 1192 ई० तक	वासुदेव से लेकर पृथ्वीराज चौहान तक (राजधानी अजमेर, फिर दिल्ली)

प्रतिहार वंश

780 ई० के आस-पास से 1090 ई० तक	वत्सराज से त्रिलोचनपाल तक(राजधानी कन्नौज)

गहड़वाल वंश

1090 से 1194 ई० तक	चंद्रदेव से जयचंद तक(राजधानी कन्नौज)

पाल वंश

780 से 1160 ई० तक	गोपाल प्रथम से मदनपाल तक(राजधानी गौड़)

सेन वंश

1160 से 1205 ई० तक	विजयसेन से लक्ष्मणसेन तक(राजधानी लखनौती)

पूर्वी चालुक्य

631 से 1060 ई० तक	विष्णुवर्धन से विजयादित्य द्वितीय तक(राजधानी वेंगी)

पश्चिमी चालुक्य

696 से 1200 ई० तक	विजयादित्य से सोमेश्वर चतुर्थ तक(राजधानी कल्याणी)

राष्ट्रकूट वंश

753 से 982 ई० तक	दंतिदुर्ग से इंद्र चतुर्थ तक(राजधानी मान्यखेट)

पल्लव वंश

275 से 891 ई० तक	सिंहवर्मा प्रथम से अपराजित तक(राजधानी काँची)

चोल वंश

846 से 1279 ई० तक	विजयालय से राजेंद्र चतुर्थ तक(राजधानी तंजावुर)

गुलाम वंश (1206 - 1290)

1206 - 1210	कुतुबुद्दीन ऐबक
1210 - 1211	आरामशाह
1211 - 1235	अल्तमश
1235 - 1236	रुकनुद्दीन
1236 - 1239	रजिया बेगम
1240 - 1242	बहरामशाह
1242 - 1246	मसूद
1246 - 1266	नसीरुद्दीन
1266 - 1286	बलबन
1286 - 1290	केकुबाद

खिलजी वंश (1290 - 1320)

1290 - 1296	जलालुद्दीन खिलजी
1296 - 1316	अलाउद्दीन खिलजी
1316 (35 दिन)	शाहबुद्दीन उमर
1316 (64 दिन)	मुबारक का छोटा भाई
1316 - 1320	मुबारकशाह
1320	खुसरो खाँ की हत्या

तुगलक वंश (1320 - 1412)

1320 - 1325	ग्यासुद्दीन (गाजी) तुगलक
1325 - 1351	मुहम्मद तुगलक
1351 - 1388	फिरोज तुगलक
1388	तुगलकशाह II
1388 - 1390	अबू बकर
1390 - 1394	मुहम्मद II
1394	सिकंदर
1394 - 1398	महमूद और नसरत
1398 - 1412	महमूद

सैयद वंश (1414 - 1451)

1414 - 1421	खिज्र खाँ

1421 - 1433	मुबारक II
1433 - 1443	मुहम्मदशाह IV
1443 - 1451	अलाउद्दीन आलमशाह

लोदी वंश (1451 - 1526)

1451 - 1488	बहलोल लोदी
1488 - 1517	सिकंदर लोदी
1517 - 1526	इब्राहिम लोदी

मुगल वंश (प्रथम काल) (1526 - 1540)

1526 - 1530	बाबर
1530 - 1540	हुमायूँ

सूर वंश (1540 - 1555)

1540 - 1545	शेरशाह
1545 - 1553	इस्लामशाह
1553 (3 दिन)	फिरोज
1553 - 1555	मुहम्मद आदिलशाह

मुगल वंश (द्वितीय काल) (1555 - 1707)

1555 - 1556	हुमायूँ
1556 - 1605	अकबर
1605 - 1627	जहाँगीर
1627 - 1658	शाहजहाँ
1658 - 1707	औरंगजेब
1707 - 1712	बहादुरशाह I
1712 - 1713	जहाँदारशाह
1713 - 1719	फरुखशियार
फर–जून. 1719	रफी-उद्-दाराजात
जून–सित. 1719	रफी-उद्-दौला
1719 - 1748	मुहम्मद शाह रंगीला
1748 - 1754	अहमदशाह
1754 - 1759	आलमगीर II

1759 - 1806	शाह आलम
1806 - 1837	अकबर II
1837 - 1857	बहादुरशाह II

ब्रिटिश गवर्नर जनरल

यूनाइटिड ईस्ट इंडिया कंपनी के निम्नलिखित गवर्नरों ने मुर्शिदाबाद से शासन किया :

1756 - 60	क्लाईव
1760 - 65	वांसीटार्ट
1765 - 67	क्लाईव
1767 - 69	वेरेलस्ट
1769 - 72	कार्टियर
1772 - 73	वारेन हेस्टिंग्ज

हेस्टिंग्ज ने 1773 में अपनी राजधानी मुर्शिदाबाद से कलकत्ता बदल ली थी। 1773 के रेगुलेटिंग एक्ट के अनुसार कलकत्ता में फोर्ट विलियम के निम्नलिखित गवर्नर-जनरल रहे :

1773 - फरवरी, 1785	वारेन हेस्टिंग्ज
फरवरी, 1785 - सितंबर 1786	सर जॉन मैक्फरसन (अस्थायी)
सितंबर, 1786 - 1793	लार्ड कार्नवालिस
1793 - मार्च, 1798	सर जॉन शोर
मार्च, 1798 - मई, 1798	सर ए. क्लार्क (अस्थायी)
मई, 1798 - जुलाई, 1805	लार्ड वेल्जली
जुलाई - अक्तूबर, 1805	लार्ड कार्नवालिस
अक्तूबर, 1805 - जुलाई, 1807	सर जार्ज बार्लो (अस्थायी)
जुलाई, 1807 - 4 अक्तूबर, 1813	लार्ड मिंटो ।
4 अक्तूबर, 1813 - जनवरी, 1823	मार्क्विस ऑफ हेस्टिंग्ज
जनवरी, 1823 - 1 अगस्त, 1823	जॉन एडम (अस्थायी)
1 अगस्त, 1823 - मार्च, 1828	लार्ड एम्हर्स्ट
मार्च, 1828 - 4 जुलाई, 1828	विलियम बटरवर्थ बेले (अस्थायी)
4 जुलाई, 1828 - 1833	लार्ड विलियम कैवेंडिश बैंटिक

भारत के गवर्नर जनरल
(1833 के चार्टर एक्ट के अनुसार)
(राजधानी कलकत्ता)

1833 - 20 मार्च, 1835	लार्ड विलियम कैवेंडिश बैंटिक
20 मार्च, 1835 - मार्च, 1836	सर चार्लेज (लार्ड) मेटकॉफ (अस्थायी)
मार्च, 1836 - फरवरी, 1842	बैरन ऑकलैंड
फरवरी, 1842 - जून, 1844	बैरन एलनबोरो
जून, 1844 - जुलाई, 1844	विलियम विल्बरफोर्स बर्ड (अस्थायी)
जुलाई, 1844 - जनवरी, 1848	सर हेनरी हार्डिंग
जनवरी, 1848 - फरवरी, 1856	लार्ड डलहौजी
फरवरी, 1856 - 1 नवंबर, 1858	लार्ड केनिंग

वायसराय
(महारानी विक्टोरिया की 1858 की घोषणा के अनुसार)
(राजधानी कलकत्ता)

1 नवंबर, 1858 - मार्च, 1862	लार्ड केनिंग
मार्च, 1862 - 1863	लार्ड ऐल्गिन
1863	सर राबर्ट नैपियर (अस्थायी)
1863 - जनवरी, 1864	सर विलियम टी. डेनिसन (अस्थायी)
जनवरी, 1864 - जनवरी, 1869	सर जॉन लारेंस
जनवरी, 1869 - 1872	लार्ड मेयो
1872	सर जॉन स्ट्रैची (अस्थायी)
1872	लार्ड नैपियर (अस्थायी)
मई, 1872 - अप्रैल, 1876	लार्ड नार्थब्रुक
अप्रैल, 1876 - जून, 1880	लार्ड लिटन
जून, 1880 - दिसंबर, 1884	लार्ड रिपन
दिसंबर, 1884 - दिसंबर, 1888	लार्ड डफरिन
दिसंबर, 1888 - जनवरी, 1894	लार्ड लैंसडाउन
जनवरी, 1894 - 6 जनवरी, 1899	लार्ड ऐल्गिन
6 जनवरी, 1899 - अप्रैल, 1904	लार्ड कर्जन
अप्रैल, 1904 - दिसंबर, 1904	लार्ड एंप्टहिल (अस्थायी)
दिसंबर, 1904 - नवंबर, 1905	लार्ड कर्जन
नवंबर, 1905 - नवंबर, 1910	लार्ड मिंटो II

नवंबर, 1910 - 1911	लार्ड हार्डिंग

1911 में ब्रिटिश भारत की राजधानी कलकत्ता से नई दिल्ली स्थानांतरित हो गई थी। नई दिल्ली से निम्नलिखित वायसरायों ने भारत पर शासन किया :

1911 - अप्रैल, 1916	लार्ड हार्डिंग
अप्रैल, 1916 - अप्रैल, 1921	लार्ड चैम्सफोर्ड
अप्रैल, 1921 - 1925	लार्ड रीडिंग
1925 - अप्रैल, 1926	लार्ड लिटन II (अस्थायी)
अप्रैल, 1926 - अप्रैल, 1931	लार्ड इरविन
1929	लार्ड गोशें(अस्थायी) (लार्ड इरविन की छुट्टी के दौरान)
अप्रैल, 1931 - मई, 1934	लार्ड विलिंगडन
मई, 1934 - अगस्त, 1934	सर जार्ज स्टैनले (कार्यवाहक)
18 अप्रैल, 1936 - 31 मार्च, 1937	लार्ड लिनलिथगो

गवर्नर जनरल और महारानी के प्रतिनिधि

(1935 के अधिनियम के अनुसार)

31 मार्च, 1937 - जून, 1938	लार्ड लिनलिथगो
जून, 1938 - अक्तूबर, 1938	लार्ड ब्राबोर्न (अस्थायी)
1938 - 1943	लार्ड लिनलिथगो
1943 - 1947	लार्ड वेवल
1947	लार्ड माउंटबेटन

स्वतंत्र भारत के राष्ट्राध्यक्ष और शासनाध्यक्ष

प्रथम गवर्नर जनरल

मार्च, 1947 - जून, 1948	लार्ड माउंटबेटन

प्रथम भारतीय गवर्नर जनरल

जून, 1948 - 26 जनवरी, 1950	चक्रवर्ती राजगोपालाचारी (राजाजी) (1878-1972)

राष्ट्रपति (राष्ट्राध्यक्ष)

26.1.1950 - 13.5.1962	डॉ. राजेन्द्र प्रसाद (1884-1963)
13.5.1962 - 13.5.1967	डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् (1888-1975)
13.5.1967 - 3.5.1969	डॉ. जाकिर हुसैन (1897-1969)

3.5.1969 - 20.7.1969	वराहगिरि वेंकटगिरि (कार्यवाहक)
20.7.1969 - 24.8.1969	न्यायमूर्ति मोहम्मद हिदायतुल्लाह (कार्यवाहक) (1905-1992)
24.8.1969 - 24.8.1974	वराहगिरि वेंकटगिरि (1884-1980)
24.8.1974 - 11.2.1977	फखरुद्दीन अली अहमद(1905-1977)
11.2.1977 - 25.7.1977	बी. डी. जती (जन्म 1913) (कार्यवाहक)
25.7.1977 - 25.7.1982	नीलम संजीव रेड्डी (1913-1996)
25.7.1982 - 25.7.1987	ज्ञानी जैल सिंह (1916-1994)
25.7.1987 - 25.7.1992	आर. वेंकटरमन (जन्म 1910)
25.7.1992 - 25.7.1997	डॉ. शंकर दयाल शर्मा (1918-2000)
25.7.1997 - आज तक	के. आर. नारायणन् (जन्म 1920)

प्रधान मंत्री (शासनाध्यक्ष)

2.9.1946 - 15.8.1947	जवाहर लाल नेहरू (स्वतंत्रता पूर्व की अंतरिम सरकार के प्रधान मंत्री)
15.8.1947 - 27.5.1964	जवाहर लाल नेहरू (स्वतंत्रता के बाद भारत के प्रथम प्रधान मंत्री) (1889-1964)
27.5.1964 - 9.6.1964	गुलजारी लाल नंदा (कार्यवाहक)
9.6.1964 - 11.1.1966	लाल बहादुर शास्त्री (1904-1966)
11.1.1966 - 24.1.1966	गुलजारी लाल नंदा (जन्म 1998) (कार्यवाहक)
24.1.1966 - 24.3.1977	इंदिरा गाँधी
24.3.1977 - 28.7.1979	मोरारजी देसाई (1896-1995)
28.7.1979 - 14.1.1980	चरण सिंह (1902-1987)
14.1.1980 - 31.10.1984	इंदिरा गाँधी (1917-1984)
31.10.1984 - 1.12.1989	राजीव गाँधी (1944-1991)
2.12.1989 - 10.11.1990	विश्वनाथ प्रताप सिंह (जन्म 1931)
10.11.1990 - 21.6.1991	चन्द्र शेखर (जन्म 1927)
21.6.1991 - 16.5.1996	पी. वी. नरसिम्हाराव (जन्म 1921)
16.5.1996 - 1.6.1996	अटल बिहारी वाजपेयी
1.6.1996 - 21.4.1997	एच. डी. देवगौड़ा (जन्म 1933)
21.4.1997 - 19.3.1998	इन्द्र कुमार गुजराल (जन्म 1933)
19.3.1998 - आज तक	अटल बिहारी वाजपेयी (जन्म 1926)

प्रधान सेनापति (तीनों सेनाओं के अध्यक्ष)

मार्च, 1947 - 1.1.1948	लार्ड माउंटबेटन
1.1. 1948 - 14.1.1949	जन. सर राय बुचर
15.1. 1949 - 14.1.1953	जन. के. ऐम. करियप्पा (बाद में ये देश के प्रथम फील्ड मार्शल हुए) (इनके बाद अब तक जन. ऐस. ऐच.
ऐफ. जे. मानेकशाह को ही 1.1. 1973 मार्शल	से 14.1.1973 तक फील्ड बनाया गया है)
15.1. 1953 - 31.3.1955	जन. महाराज राजेंद्र सिंहजी (1.4.1955 से इन्हें प्रथम
थल	सेनाध्यक्ष बना दिया गया)

इसके बाद भारत के राष्ट्रपति तीनों सेनाओं के प्रधान सेनापति हुए।

ψψψ

V. भारत—एक परिदृश्य

भारत का इतिहास 5000 वर्षों से भी अधिक पुराना है। पुरातत्व की दृष्टि से सिंधु घाटी सभ्यता भारत की प्राचीनतम सभ्यता है। देश की प्राचीनतम पुस्तक ऋग्वेद है। इसके अतिरिक्त यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, अट्ठारह पुराण, षड्दर्शन, स्मृतियाँ, ब्राह्मण, सूत्र, रामायण, महाभारत आदि भी देश की प्राचीनतम पुस्तकों में से हैं। देश में सतयुग में राजा हरिश्चंद्र, त्रेता युग में राजा दशरथ और उनके पुत्र श्री रामचंद्र तथा द्वापर युग में श्रीकृष्ण, कौरवों और पांडवों ने राज्य किया। इनके बाद सिंधु घाटी सभ्यता तथा वैदिक सभ्यता अस्तित्व में आईं। उन दिनों भारत में आधुनिक भारत, पाकिस्तान, बँग्ला देश, नेपाल, भूटान, बर्मा, अफगानिस्तान तथा ईरान और सोवियत संघ के कुछ भाग शामिल थे। तब इसका मानचित्र शेर की आकृति का होता था। इसका नामकरण शकुंतला एवं दुष्यंत के वीर तथा सिंहों से खेलने वाले पुत्र भरत के नाम पर हुआ। बाद में समय-समय पर देश के टुकड़े होते गए और यह आधुनिक भारत के रूप में रह गया। इतिहास के अनुसार इसके विभिन्न खंडों पर शिशुनाग, उद्यन, हर्यंक, नंद, मौर्य, सुंग, कण्व, सातवाहन, कुषाण, गुप्त, गुलाम, खिलजी, तुगलक, सैयद, लोदी तथा मुगल वंश के शासकों के अलावा हूणों, कुषाणों, शकों, वर्धनों, राष्ट्रकूटों, चालुक्यों, चोलों, चेदियों, पांड्यों, गंगों, पालों, प्रतिहारों, गहड़वालों, चौहानों, सिसोदियों, मराठों, पुर्तगालियों, डचों, फ्रांसीसियों, अंग्रेजों आदि ने समय-समय पर राज्य किया।

इतने सारे देशी-विदेशी शासकों से मुक्त होकर भारत अंततः 15 अगस्त, 1947 को स्वतंत्र हुआ। 26 नवंबर, 1949 को संविधान सभा ने भारत के संविधान को अंतिम रूप दिया। 26 जनवरी, 1950 से यह संविधान लागू हुआ और उसी दिन से देश एक गणतंत्र राज्य बन गया।

इस समय भारत प्रभुता संपन्न समाजवादी धर्म-निरपेक्ष जनतांत्रिक गणतंत्र है। देश में कुल मिलाकर 25 राज्य और 7 संघ शासित क्षेत्र हैं। देश का राष्ट्रपति देश की कार्यपालिका, न्यायपालिका और विधानपालिका तीनों अंगों का मुखिया है। वही देश का प्रधान सेनापति भी है। राज्यो में सरकार के इन अंगों का मुखिया राज्यपाल तथा शासन का मुखिया मुख्य मंत्री होता है।

1951 में देश अपनी योजनाएँ स्वयं बनाकर प्रगति के पथ पर अग्रसर हुआ। देश में प्रथम लोक सभा की प्रथम बैठक 13 मई, 1952 को हुई। पहली लोक सभा के पहले अध्यक्ष गणेश वासुदेव मावलंकार थे। देश के सर्वोच्च न्यायालय के पहले मुख्य न्यायाधीश हरी लाल जे. कानिया (26.1.1950--6.11.1951) थे।

भारत का कुल क्षेत्रफल 3227263 वर्ग किमी है। यह संसार का सातवाँ सबसे बड़ा देश, दसवाँ औद्योगिक देश तथा अंतरिक्ष में जाने वाला छठा देश है। इसके उत्तर में हिमालय पर्वत, दक्षिण में हिंद महासागर, पूर्व में बंगाल की खाड़ी तथ पश्चिम में अरब सागर है। देश की मुख्य भूमि 8°4' एवं 37°6' उत्तरी अक्षांश तथा 67°7' एवं 97°25' पूर्वी रेखांश के मध्य स्थित है। उत्तर से दक्षिण की दिशा में इसकी कुल लंबाई 3214 किमी तथा पूर्व से पश्चिम की दिशा में 2933 किमी है। मुख्य भूमि पर इसकी सीमा 15200 किमी लंबी है। द्वीपों को मिलाकर इसका सागर तट 7516.6 किमी लंबा है। 1991 की जनगणना के अनुसार देश की कुल जनसंख्या लगभग 85 करोड़ थी। देश में लिंग अनुपात 1000 : 927, जनसंख्या का घनत्व 267 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी तथा साक्षरता प्रतिशत 52.21 था।

देश की नृत्य परंपरा 2000 वर्ष पुरानी है। इसके विषय मिथकों, इतिहास, शास्त्रीय साहित्य, धर्म तथा संस्कृति पर आधारित हैं। देश का नृत्य मुख्य रूप से शास्त्रीय तथा लोक नृत्य दो वर्गों में विभाजित है। शास्त्रीय नृत्य, नृत्य के कठोर प्राचीन नियमानुशासन पर आधारित है। देश के मुख्य शास्त्रीय नृत्य भरत नाट्यम, कथकली, कथक, मणिपुरी, कूचीपूड़ी और उड़िया हैं। भरत नाटयम् का उदगम् स्थल तमिल नाडु है, परंतु अब इसकी व्याप्ति पूरे देश में है। कथकली केरल का नृत्य है। कथक नृत्य भारतीय तथा मुगल संस्कृति के सम्मिश्रण का परिणाम है तथा नृत्य की उत्तर भारतीय शैली है। मणिपुरी मणिपुर का तथा कूचीपूड़ी आंध्र प्रदेश का नृत्य है। उड़िया नृत्य का आयोजन कभी उड़ीसा के मंदिरों में किया जाता था, परंतु आज इसे कलाकार पूरे देश में प्रदर्शित करते हैं। देश के लोक तथा जन-जातीय नृत्य अनेक प्रकार के हैं और संख्या में भी अनेक हैं। देश में हिंदुस्तानी तथा कर्नाटक दो तरह के शास्त्रीय संगीत हैं।

VI. स्थल-विवरण

अंडेमान एवं निकोबार द्वीप समूह

भौगोलिक एवं सांस्कृतिक विवरण

अंडेमान एवं निकोबार द्वीप समूह 6^0 एवं 14^0 उत्तरी अक्षांश तथा 92^0 एवं 94^0 पूर्वी रेखांश के मध्य स्थित है। द्वीप समूह में कुल 572 छोटे-बड़े द्वीप हैं। इनमें से केवल 36 में ही मानव जीवन है। बंगाल की खाड़ी में स्थित यह द्वीप समूह कलकत्ता से 1255 किमी, चेन्नई से 1190 किमी और म्याँमार (बर्मा) के लिगारिश अंतरीप से 193 किमी है। द्वीप समूह में ग्रेट अंडमानी, अंग, जारवा और सैंटीनल चार हबशी जन-जातियाँ तथा निकोबारी और शाम्पेन दो मंगोलियाई जातियाँ हैं। इनमें से जारवा और सैंटीनल जाति के लोग अभी भी कपड़े नहीं पहनते। द्वीप समूह का क्षेत्रफल 8249 वर्ग किमी और जनसंख्या 3 लाख के आस-पास है। द्वीप समूह में अंडेमान तथा निकोबार नामक दो जिले हैं। द्वीप समूह की जनसंख्या का घनत्व 34 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी तथा साक्षरता दर 73 % है। संघ शासित क्षेत्र की 91% अर्थात् लगभग 7171 वर्ग किमी भूमि पर जंगल हैं। क्षेत्र की राजधानी पोर्ट ब्लेयर है। हिंदी, निकोबारी, मलयालम, बंगाली, तमिल और तेलुगु क्षेत्र की प्रमुख भाषाएँ हैं। अंडेमान द्वीप समूह की मुख्य फसलें धान तथा निकोबार द्वीप समूह की नारियल और सुपारी हैं। इनके अतिरिक्त क्षेत्र में दालें, तिलहन, आम, सपोता, संतरा, केला, पपीता, अनानास तथा जड़वाली फसलें भी होती हैं। क्षेत्र में काली मिर्च, लौंग, जायफल, दालचीनी, रबड़, खजूर और काजू की पैदावार भी होती है। क्षेत्र का तापमान वर्ष भर 31^0से और 23^0से के मध्य रहता है।

ऐतिहासिक विवरण

द्वीप समूह का आधुनिक इतिहास 1789 से आरंभ होता है। तब यहाँ ईस्ट इंडिया कपनी ने एक बस्ती बसाई थी। 1796 में उन्होंने इस बस्ती को छोड़ दिया

था। दूसरे विश्व युद्ध के दौरान नेताजी सुभाष चंद्र के अधीन आजाद हिंद फौज तथा जापानी सेना ने 1942 में अंडेमान और निकोबार द्वीपों पर कब्जा कर लिया था। ब्रिटिश सरकार ने 1945 में इन पर पुनः कब्जा करके इन्हें 1947 तक अपने आधिपत्य में रखा।

अंडेमान के प्रवाल (कोरल)

उत्सव

अंडेमान एवं निकोबार द्वीप समूह का प्रशासन दिसंबर-जनवरी में 15 दिन का द्वीप पर्यटन उत्सव मनाता है, जिसके दौरान सांस्कृतिक कार्यक्रम, नाव दौड़, जल-क्रीड़ा प्रतियोगिताएँ आदि आयोजित किए जाते हैं। हैवलॉक द्वीप में नेता जी सुभाष चन्द्र बोस के जन्म दिन के अवसर पर 23 जनवरी के आस-पास सुभाष मेला, जनवरी में ही स्वामी विवेकानंद के जन्म दिन पर नील द्वीप में विवेकानंद मेला और जनवरी-फरवरी में ब्लॉक मेला लगता है।

पर्यटन

क्षेत्र का परिवहन विभाग 11 मुख्य द्वीपों में अपनी बस सेवा चलाता है। द्वीप समूह के पर्यटन केंद्रों मे सेल्युलर जेल, राष्ट्रीय स्मारक, समुद्री जीव संग्रहालय, समुद्रिका, स्मृतिका संग्रहालय (रॉस द्वीप में), चॉथम आरा मिल, चिड़िया टापू, सीपी

घाट, हद्दो चिड़ियाघर, कारबिंज कोव तथा अन्य समुद्री तट, हम्फ्री गंज स्मारक तथा माउंट हैरियट मुख्य हैं। इनके अलावा वाइपर, नील, हैवलॉक, रंगट, मायाबंदर तथा डिगलीपुर द्वीपों में भी आकर्षक पर्यटक केंद्र हैं।

पर्यटन सम्बंधी औपचारिकताएँ

विदेशी पर्यटकों को अंडेमान एवं निकोबार द्वीप समूह में ठहरने के लिए परमिट लेना होता है। यह परमिट एक बार में 30 दिन के लिए दिया जाता है और उसके बाद पंद्रह दिन तक बढ़ाया जा सकता है। परमिट निम्नलिखित जगहों से प्राप्त किया जा सकता है :

i) पोर्ट ब्लेयर से (पोर्ट ब्लेयर पहुँचने पर),
ii) दिल्ली, मुम्बई, चेन्नई और कलकत्ता स्थित विदेशी पंजीकरण कार्यालयों से,
iii) विदेशों में स्थित भारतीय दूतावासों से, और
iv) दिल्ली, मुम्बई, चेन्नई और कलकत्ता हवाई अड्डों पर प्रव्रजन अधिकारी से।

इस परमिट से दिन के दौरान रिंक, रॉस, नारकोंडा, इंटरव्यू, ब्रादर, सिस्टर और बैरन द्वीप में (केवल समुद्री पोत में बैठे-बैठे) तथा रात के समय दक्षिण अंडेमान, मध्य अंडेमान (जारवा रिजर्व को छोड़कर), छोटा अंडेमान (जारवा रिजर्व को छोड़कर), नील, हैवलॉक, लॉग, डिगलीपुर, बरटॉग तथा महात्मा गाँधी समुद्री राष्ट्रीय उद्यान के द्वीप (बोट होबडे, ट्विन, तारमुगली, मलय और प्लुटो द्वीपों को छोड़कर तथा अनुमति लेकर) में ठहरा जा सकता है।

भारतीय पर्यटकों को अंडेमान द्वीप समूह जाने के लिए किसी परमिट की आवश्यकता नहीं है, परंतु निकोबार द्वीप समूह और अन्य जन-जातीय क्षेत्रों में जाने के लिए उन्हें परमिट लेना होता है। यह परमिट उपायुक्त, अंडेमान जिला, पोर्ट ब्लेयर से लेना होता है और अपवाद रूप में ही दिया जाता है।

पर्यटन संबंधी सुविधाएँ

संघ शासित क्षेत्र में ठहरने की पर्याप्त सुविधाएँ हैं। ऐबरडीन, कार्बिन्ज कोव तथा गाँधी पार्क में जल-क्रीड़ाओं, स्नोर्कलिंग तथा मनोरंजन की सुविधाएँ हैं। समुद्री तटों पर कुछ दिन बिताने के लिए हैवलॉक द्वीप में राधानगर बीच से टैंट किराये पर मिल जाते हैं। वंडूर में स्कूबा डाइविंग सोसायटी स्कूबा डाइविंग की सुविधा उपलब्ध कराती है। माउंट हैरियट से मधुबन तक तथा अन्य पथों की ट्रैकिंग के लिए अंडेमान टील हाउस से ट्रैकिंग उपकरण किराये पर मिल जाते हैं।

ध्यान देने योग्य बातें

पर्यटक इस बात का ध्यान रखें कि पोर्ट ब्लेयर हवाई अड्डे, गोदी, रक्षा प्रतिष्ठानों, नैवल व्हार्फ, धनीकरी बाँध और चॉथम आरा मिल का फोटो लेना वर्जित है। मैरीन नैशनल पार्क या किसी अभयारण्य का फोटो/वीडियो फिल्म लेने अथवा कोई अन्वेषण करने के लिए मुख्य वन्य जीव संरक्षक की अनुमति प्राप्त करें। पशु-पक्षियों का शिकार परमिट लेकर ही किया जा सकता है। द्वीप समूह से बाहर कोई जंगली जीव, ट्रॉफी, वस्तु इत्यादि ले जाने के लिए उप वन संरक्षक, वन्य जीव विभाग, पोर्ट ब्लेयर से पास लेना होता है। मत्स्य विभाग की विशेष अनुमति के बिना सी फैन और सी सैल साथ रखने वर्जित हैं। पर्यटक कोरल रीफ और वनों की सुरक्षा का ध्यान रखें। नैशनल पार्क में प्रवेश अनुमति लेकर ही करें। जीवित अथवा मरे हुए पशुओं और हरे या सूखे हुए पौधों को नष्ट न करें, अपनी जगह से न हटाएँ अथवा उनका संग्रह न करें। स्नोर्कलिंग/स्कूबा डाइविंग करते समय कोरल रीफ पर खड़े न हों। प्रवाल इकट्ठे न करें अथवा उन्हें नष्ट न करें। केवल प्राधिकृत टूरिस्ट गाइडों की सेवा ही लें। कोरल रीफों के बारे में अधिक से अधिक जानकारी लेने का प्रयास करें। सफाई का विशेष ध्यान रखें।
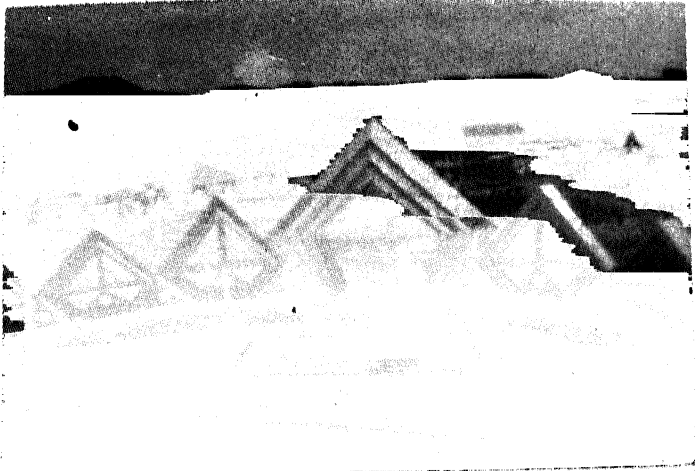
द्वीप पर्यटन उत्सव का एक दृश्य

1. उत्तरी रीफ द्वीप अभयारण्य यह अभयारण्य अंडेमान द्वीप समूह के उत्तर में है। इसकी स्थापना 1977 में की गई थी। यहाँ अंडमानी टील तथा

निकोबारी कबूतर अधिक देखने को मिलते हैं। यहाँ भ्रमण का सर्वोत्तम समय नवंबर से अप्रैल तक का होता है। यहाँ से निकटतम शहर 30 किमी दूर मायाबदर और निकटतम हवाई अड्डा पोर्ट ब्लेयर है।

2. दक्षिणी सैंटीनल अभयारण्य यह अभयारण्य द्वीप समूह के सैंटीनल द्वीप के दक्षिणी भाग में है। इसकी स्थापना 1977 में की गई थी। यहाँ डुगोंग, हरे समुद्री कछुए, डॉलफिन, व्हेल तथा सफेद छातीवाली चील अधिक संख्या में हैं। यहाँ भ्रमण का सर्वोत्तम समय जनवरी से मई तक का होता है।

3. नारकोंडम द्वीप अभयारण्य यह अभयारण्य अंडेमान द्वीप समूह में है। इसकी स्थापना 1977 में की गई थी। यहाँ वे जीव-जंतु देखने को मिलते हैं, जो हमें विस्मृत हो चुके हैं। यहाँ भ्रमण का सर्वोत्तम समय नवंबर से अप्रैल तक का होता है। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा 200 किमी दूर पोर्ट ब्लेयर है।

4. पोर्ट ब्लेयर पोर्ट ब्लेयर अंडेमान द्वीप का एक खूबसूरत समुद्री पर्यटन स्थल है। यहाँ सभी धर्मों के लोग रहने के कारण इसे 'लघु भारत' भी कहा जाता है।

पर्यटन स्थल पोर्ट ब्लेयर मे एक सेल्युलर जेल है। इसका निर्माण अंग्रेजों ने देश के स्वतंत्रता सेनानियों को बंद करने के लिए 1906 में करवाया था। इसी कारण इस द्वीप को काला पानी भी कहा जाता था। जेल में 698 काल-कोठरियाँ हैं, जिनमें उम्र कैद की सजा पाए कैदियों को रखा जाता था। सुभाष चन्द्र बोस ने 30 दिसंबर, 1943 को इसी जेल के पास तिरंगा झंडा फहराया था। 1979 में इसे राष्ट्रीय स्मारक घोषित कर दिया गया। यहाँ हर शाम ध्वनि और प्रकाश का कार्यक्रम होता है। पोर्ट ब्लेयर में जॉली बॉय, कार्बाइन स्कोप
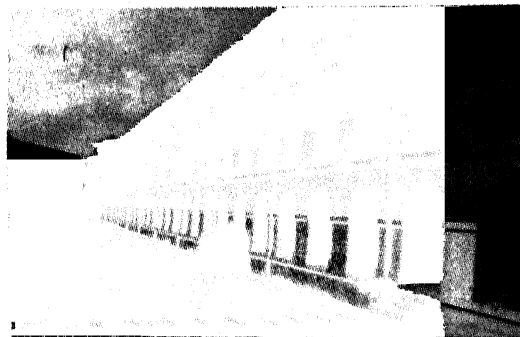
सेल्युलर जेल, पोर्ट ब्लेयर

बीच, चॉथम आरा मिल, मानव-विज्ञान म्यूजम तथा गांधी पार्क अच्छे दर्शनीय स्थलों में से हैं।

पोर्ट ब्लेयर के आस-पास के दर्शनीय स्थलों में रास, वाइपर, चिड़िया (25 किमी), मधुबन (फेरी से 15 किमी और सड़क मार्ग से 75 किमी), माउंट हेरियट (फेरी से 15 किमी), नील (36 किमी) तथा हैवलाक द्वीप (54 किमी), वंडूर बीच, सीपी घाट फार्म (14 किमी), बरमाह नाला, रबड़ प्लांटेशन तथा विमको फैक्टरी प्रमुख हैं।

पोर्ट ब्लेयर एक सुंदर समुद्री स्थल होने के कारण यहाँ का वातावरण बिल्कुल साफ-सुथरा है, समुद्री तट निर्मल हैं, पानी शुद्ध है, आम के घने वन हैं, पेड़-पौधे और पशु-पक्षी बहुत मात्रा में हैं तथा अनेक राष्ट्रीय उद्यान, समुद्री पार्क और वन्य जीव विहार हैं। इस प्रकार यह प्रकृति प्रेमियों के लिए अनुकूल जगह है।

उपलब्ध सुविधाएँ पोर्ट ब्लेयर में तरह-तरह की जल क्रीडाओं एवं साहसी कारनामों की सुविधाएँ हैं, जिनमें ट्रैकिंग, पैरा सेलिंग, विंड सर्फिंग, स्पीड बोट आदि शामिल हैं। यहाँ ठहरने के लिए सरकारी अतिथि गृह, पर्यटक आवास, यूथ होस्टल तथा सर्किट हाउस के अलावा अनेक होटल हैं।

कैसे जाएँ यह स्थान कलकत्ता, चेन्नई तथा विशाखापटनम् से समुद्री मार्ग से तथा कलकत्ता और चेन्नई से वायु मार्ग से जुड़ा हुआ है। समुद्री जहाज लगभग 8-10 दिनों में एक बार जाते हैं और पोर्ट ब्लेयर में दो दिन तक रुकते हैं। पोर्ट ब्लेयर तक पहुँचने में तीन दिन लगते हैं। यहाँ मौसम अचानक खराब हो जाता है, जिस कारण समुद्री तथा वायु सेवाएँ अस्त-व्यस्त हो जाती हैं और खर्च भी अधिक हो सकता है। इसलिए यहाँ का कार्यक्रम इन बातों को ध्यान में रखते हुए बनाना चाहिए। समुद्री जहाज से यात्रा करते समय जी मचलने और उल्टी आने की दवाइयाँ साथ रखें। समुद्री मार्ग से जाने के लिए भारतीय नौवहन निगम के निम्नलिखित कार्यालयों से संपर्क करें :

i) एपीजे हाउस, चौथी मंजिल, दिनसा वाचा रोड, मुंबई-20
ii) शिप्पिंग हाउस, 13 -स्ट्रांड रोड, कलकत्ता-1
iii) जवाहर बिल्डिंग, राजाजी सलाई, चेन्नई-1
iv) एबरडीन बाजार, पोर्ट ब्लेयर-1

अथवा अंडेमान एवं निकोबार द्वीप के नौवहन सेवा विभाग के निम्नलिखित कार्यालयों से :

i) 6, राजाजी सलाई, चेन्नई-1

ii) फीनिक्स बे जैट्टी, पोर्ट ब्लेयर (केवल ऐम वी नैनकावरी के लिए)

पर्यटन संबंधी और अधिक जानकारी के लिए अंडेमान एवं निकोबार द्वीप समूह संघ शासित क्षेत्र के 12, चाणक्य पुरी, नई दिल्ली; 3 ए, ऑकलैंड प्लेस, कलकत्ता तथा अंडेमान हाउस, अन्ना नगर, वेस्ट ऐक्स्टेंशन, पड़ी, चेन्नई स्थित कार्यालयों के अलावा पोर्ट ब्लेयर स्थित कार्यालय से भी संपर्क किया जा सकता है। पोर्ट ब्लेयर में पर्यटन सूचना केंद्र एयर पोर्ट तथा डेलनीपुर में अंडेमान टील हाउस के अलावा 189, जंगलीघाट मेन रोड पर भी है।

संचालित टूर संघ शासित क्षेत्र का पर्यटन विभाग अंडेमान टील हाउस, डेलनीपुर, पोर्ट ब्लेयर से चिड़िया टापू टूर (आधा दिन), सिटी टूर (आधा दिन), कार्बिन्ज कोव टूर (तीन घंटे), महात्मा गाँधी मैरीन नैशनल पार्क, वंडूर का टूर (पूरा दिन) और माउंट हैरियट टूर (पूरा दिन) संचालित करता है। आखिरी दो टूरों के लिए पर्यटकों को अपने साथ भोजन और पानी ले जाना चाहिए। नौवहन सेवा विभाग फीनिक्स बे जैट्टी से रॉस द्वीप, वाइपर द्वीप और हार्बर के लिए टूर संचालित करता है। यह विभाग फीनिक्स बे जैट्टी, फिशरीज जैट्टी और चॉथम से नील, हैवलॉक रंगट, लोंग, लिटिल अंडेमान, मायाबंदर, डिगलीपुर, कार निकोबार, नैनकावरी, काटचाल कामोर्टा और कैंपबैल बे जाने के लिए फेरी सेवा उपलब्ध कराता है। इस सेवा की समय-सारणी के लिए विभाग से संपर्क करें अथवा डेली टैलीग्राम या अंडेमान हेराल्ड पढ़ें या आकाशवाणी, पोर्ट ब्लेयर के स्थानीय समाचार (0645 से 0710 तक) सुनें।

सड़क परिवहन पोर्ट ब्लेयर रंगट (170 किमी), मायाबंदर (242 किमी) और डिगलीपुर (290 किमी) से सड़क मार्ग से भी जुड़ा हुआ है। इनके लिए बसें घने जंगल से होकर गुजरती हैं। यात्रा के दौरान यात्रियों को आरक्षित वन क्षेत्रों में बस से उतरने की अनुमति नहीं होती। इन स्थानों के लिए सरकारी बसें सेंट्रल बस स्टैंड से मिलती हैं। कुछ प्राइवेट टूर आपरेटरों की बसें भी मिल जाती हैं। स्थानीय भ्रमण के लिए सेंट्रल बस स्टैंड से बसें; टैक्सियाँ और आटो रिक्शे तथा मेसर्स टीऐस गुरुस्वामी एंड संस, एबरडीन बाजार से मोटरबाइक, स्कूटर और मोपेड किराये पर मिल जाते हैं।

5. बटन द्वीप राष्ट्रीय उद्यान यह उद्यान द्वीप समूह के बटन द्वीप में है। इस राष्ट्रीय उद्यान की स्थापना 1977 में हुई थी। अंडेमान एवं निकोबार द्वीप समूह में विशिष्ट तरह की जलवायु के कारण देश की मुख्य भूमि से भिन्न प्रकार के पशु-पक्षी मिलते हैं। इस द्वीप समूह के चारों ओर समुद्र होने तथा यहाँ घने वन होने के कारण यहाँ जलीय तथा जंगली जीव और वनस्पति अधिक मात्रा में दिखाई

देते हैं। यहाँ तापमान 20°से से 30°से तक रहता है। जून से अक्तूबर तक वर्षा होती है। इस द्वीप समूह में भ्रमण के लिए जनवरी से मार्च तक का समय सर्वोत्तम रहता है। यहाँ खारे पानी के मगरमच्छ, घड़ियाल, जलगोह, डूगोंग, ओलिवरडले, डॉलफिन, हाक्सविल कछुए, जंगली सूअर और चीतल मिलते हैं।

6. माउंट हैरियट राष्ट्रीय पार्क यह पार्क अंडेमान द्वीप समूह के दक्षिणी भाग में है। इसकी स्थापना 1979 में की गई थी। यहाँ जंगली सूअर अधिक पाए जाते हैं।

7.वारेन द्वीप अभयारण्य

यह अभयारण्य अंडेमान द्वीप समूह में है। यह 1977 में स्थापित किया गया था। यहाँ लौंग द्वीप से आना-जाना अधिक सहज है, जो यहाँ से 60 किमी दूर है।

8. सैडल पीक राष्ट्रीय पार्क यह पार्क अंडेमान द्वीप समूह की उत्तरी दिशा में 740 मी की ऊँचाई पर स्थित है। इसकी स्थापना 1979 में हुई थी। यहाँ जंगली सूअर तथा समुद्री किनारे पर व्हेल मछलियाँ और समुद्री मगरमच्छ पाए जाते हैं। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा पोर्ट ब्लेयर है। यहाँ भ्रमण का सर्वोत्तम समय जून से अक्तूबर तक का होता है।

ѠѠѠ
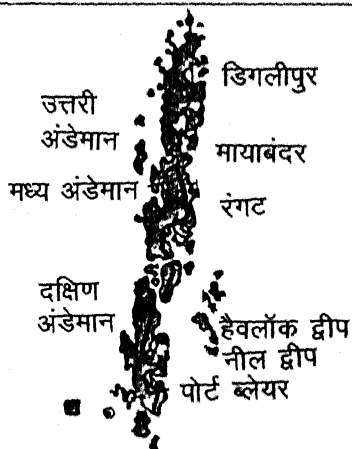
अरुणाचल प्रदेश

ऐतिहासिक विवरण

नेफा (नार्थ ईस्ट फ्रंटियर एजेंसी — NEFA) के रूप में जाना जाने वाला यह क्षेत्र 1962 तक असम का एक भाग था। इसकी भौगोलिक स्थिति और विशिष्ट प्रकार की समस्याओं को देखते हुए 1962 से 1965 तक इसका प्रशासन असम के राज्यपाल के माध्यम से विदेश मंत्रालय के हाथ में और उसके बाद 1972 तक गृह मंत्रालय के हाथ में रहा। 1972 में इसे संघ शासित क्षेत्र बनाकर इसका नाम अरुणाचल प्रदेश रख दिया गया। 20 फरवरी, 1987 को यह भारत का चौबीसवाँ राज्य बन गया।

अरुणाचल प्रदेश का कलिका पुराण, रामायण और महाभारत में वर्णन है। ऐसा माना जाता है कि परशुराम ने अपने पापों से मुक्ति पाने के लिए यहाँ के तेजु शहर के एक कुंड में स्नान किया था, जिसे आजकल परशुराम कुंड कहा जाता है। व्यास ने मनन, भीष्मक ने राज्यारोहण और श्रीकृष्ण ने रुक्मिणी से विवाह यहीं किया था।
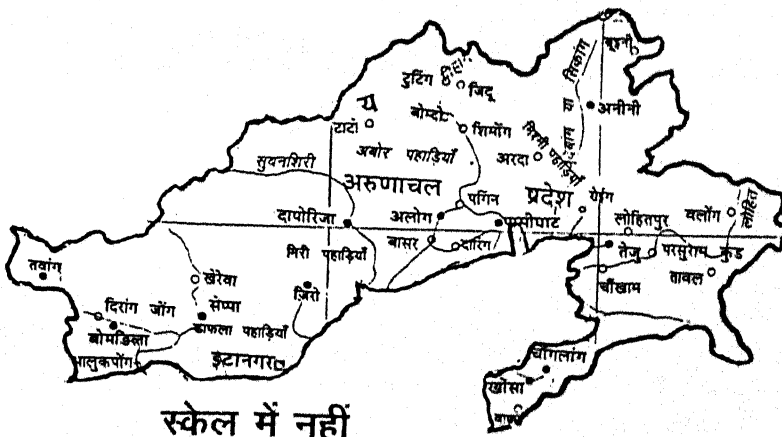
राज्य का कुल क्षेत्रफल 83743 वर्ग किमी तथा जनसंख्या 9 लाख है। राज्य की जनसंख्या का घनत्व देश में सबसे कम अर्थात् 10 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी तथा साक्षरता दर 41% है। राज्य की प्रमुख भाषाएँ मोंपा, मिजी, आका, शेरडुकपेन, निशिंग, आपातानी, तगिन, पहाड़ी मीरी, आडी, डिगारू-मिश्मी, खामती, मिजु-मिश्मी, नोक्टे, टाँगसा और वाँचे हैं। प्रदेश में झुम खेती की जाती है। मुख्य नकदी फसलें आलू, सेब, संतरा और अनानास हैं।

उत्सव

राज्य के प्रमुख उत्सव ओजियाल, तामलाडु, सांगकीन, मोल, मोपिन, सोलंग, लोस्सार, बूरी-बूट, द्री, सि-दोन्यी, रेह तथा न्योकम हैं। अधिकांश उत्सवों में पशु-बलि दी जाती है।

नृत्य

प्रदेश की आका जन-जाति के स्त्री-पुरुष चेकेलोको पाक्षीस्यू नृत्य करते हैं, जिसके द्वारा वे प्रकृति को अपनी भावांजलि देते हैं।

पर्यटन

राज्य के मुख्य पर्यटन केंद्र त्वाँग, दिरांग, बामडिला, तीपी, ईटानगर, लीकाबाली, पासीघाट, आलंग, तेजु मियाओ, देप्रिजो रायंग, नमधपा तथा खोंसा हैं। अरुणाचल के पर्यटन स्थलों की यात्रा करने के लिए भारतीय पर्यटकों को प्रदेश के जिला उपायुक्तों; सचिव (राजनैतिक), ईटानगर या रेजीडेंट कमिशनर, दिल्ली या कलकत्ता, गुवाहाटी, तेजपुर, लखीमपुर नॉर्थ (लीलाबाड़ी) और डिब्रूगढ़ (मोहबाड़ी) स्थित प्रदेश के संपर्क कार्यालयों से इनर लाइन परमिट तथा विदेशी पर्यटकों को गृह अथवा विदेश मंत्रालय से प्रतिबंधित क्षेत्र परमिट लेना होता है।

9. ईटानगर यह शहर प्रदेश की राजधानी है। यहाँ ईटा फोर्ट, बौद्ध मठ, जवाहर लाल नेहरू संग्रहालय, ऐंपोरियम, गंगा झील, चिड़ियाघर और नहारलगन में पोलो पार्क दर्शनीय स्थल हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ ईटानगर से निकटतम हवाई अड्डा तेजपुर (इंडियन एयरलाइंज) और लीलाबाड़ी (वायुदूत) तथा निकटतम रेलवे स्टेशन हरमुटी है। तेजपुर, लखीमपुर और बंदरदेवा से यहाँ के लिए बसें तथा कारें चलती हैं। बंदरदेवा यहाँ के लिए प्रवेश और निकास स्थान है। यहाँ जाने के परमिट के लिए देखें। यह स्थान ट्रैकिंग, बोटिंग, हाइकिंग और मत्स्याखेट के लिए उत्तम है। ठहरने के लिए यहाँ अनेक होटल हैं। यहाँ वर्ष में कभी भी जाया जा सकता है। यहाँ पर्यटन कार्यालय नहारलगन में सेक्टर

सी में है।

ईटानगर के नाम से एक पशु विहार भी है, जो प्रदेश में सुवनसिरी के निचले भाग में है। यहाँ बाघ, सींह, कस्तूरी हरिण, अजगर, साँप, जंगली भैंसे और हाथी अधिक देखने को मिलते हैं। यहाँ भ्रमण का सर्वोत्तम समय अक्तूबर से अप्रैल तक का होता है।

10. नमधपा राष्ट्रीय उद्यान यह उद्यान बर्मा के पठार के पास 200 से 4500 मी की ऊँचाई पर स्थित है। इसकी स्थापना 1972 में की गई थी। अधिक ऊँचाई पर होने के कारण यह एक दुर्गम क्षेत्र है। यहाँ बाँस, बेंत, दालचीनी, चीड़, देवदार व जूनीपर के वृक्ष अधिक हैं। इसमें बाघ तथा विडाल प्रजाति के जानवर यथा साह चीते और लमचीते मिलते हैं, जो शेष भारत में लुप्तप्राय हो चुके हैं। साथ ही गौर, सांभर, हाथी, बाघ, काला हरिण, काकड़ हरिण, हूलाक गिब्बन, लाल पंडा, स्लो लारिस, कस्तूरी मृग, ताकिन, घोरल, बिंटूरोंग, छोटा पंडा तथा मोनाल, कालीज, मोर आदि फेजेंट पक्षी देखने को मिलते हैं। यहाँ जाने का सर्वोत्तम समय फरवरी से मई और सितंबर से नवंबर तक का होता है। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन 62 किमी दूर मारघेरिटा और निकटतम हवाई अड्डा 163 किमी दूर डिब्रूगढ़ है।

11. पखुई वन पशु विहार यह विहार प्रदेश के दक्षिण-पश्चिम में कामिंग जिले में डाफला पहाड़ियों की तलहटी में है। इसकी स्थापना 1970 में की गई थी। इस विहार में हाथी, भालू, चीता, बाघ आदि पशु और अनेक प्रकार के पक्षी देखने को मिलते हैं। इस विहार से तेज बहने वाली कई नदियाँ भी गुजरती हैं। यहाँ घूमने का सर्वोत्तम समय दिसंबर से मार्च तक का होता है। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा 65 किमी दूर तेजपुर है। रंगापाड़ा नगर यहाँ से 52 किमी है।

12. महद पशु विहार यह विहार मिशीमी पर्वत श्रृंखला मे 400 से 3500 मी की ऊँचाई पर स्थित है। यहाँ कस्तूरी मृग, भालू, तेंदुए, चीते और जंगली भैंसे अधिक हैं। यहाँ से निकटतम शहर 10 किमी दूर रोइंग, निकटतम रेलवे स्टेशन 120 किमी दूर तिनसुकिया और निकटतम हवाई अड्डा तेजपुर है।

13. मोइलिंग राष्ट्रीय उद्यान यह उद्यान प्रदेश के सुवनसिरी और सियांग जिलों मे है। यहाँ वही पशु-पक्षी देखने को मिलते हैं, जो नमधपा में हैं। यहाँ भ्रमण के लिए फरवरी से मई तक का समय उत्तम रहता है।

KKK

असम

ऐतिहासिक विवरण

असम नाम की उत्पत्ति ओहोम शब्द से मानी जाती है। ओहोम जाति के राजाओं ने आधुनिक असम क्षेत्र में लगभग 600 वर्षों तक लगातार राज्य किया था। असम के लोग आज भी असमिया भाषा को ओहोमिया पुकारते हैं। वैदिक काल में इसे प्रागज्योतिषपुर तथा बाद में कामरूप कहा जाता था। यहाँ के दानव राजा नरकासुर के पुत्र भागदत्त ने महाभारत युद्ध में कौरवों की तरफ से भाग लिया था। उसकी मृत्यु भीम के हाथों हुई थी। कामरूप राज्य का प्राचीनतम उल्लेख समुद्रगुप्त के इलाहाबाद स्तंभ लेख में मिलता है। इस लेख में इसका नाम प्रात्यंत अर्थात् गुप्त साम्राज्य का सीमावर्ती राज्य लिखा गया है। गुप्त राजाओं से इसके मैत्रीपूर्ण संबंध थे। 743 में यहाँ के राजा कुमार भास्करवर्मन के निमंत्रण पर हर्षवर्धन ने राज्य की यात्रा की थी। अपने उल्लेख में उसने इसका नाम कामलूप लिखा है। ह्यून सांग
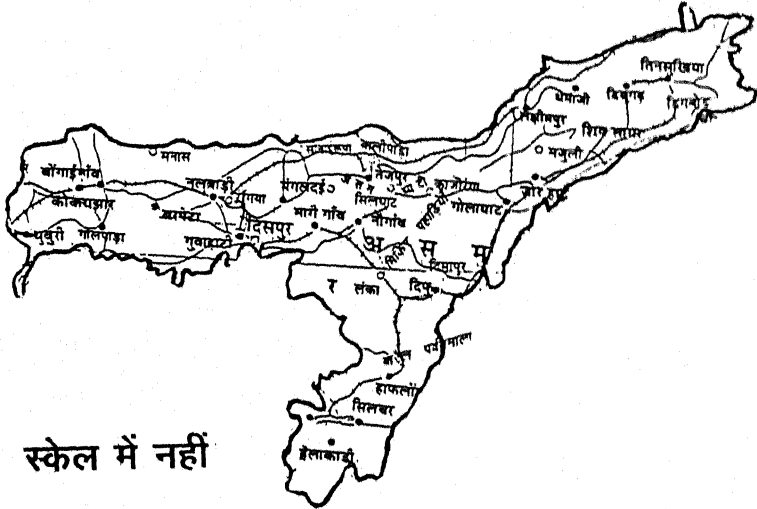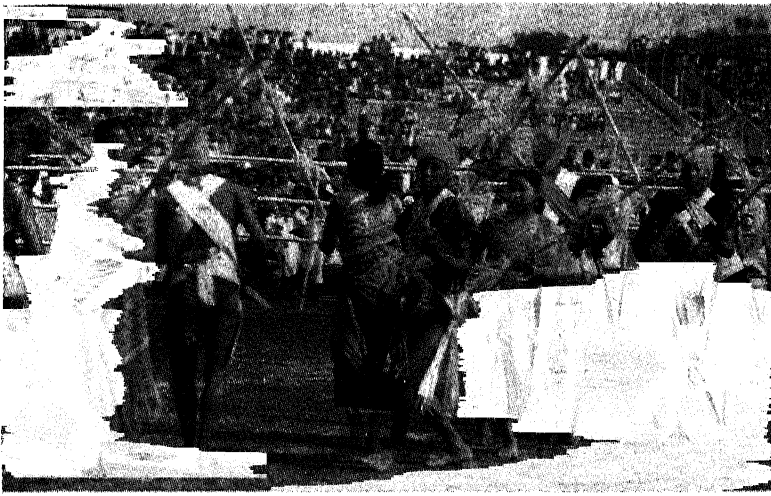
कारबी नृत्य, असम

इसका नाम कामलूप लिखा है। ह्यून सांग भी यहाँ आया था। ग्यारहवीं शताब्दी के अरब इतिहासकार अल बरूनी ने भी इसका उल्लेख किया है। 1228 के बाद से लगभग 600 वर्षों तक यहाँ ओहोम राजाओं ने शासन किया। ओहोम वंश के पतन के समय बर्मा ने इस पर अधिकार कर लिया था। बाद में 1826 की यांदबू की संधि के तहत उन्होंने इसे अंग्रेजों को सौंप दिया।

भौगोलिक एवं सांस्कृतिक विवरण

राज्य का कुल क्षेत्रफल 784381 वर्ग किमी तथा प्रमुख भाषा असमिया है। राज्य की जनसंख्या का घनत्व 286 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी तथा साक्षरता दर 53% है। राज्य में कुल 23 जिले हैं।

उत्सव

असम का मुख्य त्यौहार बिहु है, जो वर्ष में तीन बार मनाया जाता है। रंगाली बिहु (बोहाग बिहु) फसल की बुआई के समय, भोगाली बिहु (माघ बिहु) फसल की कटाई के समय तथा काटी बिहु (कंगाली बिहु) पतझड़ के समय मनाया जाता है। राज्य के अन्य त्यौहारों में अम्बुबासी, शिवरात्रि, दुर्गा पूजा, दिवाली, डोलजात्रा, ईद, क्रिस्मस, अशोकाष्टमी, काली पूजा तथा विश्वकर्मा पूजा प्रमुख हैं। प्रमुख नृत्य देवधनी है, जो कुँआरी लड़कियों द्वारा पदमा देवी को खुश करने के लिए किया जाता है। बिहु, साटरिया, नाडुभंगी कुछ अन्य नृत्य हैं।

ढिमसा नृत्य, असम

पर्यटन स्थल

गुवाहाटी के आस-पास के मुख्य पर्यटन स्थल कामाख्या मंदिर, उमानंद, नवगृह, वशिष्ठ आश्रम, डोलगोबिंदा, गाँधी मंडप, चिड़ियाघर, राज्य संग्रहालय, शुक्रेश्वर मंदिर, मदन कामदेव मंदिर तथा गीता मंदिर हैं। राज्य के अन्य पर्यटन स्थल काजीरंगा, मानस, औरांग, शिवसागर, तेजपुर, हाफलोंग, मजूली, चांदुबी तथा सुआलकूची हैं।

14. औरंग अभयारण्य यह अभयारण्य असम में ब्रह्मपुत्र नदी के उत्तरी किनारे के साथ-साथ है। यहाँ हाथी, गैंडे, जंगली भैंसे, बाघ, हरिण आदि जानवर देखने को मिलते हैं। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय नवंबर से अप्रैल तक का होता है। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा तेजपुर है।

15. काजीरंगा राष्ट्रीय उद्यान जोरहाट से 60 किमी दूर इस उद्यान का विकास विशेष रूप से एक सींग वाले गैंडे के संरक्षण के लिए किया गया है। इसके एक तरफ ब्रह्मपुत्र नदी तथा दूसरी ओर मिरिक की पहाड़ियाँ हैं। यहाँ की भूमि दलदली है। इस भूमि में 16 फुट तक ऊँची घास, जिसे हाथी घास कहा जाता है, उगी हुई है। यहाँ पर गैंडे के अलावा तरह-तरह के पक्षी व हरिण, जंगली सूअर, गीदड़, जंगली भैंसे, हाथी, चीते, गिब्बन आदि जानवर देखने को मिलते हैं। इन जानवरों को काठी लगे हाथी पर और जीप में बैठकर देखा जा सकता है। यहाँ भ्रमण के लिए उपयुक्त समय नवंबर से मार्च तक का होता है। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन 23 किमी दूर बोकाखात तथा निकटतम हवाई अड्डा 95 किमी दूर जोरहाट है। काजीरंगा में ठहरने के लिए आईटीडीसी का फोरेस्ट लॉज है।

16. गर्म पानी पशु विहार यह विहार नागालैंड की सीमा पर ब्रह्मपुत्र के मैदानी भाग में है। इसकी स्थापना 1952 में की गई थी। यहाँ हाथी और बाघ अधिक संख्या में हैं। यहाँ भ्रमण का उपयुक्त समय नवंबर से मार्च तक का होता है। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन एवं हवाई अड्डा 70 किमी दूर जोरहाट है।

17. गुवाहाटी गुवाहाटी असम की पुरानी राजधानी है। यह शहर ब्रह्मपुत्र के पूर्वी किनारे पर बसा हुआ है। पर्यटन की दृष्टि से यह इतना आकर्षक नहीं है, परंतु यह उत्तर-पूर्व भारत को देखने के लिए एक प्रवेश द्वार का काम करता है। कारण यह है कि भारत की मुख्य भूमि से उत्तर-पूर्वी भारत में प्रवेश करने के लिए बांग्ला देश और भूटान की सीमाओं के मध्य एक संकरे रास्ते से गुजरना होता है और इस रास्ते से गुजरने के बाद उत्तर-पूर्व का सबसे पहला प्रमुख शहर गुवाहाटी ही है। दूसरे, इसी शहर से समस्त उत्तर-पूर्वी भारत के लिए बस सेवाएँ और जहाँ तक रेल लाइन है, वहाँ तक रेल सेवाएँ मिलती हैं। साथ ही यहाँ से इस क्षेत्र के अन्य भागों में पहुँचने के लिए हवाई सेवा भी बहुत सस्ती है। यहाँ की पहाड़ियों में सुपारी, नारियल और ताड़ के पेड़ अधिक होते हैं। असमिया भाषा में 'गुवा' का अर्थ सुपारी और 'हाटी' का अर्थ स्थान या बाजार होता है। इसी कारण इस स्थान का नाम गुवाहाटी पड़ा। यहाँ का प्रमुख आकर्षण ब्रह्मपुत्र नदी है, जिसका अर्थ है ब्रह्मा का पुत्र । इसी कारण यहाँ के निवासी इस नदी को स्त्रीलिंग न मान कर पुल्लिंग मानते हैं और इसे नदी न कहकर नद कहते हैं। नदियों का पानी सामान्यतः ऊपरी स्तर से बहता हुआ दिखाई दिया करता है, परंतु यह नदी इतनी गहरी है कि इसका पानी ऊपर से तो शांत एवं स्थिर दिखता है जबकि नीचे तेज प्रवाह से बहता रहता है। इस प्रकार इसमें तैरना बहुत खतरनाक होता है। इस नदी पर एक रेलवे पुल और उसके ऊपर एक सड़क पुल है।

पर्यटन स्थल गुवाहाटी के दर्शनीय स्थलों में ब्रह्मपुत्र नदी का घाट, संग्रहालय, कामाख्या मंदिर, नवग्रह मंदिर, चिड़ियाघर, वशिष्ठ आश्रम, उमानंद मंदिर, जैविक उद्यान आदि प्रमुख हैं। इन स्थानों पर भ्रमण के लिए कोई टूरिस्ट बस नहीं जाती, बल्कि नगर बसों, टैक्सियों और आटो रिक्शाओं का ही सहारा लेना पड़ता है।

यहाँ भ्रमण के लिए उपयुक्त समय नवंबर से अप्रैल तक का होता है। ठहरने के लिए यहाँ छोटे-बड़े अनेक होटल हैं। नगर में पर्यटन कार्यालय पलटन बाजार में है।

18. जाटिंगा जाटिंगा असम में लामडिंग-कुमारघाट रेलवे लाइन पर है। यहाँ का रेलवे स्टेशन जाटिंगा ही है। यह स्थान कुछ वर्ष पहले लोगों की जानकारी में तब आया, जब यहाँ प्रवासी पक्षियों द्वारा आत्महत्या का समाचार पढ़ने में आया। ऐसा कहा जाता है कि हर वर्ष यहाँ सितंबर-अक्तूबर माह में सैंकड़ों पक्षी आत्महत्या करते हैं। इस घटना को देखने के लिए इस अवधि में यहाँ काफी पर्यटक आते हैं।

19. प्रागज्योतिषपुर यह स्थान गुवाहाटी में आधुनिक कामाख्या है। प्रागज्योतिषपुर प्राचीन कामरूप राज्य की राजधानी थी। यह म्लेच्छ और पाल शासकों की राजधानी भी थी। रामायण, महाभारत और हर्षचरित तीनों में इसका उल्लेख है। अफसाढ़ लेख के अनुसार कभी सुस्थिर वर्मा यहाँ का शासक था। ऐसा माना जाता है कि कामाख्या मंदिर का निर्माण महाभारत युग में राजा नरकासुर ने और इसका पुनरुद्धार एक ब्राह्मण राजा भास्कर वर्मन तथा 1565 में कोच नरेश नर-नारायण ने कराया था। इसे 51 शक्तिपीठों में से एक माना जाता है। यह मंदिर कामाख्या रेलवे स्टेशन के निकट कामाख्या पहाड़ी पर है। शाक्त भक्तजन आज भी इस मंदिर में अर्चना-पूजा करते हैं। भास्कर वर्मन ने थानेश्वर के राजा हर्षवर्धन से मिलकर गौड़ के राजा शशांक को पराजित किया था। यहाँ से हर्ष के दरबार में एक राजदूत भी भेजा गया था।

20. बरनाडी पशु विहार यह विहार असम में बर्मा की सीमा पर है। इसकी स्थापना 1980 में की गई थी। यहाँ बाघ, लमचीते, हरिण, बंदर, हाथी, बिंटूरोंग तथा भालू काफी संख्या में मिलते हैं। यहाँ घूमने का सर्वोत्तम समय नवंबर से मार्च तक का होता है।

21. मानस पशु विहार यह विहार मानस नदी के किनारे भूटान की सीमा से लगता हुआ है। इसकी स्थापना 1928 में की गई थी। मानस और हकवा नदियों के बीच स्थित यह विहार 19 प्रकार के पशु-पक्षियों के लिए आरक्षित है। इनमें जंगली भैंसे, बाघ, हाथी, गौर और टोपी वाले तथा सुनहरी लंगूर प्रमुख हैं। यहाँ से निकटतम शहर एवं रेलवे स्टेशन 42 किमी दूर बरपेटा रोड और निकटतम हवाई अड्डा 140 किमी दूर गुवाहाटी है। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय नवंबर से मार्च तक का होता है।

ठहरने की सुविधाएँ यहाँ ठहरने के लिए एक विश्राम घर है, जिसकी बुकिंग मंडल वन अधिकारी (वन्य जीव मंडल), बोकाखात द्वारा की जाती है।

22. सोनाई-रूपाई पशु विहार यह विहार असम में डाफला पहाड़ियों के किनारे पर स्थित है। यहाँ, चीते, तेंदुए और जंगली भैंसे अधिक संख्या में मिलते हैं। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा तेजपुर है।
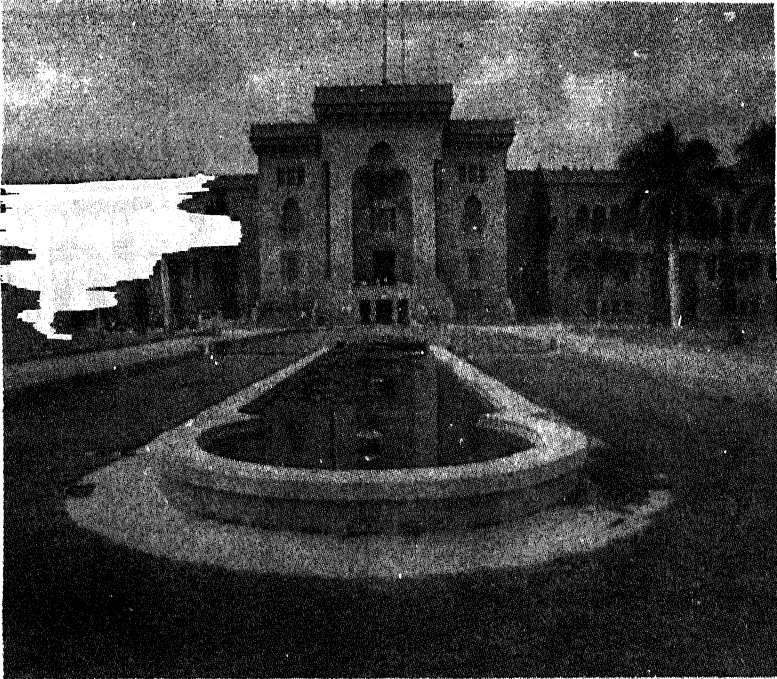
उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद

***

आंध्र प्रदेश

ऐतिहासिक विवरण

आंध्रों का प्राचीनतम उल्लेख अत्रेय ब्राह्मण (2000 ई०पू०) में मिलता है। इसमें लिखा है कि वे पहले उत्तर भारत के निवासी थे। बाद में वे विंध्या पर्वत के दक्षिण में जाकर अनार्यों से मिल गए। इतिहासकारों के अनुसार आंध्र देश का सतत इतिहास 236 ई०पू० से मिलता है। बाद के वर्षों में यहाँ सातवाहनों, शकों, ईक्षवाकुओं, पूर्वी चालुक्यों, काकतियों तथा विजयनगर के शासकों ने शासन

किया। 1725 में मीर कमरुद्दीन ने मुगल सम्राट की सेना को हराने के बाद आंध्र देश के साथ लगते हुए हैदराबाद क्षेत्र में निजामशाही शासन की स्थापना कर ली। 1751 से हैदराबाद फ्रांसीसियों तथा 1798 से अंग्रेजों के प्रभाव में आ गया। बाद में अंग्रेजों ने आंध्र और हैदराबाद दोनों को मद्रास प्रेजीडेंसी का एक भाग बना दिया। देश की स्वतंत्रता के बाद मद्रास राज्य से तेलुगु भाषी क्षेत्र को अलग करके 1 अक्तूबर, 1953 को एक नए राज्य आंध्र प्रदेश का सृजन किया गया। निजाम के प्रभाव वाला हैदराबाद क्षेत्र अभी भी एक अलग राज्य था। 1956 के राज्य पुनर्गठन अधिनियम के द्वारा हैदराबाद को भी आंध्र प्रदेश में मिला दिया गया। हैदराबाद शहर नए प्रदेश की राजधानी बना।

राज्य का क्षेत्रफल 275068 वर्ग किमी है। राज्य की मुख्य भाषा तेलुगु तथा उर्दू है। राज्य में 23 जिले हैं। राज्य की जनसंख्या का घनत्व 242 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी तथा साक्षरता दर 44% है।

उत्सव

आंध्र प्रदेश में वर्ष भर अनेक त्योहार मनाए जाते हैं। इनमें जनवरी मास में तीन दिन तक चलने वाला पोंगल त्योहार प्रमुख है। इसमें पहले दिन (आम तौर पर 14 जनवरी को) भोगी पोंगल (मकर संक्रांति), दूसरे दिन सूर्य पोंगल और तीसरे दिन मट्टू पोंगल मनाया जाता है। भोगी पोंगल को वे पोंगल (दूध में उबालकर गुड़ मिलाया हुआ चावल) खाते हैं, सूर्य पोंगल को उससे सूर्य की पूजा करते हैं और मट्टू पोंगल को पशुओं की पूजा करते हैं। इसके अतिरिक्त लोग जनवरी माह में ही त्यागराज उत्सव मनाते हैं। त्यागराज (जन्म 1767) आंध्र प्रदेश के एक प्रसिद्ध संगीतकार रहे हैं, जिन्होंने राम की प्रशंसा में तेलुगु भाषा में अनेक गीतों को संगीतबद्ध किया। मार्च-अप्रैल तथा दिसंबर-जनवरी में दस दिवसीय ब्रह्मोत्सवम्, फरवरी-मार्च में टेप्पन (तिरावन) उत्सव (जिसमें देवता को 3, 5 या 7 बार तालाब में तिराया जाता है), मार्च-अप्रैल (चैत्र) में नव वर्ष दिवस तथा सितंबर-अक्तूबर (आश्विन) में नौ-दिवसीय नवरात्रि उत्सव मनाया जाता है। नवरात्रि के दौरान पहले तीन दिन तक लक्ष्मी, अगले तीन दिन तक पार्वती और आखिरी तीन दिन तक सरस्वती की पूजा की जाती है। इनके अतिरिक्त प्रदेश में नवंबर-दिसंबर (अग्रहायण) में कार्तिक तथा बैकुंठ एकादशी, सेंट थोमस दिवस और अग्नि-पर्व उत्सव भी मनाए जाते हैं।

नृत्य

प्रदेश के आदिवासी लोग फसल कटाई तथा अप्रैल के समय में ढिमसा नृत्य करते हैं। गोंड जन-जाति के लोग गोंड नृत्य करते हैं। यह नृत्य वे बकरी

। खाल, मोरपंख का टोप और काले
। की 'पटसन की दाढ़ी लगाकर
रते हैं। प्रदेश में ही बूड़ा काठा और
लूबोम्मलट्ट नृत्य भी किए जाते
। कूचीपूड़ी प्रदेश का शास्त्रीय नृत्य
।

कूचीपूड़ी नृत्य की एक मुद्रा

र्यटन स्थल

राज्य के प्रमुख पर्यटन स्थलों हैदराबाद में चार मीनार, सालारजंग ग्रहालय, गोलकुंडा किला और हुसैन ागर लेक; वारंगल में 1000 स्तंभों ला मंदिर और किला; यादगिरिगुट्ट में श्रीलक्ष्मी नरसिंह स्वामी का मंदिर; गार्जुनकोंडा में बुद्ध स्तूप; तिरुमला-तिरुपति में वेंकटेश्वर मंदिर, श्रीसेलम में ल्लिकार्जुन मंदिर तथा विजयवाड़ा में कनकदुर्गा मंदिर शामिल हैं।
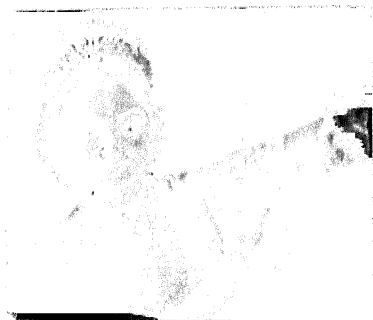
23. अमरावती यह शहर कृष्णा नदी के दाएँ किनारे पर स्थित है। भी इस शहर को धमजा कटक भी कहा जाता था। यह शहर सातवाहनों और क्षवाकुओं की राजधानी होने का गौरव प्राप्त कर चुका है।

रातात्विक महत्त्व के दर्शनीय स्थल अमरावती में 800 ई०पू० के उत्तर वैदिक ाल के काली पालिश के मिट्टी के बर्तन पाए गए हैं। अमरावती प्राचीन काल बौद्ध धर्म का प्रमुख केंद्र रहा है। यहाँ चीन तक के लोग बौद्ध धर्म की दीक्षा ने आते थे। ई०पू० काल में किसी द्ध अनुयायी की पाषाण मूर्ति सबसे हले यहीं बनाई गई थी। आंध्र प्रदेश प्रथम सातवाहन राजा पुल्लुमवी 30-58) ने यहाँ एक स्तंभ लेख थापित कराया था, जो उसके ाम्राज्य की जानकारी देता है। मरावती में पाए गए बड़े-बड़े मठों बुद्ध के जीवन-दर्शन का चित्रण ालता है। पर्यटन की दृष्टि से यहाँ ा अमरेश्वर मंदिर अच्छा है। यहाँ

स्तूप, अमरावती

के हिंदू मंदिर भी पर्यटन की दृष्टि से आकर्षक हैं। गुस्साए हाथी की प्रसिद्ध मूर्ति भी अमरावती में ही है। यहाँ भ्रमण का उपयुक्त समय नवंबर से अप्रैल तक का होता है।

24. इटर्ना अभयारण्य यह अभयारण्य मध्य प्रदेश व उड़ीसा की सीमा से लगता हुआ है। इसकी स्थापना 1953 में हुई थी। इस विहार में भालू, चीते, बाघ, चिंकारे, चौसिंघे, काली बतखें, तेंदुए, अजगर, घड़ियाल और मगरमच्छ देखे जा सकते हैं। यहाँ से निकटतम शहर 90 किमी दूर वारंगल और निकटतम हवाई अड्डा 225 किमी दूर हैदराबाद है। यहाँ भ्रमण का उपयुक्त समय मार्च से मई तक का होता है।

25. उतनूर—पुरातात्विक महत्त्व यहाँ की गई खुदाइयों से पता चला है कि यह स्थान नव-पाषाण सभ्यता का एक स्थल था, जो हड़प्पा की समकालीन थी। यहाँ उस युग के राख के टीले मिले हैं।

26. कंटकसेल कृपया घंटसाल देखें।

27. कंदरपुरा—ऐतिहासिक महत्त्व छठी शताब्दी के प्रारंभिक काल में यहाँ आनंद गौत्र के राजा कंदर ने एक स्वतंत्र राज्य की स्थापना की। उसने अपनी पुत्री का विवाह पल्लव राजकुमार से किया। कंदर ने वेंगी के विष्णुकुंडी शासक से कृष्णा नदी के किनारे घमासान युद्ध के बाद विजय प्राप्त की और "त्रिकुटपर्वत स्वामी" विरुद धारण किया। उसके राज्य में आधुनिक गुंटूर और तेनाली जिले ही शामिल थे। दामोदरवर्मा, अट्टीवर्मा और कंदर का पोता इस वंश के अन्य शासक थे। इस वंश के राजा शैव थे, परंतु दामोदरवर्मा ने बौद्ध धर्म अपना लिया था। फिर भी वे सभी धर्मों का समान आदर करते थे।

28. काजीपेट यह स्थान हैदराबाद के पूर्व में 90 मील दूर है। इस स्थान के आस-पास पिरामिडीय मीनारों वाले द्रविड़ शैली के अनेक मंदिर देखने को मिलते हैं। इनमें हजार स्तंभों वाला मंदिर सबसे अधिक प्रसिद्ध है, जो काजीपेट के पश्चिम में 4 किमी दूर हनामकोंडा में है। इसका निर्माण एक चालुक्य राजा ने 1162 ई० में करवाया था। इस मंदिर की दीवारों पर बहुत अच्छी मूर्तियाँ बनी हैं। स्तंभों पर नक्काशी की गई है और नंदी की एक महत्त्वपूर्ण प्रतिमा है।

29. काडापी सातवीं शताब्दी में यह शहर चोल राजाओं की राजधानी

थी।

30. किन्नरशानी वन्य जीव विहार यह विहार मध्य प्रदेश की सीमा पर है। इसकी स्थापना 1977 में की गई थी। यहाँ तरह-तरह के हरिण, उड़ने वाली गिलहरी, शाल, जंगली भैंसे, भालू, तेंदुए, बाघ और घड़ियाल पाए जाते हैं। यहाँ से निकटतम शहर 24 किमी दूर भद्राचलम् नगर और निकटतम हवाई अड्डा 170 किमी दूर विजयवाड़ा है। यहाँ भ्रमण के लिए नवंबर से अप्रैल तक का समय उपयुक्त रहता है।

31. कुर्नूल यह शहर हैदराबाद के दक्षिण में दो नदियों के संगम पर है।

ऐतिहासिक महत्त्व किसी समय वारंगल के काकतीय राजा गणपति (1199-1262) ने कुर्नूल पर अधिकार कर लिया था, परंतु पांड्य राजा जटावर्मा सुंदर ने इसे उससे 1250 में छीन लिया। जटावर्मा सुंदर की उत्तराधिकारिणी रुद्रांबा के काल में उसके सामंत अंबदेव ने अपनी स्वतंत्रता की घोषणा कर दी। वारंगल के अगले शासक प्रताप रूद्रदेव ने अंबदेव को हराकर कुर्नूल पर फिर अधिकार कर लिया। श्रीसेलम मंदिर जाने वाले यात्रियों के लिए कुर्नूल एक प्रवेश द्वार का काम करता है। श्रीसेलम में प्रसिद्ध मल्लिकार्जुन मंदिर है, जिसमें सर्वाधिक प्रसिद्ध शिवलिंग रखा हुआ है। कृपया मंदिर का चित्र पृष्ठ 67 पर देखें।

32. कोंडविदु–ऐतिहासिक महत्त्व पंद्रहवीं शताब्दी के अंत में यहाँ बहमनी वंश का शासन था। 1474-75 ई० में कोंडविदु के अधिकारियों के दुर्व्यवहार के कारण यहाँ की जनता ने विद्रोह करके बहमनी सूबेदार की हत्या कर डाली तथा कटक के पुरुषोत्तम गजपति की सहायता से गोदावरी तक का क्षेत्र अपने अधिकार में कर लिया, परंतु शीघ्र ही बहमनी सुल्तान मुहम्मद तृतीय ने उन्हें हरा दिया। 1480-81 में कोंडविदु में तैनात बहमनी सेना विद्रोह करके विजयनगर के सालुंब नरसिंह से मिल गई। बहमनी सुल्तान ने इस विद्रोह का दमन कर दिया। 1530 ई० में गोलकुंडा के सुल्तान कुली कुतुबशाह ने कोंडविदु के किले पर अधिकार कर लिया। कोंडविदु में नंदल गोप का अभिलेख मिला है, जिसमें मध्यकालीन भारत के आंतरिक व्यापार का उल्लेख है। व्यापार की प्रमुख वस्तुओं में दालों, बाजरे, रागी, गेहूँ, सब्जियों, नमक, इमली, काली मिर्च, लौंग, जायफल, तेल, गुड़, चीनी, पान, सुपारी, कच्चे कपास, सूत, कपड़ों, लोहे, सीसे, टिनँ, ताँबे आदि का वर्णन है।

33. कोल्लेरू वन्य जीव विहार इसकी स्थापना 1963 में की गई थी। कोल्लेरू झील गोदावरी और कृष्णा नदी के डेल्टा क्षेत्र के बीच स्थित होने के कारण यहाँ की भूमि दलदली है। यहाँ दूसरे देशों के पक्षी भी दिखाई देते हैं। यहाँ से निकटतम शहर 20 किमी दूर चेल्लोरू और निकटतम हवाई अड्डा 63 किमी दूर विजयवाड़ा है। यहाँ भ्रमण का उत्तम समय अक्तूबर से फरवरी तक का होता है।

34. गोलकुंडा—ऐतिहासिक महत्त्व हैदराबाद के पास स्थित इस शहर में कुली कुतुबशाह ने 1518 ई० में बहमनी साम्राज्य के पतन पर कुतुबशाही वंश की नींव डाली थी। उन दिनों यह जगह सोने की खान के लिए प्रसिद्ध थी। यहीं की खानों से विश्व-प्रसिद्ध कोहिनूर और आर्लफ हीरे निकाले गए थे। शाहजहाँ द्वारा बनवाए गए मयूर सिंहासन में भी गोलकुंडा की खानों के हीरे ही लगे थे। शाहजहाँ ने 1636 ई० में यहाँ के राजा कुतुबशाह पर आक्रमण करके उसे भेंट देने, अपने नाम के सिक्के निकालने और अपने नाम का खुतबा पढ़ने के लिए विवश कर दिया था, परंतु 1635 से 1644 तक औरंगजेब की दौलताबाद की पहली सूबेदारी के बाद उसने अपने आपको स्वतंत्र घोषित कर लिया। औरंगजेब ने अपने पुत्र मुहम्मद के साथ मिलकर 1655-56 ई० में गोलकुंडा पर आक्रमण कर दिया। सुल्तान ने अपने आपको किले में बंद कर लिया। बाद में उसने शाहजहाँ को एक करोड़ रुपये हर्जाना और खिराज की सारी बकाया राशि देना, अपने नाम के सिक्के गढ़वाने बंद करना, अपनी पुत्री का विवाह राजकुमार मुहम्मद से करना और शाहजहाँ का प्रभुत्व मानना स्वीकार कर लिया। बाद में गोलकुंडा फिर स्वतंत्र हो गया। 1685 में औरंगजेब के पुत्र मुअज्जम ने गोलकुंडा पर आक्रमण करके यहाँ के शासक अब्दुल हसन के साथ एक संधि की, जिसके तहत अब्दुल हसन ने मुगल प्रभुसत्ता स्वीकार करने के अतिरिक्त एक करोड़ 20 लाख रु. और नियमित रूप से खिराज देना स्वीकार किया। परंतु औरंगजेब गोलकुंडा को मुगल साम्राज्य के ही एक भाग के रूप में देखना चाहता था। उसने 1687 में गोलकुंडा का किला घूस के सहारे खुलवा कर गोलकुंडा को अपने साम्राज्य में मिला लिया। उसने अब्दुल हसन को दौलताबाद में बंदी बना लिया। बाद में उसे 50000 रु. वार्षिक पेंशन दे दी गई। औरंगजेब को यहाँ से 7 करोड़ रु. तथा बहुत सा सोना, चाँदी और जवाहरात मिले। यहाँ के किले में कुतुबशाही शासकों के मकबरे हैं।

35. घंटसाल यह स्थान मसूलीपट्टम् के पश्चिम में 21 मील दूर है।

इसका प्राचीन नाम कंटकसेल है। सातवाहन काल के दौरान घंटसाल व्यापार का एक मुख्य केंद्र था। स्वारद्वीप के साथ भी इसके व्यापारिक संबंध थे। घंटसाल का स्तूप बौद्ध वास्तुकला का एक सुंदर नमूना है।

36. तलैयालंगनम्—ऐतिहासिक महत्त्व अशोक के काल में मदुरा में पांड्यों का स्वतंत्र शासन था। 210 ई० के आस-पास इस राज्य का एक प्रसिद्ध राजा नेडुंजेलियान था। उसके काल में चेर, चोल और पाँच अन्य छोटे-छोटे राज्यों ने उसकी राजधानी पर आक्रमण कर दिया। नेडुंजेलियान ने उनकी सम्मिलित सेना को तलैयालंगनम् नामक स्थान पर हराया था।

37. तिरुपति यह शहर प्रदेश के दक्षिण में है और द्रविड़ शैली में बने बालाजी अथवा वेंकटेश्वर मंदिर के लिए प्रसिद्ध है। तमिल में 'तिरु' का अर्थ 'श्री' एवं 'पति' का अर्थ प्रभु है। अतः तिरुपति का अर्थ श्रीपति यानी श्रीविष्णु है। इसी प्रकार तिरुमला का अर्थ श्रीपर्वत है, जिस पर लक्ष्मी जी के साथ स्वयं भगवान विष्णु विराजमान हैं। तिरुपति इसी पर्वत के नीचे बसा हुआ है। यह मंदिर 2500 फुट ऊँची तिरुमला की पहाड़ी पर स्थित है। इस पहाड़ी पर कई झरने और तालाब हैं। मंदिर के चारों ओर आम व चंदन के पेड़ हैं। यहाँ हर वर्ष लाखों हिंदू भक्तजन बालाजी के दर्शनार्थ आते हैं। भगवान के मुख्य दर्शन दिन में तीन बार होते हैं। पहला दर्शन "विश्वरूप" दर्शन कहलाता है। यह सुबह के समय होता है। दूसरा मध्याह्न में तथा तीसरा रात में होता है। इन सामूहिक दर्शनों के अतिरिक्त अन्य दर्शन भी हो सकते हैं, जिनके लिए विभिन्न शुल्क निश्चित हैं। इन तीन दर्शनों के लिए कोई शुल्क नहीं लगता।

तिरुपति मंदिर

मंदिर में पूजा-अर्चना ग्यारहवीं शताब्दी के रामानुजाचार्य द्वारा

निर्देशित विधि से ही होती है। आज यह भारत का सबसे अधिक संपन्न मंदिर है। देवता के मुकुट के निर्माण में लगभग पाँच करोड़ रुपये की लागत आई है। यह मुकुट 12 किलो सोने का है, जिसमें बहुमूल्य हीरों व मुक्ताओं के 9 हजार से भी अधिक टुकड़े जड़े हुए हैं।

वेंकटेश्वर मंदिर मेरु पर्वत के सप्त शिखरों पर बना हुआ है। पौराणिक कथानुसार ये शिखर भगवान आदिशेष शेषनाग का प्रतिनिधित्व करते हैं। यह मूर्ति सात फुट सीधे पत्थर से निर्मित है। मूर्ति के चार हाथ हैं, जो शंख, चक्र, गदा और पद्म लिए हुए हैं। भगवान को कपूर का तिलक लगता है, जो यहाँ प्रसाद के रूप में बिकता है।

वेंकटेश्वर मंदिर के समीप ही स्वामी पुष्करिणी नामक एक बड़ा सरोवर है, जिसके मध्य में एक मंडप बना है। इसमें दशावतारों की मूर्तियाँ हैं। वेंकटेश्वर मंदिर के समीप ही 'कल्याणकर' नामक स्थान भी है, जहाँ लोग मुंडन करवाते हैं। इस क्षेत्र में मुंडन-संस्कार प्रधान कृत्य माना जाता है। तिरुपति नगर में स्थित गोविंदराज मंदिर में अनंत शय्या पर सोये भगवान नारायण की श्रीमूर्ति है, जिसकी प्राण-प्रतिष्ठा स्वामी रामानुजाचार्य ने की थी। रामानुजाचार्य की आठ प्रधान पीठों में से यह एक पीठ है। वेंकटेश्वर मंदिर के अलावा तिरुपति में कोदंड रामस्वामी, कपिला तीर्थम् और श्रीनिवास मंगपुरम् मंदिर भी देखने चाहिए।

वेंकटेश्वर मंदिर से लगभग छह किमी की दूरी पर 'आकाश गंगा' नामक एक झरना है, जिसका जल एक कुंड में गिरता है। इसी जल से भगवान को स्नान करवाया जाता है। यहाँ से लगभग दो किमी की दूरी पर पापनाशन तीर्थ है, जहाँ दो पर्वतों के मध्य में एक कुंड और एक जल-स्रोत है। इसी तीर्थ के रास्ते में हाथीराम बाबा की समाधि, राधा-कृष्ण मंदिर, वैकुंठ तीर्थ, पांडव तीर्थ तथा जाबलि तीर्थ पड़ते हैं। तिरुपति नगर से लगभग पाँच किमी दूर तिरुच्चानूर में पद्मावती का मंदिर भी दर्शनीय है। स्थानीय भाषा में इस देवी को 'अलवेल मंगम्मा' कहते हैं। इस देवी को लक्ष्मी स्वरूपा माना जाता हैं। लोगों की ऐसी धारणा है कि वेंकटेश्वर के दर्शन के बाद पद्मावती देवी का दर्शन किए बिना 'बालाजी' की यात्रा पूर्ण नहीं कही जा सकती। यहाँ के आस-पास के अन्य दर्शनीय स्थलों में चंद्रगिरि किला (11 किमी), कलाहस्ती (36 किमी) में श्रीकलाहस्ती मंदिर (देखें पृष्ठ 66), कैलाशनाथ कोना (43 किमी), होर्सले हिल्स (144 किमी) तथा वराहस्वामी मंदिर प्रमुख हैं।

कैसे जाएँ तिरुपति दक्षिण का एक प्रसिद्ध नगर है। चेन्नई से मुंबई जाने वाली लाइन पर रेणिगुंटा स्टेशन से लगभग दस किमी की दूरी पर इसी नाम का

स्टेशन है। हैदराबाद, चेन्नई, काँची, चित्तूर, विजयवाड़ा आदि स्थानों से तिरुपति के लिए बस सेवाएं उपलब्ध हैं। तिरुपति में हवाई अड्डा भी है।

तिरुपति से तिरुमलै पर्वत पर जाने के लिए दो मार्ग हैं—एक पैदल मार्ग और दूसरा बस मार्ग। पैदल मार्ग 11 किमी लंबा है और बस मार्ग 22 किमी लंबा। देवस्थानम् समिति की बसें तिरुमलै जाती रहती हैं।

ठहरने के स्थान इन मंदिरों में आने वाले यात्रियों की संख्या बहुत अधिक होती है और यात्रियों की सुविधाओं का प्रबंध देवस्थानम् की ओर से किया जाता है। तिरुपति स्टेशन के पास ही देवस्थानम् की बड़ी विस्तृत धर्मशाला है। यहाँ पर यात्रियों के लिए जो व्यवस्था है, वैसी दूसरे किसी तीर्थ में नहीं है। देवस्थानम् की ही एक और धर्मशाला तिरुमलै पर्वत के नीचे है और पर्वत पर मंदिर के पास कई अन्य धर्मशालाएँ भी हैं। 14 मील दूर तिरुमलाई में भी कुछ कॉटेज हैं। ऐपीटीटीडीसी का पर्यटन सूचना केंद्र तिरुमला में तथा रेलवे स्टेशन पर है।

38. धमजा कटक कृपया अमरावती देखें।

39. नागार्जुनकोंडा यह स्थान प्रदेश के गुंटूर जिले में कृष्णा नदी पर नागार्जुन सागर बाँध के मध्य है। इसका नामकरण प्रथम शताब्दी ई० के महायान शाखा के बौद्ध विद्वान नागार्जुन के नाम पर हुआ।

पुरातात्विक महत्त्व नागार्जुनकोंडा में 1927 से 1931 तक और 1938 से 1941 तक की गई खुदाइयों के दौरान एक मुख्य स्तूप, अनेक अन्य स्तूप, चैत्य, मुहरें, छोटी-छोटी मूर्तियाँ, मिट्टी के बर्तन और अर्धवृत्ताकार मंदिर पाए गए हैं। नागार्जुनकोंडा में ब्राह्मण धर्म के ईंट के मंदिर भी पाए गए हैं। खुदाइयों में एक रोमन सम्राट हैड्रियान (117-38 ई०) की मुहर भी पाई गई है, जिससे नागार्जुनकोंडा के रोम के साथ व्यापारिक संबंधों का पता लगता है। यहाँ की गई खुदाइयों में नव-पाषाण काल के काफी अवशेष तथा महापाषाण काल (तीसरी शताब्दी ई०पू०–प्रथम शताब्दी ई०) की कब्रें मिली हैं। यहाँ कृषि कार्यों के कई औजार पाए गए हैं। यहाँ की सभ्यता संगनकल्लू (II, 1) के ऊपरी स्तर और ब्रह्मगिरि I (ए और बी) की समकालीन थी। के. वी. सुंदरराजन ने यहाँ खुदाई में जूतों के तल्लों की आकृति के फावड़े, पच्चड़, बसूले, गैंती, छैनी और हथौड़े पाए हैं। इनमें दो किनारों वाली गैंती-फावड़ा अधिक प्रमुख है। यह ईसा बाद के प्रारंभिक काल में सातवाहनों और उनके उत्तराधिकारी ईक्षवाकुओं के अधीन बौद्ध कला का एक केंद्र था। ईक्षवाकु राजाओं के काल में बौद्ध धर्म का यहाँ बहुत विकास हुआ।

यहाँ ईक्षवाकु राजा वीरपुरिसदात ने एक बड़ा स्तूप और अनेक विहार मंडप बनवाए थे।

नार्गाजुनकोंडा में पाई गई वस्तुएँ यहीं पर बने एक संग्रहालय में देखी जा सकती हैं। नागार्जुनकोंडा भ्रमण के लिए नवंबर से अप्रैल तक का समय सबसे अच्छा रहता है।

बुद्ध, नागार्जुनकोंडा

40. नागार्जुन सागर श्रीसेलम पशु विहार इस विहार की स्थापना 1978 में की गई थी। यह आंध्र प्रदेश के मध्य भाग में कृष्णा नदी के किनारे स्थित है। मल्ल-मल्लई पर्वत श्रेणी इसी पशु विहार का भाग है। यहाँ चीते, बाघ, भालू, लोमड़ी, चौसिंघे, नीलगाय, चिंकारे, सांभर और लंगूर दिखाई देते हैं। यहाँ से निकटतम शहर 13 किमी दूर मचेश्ला है, जो रेल से जुड़ा हुआ है। निकटतम हवाई अड्डा 150 किमी दूर हैदराबाद है।

41. नीलपट्टू पक्षी विहार यह विहार आंध्र प्रदेश के दक्षिण में दोरावई सतराम नगर से एक किमी दूर समुद्री किनारे पर है। यहाँ समुद्री और ध्रुव क्षेत्रीय पक्षी देखने को मिलते हैं। दोरावई सतराम नगर रेल से जुड़ा है। यहाँ से निकटतम शहर 100 किमी दूर चेन्नई है। यहाँ घूमने का सर्वोत्तम समय अक्तूबर से मई तक का होता है। इस दौरान यहाँ अधिक से अधिक पक्षी देखने

को मिलते हैं।

42. पपीकोंडा पशु विहार यह विहार गोदावरी नदी के किनारे स्थित है। इसकी स्थापना 1978 में की गई थी। यहाँ चीते, बाघ, भालू, चौसिंघे, लोमड़ी व अनेक प्रकार के पक्षी दिखाई देते हैं। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा 80 किमी दूर राजामुंद्री है। यहाँ घूमने के लिए नवंबर से मई तक का समय अच्छा होता है।

43. पालमपेट यह स्थल वारंगल के पूर्व में 40 मील दूर है। यहाँ रामप्पा नाम से एक प्रसिद्ध मंदिर है। यह मंदिर काजीपेट के हजार स्तंभों वाले मंदिर के नमूने पर बना है और मध्य काल की दक्खन वास्तुकला का बहुत ही अच्छा नमूना है। इस मंदिर की दीवारों और स्तंभों पर रामायण और महाभारत के दृश्य बनाए गए हैं। बाहरी दीवारों पर देवी-देवताओं, योद्धाओं, कलाबाजों, संगीतकारों और कामुक अवस्थाओं में नृतकियों की मूर्तियाँ बनी हैं। एक मूर्ति में कृष्ण को गोपियों के कपड़े चुराते हुए दिखाया गया है।

44. पुलीकट यह मद्रास के 60 किमी उत्तर में है। सतरहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में पुलीकट एक पुर्तगाली बस्ती थी।

पर्यटन स्थल पुलीकट में तमिलनाडु की सीमा के निकट पुलीकट नामक एक झील पर प्रसिद्ध पक्षी विहार है, जहाँ तरह-तरह की मछलियाँ, पक्षी और घड़ियाल देखने को मिलते हैं। यहाँ भ्रमण का उपयुक्त समय अक्तूबर से मार्च तक का होता है।

45. पेनुकोंडा—ऐतिहासिक महत्त्व 1565 में तलिकोटा की लड़ाई में विजयनगर साम्राज्य के अंतिम शासक रामराय की मृत्यु के बाद उसके भाई तिरुमल ने शासन की बागडौर अपने हाथ में ले ली थी, परंतु उसके पास शासन चलाने के लिए पर्याप्त साधन नहीं थे। उसने विजयनगर छोड़ दिया और पेनुकोंडा में रहना आरंभ कर दिया। विजयनगर में वातावरण रामराय के पुत्र पेडा तिरुमल अर्थात् टिम्मा के पक्ष में था। इस प्रकार तिरुमल के वास्तविक रूप में शासक बनने में छह वर्ष लगे और इस दौरान राज्य में अराजकता बनी रही। पेडा तिरुमल ने अपने चाचा तिरुमल के विरुद्ध बीजापुर के सुल्तान अली आदिलशाह से सहायता की माँग की, परन्तु सुल्तान ने पहले विजयनगर और बाद में पेनुकोंडा पर ही कब्जा करने के लिए सेना भेज दी। परंतु पेनुकोंडा के सेनानायक सावरम चेनप्पा नायक ने किले की रक्षा की। तिरुमल ने तब

अहमदनगर के निजामशाह से सहायता की माँग की। इससे निजामशाह ने बीजापुर पर आक्रमण कर दिया, जिस कारण आदिलशाह 1567 में ही वापस लौट गया। बाद में तिरुमल को बीजापुर के विरुद्ध निजामशाह और कुतुबशाह की सहायता करने के लिए कहा गया। तिरुमल ने उनकी सहायता की। परंतु आदिलशाह ने अपने मुस्लिम पड़ौसियों से समझौता करके तिरुमल पर 1568 ई० में ही पूरी शक्ति से पुनः आक्रमण कर दिया और अदोनी पर कब्जा कर लिया, फिर भी वह पेनुकोंडा पर कब्जा नहीं कर सका। उसने नायकों से समझौता करके उन्हें सम्मान दिया। मैसूर के वोडयार और वेल्लोर के नायक तथा केलाडी शासक अभी भी उसके प्रति निष्ठावान थे। तिरुमल ने अपने सबसे बड़े पुत्र श्रीरंगा को तेलुगु क्षेत्र (मुख्यालय पेनुकोंडा) का, दूसरे पुत्र राम को कन्नड क्षेत्र (मुख्यालय श्रीरंगापटना) का और सबसे छोटे पुत्र वेंकटपति को तमिल प्रदेश (मुख्यालय चंद्रगिरि) का राज्यपाल बनाया। 1570 में उसने अपने आपको सम्राट घोषित कर लिया। 1572 में उसके बड़े बेटे श्रीरंगा ने शासन भार संभाल लिया। तिरुमल इसके बाद भी छह वर्ष तक जीवित रहा। श्रीरंगा प्रथम के काल में उसके दो मुस्लिम पड़ौसी राज्यों ने आक्रमण जारी रखे। 1576 में अली आदिलशाह ने पेनुकोंडा पर कब्जा करने के लिए अदोनी से सेना भेजी। श्रीरंगा राजधानी की रक्षा का भार अपने सेनापति चेनप्पा पर छोड़कर धन-माल लेकर स्वयं चंद्रगिरि चला गया। आदिलशाह की सेनाओं ने पेनुकोंडा का तीन महीने तक घेरा डाले रखा। इस दौरान श्रीरंगा ने गोलकुंडा से सहायता की माँग की और आदिलशाह के एक हिंदू सेनापति को अपनी ओर करके आदिलशाह को 21 दिसंबर, 1576 को करारी मात दी। इसके बाद आदिलशाह अपनी राजधानी चला गया। परंतु गोलकुंडा का सुल्तान इब्राहिम कुतुबशाह श्रीरंगा से हुए अपने समझौते को भूलकर तीन महीने के अंदर ही पेनुकोंडा पर चढ़ आया। कुतुबशाह ने उसके काफी क्षेत्र पर कब्जा कर लिया, परंतु श्रीरंगा ने उसे वापस ले लिया। अब कुतुबशाह ने कोंडविदु पर आक्रमण किया तथा उसके काफी क्षेत्र पर पुनः अधिकार कर लिया। श्रीरंगा इन क्षेत्रों को कभी वापस न ले सका। 1585 में उसकी मृत्यु के बाद उसका छोटा भाई राजगद्दी पर बैठा। उसके काल में गोलकुंडा के अगले शासक मुहम्मद कुली कुतुबशाह ने समग्र कुर्नूल तथा कडप्पा और अनंगपुर जिलों के कुछ भागों पर कब्जा कर लिया और पेनुकोंडा का घेरा डाल लिया। वेंकट ने उससे संधि करके उसे वापस भेज दिया। इन दोनों शासकों के मध्य बाद में भी कई युद्ध हुए, जिनमें वेंकट को पर्याप्त सफलता मिली, परंतु उसके काल में तमय्या, गोडा, नदेला, कृष्णमाराय और अन्य सामंतों ने आंदोलन कर दिया। वेंकट ने इन सभी आंदोलनों को सफलतापूर्वक दबाया।

इसी दौरान तमिल प्रदेश से वेल्लोर के लिंगम्मा नायक ने भी आंदोलन कर दिया। वेंकट ने याचम्मा नायडु को लिंगम्मा पर निगरानी का काम सौंपा। याचम्मा ने लिंगम्मा के सहायक नाग से उट्टीरामेरू छीन लिया, जिस कारण मई 1601 में एक तरफ याचम्मा तथा दूसरी तरफ लिंगम्मा और जिंजी, तंजौर, एवं मदुरा के मध्य घमासान युद्ध हुआ। युद्ध में याचम्मा की विजय हुई। नाग का साला दावुल पाप नायडु, जिसने विद्रोही सेना का नेतृत्व किया था, मारा गया। बाद में वेंकट ने वेल्लोर के निकट लिंगम्मा को भी हरा दिया। उसने चोल तथा मदुरा के नायकों के कुछ प्रदेशों पर भी अधिकार कर लिया। अब वेंकट ने वेल्लोर को अपनी राजधानी बना लिया।

46. पोचारम पशु विहार यह विहार प्रदेश की सीमा से लगती हुई पोचारम झील के आस-पास मेडक से 9 किमी दूर है। इसकी स्थापना 1952 में की गई थी। यहाँ तेंदुए, चीते, भालू, चौसिंघे और तरह-तरह के पक्षी देखने को मिलते हैं। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन अक्कनपेट (15 किमी) और निकटतम हवाई अड्डा हैदराबाद (115 किमी) है। यहाँ भ्रमण के लिए उपयुक्त समय अक्तूबर से मई तक का होता है।

47. फवल जीव विहार यह विहार महाराष्ट्र की सीमा से लगता हुआ है। इसकी स्थापना 1965 में हुई थी। यहाँ बाघ, तेंदुए, चीते, चौसिंघे और गौर मिलते हैं। यहाँ से निकटतम शहर 60 किमी दूर मनचेरियल और निकटतम हवाई अड्डा 170 किमी दूर विजयवाड़ा है। यहाँ भ्रमण का उपयुक्त समय फरवरी से मई तक का होता है।

48. मंजीरा पशु विहार यह विहार कर्नाटक की सीमा से लगता हुआ है। इसकी स्थापना 1978 में की गई थी। यहाँ चीते, बाघ और चौसिंघे मिलते हैं। यहाँ से निकटतम शहर 25 किमी दूर रामचंद्रपुरम् और निकटतम हवाई अड्डा 35 किमी दूर हैदराबाद है।

49. मसालिया कृपया मसूलीपट्टम् देखें।

50. मसूलीपट्टम् यह स्थान प्रदेश के गोलकुंडा क्षेत्र में है। इसका प्राचीन नाम मसालिया है।

ऐतिहासिक महत्त्व यहाँ अंग्रेजों ने 1613 ई० में एक कारखाना लगाया था। दिसंबर, 1669 में फ्रांसीसियों ने भी यहाँ अपना दूसरा कारखाना स्थापित किया

था। गोलकुंडा के राजा ने फ्रांसीसी कंपनी को आयात-निर्यात कर से मुक्त कर दिया था। फ्रांसीसियों की सहायता से हैदराबाद का निजाम बनने के उपलक्ष्य में मुजफ्फर जंग ने दिसंबर, 1750 में इसे डुप्ले को दे दिया था। 7 दिसंबर, 1759 को इसे अंग्रेजों ने कर्नल फोर्ड के नेतृत्व में जीत लिया था।

व्यापारिक महत्त्व संगम युग और मुगल काल के दौरान यह व्यापार का एक केंद्र था और यहाँ से पेरू व फारस को वस्तुएँ भेजी जाती थीं। प्राचीन काल में यह व्यापार के लिए इतना अधिक प्रसिद्ध था कि मुबारक शाह के सेनानायक खुसरो खाँ ने मसूलीपट्टम् पर आक्रमण करके यहाँ के एक समृद्ध व्यापारी ख्वाजा तकी का धन हड़प लिया था। मौर्य काल में यहाँ से जावा, सुमात्रा, चंपा (अन्नम्), कंबोडिया आदि के साथ व्यापार किया जाता था।

51. येल्लेश्वर यहाँ महापाषाण युग (तीसरी शताब्दी ई०पू०—पहली शताब्दी ई०) की कब्रें पाई गई हैं।

52. राजामुंद्री यह शहर प्रदेश के पूर्वी भाग में है।

ऐतिहासिक महत्त्व बहमनी सुल्तान का सेनानायक मलिक हसन बहरी जब कटक में हंबीर को शासक बनाकर लौट रहा था, तो लौटते समय उसने 1470 में राजामुंद्री पर अधिकार कर लिया। 1750 के दशक में फ्रांसीसी गवर्नर बूसी ने इसे हैदराबाद के निजाम से ले लिया था। 7 दिसंबर, 1758 को ब्रिटिश कर्नल फोर्ड ने राजामुंद्री पर अधिकार करके निजाम सलाबतजंग से एक संधि की।

53. वारंगल—ऐतिहासिक महत्त्व मध्य काल में वारंगल एक हिंदू शहर हुआ करता था तथा इसका बहमनी राज्य और दिल्ली सल्तनत से झगड़ा होता रहता था। यहाँ काकतीय वंश का शासन हुआ करता था। इस वंश का पहला राजा बेत प्रथम था। उसने कल्याणी के चालुक्य राजा सोमेश्वर प्रथम (1042-68) के आधिपत्य में अपने राज्य की नींव डाली। सोमेश्वर प्रथम ने उसके उत्तराधिकारी प्रोल प्रथम और बेत द्वितीय को कुछ जिले और दे दिए, परंतु उनका उत्तराधिकारी चालुक्य राजा विक्रमादित्य षष्ठ (1076-1126) के काल में 1115 ई० में स्वतंत्र हो गया। उसने तेलंगाना और आंध्र के प्रदेश जीत लिए। उसने चालुक्य राजा तैलप तृतीय को बंदी बना लिया। उसके पुत्र प्रताप रूद्रदेव प्रथम (1168-99) ने भी 1168 ई० में तैलप तृतीय को परास्त किया और 1185 के आते-आते कुर्नूल जिले को अपने राज्य में मिला लिया। उसका उत्तराधिकारी गणपति 1199 में राजा बना। उसने आंध्र प्रदेश, नेल्लोर, काँची और कडप्पा

जिलों पर अधिकार कर लिया, परंतु पांड्य राजा जटावर्मा सुंदर ने 1250 ई० में उससे काँची और नेल्लोर जिले छीन लिए। इसके बाद गणपति ने वारंगल को अपनी राजधानी बनाया। उसके बाद उसकी पुत्री रुद्रांबा 1265 ई० में रानी बनी। मार्को पोलो ने उसके शासन की प्रशंसा की है, परंतु कडप्पा और कुर्नूल का सामंत अंबदेव उसके शासन के दौरान स्वतंत्र हो गया। उसके पश्चात् उसका धेवता प्रताप रूद्रदेव द्वितीय राजा बना। उसने अंबदेव को हराकर उससे कडप्पा और कुर्नूल जिले फिर छीन लिए। सन् 1309 ई० में मलिक काफूर ने प्रताप रूद्रदेव को पराजित करके उससे 100 हाथी, 7000 घोड़े, प्रसिद्ध कोहिनूर हीरा तथा भारी मात्रा में नकदी और जेवर प्राप्त करने के अतिरिक्त उसे वार्षिक कर देने को विवश कर दिया। इन्हें वह 1000 ऊँटों पर लादकर दिल्ली ले गया। मुस्लिम इतिहासकारों ने प्रताप रूद्रदेव को लहरदेव नाम दिया है। बाद में प्रताप रूद्रदेव स्वतंत्र हो गया। तब ग्यासुद्दीन तुगलक के पुत्र जूना खाँ ने 1321 और 1323 में वारंगल पर दो बार आक्रमण किया। पहले आक्रमण में वह प्रताप रूद्रदेव द्वितीय से हार गया, परंतु दूसरे आक्रमण में जीत गया और उसने वारंगल को अपने अधीन कर लिया। 1424 में बीदर के बहमनी शासक शिहाबुद्दीन अहमद शाह के सेनापति खान-ए-आजम ने वारंगल के राजा को मारकर इस पर अपना कब्जा कर लिया।

पर्यटन स्थल प्रताप रूद्रदेव ने वारंगल में चालुक्य शैली में एक मंदिर बनवाया था, जो शिव, विष्णु और सूर्य को समर्पित है। इस मंदिर में एक हजार
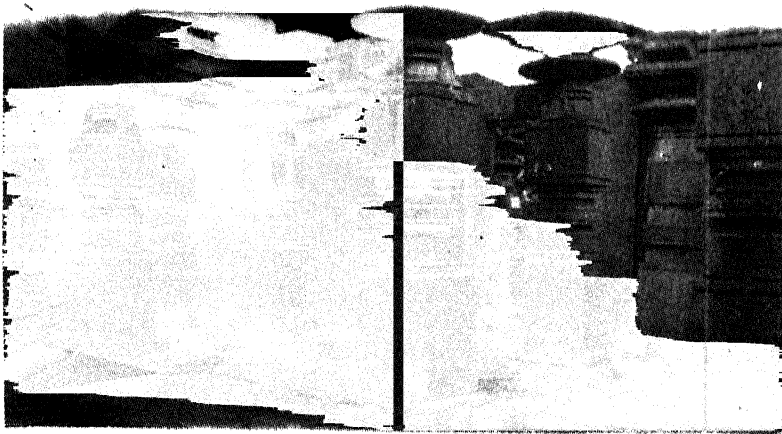
हजार स्तंभों का मंदिर, वारंगल

नक्काशीदार खंभे हैं। इनके अतिरिक्त वारंगल में म्यूजिकल गार्डन, भद्रकाली मंदिर, पदमाक्षी मंदिर और धानपुर मंदिर भी दर्शनीय हैं। काकतीय शासकों ने ही यहाँ से 74 किमी दूर 1213 ई० में रामप्पा मंदिर बनवाया था। गणपति और उसकी पुत्री रूद्रांबा ने यहाँ का किला बनवाया। वारंगल से 50 किमी दूर पाखल वन्य जीव अभयारण्य है।

54. वेंगी—ऐतिहासिक महत्त्व चौथी-पाँचवी शताब्दी में यहाँ शालंकायन वंश के राजाओं का शासन था। इस वंश के प्रसिद्ध शासक हस्तिवर्मा ने इसे अपनी राजधानी बनाया। उसने समुद्रगुप्त से एक युद्ध में हार के बाद उसका आधिपत्य स्वीकार किया था। इस वंश के राजा लगभग 430 ई० तक राज्य करते रहे। इसके बाद यहाँ विष्णुकुंडी वंश के राजाओं ने शासन किया। वे श्रीपर्वतस्वामी को अपना देव मानते थे। माधववर्मा प्रथम (440-60) इस वंश का पहला शासक था। उसके बाद विक्रमेंद्रवर्मा प्रथम (460-80), इंद्रभट्टारक (480-515), विक्रमेंद्रवर्मा द्वितीय (515-35), गोविंदवर्मा (535-56), माधववर्मा द्वितीय (556-616) तथा मनचल भट्टारक ने शासन किया। माधववर्मा प्रथम ने 11 अश्वमेध और अनगिनत अग्निष्टोम यज्ञ किए। उसने वाकातक राजकुमारी से विवाह किया। इंद्रभट्टारक ने कई युद्ध जीते। उसने गंग राजा इंद्रवर्मन से अनेक इलाके छीनकर अपने राज्य का विस्तार किया। गोविंदवर्मा ने 'विक्रमाश्रय' विरुद धारण किया। उसका पुत्र माधववर्मा द्वितीय इस वंश का सबसे प्रसिद्ध राजा था। उसने 'जनाश्रय' विरुद धारण किया और हरण्यगर्भ यज्ञ किया। उसके काल में गंगों से संघर्ष होता रहा। उसने उनके क्षेत्र को जीतने के लिए गोदावरी नदी भी पार की। बादामी के चालुक्य राजा पुलकेसिन द्वितीय (610-42) ने गोदावरी जिले में पिष्टपुर (आधुनिक पिट्ठापुरम्) के राजा को हराकर उसके स्थान पर 631 में अपने छोटे भाई विष्णुवर्धन को वहाँ का राज्यपाल बनाया। विष्णुवर्धन के अधीन विशाखापटनम् से नेल्लौर तक का क्षेत्र था। थोड़े दिनों बाद वह स्वतंत्र हो गया। उसने वेंगी को अपनी राजधानी बनाया और यहाँ पूर्वी चालुक्य वंश के शासन की नींव डाली। उसके बाद जयसिंह प्रथम (641-73), इंद्रभट्टारक (673), विष्णु-वर्धन द्वितीय (673-82),

पुट्टपारथी

गंगी युवराज़ (682-706), जयसिंह द्वितीय (706-18), विषणुवर्धन तृतीय (718-55), विजयादित्य प्रथम (755-72) और विष्णुवर्धन चतुर्थ (772-808) का वर्णन मिलता है। राष्ट्रकूट राजा कृष्ण प्रथम (758-73) के लड़के गोविंद ने वेंगी के चालुक्य राजा विष्णुवर्धन चतुर्थ को हराकर हैदराबाद राज्य के सारे प्रदेश को अपने साम्राज्य में मिला लिया। विष्णुवर्धन चतुर्थ ने राष्ट्रकूट राजा गोविंद द्वितीय की उसके भाई ध्रुव के विरुद्ध सहायता की थी। ध्रुव (780-93) ने बाद में विष्णुवर्धन चतुर्थ को हरा दिया। विष्णुवर्धन चतुर्थ के बाद उसका पुत्र विजयादित्य द्वितीय राजा बना, परंतु उसके भाई भीम सालुक्की ने राष्ट्रकूट राजा गोविंद तृतीय की सहायता से उसका राज्य छीन लिया। 817 में विजयादित्य ने गोविंद और भीम को हराकर अपना राज्य वापस प्राप्त कर लिया। उसने 808 से 847 तक राज्य किया। उसके काल में राष्ट्रकूट राजाओं से संघर्ष चलते रहे। अंत में राष्ट्रकूट राजा अमोघवर्ष ने 830 में विजयादित्य को हराकर वेंगी पर अधिकार कर लिया। वेंगी का अगला चालुक्य राजा काली विष्णुवर्धन पंचम् (847-48) हुआ। बाद में विजयादित्य तृतीय (848-892) ने राष्ट्रकूट राजा कृष्ण द्वितीय और कलचूरी राजा शंकरगण को बुरी तरह हरा दिया और अपने आपको चालुक्य आधिपत्य से मुक्त कर लिया। वेंगी के अगले शासक भीम प्रथम (892-922) के समय में राष्ट्रकूट राजा कृष्ण द्वितीय ने उसके एक भाग को लूट लिया और भीम को वेंगी का सामंत नियुक्त किया। बाद में भीम ने विद्रोह करके
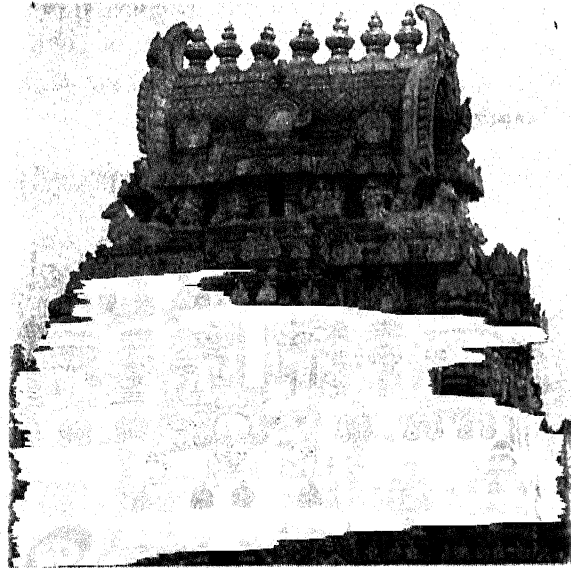
श्रीकलाहस्ती मंदिर, कलाहस्ती

वेंगी का शासन पुनः प्राप्त कर लिया। चालुक्य भीम प्रथम के बाद विजयादित्य चतुर्थ (921), अम्मा प्रथम (921-27) वेजयादित्य पंचम् (927) तैल प्रथम (927), विक्रमादित्य द्वितीय (927-28), भीम द्वितीय (928), युद्धमल्ल द्वितीय (928-35), चालुक्य भीम द्वितीय (935-47), अम्मा द्वितीय (947-70), तैल द्वितीय तथा दाणार्नव (970-73) ने वेंगी का शासन संभाला। परंतु चालुक्य भीम प्रथम के बाद भी इस वंश के शासकों का राष्ट्रकूट राजाओं से युद्ध चलता रहा, जिससे उनकी शक्ति क्षीण हो गई। 973 ई० में यहाँ राष्ट्रकूट राजा कृष्ण तृतीय ने अधिकार कर लिया। 999 ई० में इस वंश का एक उत्तराधिकारी शक्तिवर्मा वेंगी पर चोल राजा राजराजा की सहायता से ही अधिकार कर सका था। इसके बाद चालुक्य राजा चोल राजाओं की कठपुतली बनकर रह गए और उनकी स्वतंत्र सत्ता समाप्त हो गई। विमलादित्य (1011-18), राजराजा नरेंद्र (1019-61) भी इस वंश के उत्तरवर्ती शासक हुए। बाद में कल्याणी के चालुक्य राजा सामेश्वर प्रथम (1042-68) ने वेंगी के राजा से अपना आधिपत्य स्वीकार कराया। विजयादित्य सप्तम् वेंगी में चालुक्य वंश का अंतिम राजा था।

वेंगी के चालुक्य शासक विष्णुवर्धन प्रथम के सौतेले भाई विजयादित्य ने 1060 में उससे वेंगी की गद्दी छीन ली थी। बाद में कल्याणी के चालुक्य राजा विक्रमादित्य ने परमार राजा जयसिंह की सहायता से विजयादित्य को हरा दिया, परंतु विजयादित्य चोल राजा वीर राजेंद्र की सहायता से पुनः शासनारूढ़ हो गया। वीर राजेंद्र की मृत्यु के बाद राजेंद्र चोल ने वेंगी पर अधिकार कर लिया। इस प्रकार वेंगी का चालुक्य राज्य चोल राज्य में मिल गया। विजयादित्य ने गंग राजा के यहाँ शरण ली। राजेंद्र चोल ने अपने पुत्र विक्रम चोल को वेंगी में अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया। विक्रम चोल ने वेंगी पर अधिकार कर लिया और वहाँ से स्वतंत्र रूप से शासन किया।

श्रीसेलम मंदिर की नक्काशी

55. हैदराबाद मूसी नदी पर स्थित यह शहर आधुनिक आंध्र प्रदेश की राजधानी है।

ऐतिहासिक महत्त्व हैदराबाद मौर्य काल से भी पुराना शहर है। चंद्रगुप्त मौर्य ने 305 ई०पू० के शीघ्र बाद इस पर विजय प्राप्त की थी। सातवाहन राजा शातकर्णी ने इसे अपनी राजधानी बनाया था। उसके बाद उसके वंशजों गौतमीपुत्र शातकर्णी (106-30 ई०), वशिष्ठपुत्र (130-45 ई०), यज्ञश्री शातकर्णी (165-95 ई०) और अन्यों ने 225 ई० तक यहाँ से राज्य किया। राष्ट्रकूट राजा कृष्ण प्रथम (758-73) के लड़के गोविंद ने वेंगी के चालुक्य राजा विष्णुवर्धन चतुर्थ को हराकर हैदराबाद राज्य के सारे क्षेत्रों को अपने राज्य में मिला लिया। औरंगजेब की सेनाओं ने इसे 1685 ई० में अपने कब्जे में कर लिया और यहाँ लूट-पाट मचाई। मुगल शासक मुहम्मद शाह ने निजाम-उल-मुल्क मीर कमरुद्दीन को 1713 में यहाँ छह सूबों का सूबेदार बनाया था। 1715 में उसे दिल्ली वापस बुला लिया गया। उसके बाद उसे मुरादाबाद, पटना और उज्जैन का सूबेदार बनाया गया। 1719 में उसे फिर वापस बुला लिया गया और उसे अकबराबाद, इलाहाबाद, मुलतान तथा बुरहानपुर में से किसी एक सूबे की सूबेदारी स्वीकार करने को कहा गया, परंतु उसने इन्कार कर दिया और दक्षिण जाकर मई, 1720 में असीरगढ़ तथा बुरहानपुर के किलों पर कब्जा कर लिया। उसने अपने विरुद्ध भेजी गई सेना को खंडवा और बालापुर में क्रमशः जून और जुलाई, 1720 ई० में हरा दिया। इसके बाद मुगल शासक ने उसे ही अपना दक्खन का वायसराय बना दिया। सन् 1722 ई० में उसे साम्राज्य का वजीर बना दिया गया। परंतु सम्राट से मतभेद होने के कारण उसने 1724 ई० में दिल्ली छोड़ दी और मुगल सेना को शक्करखेड़ा में हराकर 1725 ई० में हैदराबाद में निजामशाही शासन की स्थापना कर ली। 1731 में उसे पेशवा बाजीराव ने हरा दिया और उसे मूँगी शिवगाँव की संधि करनी पड़ी, जिसके अनुपालन में उसने पेशवा को चौथ और सरदेशमुखी देने स्वीकार किए। 1737 में मुगल सम्राट ने उसे अपना मुख्य मंत्री नियुक्त करके उसे आसफ जाह की पदवी दी। यह पदवी सम्मान में राजा सोलोमन के मंत्री आसफ को प्राप्त सम्मान के बराबर थी। बाजीराव ने उसे 1738 में भोपाल के निकट फिर हराकर उसे दुरई सराय की संधि करने के लिए विवश किया, जिसके द्वारा उसे बाजीराव को मालवा के अतिरिक्त चंबल तथा नर्मदा के बीच का क्षेत्र देना पड़ा। 1739 में नादिरशाह के आक्रमण के समय वह दिल्ली में ही था। 1748 में उसकी मृत्यु हैदराबाद में ही हुई। उसके बाद 1750 में मीर मुहम्मद नसीरजंग और 1751 में मुजफ्फरजंग वजीर बने। उनकी तथा 1752 में गाजीउद्दीन खान की मृत्यु भी यहीं हुई। मुजफ्फर जंग फ्रांसीसी सेनापति बूसी के संरक्षण में ही नवाब बन सका था। उसके बाद बूसी ने मीर आसफ-उद्-दौला सलाबतजंग को निजाम बनाया। सलाबतजंग के राज्य पर निगरानी रखने के

लिए वह स्वयं भी 7 वर्ष तक हैदराबाद में ही रहा। 1758 में उसे वापस बुला लिया गया। तब 1759 में पेशवा बालाजी बाजीराव ने उस पर चढ़ाई कर दी और उसे उदयगिरि के युद्ध में हराकर उससे असीरगढ़, अहमदनगर, बुरहानपुर, बीजापुर और दौलताबाद के किले तथा 62 लाख रु. वार्षिक आय की भूमि छीन ली। इस युद्ध के बाद निजाम की शक्ति क्षीण हो गई और मराठों का प्रभाव बढ़ गया। सलाबतजंग के बाद निजाम अली (1762-1803) ने शासन संभाला। 1795 में मराठों ने उसे हराकर यहाँ अपना प्रभुत्व फिर स्थापित कर लिया। 1 सितंबर, 1798 को निजाम ने लार्ड वेल्जली की सहायक संधि पर सबसे पहले हस्ताक्षर किए। निजाम अली के बाद मीर अकबर अली खाँ, सिकंदर जाह (1802-29),
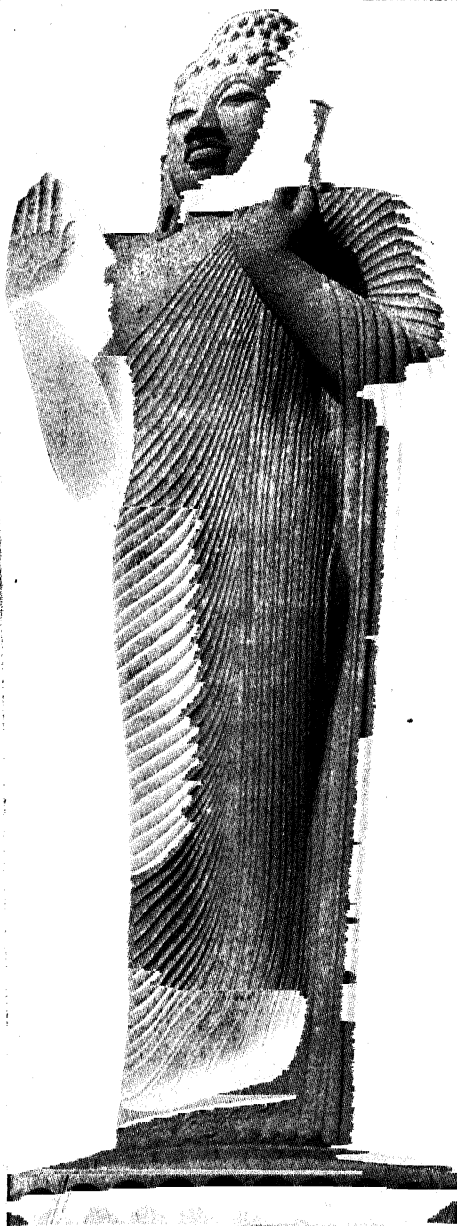
बुद्ध, हुसैन सागर, हैदराबाद
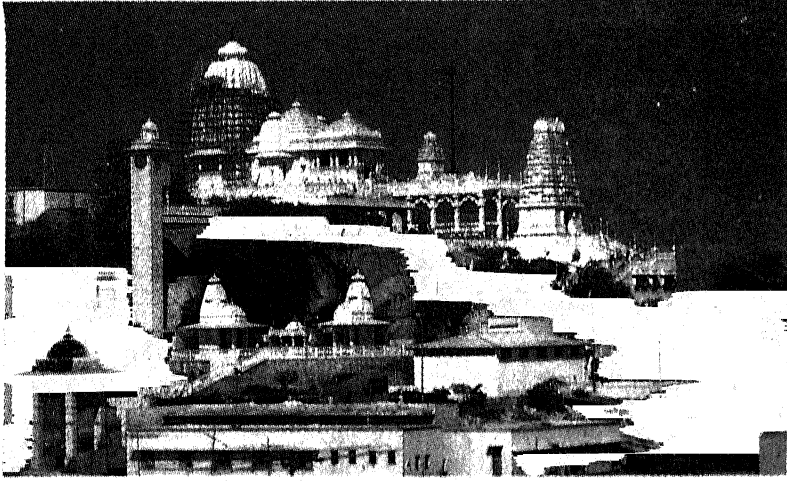
बिड़ला मंदिर, हैदराबाद

नासिरुद्दौला फरखुंदाह अली खाँ (1829-57), अफजल-उद्-दौला (1857-69), मीर महबूब अली खाँ (1869-1911), नवाब मीर उसमान अली खाँ बहादुर फतेह जंग (1911) तथा कासिम रिजवी नवाब बने। देश की स्वतंत्रता के बाद यहाँ के निजाम कासिम रिजवी ने हैदराबाद को स्वतंत्र राज्य के रूप में रखने का निर्णय लिया। यह राज्य चारों ओर से भारत से घिरा हुआ था तथा इसकी अधिकांश जनता हिंदू थी। लार्ड माउंटबेटन ने इसे भारत में मिलाने के लिए निजाम के साथ एक समझौता किया, परंतु निजाम ने समझौते की शर्तें पूरी करने की बजाय हैदराबाद को स्वतंत्र राज्य के रूप में रखने के दबाव को बढ़ाने के लिए मुस्लिम रजाकारों को भड़का दिया, जिस कारण हैदराबाद में हिंदू-मुस्लिमों के झगड़े हो गए। निजाम ने दिल्ली को जीतने की धमकी तक दे डाली। जून, 1948 में लार्ड माउंटबेटन के इंग्लैंड चले जाने के बाद यह समस्या और भी बढ़ गई। तब भारतीय सेना ने 13 सितंबर, 1948 को हैदराबाद पर आक्रमण करके इसे भारत में मिला लिया। मेजर जनरल जे. ऐन. चौधरी को यहाँ का राज्यपाल बना दिया गया। इस व्यवस्था को निजाम ने भी स्वीकार कर लिया।

यहाँ की गई खुदाइयों में नव पाषाण युग के अवशेष मिले हैं।

व्यापारिक महत्त्व हैदराबाद मोती और रत्न जड़ी कीमती चूड़ियों के व्यापार का अच्छा केंद्र है। यहाँ के ताँबे के बर्तन भी विशेष उल्लेखनीय हैं।

पर्यटन स्थल हैदराबाद में अनेक दर्शनीय स्थल हैं। यह बहमनी राज्य के

दौरान मो. अली कुतुबशाह द्वारा 1591 में बनवाई गई 180 फुट ऊँची चार मीनार के लिए विशेष रूप से जाना जाता है। यह मीनार भारतीय, तुर्की और फारसी शैली में बनाई गई है। चार मीनार के पास ही इस शहर की प्रसिद्ध मस्जिद मक्का मस्जिद है। इसे गोलकुंडा के नवाब ने 1614 में बनवाना शुरु किया था, परंतु इसे औरंगजेब ने 1692 में पूरा करवाया। हैदराबाद में फलकनुमा पैलेस, उस्मानिया यूनिवर्सिटी, हाई कोर्ट, नौबत पहाड़, हुसैन सागर झील, लुंबिनि पार्क, बिड़ला तारामंडल, बाग-ए-आम, विज्ञान संग्रहालय, वेंकटेश्वर स्वामी मंदिर, उस्मान सागर झील, सिटी कालेज, चिड़ियाघर, पुरातात्विक संग्रहालय, अजंता पैलेस, येल्लेश्वरम् पैलेस, बिड़ला मंदिर आदि अन्य दर्शनीय स्थल हैं। यहीं पर प्रसिद्ध सालारजंग म्यूजम है, जिसमें ब्रिटिश काल की संगमरमर और अन्य पत्थरों से बनी अनूठी कलाकृतियाँ, चित्रकारियाँ, पांडुलिपियाँ, हथियार और परिधान आदि देखने को मिलते हैं। इस संग्रहालय का निर्माण हैदराबाद रियासत के प्रधान मंत्री सालारजंग बहादुर तृतीय ने करवाया था। हैदराबाद के 10 किमी पश्चिम में गोलकुंडा का विशाल किला है, जहाँ कुतुबशाही सुल्तानों के मकबरे भी हैं। माधापुर में शिल्परामम् (शिल्पग्राम) और 27 किमी दूर शमीरपेट पिकनिक स्थल है।
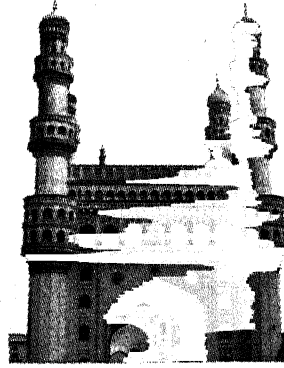
चार मीनार, हैदराबाद

उपलब्ध सुविधाएँ हैदराबाद देश के अन्य शहरों से वायु, रेल तथा सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। ठहरने के लिए यहाँ अनेक होटल और धर्मशालाएँ हैं। स्थानीय यातायात के लिए सिटी बसें, रिक्शे, ऑटो तथा टैक्सियाँ हैं। गर्मियों के मौसम को छोड़कर पूरा साल यहाँ के भ्रमण के लिए उपयुक्त है। एपीटीडीसी तथा आईटीडीसी नगर दर्शन के लिए टूर आयोजित करते हैं। राज्य सरकार के पर्यटन सूचना कार्यालय मुकर्रमजाही रोड पर गगन विहार में, सिकंदराबाद रेलवे स्टेशन तथा हवाई अड्डे पर हैं।

XXX

उड़ीसा

ऐतिहासिक विवरण

प्राचीन काल में उड़ीसा को कलिंग तथा मध्य काल में उत्कल और उद्र कहा जाता था। 268 ई०पू० में अशोक यहीं के राजा को हराने के बाद बौद्ध धर्म की तरफ प्रवृत्त हुआ था। अशोक की मृत्यु के बाद यह प्रदेश स्वतंत्र हो गया था। दूसरी शताब्दी ई०पू० में यहाँ एक प्रसिद्ध तथा शक्तिशाली राजा खारवेल ने शासन किया। चौथी शताब्दी में समुद्रगुप्त ने यहाँ के पाँच राजाओं को हराकर इस पर कब्जा कर लिया था। 610 ई० में बंगाल के राजा शशांक तथा उसकी मृत्यु के बाद थानेश्वर के राजा हर्षवर्धन ने उड़ीसा पर अपना आधिपत्य जमाया। सातवीं शताब्दी में यहाँ गंग राजाओं ने शासन किया। 795 में गंग शासक

महाशिव गुप्त यज्ञाति द्वितीय ने समूचे उड़ीसा को एकीकृत करके इसे खारवेल की भाँति एक विस्तृत रूप दे दिया। चौदहवीं शताब्दी से लेकर 1592 तक यहाँ पाँच मुस्लिम शासकों ने शासन किया। 1592 में इसे अकबर ने अपने साम्राज्य में मिला लिया। मुगलों के पतन के बाद इस पर मराठों ने शासन किया। 1803 ई० में इसे अंग्रेजों ने अपने साम्राज्य में मिला लिया। 7 अप्रैल, 1936 को इसे एक पृथक राज्य बनाया गया। 1949 में इसके आस-पास की रियासतों को मिलाकर आधुनिक उड़ीसा राज्य की उत्पत्ति हुई।

राज्य का कुल क्षेत्रफल 1,55,707 वर्ग किमी और जनसंख्या लगभग 3.5 करोड़ है। राज्य में कुल 30 जिले हैं। लोगों की मुख्य भाषा उड़िया है। राज्य की जनसंख्या का घनत्व 203 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी तथा साक्षरता दर 49 प्रतिशत है।

उत्सव

उड़ीसा का मुख्य त्यौहार जून-जूलाई में मनाया जाने वाला कार उत्सव है, जिसके दौरान चंदन यात्रा, स्नान यात्रा और रथ यात्रा निकाली जाती है। यह त्यौहार पुरी में मनाया जाता है। ऐसा माना जाता है कि नीलगिरि (जहाँ विष्णु का मंदिर है) में विष्णु का निवास है, जहाँ पुरी का मंदिर विष्णु के अवतार भगवान जगन्नाथ की स्मृति में बारहवीं शताब्दी में बनाया गया था। कहा जाता है कि एक बार अवंति का राजा इंद्रद्युम्न विष्णु के दर्शन करने पुरी गया था, परंतु उसने वहाँ विष्णु को अंतर्धान हुआ पाया। नारद ने उन्हें बताया कि उन्हें विष्णु के दर्शन तीन काष्ठ-मूर्तियों के रूप में होंगे। जब नारद को प्रकाश से कौंधियता एक बड़ा वृक्ष समुद्र में तैरता दिखाई दिया, तो उसने इंद्रद्युम्न को उससे तीन मूर्तियाँ बनाकर स्थापित करने को कहा। इंद्रद्युम्न ने विश्वकर्मा से मंदिर बनवाया। मूर्तियाँ बनाने के लिए बढ़ई के रूप में विष्णु जी स्वयं आ गए। उन्होंने ये मूर्तियाँ इस शर्त पर बनानी स्वीकार कीं कि उनका बीच में ध्यान भंग नहीं किया जाएगा, परंतु इंद्रद्युम्न अपनी उत्सुकता नहीं रोक सका और बनती हुई मूर्तियों को देखने के लिए आ गया। इस पर विष्णु ने काम बीच में छोड़ दिया। तभी इंद्रद्युम्न के लिए आकाशवाणी हुई कि वह मूर्तियों को मंदिर में स्थापित कर दे, जिन्हें उसने स्थापित कर दिया। ये तीन मूर्तियाँ भगवान जगन्नाथ, उनके बड़े भाई बलभद्र और उनकी बहन सुभद्रा की हैं। मुख्य त्योहार के दिन ये मूर्तियाँ आसाढ़ के शुक्लपक्ष की पूर्णिमा को 15 मी ऊँचे रथ पर कुछ दूरी पर स्थित गुंडिचा मंदिर ले जाई जाती हैं। इस रथयात्रा के दौरान मृदंग, खड़ताल आदि बजाए जाते हैं और कीर्तन किया जाता है। सबसे आगे बलभद्र, उसके बाद सुभद्रा और सबसे

पीछे जगन्नाथ का रथ होता है। इस उत्सव को पहांडी कहा जाता है। गुंडिचा में नौ दिन रखने के बाद मूर्तियाँ पुनः जगन्नाथ मंदिर में लाई जाती हैं।

नृत्य

राज्य के स्त्री-पुरुष कोया नृत्य करते हैं। इसमें पुरुष बिशन के सींग लगाए हुए होते हैं और महिलाएँ हाथ में लोहे की छड़ी रखती हैं। देवताओं के मुखौटे लगाए हुए पुरुष सेराइकेला बसंतोत्सव के दौरान छऊ नृत्य करते हैं। यह नृत्य शुद्ध पानी उपलब्ध कराने के लिए देवताओं को धन्यवाद के रूप में किया जाता है। राज्य का उड़िया शास्त्रीय नृत्य देश भर में प्रसिद्ध है।

56. उदयगिरि-खंडगिरि—ऐतिहासिक महत्त्व यह स्थान उड़ीसा में भुवनेश्वर के पास पुरी जिले में है। यह स्थान बालाजी बाजीराव और हैदराबाद के निजाम सलाबतजंग के मध्य 1759 ई० में हुए झगड़े का कारण भी था। इस युद्ध में निजाम की हार हुई थी। फलस्वरूप उसे मराठों को 62 लाख रु. सालाना आमदनी वाली भूमि तथा असीरगढ़, दौलताबाद, बीजापुर, अहमद नगर और बुरहानपुर के किले देने पड़े थे।

पुरातात्विक महत्त्व के दर्शनीय स्थल उदयगिरि की पहाड़ियों में कुछ गुफाएँ पाई गई हैं, जिनमें दूसरी शताब्दी ई०पू० में बौद्ध भिक्षु रहा करते थे। इनमें स्वर्ग, हाथी, विजय, चीता, गणेश और रानी गुफा अधिक प्रसिद्ध हैं। यहाँ प्राप्त एक शिलालेख से चंद्रगुप्त द्वितीय के प्रशासन और उसके मंत्रियों के बारे में जानकारी मिली है। इसमें उल्लेख है कि राजा के कई मंत्री होते थे और उनमें से बहुत से उसके साथ रणक्षेत्र में भी जाते थे। इन पहाड़ियों में गुप्त काल की विष्णु, वराहदेव तथा गंगा-यमुना की मूर्तियाँ मिलने के साथ-साथ हाथी गुंफा में एक शिलालेख भी मिला है, जिससे कलिंग के राजा खारवेल (24 ई०पू०) के बारे में जानकारी मिलती है। इस लेख से पता चलता है कि खारवेल चेदि वंश का तीसरा सम्राट था। उसने अपने प्रारंभिक जीवन में उच्च शिक्षा प्राप्त की थी। वह सोलहवें वर्ष में राजकुमार और चौबीसवें वर्ष में कलिंग का शासक बना। उसने कलिंगाधिपति की उपाधि धारण की। वह एक लोक कल्याणकारी शासक था। उसने अपने राज्य की सेना को शक्तिशाली बनाया। उसने राष्ट्रिकों और वज्जियों को पराजित किया और सातवाहनों को ललकारा। उसने मगध नरेश वृहस्पतिमित्र को भी हराया और उससे अपनी पाद-वंदना कराई। खारवेल ने दक्षिण के पांड्य नरेश पर आक्रमण करके उससे काफी धन-संपत्ति प्राप्त की। वह जैन धर्मावलंबी था। उसने जैन साधुओं के लिए अनेक गुफाएँ बनवाईं। इसी लेख
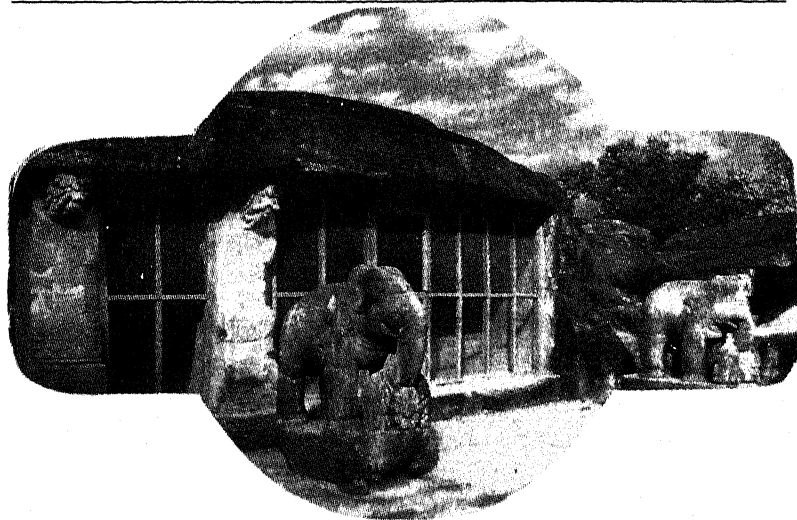
हाथी गुंफा, उदयगिरि

से ज्ञात हुआ है कि खारवेल ने अपनी रानी के लिए उदयगिरि में 75 लाख कार्षापाण की लागत से एक महल बनवाया था। उदयगिरि में 401 ई० का
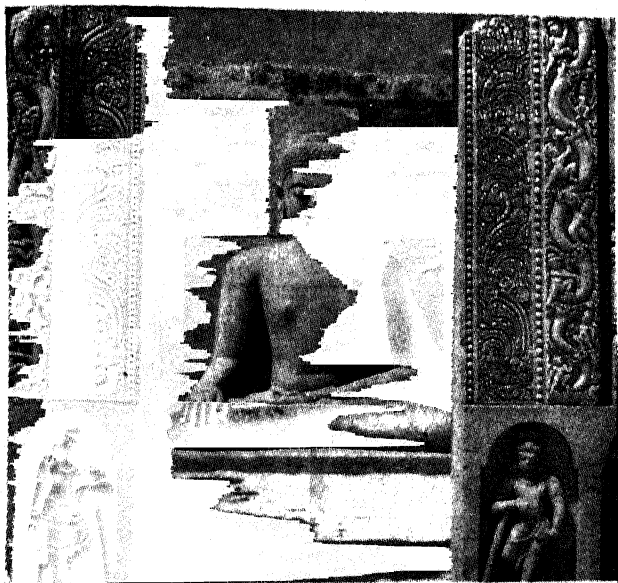
मुख्य मठ, उदयगिरि

दरीगृह शैली का एक विष्णु मंदिर (ग्रीष्म निवास जैसा, जिसमें बहुत से दरवाजे खिड़कियाँ होते हैं) पाया गया है। उदयगिरि की बौद्ध गुफाओं की नक्काशी देखने योग्य है। इन गुफाओं में रानी गुफा की स्थापत्य कला आकर्षक है।

उदयगिरि से कुछ मिनट के पैदल रास्ते पर ही खंडगिरि की गुफाएँ हैं। इनमें अनंत गुफा सबसे अधिक प्रसिद्ध है। यह गुफा खंडगिरि पर्वत की चोटी तक जाती है। चोटी पर अट्ठारहवीं शताब्दी में बना पारसनाथ का एक मंदिर है। एक पत्थर पर सभी चौबीस तीर्थंकारों की मूर्तियाँ गढ़ी हैं। पहाड़ी पर कई अन्य हिंदू तथा जैन मंदिर हैं। उदयगिरि तथा खंडगिरि की गुफाएँ भुवनेश्वर के बिल्कुल पास होने के कारण इन्हें देखकर रात को वापस भुवनेश्वर आया जा सकता है अथवा आगे कोणार्क (65 किमी) या पुरी जाया जा सकता है। इन्हें देखने के लिए नवंबर से मार्च तक का समय सबसे अच्छा रहता है।

57. कटक महानदी और कोठजोड़ी नदियों से घिर इस शहर की स्थापना 989 ई० में कलिंग राजा नृपकेशरी ने की थी। कटक से आशय छावनी है।

ऐतिहासिक महत्त्व 15वीं-16वीं शताब्दी में यहाँ गजपति वंश का शासन था। बहमनी शासक निजामुद्दीन अहमद के काल में गजपति शासक कपिलेश्वर बहमनी साम्राज्य पर आक्रमण करके बीदर तक बढ़ आया था और उससे हर्जाने की भी माँग की थी। 1470 में उसकी मृत्यु के बाद मंगल राय एवं हंबीर के मध्य उत्तराधिकार का युद्ध छिड़ गया। हंबीर बहमनी शासक के प्रधान मंत्री महमूद गावाँ द्वारा मलिक हसन बहरी के नेतृत्व में भेजी गई सैनिक सहायता से कुछ समय के लिए सत्तारूढ़ हो गया, परंतु शीघ्र ही मंगल राय पुरुषोत्तम गजपति नाम से शासक बन गया। 1474-75 ई० में पुरुषोत्तम गजपति ने बहमनी साम्राज्य के अधीनस्थ कोंडविदु के विद्रोहियों का साथ देकर बहमनी साम्राज्य के गोदावरी तक के इलाके पर अधिकार कर लिया, परंतु बहमनी सुल्तान मुहम्मद तृतीय ने उसे हरा दिया। 1477-78 में उसने बहमनी साम्राज्य के अधीनस्थ कोंडपल्ली के विद्रोही भीमराज का पुनः साथ दिया, परंतु बहमनी सुल्तान ने उसे फिर पराजित कर आत्म-समर्पण के लिए बाध्य कर दिया। विजयनगर के शासक कृष्णदेव राय ने 1513-18 के मध्य यहाँ के गजपति शासक प्रताप रूद्र को चार बार हराया और विजयनगर की सेना कटक तक जा पहुँची। विवश होकर प्रताप रूद्र ने अपनी पुत्री का विवाह कृष्णदेव राय के साथ करके उससे समझौता कर लिया। कृष्णदेव राय ने उसे कृष्णा के उत्तरवर्ती प्रदेश वापस कर दिए। विजयनगर के अच्युतदेव राय के काल (1529-42) में कटक के गजपति शासक प्रताप रूद्रदेव ने

विजयनगर पर आक्रमण कर दिया, परंतु हार गया। 1803 की देवगाँव की संधि के अनुसार बरार के भोंसले शासक ने कटक लार्ड वेल्जली को सौंप दिया था।

पर्यटन स्थल यहाँ के चंडी मंदिर पर लोगों की बहुत आस्था है। अन्य दर्शनीय स्थलों में विराट राजा का महल, बाराबंटो दुर्ग, सुबार-गौरांग, चैतन्य मंदिर, बढ़ा घाघरा जल प्रपात, गोपुवन दास गुरुकुल, छतिया, खिरजहा, चंडी खोल तथा अखंडल मणि हैं। भुवनेश्वर यहाँ से निकट ही है। गर्मियों में यहाँ अधिकतम तापमान 41°से और सर्दियों में न्यूनतम तापमान 11°से होता है।

58. कलिंग प्राचीन काल में कलिंग आधुनिक उड़ीसा राज्य और तमिल नाडु का उत्तरी भाग हुआ करता था।

ऐतिहासिक महत्त्व यह स्थान अशोक और यहाँ के राजा के मध्य 261 ई०पू० में हुए युद्ध के लिए जाना जाता है, जिसमें अशोक ने कलिंग के राजा को हराकर कलिंग पर विजय प्राप्त की थी। परंतु युद्ध में लगभग एक लाख व्यक्तियों की मृत्यु तथा इससे कई गुणा लोग बीमारी आदि से मारे जाने और लगभग एक लाख पचास हजार व्यक्तियों के बंदी बनाए जाने से उसकी साम्राज्यवादी नीति पर बहुत प्रभाव पड़ा। वह इस नीति को त्यागकर बौद्ध बन गया। अशोक की मृत्यु के बाद कलिंग स्वतंत्र हो गया था और प्रथम शताब्दी ई०पू० में एक शक्तिशाली राज्य बन गया था। इसका चेत राजा खारवेल एक शक्तिशाली राजा था, जिसने मगध राज्य को भी परेशानी में डाल दिया था। उसने कलिंगाधिपति की पदवी धारण की थी। उसने सातवाहनों, राष्ट्रिकों, वज्जियों और राजग्रह के राजा वृहस्पतिमित्र से युद्ध किए। कलिंग नगर को उसने अपनी राजधानी बनाया। उदयगिरि के हाथी गुंफा लेख में उसके शासन के तेरहवें वर्ष तक की विजयों का उल्लेख है। माठर वंश के सात राजाओं ने कलिंग पर 375 से 500 ई० तक राज्य किया। इसके पश्चात कलिंग के उत्तरी भाग में पूर्वी गंग वंश और दक्षिणी भाग में विष्णुकुंडी राजाओं ने शासन किया। एलोरा के दशावतार गुहालेख से ज्ञात होता है कि प्रथम राष्ट्रकूट राजा दंतिदुर्ग (753-58) ने कलिंग पर विजय प्राप्त की थी। चेदि के कलचूरी राजा युवराज प्रथम तथा चोल राजा राजराजा प्रथम (985-1014) ने भी कलिंग के एक गंग राजा को हराया था। ऐसा माना जाता है कि मालवा, के परमार राजा मुंज ने कलिंग के चालुक्य राजा तैलप द्वितीय को छह बार हराया था, परंतु सातवें युद्ध में उसे मुँह की खानी पड़ी थी। फिर भी, परमार वंश के ही राजा भोज ने अपने शासन (1018-60) के दौरान कलिंग राजा

को हरा दिया था। बाद में बुंदेलखंड के चंदेल राजा धंग (950-1002) ने इसे अपने राज्य में मिला लिया था। चोल राजा कुलोतुंग प्रथम ने भी कलिंग को जीतने के लिए 1076 ई० में दो बार प्रयत्न किया था। बाद में अनंतवर्मन चौड गंग ने यहाँ गंग वंश के शासन की स्थापना की। परमार राजा लक्ष्मणदेव (1086-94) ने कलिंग पर आक्रमण किया था और कल्याणी के चालुक्य राजा जगदेव मल्ल (1138-51) ने कलिंग राजा अनंतवर्मन चौड़ गंग को हराया था। बंगाल के पाल राजा लक्ष्मण सेन ने भी अपने पिता विजय सेन (1160-78) के शासन के दौरान कलिंग के राजा को परास्त किया था।

पुरातात्विक महत्त्व अशोक के शिलालेखों में से दो शिलालेख, जो 256 ई०पू० के हैं, यहीं के पास धौली और जौगड़ में पाए गए हैं। उसके तेरहवें शिलालेख में कलिंग के युद्ध के बारे में प्रकाश डाला गया है। 256 ई० पूर्व में स्थापित कलिंग शिलालेख में कलिंग की प्रशासन पद्धति और आस-पास की जन-जातियों की शासन पद्धति का उल्लेख किया गया है।

59. कोणार्क—पुरातात्विक महत्त्व यह शहर उड़ीसा में भुवनेश्वर से 65 किमी दूर है। 106 से 130 ई० तक यहाँ सातवाहन राजा गौतमीपुत्र शातकर्णी का राज्य था। यह अपने सूर्य मंदिर के लिए प्रसिद्ध है, जिसे पूर्वी गंग वंश के राजा नरसिंहदेव प्रथम ने तेरहवीं शताब्दी (1238-64) में सूर्य के काल्पनिक रथ

कोणार्क के सूर्य मंदिर का मुख्य द्वार

के रूप में बनवाया था। आजकल यह जीर्ण-शीर्ण अवस्था में है और ब्लैक पगोडा कहलाता है। यह मंदिर प्राचीन उड़ियाई स्थापत्य कला का बेजोड़ नमूना है। इस मंदिर में पत्थरों को तराशकर बनाई गई मूर्तियाँ व आकृतियाँ आकर्षण का विशेष केंद्र हैं। यह मंदिर चारों ओर से परकोटे से घिरा हुआ है और इसके तीन ऊँचे-ऊँचे द्वार हैं। मंदिर के तीन भाग हैं नृत्य मंदिर, जगमोहन मंदिर (आराधना मंदिर) और गर्भ गृह। मंदिर की दीवारों पर अप्सराओं, पशु-पक्षियों, देवी-देवताओं के चित्रों और प्राकृतिक दृश्यावली के अतिरिक्त कामसूत्र पर आधारित बहुत
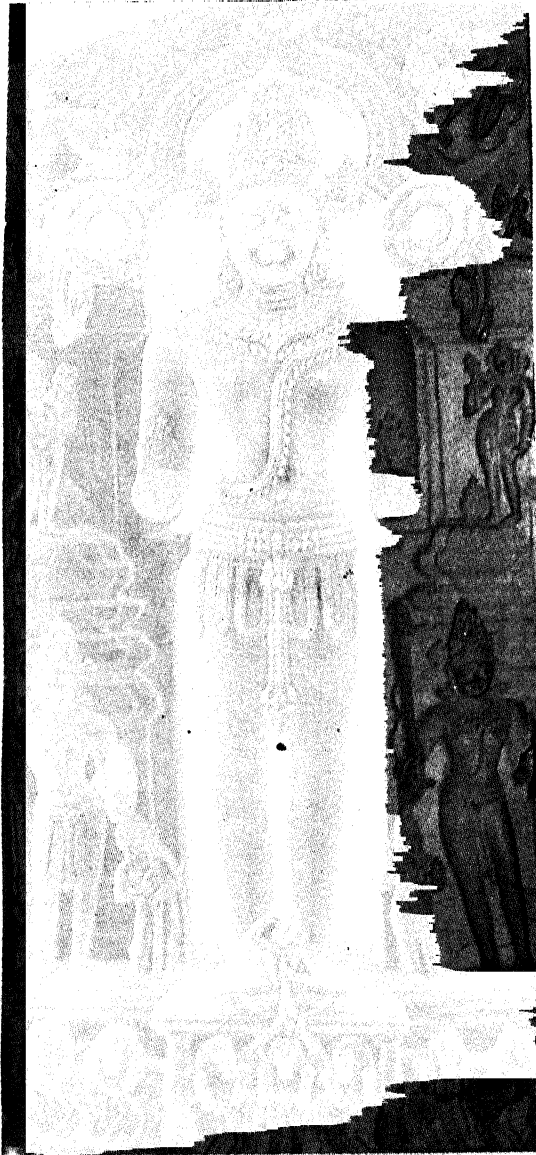
कोणार्क के सूर्य मंदिर का देवता

सी मूर्तियाँ बनी हुई हैं। सूर्योदय मंदिर के ठीक सामने होता है।

पर्यटन स्थल समुद्र तट यहाँ से तीन किमी दूर है। कोणार्क में कलाकृतियों का संग्रहालय भी दर्शनीय है। अन्य दर्शनीय स्थलों में 40 किमी दूर मंगला देवी मंदिर, चंद्रभागा, रत्नागिरि, खिचीड़, गंधमादन पर्वत पर परिमलगिरि स्थल, कलकानगिरि पठार पर रानीपुर, झरियार, गुप्तेश्वर; बहरामपुर के निकट तप्ता पानी; जाजपुर, वैतरिणी नदी, कपिलास, कांटिलो, टिकरपारा तथा कटक का चंडी मंदिर शामिल हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ कोणार्क से निकटतम रेलवे स्टेशन पुरी और हवाई अड्डा भुवनेश्वर है। इन स्थानों से कोणार्क के लिए बसें तथा टैक्सियाँ उपलब्ध हैं। उड़ीसा पर्यटन विकास निगम द्वारा पंथ निवास, भुवनेश्वर और महोदधि निवास, पुरी से कोणार्क के लिए प्रतिदिन बसें भी चलाई जाती हैं। वैसे कोणार्क देखकर भुवनेश्वर या पुरी वापस भी लौटा जा सकता है। फिर भी कोणार्क में ठहरने के लिए टूरिस्ट बंगला, कोणार्क पंथ निवास, यात्री निवास और कुछ लॉज हैं। यहाँ सर्दियों में न्यूनतम तापमान लगभग 11°से और गर्मियों में अधिकतम तापमान लगभग 41°से होता है।

60. गंजम यह स्थान उड़ीसा में है। इसका प्राचीन नाम जौगड़ है।

पुरातात्विक महत्त्व अशोक ने यहाँ 257-56 ई०पू० में एक शिलालेख स्थापित किया था। 256 ई० में स्थापित एक अन्य शिलालेख से उसकी कलिंग पर शासन की पद्धति तथा उसके नैतिक नियमों की जानकारी मिलती है। माधववर्मन के गंजम लेख से ज्ञात होता है कि गौड़ के राजा शशांक का शासन यहाँ भी था। बाद में हर्ष ने इस पर आधिपत्य कर लिया था। इस स्थान की यात्रा ह्यून सांग ने भी की थी। यह शहर हाथी दाँत के काम और हाथी दाँत की वस्तुओं के लिए प्रसिद्ध है।

61. गोंडवाना यह नर्मदा और महानदी के बीच का इलाका है और आजकल उड़ीसा राज्य का उत्तरी भाग है।

ऐतिहासिक महत्त्व अकबर ने यहाँ की रानी दुर्गावती को 1564 ई० में हराकर इसे अपने राज्य में मिला लिया था। उस समय रानी दुर्गावती अपने अवयस्क पुत्र बीर नारायण की संरक्षिका के रूप में राज्य कर रही थी। बीर नारायण लड़ाई में मारा गया और दुर्गावती ने अपने सम्मान की रक्षा में आत्महत्या कर ली। 1635-36 ई० में इसे बुंदेला के राजा जुझार सिंह ने अपने कब्जे में कर लिया था। शीघ्र ही शाहजहाँ की सेना का नेतृत्व करते हुए औरंगजेब आ धमका और उसने उसे

तथा उसके पुत्र बिक्रमजीत को परास्त करने के बाद उन्हें मरवा दिया और गोंडवाना को पुनः मुगल साम्राज्य में मिला लिया।

62. गोपालपुर समुद्री तट गोपालपुर बहरामपुर से 16 किमी दूर है। इसी नगर के पास समुद्री तट पर कुछ सुविधाएँ जुटाकर इस स्थल का विकास किया गया है। गोपालपुर समुद्री तट सामान्य जन-जीवन से दूर समुद्र के किनारे पर विकसित एक शांत पर्यटन स्थल है। मुख्य शहर और समुद्री तट के बीच काजू के पेड़ और नरम रेत के टीले हैं। बरसात के मौसम में यह स्थान बहुत ही मनोहारी बन जाता है।

ठहरने की सुविधाएँ ठहरने के लिए यहाँ कुछ लॉज तथा एक पाँच तारा होटल है। यहाँ यदि रात को ठहरना हो, तो समुद्र की तरफ के दरवाजे-खिड़की वाले कमरे में ठहरना चाहिए अन्यथा वापस बहरामपुर आकर भी ठहरा जा सकता है। भुवनेश्वर और बहरामपुर से यहाँ के लिए बसें मिल जाती हैं। निकटतम रेलवे स्टेशन बहरामपुर है।

63. चिल्का झील यह झील बंगाल की खाड़ी का एक मुहाना है और पुरी के दक्षिण-पश्चिम में है। यह 70 किमी लंबी और 16 किमी चौड़ी है। बंगाल के एक सरदार इलियास ने मुहम्मद तुगलक के समय में अपने आपको दिल्ली से स्वतंत्र घोषित करके यहाँ तक के इलाके को रौंद डाला था। चिल्का झील एशिया में खारे पानी की सबसे बड़ी झील है। इसके आस-पास वनदाग की पहाड़ियाँ हैं। यहाँ शिकार करने, मछली पकड़ने और नौका भ्रमण की अच्छी सुविधाएँ हैं। इसके दक्षिण में रंभा नाम का एक विशाल महल है, जो खलीकोट के राजा ने बनवाया था। यहाँ ठहरने के लिए डाक बंगला और रंभा से 3 किमी दूर पीडब्ल्यूडी का इंस्पेक्शन बंगला है। इसके अतिरिक्त चिल्का में "रानी हाउस नाव" में भी ठहरने के लिए दो केबिन हैं, जिनकी बुकिंग पुरी के आबकारी क्लैक्टर द्वारा की जाती है। यहाँ से सुविधाजनक रेलवे स्टेशन बालू गाँव है। यहाँ जाने के लिए नवंबर से अप्रैल तक का समय अच्छा रहता है।

64. जौगड़ कृपया गंजम देखें।

65. तोशाली कृपया धौली देखें।

66. दंतपुर इसका प्राचीन नाम प्लूरा है। यह कलिंग राज्य की राजधानी हुआ करती थी। दक्षिण-पूर्व के रास्ते में होने के कारण यहाँ से हाथी

दाँत का निर्यात किया जाता था।
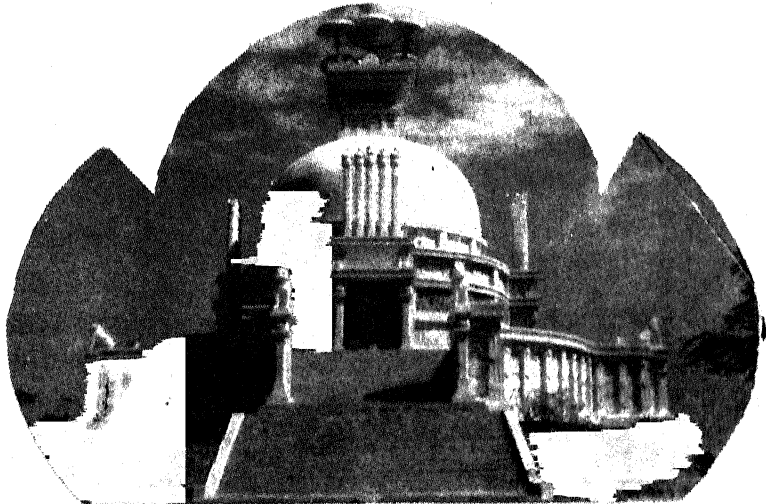
बौद्ध मंदिर, धौली

67. धौली यह उड़ीसा के कलिंग क्षेत्र में है और भुवनेश्वर से पुरी/कोणार्क के रास्ते में है। भुवनेश्वर से यह केवल 15 किमी दूर है। इसका आधुनिक नाम तोशाली है। यह अशोक के कलिंग प्रांत की राजधानी थी।

पुरातात्विक महत्त्व अशोक ने यहाँ 257-56 ई०पू० में एक शिलालेख स्थापित करवाया था, जिसमें उसने बताया है कि उसने तक्षिला में एक नगर महामात्र नियुक्त किया था। 256 ई०पू० में उसने यहाँ एक अन्य शिलालेख स्थापित किया था। इस शिलालेख में उसने कलिंग की शासन पद्धति तथा अपने नैतिक नियमों का वर्णन किया है।

68. नंदन कानन पक्षी विहार यह विहार भुवनेश्वर से केवल 15 किमी की दूरी पर है और उड़ीसा का एक प्रमुख विहार है। इसकी स्थापना विशेष रूप से सफेद शेरों के संरक्षण के लिए 1979 में की गई थी। इस विहार में तरह-तरह के पशु-पक्षी भी देखने को मिलते हैं। यहाँ शेर की सफारी का आनंद लिया जा सकता है। गर्मी के मौसम को छोड़कर यहाँ साल में कभी भी जाया जा सकता है।

69. पिपली पिपली भुवनेश्वर से लगभग 22 किमी दूर है। यह शहर

गोटाकारी के काम के लिए प्रसिद्ध है।

70. पुरी यह स्थान भुवनेश्वर से 60 किमी दूर है।

ऐतिहासिक एवं धार्मिक महत्त्व यह आठवीं शताब्दी ई० में स्थापित शंकराचार्य मठ और कलिंग शैली में बने जगन्नाथ मंदिर के लिए प्रसिद्ध है। जगन्नाथ मंदिर 65 मी ऊँचा है और गंग वंश के राजा अनंतवर्मन चौड़ गंग (1076-1147 ई०) द्वारा बनवाया गया था। इस मंदिर में भगवान जगन्नाथ, बलभद्र और सुभद्रा की चंदन की लकड़ी की मूर्तियाँ रखी हैं।

पुरी भारत के चार प्रमुख धामों में से एक है। भगवान जगन्नाथ का मंदिर होने के कारण इसे जगन्नाथपुरी भी कहा जाता है। जगन्नाथ मंदिर में जून-जुलाई में चंदन यात्रा, स्नान यात्रा और रथ यात्रा तीन प्रमुख उत्सव मनाए जाते हैं। पुरी के मंदिर के चार द्वार हैं। पूर्व का द्वार सिंह

साँप पार्क, नंदन कानन
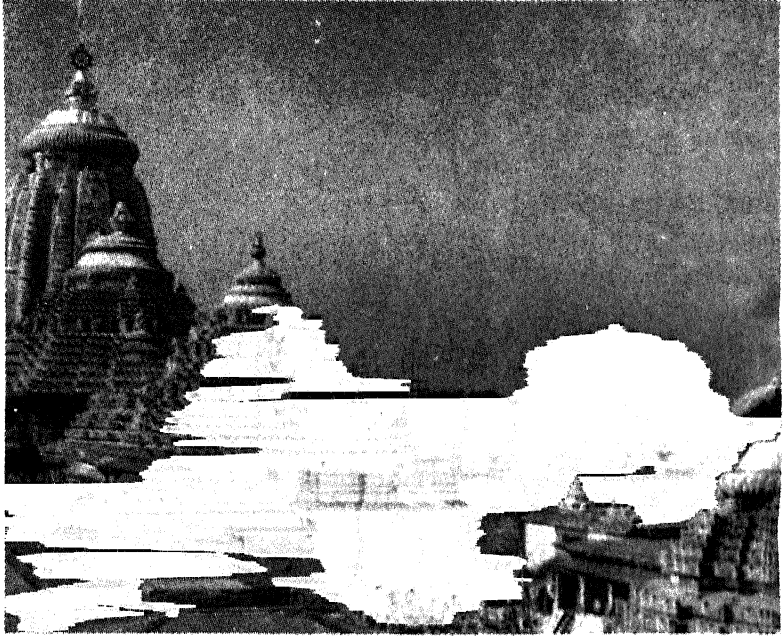
जगन्नाथ मंदिर, पुरी

द्वार, दक्षिण का अश्व द्वार, उत्तर का हाथी द्वार तथा पश्चिम का बाघ द्वार कहलाता है। मंदिर के चार मंडप हैं – भोग मंडप, नृत्य मंडप, जगमोहन मंडप और मुख्य मंडप। बंगाल के सेन
राजा लक्ष्मण सेन (1178-1205) ने उड़ीसा जीतकर पुरी में एक विजय स्तंभ बनवाया था। 1359 ई० में बंगाल से वापस आते समय फिरोजशाह तुगलक ने इसे नष्ट-भ्रष्ट कर दिया था। बाद में बंगाल के शासक हुसैनशाह ने भी पुरी पर हमला किया था। पुरी में मार्कंडेय, चंदन, इंद्रधनुष, पार्वती और श्वेत नाम से पाँच तालाब (पंचतीर्थ) भी हैं। प्राकृतिक दृश्यावली के अतिरिक्त पुरी से कुछ दूरी पर चिल्का झील, प्राकृतिक समुद्री घाट और बाली घाट भी प्रसिद्ध स्थान हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ पुरी से निकटतम हवाई अड्डा भुवनेश्वर है। यह रेल और सड़क मार्ग से देश के सभी भागों से जुड़ा हुआ है। यहाँ ठहरने के लिए ओटीडीसी का पंथ निवास और निरीक्षण बंगला है। इसके अतिरिक्त बड़ा रास्ता पर रामचंद्र गोयंका की धर्मशाला, कचहरी रोड पर तनसुखराय गणपतराय की

रथ यात्रा, पुरी

धर्मशाला, दलवेदी काला में धनजी मूलजी की धर्मशाला, देवीप्रसाद दुधवा वाले की धर्मशाला, भारत सेवाश्रम संघ की धर्मशाला, कन्हैयालाल बंगला तथा बंगला यात्री निवास है। गर्मियों में यहाँ का तापमान लगभग 41°से से 27°से के मध्य तथा सर्दियों में लगभग 27°से से 11°से के मध्य रहता है।
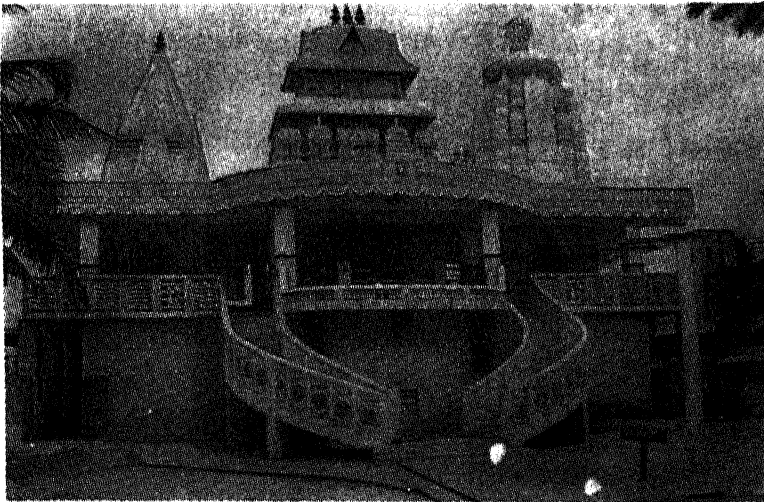
शंकराचार्य मंदिर, पुरी

71. बालासोर बालासोर भारत के पूर्वी तट पर है। अंग्रेजों ने यहाँ 1633 ई० में एक कारखाना लगाया था। सतरहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में यहाँ फ्रांसीसी और पुर्तगाली बस्तियाँ भी पनप गई थीं।

लिंगराज मंदिर, भुवनेश्वर

72. भुवनेश्वर भुवनेश्वर 1950 से आधुनिक उड़ीसा की राजधानी है। प्राचीन काल में भुवनेश्वर केसरी वंश के शैव शासकों की राजधानी थी।

पुरातात्विक महत्त्व यह शहर नागर शैली में बने मंदिरों का विशेष केंद्र है। ऐसा कहा जाता है कि इसकी बिंदुसागर झील के चारों ओर कभी 7000 मंदिर हुआ करते थे। अब भी यहाँ सैंकड़ों मंदिर देखे जा सकते हैं। इसी कारण इसे मंदिरों का शहर भी कहा जाता है। इनमें अनंत वांसुदेव मंदिर, सिद्धेश्वर मंदिर, परशुरामेश्वर मंदिर, राम मंदिर, आठवीं शताब्दी का विट्ठल मंदिर, दसवीं शताब्दी का मुक्तेश्वर मंदिर और ग्यारहवीं शताब्दी में बने ब्रह्मेश्वर, राजा रानी, लिंगराज तथा केदार गौरी मंदिर प्रसिद्ध हैं। ग्रेनाइट पत्थर से तराशा गया 44.8 मी ऊँचा शिवलिंग यहाँ का विशेष आकर्षण है।

अन्य दर्शनीय स्थल मंदिरों के अलावा भुवनेश्वर में संग्रहालय, हैंडीकैफ्ट संग्रहालय, तारामंडल, साइंस पार्क, एकामरा कानन, इंदिरा गाँधी पार्क, ट्राइबल

म्यूजम और रोज गार्डन दर्शनीय हैं।

आस-पास के दर्शनीय स्थल भुवनेश्वर के आस-पास भी अनेक दर्शनीय स्थल हैं। भुवनेश्वर के पास ही 5 किमी दूर खंडगिरि व उदयगिरि की गुफाएँ हैं। आठ किमी दूर धौलीगिरि की एक पहाड़ी पर शांति स्तूप बना हुआ है, जिसके चारों ओर महात्मा बुद्ध की प्रतिमाएँ लगी हुई हैं। यह स्तूप बौद्ध परंपरा का एक सुंदर नमूना है। भुवनेश्वर से 25 किमी दूर नंदन कानन में रोयल टाईगर और सफेद शेरों का एक वन्य जीर उद्यान है। अन्य स्थानों में शिशुपाल गढ़, 21 किमी दूर पिपली (गोटाकारी के काम के लिए), ढबलेश्वर (40 किमी), अतरी में गर्म पानी के झरने (45 किमी), रघुनाथपुर (46 किमी), पुरी (60 किमी), कोणार्क (65 किमी), ललितागिरि-उदयगिरि-रत्नगिरि बौद्ध त्रिकोण (100 किमी), एशिया में खारे पानी की सबसे बड़ी झील चिल्का झील (105 किमी) तथा गोपालपुर समुद्री तट (190 किमी) प्रमुख हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ भुवनेश्वर वायु, रेल एवं सड़क मार्ग से देश के प्रमुख नगरों से जुड़ा हुआ है। स्थानीय पर्यटन के लिए यहाँ लेविस रोड से ओटीडीसी के कोचों एवं मिनी कोचों के अतिरिक्त ऑटो, साइकिल रिक्शे तथा सिटी बसें भी मिलती हैं। यहाँ ठहरने के लिए रेलवे विश्रामालय, सर्किट हाउस, पंथ निवास पर ओटीडीसी का स्टेट गैस्ट हाउस, बिंदु सरोवर के पास राय बहादुर हजारीमल तथा हरगोविंद की धर्मशालाएँ, मथुरा दास डालमिया की धर्मशाला, दुधवा वाले की धर्मशाला, भिवानी वाले की धर्मशाला तथा अनेक होटल हैं। यहाँ गर्मियों में अधिकतम तापमान 41° से और सर्दियों में न्यूनतम तापमान 10°से होता है।

73. रत्नगिरि

रत्नगिरि कटक जिले में बिरुप नदी घाटी में है।

धार्मिक एवं पुरातात्विक महत्त्व रत्नगिरि एक प्रसिद्ध बौद्ध केंद्र है। रत्नगिरि नाम के गाँव के पास एक छोटी सी पहाड़ी में की गई खुदाइयों में दो बड़े-बड़े विहार, एक बड़ा स्तूप, अनेक बौद्ध मंदिर, मूर्तियाँ और बहुत सारे मन्नत के स्तूप पाए गए हैं। इन चीजों से यह साबित हुआ है कि यहाँ यह बौद्ध केंद्र गुप्त राजा नरसिंह बालादित्य के काल (छठी शताब्दी पूर्वार्द्ध) से ही था। आरम्भ में यह महायान शाखा का केंद्र था, परंतु आठवीं-नौवीं शताब्दी में यह वज्रयान अर्थात् तांत्रिक बौद्ध धर्म के केंद्र के रूप में बदल गया। तिब्बती लेखक पैक साम जोन जॉग से ज्ञात होता है कि रत्नगिरि स्थित इस केंद्र ने कालचक्रतंत्र के उद्‌भव में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। रत्नगिरि में पाए गए वज्रयान देव के चित्रों वाले मन्नत के अनेक स्तूपों, इन देवताओं की अलग मूर्तियों, शिलालेखों और टेराकोटा की

अनेक पट्टियों से यह बात और अधिक स्पष्ट हो जाती है। यहाँ पर महाविहार नाम का बौद्ध ज्ञान का एक बड़ा केंद्र था। जो आजकल खंडहर में बदल चुका है। फिर भी यह काफी आकर्षक है। रत्नगिरि में वज्रयान शाखा की पाई गई मूर्तियों में अवलोकितेश्वर, मंजुश्री, हेरुक, जंभाला, कुरुकुल्ल, महाकाल, वज्रसत्व, अपर्चना, वज्रपाणि, तारा, अपराजिता, मारीचि, आर्य सरस्वती, वज्रतारा आदि प्रमुख हैं।

वज्रसत्व, हरिपुर

74. ललितगिरि

यह स्थान उदयगिरि-रत्नगिरि-ललितगिरि बौद्ध त्रिकोण का एक बिंदु है।

धार्मिक एवं पुरातात्विक महत्त्व यहाँ की गई खुदाई से ज्ञात होता है कि यह स्थान बोद्ध धर्म का प्रसिद्ध केंद्र था। खुदाई में यहाँ ईटों का बना मठ, चैत्य हाल मन्नत के अनेक स्तूप तथा पत्थर का एक स्तूप पाया गया है। यहाँ के संग्रहालय में बुद्ध की बड़ी-बड़ी प्रतिमाएँ बोधिसत्वों की बड़ी-बड़ी मूर्तियाँ रखी हैं। इन मूर्तियों पर गंधार और मथुरा शैली की चित्रकला का प्रभाव है। यहाँ पाए गए लेखों से पता चलता है कि तक्षशिला से यहाँ योग सीखने के लिए आया प्राज्ञ नामक बौद्ध गंडव्यूह नामक बौद्ध ग्रंथ की एक प्रति चीन के सम्राट ते-त्सोंग के पास ले गया था, जिस पर उड़ीसा के तत्कालीन शासक सिवाकर देव प्रथम के

हस्ताक्षर थे। यहाँ पर एक शव पेटी में कुछ स्मृति-शेष पाए गए हैं। ऐसा माना जाता है कि ये स्मृति-शेष स्वयं तथागत के हैं, जिस कारण इस स्थान का धार्मिक महत्त्व और भी बढ़ जाता है।

75. संभलपुर उन्नीसवीं शताब्दी में संभलपुर रियासत राजा नारायण सिंह के पास थी। वह निःसंतान मर गया और 1849 ई० में विलय की नीति लागू करके डलहौजी ने इसे बिना किसी कठिनाई के ब्रिटिश राज्य में मिला लिया।
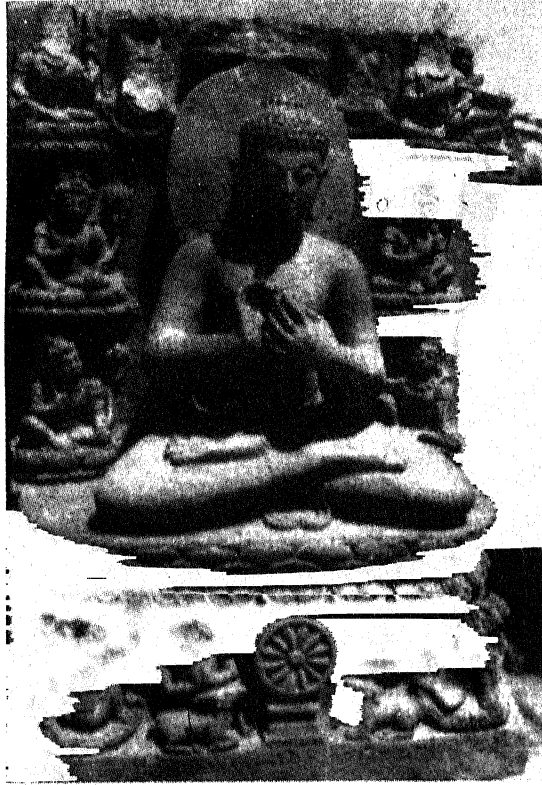
धर्मचक्रपरिवर्तन मुद्रा में बुद्ध
ललितगिरि

76. सिमलीपाल राष्ट्रीय उद्यान यह राष्ट्रीय उद्यान उड़ीसा के उत्तर में है। इसे राष्ट्रीय उद्यान का दर्जा 1980 में दिया गया था। यह बाघों के संरक्षण का केंद्र भी है। इस विहार में कई पहाड़ियाँ, नदियाँ और झरने हैं, जो इसकी शोभा में चार चाँद लगाते हैं। बाघों के अलावा इस उद्यान में पैंगोलिन, घड़ियाल, सांभर हरिण, चित्तीदार हरिण, तेंदुए और हाथी हैं। यहाँ जाने का उपयुक्त समय जनवरी से मई तक का होता है। यहाँ से निकटतम शहर बारीपाड़ा और निकटतम रेलवे स्टेशन व हवाई अड्डा 35 किमी दूर जमशेदपुर है।

***

उत्तर प्रदेश

ऐतिहासिक विवरण

1803 में लार्ड लेक ने मुगल शासक शाह आलम को 90000 रु. वार्षिक पेंशन देकर उससे आगरा तथा अवध के इलाके ले लिए थे। अंग्रेजों ने इन क्षेत्रों का नाम संयुक्त प्रांत रखा था। देश की स्वतंत्रता के बाद जनवरी, 1950 में संयुक्त प्रांत का नाम बदलकर उत्तर प्रदेश कर दिया गया।

जनसंख्या के हिसाब से उत्तर प्रदेश में देश के सबसे अधिक लोग (लगभग 14 करोड़) रहते हैं, जो देश की कुल जनसंख्या का लगभग 16 प्रतिशत हैं। प्रदेश का क्षेत्रफल 2,94,411 वर्ग किमी है। प्रदेश में कुल 76 जिले हैं। राज्य में जनसंख्या का घनत्व 473 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी और साक्षरता दर लगभग 42 प्रतिशत है। राज्य की मुख्य भाषाएँ हिंदी तथा उर्दू हैं।

धार्मिक एवं सांस्कृतिक महत्त्व

उत्तर वैदिक काल में उत्तर प्रदेश का नाम ब्रह्मऋषि देश था। यह प्रदेश भारद्वाज, गौतम, याज्ञवलक्य, वशिष्ठ, विश्वामित्र और वाल्मीकि की तपोभूमि रहा है। उत्तर प्रदेश धर्म, साहित्य, संस्कृति और बुद्धिजीवियों का केंद्र भी रहा है। यहाँ के सारनाथ, कुशीनगर, अयोध्या, प्रयाग, वाराणसी, मथुरा, बद्रीनाथ आदि शहरों ने दुनिया को धार्मिक ज्ञान दिया। उत्तर प्रदेश में ही शंकराचार्य, रामानंद, कबीर, तुलसीदास, सूरदास आदि महान व्यक्तियों का जन्म हुआ।

उत्सव

प्रदेश में होली, दिवाली, दशहरा पर्व तथा अन्य सभी धर्मों के पर्व मनाए जाते हैं। प्रदेश के वृंदावन, मेरठ, मथुरा, खुर्जा, अलीगढ़ आदि ब्रज क्षेत्रों में फाल्गुन मास में होली का त्योहार बड़ी धूम-धाम से मनाया जाता है। इन्हीं क्षेत्रों में कृष्ण जन्माष्टमी के समय अगस्त माह में रास लीला की जाती है। चैत्र (मार्च-अप्रैल) माह में वृंदावन में ब्रह्मोत्सव मनाया जाता है। इस उत्सव में रंगजी अथवा रंगनाथ (विष्णु) तथा लक्ष्मी की मूर्तियों की बीस दिन तक शोभा यात्रा निकाली जाती है। वृंदावन में ही श्रावण मास में विष्णु को समर्पित त्योहार मनाया जाता

है। अयोध्या में चैत्र माह के शुक्ल पक्ष की नवमी को राम जन्म उत्सव राम नवमी तथा वैशाख माह के शुक्ल पक्ष की नवमी को सीता जन्म का उत्सव सीता नवमी मनायी जाती है। कृष्ण द्वारा गोवर्धन पर्वत धारण करने की स्मृति में लोग भाद्रपद में बन यात्रा पर्व मनाते हैं। मथुरा और फतेहपुर सीकरी में कंस मेला पर्व मनाया जाता है, जिसके दौरान कंस का वध किया जाता है।

प्रदेश के इलाहाबाद शहर में हर बारह वर्ष बाद विश्व का सबसे बड़ा मेला कुंभ मेला लगता है। इसके अतिरिक्त हरिद्वार में भी हर छह वर्ष बाद कुंभ मेला लगता है। इनके अतिरिक्त वृंदावन, मथुरा, अयोध्या गढ़मुक्तेश्वर, सोरण, राजघाट, काकोरा, बिठूर, कानपुर तथा वाराणसी में भी समय-समय पर बड़े-बड़े मेले लगते

है। प्रदेश में सैकड़ों पर्यटन स्थल हैं, जहां पर्यटकों का तांता लगा रहता है।

नृत्य

प्रदेश की भूटिया जाति में बोटिया नृत्य प्रचलित है। पूर्वी उत्तर प्रदेश में गुगा नृत्य किया जाता है। पश्चिमी उत्तर प्रदेश में नौटंकी प्रचलित है। नैनीताल में पुरुष और महिलाएँ ठारू नृत्य करते हैं। वृंदावन, मेरठ, मथुरा के आस-पास के इलाकों में रास लीला की जाती है।

77. अयोध्या—ऐतिहासिक महत्त्व अयोध्या का अर्थ है जिसे युद्ध में जीता न जा सके। राजा दशरथ और उसके पुत्र श्रीरामचंद्र, जिन्हें विष्णु का अवतार माना जाता है, यहीं के राजा थे। बुद्ध ने भी यहाँ से कई बार धर्म-प्रचार किया। अशोक ने यहाँ एक स्तूप और मठ बनवाया था। मौर्य काल की मुहरें भी यहाँ पाई गई हैं। सरयू नदी के तट पर स्थित यह शहर कौशल, ईक्षवाकु और गुप्त राजाओं की राजधानी भी रहा है।

सांस्कृतिक और धार्मिक महत्त्व अयोध्या में पुष्यमित्र सुंग द्वारा स्थापित एक राम शिलालेख पाया गया है। प्राचीन काल में यह शहर ब्राह्मणवाद का केंद्र था। हर्षवर्धन के समय में ह्यून सांग ने भी इस शहर की यात्रा की थी। गुप्त काल में यह धार्मिक और राजनैतिक विचारधाराओं का केंद्र था। यहाँ सभी धर्मों के लोग रहते थे। यह शहर मोक्ष देने वाले भारत के सात शहरों में से एक माना जाता है।

व्यापार बुद्ध के काल में अयोध्या एक समृद्ध नगर था। यहाँ की उस समय की व्यापारिक स्थिति के लिए कृपया बिहार राज्य में चंपा देखें।

पर्यटन स्थल अयोध्या में पाँच-छह हजार मंदिर हैं अर्थात् यहाँ घर-घर में मंदिर हैं। इनमें नागेश्वरनाथ मंदिर, श्री कालेराम जी का मंदिर, रामजन्म भूमि स्थल, राम की पौड़ी, हनुमानगढ़ी, तुलसी चोरा, कनक भवन, तुलसी उद्यान, मणिपर्वत, तुलसी स्मारक भवन, राजघाट उद्यान, ऋषभदेव जैन मंदिर, नामकथा संग्रहालय आदि दर्शनीय हैं। यहाँ स्नान के लिए वशिष्ठ कुंड, गणेश कुंड, चंद्रकीर्ति कुंड, ब्रह्म कुंड, वृहस्पति कुंड, सीता कुंड, क्षीरोद कुंड, अग्नि कुंड,-विद्या कुंड आदि अनेक कुंड हैं। इनके अलावा अयोध्या में लगभग 365 घाट हैं, जिनमें राम घाट, लक्ष्मण घाट, जानकी घाट, राजघाट, गोलाघाट, स्वर्गद्वार आदि प्रसिद्ध हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ यह स्थान देश के अन्य भागों से रेल तथा सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। स्थानीय भ्रमण के लिए यहाँ रिक्शे, ताँगे, आटो रिक्शे, टैंपो, नगर

बसें आदि की सुविधाएँ हैं। अयोध्या घूमकर लखनऊ या फैजाबाद भी वापस आया जा सकता है, लेकिन वहाँ रुकना ही पड़े तो बिड़ला धर्मशाला और मोहनलाल धर्मशाला (दोनों बस स्टैंड के पास), जैन धर्मशाला और कश्मीरी धर्मशाला (दोनों कटरा में), कानपुर की धर्मशाला, भैया कन्हई लाल धर्मशाला, महादेव प्रसाद धर्मशाला (तीनों रायगंज में), चित्रगुप्त धर्मशाला, हरिसिंह की धर्मशाला (दोनों नया घाट पर), मारवाड़ी धर्मशाला (वासुदेव घाट पर), लखनऊ धर्मशाला, मुंबई धर्मशाला, सूरजमल धर्मशाला (तीनों स्वर्गद्वार पर), कनक भवन धर्मशाला, रामचरित मानस टूरिस्ट धर्मशाला तथा हनुमानगढ़ी धर्मशाला में भी ठहरा जा सकता है। इनके अतिरिक्त रेलवे विश्रामगृह, टूरिस्ट बंगला तथा छोटे-बड़े कई होटल हैं। पर्यटन संबंधी सूचना के लिए यहाँ सहायक पर्यटक अधिकारी के कार्यालय से; रेलवे स्टेशन के निकट पथिक निवास में स्थित साकेत परिषद से तथा फैजाबाद में 217/21, कैंट मार्ग पर स्थित पर्यटन कार्यालय से संपर्क किया जा सकता है।

78. अलमोड़ा यह कुमाऊँ का सबसे पुराना स्थान है। इसे 1563 ई० में राजा कल्याण चन्द ने बसाकर और अपनी राजधानी बनाया था। 1790 से 1815 तक यहाँ नेपाली गोरखाओं का शासन था और उसके बाद अंग्रेजों का। यह शहर घोड़े की नाल के आकार का है। सुयाल तथा कोसी नदियाँ इसके पास से होकर गुजरती हैं। यह प्राकृतिक सौंदर्य से भरपूर है। बर्फ से ढकी हिमालय की कई चोटियाँ यहाँ से देखी जा सकती हैं।

पर्यटन स्थल यहाँ चितयी मंदिर, ब्राइट ऐंड कार्नर, मारतोला, कटारमल, बिनसर, कालीमठ, जोगेश्वर, बागेश्वर, डीयर पार्क, कसार देवी का मंदिर, संग्रहालय तथा कर्णनाथ दर्शनीय स्थल हैं। चितयी मंदिर में श्रद्धालु अपनी मनोकामना पूरी होने के बाद घंटी टाँगने आते हैं। यहाँ ऐसी छोटी-छोटी हजारों घंटियाँ टंगी हैं। ब्राइट ऐंड कार्नर से सूर्योदय एवं सूर्यास्त के नजारे दिखाई देते हैं। मारतोला और कालीमठ पिकनिक स्थल हैं। कटारमल में कोणार्क के सूर्य मंदिर के बाद दूसरा बड़ा सूर्य मंदिर है, जो 800 वर्ष पुराना है। बिनसर में बिनेश्वर (शिव) मंदिर है। इसी प्रकार जोगेश्वर तथा बागेश्वर में भी शिव मंदिर हैं। अलमोड़ा पिंडारी ग्लेशियर का भी प्रयाण-स्थल है और क्षेत्र के सभी स्थानों से जुड़ा हुआ है।

उपलब्ध सुविधाएँ रेलवे स्टेशन यहाँ से 90 किमी दूर काठगोदाम और हवाई अड्डा 122 किमी दूर पंतनगर है। यहाँ जाने के लिए अप्रैल-जून और सितंबर-

अक्तूबर का समय अच्छा रहता है।

79. अलीगढ़ यह शहर दिल्ली से लगभग 125 किमी दूर है।

ऐतिहासिक महत्त्व ग्यारहवीं शताब्दी के अंत में अलीगढ़ पर ऐबक का और पंद्रहवीं शताब्दी के आरंभ में जौनपुर के शर्की शासकों का राज्य था। सोलहवीं शताब्दी के आरंभ तक यह राजपूतों का एक गढ़ था। इसके बाद यह मुगलों के हाथों में चला गया। अहमदशाह अब्दाली ने 1760 ई० में यहाँ के जाटों को आत्म-समर्पण के लिए विवश करके इसे अपने अधीन कर लिया था। अंग्रेजी शासन के दौरान यह शहर मुस्लिम गतिविधियों का मुख्य केंद्र था। दूसरे मराठा युद्ध में लार्ड लेक ने इस पर कब्जा कर लिया था। सर सैयद अहमद खान ने यहाँ मुस्लिम आंदोलन चलाया और 1875 ई० में मोहम्डन ऐंग्लो ओरियंटल कॉलेज (ऐमएओ कॉलेज) की स्थापना की। ऐमएओ कॉलेज को 1920 में विश्वविद्यालय का दर्जा दे दिया गया और इसका नाम अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय पड़ गया। यह शहर अपने तालों के लिए पूरे भारत में प्रसिद्ध है।

80. अवध—ऐतिहासिक महत्त्व वैदिक काल में अवध कौशलों के अधीन था और अयोध्या की राजधानी था। हर्ष के अधीन यह एक प्रमुख शहर था। किसी समय अलाउद्दीन यहाँ जलालुद्दीन खिलजी का गवर्नर रहा था। मुहम्मद तुगलक के समय में अवध में विद्रोह फैल गया था, परंतु उसे किसी तरह दबा दिया गया था। 1856 में डलहौजी ने यहाँ के नवाब वाजिद अली शाह को दुर्व्यवस्था का दोष देकर गद्दी से उतार दिया और अवध को ब्रिटिश राज्य में मिला लिया। उसने उसकी 12 लाख रु. वार्षिक पेंशन बाँध दी।

81. अहिच्छत्र—ऐतिहासिक महत्त्व यह शहर बरेली के 30 किमी उत्तर में आधुनिक रामनगर है। इसे छत्रवती भी कहा जाता था। ऐसा माना जाता है कि गुरु द्रोणाचार्य ने इसे पांडवों की सहायता से द्रुपद से छीना था। कभी यह उत्तरी पांचाल राजाओं और कटहरिया राजपूतों की राजधानी था। समुद्रगुप्त ने इसके राजा अच्युत को परास्त करके इसे अपने राज्य में मिला लिया था। तुर्कों के आधिपत्य के दौरान अहिच्छत्र शक्ति का केंद्र था। ह्यून सांग ने ईसा की सातवीं शताब्दी में इस नगर का दौरा किया था। बर्नी लिखते हैं कि अहिच्छत्र पर कब्जा करने के लिए बलबन ने भी इस पर आक्रमण किया था।

पुरातात्विक महत्त्व यहाँ यमुना की एक मूर्ति, एक किला, तीसरी शताब्दी ई०पू० से 900 ई० तक के बौद्ध स्तूप तथा चित्रों से सजे नव-पाषाण युग के

मिट्टी के बर्तन पाए गए हैं। यहाँ हूण शासक तोरमाण के गुरु हरिगुप्त के सिक्के मिले हैं। अहिच्छत्र में हड़प्पा संस्कृति के बाद की संस्कृति के अवशेष भी मिले हैं। इस संस्कृति के मिट्टी के बर्तन भूरे रंग के और चित्रित होते थे। मकान बनाने के लिए लोग कच्ची ईंट तथा सरकंडों का प्रयोग करते थे। वे घोड़े और ताँबे से परिचित थे। सभ्यता के अंतिम दिनों में लोहे का प्रयोग भी होने लगा था। वे चावल के अतिरिक्त गाय तथा हरिण का माँस भी खाते थे।

82. आगरा—निर्माण यह दिल्ली से लगभग 210 किमी दूर यमुना नदी के किनारे स्थित है। इसे लोदी वंश के शासक सिकंदर लोदी ने 1504 ई० में बनवाकर अपनी राजधानी बनाया था। सिकंदर लोदी की मृत्यु 1517 में यहीं हुई थी। 1505 ई० में यहाँ एक भयंकर भूकंप आया था, जिस कारण इसकी बहुत सी इमारतें धराशायी हो गई थीं।

राजधानी के रूप में आगरा सैयदों, लोदियों और मुगलों की राजधानी रहा है। 1526 में पानीपत की पहली लड़ाई में विजय के बाद बाबर ने आगरा पर अपना आधिपत्य जमा लिया था। 1527 में कन्वाह की लड़ाई के बाद उसने अपनी राजधानी काबुल से आगरा बदल ली। यहीं 1530 ई० में उसका स्वर्गवास हुआ। 1540 ई० में शेरशाह ने इस पर अपना कब्जा कर लिया। मोहम्मद आदिल के समय में शेरशाह सूरी के भतीजे इब्राहिम सूर ने विद्रोह करके आगरा तथा दिल्ली पर कब्जा कर लिया। आदिल चुनार चला गया। बाद मैं 1555 में हुमायूँ ने इस पर कब्जा कर लिया। परंतु मोहम्मद आदिल का प्रधान मंत्री हेमू एक महत्त्वाकांक्षी सेनानायक था। उसने आगरा तथा दिल्ली पर पुनः कब्जा कर लिया। 1556 ई० में पानीपत के दूसरे युद्ध में विजय के बाद अकबर ने आगरा पर अपना नियंत्रण कर लिया। इसने उसे 1569 तक अपनी राजधानी बनाया, जिसके बाद उसने राजधानी फतेहपुर सीकरी स्थानांतरित कर ली। 1605 में उसके पुत्र जहाँगीर ने आगरा को पुनः अपनी राजधानी बना लिया। उसके काल में 1608 में ब्रिटिश कप्तान हाकिंस ने उससे सूरत में एक फैक्टरी खोलने का फरमान प्राप्त कर लिया। 1615 में सर टामस रो उसके दरबार में आया। उसने भी सम्राट से फैक्टरियाँ खोलने का फरमान प्राप्त कर लिया। इसके बाद 1639 तक आगरा मुगलों की राजधानी रही। सन् 1639 में शाहजहाँ ने दिल्ली में शाहजहाँनाबाद बनाकर अपनी राजधानी आगरा से शाहजहाँनाबाद बदल ली। 1785 अथवा 1786 में उज्जैन के महादजी सिंधिया ने इसे मुगल सम्राट से छीन लिया। 1803 ई० में इसे लार्ड लेक ने हथिया लिया और अपने उत्तर-पश्चिमी सूबों की राजधानी बना लिया।
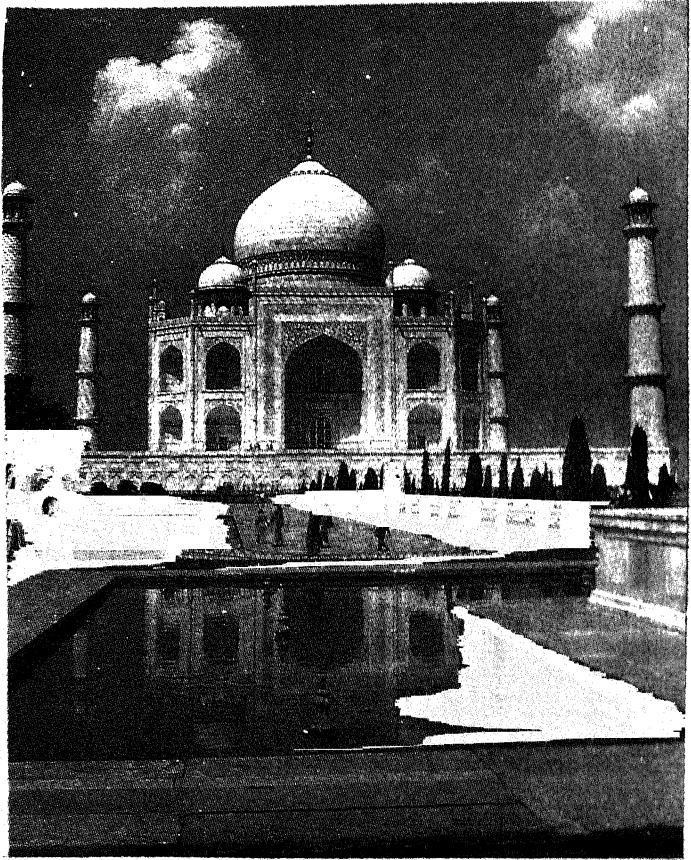
संगमरमर में स्वप्न, ताजमहल, आगरा

पुरातात्विक महत्त्व के स्थल 1526 ई० में बाबर ने यहाँ आराम बाग नाम से एक बाग बनवाया था, जिसे बाद में राम बाग कहा जाने लगा। हुमायूँ ने यहाँ एक मस्जिद बनवाई थी, जिसके अवशेष अब भी देखने को मिलते हैं। अकबर ने 1564 से 1572 तक यहाँ 500 भवनों वाला बीना किला बनवाया। यह किला विश्व के सबसे बड़े किलों में से एक है। नूरजहाँ ने अपने पिता इतमद-उद्-दौला (मिर्जा ग्यासुद्दीन बेग) की स्मृति में यहाँ 1628 ई० में एक मकबरा बनवाया।

इतमद-उद-दौला का मकबरा, आगरा

शाहजहाँ ने अपनी पत्नी अर्जुमंद बानु बेगम (मुमताज महल) की याद में यमुना नदी के किनारे 1648 ई० में ताजमहल नाम से विश्व प्रसिद्ध मकबरा बनवाया, जिसे बाद में इतिहासकारों ने संगमरमर में स्वप्न और सौंदर्य का कोष कहा। इसका नक्शा पारसी वास्तुकार उस्ताद ईसा ने बनाया था। शाहजहाँ ने यहाँ बीना किले में मोती मस्जिद तथा मुसम्मन बुर्ज भी बनवाए। मुसम्मन बुर्ज उसने अपनी बेगम मुमताज महल के लिए उसके जीवन काल में ही बनवाया था। बाद में औरंगजेब के कैदी के रूप में 1666 ई० में उसकी मृत्यु यहीं हुई थी। औरंगजेब ने आगरा में शिवाजी को 12 मई, 1666 ई० को कैद किया था, जहाँ से वह उसी वर्ष 29 अगस्त को बच निकला।

आगरा का किला

व्यापारिक गतिविधियाँ

लोदी तथा मुगल काल में आगरा व्यापार और उद्योग

का केंद्र तथा फारस से आने वाले व्यापारियों का शरण-स्थल था। यह सभी दिशाओं में सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ था। इसके आस-पास के इलाके में नील की खेती होती थी।

आगरा के किले का अंदर का दृष्य

पर्यटन स्थल आगरा में ताजमहल, आगरा किला, राम बाग, स्वामी बाग, इतमद-उद्-दौला का मकबरा तथा चिनी का रोजा (अफजल खाँ और उसकी पत्नी का मकबरा) मुख्य दर्शनीय स्थल हैं। बीना किले के अंदर रंग महल, शीश महल, जहाँगीर महल, खास महल, मीना मस्जिद, शाहजहानी महल, अकबर महल, दीवाने आम, दीवाने खास, रनिवास, नगीना मस्जिद तथा शाही मोती मस्जिद दर्शनीय हैं। अन्य दर्शनीय स्थलों में अकबरी चर्च (1602 में अकबर द्वारा निर्मित), आगरा से 5 किमी दूर दिल्ली मार्ग पर अकबर द्वारा आरंभ किया गया और बाद में उसके पुत्र जहाँगीर द्वारा 1613 में संपन्न सिकंदरा का मक़बरा, 1618 में बना जहाँगीर काल के कवि शकुल्लाह का मकबरा, मरियम का मकबरा (जहाँगीर द्वारा अपनी माँ मरियम की याद में 1611 में निर्मित), शाहजहाँ की पुत्री जहाँआरा द्वारा 1648 में निर्मित जामा मस्जिद तथा गुरु का ताल (गुरु तेग बहादुर की नजरबंदी का स्थल) हैं। आगरा से 20 किमी दूर कीटम पक्षी विहार, 54 किमी दूर पटना पक्षी उद्यान तथा 60 किमी दूर भरतपुर में केवला देव राष्ट्रीय पक्षी विहार भी दर्शनीय स्थल हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ आगरा में ठहरने के लिए उत्तर प्रदेश राज्य पर्यटन निगम का ताज खेमा (पूर्वी द्वार, ताजमहल) और आवास गृह (राजा की मंडी), यूथ होस्टल (संजय प्लेस, ऐमजीरोड), रेलवे विश्राम कक्ष (आगरा कैंट रेलवे स्टेशन) तथा अग्रवाल, प्रताप चंद्र जैन, सुंदर लाल जैन एवं जानकी प्रसाद धर्मशालाएँ (सभी राजा की मंडी में) हैं, जहाँ उचित दर पर ठहरने की व्यवस्था है। इसके अतिरिक्त फतेहाबाद रोड, ऐमजी रोड, ताज रोड, स्टेशन रोड, राजा की मंडी, बालू गंज, नौलखा बाजार आदि में रहने के लिए अनेक होटल तथा खाने-पीने के अनेक स्थल हैं। यह शहर दिल्ली तथा अन्य शहरों से सड़क, रेल तथा हवाई मार्ग से जुड़ा हुआ है। दिल्ली से यह वायुदूत सेवा से भी जुड़ा है। गर्मियों के मौसम को छोड़कर आगरा कभी भी जाया जा सकता है। भारत सरकार का

पर्यटन विभाग 191, माल रोड से प्रतिदिन टूर भी संचालित करता है।

83. आलमगीरपुर—पुरातात्विक महत्त्व यह स्थान दिल्ली से 45 किमी दूर हिंडन नदी पर है। यहाँ सन् 1958 में की गई खुदाई से पता चला है कि यह सिंधु घाटी सभ्यता का एक स्थल था। यहाँ पाई गई वस्तुएँ हड़प्पा और मोहनजोदाड़ो से मिलती-जुलती हैं। आलमगीरपुर के अवशेषों से यह सिद्ध होता है कि सिंधु घाटी सभ्यता पूर्व में उत्तर प्रदेश तक फैल चुकी थी। यहाँ सिंधु सभ्यता की चार परतें पाई गई हैं। पहली परत में गहने तथा हड़प्पा से मिलते-जुलते मिट्टी के बर्तन और दूसरी परत में धूसर रंग के मिट्टी के चित्रित बर्तन पाए गए हैं। पाई गई ईंटों से पता लगता है कि उन दिनों घर बनाने के लिए 30 सेंमी व 15 सेंमी आकार की दो प्रकार की ईंटों का प्रयोग होता था। यहाँ तीन पायों वाली परात भी पाई गई है। एक नांद पर बने चित्रों से सिद्ध होता है कि आलमगीरपुर के लोग कपड़ा बुनना जानते थे। आलमगीरपुर में उत्तर वैदिक काल के अवशेष भी मिले हैं। इन अवशेषों में युद्ध के लोहे के अस्त्र-शस्त्र तथा भूरे रंग के चित्रित मृद्-भांड प्रमुख हैं। मृद-भांडों के साथ बाणों तथा भालों के अग्रभाग और कुल्हाड़ियाँ मिली हैं। लोग काँच के मणिये और चूड़ियाँ बनाने लगे थे और चावल तथा माँस खाते थे। वे कच्चे मकानों में रहते थे। मकानों की छत फूँस और सरकंडों से बनी होती थी।

84. इलाहाबाद यह शहर 1584 ई० में अकबर द्वारा स्थापित किया गया था।

ऐतिहासिक महत्त्व चेदि के कलचूरी राजा लक्ष्मीकर्ण (1042-72) ने इलाहाबाद के क्षेत्र को अपने राज्य में शामिल किया था। यह प्रसिद्धि में भी अकबर के शासन काल में उस समय आ आया, जब उसका बेटा सलीम (जहाँगीर) उसके विरुद्ध विद्रोह करके यहाँ आ बसा था। यह शहर शाह आलम और क्लाइव के मध्य 16 अगस्त, 1765 को हुई संधि के लिए भी जाना जाता है। इस संधि के द्वारा शाह आलम ने क्लाइव को बंगाल, बिहार तथा उड़ीसा के दीवानी अधिकार सौंप दिए अर्थात् इन सूबों में द्वैध शासन स्थापित हो गया। बदले में उसे कड़ा और इलाहाबाद के इलाके मिले। 1773 में इलाहाबाद पुनः अवध के नवाब के हाथ में आ गया। 1801 में इस पर अंग्रेजों ने कब्जा कर लिया। स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान चंद्रशेखर आजाद 27 फरवरी, 1931 को यहीं शहीद हुए थे।

पुरातात्विक महत्त्व के स्थल अशोक ने यहाँ 243-42 ई०पू० में एक शिलालेख और एक लघु शिलालेख की स्थापना की थी। इन शिलालेखों में उसके धर्म व

अहिंसा के सिद्धांत खुदे हुए हैं। अकबर ने यहाँ एक किला बनवाया था, जिसमें 40 खंभों का महल भी है। अशोक का स्तंभ हरिसेन के लेख के लिए भी जाना जाता है। संस्कृत में लिखा गया यह लेख समुद्रगुप्त के साम्राज्य के बारे में जानकारी का सबसे बड़ा स्रोत है। यहाँ की गई खुदाइयों में पहली शताब्दी ई० के रोम के सिक्के मिले हैं।

सांस्कृतिक महत्त्व यह शहर प्रयाग नामक जगह पर गंगा, यमुना और पौराणिक सरस्वती के पवित्र संगम के कारण भी जाना जाता है। भक्ति काल के संत रामानंद का जन्म यहीं हुआ था। यह उन चार स्थानों में से एक है, जहाँ हर बारह और छह वर्ष के पश्चात भारत प्रसिद्ध क्रमशः कुंभ और अर्ध कुंभ मेले लगते हैं।

पर्यटन स्थल अकबर का किला, खुसरो बाग, सेंट कैथेड्रॉल, सेंट जोसफ कैथेड्रॉल, मिंटो पार्क, इलाहाबाद संग्रहालय, जवाहर तारामंडल, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, कौशांबी संग्रहालय तथा आनंद भवन यहाँ के प्रमुख दर्शनीय स्थल हैं। आनंद भवन मोती लाल नेहरू का अपना भवन था, जहाँ स्वतंत्रता संग्राम की रण-नीति तय होती थी। नवंबर, 1970 में इसे स्मारक के रूप में आम जनता के लिए खोल दिया गया। यहाँ मोती लाल नेहरू संग्रहालय है। इसके पास ही स्वराज भवन है, जिसे मोती लाल नेहरू ने 1930 में राष्ट्र को दान दे दिया था। आजकल यहाँ एक बाल घर है। अकबर के किले में तीन सुंदर गेट, 232 ई०पू० का अशोक का 35 फुट ऊँचा स्तंभ, सरस्वती कूप तथा रानी जोधाबाई का महल है। इनके अतिरिक्त यहाँ खुसरो का मकबरा, पातालपुरी मंदिर, अक्षयवट, सरस्वती घाट, नेहरू गार्डन, आजाद पार्क, नाग बासुकी मंदिर, भारद्वाज आश्रम आदि भी दर्शनीय हैं।

ठहरने की सुविधाएँ ठहरने के लिए यहाँ टूरिस्ट बंगला, यात्रिक, रेलवे विश्राम गृह, केजी मार्ग पर वाईडब्ल्यूसीए विश्राम गृह, जल निगम विश्राम गृह आदि में सस्ती दरों की सुविधाएँ हैं। इनके अतिरिक्त यहाँ अनेक छोटे-बड़े होटल और धर्मशालाएँ हैं।

यहाँ पर्यटन सूचना केंद्र 35, अंजी रोड, सिविल लाइंस पर है। गर्मियों में यहाँ अधिकतम तापमान लगभग 42°से और सर्दियों में न्यूनतम तापमान लगभग 9°से रहता है।

85. ऋषिकेश यह शहर हरिद्वार से 24 किमी दूर है। अतः जो लोग हरिद्वार जाते हैं, वे प्रायः ऋषिकेश भी जाते हैं। ऋषिकेश बद्रीनाथ, केदारनाथ,

गंगोत्री एवं यमुनोत्तरी जैसे महत्त्वपूर्ण तीर्थों का प्रवेश द्वार भी है। यह गंगा के किनारे स्थित है। चूँकि गंगा ऋषिकेश से ही पहाड़ी भाग को छोड़कर मैदानी भाग में बहने लगती है, अतः यहाँ गंगा का जल बहुत शीतल एवं निर्मल होता है। यहाँ गंगा नदी पर 1939 ई० में निर्मित एक झूलता हुआ पुल है, जो लोहे के तारों से बना है। इसे लक्ष्मण झूला कहा जाता है। यहीं पर दूसरा झूलता हुआ पुल राम झूला भी है, जिसे कुछ ही वर्ष पूर्व बनाया गया है। इसे शिवानंद झूला भी कहा जाता है। भारत, पुष्कर, शत्रुघ्न, ऋषिकुंड, रघुनाथ, वेंकटेश्वर और चंद्र मनलेश्वरम् मंदिर यहाँ के प्रमुख मंदिर हैं। ऋषिकेश में त्रिवेणी घाट एक अच्छा स्थल है, जहाँ सुबह नहाने वालों की और शाम को आरती देखने वालों की भीड़ लगी रहती है।

उपलब्ध सुविधाएँ यह शहर वायु एवं सड़क मार्ग से देश के अन्य शहरों से जुड़ा हुआ है। देहरादून का जौली ग्रांट हवाई अड्डा यहाँ से 281 किमी दूर है। स्थानीय भ्रमण के लिए यहाँ आटो रिक्शे, साइकिल रिक्शे एवं ताँगे उपलब्ध रहते हैं।

ठहरने की सुविधाएँ ठहरने के लिए यहाँ पर मुनी की रेती पर टूरिस्ट बंगला कंप्लेक्स और फोरेस्ट हाउस और हरिद्वार रोड पर पीडब्ल्यूडी निरीक्षण गृह; बाबा काली कंबली, सिंधी और पुष्कर मंदिर धर्मशालाएँ तथा अनेक होटल हैं। खाने के लिए यहाँ अधिकतर जगहों पर केवल शाकाहारी भोजन ही मिलता है।

पर्यटक सूचना केंद्र ऋषिकेश में रेलवे रोड पर उत्तर प्रदेश सरकार के टूरिस्ट ब्यूरो का कार्यालय, मुनी की रेती पर गढ़वाल मंडल विकास निगम का यात्रा कार्यालय तथा देहरादून रोड पर बद्रीनाथ-केदारनाथ मंदिर समिति का कार्यालय है, जहाँ से स्थानीय पर्यटन संबंधी आवश्यक सूचना प्राप्त की जा सकती है।

86. औली यह शहर जोशीमठ से 12 किमी दूर है। यह 2519 मी से लेकर 3050 मी तक की ऊँचाई पर छह वर्ग किमी का एक विशाल चरागाह है, जिसे स्थानीय भाषा में बुग्याल कहते हैं। यह स्थान सर्दियों में बर्फ से ढक जाता है, तब यहाँ स्कीइंग के खेल होते हैं। यहाँ देश का तीसरा नया स्कीइंग स्थल है। यहाँ 4 किमी लंबा रज्जु मार्ग पूरी तरह बनकर तैयार है। औली के ठीक सामने 7817 मी ऊँची नंदादेवी चोटी के दर्शन होते हैं।

पर्यटन स्थल यहाँ गुरसौं बुग्याल, छत्ता कुंड, सेलधार तपोवन (तीन किमी) तथा कंवारी बुग्याल (पंद्रह किमी) आस-पास के दर्शनीय स्थल हैं। गुरसौं बुग्याल

फूलों से भरा एक ढलवाँ मैदान है। छत्ता कुंड मीठे पानी का सरोवर है। सेलधार तपोवन में गर्म पानी के प्राकृतिक स्रोत, फव्वारे व कुंड हैं। यहाँ का तापमान गर्मियों में अधिकतम 13°से और सर्दियों में न्यूनतम 0°से होता है।

उपलब्ध सुविधाएँ औली स्कीइंग केंद्र में निम्नलिखित सुविधाएँ उपलब्ध हैं :

1) चार किमी लंबा रज्जु मार्ग।
2) 500 मी लंबी स्की लिफ्ट।
3) 800 मी ऊँची चेयर लिफ्ट।
4) 7 और 15 दिन के स्कीइंग कोर्स।
5) स्नोबीटर मशीनें और स्कीइंग उपकरण।
6) रहने के लिए 105 शैयाएँ।
7) कैंटीन और रेस्टोरेंट।

87. कड़ा यह उत्तर प्रदेश में इलाहाबाद के उत्तर-पश्चिम में 50 किमी दूर है। अवध का नवाब शुजाउद्दौला मेजर मुनरो द्वारा 1765 ई० में यहीं हराया गया था। इस युद्ध के बाद क्लाइव ने उससे कड़ा और इलाहाबाद लेकर दिल्ली के सुल्तान शाह आलम को दे दिए। बाद में शाह आलम द्वारा मराठों का साथ देने के कारण 1773 में ये उससे वापस ले लिए गए और अवध के नवाब को 50 लाख रु. में बेच दिए गए। यहाँ पर राजा जयचंद के किले के अवशेष, कुतुबुद्दीन मदनी की कब्र और बाबा मलूक दास का आश्रम देखने को मिलते हैं।

88. कन्नौज—ऐतिहासिक महत्त्व इस का प्राचीन नाम कान्यकुब्ज है। प्राचीन और मध्य काल के दौरान कन्नौज गंगा घाटी के ऊपरी इलाकों पर नियंत्रण करने का एक प्रमुख स्थान था। मगध में गुप्त साम्राज्य के पतन के बाद कन्नौज में मौखरि राजाओं ने छठी शताब्दी में अपना स्वतंत्र शासन स्थापित कर लिया था। इस वंश में राजा हरिवर्मा, ईश्वर वर्मा, ईशानवर्मा, शर्ववर्मा, अवंतिवर्मा और गृहवर्मा ने कन्नौज से शासन किया। गृहवर्मा के साथ हर्षवर्धन की बहन राज्यश्री का विवाह हुआ था। मालवा के शासक देवगुप्त ने गृहवर्मा की हत्या करके कन्नौज हड़प लिया था। हर्षवर्धन ने देवगुप्त से इसका बदला लिया। उसने अपनी बहन राज्यश्री के अनुरोध पर कन्नौज को अपने राज्य में मिला लिया और अपनी राजधानी थानेश्वर से यहाँ बदल ली। हर्ष का कोई उत्तराधिकारी न होने के कारण उसके एक मंत्री अरुणाश्व अथवा अर्जुन ने कन्नौज के सिंहासन पर अधिकार कर लिया। उसने एक चीनी दूत वाँग ह्वात्स को काफी तंग किया।

चीनी दूत बचकर तिब्बत पहुँचा और वहाँ से तिब्बत के राजा स्त्रौंगत्सन गाम्पो, कामरूप के राजा भास्करवर्मन और नेपाल के राजा की सहायता लेकर कन्नौज आया। वह अरुणाश्व को हराकर उसे बंदी बनाकर चीन ले गया। 714 में मुहम्मद-बिन-कासिम ने कन्नौज पर कब्जा करने के लिए सेना भेजी थी, परंतु उसे वापस बुला लिया गया था। कन्नौज में यशोवर्मा ने 725 से 752 तक शासन किया। कश्मीर के राजा ललितादित्य ने उसे 733 में पराजित कर दिया था। आठवीं शताब्दी के बाद के काल में कन्नौज में आयुध वंश के शक्तिहीन शासकों का राज्य था। गुप्त साम्राज्य के पतन के बाद कन्नौज उत्तर भारत की राजनीतिक धुरी बन चुका था। इसलिए पाल, प्रतिहार और राष्ट्रकूट शासक इसके आंतरिक मामलों में समय-समय पर दखल देते रहते थे। जिस समय यहाँ इंद्रायुध का राज्य था, तब प्रतिहार नरेश वत्सराज ने उस पर आक्रमण करके उसे हरा दिया। राष्ट्रकूट राजा ध्रुव ने इस संघर्ष में हस्तक्षेप करके वत्सराज को पराजित करके उसे राजपूताना की ओर खदेड़ दिया। बाद में उसने बंगाल के पाल राजा धर्मपाल, जो कन्नौज पर आँखें गड़ाए बैठा था, को भी गंगा-यमुना के दोआब में हराया। इसके बाद वह दक्षिण वापस चला गया। तब धर्मपाल (780-810 ई०) ने कन्नौज के शासक इंद्रायुध को हराकर चक्रायुध को गद्दी पर बैठा दिया। उसने यहाँ एक बड़ा दरबार भी किया, परंतु प्रतिहार शासक इसे सहन नहीं कर पाए और वत्सराज के पुत्र नागभट्ट द्वितीय ने मुंगेर के निकट धर्मपाल को हराया। परंतु शीघ्र ही राष्ट्रकूट शासक गोविंद तृतीय की सहायता से वह जीत गया। गोविंद तृतीय के दक्षिण वापस जाने पर धर्मपाल ने कन्नौज पर अधिकार कर लिया। बाद में कन्नौज के राजा भोज प्रथम (835-890) ने पाल वंश के राज्य का एक भाग छीन लिया था। परंतु उसे राष्ट्रकूट राजा ध्रुव द्वितीय ने पराजित कर दिया। ध्रुव ने प्रतिहार राजा वत्सराज को भी हराया था। भोज प्रथम के बाद उसका पुत्र महेंद्रपाल (890-910) और भोज द्वितीय, महीपाल, महेंद्रपाल द्वितीय, देवपाल, विजयपाल और राज्यपाल शासक बने। राष्ट्रकूट राजा इंद्र तृतीय (914-18) ने महीपाल को परास्त किया था। परंतु दसवीं शताब्दी तक यहाँ का प्रतिहार राज्य छोटा सा राज्य बन कर रह गया। महू लेख से ज्ञात होता है कि धंगदेव ने कन्नौज के प्रतिहार राजा को दसवीं शताब्दी में हराया था। सन् 1018-19 में महमूद गजनवी ने कन्नौज पर आक्रमण किया था। उस समय कन्नौज पर प्रतिहार राजा राज्यपाल का शासन था। वह युद्ध से भाग गया और गजनवी ने यहाँ काफी लूट-पाट मचाई। उसकी इस कायरता का दंड देने के लिए चंदेल राजा विद्याधर ने उसे मार गिराया। महमूद गजनी ने विद्याधर पर 1019 और 1022 में दो बार आक्रमण किया, परंतु दोनों ही बार वह कन्नौज छोड़कर भाग

गया। तब 1022 ई० में विद्याधर और गजनवी के मध्य एक संधि हुई, जिसके तहत विद्याधर ने गजनवी को 300 हाथी उपहार में दिए। राज्यपाल के पश्चात उसका पुत्र त्रिलोचन पाल कन्नौज का शासक बना। 1090 के आस-पास गहड़वाल वंश के चंद्रदेव ने राष्ट्रकूट शासक गोपाल को हराकर कन्नौज पर अधिकार कर लिया। उसने पाँचाल तथा कलचूरी वंश के राजाओं को हराकर अपना राज्य इलाहाबाद तथा बनारस तक फैला लिया। उसके बाद 1100 में मदनचंद्र तथा 1114 में गोविंद चंद्र राजा बने। गोविंद चंद्र ने मगध के अधिकांश भाग और 1143 में मुंगेर पर अधिकार कर लिया। 1153 में मुंगेर पर बंगाल के पाल राजाओं ने फिर कब्जा कर लिया। उसने कलचूरी राजाओं से भी संघर्ष किया। उसकी अणहिलपाटण के चालुक्य नरेश, कश्मीर के राजा और चोल राजाओं से मैत्री थी। 1111 के बाद एक लेख में चोलों की राजधानी में गहड़वालों की वंशावली खुदी है। उसके उत्तराधिकारी विजयचंद्र (1156-76) ने खुसरो मलिक के आक्रमणों का सामना किया। 1176 ई० में जयचंद कन्नौज के सिंहासन पर बैठा। उसने पाल वंश के पतन के बाद गया जिले पर कब्जा कर लिया, परंतु थोड़े दिनों बाद लक्ष्मण सेन ने उसे वापस ले लिया। सांभर नरेश पृथ्वीराज चौहान ने यहाँ से उसकी पुत्री संयोगिता का उसके स्वयंवर से अपहरण कर लिया था। 1194 में मुहम्मद गौरी ने जयचंद पर आक्रमण किया। जयचंद इटावा के पास चंदेवर में लड़ता हुआ मारा गया। उसके बाद उसका पुत्र हरिश्चंद्र गहड़वाल कन्नौज का राजा हुआ, परंतु वह मुहम्मद गौरी के सेनानायक कुतुबुद्दीन ऐबक को अपना अधिपति मानता था। 1210 में ऐबक की मृत्यु के पश्चात् आरामशाह के काल में कन्नौज फिर स्वतंत्र हो गया। 1226 में अल्तमश ने इसे पुनः जीतकर दिल्ली सल्तनत में मिला लिया। 1526 ई० में बाबर ने इस पर कब्जा करके इसे अपने राज्य में मिला लिया और 1540 ई० में शेरशाह ने हुमायूँ को कन्नौज की लड़ाई में परास्त कर दिया, जिससे हुमायूँ भारत छोड़कर भाग गया और शेरशाह को आगरा की गद्दी मिल गई।

धर्म और संस्कृति हर्ष के काल में यह शहर शिक्षा और धर्म के प्रमुख केंद्र के रूप में जाना जाता था। हर्ष ने यहाँ 643 ई० में एक बड़ी धार्मिक सभा की थी, जिसमें बौद्ध धर्म की महायान शाखा को सर्वोत्तम धर्म माना गया। इस सभा में ह्यून सांग भी उपस्थित था। वह यहाँ आठ वर्ष तक रहा था। प्रतिहार राजाओं ने यहाँ अच्छी-अच्छी इमारतें और मंदिर बनवाए।

89. कन्वाह यह शहर फतेहपुर सीकरी से 90 मील दूर आगरा के पश्चिम में एक गाँव है। कन्वाह में 17 मार्च, 1527 ई० को बाबर और राणा सांगा

के मध्य घमासान युद्ध हुआ था। राणा सांगा के साथ अन्य राजपूत सरदार तथा सिकंदर लोदी का पुत्र महमूद लोदी भी जुटे थे। इस युद्ध में हसन खाँ मेवाती तथा डूंगरपुर के उदय सिंह खेत रहे। राणा संग्राम सिंह बुरी तरह जख्मी हुए, फिर भी वे बच निकले। युद्ध के परिणामस्वरूप राजपूतों का शासन अगले 130 वर्षों तक उभर नहीं पाया और भारत में मुगलों का सिक्का जम गया। इस युद्ध के बाद बाबर ने गजनी (धर्म रक्षक) की पदवी धारण की। अब तक वह काबुल का ही राजा था और वहीं से शासन करता था, परंतु इस युद्ध के बाद वह भारत में ही बस गया और उसने आगरा को अपनी राजधानी बना लिया।

90. कानपुर—ऐतिहासिक महत्त्व स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान इस शहर में पेशवा बाजीराव के सबसे बड़े दत्तक पुत्र नाना साहिब (धोंदू पंत) ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। यहाँ स्थित ब्रिटिश गैरीजन ने स्वतंत्रता सेनानियों के समक्ष आत्म-समर्पण कर दिया था। इसके चार आदमियों को छोड़कर सभी को मार दिया गया। उस समय यहाँ रामचन्द्र पांडुरंग (तांत्या टोपे) भी उपस्थित था। उसने विंडहाम की सेना को हराया। परंतु बाद में कोलिन ने उसे हरा दिया। बाद में दिसंबर, 1857 में कैंपबेल ने कानपुर पर पुनः अधिकार कर लिया। लड़ाई के दौरान नाना साहिब को भी कोलिन द्वारा हरा दिया गया, परंतु वह फतेहपुर चौरासी से बच निकला। वह नेपाल की ओर चला गया।

91. कान्यकुब्ज कृपया कन्नौज देखें।

92. कार्बोट नैशनल पार्क यह पार्क देश के जाने-माने पार्कों में से एक है। इसकी स्थापना 1936 में जिम कार्बोट के सुझाव पर उत्तर प्रदेश के तत्कालीन गवर्नर सर मैलकम हैली द्वारा की गई थी। यहाँ जाने के लिए पहले रामनगर जाना होता है। यहाँ हाथी, बंदर, मोर, लोमड़ी, गिलहरी, हरिण, सांभर, तेंदुआ, पाढ़ा (एक प्रकार का हरिण), लकड़बग्घा, गीदड़, हिमालयी काला भालू, शेर, चीता, बाघ, मगरमच्छ, ऊद बिलाव, किंग कोबरा, अजगर और तरह-तरह की मछलियाँ देखने को मिलती हैं। पार्क को देखने के लिए ढिकाला में हाथी उपलब्ध हैं और कई जगह मचान बने हुए हैं। पार्क में शीशम, ढाक, सेमल और बोहिनिया के पेड़ अधिक हैं। दिल्ली से आने वालों के लिए यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन रामनगर और दक्षिण, पश्चिम तथा पूर्व से आने वालों के लिए हल्द्वानी है। पार्क में परमिट लेकर मत्स्यन की सुविधा भी है। यहाँ ठहरने के लिए ढिकाला में फोरेस्ट रेस्ट हाउस तथा टूरिस्ट हटें हैं। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय अक्तूबर से मई तक का होता है।

93. कालपी—ऐतिहासिक महत्व मुहम्मद गौरी के सेनापति कुतुबुद्दीन ऐबक ने इस पर 1202 में विजय प्राप्त की थी। तैमूरलंग के आक्रमण के समय कालपी शहर मुहम्मद खान के अधीन था। जौनपुर के शर्की शासक महमूद शाह (1436-57) ने कालपी पर आक्रमण किया था, परंतु सफल न हो सका। इब्राहिम लोदी ने अपने काल में कालपी से जौनपुर तक का क्षेत्र अपने छोटे भाई जलाल खाँ को सौंपा हुआ था। जलाल खाँ का मुख्यालय कालपी में था। उसने वहाँ अपना राजतिलक करवा लिया, जिससे जलाल खाँ और इब्राहिम के मध्य एक युद्ध हो गया। युद्ध में जलाल खाँ की हार हुई और उसने ग्वालियर में शरण ली। मुगल सम्राट मुहम्मदशाह बंगश के विरुद्ध जैतपुर के युद्ध में सहायता करने के फलस्वरूप बुंदेलखंड के राजा छत्रसाल ने कालपी को अप्रैल, 1729 में बाजीराव प्रथम को दे दिया था। अप्रैल, 1858 में अंग्रेजों द्वारा झाँसी पर कब्जा किए जाने के बाद रानी लक्ष्मी बाई घोड़े पर बैठकर सबसे पहले कालपी ही आई थी, परंतु 22 मई, 1858 को वह अंग्रेजों से हार गई और यहाँ से ग्वालियर चली गई। तांत्या टोपे ने भी यहाँ आंदोलन के दौरान महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

94. कालसी कालसी देहरादून से 50 किमी दूर है। यहाँ 257-56 ई०पू० में स्थापित अशोक के शिलालेख पाए गए हैं, जिनमें उसने अपनी शासन पद्धति और अपने नैतिक नियमों का उल्लेख किया है।

95. काशी छठी शताब्दी ई०पू० में काशी देश के सोलह महाजनपदों में से एक थी। बुद्ध के समय में यह शहर कौशल राज्य में शामिल था। इसके शासक परसेनजीत को अजातशत्रु से युद्ध करना पड़ा था, क्योंकि परसेनजीत ने काशी राज्य का कुछ कर नहीं चुकाया था। यह युद्ध कई वर्षों तक चलता रहा। अंत में परसेनजीत की हार हुई और उसे अजातशत्रु से अपनी पुत्री का विवाह करके काशी को दहेज में देना पड़ा। अशोक ने यहाँ एक स्तूप बनवाया था। उसके समय में यह शहर सूती वस्त्रों के निर्माण के लिए प्रसिद्ध था।

96. कुशीनगर यह स्थान देवरिया के उत्तर में 21 मील दूर आधुनिक कासिया गाँव है।

राजनैतिक एवं धार्मिक महत्त्व कुशीनगर छठी शताब्दी ई०पू० में मल्ल राजाओं की राजधानी थी। बुद्ध ने 80 वर्ष की उम्र में 487 ई०पू० में यहीं महाप्रयाण किया था। 249 ई०पू० में अशोक ने इस स्थान की यात्रा की थी। अशोक ने यहाँ बड़े-

बड़े चैत्य और एक 200 फुट ऊँचा स्तूप बनवाया था। फाहियान की यात्रा के दौरान ये जीर्ण-शीर्ण अवस्था में थे। इससे पूर्व यह स्थान व्यापार एवं धार्मिक यात्रा के केंद्र के रूप में उभर चुका था।

97. केदारनाथ यह मंदाकिनी नदी के छोर पर 3581 मी की ऊँचाई पर स्थित है और प्राकृतिक दृश्यों से भरपूर है। यहाँ से हिमालय के बड़े सुंदर दृश्य दिखाई देते हैं। केदारनाथ देश के बारह ज्योतिर्लिंगों में से एक है। ऐसा माना जाता है कि सतयुग में यहाँ उपमन्यु ने भगवान शिव की आराधना की थी। शास्त्रों एवं पुराणों के अनुसार केदारनाथ पंचकेदार का एक स्थल है। अन्य चार स्थल तुंगनाथ, रूद्रनाथ, मदमहेश्वर तथा नेपाल स्थित पशुपतिनाथ हैं। ऐसा माना जाता है कि इन स्थलों पर शंकर भगवान् का कोई न कोई अंग अनोखे रूप में स्थित है। तुंगनाथ में बाहु, रूद्रनाथ में मुख, मदमहेश्वर में नाभि, कल्पेश्वर में जटा, केदारनाथ में धड़ और पशुपतिनाथ में सिर स्थित है। शिव के अंग जहाँ-जहाँ स्थित हैं, वे स्थल केदार कहलाए। केदारनाथ इनमें श्रेष्ठ तीर्थ माना जाता है। इसलिए इसे केदारों का नाथ अर्थात् केदारनाथ कहा गया। महाभारत युद्ध के पश्चात् पांडव जब वेदव्यास के कहने पर हिमालय में प्रायश्चित करने आए, तो उन्हें शिवजी के दर्शन एक भैंसे की पीठ के रूप में हुए थे, जिसके प्रतीक के रूप में यहाँ पत्थर की एक त्रिकोण मूर्ति है। केदारनाथ मंदिर में लोग इसी प्रतिमा की पूजा करते हैं। मंदिर के सामने जगमोहन नामक स्थान पर पांडवों और द्रौपदी की मूर्तियाँ हैं। मंदिर भवन में राम, लक्ष्मण, सीता, नंदीश्वर तथा गरुड़ की भव्य मूर्तियाँ भी हैं। केदारनाथ मंदिर को मंदाकिनी, सरस्वती, क्षीर गंगा, स्वर्णद्वारी और महोदधि पाँच नदियों का संगम माना जाता है। मंदिर की परिक्रमा में अमृत कुंड, ईशान कुंड, हंस कुंड और उदय कुंड नाम के चार कुंड हैं। इन कुंडों में तर्पण और आचमन का बहुत अधिक महत्त्व है। मंदिर की बाईं ओर इंद्र पर्वत है, जहाँ इंद्र ने तप किया था। आधा किमी दूर भैरव शिला मंदिर है, जहाँ केदारनाथ मंदिर के पट खुलने और बंद होने के दिन ही पूजा होती है।

पर्यटन स्थल केदारनाथ में शिव को समर्पित केदारनाथ मंदिर, वासुकी ताल (6 किमी), गौरी कुंड (गर्म पानी के झरने) (15 किमी), सोन प्रयाग (सोन, गंगा तथा मंदाकिनी नदियों के संगम पर स्थित) (20 किमी) और ऊखी मठ (केदारनाथ मंदिर की प्रतिमा का शीतकालीन स्थल), पंचकेदार, गुप्तकाशी, त्रिगुणीनारायण और गाँधी सरोवर दर्शनीय स्थल हैं। केदारनाथ से चमोली तक (75 किमी) ट्रैकिंग पर जाने की सुविधा भी है। रास्ते में गौरी कुंड, फत्ता, नालपत्तन, ऊखीमठ, तुंगनाथ और गोपेश्वर आते हैं। साथ ही गौरी कुंड (16 किमी), फत्ता

(25 किमी), गुप्तकाशी (30 किमी) होकर रूद्रप्रयाग (काकरगढ़ के रास्ते) तक का ट्रैकिंग पथ भी है, जिसमें 11700 फुट की ऊँचाई से 3000 फुट तक नीचे उतरना होता है। इन सभी जगहों पर ठहरने के लिए पीडब्ल्यूडी के इंस्पेक्शन बंगले हैं, जिनकी बुकिंग पौड़ी के कार्यकारी अभियंता से करानी होती है। चमोली तक की ट्रैकिंग के लिए 11700 फुट की ऊँचाई से 1000 फुट तक नीचे उतरना होता है।

केदारनाथ में एक जीव विहार भी है। इस विहार की स्थापना 1972 में चमौली के उत्तरी भाग में की गई थी। यहाँ पर हिम तेंदुए, कस्तूरी मृग, भूरे भालू, हिमालयी काले भालू, सेराँव, मोनाल, चीर, कोकलास, फेजेंट, चकोर तथा हिम कबूतर पाए जाते हैं। यहाँ से निकटतम शहर ऋषिकेश 218 किमी दूर है। यहाँ घूमने के लिए उपयुक्त समय अप्रैल से जून एवं सितंबर से अक्तूबर तक का होता है।

उपलब्ध सुविधाएँ यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा जौली ग्रांट (18 किमी) है। सड़क मार्ग से केदारनाथ पहुँचने के लिए पहले ऋषिकेश जाना होता है। ऋषिकेश से बद्रीनाथ मार्ग पर रूद्रप्रयाग नामक जगह से केदारनाथ को रास्ता जाता है। यह रास्ता पैदल या घोड़े पर बैठकर पार करना होता है। ऋषिकेश से यह वायुदूत सेवा से भी जुड़ा है। मई, जून तथा सितंबर व अक्तूबर के महीने यहाँ की यात्रा के अधिक अनुकूल होते हैं। गर्मियों में यहाँ का अधिकतम तापमान लगभग 18°से और सर्दियों में न्यूनतम तापमान लगभग 6°से होता है।

98. कौशल यह स्थान पूर्वी उत्तर प्रदेश में सरयू नदी के तट पर हुआ करता था। राम, सीता और लक्ष्मण यहाँ चौदह वर्ष के वनवास के बाद लौटे थे। कौशल कपिलवस्तु की शाक्य जन-जातियों का गणराज्य भी था। शिशुनाग ने कौशल पर आक्रमण करके इसे अपने साम्राज्य में मिला लिया था। समुद्रगुप्त (335-75 ई०) ने यहाँ के राजा महेंद्र को हराया था। उत्तर वैदिक काल में कौशल आर्यावर्त के मुख्य केंद्रों में से एक था। एलोरा के दशावतार गुहालेख से पता चलता है कि प्रथम राष्ट्रकूट राजा दंतिदुर्ग (753-60) ने कौशल पर विजय प्राप्त की थी।

99. कौशांबी यह इलाहाबाद से 48 किमी दूर यमुना नदी के पश्चिमी तट पर है। इसका आधुनिक नाम कोसम है। कौशांबी का उदय छठी शताब्दी ई०पू० में हुआ था। यह प्राचीन वत्स राज्य की राजधानी थी। प्राचीन काल में कुरू कबीला हस्तिनापुर से कौशांबी आ गया था। 510 ई० के बाद हूण शासक तोरमाण ने कौशांबी पर आक्रमण किया था।

पुरातात्विक महत्त्व यहाँ पाए गए नव-पाषाण युग के मिट्टी के भूरे रंग के चित्रित बर्तनों से ज्ञात होता है कि यह उस युग का एक स्थल था। यहाँ की गई खुदाइयों से पता चलता है कि यह एक किलेबंद राजधानी थी। लोग मकान बनाने के लिए कच्ची ईंट तथा सरकंडों का प्रयोग करते थे। वे घोड़े और ताँबे से परिचित थे। सभ्यता के अंतिम दिनों में लोहे का प्रयोग भी होने लगा था। वे चावल के अतिरिक्त गाय तथा हरिण का माँस खाते थे। बुद्ध के समय में कौशांबी धर्म और व्यापार के क्षेत्र में प्रसिद्धि के शिखर पर था। उस समय यहाँ उदयन का शासन था। वह बुद्ध का समकालीन था और उनके प्रवचनों से इतना प्रभावित हुआ कि वह स्वयं भी बौद्ध बन गया। उसने यहाँ एक साठ फुट ऊँचा बौद्ध मंदिर बनवाया और बुद्ध को यहाँ आने का निमंत्रण देकर उनके ठहरने का प्रबंध घोषिताराम (विहार) में करवाया। घोषिताराम भारत की ऐसी सबसे प्राचीन इमारत है, जिसके निर्माण का काल (बुद्ध-काल) ज्ञात है। अशोक ने यहाँ 242-32 ई०पू० में एक स्तूप और एक लघु स्तंभ लेख की स्थापना की। लेख में उसने अपने अहिंसा संबंधी सिद्धांतों का वर्णन किया है। समुद्रगुप्त ने इसी लघु स्तंभ पर अपने जीवन के सभी पहलुओं के बारे में एक लेख खुदवाया था। उसने यहाँ एक महामात्य भी रखा था। बाद में इसे मगध साम्राज्य में मिला लिया गया। यहाँ कुषाण काल का एक स्तंभ भी पाया गया है। यहाँ बुद्ध के समय के लौहे के औजार, कनिष्क के शासन के दूसरे वर्ष का एक लेख और हूण शासक तोरमाण की दो मुहरें तथा मिहिरकुल की एक मुहर मिली है। शिशुनाग ने इसे अपने साम्राज्य में मिला लिया था। प्राचीन काल में कौशांबी शिक्षा का केंद्र भी था।

व्यापार बुद्ध के समय में कौशांबी एक समृद्ध नगर था। उस काल के व्यापार के लिए कृपया बिहार राज्य में चंपा देखें। अशोक के काल में कौशांबी सूती कपड़े के निर्माण का एक मुख्य केंद्र था और उत्तरी भारत का सबसे बड़ा व्यापारिक केंद्र था।

100. कौसानी यह स्थान हिमालय की पिंगनाथ पहाड़ियों में अलमोड़ा से 52 किमी दूर 1890 मी की ऊँचाई पर है। यहाँ की खूबसूरती और प्राकृतिक सुष्मा अनुपम है, जिस कारण इसे भारत का स्विटजरलैंड कहा जाता है। यहाँ से नंदा देवी व त्रिशूल की बर्फ से ढकी चोटियाँ मनोरम दृश्य प्रस्तुत करती हैं। महात्मा गाँधी ने भी 1929 ई० में यहाँ बारह दिन बिताए थे। गाँधी जी की शिष्या सरला बहन ने भी यहाँ महिलाओं के लिए एक अनासक्ति आश्रम खोलकर उनकी सेवा में अपना जीवन यहीं बिताया था। हिंदी के प्रसिद्ध कवि सुमित्रानंदन पंत का जन्म स्थान यही है। उनकी याद में यहाँ एक संग्रहालय

बनाया गया है।

पर्यटन स्थल कौसानी और इसके आस-पास गोमती व गरुड़ गंगा के संगम पर 17 किमी दूर बैजनाथ, गोमती और सरयू नदी के संगम पर 39 किमी दूर बागेश्वर (बागनाथ शिव मंदिर, अग्नि कुंड, सूर्य कुंड व उत्तरायणी मेले के लिए), 19 किमी दूर सोमेश्वर (चाँद राजघराने के राजा सोमचंद द्वारा कलचूरी शैली में बनवाए गए शिव मंदिर के लिए) तथा चौकोड़ी दर्शनीय हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ यह स्थल अन्य नगरों से केवल सड़क मार्ग से जुड़ा है। यहाँ से रेलवे स्टेशन 145 किमी दूर काठगोदाम और हवाई अड्डा 178 किमी दूर पंतनगर है। बरसात के मौसम को छोड़कर यहाँ कभी भी जाया जा सकता है, परंतु हिमपात देखना हो, तो सितंबर से अप्रैल के मध्य जाना उत्तम रहेगा। नैनीताल में माल रोड स्थित पर्वत टूअर्स कौसानी के लिए दो दिन की यात्रा तथा कुमाऊँ मंडल विकास निगम भी कौसानी के टूर आयोजित करता है। ठहरने के लिए यहाँ उत्तर प्रदेश सरकार का पर्यटक आवास, गाँधी आश्रम (अनासक्ति आश्रम), डाक बंगला, फोरेस्ट रेस्ट हाउस तथा टूरिस्ट बंगला है। यहाँ गर्मियों में अधिकतम तापमान 26°से होता है और सर्दियों में न्यूनतम तापमान 2°से होता है। कौसानी में खाने-पीने के अधिक स्थल नहीं हैं। ढाबों में भारतीय खाना मिलता है। यहाँ से बागेश्वर, ग्वालदम, पिनाकेश्वर, सोमेश्वर स्थलों तथा पिंडारी, सुंदरढुंगा व कफनी ग्लेशियरों के ट्रैकिंग की सुविधा है। कुमाऊँ मंडल विकास निगम बागेश्वर स्थित अपने बंगले से मध्य सितंबर से मध्य अक्तूबर के बीच पिंडारी ग्लेशियर का सात से नौ दिन तक का भ्रमण कार्यक्रम आयोजित करता है। गाइड, रहने व खाने की व्यवस्था निगम स्वयं करता है। कौसानी में उत्तर प्रदेश सरकार का पर्यटक सूचना केंद्र मुख्य बाजार में है।

101. गंगोत्री गंगोत्री ऋषिकेश से 249 किमी दूर 3140 मी की ऊँचाई पर है। यह हिमालय पर्वत के भव्य प्राकृतिक दृश्यों के मध्य स्थित है।

पर्यटन स्थल गंगौत्री में अट्ठारहवीं शताब्दी में निर्मित गंगा मंदिर और जलमग्न शिवलिंग प्रसिद्ध हैं। शिवलिंग प्राकृतिक रूप से पत्थर का बना हुआ है और गंगा नदी में डूबा हुआ है। यह नदी का पानी कम होने पर ही दिखाई देता है। गंगोत्री से 19 किमी दूर स्थित गोमुख ग्लेशियर गंगोत्री हिमनदी का उद्गम स्थल और भागीरथी नदी का वर्तमान स्रोत है। गंगोत्री से 9 किमी दूर भागीरथी एवं जाट गंगा के संगम पर भैरों घाटी है, जहाँ का भैरोंनाथ मंदिर बहुत प्रसिद्ध है। यहाँ से लगभग 53 किमी दूर गंगनानी नामक जगह अपने गर्म पानी के चश्मों

के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ के अन्य दर्शनीय स्थान भगीरथ शिला, पटांगणा, केदार ताल, नंदन वन, शिवलिंग पीक, तपोवन, डोडीताल (10 किमी), मनेरी (11 किमी), सात ताल (20 किमी) तथा दयारा बुग्याल (70 किमी) हैं। मई से जून एवं सितंबर से अक्तूबर तक का समय यहाँ के पर्यटन के लिए उपयुक्त होता है।

उपलब्ध सुविधाएँ गंगोत्री सड़क मार्ग से उत्तरकाशी, टिहरी और ऋषिकेश से जुड़ा हुआ है। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन ऋषिकेश और हवाई अड्डा 267 किमी दूर जौली ग्रांट है। यहाँ स्थानीय यातायात के लिए खच्चर एवं भारवाहक उपलब्ध हैं। गंगोत्री में ठहरने के लिए सरकारी पर्यटन आवास, गढ़वाल मंडल विकास निगम का ट्रैवलर्ज लॉज, धर्मशालाएँ तथा अतिथि गृह हैं। यह खेल-कूद एवं क्रीड़ाओं का अच्छा स्थान है, जिसके लिए उत्तरकाशी स्थित नेहरू इंस्टीच्यूट ऑफ माउंटेनियरिंग और नई दिल्ली स्थित इंडियन माउंटेनियरिंग फाउंडेशन से मार्गदर्शन एवं सहयोग प्राप्त किया जा सकता है। यहाँ गर्मियों में अधिकतम तापमान 20°से और सर्दियों में न्यूनतम तापमान लगभग 0.5°से होता है।

102. गोविंद जीव विहार इस विहार की स्थापना 1954 में की गई थी। यहाँ भूरे भालू, हिम तेंदुए, हिमालयी काले भालू, भरल थार, कस्तूरी मृग, सेराँव, माउस हेयर, ऐनोकाक, मोनाल, चकोर, टैगोपैन, चीर, कोकलास, क्लीच फेजेंट आदि जीव पाए जाते हैं। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय अप्रैल से मध्य जून एवं सितंबर से अक्तूबर तक का होता है।

103. ग्वालदम यह स्थान कौसानी से 30 किमी दूर है। 6000 फुट की ऊँचाई वाला यह स्थल प्रकृति का सौंदर्य स्थल है। इस नगर से नंदाघुंटी (6309 मी), त्रिशूल (7120 मी), नंदादेवी (7817 मी) तथा चौखंबा (7838 मी) चोटियों के मनोरम दृश्य दिखाई देते हैं। ग्वालदम साहसिक पर्यटन स्थल रूपकुंड ट्रैकिंग का पहला पड़ाव है। यहाँ का बौद्ध मठ भी दर्शनीय है।

उपलब्ध सुविधाएँ यह स्थान अन्य नगरों से केवल सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ पर गढ़वाल मंडल विकास निगम के पर्यटक आवास गृह तथा वन विश्राम गृह में सस्ती दर पर ठहरने की सुविधा हैं। मई-जून तथा सितंबर-अक्तूबर के महीने यहाँ भ्रमण के लिए उत्तम हैं। सर्दियों में यहाँ भीष्ण शीत और हिमपात होता है।

104. चंदेवर—ऐतिहासिक महत्त्व यह स्थान कन्नौज के निकट है। यहाँ 1194 ई० में कन्नौज के राजा जयचंद और मुहम्मद गौरी के मध्य

घमासान युद्ध हुआ था। इस युद्ध में जयचंद परास्त हुआ और मुहम्मद गौरी ने अपने दास कुतुबुद्दीन ऐबक को भारत का अपना सूबेदार नियुक्त किया।

105. चंबा यह स्थान न्यू टिहरी के पास एक छोटा सा हिल स्टेशन है। यहाँ से एक तरफ हिमालय की बर्फ से ढकी चोटियों और दूसरी तरफ गंगा की घाटी के मनोरम दृश्य दिखाई देते हैं। यहाँ पर क्लासिक हिल टोप रिसोर्ट है, जो शहर से तीन किमी दूर है। इस रिसोर्ट में ठहरने और खाने की अच्छी सुविधाएँ हैं। रिसोर्ट कैरम, बिलियाड्र्ज, शतरंज, बैडमिंटन, घुड़सवारी और अन्य कई खेलों की सुविधाएँ उपलब्ध कराता है। यह रिसोर्ट ऋषिकेश के पास कौडिल्य नामक स्थान पर गंगा में राफ्टिंग, हरिद्वार के निकट चिल्ला के जंगलों में हाथी की सफारी और गढ़वाल क्षेत्र में कुछ सरल ट्रैक भी संचालित करता है। चंबा से 22 किमी दूर सुखंडा देवी का मंदिर भी दर्शनीय है।

106. चकराता यह स्थान देहरादून से 92 किमी दूर गढ़वाल की पश्चिमी दिशा में कैलाश वन क्षेत्र में समुद्र तल से 6950 फुट की ऊँचाई पर है। इसका विकास अंग्रेजी सेना के लिए किया गया था। यह कोनिफर, ओक तथा ऊँची जगहों पर उगने वाले अन्य पेड़ों से घिरा है। चकराता से 5 किमी दूर टाइगर प्रपात है। यहाँ से ग्यारह किमी दूर देववन, 13 किमी दूर आराकोट तथा 18 किमी दूर मंडाली और तिनुणी है। यहाँ से इन सभी स्थलों के लिए ट्रैकिंग की सुविधा है, जिसमें 7000 फुट से 2900 फुट तक नीचे उतरना होता है। इन सभी जगहों पर ठहरने के लिए वन विभाग के रेस्ट हाउस हैं। चकराता से 42 किमी दूर कालसी है। कालसी में अशोक का एक शिलालेख है। 57 किमी दूर लाखा मंडल है। ऐसा माना जाता है कि कौरवों ने पांडवों के लिए लाक्षागृह यहीं बनवाया था।

उपलब्ध सुविधाएँ चकराता में ठहरने के लिए डाक बंगले के अलावा कुछ होटल भी हैं। यहाँ का तापमान सर्दियों में न्यूनतम 2°से तक रहता है। गर्मियों में भी कुछ ऊनी कपड़ों की जरूरत रहती है।

107. छत्रवती कृपया अहिच्छत्र देखें।

108. जोशीमठ जोशीमठ वृहत्तर हिमालय की पहाड़ियों में 6150 फुट की ऊँचाई पर स्थित है। यह स्थान बद्रीनाथ मंदिर की मूर्ति का शीतकालीन स्थल है। यह प्राकृतिक दृश्यों से भरपूर एक सुंदर पर्यटन स्थल है। यहाँ से 25650 फुट ऊँची नंदादेवी चोटी के भव्य दर्शन होते हैं। यहाँ के लोग भोटिया

जाति के हैं, जिसकी उत्पत्ति भारतीय-मंगोलियाई जाति से हुई थी। तिब्बत से व्यापार बंद हो जाने के कारण अब इनके जीवन में बदलाव आ गया है। याक इनके लिए एक महत्त्वपूर्ण पशु है, जो इन्हें दूध, मक्खन और माँस उपलब्ध कराता है। यहाँ से गुलाब कोठी और पीपल कोठी होकर बस से चमोली भी जाया जा सकता है। साथ ही पंडुकेश्वर के रास्ते बद्रीनाथ तक का 30 किमी का ट्रैकिंग पथ भी है। इसके लिए 10280 फुट तक की ऊँचाई चढ़नी होती है। बद्रीनाथ तक जाने के लिए कुल 3-4 दिन का समय लगता है। इन सभी जगहों पर ठहरने के लिए पीडब्ल्यूडी के इंस्पैक्शन बंगले हैं, जिनकी बुकिंग पौड़ी के कार्यकारी अभियंता से करानी होती है।

109. जौनपुर फिरोजशाह तुगलक की सहायता से 1359 ई० में बंगाल पर आक्रमण के बाद इसे जाफर खाँ द्वारा बसाया गया था।

ऐतिहासिक महत्त्व यहाँ कन्नौज के मौखरि राजा ईशानवर्मा का छठी शताब्दी का एक लेख पाया गया है, जिसमें उसने लिखा है कि उसने अपने राज्य का विस्तार किया था। मुहम्मद तुगलक ने 1394 ई० में मलिक सरवर ख्वाजा जहाँ को जौनपुर का सूबेदार नियुक्त करके उसे मलिक-उस-शर्की (पूर्व का सूबेदार) की पदवी दी थी। 1398 ई० में तैमूरलंग के आक्रमण के बाद उपजी अराजकता के फलस्वरूप मलिक सरवर ने जौनपुर में शर्की (पूर्वी) वंश के शासन की स्थापना आसानी से कर ली। उसने जौनपुर को अपनी राजधानी बनाया। इसके बाद उसके दत्तक पुत्र मुबारक शाह शर्क (1399-1400), मुबारक शाह के छोटे भाई इब्राहिम (1400-40), इब्राहिम के पुत्र महमूद शाह, मुहम्मद शाह और हुसैन शाह ने जौनपुर पर शासन किया। 1484 ई० में बहलोल लोदी ने हुसैन शाह को हराकर इसे अपनी सल्तनत में मिला लिया और अपने पुत्र बरबक शाह को इसका सूबेदार नियुक्त किया। सिकंदर लोदी और इब्राहिम लोदी के काल में भी जौनपुर पर आक्रमण किया गया। इब्राहिम लोदी ने इसे जीतकर अपने भाई जलाल खाँ को यहाँ का सूबेदार नियुक्त किया, परंतु उसे मार डाला गया। मार्च, 1559 ई० में अकबर के सेनानायक खान जमाल ने जौनपुर पर कब्जा करके इसे मुगल साम्राज्य में मिला दिया।

धर्म एवं कला जौनपुर अटला देवी मंदिर के लिए जाना जाता है। इब्राहिम शाह ने इसे 1408 ई० में अटला मस्जिद का रूप दे दिया था। यह इमारत जौनपुर वास्तुकला का एक सुंदर नमूना है। मस्जिदों में आम तौर पर पाई जाने वाली मीनारें इसमें बिल्कुल नहीं हैं। शर्की राजाओं ने भी यहाँ 1430 में झँझड़ी

मस्जिद, 1457 में लाल दरवाजा मस्जिद और 1458 में जामी मस्जिद बनवाई तथा अच्छे-अच्छे महल और मकबरे बनवाए। पंद्रहवीं शताब्दी के दौरान जौनपुर मुस्लिम शिक्षा का एक जाना-माना केंद्र बन गया था।

110. झाँसी—ऐतिहासिक महत्त्व राष्ट्रकूट राजा ध्रुव (780-93) ने प्रतिहार राजा वत्सराज को झाँसी के निकट हराया था। बुंदेलखंड के राजा छत्रसाल ने मुगल सम्राट मुहम्मदशाह बंगश के विरुद्ध सहायता करने के फलस्वरूप झाँसी को अप्रैल, 1729 में मराठा पेशवा बाजीराव प्रथम को दे दिया था। 1817 में पेशवा ने इसे अंग्रेजों को सौंप दिया था। तब लार्ड हेस्टिंग्ज ने राव रामचंद्र को झाँसी की गद्दी पर बैठा दिया। राव रामचंद्र की 1835 में मृत्यु हो गई। उसके दत्तक पुत्र को मान्यता देने के बजाय रघुनाथ राव को राजा बना दिया गया। 1838 में रघुनाथ राव की मृत्यु के बाद गंगाधर राव राजा बना, परंतु वह भी कोई उत्तराधिकारी पुत्र छोड़े बिना 1853 में स्वर्ग सिधार गया। अपनी मृत्यु से पहले उसने दामोदर राव को गोद लिया था, परंतु लार्ड डलहौजी ने उसे मान्यता देने से इन्कार कर दिया और झाँसी को ब्रिटिश साम्राज्य में मिला लिया। इस कारण झाँसी स्वतंत्रता प्राप्ति के प्रथम युद्ध के दौरान राजनैतिक गतिविधियों का एक मुख्य गढ़ बन गया। यही एकमात्र ऐसी रियासत थी, जिसने विलय की नीति का घोर विरोध किया था। यहाँ की रानी लक्ष्मीबाई ने अंग्रेजों के विरुद्ध काँटे की लड़ाई लड़ी। 1858 में झाँसी पर अंग्रेजों का कब्जा हो जाने के बाद यहाँ से वह कालपी और कालपी से ग्वालियर चली गई, जहाँ वह अंग्रेजों से लड़ते हुए 17 जून, 1858 को वीरगति को प्राप्त हुई। अंग्रेजों ने झाँसी को अपने साम्राज्य में मिला लिया। 8 जुलाई, 1858 को गवर्नर जनरल केनिंग ने शांति की घोषणा की।

111. ताड़केश्वर धाम यह धाम पौड़ी गढ़वाल जिले में लैंसडोन तहसील में बदलपुर पट्टी में है। यहाँ का मौसम बहुत सुहावना होता है। धाम में एक शिवलिंग है, जो धरती की सतह से नीचे है। जल चढ़ाने तथा पुरुषों व स्त्रियों के नहाने के लिए यहाँ अलग-अलग कुंड हैं। लोग यहाँ अपनी मनोकामना पूरी करने आते हैं। जिनकी मनोकामना पूरी हो जाती है, वे मंदिर में घंटियाँ चढ़ाकर जाते हैं। यहँ स्थान 6000 फुट की ऊँचाई पर है। यहाँ जाने का उपयुक्त समय मई-जून तथा सितंबर-अक्तूबर होता है। यहाँ पर ठहरने के लिए एक धर्मशाला है।

112. दुधवा राष्ट्रीय पार्क लखीमपुर खीरी जनपद में स्थित इस

पार्क की स्थापना फरवरी, 1979 में की गई। यहाँ पर बारासिंघे, बाघ, तेंदुए, हाथी, हरिण और कई प्रकार के पक्षी मिलते हैं। इसके अतिरिक्त यहाँ पेड़ों पर चढ़ने वाले मेंढ़क, अजगर, साँप, मगरमच्छ भी मिलते हैं। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन दुधवा मात्र 10 किमी की दूरी पर है। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय नवंबर से जून तथा मार्च से मई तक का होता है।

113. देवगढ़ यह झाँसी के दक्षिण में लगभग 80 किमी दूर है। यहाँ से लगभग 10 किमी पूर्व में गुप्त काल में बना नर-नारायण का एक भव्य मन्दिर है। इसमें विष्णु की शेषनाग के ऊपर लेटी हुई मूर्ति है। गुप्त राजाओं ने यहाँ नागर शैली में दशावतार मंदिर बनवाया था। यहाँ ठहरने के लिए वन विभाग का डाक बंगला है।

114. देहरादून यह शहर समुद्र तल से 709 मी की ऊँचाई पर है। स्वास्थ्यवर्धक जलवायु और प्राकृतिक सौंदर्य से संपन्न इस शहर को दून घाटी भी कहा जाता है। सोलहवीं-सतरहवीं सदी में दून घाटी महारानी कर्णवती के अधीन रही थी। 1791 से 1803 के काल में गोरखों ने और 1814 में अंग्रेजों ने इस पर आधिपत्य किया।

पर्यटन स्थल देहरादून में और इसके आस-पास कई पर्यटन स्थल हैं। यह मसूरी, ऋषिकेश, हरिद्वार, जोशीमठ, बद्रीनाथ आदि अन्य रमणीय स्थानों का केंद्र भी है। यहाँ से 14 किमी दूर स्थित सहस्त्रधारा झरने शीतल जल के लिए प्रसिद्ध हैं। इन झरनों का पानी गंधकयुक्त होने के कारण यहाँ स्नान करना त्वचा रोगियों के लिए लाभदायक है। यहाँ से मसूरी रोड पर चार किमी दूर स्थित मालसी डियर पार्क, लच्छीवाला, लक्ष्मणसिद्ध तथा बीजापुर कैनाल भी दर्शनीय एवं पिकनिक स्थल हैं। देहरादून से पाँच किमी दूर चंद्रबनी है। पुराणों में वर्णित गौतम ऋषि का आश्रम यहीं पर था, जहाँ इंद्र ने चंद्रमा की सहायता से ऋषिपत्नी अहिल्या का सतीत्व भंग करने का प्रयास किया था। इससे क्रुद्ध होकर गौतम ने अपनी पत्नी को पत्थर की बन जाने तथा चंद्रमा को राहू-केतु से ग्रसित हो जाने का श्राप दिया था। इस घटना से यह अर्थ लगाया जा सकता है कि श्री रामचंद्र ने भी इस स्थान की यात्रा की थी, क्योंकि उन्होंने ही अहिल्या को अपने स्पर्श से श्रापमुक्त किया था।

पुरातात्विक दृष्टि से प्रसिद्ध पर्यटन स्थल ऐसे स्थलों में यहाँ गुच्चु पानी, जिसे रोबर्स की गुफाएँ भी कहते हैं, काफी प्रसिद्ध है। यह देहरादून से लगभग आठ किमी दूर है। ये गुफाएँ पहाड़ियों से घिरी हुई हैं। यहाँ एक भूमिगत

जलधारा भी दिखाई देती है। शहर से पाँच किमी दूर टपकेश्वर स्थान पर पहाड़ की गुफा में एक प्राचीन शिव मंदिर है। पुरातत्व की दृष्टि से लाखा महल भी एक प्रमुख पर्यटन स्थल है। यहाँ पर पांडव परशुराम आदि के प्राचीन मंदिरों के खंडहर हैं। यहाँ पर भीम और अर्जुन के चित्रों वाली एक प्राचीन मूर्ति भी दर्शनीय है।

संग्रहालय देहरादून शहर से पाँच किमी दूर जनरल महादेव सिंह रोड पर वाडिया भूगर्भ संस्थान है। यहाँ एक संग्रहालय है, जिसमें भूगर्भ-विज्ञान संबंधी अनेक चीजों का प्रदर्शन है। हिमालय भूगर्भ से संबंधित यह भारत का पहला संग्रहालय है। देहरादून से पाँच किमी दूर चकराता मार्ग पर वन अनुसंधान संस्थान है। यहाँ भी एक देखने लायक संग्रहालय है।

उपलब्ध सुविधाएँ यह शहर देश के अन्य भागों से सड़क, रेल तथा वायु मार्ग से जुड़ा हुआ है। स्थानीय यातायात के लिए यहाँ गढ़वाल मंडल विकास निगम की ओर से पर्यटन स्थलों की ओर रोजाना संचालित टूरों के अतिरिक्त बसें, सिटी बसें, टैक्सियाँ और ऑटो रिक्शे भी उपलब्ध रहते हैं। गढ़वाल मंडल विकास निगम, दूरदर्शन, लच्छीवाला, मसूरी, ऋषिकेश, हरिद्वार एवं चिल्ला तथा आशा नदी एवं डाक पत्थर टूरों के अतिरिक्त लंबी दूरी के टूर भी आयोजित करता है। भ्रमण के लिए द्रौण ट्रैवल, द्रौण होटल तथा 74/1, रामपुर रोड देहरादून स्थित गढ़वाल मंडल विकास निगम के कार्यालय से संपर्क किया जा सकता है। यहाँ 75, राजापुर रोड पर पर्यटन कार्यालय तथा 45, गाँधी रोड पर क्षेत्रीय पर्यटन अधिकारी का कार्यालय है। अन्य बहुत सी टूर एजेंसियाँ भी उपर्युक्त टूर संचालित करती हैं।

ठहरने की सुविधाएँ देहरादून में पर्यटन विभाग के गेस्ट हाउस, रेलवे विश्राम गृह तथा नया कैंट रोड पर यूथ होस्टल हैं। इनके अतिरिक्त गाँधी रोड पर जैन तथा अग्रवाल धर्मशाला, सहारनपुर रोड पर शिवाजी तथा लक्ष्मी नारायण धर्मशालाएँ और पार्क रोड पर कलावती धर्मशाला है। इनके अलावा शहर में बहुत से होटल भी हैं।

115. धनोल्टी धनोल्टी मसूरी-टिहरी मार्ग पर गढवाल की पहाड़ियों में समुद्र तल से 8500 फुट की ऊँचाई पर है। यह जगह खूबसूरत प्राकृतिक दृश्यों से भरपूर है। धनोल्टी के आस-पास फूलों के बाग हैं। यहाँ से पर्वत शृंखलाएँ बड़ी मनोरम दिखाई देती हैं। यहाँ से 2 किमी दूर सरकुंडा देवी का

मंदिर है। धनोल्टी भ्रमण के लिए अप्रैल से जून तथा सितंबर माह के दौरान उपयुक्त समय होता है। सर्दियों में यहाँ का न्यूनतम तापमान 0°से तक हो जाता है। गर्मियों में भी हलके ऊनी कपड़ों की जरूरत पड़ती है।

उपलब्ध सुविधाएँ यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन व हवाई अड्डा देहरादून (52 किमी) है। ऋषिकेश से धनोल्टी चंपा के रास्ते 93 किमी है। यहाँ ठहरने के लिए पर्यटक आवास गृह और वन विश्राम गृह हैं। वन विश्राम गृह में ठहरने के लिए प्रभागीय अधिकारी से अनुमति लेनी होती है।

116. नंदा देवी राष्ट्रीय पार्क इस पार्क की स्थापना 1982 में की गई थी। यहाँ पर कस्तूरी मृग, भरल, भूरे भालू, काले भालू, हिम तेंदुए, थार, सेराँव, मोनाल, कोकलास, चीर फेजेंट आदि वन्य प्राणी देखने को मिलते हैं। इस पार्क से ऋषिकेश 291 किमी तथा हल्द्वानी 385 किमी है। मई से सितंबर तक के महीने यहाँ भ्रमण के लिए अच्छे रहते हैं।

117. नैनीताल 6000 फुट की ऊँचाई पर कुमाऊँ की पहाड़ियों में बसा नैनीताल उत्तर प्रदेश का एक जाना-माना शहर है। ऐसा माना जाता है कि पुलस्त्य, पुलाहा तथा अन्नी ऋषियों ने मानसरोवर झील के जल से यहाँ नैनी झील का निर्माण किया था। यहीं पर नैना देवी का मंदिर भी है। इन्हीं कारणों से इस शहर का नाम नैनीताल पड़ा। ब्रिटिश शासन काल में यह शहर अंग्रेजों की ग्रीष्मकालीन राजधानी हुआ करता था। आज भी उत्तर प्रदेश राज्य के राज्यपाल का ग्रीष्मकालीन कार्यालय नैनीताल में ही है।

पर्वतीय पर्यटन स्थल नैनीताल से छह किमी दूर 2611 मी की ऊँचाई पर यहाँ की सबसे ऊँची चोटी नैना पीक है, जहाँ पैदल अथवा घोड़े द्वारा ही जाया जा सकता है। यहाँ से चार किमी दूर 2118 मी की ऊँचाई पर डोरोथी सीट (चोटी तीन किमी दूर), 1951 मी की उँचाई पर हनुमान गढ़ी तथा 11 किमी दूर 1706 मी की ऊँचाई पर भवाली चोटियाँ हैं।

झीलें यह शहर दो भागों में बँटा हुआ है — मल्ली ताल (ऊपरी झील) और तल्ली ताल (निचली झील)। नैनीताल की सबसे प्रसिद्ध झील नैनी है। इसके अतिरिक्त यहाँ से 22 किमी दूर एक बहुत बड़ी झील भीम ताल है। इस झील के बीच स्थित एक टापू पर एक रैस्टोरेंट भी है। यहाँ से 10 किमी दूर खुर्पा ताल नामक एक छोटी झील तथा 26 किमी दूर 9 कोनों वाली सबसे गहरी झील नौकुचिया ताल है। इनके अतिरिक्त यहाँ से 21 किमी दूर सात छोटी-छोटी

झीलों का एक समूह सात ताल है।

रज्जु मार्ग नैनीताल से लगभग ढाई किमी दूर स्नो व्यू नामक जगह है, जहाँ रज्जु मार्ग से जाया जाता है। यहाँ से बर्फ से ढकी हिमालय की चोटियाँ दिखाई देती हैं।

उद्यान नैनीताल से पाँच किमी दूर बाग-बगीचों से घिरी मुक्तेश्वर नामक जगह पर्यटन का एक अच्छा स्थान है। 18 किमी दूर जौलीकोट नामक जगह फूल, मधुमक्खी तथा मशरूम उत्पादन का मुख्य केंद्र है। नैनीताल से 26 किमी दूर सेब के बगीचों से घिरी रामगढ़ जगह भी रमणीय है। यहाँ से 105 किमी दूर विश्व प्रसिद्ध कार्बोट नैशनल पार्क है। जिम कार्बोट यहाँ से 35 किमी दूर काला ढोंगी नामक जगह पर रहता था। कार्बोट का घर अब संग्रहालय बना दिया गया है। यहाँ से लगभग 60 किमी दूर रामनगर है।

उपलब्ध सुविधाएँ नैनीताल वायुदूत के माध्यम से दिल्ली से वायु मार्ग से जुड़ा हुआ है। निकटतम हवाई अड्डा 69 किमी दूर पंत नगर है। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन 36 किमी दूर काठगोदाम है। रेलगाड़ी से जाने के लिए लखनऊ, आगरा या बरेली जाना चाहिए। वहाँ से काठगोदाम के लिए छोटी लाइन की रेलगाड़ी मिलती है। सड़क मार्ग से यह प्रदेश के सभी महत्वपूर्ण शहरों से जुड़ा हुआ है। यहाँ के तल्ली ताल और मल्ली ताल में पैडल बोट और चंपू वाली नाव का आनंद लिया जा सकता है। यूथ होस्टल ट्रैकिंग के कार्यक्रम आयोजित करता है।

ठहरने की सुविधाएँ नैनीताल में आर्य समाज मंदिर, लाला शिवलाल सेवा समिति धर्मशाला, अंजुमन-ए-इस्लामिया, मुसाफिर खाना, यूथ होस्टल आदि के अतिरिक्त अनेक होटल भी हैं। इनके अतिरिक्त भीम ताल में टूरिस्ट बंगला एवं लॉज, नौकुचिया ताल में कुमाऊँ मंडल विकास निगम का गेस्ट हाउस तथा रामनगर में एक टूरिस्ट बंगला है।

पर्यटन सुविधाएँ नैनीताल में पर्वत टूर्ज तथा वाईटीडीओ आदि टैक्सियों एवं बसों द्वारा टूर संचालित करते हैं। यहीं पर रेलवे आउट एजेंसी की सेवाओं का लाभ भी उठाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त स्थानीय भ्रमण के लिए यहाँ साइकिल, रिक्शे, नाव और टट्टू भी उपलब्ध रहते हैं।

नैनीताल में गर्मियों में अधिकतम तापमान 26.7°से, न्यूनतम 10.6°से तथा सर्दियों में न्यूनतम तापमान 2.8°से तक होता है। इसलिए यहाँ गर्मियों में भी

हलके ऊनी कपड़े ले जाने चाहिए।

पर्यटक सूचना केंद्र नैनीताल में उत्तर प्रदेश सरकार का पर्यटक सूचना केंद्र माल रोड पर तथा कुमाऊँ मंडल विकास निगम का तल्ली ताल में है।

118. पांचाल पांचाल अशोक के काल में एक विश्वविद्यालय के लिए प्रसिद्ध था, जिसमें दर्शन शास्त्र की विशेष शिक्षा दी जाती थी।

119. पावा पावा कुशीनगर से 10 किमी दूर आधुनिक सठियाँव (फाजिल नगर) है। यह मल्ल राजाओं का गढ़ था। उन्होंने यहाँ एक संसद भवन बनाया था, जिसका उद्‌घाटन बुद्ध ने किया था।

धार्मिक महत्त्व भगवान महावीर का महापरिनिर्वाण 72 वर्ष की उम्र में 527 ई०पू० में यहीं हुआ था। बुद्ध ने भी पावा की यात्रा की थी और यहाँ प्रवचन दिए थे। इस प्रकार पावा बुद्ध और जैन धर्मावलंबियों दोनों का पवित्र स्थान है।

पुरातात्विक महत्त्व पावा के शासक शशिपाल ने यहाँ चार जैन मंदिर बनवाए थे। पावा में अशोक ने भी एक स्तूप बनवाया था। बुद्ध के समय के बाद पावा का पतन होना प्रारंभ हो गया था।

120. पिंडारी ग्लेशियर पिंडारी ग्लेशियर उत्तर प्रदेश की पहाड़ियों में 11 हजार फुट की ऊँचाई पर एक साहसिक पर्यटन स्थल है। इसके लिए अलमोड़ा (3500 फुट) से कापकोत तक बसें मिलती हैं। इसके बाद ग्लेशियर तक की 52 किमी की दूरी खच्चरों और कुलियों की सहायता से ही तय करनी होती है। यहाँ तक जाने के लिए लगभग सात दिन का समय लगता है। रास्ते में लोहाखेत (15 किमी), ढाकुरी (10 किमी), खाटी (10 किमी), द्वाली (10 किमी) और फुर्किया (5 किमी) आते हैं। फुर्किया से पिंडारी ग्लेशियर 5 किमी है। फुर्किया से ग्लेशियर के मध्य 5 किमी की दूरी में 2500 फुट की चढ़ाई चढ़नी होती है। यदि फुर्किया से सुबह जल्दी चला जाए, तो ग्लेशियर की भव्यता और छवि को ज्यादा देर तक देखा जा सकता है। ठहरने के लिए उपर्युक्त सभी स्थानों पर पीडब्ल्यूडी के बंगले हैं, जिनके लिए बुकिंग एसडीओ (बी एंड आर), बागेश्वर से करानी होती है। ग्लेशियर के पास मारतोली में रुकने के लिए टैंट साथ रखें। इस ग्लेशियर के रास्ते में सुंदरढुंगा और काफिनी ग्लेशियर भी देखे जा सकते हैं। यदि साहस रखें, तो यह ग्लेशियर आपकी मेहनत का पूरा फल देगा और आप लंबी श्रमसाध्य चढ़ाई के बावजूद एक प्रसन्नचित पर्यटक के रूप

में वापस आएँगे। वापसी में केवल द्वाली, ढाकुरी और कापकोत रुककर यात्रा जल्दी पूरी की जा सकती है। 15 मई से 15 जून तक यहाँ फूल खिलने का समय अर्थात् वसंत ऋतु होती है। उस समय तक स्नो ब्रिज भी नहीं पिघल चुके होते हैं। 15 सितंबर से अक्तूबर के पहले सप्ताह तक धुंध नहीं पड़ती और रास्ते में पड़ने वाला ट्रेल दर्रा भी आसानी से पार किया जा सकता है। अतः ग्लेशियर पर इन्हीं अवधियों के दौरान जाना चाहिए।

121. पिथौरागढ़ समुद्र तल से 1350 मी की ऊँचाई पर बसा पिथौरागढ़ पर्वतारोहियों और प्रकृति प्रेमियों का स्वर्ग माना जाता है। पिथौरागढ़ की घाटी लगभग 10 वर्ग किमी क्षेत्र में फैली हुई है और इसे सौर घाटी तथा छोटा कश्मीर भी कहा जाता है। यहाँ के चंद और राइका शासक बहुत शक्तिशाली थे। उन दिनों यह स्थान पूर्वी नेपाल जाने वाले व्यापारिक मार्गों के बीच पड़ता था। हिंदुओं के तीर्थ स्थान कैलाश पर्वत एवं मानसरोवर झील का रास्ता भी यहीं से होकर गुजरता है।

पर्यटन स्थल पिथौरागढ़ में कई मंदिर महत्त्वपूर्ण तीर्थों के रूप में जाने जाते हैं। ट्रैकिंग के कारण यहाँ पार्यटनिक विकास तेजी से हो रहा है। पिथौरागढ़ से 7434 मी ऊँची नंदा देवी, 7045 मी ऊँची त्रिशूल, 6904 मी ऊँची पंचचूली तथा 6565 मी ऊँची हरदेवल चोटी भी देखी जा सकती है। यहाँ से 6 किमी दूर थल केदार तथा 7 किमी दूर चंडाक है। पिथौरागढ़ से 16 किमी दूर ध्वज नामक जगह है, जहाँ शिव और माँ जयंती के मंदिर हैं। पिथौरागढ़ से 68 किमी दूर जौलजीबी है। 75 किमी दूर चंपावत है, जो कभी चंद्रवंशी राजाओं की राजधानी होती थी। यहाँ के बालेश्वर तथा नागनाथ मंदिर वास्तुकला की दृष्टि से विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण हैं। यहाँ से 3 किमी दूर हथिया नाला है, जिसकी मूर्ति कला व नक्काशी बेजोड़ हैं। पिथौरागढ़ से 112 किमी दूर चौकोरी है, जहाँ से नंदा देवी, त्रिशूल व पंचचूली चोटियों के बहुत रोमांचक दर्शन होते हैं। 122 किमी दूर बेरीनाग है, जहाँ चाय के बाग हैं। 130 किमी दूर नारायणा आश्रम तथा 78 किमी दूर गंगोली हाट है, जहाँ काली मंदिर महत्त्वपूर्ण है। 91 किमी दूर पाताल भुवनेश्वर, 127 किमी दूर मुंशियारी है। पिथौरागढ़ से मिलम व रालाम ग्लेशियर भी जाया जा सकता है, जहाँ ट्रैकिंग की अच्छी सुविधा है।

पुरातात्विक महत्त्व मध्य युग में पिथौरागढ़ बहुत महत्त्वपूर्ण था। यहाँ की प्राचीन इमारतों के ध्वंसावशेष उस युग की कला के मौन गवाह हैं। चंपावट में चंद्रवंशी राजाओं की राज़धानी के महल व किलों के ध्वंसावशेष अब भी देखे जा सकते

हैं। यहाँ बालेश्वर तथा नागनाथ के मंदिर वास्तुकला की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। नारायणा आश्रम भी वास्तुकला का एक अच्छा नमूना है। इसके अतिरिक्त गंगोली हाट में काली मंदिर की स्थापत्य कला का वैभव भी देखते ही बनता है। पाताल भुवनेश्वर में एक संकरी गुफा है, जिसमें प्रवेश करने के बाद 84 सीढ़ियाँ उतरकर विशाल सुरंग व गुफाएँ देखने को मिलती हैं। गुफाओं में अनगिनत प्राकृतिक कलाकृतियाँ पर्यटकों को आश्चर्यचकित कर देती हैं।

मेले और पिकनिक स्थल पिथौरागढ़ और इसके आस-पास के स्थानों में कई जगह मेले लगते हैं। चंडाक में अगस्त माह में मोस्म मनु मंदिर के पास तथा थल केदार में मार्च माह में शिवरात्रि के दिन शिव मंदिर में मेला लगता है। इसी प्रकार ध्वज में भी शिव मंदिर पर मेला लगता है। गंगोली हाट में हाट काली मंदिर पर साल में दो बार मेले लगते हैं, इसी प्रकार जौलजीवी में गौरी और काली नदियों के संगम पर प्रतिवर्ष मेले लगते है। पिथौरागढ़ शहर से एक किमी दूर उल्का देवी का मंदिर, राधाकृष्ण मंदिर, राइ गुफा और भातकोट तथा दो किमी दूर हनुमानगढ़ी पिकनिक के अच्छे स्थल हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ पिथौरागढ़ से निकटतम हवाई अड्डा 4 किमी दूर नैनी सैनी तथा निकटतम रेलवे स्टेशन 151 किमी दूर टनकपुर है। इस प्रकार यह स्थान देश के अन्य भागों से मुख्य रूप से सड़क मार्ग से ही जुड़ा हुआ है। यहाँ गर्मियों में अधिकतम तापमान लगभग 33°से और सर्दियों में न्यूनतम तापमान लगभग 1°से होता है। अतः यहाँ भ्रमण के लिए अप्रैल-जून तथा सितंबर एवं अक्तूबर के महीने में जाना उपयुक्त होता है।

पिथौरागढ़ में पर्यटक आवास गृह, वन आवास गृह, जिला परिषद का डाक बंगला तथा पीडब्ल्यूडी निरीक्षण गृह ठहरने के अच्छे स्थल हैं। चंपावट में कुमाऊँ मंडल विकास निगम का पर्यटक आवास गृह तथा चौकोरी में भी एक आवास गृह है। गंगोली हाट में पीडब्ल्यूडी निरीक्षण गृह और जिला परिषद का डाक बंगला है।

पर्यटक सूचना केंद्र पिथौरागढ़ में उत्तर प्रदेश सरकार का पर्यटक कार्यालय तथा जिला सूचना केंद्र है। मिलम व रालाम ग्लेशियर पर ट्रैकिंग के लिए सामान बागेश्वर से मिल जाता है। कुमाऊँ मंडल विकास निगम मिलम ग्लेशियर के लिए ट्रैकिंग का कार्यक्रम आयोजित करता है। इस बारे में डिविजनल मैनेजर (पर्यटन), कुमाऊँ मंडल विकास निगम (सेक्रीटेरियट बिल्डिंग) से संपर्क किया जा सकता है। दोनों ट्रैकों पर ठहरने की सुविधायुक्त डाक बंगले भी हैं।

122. प्रयाग यह स्थान इलाहाबाद में है। प्रयाग गंगा, यमुना और पौराणिक सरस्वती का संगम स्थल है। इन नदियों को त्रिवेणी और इनके समागम को संगम कहा जाता है। कंबल, अश्वावतार और भोगवती प्रयाग के अन्य तीर्थ स्थान हैं। प्रयाग उन चार स्थानों में से एक है, जहाँ 12 और 6 वर्ष के पश्चात् क्रमशः कुंभ और अर्ध-कुंभ मेलों का आयोजन किया जाता है। इसे तीर्थराज, देवभूमि और यज्ञभूमि भी कहा जाता है। प्राचीन काल में भी प्रयाग का पर्याप्त धार्मिक महत्त्व था। यही कारण है कि लोग यहाँ आकर उदारता से दान दिया करते थे। परंपरा के रूप में हर्ष ने भी यहाँ हर पाँच साल बाद यज्ञ करवाए और दान दिए। उसके 643 ई० के दान-यज्ञ में ह्यून सांग भी उपस्थित था। ऐसा माना जाता है कि इस स्थान की पवित्रता से प्रभावित होकर लोग स्वर्ग प्राप्त करने के उद्देश्य से यहाँ आकर आत्म-हत्या किया करते थे। अशोक ने यहाँ एक स्तंभ लेख स्थापित करवाया था, जिसमें उस समय की अधार्मिक प्रवृत्तियों के विरुद्ध बातें लिखी गई हैं। समुद्रगुप्त ने इसी स्तंभ पर अपनी कीर्तियाँ खुदवाईं। मौर्य काल में यह स्थान कान्यकुब्ज, पुष्कलावती, पाटलीपुत्र और ताम्रलिप्ति से सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ था।

123. फतेहपुर सीकरी—निर्माण यह शहर उत्तर प्रदेश मे आगरा से लगभग 35 किमी दूर है। इसे सीकरी गाँव में अकबर द्वारा 1569 ई० में बसाया गया था। यहाँ पर शेख सलीम चिस्ती रहा करते थे। ऐसा माना जाता है कि शेख सलीम चिस्ती के आशीर्वाद से अकबर के एक पुत्र हुआ था। उनके आदर में उन्होंने यहाँ 1570 ई० में एक किला बनवाकर सीकरी को 1569 से 1584 तक अपनी राजधानी बनाया। साथ ही चिस्ती के नाम पर अपने पुत्र का नाम भी सलीम रखा।

पुरातात्विक महत्त्व के स्थल फतेहपुर सीकरी अकबर की राजधानी के रूप में उतनी प्रसिद्ध नहीं, जितनी उसकी भव्य एवं सुंदर वास्तुकला के कारण प्रसिद्ध है। किले के अलावा अकबर ने यहाँ 1575-76 ई० में 176 फुट ऊँचा बुलंद दरवाजा बनवाया था। यह दरवाजा उसने 1572-73 ई० में गुजरात पर विजय की याद में बनवाया था। इसी विजय के पश्चात् उसने सीकरी का नाम फतेहपुर सीकरी रखा। यह दरवाजा आज भी भारत का सबसे ऊँचा द्वार है। अकबर ने यहाँ जामा मस्जिद (जिसे फतेहपुर की शान कहा जाता है), दीवान-ए-खास, दीवान-ए-आम, 176 खंभों पर खड़ा पंच महल, जोधाबाई का महल (1570 से 74 के बीच निर्मित), बीरबल का घर, तुर्की सुल्ताना का घर, नौबत खाना, सुनहरा महल (हरम), शेख सलीम चिस्ती की दरगाह (वास्तुकला के सबसे सुंदर नमूनों

फतेहपुर की शान, बुलंद दरवाजा, फतेहपुर सीकरी

में से एक), हवा महल, ख्वाबगाह महल, हाथी पोल, नगीना मस्जिद, हिरन मीनार तथा अनेक तालाब और सराय भी बनवाए। फतेहपुर सीकरी के मुख्य किले की दीवार तीन ओरों से 50-50 फुट ऊँची है। इसके सात दरवाजे हैं, जिनके नाम उसने आगरा दरवाजा, दिल्ली दरवाजा, अजमेर दरवाजा, ग्वालियर दरवाजा, चंद्रफूल दरवाजा और बीरबल दरवाजा रखे। वी ए स्मिथ के शब्दों में "फतेहपुर सीकरी पत्थरों में गढ़ी एक प्रेम कहानी है।"

उपलब्ध सुविधाएँ फतेहपुर सीकरी दिल्ली, जयपुर, आगरा, मथुरा आदि शहरों से सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ ठहरने के लिए उत्तर प्रदेश पर्यटक निगम का गुलिस्ताँ टूरिस्ट कंप्लेक्स, पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग का बंगला तथा कुछ धर्मशालाएँ है।

124. फरुखाबाद इस शहर की स्थापना मुगल सम्राट के दरबारी मोहम्मद खाँ ने 1717 ई० में की थी। हालाँकि उसने यहाँ मोहम्मद खाँ बंगश के नाम से स्वतंत्र शासन की स्थापना की थी, फिर भी वह मुगल सम्राट के प्रति निष्ठावान बना रहा। 1743 में उसका पुत्र कयाम खाँ यहाँ का शासक बना।

125. फूलों की घाटी राष्ट्रीय उद्यान यह राष्ट्रीय उद्यान चमोली जिले में भ्यूंडार गंगा के ऊपरी भाग पर स्थित है। इसकी स्थापना 1982 में की गई थी। यह बद्रीनाथ से 40 किमी दूर है। यहाँ जाने के लिए पहले ऋषिकेश, फिर जोशीमठ और वहाँ से गोविंद घाट जाना होता है। गोविंदघाट से 40 किमी का पैदल सफर करना होता है। रास्ते में ठहरने के लिए तीन किमी पहले घांघरिया में पर्यटक विश्राम गृह, वन विश्राम गृह और गुरुद्वारे हैं। इस घाटी का पता प्रसिद्ध पर्वतारोही फ्रैंक स्मिथ ने 1931 में लगाया था और उन्होंने ही इस बगीचे का नाम फूलों की घाटी रखा था। यहाँ पर तरह-तरह के फूल खिलते हैं और यहाँ विभिन्न प्रकार की वनस्पतियाँ भी पाई जाती हैं। यहाँ पर कस्तूरी मृग, काले भालू, भरल, सेराँव, भूरे भालू, थार आदि पाए जाते हैं। यहाँ जाने का उपयुक्त समय मध्य जुलाई से मध्य अगस्त तक का होता है।

126. बदायूँ—ऐतिहासिक महत्त्व 1202 में कालिंजर पर विजय के बाद कुतुबुद्दीन ऐबक ने बदायूँ के किले पर भी कब्जा किया था, परंतु बाद में उसके शासन काल मे ही राजपूतों ने यहाँ अपना स्वतंत्र शासन स्थापित कर लिया। अल्तमश ने उनसे बदायूँ को फिर छीन लिया। मुहम्मद गौरी के समय में ही अपने आपको स्वतंत्र घोषित कर चुके गजनी के सुल्तान ताजुद्दीन एल्दोज और अल्तमश के मध्य 1214 में एक युद्ध हुआ था, जिसमें ऐल्दोज की हार हुई थी। अल्तमश ने उसे पकड़ कर बदायूँ के किले में बंद कर दिया, जहाँ बाद में उसकी मृत्यु हो गई। सैयद वंश का अंतिम शासक मुहम्मद शाह 1451 में बहलोल लोदी द्वारा गद्दी से उतारे जाने के बाद बदायूँ आ गया था। उसकी मृत्यु भी यहीं हुई।

127. बद्रीनाथ हरिद्वार से 290 किमी दूर अलकनंदा नदी और ऋषि

गंगा के संगम पर 3133 मी की ऊँचाई पर स्थित बद्रीनाथ आज एक प्रमुख पर्यटन स्थल बन गया है। ऐसा माना जाता है कि प्राचीन काल में यह स्थान बेर (बद्री) के पेड़ों से भरा हुआ था। इसीलिए इसका नाम बद्रीनाथ पड़ा।
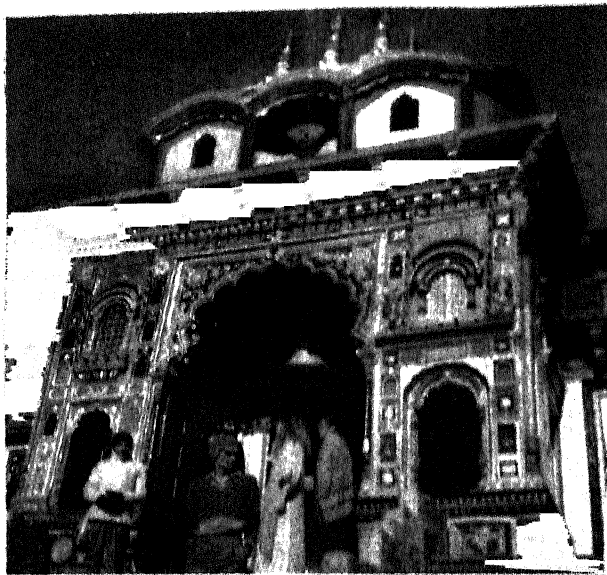
बद्रीनाथ मंदिर का द्वार

पर्यटन स्थल बद्रीनाथ में बद्रीनाथ का मंदिर मुख्य पर्यटन स्थल है और गढ़वाली स्थापत्य कला का विशिष्ट नमूना है। यह मंदिर अति प्राचीन होने के कारण इसका वर्णन पुराणों में भी मिलता है। यहीं पर तप्त कुंड, सूर्य कुंड और नारद कुंड हैं, जहाँ मंदिर में प्रवेश करने से पहले स्नान किया जाता है। बद्रीनाथ से 4 किमी दूर इंडो-मंगोलियाई जाति द्वारा बसाया गया मानाग्राम है, जहाँ कपड़ों के बहुत से कुटीर उद्योग हैं। भारत-तिब्बत सीमा पर यह अंतिम गाँव है। यहाँ से 42 किमी दूर जोशीमठ है, जहाँ ठहरने के लिए पर्यटक आवास गृह, होटल एवं धर्मशालाएँ हैं और जिसकी स्थापना आठवीं सदी में आदि शंकराचार्य ने की थी। बद्रीनाथ से 8 किमी दूर वसुधारा जल प्रपात, 14 किमी दूर खिरौं घाटी, 20 किमी दूर चमोली तथा पांडुकेश्वर, 35 किमी दूर काकभुसुंडि ताल, 3 किमी दूर माता मूर्ति तथा चार किमी दूर व्यास गुफा, गणेश गुफा, शेष नेत्र ताल एवं भीम (4 किमी) पुल हैं।

उद्यान बद्रीनाथ से 40 किमी दूर एक फूलों की घाटी है, जो लगभग 88 वर्ग किमी क्षेत्र में फैली हुई है। यहाँ सैकड़ों प्रजातियों के जंगली फूल हैं। ये सब मिलकर एक सुंदर दृश्यावली प्रस्तुत करते हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ बद्रीनाथ से निकटतम हवाई अड्डा 300 किमी दूर जौली ग्रांट है और निकटतम रेलवे स्टेशन 297 किमी दूर ऋषिकेश है। इस प्रकार यह स्थल देश के अन्य शहरों से मुख्य रूप से सड़क मार्ग से ही जुड़ा हुआ है। सड़क मार्ग से यहाँ जाने के लिए पहले देहरादून या हरिद्वार जाना होता है। बद्रीनाथ में ठहरने के लिए गढ़वाल मंडल विकास निगम का होटल देवलोक और ट्रैवलर्स लॉज, पीड़ब्ल्यूडी का विश्राम गृह, बद्री केदार मंदिर समिति तथा अन्य धार्मिक संस्थाओं के अतिथि गृह व धर्मशालाएँ भी हैं। बद्रीनाथ मंदिर मई से नवंबर तक खुला रहता है। इसलिए इस मंदिर को अंदर से देखने के लिए इन्हीं दिनों जाना होता है। प्राकृतिक दृश्य देखने के लिए बद्रीनाथ कभी भी जाया जा सकता है। गर्मियों में यहाँ का अधिकतम तापमान 17.9°से तथा न्यूनतम तापमान लगभग 6°से होता है।

128. बनारस कृपया वाराणसी देखें।

129. बरेली—पुरातात्विक महत्त्व बरेली में हड़प्पा संस्कृति के बाद की नवपाषाण संस्कृति के अवशेष मिले हैं। इस संस्कृति के मिट्टी के बर्तन भूरे रंग के और चित्रित होते थे। मकान बनाने के लिए लोग कच्ची ईंट तथा सरकंडों का प्रयोग करते थे। वे घोड़े व ताँबे से परिचित थे। सभ्यता के अंतिम दिनों में लोहे का प्रयोग भी होने लगा था। वे चावल के अतिरिक्त गाय तथा हरिण का माँस भी खाते थे।

130. बिनसर जीव विहार यह विहार कुमाऊँ मंडल के अलमोड़ा जनपद में है। यहाँ जंगली बिल्ली, तेंदुए, घुरल, हिमालयी काले भालू, सेरौंव, थार आदि मिलते हैं। अलमोड़ा और रानीखेत यहाँ के प्रसिद्ध शहर हैं। यहाँ घूमने का उत्तम समय अप्रैल से जून और सितंबर से नवंबर तक का होता है।

131. भितरी यह स्थान प्रदेश के गाजीपुर जिले में है।

पुरातात्विक महत्त्व यहाँ गुप्त काल का एक स्तंभ लेख पाया गया है, जिसे स्कंदगुप्त ने स्थापित कराया था। इस लेख से पता चलता है कि कुमारगुप्त प्रथम के राज्यकाल के अंतिम दिनों में पुष्यमित्रों और हूणों ने उसके राज्य पर आक्रमण करके संकट की स्थिति उत्पन्न कर दी थी और उसने इस परिस्थिति को सुधारा था। संभवतः यह स्तंभ लेख स्कंदगुप्त ने अपने शासन के अंतिम दिनों में स्थापित करवाया था, क्योंकि इसमें उसकी अन्य सभी सफलताओं का भी उल्लेख है। यहाँ गुप्त काल का एक मंदिर शिव की मिट्टी की मूर्तियों के लिए प्रसिद्ध है।

132. मथुरा मथुरा प्रदेश में यमुना नदी के पश्चिमी तट पर है।

ऐतिहासिक महत्त्व सबसे प्राचीन स्त्रोतों के अनुसार द्वापर युग में यहाँ उग्रसेन का राज्य था, जिसे बंदी बनाकर उसका पुत्र कंस गद्दी पर बैठ गया था। अपने भावी वधिक के बारे में हुई आकाशवाणी से डरकर उसने अपनी बहन देवकी और बहनोई वासुदेव को भी कारागार में डाल दिया था। बाद में देवकीनंदन श्रीकृष्ण ने उसका वध करके तीनों को कारागार से मुक्त कराया और उग्रसेन को मथुरा का राज्य सौंप स्वयं द्वारिका चले गए। महाभारत काल में यहाँ शूरसेन राजाओं का शासन था। तीसरी शताब्दी ई०पू० में मथुरा शहर अशोक के अधीन था। उसके बाद सुंग, शक्, कुषाण, नाग और गुप्त शासकों ने यहाँ शासन किया। 155 ई०पू० में बक्टीरियाई राजा मनिंदर (अथवा मिलिंद) ने इसे अपने कब्जे में कर लिया था। पहली शताब्दी में यहाँ शक् महाक्षत्रप राजुल और सोडाश (15 ई०) का राज्य था। तरणडास, हगान, हगामश, घटाक, शिवघोष और शिवदत्त यहाँ के अन्य क्षत्रप थे। कनिष्क (78-102) ने इसे शकों से छीनकर यहाँ अपना शासन स्थापित किया था। उसके एक वंशज हुविष्क (119-38) ने मथुरा में एक मंदिर और बौद्ध मठ बनवाया। मथुरा में कुषाण वंश के ही शासक वासुदेव प्रथम (152-76) के काल के सिक्के मिले हैं। समुद्रगुप्त ने यहाँ के राजा नागसेन को हराया था। 1019 ई० में महमूद गजनी ने धावा बोलकर यहाँ से काफी माल लूटा। अपने धार्मिक कट्टरपन के वशीभूत होकर औरंगजेब ने मथुरा का सुप्रसिद्ध केशव राय मंदिर गिरवा दिया था, जिससे क्रोधित होकर यहाँ के जाटों ने गोकल के अधीन विद्रोह किया था। हालाँकि मुगलों से लड़ाई में गोकल मारा गया, फिर भी मुगल शासन के विरुद्ध जाटों का विद्रोह चूड़ामन तृतीय के नेतृत्व में 1707 में औरंगजेब की मृत्यु के बाद तक जारी रहा। 1707 के बाद जाटों ने भरतपुर में अपना स्वतंत्र शासन स्थापित कर लिया।

धार्मिक महत्त्व मथुरा प्राचीन काल से ही धर्म का प्रमुख केंद्र रहा है। विष्णु के अवतार श्रीकृष्ण के जन्म-स्थान के रूप में यह द्वापर युग से ही प्रसिद्ध है। इसी कारण यहाँ सत्वत् यादवों ने भगवतवाद (वैष्णववाद) आरंभ किया। यह उनका एक धार्मिक केंद्र था। ऐसा माना जाता है कि यहाँ कंस की कारागार कटरा नामक जगह पर थी, जहाँ श्रीकृष्ण का जन्म हुआ था। बाद में इस जगह पर एक मंदिर का निर्माण हुआ, परंतु औरंगजेब ने इसे गिरवा दिया। मथुरा में यमुना नदी के किनारे विश्राम घाट है। ऐसा माना जाता है कि कंस को मारने के बाद कृष्ण ने यहीं विश्राम किया था। प्राचीन काल में मथुरा सप्तपुरियों (पवित्र शहरों) में से एक था। अशोक के शासन काल के दौरान उपगुप्त ने यहाँ बौद्ध धर्म का प्रचार

किया। सातवीं शताब्दी ई० में फाहियान की यात्रा के दौरान बौद्ध धर्म यहाँ का मुख्य धर्म था। मथुरा जैन तीर्थंकार सुपार्श्व का भी जन्म स्थान है।

पुरातात्विक महत्त्व मथुरा में हड़प्पा संस्कृति के बाद की नवपाषाण संस्कृति के अवशेष मिले हैं। इस संस्कृति के मिट्टी के बर्तन भूरे रंग के और चित्रित होते थे। मकान बनाने के लिए लोग कच्ची ईंट तथा सरकंडों का प्रयोग करते थे। वे घोड़े और ताँबे से परिचित थे। सभ्यता के अंतिम दिनों में लोहे का प्रयोग भी होने लगा था। वे चावल के अतिरिक्त गाय तथा हरिण का माँस खाते थे। जानकारी के सबसे प्राचीन स्त्रोतों से पता चलता है कि अशोक ने यहाँ एक स्तूप बनवाया था। प्रथम शताब्दी ई० काल के शक् राजाओं के तीन लेख और कुछ मुहरें भी यहाँ पाई गई हैं। कुषाण वंश के अंतिम महान शासक वासुदेव प्रथम ने भी मथुरा में एक लेख स्थापित कराया था। कुषाण काल में मथुरा शिल्प कला अपने आप में एक विशिष्ट प्रकार की शिल्प कला थी। इसी शैली में यहाँ कला की एक विशिष्ट शैली पनपी। इस शैली में बुद्ध को मानव रूप में चित्रित किया गया है। कुषाण काल के सिक्कों, लेखों, शिल्पों और स्तूपों से मथुरा को भारत में पेशावर के बाद दूसरी पुरातात्विक राजधानी का दर्जा मिलता है। यहाँ सैनिक परिधान पहने राजा कनिष्क के धड़ की मूर्ति पाई गई है। गुप्त काल की विष्णुमूर्ति यहाँ पाई गई कलात्मक वस्तुओं में सबसे सुंदर है। मथुरा में चंद्रगुप्त द्वितीय का स्तंभ लेख और मुहरें भी मिली हैं। स्तंभ लेख से उसके राज्य के विस्तार और शकों के साथ उसके युद्ध का पता चलता है। मथुरा में कुमारगुप्त ने भी एक अभिलेख स्थापित करवाया था, जिससे पता लगता है कि उसने अपने पिता से मिले विस्तृत राज्य को अक्षुण्ण रखा। मथुरा में डैंपियर पार्क में पुरातात्विक आकर्षण की महत्त्वपूर्ण चीजों का एक पुरातात्विक संग्रहालय भी है, जिसमें गुप्त एवं कुषाण काल की दुर्लभ चीजें रखी हैं। उब्दुन नबीर खाँ ने यहाँ 1661 ई० में जामी मस्जिद बनवाई थी, जो मोजक वाले चमकीले रंगीन प्लास्टर से बनी है। इसे शाही मस्जिद भी कहते हैं।

व्यापार मथुरा का व्यावसायिक महत्त्व प्राचीन काल से ही रहा है। अशोक के काल में यह नगर सूती कपड़ों के निर्माण के लिए प्रसिद्ध था। यहाँ पर धातु और इत्रसाजी की वस्तुओं के कारखाने थे और ये वस्तुएँ यहाँ से देश-विदेश दोनों जगह भेजी जाती थीं। इन कारणों से मथुरा एक समृद्ध नगर बन गया था, जहाँ धनी व्यापारी रहा करते थे।

पर्यटन स्थल मथुरा के पर्यटन स्थलों में पुरातात्विक संग्रहालय, जामी मस्जिद,

(1661 ई० अबोइननवीर द्वारा निर्मित) तथा विश्राम घाट के अलावा 1814 में सेठ गोकलदास द्वारा बनवाया गया द्वारकाधीश मंदिर, मदन मोहन मंदिर, कृष्ण-बलराम मंदिर या इस्कान मंदिर (हरे कृष्ण संप्रदाय द्वारा निर्मित), निधि वन (राधा एवं श्रीकृष्ण की रास लीला का स्थान), राधावल्लभ का मंदिर, गीता मंदिर, शाही मस्जिद, कृष्ण जन्मभूमि (कटरा केशवदेव, जहाँ कंस की कारागार में भगवान कृष्ण ने अवतार लिया था) तथा छह मंजिला पागल बाबा मंदिर हैं। यहाँ औरंगजेब द्वारा 1669 में बनवाई गई एक विशाल मस्जिद है। यहाँ से केवल 15 किमी दूर वृंदावन है, जहाँ हजारों मंदिर व घाट हैं, जिनमें गोविंद देव जी, बाँके बिहारी, रंगजी, मदन मोहन तथा काँच मंदिर मुख्य हैं। पौराणिक कथाओं के अनुसार वृंदावन में श्रीकृष्ण गोपियों के साथ रास लीला करते थे। मथुरा से 23 किमी दूर गोवर्धन पर्वत है, जिसके बारे में प्रचलित है कि मथुरावासियों को इंद्र के प्रकोप से बचाने के लिए उन्हें आश्रय देने के लिए श्रीकृष्ण ने इसे अपनी एक अंगुली से उठाया था। इस पर्वत की परिक्रमा श्रद्धास्पद मानी जाती है। मथुरा के आस-पास श्रीकृष्ण से जुड़े अन्य महत्त्वपूर्ण स्थानों में गोकुल (15 किमी), महावन (18 किमी), बलदेव (27 किमी), डीघ (42 किमी), बरसाना (50 किमी) तथा नंदगाँव (60 किमी) शामिल हैं। गोकुल में संत बल्लभाचार्य जी भी रहे थे। यहाँ गोकुलनाथ का मंदिर है।

उपलब्ध सुविधाएँ मथुरा से निकटतम हवाई अड्डा 56 किमी दूर आगरा है। दिल्ली-मुंबई मार्ग पर होने के कारण यह देश के अन्य भागों से रेल मार्ग के साथ-साथ सड़क मार्ग से भी जुड़ा हुआ है। ठहरने के लिए मथुरा में सैंकड़ों धर्मशालाओं के अतिरिक्त हर प्रकार के होटल हैं। गर्मियों में यहाँ का तापमान 45°से और 22°से के मध्य तथा सर्दियों में 32°से एवं 14°से के मध्य रहता है। यहाँ वर्ष भर कभी भी जाया जा सकता है।

133. मसूरी मसूरी उत्तर प्रदेश का मुख्य पर्यटन स्थल है। यह समुद्र तल से 1971 मी की ऊँचाई पर पहाड़ों के बीच स्थित है। इसकी खोज अंग्रेज अधिकारी मेजर हियरसे ने 1811 में की थी। ऐसा माना जाता है कि 1826 ई० में कैप्टन यंग यहाँ सबसे पहले आकर बसे थे।

पर्यटन स्थल प्राकृतिक सौंदर्य राशि से भरपूर मसूरी में कई रमणीय पर्यटक स्थल हैं। मसूरी से पंद्रह किमी दूर लगभग 4500 फुट की ऊँचाई पर कैंपटी फाल ठंडे पानी का एक खूबसूरत झरना है। कैंपटी फाल के मार्ग में ही मसूरी से 7 किमी दूर लेक मिस्ट नामक स्थान है, जहाँ लकड़ियों का एक होटल, एक

तरण ताल और एक झील है। मसूरी से 4 किमी दूर कंपनी गार्डन है, जहाँ बच्चों के लिए नौकाएँ, खेलों, झूलों आदि का प्रबंध है। 7 किमी दूर देहरादून मार्ग पर मसूरी झील, 6 किमी दूर सर जार्ज एवरेस्ट हाउस और 7 किमी दूर भट्टा प्रपात है। लाइब्रेरी प्वाइंट से 4 किमी दूर तिब्बती शैली का बौद्ध मंदिर है। इनके अतिरिक्त मसूरी से 5 किमी दूर यहाँ का सर्वोच्च शिखर चाइल्डर्स लॉज है, जहाँ स्थित दूरबीन की सहायता से दूर-दूर तक के बर्फीले दृश्य देखे जा सकते हैं। गन हिल शहर का दूसरा सबसे ऊँचा पर्वत शिखर है। यहाँ से भी पहाड़ों के मनोहारी दृश्य नजर आते हैं। यहाँ माल रोड से रोपवे ट्राली में बैठकर अथवा एक किमी पैदल चलकर पहुँचा जा सकता है। मसूरी से 6 किमी दूर नाग देवता का मंदिर है। इनके अतिरिक्त यहाँ कैमल्ज बैक मार्ग और झड़ी पानी प्रपात भी दर्शनीय हैं। यहाँ के समीपवर्ती पर्यटन स्थलों में देववन (11 किमी), यमुना पुल (27 किमी), धनोल्टी (28 किमी), नाग टीला और सरकुंडा (दोनों 35-35 किमी), चंपा (51 किमी), चकराता (78 किमी) और टाइगर प्रपात (83 किमी) प्रमुख हैं।

मसूरी में कुछ पर्वतीय स्थल ऐसे भी हैं, जहाँ प्रकृति अपने अछूते सौंदर्य से मन मोह लेती है। ऐसे स्थानों पर कई पुराने आवास/होटल आदि हैं, जिनका पुराना रूप आज भी विद्यमान है। इनमें लंडौर नामक जगह पर 70 वर्ष पुराना फस्ट इस्टेट आवास, 58 वर्ष पुराना रैड बर्न ओम्स इस्टेट, लाल बहादुर शास्त्री अकादमी के पास स्थित 100 वर्ष पुराना कलात्मक कार्लटन होटल तथा लाइब्रेरी के पास स्थित इतना ही पुराना होटल सेवाय प्रमुख हैं। इन सभी जगहों में पुराने कलात्मक साज-सामान को बड़ा संभाल कर रखा गया है, जो पर्यटकों के लिए बड़े आकर्षण का काम करते हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ· मसूरी से निकटतम हवाई अड्डा जौली ग्रांट है तथा रेलवे स्टेशन देहरादून है। दिल्ली से मसूरी तक की सीधी वायुदूत सेवा भी है। देहरादून से मसूरी जाने के लिए बसें तथा टैक्सियाँ उपलब्ध रहती हैं तथा मसूरी में स्थानीय भ्रमण के लिए टैक्सियाँ, कुली, खच्चर, रोपवे और पैकेज टूर की बसें उपलब्ध रहती हैं।

ठहरने की सुविधाएँ माल रोड पर गढ़वाल मंडल विकास निगम का टूरिस्ट कंप्लेक्स, वाईडब्ल्यूसीए का होलीडे होम एवं अनेक छोटे-बड़े होटल हैं। गर्मियों में यहाँ का तापमान 32°से से 7°से के बीच और सर्दियों में 7°से से 1°से के बीच रहता है।

पर्यटक सूचना केंद्र मसूरी में उत्तर प्रदेश सरकार के टूरिस्ट ब्यूरो का सूचना

केंद्र माल रोड पर है। गढ़वाल मंडल विकास निगम यहीं से टूर संचालित करता है।

134. मेरठ—राजनैतिक महत्त्व मुहम्मद गौरी के गजनी वापस जाने के बाद कुतुबुद्दीन ऐबक ने 1192 में मेरठ पर भी अधिकार कर लिया। 9 जनवरी, 1399 को यहाँ तैमूरलंग ने लूट-पाट मचाई थी। मेरठ वह शहर है, जहाँ 10 मई, 1857 को भारत की स्वतंत्रता के प्रथम संग्राम की रणभेरी बजी। बैरकपुर में मंगल पांडे की मौत की सजा की खबर सुनने के बाद उस दिन यहाँ तैनात तीसरी घुड़सवार टुकड़ी ने चर्बी वाले कारतूसों का प्रयोग करने से मना कर दिया, जिसके फलस्वरूप तीसरी घुड़सवार टुकड़ी को 10 वर्ष की सजा दे दी गई। 10 मई को इस टुकड़ी तथा पैदल टुकड़ी ने विद्रोह करके ब्रिटिश अधिकारियों को मार डाला तथा अपने साथियों को जेल से रिहा कर दिया। इसके बाद वे दिल्ली की ओर कूच कर गए।

पुरातात्विक महत्त्व अशोक द्वारा 243-42 ई०पू० में स्थापित सात स्तंभ लेखों में से एक लेख यहाँ पाया गया है। इस लेख में उसके धर्म और अहिंसा संबंधी सिद्धांतों का वर्णन है।

135. यमुनोत्तरी यमुनोत्तरी 3322 मी की ऊँचाई पर स्थित उत्तर प्रदेश का साहसिक पर्यटन स्थल है। साहसिक क्रीड़ाओं में यहाँ पर्वतारोहण, ट्रैकिंग, स्कीइंग, राफ्टिंग आदि की सुविधाएँ हैं। यहाँ कई पर्यटन स्थल भी हैं, जिनमें यमुना देवी को समर्पित यमुना देवी का मंदिर प्रमुख है। यह मंदिर जयपुर की महारानी गुलेरिया द्वारा उन्नीसवीं शताब्दी में बनवाया गया था। यह जून से अक्तूबर तक खुलता है। शेष समय यह बर्फ से ढका रहता है। इस मंदिर के पास ही गर्म पानी का एक चश्मा है। यहाँ से सात किमी दूर जानकीबाई चट्टी पर भी ऐसा ही एक अन्य चश्मा है। 49 किमी दूर बरकोट में एक प्राचीन मंदिर है।

उपलब्ध सुविधाएँ यमुनोत्तरी स्थल मेरठ, ऋषिकेश, हरिद्वार तथा अन्य शहरों से सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। स्थानीय भ्रमण के लिए हनुमान चट्टी से खच्चर, भारवाहक आदि उपलब्ध रहते हैं। गर्मियों में यहाँ का तापमान 20°से से 0.6°से के मध्य रहता है। सर्दियों में यह स्थान बर्फ से ढका रहता है। इसी कारण मई, जून, सितंबर व अक्तूबर के महीने यहाँ पर्यटन के अधिक अनुकूल हैं।

ठहरने की सुविधाएँ यमुनोत्तरी में ठहरने के लिए केवल धर्मशालाएँ हैं। जानकीबाई चट्टी पर ट्रैवलर्ज लॉज तथा बरकोट में गढ़वाल मंडल विकास

निगम का ट्रैवलर्ज लॉज व पर्यटक विश्राम गृह तथा वन विश्राम गृह हैं। पर्यटकों के लिए रास्ते में पड़ने वाले रूद्रप्रयाग में ठहरना ज्यादा अच्छा रहेगा, क्योंकि यमुनोत्तरी के आवास गृहों आदि में समुचित सुविधाएँ नहीं हैं।

136. राजघाट यह स्थान वाराणसी जिले में है। यहाँ बुद्ध के काल के लोहे के औजार पाए गए हैं।

137. राजाजी जीव विहार इस विहार की स्थापना 1948 में की गई थी। यहाँ पर हाथी, शेर, सांभर, गुलदार, काकड़ चीतल, नीलगाय, सूअर, घुरल, जंगली मुर्गी, कलजी मोर, तीतर आदि पाए जाते हैं। यहाँ पर्यटन का उपयुक्त समय नवंबर से जून तक का होता है।

138. रानीखेत रानीखेत अलमोड़ा से 50 किमी दूर 1829 मी की ऊँचाई पर हिमालय पर्वत की बर्फ से ढकी शृंखलाओं में आवासित है। प्राकृतिक दृश्यावली के कारण यह शहर छुट्टियाँ बिताने के लिए एक अच्छा स्थल है।

पर्यटन स्थल रानीखेत के आस-पास कई दर्शनीय स्थल हैं, जिन्हें देखकर पर्यटक मंत्रमुग्ध रह जाता है। यहाँ से 6 किमी दूर उपत में गोल्फ का एक लंबा-चौड़ा मैदान है तथा कलिका में कालीदेवी का प्रसिद्ध मंदिर है। 7 किमी दूर दुर्गा का झूला देवी मंदिर है। रानीखेत से 10 किमी दूर चौबटिया में दूर-दूर तक फैले फलों के बागों का सौंदर्य भी देखने लायक है। यहाँ से 3 किमी दूर भालू डैम तथा अलमोड़ा के रास्ते पर 13 किमी दूर मझखाली नामक पर्यटन स्थल है। बिनसर महादेव (19 किमी) में शिव, दुर्गा और राम के मंदिर हैं। 26 किमी दूर शीतला खेत बर्फ से ढकी पहाड़ियों से घिरा हुआ है। इसी प्रकार द्वारा हाट (38 किमी) में 11वीं से 16वीं शताब्दी के मध्य बने 55 मंदिर हैं और दूनागिरी (52 किमी) में दुर्गा का मंदिर है।

उपलब्ध सुविधाएँ रानीखेत से निकटतम हवाई अड्डा 119 किमी दूर पंतनगर और रेलवे स्टेशन 86 किमी दूर काठगोदाम है। सड़क मार्ग से रानीखेत जाने के लिए हल्द्वानी, नैनीताल, अलमोड़ा, कौसानी आदि से सरकारी बसें मिल जाती हैं। गर्मियों में यहाँ का तापमान 32°से से 8°से तक तथा सर्दियों में 7°से से 3°से तक होता है। यहाँ भ्रमण के लिए मार्च से जून तथा सितंबर से नवंबर तक का समय उपयुक्त रहता है। रानीखेत में ठहरने के लिए सदर बाजार में फोरेस्ट रैस्ट हाउस, पीडब्ल्यूडी रैस्ट हाउस तथा रानीखेत क्लब, दमाल में टूरिस्ट बंगला, कलिका में फोरेस्ट रेस्ट हाउस और जल निगम रेस्ट हाउस तथा जरूरी बाजार

में शिव मंदिर धर्मशाला के अतिरिक्त छोटे-बड़े कई होटल हैं। कुमाऊँ मंडल विकास निगम रानीखेत और आस-पास के स्थलों के टूर तथा यहाँ का स्थानीय माउंटेनियरिंग क्लब कई स्थानों के लिए ट्रैकिंग के कार्यक्रम आयोजित करता है।
पर्यटन सूचना केंद्र रानीखेत में उत्तर प्रदेश सरकार का पर्यटक ब्यूरो कार्यालय माल रोड पर है और रेलवे आउट एजेंसी से रेल आरक्षण की सुविधा भी है।

139. रामनगर कृपया अहिच्छत्र देखें।

140. लखनऊ गोमती नदी के किनारे स्थित यह शहर आधुनिक उत्तर प्रदेश की राजधानी है। आधुनिक लखनऊ शहर का निर्माता नवाब आसफ-उद्-दौला माना जाता है। मुगल काल के दौरान इस शहर का पर्याप्त राजनैतिक महत्त्व था। फैजाबाद के बाद लखनऊ ही नवाबों की लंबे काल तक गद्दी रही।

ऐतिहासिक महत्त्व दिल्ली के सम्राट ने मोहम्मद आमीन उर्फ बुरहान-उल-मुल्क सआदत खाँ को 1723 में अवध का सूबेदार बनाया था। उसे बुरहान-उल-मुल्क की पदवी दी गई। उसने करनाल में नादिरशाह से युद्ध किया था, परंतु वह हार
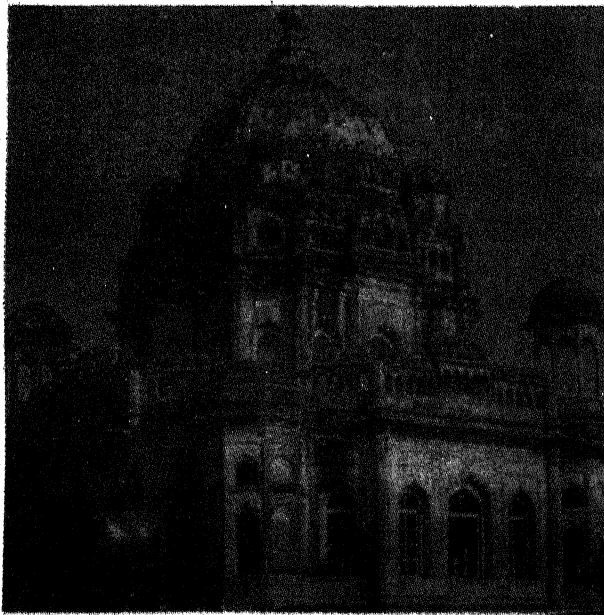
नवाब सआदत अली का मकबरा, लखनऊ

गया और मारा गया। 1739 में उसकी मृत्यु के बाद ईरानी दल के नेता मिर्जा मुहम्मद मुकीम अब्दुल मंसूर खाँ उर्फ सफदरजंग ने दिल्ली के सम्राट से 1748 में उसके वजीर का पद ले लिया। परंतु तुरानी दल के प्रभाव के कारण बाद में सम्राट अहमदशाह ने उससे नवाबी छीन ली, जिस कारण दोनों में युद्ध हुआ। युद्ध में सफदरजंग की हार हुई, परंतु इसके बाद उसने अवध में स्वतंत्र शासन की स्थापना करके अपने आपको यहाँ का नवाब घोषित कर लिया। उसे तथा उसके उत्तराधिकारियों को नवाब वजीर कहा जाने लगा। 1754 में उसकी मृत्यु के बाद जलालुद्दीन हैदर सुजाउद्दौला के नाम से अवध का अगला नवाब वजीर बना। 1765 में सुजाउद्दौला अंग्रेजों के हाथों बक्सर की लड़ाई में हार गया। उसे तथा दिल्ली के सुल्तान शाह आलम को कैद कर लिया गया। फिर भी क्लाइव ने कड़ा और इलाहाबाद को छोड़कर उसका प्रदेश वापस कर दिया। कड़ा और इलाहाबाद शाह आलम को दे दिए गए। मुगल शासकों द्वारा मराठों का साथ देने के कारण 1773 में उससे कड़ा और इलाहाबाद छीनकर अवध के नवाब को पचास लाख रु. में बेच दिए गए। सुजाउद्दौला के बाद आसफ-उद्-दौला (1775-97) तथा वजीर अली (1797-98) नवाब वजीर बने। 1798 में सर जॉन शोर ने सआदत अली (1798-1814) को यहाँ का नवाब बना दिया। उसके बाद गाजी उद्-दीन-हैदर (1814-27) तथा नासिरुद्दीन हैदर (1827-37) नवाब बने। लार्ड ऑकलैंड के समय में नवाब नासिरुद्दीन 1837 में स्वर्ग सिधार गया। मोहम्मद अली शाह (1837-42) अगला नवाब बना। उसके बाद अमजद अली शाह (1842-47) तथा 1847 में वाजिद अली शाह (1847-56) अवध का आखिरी नवाब बना। 13 फरवरी, 1856 को उसे हटाकर कलकत्ता भेज दिया गया और लखनऊ को अंग्रेजी अधिकार में कर लिया गया। 1857 में प्रथम स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान नवाब की बर्खास्त सेना ने आंदोलन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। तब आंदोलनकारियों ने मई, 1857 में सर हेनरी लारेंस को मारकर लखनऊ पर कब्जा कर लिया। उन्होंने जनरल हैवलॉक और ओटरम को भी घेर लिया था, परंतु उन्हें छोड़ दिया गया। मौलवी अहमद अली शाह ने भी आंदोलन के दौरान महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई, परंतु उसे लखनऊ में हरा दिया गया। मार्च, 1858 में इस पर अंग्रेजों ने पुनः कब्जा कर लिया। कांग्रेस के दो दल नर्म दल और गर्म दल लखनऊ के 1916 के अधिवेशन में एक हो गए थे। उसी समय कांग्रेस और मुस्लिम लीग के नेता सुधारों के बारे में अपनी संयुक्त योजना प्रस्तुत करने के लिए सहमत हुए थे। इस योजना को 1916 की कांग्रेस-लीग योजना कहा गया।

यह शहर भारत के आकर्षक नगरों में से एक है। प्राचीन काल में यहाँ की

छवि नृत्य और संगीत से प्रकट होती थी। यहाँ की शान-ए-अवध बनारस की सुबह-ए-बनारस से तुलनीय है। लखनऊ तहजीब के शहर के साथ-साथ प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के गढ़ के रूप में भी जाना जाता है। 1890 में मौलवी शिबली नुमानी ने यहाँ नदायत-उल-उलमा संस्था की स्थापना की।

पुरातात्विक महत्त्व के दर्शनीय स्थल लखनऊ में देखने योग्य ज्यादातर इमारतें मध्य युगीन हैं, परंतु मन मोहने की दृष्टि से वे किसी भी प्रकार कम नहीं हैं। यहाँ का चार बाग रेलवे स्टेशन भी एक मध्य युगीन इमारत है, जो राजपूत शैली में 1914 बनाया गया था । लखनऊ में सबसे आकर्षक, शिल्प कला की दृष्टि से सबसे भव्य तथा विशाल इमारत यहाँ का बड़ा इमामबाड़ा है। इसका निर्माण नवाब आसफ-उद्-दौला ने 1784 ई० में कराया था। यह 165 फुट लंबा, 50 फुट चौड़ा तथा 50 फुट ऊँचा है। ऐसा माना जाता है कि इसका विशाल कक्ष विश्व का सबसे बड़ा स्तंभहीन मेहराबदार कक्ष है। इस इमामबाड़े के निचले हिस्से में नवाब आसफ-उद्-दौला की मजार और ऊपर एक अनोखी भूल-भुलैया है, जिसमें छोटी-छोटी गलियाँ और सीढ़ियाँ हैं। इनका निर्माण दुश्मन के आक्रमण के समय बचाव के लिए किया गया था। इस इमामबाड़े के पास बेगमों का हमामबाड़ा तथा इसकी चारदीवारी में 60 फुट ऊँचा रूमी दरवाजा आकर्षक, दर्शनीय तथा शिल्पकला का अनूठा नमूना है। लखनऊ में हुसैनाबाद में एक छोटा इमामबाड़ा भी है, जिसे नवाब मोहम्मद अली शाह ने उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में बनवाया था। इसमें बेल्जियम काँच के झाड़-फानूस मनोहारी हैं। बेगम हजरत महल पार्क तथा बुद्ध पार्क भी दर्शनीय हैं। हजरत महल पार्क में एक ग्लोब लगा हुआ है तथा बुद्ध पार्क में नौकायन की व्यवस्था है। यहाँ इतालवी शैली में निर्मित छत्तर मंजिल नाम से एक इमारत है, जिसे नवाब गाजी-उद्-दीन हैदर ने बनवाना शुरू किया था और नसीरुद्दीन हैदर ने पूरा करवाया था। इसमें एक बढ़िया दीवान-खाना, कुछ तहखाने, सुरंगें, गुंबद और मेहराब हैं। आजकल यहाँ केंद्रीय औषध अनुसंधान संस्थान का कार्यालय है। लखनऊ में ब्रिटिश रेजिडेंट के लिए 18वीं शताब्दी में एक रैजिडैंसी बनाई गई थी, जो आजकल एक खंडहर है। इसे नवाब आसफ-उद्-दौला ने 1780 में बनवाना शुरू किया था और नवाब सआदत अली खाँ ने 1800 में पूरा करवाया। इस रैजिडैंसी के सामने 1857 के संग्राम के शहीदों की स्मृति में निर्मित संगमरमर का शहीद स्मारक है। 1795 में फ्रांसीसी आर्कीटैक्ट द्वारा अपने निवास के लिए बनवाया गया ला मार्टीनियर भवन भी दर्शनीय है। छोटे इमामबाड़े के पश्चिम् में एक जामा मस्जिद है, जिसे मोहम्मद शाह अली ने बनवाना शुरू किया था। लखनऊ में देश की

सबसे ऊँची घड़ी मीनार भी है, जिसकी ऊँचाई 221 फुट है। इसे नवाब नसीरुद्दीन हैदर के ट्रस्ट के धन से 1887 में बनवाया गया था। यहाँ हजरत गंज के पास प्रिंस बनारसी बाग में प्रिंस ऑफ वेल्ज जूलोजीकल गार्डन है, जिसका निर्माण 1921 में कराया गया था। यहाँ पर एक म्यूजम, खिलौना गाड़ी तथा जवाहर लाल नेहरू द्वारा प्रयुक्त राजहंस विमान रखा हुआ है। लखनऊ में कुकरैल नामक जगह पर हिरण अभयारण्य एक अच्छा पिकनिक स्थल है। नवाब मोहम्मद अली शाह ने यहाँ एक बारादरी बनवाई थी, जिसे आजकल पिक्चर गैलरी के रूप में प्रयुक्त किया जा रहा है। छोटे इमामबाड़े के उत्तर में लक्ष्मण टीला है, जिस पर आलमगीर की मस्जिद है। इसका निर्माण औरंगजेब के अवध प्रांत के सूबेदार सुल्तान अली शाह कुली शाह ने करवाया था। लखनऊ के अन्य दर्शनीय स्थलों में चिड़ियाघर, मूसाबाग पिकनिक स्थल, मोती महल, सतखंडा पैलेस, दिलकुशाँ बाग, रोशन-उद्-दौला की कोठी, महावीर मंदिर, कैसर बाग, सिकंदर बाग, नवाब अली खाँ का मकबरा तथा लाल बारादरी है। गोमती नदी के पास उन्नीसवीं शताब्दी में बना नवाब गाजीउद्दीन का मकबरा शाह नजफ है।
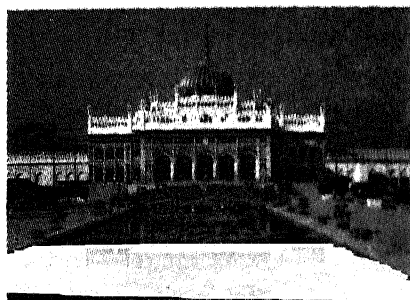
छोटा इमामबाड़ा, लखनऊ

उपलब्ध सुविधाएँ लखनऊ देश के अन्य भागों से वायु, रेल तथा सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। शहर के दर्शन के लिए पर्यटन विभाग द्वारा चार बाग, रेलवे स्टेशन से एक टूरिस्ट बस चलाई जाती है, जिसका आरक्षण कार्यालय लीला सिनेमा के पास स्प्रू मार्ग पर स्थित गोमती होटल में है। स्थानीय भ्रमण के लिए यहाँ सिटी बसें, टैक्सियाँ, ऑटो रिक्शे तथा रिक्शे उपलब्ध रहते हैं। यहाँ भारत सरकार का पर्यटन कार्यालय जनपथ पर, क्षेत्रीय पर्यटन कार्यालय गोमती होटल, 6 स्प्रू मार्ग पर तथा पर्यटक स्वागत केंद्र चार बाग रेलवे स्टेशन पर है। यहाँ गर्मियों में अधिकतम तापमान 40°से और सर्दियों में न्यूनतम तापमान 6°से तक रहता है। यहाँ वर्ष में किसी भी समय जाया जा सकता है।

ठहरने की सुविधाएँ लखनऊ में ठहरने के लिए रकाबगंज में अवध गैस्ट हाउस, राणा प्रताप मार्ग पर वाईऐमसीए का होस्टल, बारो रोड पर वाईडब्ल्यूसीए

का होस्टल, राजा राम मोहन राय मार्ग पर अवध लॉज, चार बाग में रेलवे विश्राम गृह, शाह गया प्रसाद धर्मशाला तथा मुन्ना लाल कागजी धर्मशाला, अमीनाबाद में छेदी लाल धर्मशाला और अग्रवाल धर्मशाला तथा चौक में गंगा प्रसाद, भोलानाथ, शीतल व खुनखुनजी धर्मशालाएँ हैं। इनके अतिरिक्त शहर में छोटे-बड़े अनेक होटल हैं।

141. लालकोट दिल्ली के निकट स्थित यह स्थान बारहवीं शताब्दी में अनंगपाल की राजधानी था।

142. लोहाघाट लोहाघाट पिथौरागढ़ से 62 किमी दूर है।

पर्यटन स्थल लोहाघाट प्राकृतिक दृश्यों के लिए अधिक जाना जाता है। यहाँ से 10 किमी दूर एबट माउंट, 14 किमी दूर चंपावट नगरी, 45 किमी दूर देवी धूरा मंदिर नगरी, 62 किमी दूर रीठा साहिब तथा 71 किमी दूर श्यामला ताल झील भी दर्शनीय हैं।

यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन टनकपुर (88 किमी) और निकटतम हवाई अड्डा नैनी सैनी (68 किमी) है।

143. वत्स कृपया कौशांबी देखें।

144. वाराणसी वाराणसी शहर उत्तर प्रदेश में गंगा नदी के किनारे स्थित है। यह नगरी प्राचीन काल से ही धर्म, शिक्षा, संस्कृति व कला की नगरी के रूप में जानी जाती रही है। वाराणसी का प्राचीन नाम काशी है। किसी समय इस नगरी के उत्तर में वरुणा तथा दक्षिण में असी नदी बहती थी, जिस कारण इसका नाम वाराणसी पड़ा। आजकल यह अपने अपभ्रंश नाम 'बनारस' के रूप में अधिक प्रसिद्ध है। मार्क ट्वेन ने कहा है कि बनारस हमारे इतिहास, परंपराओं और मिथकों से भी पुराना है। यह शहर ईसा से 5000 साल पहले से भी जाना जाता है। रामायण और महाभारत में इसका बहुत बार उल्लेख है। वेदों में भी इसकी कीर्ति गाई गई है। यह सप्तपुरियों में श्रेष्ठ पुरी है। बुद्ध के समय में यह ज्ञान-विज्ञान और सभ्यता तथा संस्कृति की नगरी के रूप में जानी जाती थी। गंगा यहाँ दक्षिण से उत्तर की ओर बहती है, जिस कारण काशी को तीर्थ और मोक्षदायिनी माना गया है। मोक्ष की इच्छा से यहाँ पधारे लोग अपने साथ अपना अनुभव और अपने ज्ञान का निचोड़ भी लाए। इस प्रकार काशी ज्ञान-विज्ञान, धर्म, आध्यात्मिकता, ज्योतिष, तंत्र, संगीत, शिक्षा, सभ्यता और संस्कृति की नगरी के रूप में प्रतिष्ठित हुई।

ऐतिहासिक महत्त्व 64 से 78 ई० तक यहाँ द्वितीय कुषाण शासक विम कदफिस का शासन था। हर्यंक कुल के अंतिम शासक के काल के दौरान शिशुनाग यहाँ का राज्यपाल था। शिशुनाग ने उसे 414 ई० में मारकर अपना शासन स्थापित कर लिया। उसके बाद उसका पुत्र कालाशोक यहाँ का राज्यपाल था। 510 ई० के बाद हूण शासक तोरमाण ने काशी पर आक्रमण किया था। छठी शताब्दी ई०पू० में वाराणसी एक प्रमुख शहर था। उस समय यह काशी राज्य की राजधानी थी। ऐसा कहा जाता है कि यहाँ के राजा ने कौशल नरेश की अधीनता स्वीकार कर ली थी तथा एक बार कनिष्क ने भी इस पर विजय प्राप्त की थी।

बुंदेलखंड के चंदेल राज धंग (950-1002) ने इसे जीतकर अपने राज्य में मिला लिया था। महमूद गजनी के पुत्र मसूद ने नियाल्तिगीन को पंजाब का सूबेदार बनाया था। उसने 1034 में बनारस के बाजार को लूटा। चेदि के कलचूरी राजा गांगेयदेव (1019-40) ने बनारस तक का क्षेत्र जीतकर अपने राज्य का विस्तार किया था। 1194 में कन्नौज पर विजय के फलस्वरूप बनारस भी मुहम्मद गौरी के हाथ में आ गया था। 1210 में उसके प्रतिनिधि कुतुबुद्दीन ऐबक की मृत्यु के बाद आरामशाह के काल में बनारस स्वतंत्र हो गया था। बाद में अल्तमश ने इस पर पुनः कब्जा किया। मुहम्मद तुगलक के शासन काल में बंगाल के एक सूबेदार इलियास ने अपने आपको स्वतंत्र घोषित करके अपनी सीमा बनारस तक बढ़ा ली थी। 1775 में अंग्रेजों ने इसे अवध के नवाब से छीन लिया और 5 जुलाई, 1775 की संधि के द्वारा इसे 22.5 लाख रु. वार्षिक कर के बदले चैत सिंह को दे दिया। हालाँकि संधि में और कोई माँग न करने का स्पष्ट वर्णन था, फिर भी हेस्टिंग्ज ने उससे कई बार अनुचित माँगें कीं। चैत सिंह ने उसकी माँगें हर बार मान लीं। फिर भी उसने उसे कैद कर लिया। हेस्टिंग्ज के इस कार्य से चैत सिंह के सिपाही क्रोधित हो गए। उन्होंने कई अंग्रेज सैनिकों को मार दिया। हेस्टिंग्ज चुनार भाग गया, परंतु शीघ्र ही पर्याप्त सेना के साथ लौटकर उसने चैत सिंह को फिर कैद करके ग्वालियर भेज दिया तथा बनारस को उसके भतीजे को 22.5 लाख रु. की जगह 40 लाख रु. वार्षिक कर के बदले दे दिया। 1791 में जोनाथन डंकन ने यहाँ एक संस्कृत कालेज खोला और 1893 में बाबू श्याम सुंदरदास के प्रयत्नों से यहाँ काशी नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना हुई।

पुरातात्विक महत्त्व यहाँ की गई खुदाइयों से पता चलता है कि 700 ई०पू० में इस शहर के चारों ओर एक कच्ची दीवार थी। यहाँ कुमारगुप्त द्वितीय का एक संक्षिप्त लेख भी पाया गया है।

धार्मिक महत्त्व वाराणसी प्राचीन काल से ही धर्म का एक प्रमुख केंद्र रहा है। तेईसवें जैन तीर्थंकार पार्श्वनाथ (आठवीं शताब्दी ई०पू०) बनारस के राजा अश्वसेन के ही पुत्र थे। उनका जन्म यहीं हुआ था। यहाँ राजघाट से लेकर असी घाट तक मीलों लंबे क्षेत्र में गंगा के अर्धचंद्राकार रूप के साथ-साथ सैकड़ों घाट हैं। ये घाट, भोर की गुलाबी किरणों के मध्य बहता गंगा जल, मंदिरों में बजती हुई घंटियाँ और उनमें पूजन-अर्चन यहाँ की सुबह (जो सुबह-ए-बनारस के नाम से जानी जाती है) को अनोखा रूप प्रदान कर देते हैं। यह सुबह पूरी दुनिया में विख्यात है। यहाँ इंदौर की मराठा महारानी अहिल्याबाई द्वारा निर्मित मंदिर में शिव का ज्योतिर्लिंग स्थापित है। महाराजा रणजीत सिंह ने इस मंदिर पर 9 क्विंटल सोने का पत्तर मढ़वाया था। मंदिर के पास ही ज्ञानवाणी नामक ज्ञान का एक कुआँ है। ऐसा माना जाता है कि आदि विश्वनाथ का मूल शिवलिंग इसी कुएँ में स्थित है। इसलिए इस कुएँ की अर्चना-पूजा के बिना विश्वनाथ मंदिर की पूजा पूर्ण नहीं मानी जाती। इसी प्रकार दशाश्वमेघ, असी, पंचगंगा, मणिकार्णिका तथा वरुणासंगम घाटों पर स्नान किए बिना अन्य घाटों पर स्नान का फल नहीं मिलता। सातवीं शताब्दी के दौरान यहाँ एक अंतर्राष्ट्रीय स्तर का उत्कृष्ट बौद्ध केंद्र था। दसवीं शताब्दी में आदि शंकराचार्य ने यहाँ के ज्ञानवापी क्षेत्र में उस समय के महापंडित मंडन मिश्र को शास्त्रार्थ में पराजित करके जगतगुरु के रूप में मान्यता पाई थी। शैव धर्म इसका सबसे प्राचीन धर्म था। इसी कारण इसे पुराणों में शिवपुरी भी कहा गया है।

व्यापारिक महत्त्व वाराणसी का व्यापारिक दृष्टि से भी बड़ा महत्त्व रहा है। बुद्ध के समय में यह एक बड़ा व्यापारिक केंद्र था। यहाँ पर व्यापारी बड़ी संख्या में रहा करते थे। यहाँ के व्यापारी भरूकच्छ, बारवेरीकम, सोपड़ा और कावेरीपट्टीनम की बंदरगाहों के माध्यम से बेबीलोन के साथ व्यापार करते थे। बुद्ध के काल के व्यापार की और अधिक जानकारी के लिए कृपया बिहार राज्य में चंपा देखें। बनारस के रूप में यह नगरी सूती, रेशमी व ऊनी कपड़ों तथा हाथी दाँत के काम और चंदन के लिए जानी जाती है। वाराणसी सोने और चाँदी के जरी के काम के लिए प्रसिद्ध है। सोना तथा चाँदी मढ़े तारों वाले बॉर्डरों वाली इसकी बनारसी साड़ियाँ प्राचीन काल से ही पूरे भारत में प्रसिद्ध रही हैं।

पर्यटन स्थल वाराणसी कैंट स्टेशन से दो किमी दूर काशी विद्यापीठ में स्थित भारत माता मंदिर देश में अपनी तरह का एक ही मंदिर है। इसे शिवप्रसाद गुप्त ने 1936 ई० में बनवाया था तथा राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने इसका उद्घाटन किया था। बनारस में दूसरा प्रसिद्ध मंदिर काशी विश्वनाथ मंदिर है। इसका

निर्माण महारानी अहिल्याबाई ने 1717 ई० में करवाया था। बाद में महाराजा रणजीत सिंह ने इस मंदिर के लिए 1835 ई० में 9 क्विंटल सोने का पत्तर दान में दिया, जो इस पर मढ़ा हुआ है। इसका दूसरा नाम विश्वेश्वर मंदिर भी है। इन मंदिरों के अलावा वाराणसी में दुर्गा मंदिर, तुलसी मानस मंदिर तथा संकट मोचन मंदिर, श्रृंगार गौरी, अविमुक्तेश्वर, अन्नपूर्णाजी का मंदिर, आलमगीर की मस्जिद और लाट भैरव मंदिर-मस्जिद भी दर्शनीय हैं। मुगलों के काल में यहाँ एक विश्वेश्वर मंदिर भी हुआ करता था, जिसे ध्वस्त कर औरंगजेब ने ज्ञानवापी मस्जिद बनवाई। इस मंदिर का सम्मुख भाग भारत की दुर्लभ प्राचीन मंदिर निर्माण कला का एक उत्तम नमूना है।

वाराणसी में ही भारत का सबसे बड़ा आवासीय विश्वविद्यालय बनारस हिंदू विश्वविद्यालय है। इसकी स्थापन पं० मदन मोहन मालवीय ने कराई थी। इसी विश्वविद्यालय में बिड़ला द्वारा संगमरमर से निर्मित नवीन विश्वनाथ मंदिर तथा 1920 में राय कृष्ण दास द्वारा स्थापित भारत कला भवन नाम से एक संग्रहालय है। रामनगर में महाराजा वाराणसी संग्रहालय भी है। वाराणसी में रामनगर किला भी है, जो पूर्व काशी नरेश का आवास होता था। इस किले में भी ऐतिहासिक महत्त्व की वस्तुओं का एक संग्रहालय है।

बीऐचयू से कुछ दूर गोस्वामी तुलसी दास का साधना स्थल, अखाड़ा तथा तुलसी घाट है। यहाँ तुलसी द्वारा स्थापित राम, लक्ष्मण, जानकी तथा हनुमान जी की प्रतिमाएँ दर्शनीय हैं। इस घाट के पास असी महल्ले में महारानी लक्ष्मीबाई की जन्म स्थली है। वाराणसी के हरिश्चंद्र तथा चैतसिंह घाट भी प्रमुख हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ वाराणसी वायु, रेल तथा सड़क मार्ग से देश के सभी नगरों से जुड़ा हुआ है। वाराणसी दर्शन के लिए यूपीऐसआरटीसी टूरिस्ट बंगले के पास से बसें चलाता है। यहाँ का पर्यटक सूचना केंद्र 15-बी, द माल पर स्थित है। स्थानीय भ्रमण के लिए यहाँ सिटी बसें, टैक्सियाँ, ऑटोरिक्शे, टैंपो तथा ताँगे उपलब्ध रहते हैं। टूरिस्ट टैक्सियाँ आईटीडीसी ट्रांसपोर्ट यूनिट, होटल वाराणसी अशोक तथा अनीसा एक्सकर्संज इंडिया, अमाल्या, लोहारतारा से मिलती हैं। घाट देखने के लिए फेरी की सेवाएँ उपलब्ध रहती हैं। ठहरने के लिए यहाँ रेलवे स्टेशन के सामने उत्तर प्रदेश सरकार का पर्यटक बंगला तथा सारनाथ में पर्यटक आवास गृह और रेवा बाई धर्मशाला, जैन धर्मशाला आदि हैं। इनके अतिरिक्त शहर में अनेक छोटे-बड़े होटल भी हैं। गर्मियों में यहाँ का तापमान 46°से से 32°से के मध्य तथा सर्दियों में 16°से से 5°से के मध्य होता है। बरसात के मौसम को छोड़कर यहाँ साल में किसी भी समय जाया जा सकता है।

145. वृंदावन यह शहर मथुरा के उत्तर-पश्चिम में 12 किमी दूर यमुना नदी के बाएँ किनारे पर स्थित है।

पर्यटन स्थल यहाँ अनेक हिंदू मंदिर हैं, जिनमें से गोबिंद देव का मंदिर सबसे बड़ा है। इस मंदिर का निर्माण अकबर द्वारा दिए गए दान की सहायता से हुआ था, परंतु औरंगजेब ने इसकी तीन मंजिलें गिरवा दी थीं। वृंदावन में गोविंददास राधाकृष्ण द्वारा बनवाया गया रंगनाथ मंदिर, मदन मोहन मंदिर, राधा वल्लभ मंदिर तथा जयपुर के कछवाहा वंश के शेखावत राजपूत राजशील द्वारा बनवाया गया गोपीनाथ मंदिर हैं। वृंदावन के निकट रमण रेती है, जहाँ श्रीकृष्ण अपने साथियों के साथ खेलने आया करते थे। ऐसा विश्वास है कि इस रेत को शरीर से लगाने से मोक्ष की प्राप्ति होती है। वृंदावन में निकुंज वन नाम से एक उद्यान है। ऐसा माना जाता है कि श्रीकृष्ण ने यहाँ अपने आराधकों को दर्शन दिए थे।

146. श्रावस्ती यह प्रदेश के गोंडा जिले में राप्ती नदी के किनारे आधुनिक सहत-महत गाँव है और उत्तरी कौशल नरेश लव की राजधानी थी।

धार्मिक महत्त्व श्रावस्ती तीसरे और आठवें जैन तीर्थंकारों क्रमशः संभवनाथ और चंद्र प्रभानाथ की जन्म स्थली है। यहाँ बौद्ध काफी संख्या में रहते थे। अशोक ने इस स्थान की यात्रा करके इसके चार स्तूपों की पूजा की थी।

पुरातात्विक महत्त्व श्रावस्ती में की गई खुदाइयों में छठी शताब्दी ई०पू० के काले रंग की पालिश किए हुए बर्तन पाए गए हैं। ये बर्तन नव-पाषाण युग के हैं। बर्तन भूरे रंग के और चित्रित हैं। लोग मकान बनाने के लिए कच्ची ईंट तथा सरकंडों का प्रयोग करते थे। वे घोड़े और ताँबे से परिचित थे। सभ्यता के अंतिम दिनों में लोहे का प्रयोग भी होने लगा था। वे चावल के अतिरिक्त गाय तथा हरिण का माँस खाते थे। अशोक ने यहाँ एक स्तूप बनवाया था।

व्यापारिक महत्त्व लव के समय में श्रावस्ती व्यापार एवं वाणिज्य का एक केंद्र थी। यहाँ के व्यापारी देश में दूर-दूर तक जाकर व्यापार करते थे। बुद्ध के काल में यह एक समृद्ध नगर था। यहाँ की उस काल की व्यापारिक स्थिति के लिए कृपया बिहार राज्य में चंपा देखें। मौर्यों और उनके बाद के काल में यहाँ से प्रतिष्ठान (पैठन), गंधार और राजगृह तक महामार्ग थे। ह्यून सांग की यात्रा के दौरान श्रावस्ती जीर्ण-शीर्ण अवस्था में थी। यहाँ के स्थानों में जेतवन, पुरवरम् और मल्लिकारम् प्रमुख थे।

147. संभलनगर यह स्थान रूहेलखंड क्षेत्र में है। बाबर ने यहाँ 1526 ई० में एक मस्जिद बनवाई थी।

148. साकेत यह स्थान कौशल प्रांत में हुआ करता था।

धार्मिक महत्त्व साकेत में गौतम बुद्ध कई बार आए थे। इस शहर के बाहर अंजनवन और कालकावन नाम के दो विहार हुआ करते थे। ऐसा माना जाता है कि शहर में प्रवेश करने से पूर्व बुद्ध यहाँ ठहरते थे। इसके धार्मिक महत्त्व का वर्णन जातक कथाओं में भी है।

व्यापारिक महत्त्व बुद्ध के समय में यह व्यापार का प्रमुख केंद्र था। यहाँ से एक सड़क कोशांबी को जाती थी। गुप्त राजाओं के साथ साकेत के विशेष घनिष्ठ संबंध थे।

149. सामुगढ़ सामुगढ़ आगरा के पूर्व में आठ मील दूर एक गाँव है। उत्तराधिकार के प्रश्न को लेकर दारा और औरंगजेब के मध्य यहाँ 28 मई, 1658 ई० को एक युद्ध हुआ था, जिसमें औरंगजेब की विजय हुई थी।

150. सारनाथ यह शहर वाराणसी से छह किमी दूर है।

धार्मिक महत्त्व सारनाथ बौद्ध धर्म का एक प्रमुख केंद्र रहा है। बौद्ध गया में ज्ञान प्राप्ति (बोधिसत्व) के बाद महात्मा बुद्ध ने अपना पहला प्रवचन, जिसे धर्मचक्रपरिवर्तन कहा जाता है, यहीं के डियर पार्क में दिया था। यहाँ उसने अष्टमार्ग का ज्ञान दिया और अपने प्रथम पाँच शिष्य चुने, जिनमें आनंद प्रमुख था। 249 ई०पू० में अशोक ने भी यहाँ की यात्रा की थी। मूलतः बौद्ध होने के कारण राजा कनिष्क का भी सारनाथ से विशेष प्रेम था। 600 वर्ष बाद गुप्त काल में सारनाथ बौद्ध धर्म का एक प्रमुख केंद्र बन चुका था। ह्यून सांग के अनुसार यहाँ के विहार में उस समय लगभग 1500 बौद्ध भिक्षु प्रतिदिन अर्चना-पूजा किया करते थे।

पुरातात्विक महत्त्व बुद्ध का प्रथम प्रवचन स्थल होने के कारण कई राजाओं ने यहाँ स्तूप, विहार आदि बनवाए। अशोक ने यहाँ 243-42 ई०पू० में 60 फुट ऊँचा लघु स्तंभ लेख स्थापित करवाया, जिसमें उसने अपने धर्म का वर्णन किया है। आजकल यह स्तंभ लेख जीर्ण-शीर्ण अवस्था में है। चार शेरों वाला भारत का राज-चिह्न अशोक द्वारा सारनाथ में स्थापित स्तंभ से ही अपनाया गया है तथा इन शेरों के बीच स्थित चक्र ही भारत के राष्ट्रीय ध्वज का चक्र है। अशोक ने

यहाँ एक स्तूप, अनेक मठ और विहार भी बनवाए। कनिष्क ने यहाँ अनेक मठ और विहार बनवाए, जिनमें हजारों भिक्षु रहा करते थे। यहाँ की खुदाई में कनिष्क के शासन के दूसरे वर्ष का एक अभिलेख, बुद्धगुप्त का अभिलेख (जिससे ज्ञात होता है कि उत्तरी बंगाल में उसका राज्यपाल ब्रह्मदत्त था) और गुप्त काल की विष्णु की एक मूर्ति पाई गई है। मूर्ति इस समय बरमिंघम संग्रहालय में है। यहाँ प्राप्त बुद्ध की एक मूर्ति पर खुदे लेख से ज्ञात होता है कि 473 ई० में यहाँ कुमारगुप्त द्वितीय का राज्य था। यह मूर्ति बहुत सुंदर है। इसे अभयमित्र यति ने बनाया था।

बारहवीं शताब्दी के अंत में सारनाथ का पतन होना आरंभ हो गया था। मुहम्मद गौरी ने जयचंद को हराकर सारनाथ पर कब्जा कर लिया और इसकी बहुत सी इमारतों को नष्ट कर दिया। चंद्रगुप्त की महारानी कुमार देवी द्वारा बनवाया गया एक मठ भी इन्हीं दिनों नष्ट कर दिया गया। सम्राट अकबर ने अपने पिता हुमायूँ की यात्रा के स्मारक के रूप में यहाँ के एक स्तूप पर एक मीनार बनवाई थी। सारनाथ का विध्वंश 1836 तक चलता रहा, जब एलेक्जेंडर कनिंघम ने यहाँ खुदाई करनी आरंभ करवाई। इस खुदाई में एक शिला पाई गई है, जिस पर बुद्ध के धर्म का वर्णन है। इसके अतिरिक्त गुप्त काल में बनी धर्मचक्रपरिवर्तन संबंधी एक मूर्ति, सुंग काल का एक स्तंभ और खोपड़ी, पाल वंश की मूर्तियाँ और एक लेख भी पाया गया है। लेख में लिखा है कि पाल राजाओं ने अशोक धर्मराजिक स्तूप की मरम्मत करवाई थी। यह स्तूप अशोक ने बुद्ध के पार्थिव अवशेष रखने के लिए बनवाया था। आजकल यहाँ धर्मराजिक स्तूप के अलावा चार अन्य स्मारक देखने को मिलते हैं। इनमें गुप्त काल के दौरान लगभग 500 ई० के आस-पास बना धमेक स्तूप सबसे प्रमुख है। अन्य तीन स्मारकों में वह मंदिर, जिसमें बुद्ध ध्यान मग्न होते थे, अशोक का स्तंभ और प्रवचन के समय बुद्ध की चहल-कदमी का स्थान चाण्कम पाया गया है।

महाबोधि सोसायटी ने धमेक स्तूप के पास 1931 में एक मंदिर बनवाया था, जिसमें विभिन्न स्थानों से लाए गए स्मृति शेष रखे गए हैं। इस मंदिर की दीवारों पर एक जापानी कलाकार की चित्रकारी है। महाबोधि पुस्तकालय में बौद्ध धर्म का दुर्लभ साहित्य रखा गया है। महाबोधि मंदिर के पास ही चीनियों द्वारा बनवाया गया एक मंदिर भी है, जिसमें बुद्ध की संगमरमर की प्रतिमा स्थापित है। सारनाथ में 1908 ई० में बना एक संग्रहालय भी है, जिसमें गुप्त, मौर्य, कुषाण आदि कालों की दुर्लभ वस्तुएँ हैं। इसी संग्रहालय में अशोक द्वारा अपने स्तंभ पर स्थापित और भारतीय गंणतंत्र के राज-चिह्न के रूप में अपनाई गई चार शेरों वाली मूर्ति तथा प्रवचन देते हुए बुद्ध की गुप्त काल की मूर्ति सहेज कर रखी गई

है।

ठहरने की सुविधाएँ सारनाथ वाराणसी के बहुत निकट होने के कारण इसे देखकर वाराणसी भी वापस आया जा सकता है। यदि सारनाथ में ही ठहरना हो, तो यहाँ यूपीटीडीसी का एक टूरिस्ट बंगला है, जिसका आरक्षण वाराणसी से भी कराया जा सकता है। इसके अतिरिक्त यहाँ बौद्ध विहार और धर्मशालाएँ भी हैं।

151. सिकंदरा यह स्थान आगरा-मथुरा रोड पर आगरा से 5 किमी दूर है। इसका नामकरण सुल्तान सिकंदर लोदी के नाम पर हुआ था। अकबर ने अपने जीवन काल में ही यहाँ 1593 ई० में अपना मकबरा बनवाना आरंभ कर दिया था। सन् 1605 में उसकी मृत्यु के बाद उसे यहीं दफनाया गया था। उसके पुत्र जहाँगीर ने इस मकबरे को 1613 में पूरा करवाया।

यहाँ ठहरने के लिए पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग का बंगला है।
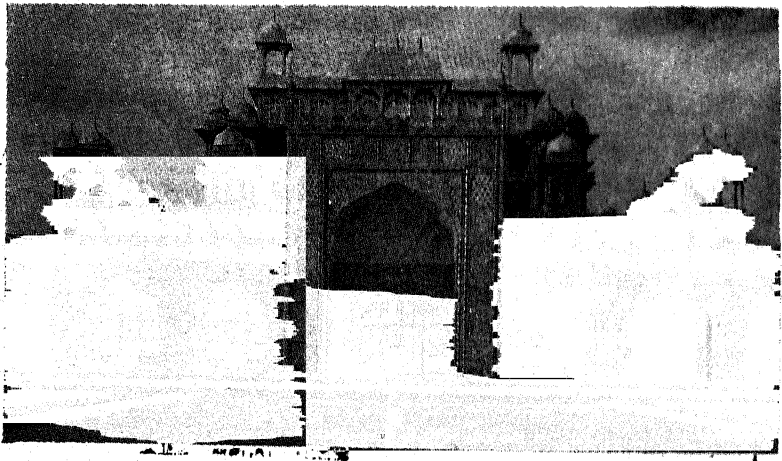
अकबर का मकबरा, सिकंदरा

152. हरिद्वार हरिद्वार देहरादून से 52 किमी दूर शिवालिक की पहाड़ियों में 1000 फुट की ऊँचाई पर गंगा नदी के दाएँ तट पर है। इस शहर का धार्मिक दृष्टि से बहुत महत्त्व है। यहाँ हर बारह वर्ष बाद हिंदुओं का महासंगम कुंभ मेला तथा हर छह वर्ष बाद अर्ध-कुंभ मेला लगता है। हरिद्वार से ही श्रावण मास में शिव-भक्त देश के विभिन्न स्थानों के लिए काँवड़ पैदल ले जाकर वहाँ

के शिव-मंदिरों पर चढ़ाते हैं। हरिद्वार भारत की प्राचीन सप्तपुरियों में से एक है।

पर्यटन स्थल हरिद्वार में कई दर्शनीय स्थल हैं। इनमें हर की पौड़ी प्रमुख है, जो यहाँ का प्रमुख स्नान घाट है। हर की पौड़ी पर गंगा मंदिर, मान सिंह की छतरी, हरिचरन मंदिर तथा बिड़ला टावर दर्शनीय हैं। हरिद्वार में बिलवा पर्वत पर मनसा देवी का मंदिर तथा छह किमी दूर चिल्ला व मोतीचूर पक्षी विहार तथा रास्ते में नीलधारा भी रमणीक स्थल हैं। ऋषिकेश मार्ग पर हर की पौड़ी से 5 किमी दूर सप्त सरोवर नाम से सप्त ऋषियों का आश्रम है। रेलवे स्टेशन से 3 किमी दूर स्वामी श्रद्धानंद द्वारा स्थापित गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय है तथा 4 किमी दूर भेल कारखाना है। इनके अतिरिक्त ऋषिकेश मार्ग पर परमार्थ आश्रम, भीमगदा टैंक, शांति कुंज (गायत्री मंदिर), पवन धाम, भुपत वाला आश्रम, वैष्णो देवी तथा भारत माता मंदिर भी दर्शनीय हैं। भारत माता मंदिर का निर्माण स्वामी सत्या मित्रानंद ने 1983 में करवाया था। यह मंदिर 170 फुट ऊँचा है। मंदिर के सातों तलों में कोई न कोई मंदिर है। भूमि तल पर भारत माता का विशाल मानचित्र है, प्रथम तल पर भारत माता की विशाल प्रतिमा, दूसरे पर शूर मंदिर, तीसरे पर सती मंदिर, चौथे पर धर्म गुरुओं की मूर्तियों वाला संत मंदिर, पाँचवें पर शक्ति मंदिर, छठे पर विष्णु मंदिर तथा सातवें तल पर शिव मंदिर है। हरिद्वार के अन्य प्रमुख मंदिरों में गोरखनाथ, गुफा बिल्केश्वर महादेव, काल भैरव, गीता भवन, दूधधारी, मायादेवी, विष्णु भवन, भैरवनाथ, मनोकामना सिद्ध और नारायणी शिला मंदिर का नाम लिया जा सकता है।

उपलब्ध सुविधाएँ हरिद्वार से निकटतम हवाई अड्डा जौली ग्रांट में 142 किमी दूर है। यह शहर देश के प्रमुख नगरों से रेल व सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। ठहरने के लिए यहाँ अनेक होटल तथा धर्मशालाएँ हैं। गर्मियों में यहाँ का अधिकतम तापमान 36°से तथा सर्दियों में न्यूनतम तापमान 10.5°से रहता है। हरिद्वार भ्रमण के लिए सितंबर से मई तक का समय उपयुक्त रहता है। यहाँ क्षेत्रीय पर्यटक कार्यालय लालता राव पुल पर है। यह कार्यालय प्रतिदिन दो टूर संचालित करता है।

153. हस्तिनापुर

यह स्थान मेरठ के उत्तर-पूर्व में 35 किमी दूर है।

ऐतिहासिक महत्त्व हस्तिन द्वारा स्थापित यह शहर कभी कौरवों की राजधानी था। महाभारत के आदि पर्व, अष्टाध्यायी और पुराणों में इसके बारे में विस्तृत विवरण मिलता है। अर्जुन के पोते परीक्षित की राजधानी भी हस्तिनापुर ही थी। प्रथम जैन तीर्थंकार ऋषभदेव यहीं के थे। महावीर ने भी इस स्थान की यात्रा की

थी।

पुरातात्विक महत्त्व हस्तिनापुर में हड़प्पा संस्कृति के बाद की संस्कृति के अवशेष मिले हैं। इस संस्कृति के मिट्टी के बर्तन भूरे रंग के और चित्रित होते थे। लोग मकान बनाने के लिए कच्ची ईंट तथा सरकंडों का प्रयोग करते थे। वे घोड़े और ताँबे से परिचित थे। सभ्यता के अंतिम दिनों में लोहे का प्रयोग भी होने लगा था। वे चावल के अतिरिक्त गाय तथा हरिण का माँस खाते थे। यहाँ उत्तर वैदिक काल के अवशेष भी मिले हैं। इनके बारे में अधिक जानकारी के लिए कृपया आलमगीरपुर देखें। हस्तिनापुर वैदिक सभ्यता के अंतिम दिनों का एक शहरी नमूना था। 800 ई० में यमुना में आई बाढ़ के कारण इस नगर का अंत हो गया। परंतु पुरातात्विक सर्वेक्षणों से पता चलता है कि यहाँ मानव जीवन का अस्तित्व 1500 ई० तक बना रहा। यहाँ नव-पाषाण युग के धूसर रंग के मिट्टी के चित्रित बर्तन भी पाए गए हैं।

यहीं पर एक जीव विहार भी है, जहाँ जंगली बिल्ली, सूअर, भेड़िये, सांभर, चीतल, बत्तख आदि देखने को मिलते हैं।
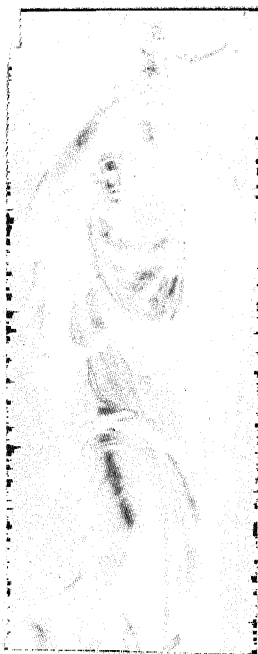
पांडिचेरी का एक स्मारक

कर्नाटक

ऐतिहासिक विवरण

कर्नाटक का लिखित इतिहास 2000 वर्ष से अधिक पुराना है। यहाँ नंद, मौर्य, सातवाहन, कदंब, चालुक्य, राष्ट्रकूट, बहमनी, मुगल तथा मराठा शासकों ने राज्य किया। इन शासकों ने बादामी, ऐहोल, पट्टाडाकल, विजयनगर, गुलबर्गा, बीदर आदि स्थानों पर अनेक ऐतिहासिक इमारतें खड़ी कीं, जिनके भग्नावशेष आज भी देखे जा सकते हैं। कर्नाटक ही हैदर अली और टीपू सुल्तान सरीखे बिरले योद्धाओं की रणभूमि रही है। पुर्तगालियों के आने के बाद भारत में सबसे पहले कर्नाटक में ही तंबाकू, मक्का, लाल मिर्च, मूँगफली और आलू की फसलें बोई जाने लगीं। स्वतंत्रता के बाद 1956 में जो नया मैसूर राज्य बना था, उसका नाम बदलकर 1973 में कर्नाटक रख दिया गया।

राज्य का कुल क्षेत्रफल 1,91,791 वर्ग किमी है। राज्य में कुल 20 जिले हैं, जिनमें जनसंख्या का घनत्व 235 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी और साक्षरता दर 56% है। राज्य की प्रमुख भाषा कन्नड है।

उत्सव

कर्नाटक में जनवरी (माघ) माह में मकर संक्रांति पर्व मनाया जाता है। इस अवसर पर पशुओं की पूजा की जाती है। मार्च-अप्रैल (चैत्र) में नव वर्ष के अवसर पर उगाडी, बंगलौर में द्रौपदी की स्मृति में अप्रैल माह में कारग पर्व, मैसूर में 11 अगस्त को संत फिलोमिना की स्मृति में दावत उत्सव तथा अक्तूबर-नवंबर में नाड अब्बा (दशहरा) पर्व मनाया जाता है। इनके अतिरिक्त दिल्ली के ख्वाजा नासिरुद्दीन के शिष्य हजरत ख्वाजा बंदे नवाज चिस्ती (1321-1422) की स्मृति में मुस्लिम जिकाद माह में उर्स मनाया जाता है, जिसमें पूरे दक्षिणी भारत से सभी धर्मों के लोग भाग लेते हैं। प्रदेश में

यक्षगान नृत्य, कर्नाटक

बीदर
होमनाबाद
चिंचोली
गुलबर्गा
बीजापुर
बसवन बागेवाडि
रायचुर
निपानी
मुधोल
गोकक
बेलगाम
बादमी
धारवाड़
होसपेट
हम्पी
बल्लारी
हुब्बुलि
गदग
डंडेली
कारवार
सिरसी
कर्नाटक
देवानगेरे
चित्रदुर्ग
शिमोगा
होस्दुर्गा
उडुपि
श्रंगेरी
चिकमगलूर
तुमकुर
नन्दी
कोलार
बेलूर
हासन
बंगलौर
श्रवणबेलगोला
श्रीरंगपटनम
मांड्या
मेलागिरी पहाड़ियाँ
मडिकेरि
मैसूर
सोमनाथ
तलकावेरी
नागरहोल
कावेरी
बांदीपुर
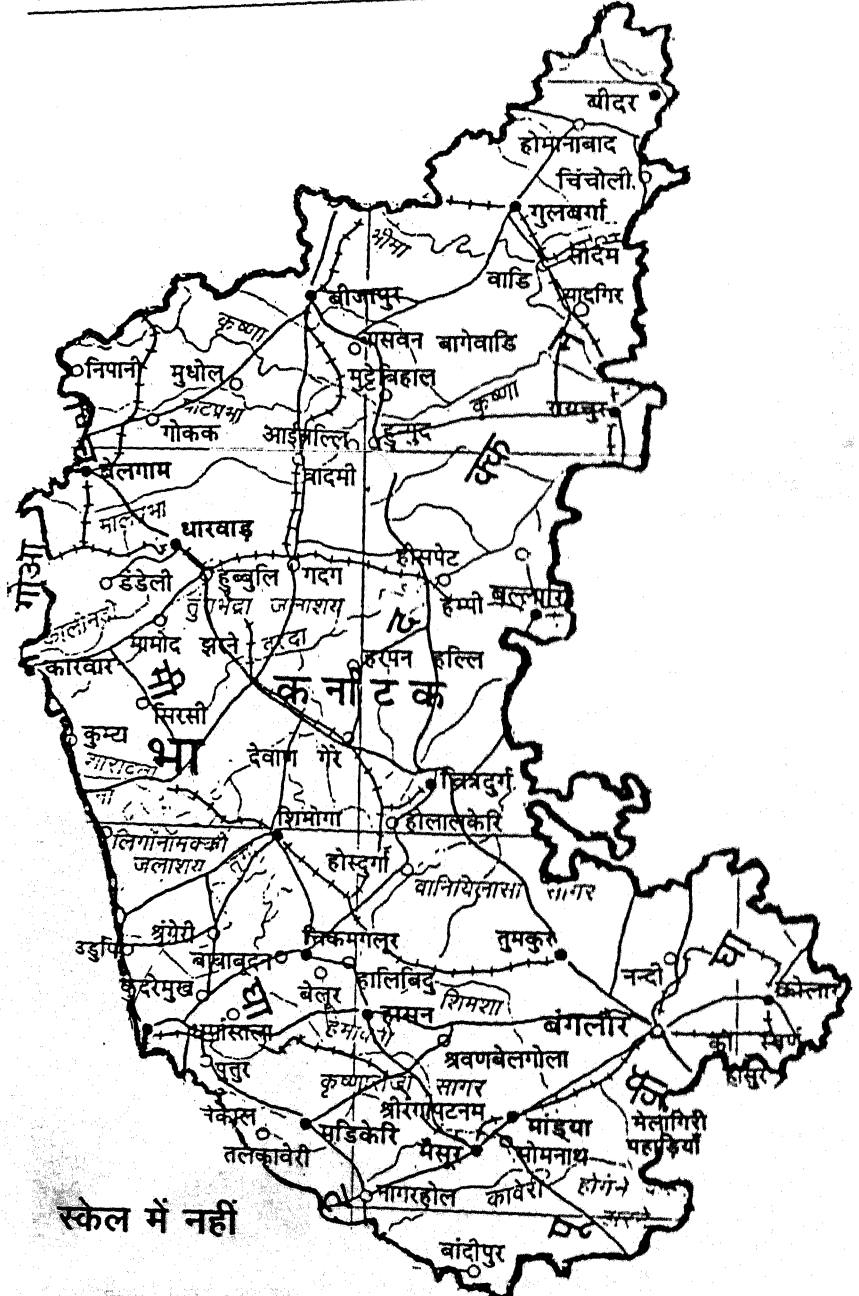
स्केल में नहीं

श्रवणबेलगोला में हर 12 वर्ष बाद गोमतेश्वर की 57 फुट ऊँची प्रतिमा का महामस्तकाभिषेक किया जाता है।

नृत्य

कर्नाटक में कुर्ग, यक्षगान, डोलुकनित्ता आदि नृत्य प्रचलित हैं। कुर्ग नृत्य पुरुषों का और यक्षगान महिलाओं का है।

पर्यटन स्थल

कर्नाटक में बंगलौर, मैसूर, श्रीरंगापटना, श्रवणबेलगोला, बेलूर, हेलीबिड, सोमनाथपुर, बादामी, बीदर, बीजापुर, मंगलौर, कारवार, गोकर्ण, काडापी धर्म-स्थल, मेलकोट, गंगपुरा आदि अनेक दर्शनीय स्थल हैं। राज्य में हर मौसम में कुछ न कुछ देखने लायक है। यहाँ मरकारा में कश्मीर, मंगलौर में समुद्री तट तथा बाँदीपुर और नागरहोल में गीर वनों का अनुभव लिया जा सकता है। केऐसटीडीसी इन सभी स्थानों के टूर संचालित करता है। यात्रियों की सुविधा के लिए इसने राज्य भर में जगह-जगह सूचना केंद्र, होटल और रेस्टोरेंट खोले हुए हैं।

154. अनीगुंडी यह स्थान तुंगभद्रा नदी के उत्तरी तट पर है। 1336 में विजयनगर साम्राज्य की स्थापना करने से पूर्व संगम के पुत्र हरिहर और बुक्का राय यहाँ मुहम्मद-बिन-तुगलक के प्रमुख अधिपति थे। यहाँ के रंगनाथ मंदिर, हुच्चप्पायण मठ, पंपा सरोवर, कमल महल और नव वृंदावन दर्शनीय हैं।

155. ऐहोल कृष्णा नदी के तट पर स्थित ऐहोल पाँचवीं शताब्दी ई० के पुलकेसिन (चालुक्य) मंदिरों और लेख के लिए जाना जाता है। लेख पुलकेसिन द्वितीय के राजकवि रविकीर्ति द्वारा लिखा गया है तथा इसमें चालुक्य वंशावली एवं पुलकेसिन द्वितीय के बारे में पर्याप्त प्रकाश डाला गया है। इसमें इस बात का उल्लेख भी है कि पुलकेसिन द्वितीय ने राजा हर्षवर्धन, जिसे सकलोत्तरपथनाथ के नाम से जाना जाता था, को हराया था।

वास्तुकला यहाँ का लाडखाँ मंदिर, जो 450 ई० में बनाया गया था, बेसर शैली की वास्तुकला का सबसे पुराना नमूना है। बौद्ध चैत्य शैली में बना चालुक्य काल का विष्णु मंदिर तत्कालीन वास्तुकला का सर्वोत्तम नमूना है। इसमें वास्तुकला अपने शिखर पर पहुँची हुई लगती है। उड़ते हुए दो देवता भी विशेष उल्लेखनीय हैं। छठी शताब्दी ई० का पांड्य काल का दुर्गा मंदिर भी यहाँ स्थित है। ऐहोल में लगभग 70 मंदिर हैं। इनमें से 30 एक ही चारदीवारी के भीतर हैं। हुचमाली

मंदिर, रावलफड़ी गुफा मंदिर, कौंति मंदिर, उमा महेश्वरी, बौद्ध मंदिर तथा जैन मेगुटी मंदिर यहाँ के अन्य उल्लेखनीय मंदिरों में से हैं।

156. कंपिली मुहम्मद तुगलक के काल में यह एक छोटा सा हिंदू राज्य था, जिसमें आधुनिक रायचूर, धारवाड़, बेलारी तथा इसके आस-पास के क्षेत्र शामिल थे।

ऐतिहासिक महत्त्व प्रारंभ में कंपिली के राजा देवगिरि के यादवों के अधीन थे और उनके मित्र थे, परंतु देवगिरि पर अलाउद्दीन के कब्जे के बाद कंपिली के शासक भी दिल्ली सुल्तानों के विरोधी हो गए थे। इसी समय वारंगल और द्वारसमुद्र के राजा भी कंपिली पर आक्रमण करते रहे, फिर भी कंपिली के शासकों ने अपने राज्य का विस्तार जारी रखा। मुहम्मद तुगलक ने अपने चचेरे भाई बहाउद्दीन को सागर का हाकिम नियुक्त किया था और उसे गुर्शप की उपाधि दी थी। परंतु गुर्शप ने अपने आपको स्वतंत्र घोषित कर लिया था। बाद में तुगलक की सेना से हारने के बाद उसने कंपिली में शरण ली, जिस कारण तुगलक ने कंपिली पर तीन बार आक्रमण किया। पहले आक्रमण में उसकी सेना पराजित हुई और कंपिली के राजा को लूट का काफी माल प्राप्त हुआ। दूसरे आक्रमण में भी उसकी सेना की हार हुई और उसकी सेना कुतुब-उल-मुल्क के साथ जान बचाकर भाग गई। तुगलक ने तीसरी बार मलिकजादा ख्वाजा-ए-जहान के नेतृत्व में सेना भेजी। कंपिली के राजा ने उसका एक महीने तक मुकाबला किया, परंतु जब बचने की कोई आशा न रही, तो उसने गुर्शप को परिवार सहित द्वारसमुद्र के राजा बल्लाल तृतीय के पास भिजवा दिया। युद्ध क्षेत्र में कंपिली के राजा ने वीरगति प्राप्त की। उसकी स्त्रियों और पुत्रियों ने जौहर रचाया। मुस्लिम सेना का कंपिली के किले पर अधिकार हो गया।

157. कोलार—ऐतिहासिक महत्त्व यह पश्चिमी गंग राजाओं की राजधानी थी। उनके पश्चिम में कदंबों और पूर्व में पल्लवों का शासन था। कोगणिवर्मा ने यहाँ 400 ई० में गंग वंश के शासन की स्थापना की। उसका पुत्र महाराजाधिराज माधव प्रथम (425 ई०) राजनीति का पंडित और पोता आर्य वर्मा (450 ई०) एक महान योद्धा और विद्वान था। आर्य वर्मा का अपने भाई कृष्ण वर्मा के साथ जब राज्य संबंधी झगड़ा हुआ, तो पल्लवों ने उन दोनों को आधा-आधा राज्य बाँट दिया। आर्य वर्मा के पुत्र माधव द्वितीय ने कदंब राजा कृष्ण वर्मा की बहन से विवाह किया था। माधव द्वितीय के पुत्र अविनीत ने यहाँ 550 ई० तक शासन किया। कोलार में नवपाषाण युग की कब्रें भी पाई गई हैं।

158. गुलबर्ग—ऐतिहासिक महत्त्व यह वह स्थान है, जहाँ 1347 ई० में अलाउद्दीन बहमनशाह ने बहमनी राज्य की स्थापना की थी। मुहम्मद-बिन-तुगलक ने अपनी साम्राज्यवादी नीति का अनुसरण करके दक्षिण के अधिकांश भाग पर अधिकार कर लिया था। दक्षिण का शासन उसने सादी अमीरों के हाथों में सौंपा था। इन अमीरों के पास सेना की टुकड़ियाँ और राजस्व इकट्ठा करने की शक्ति होने के कारण ये काफी शक्तिशाली हो गए थे। जब तुगलक के विरुद्ध विद्रोह आरंभ हुए, तो गुजरात के सादी अमीरों ने सबसे पहले विद्रोह किया था। गुजरात के विद्रोह को दबाने के लिए तुगलक स्वयं भड़ौंच आया था। उसने अपने दक्षिण के वायसराय अमीर-उल-मुल्क को आदेश दिया कि वह दौलताबाद के अमीरान सादह के प्रतिनिधियों को भड़ौंच भेजे। परंतु इन सादी अमीरों ने भड़ौंच जाने की बजाय रात को एक गुप्त सभा करके दक्षिण में फैली अशांति की स्थिति का लाभ उठाने के लिए विद्रोह कर दिया और अमीर-उल-मुल्क को पराजित करके इस्माइल को अपना नेता चुन लिया। इस्माइल ने अपने संघ के प्रमुख व्यक्ति हसन को अमीर-उल-उमरा और जफर खाँ की उपाधियों से विभूषित किया। संघ के विजय अभियान को पूरा करने के लिए जफर खाँ ने सागर और गुलबर्ग पर भी अधिकार कर लिया। जब विद्रोह का दमन करने के लिए तुगलक दौलताबाद आया, तो सादी अमीरों ने अपनी सेना दौलताबाद के किले में बंद कर ली। इस समय जफर खाँ दौलताबाद से बाहर था। दौलताबाद लौटकर उसने किले का घेरा डाले हुई तुगलक की सेना को पराजित करके किले से इस्माइल को मुक्त कराया। इस सफलता से जफर खाँ इतना लोकप्रिय हो गया कि इस्माइल शाह ने उसके पक्ष में शासन छोड़ दिया। 1346 में जफर खाँ ने अलाउद्दीन हसन बहमन शाह की उपाधि धारण की और 1347 में गुलबर्ग में बहमनी वंश के शासन की नींव डाली। उसने 1358 तक शासन किया। उसने कोट्टगिरि, कल्याणी और बीदर को भी तुगलक से छीन लिया। सागर और गुलबर्ग पर उसने पहले ही अधिकार कर लिया था। उसने गुलबर्ग में तुगलक का समर्थन कर रहे पोच्चा रेड्डी और सागर में मुहम्मद-बिन-आलम के विद्रोह का दमन किया। उसने वारंगल के कपाय नायक से मित्रता की और पश्चिमी तट पर दाबुल बंदरगाह पर अधिकार किया। उसने गुलबर्ग का नाम अहसानाबाद रखा और यहाँ भारतीय, पारसी और तुर्की की मिश्रित शैली में एक मस्जिद बनवाई। 1358 में उसकी मृत्यु के बाद उसका पुत्र जफर खाँ मुहम्मद शाह प्रथम के नाम से शासनारूढ़ हुआ। उसने तेलंगाना के युद्ध में कपाय नायक को हराकर उससे गोलकुंडा का क्षेत्र और तख्त-ए-फिरोजा

राजसिंहासन छीन लिया। उसने बहमनी प्रशासनिक और सैनिक व्यवस्था को दुरुस्त किया। 1375 में उसकी मृत्यु के बाद अलाउद्दीन मुहम्मद (1375-78), दाउद (1378) और मुहम्मद शाह द्वितीय (1378-97) ने शासन किया। मुहम्मद द्वितीय के काल में अफाकी (ईरानी, अरब और तुर्क) बड़ी संख्या में दक्षिण आए, जिस कारण बहमनी शासन एवं संस्कृति पर विदेशियों (विशेषकर ईरानियों), दक्खिनियों और हिंदुओं का प्रभाव बढ़ने लगा। बाद में ग्यासुद्दीन (1397), शमसुद्दीन दाउद (1397) और ताजुद्दीन फिरोज (1397-1422) शासक बने। ताजुद्दीन के काल में अफाकियों का प्रभाव पहले से अधिक बढ़ गया, परंतु सुल्तान ने हिंदुओं की ओर झुकाव प्रदर्शित किया। अपने समय में उसे अनेक संघर्षों का भी सामना करना पड़ा। सागर के सामंत ने बहमनी सेना को अपने किले से निकाल दिया और खेर्ला के राजा नरसिंह ने मांडू के सुल्तान की सहायता से बहमनी क्षेत्र पर माहूर तक आक्रमण किया। विजयनगर से निपटने के बाद उसने खेर्ला का दमन किया। उसने वेम राजा पेड कोगती वेम से मिलकर उड़ीसा तक आक्रमण किया। अपने शासन के अंतिम दिनों में उसने अपने पुत्र को अपना उत्तराधिकारी मनोनीत किया था, परंतु अफाकी नेता खलाफ हसन द्वारा उसके भाई शिहाबुद्दीन अहमद प्रथम को समर्थन देने के कारण उसे अहमद को ही उत्तराधिकारी बनाना पड़ा। अहमद ने अपनी राजधानी बीदर बदल ली। 1512 के बाद विजयनगर के कृष्णदेव राय ने गुलबर्ग पर अधिकार कर लिया।

पर्यटन स्थल गुलबर्ग का किला इस शहर का मुख्य पर्यटन आकर्षण है। इसके अतिरिक्त प्रसिद्ध सूफी संत ख्वाजा सैयद मोहम्मद गेसू की ख्वाजा बंदे नवाज दरगाह और इसमें एक पुस्तकालय भी देखने लायक है। गुलबर्ग से 40 किमी दूर भीम नदी के किनारे स्थित जीवार्गू में जैन बसाड़ियाँ तथा 120 किमी दूर नारायणपुरा बाँध है। कृष्णा नदी यहाँ से नीचे गिरती है और उसे जलदुर्गा प्रपात कहा जाता

जोग जल-प्रपात, जोग

है। ठहरने के लिए यहाँ होटल मयूर बहमनी तथा अन्य होटल हैं।

159. जाटिंग यह स्थान चित्तलदुर्ग जिले में है। यहाँ अशोक ने 258-52 ई०पू० में दो लघु शिलालेख स्थापित करवाए थे, जिनमें उसके व्यक्तिगत जीवन और धार्मिक विश्वास का वर्णन है।

160. जोग जोग कर्नाटक में बंगलौर से 377 किमी दूर करगल गाँव की एक ढाणी है, जहाँ एक पहाड़ी से बहती हुई श्रावटी नदी 292 मीटर नीचे झरनों के रूप में गिरती है। ये झरने भारत भर के पर्यटकों के लिए आकर्षण के केंद्र हैं। इन्हें जोग फाल्ज के नाम से जाना जाता है। इन्हें देखने का उत्तम समय जून से नवंबर तक का होता है।

161. टी. नरसीपुर यह स्थल नव-पाषाण युग का केंद्र था। यहाँ गहरे भूरे रंग के मिट्टी के चमकीले बर्तन और ट्रैप रॉक के पत्थर से बने चमकीले कुल्हाड़े पाए गए हैं। यहाँ ताँबे की वस्तुएँ नहीं पाई गई हैं। यहाँ एक श्मशानगाह में एक शव पूर्व-पश्चिम दिशा में रखा हुआ पाया गया है तथा उसके हाथ उसके पेट पर किए हुए हैं। कब्रों में हाथ से बने क्रीम रंग के बर्तन तथा एक नालीदार लौटा पाया गया है।

162. डाभल कर्नाटक में बीजापुर के निकट इस स्थान पर शिवाजी ने 1659 में कब्जा किया था।

163. तलिकोटा यह स्थान कर्नाटक में बीजापुर के दक्षिण-पूर्व में है। 1565 ई० में यहाँ बीजापुर, गोलकुंडा, अहमदनगर और बीदर की सम्मिलित सेनाओं ने विजयनगर के राजा रामराजा को परास्त किया था, जिसके फलस्वरूप

गणेश, हेलीबिड

विजयनगर साम्राज्य का अंत हो गया।

164. द्वारसमुद्र

यह शहर आधुनिक कर्नाटक में बेलूर से 17 किमी दूर है। इसका आधुनिक नाम हेलीबिड है।

ऐतिहासिक महत्त्व द्वारसमुद्र होयसल राजपूतों की राजधानी थी। इस वंश का पहला शासक नृपकाम था। उसने 1022 से 1047 तक राज्य किया। उसके बाद विनयादित्य (1047-1101) राजा बना। वह चालुक्य राजा विक्रमादित्य षष्ठ को अपना अधिपति मानता था। उसके उत्तराधिकारी बल्लाल (1101-06) ने पांड्य राज्य पर आक्रमण किया और परमार राजा जगदेव के आक्रमण को निष्फल किया। उसके छोटे भाई विष्णुवर्धन ने 1117 के आस-पास पांड्यों को हराकर नोडंबवाड़ी पर अधिकार कर लिया। उसने 1131 में पांड्य, चोल और केरल के राजाओं को हराया। उसके बाद नरसिंह और वीर बल्लाल (1173-1220) राजा बने। वीर बल्लाल ने चालुक्य सेनापति ब्रह्म और देवगिरि के भिल्लम को हराया। उसने पांड्य सामंत कामदेव को नोडंबवाड़ी का

चामुंडेश्वरी, हेलीबिड

राजा बनाया। 1193 में उसने कदंबों को पराजित कर दिया और स्वतंत्र होयसल राज्य स्थापित किया। उसके पुत्र नरसिंह द्वितीय (1220-38) ने पांड्य और कदंब राजाओं को हराया। अंत में सोमेश्वर (1238-68), नरसिंह तृतीय (1245-92) और वीर बल्लाल तृतीय (1292-1342) यहाँ के शासक बने। बल्लाल तृतीय के शासन काल के दौरान अलाउद्दीन के सेनानायक मलिक काफूर ने देवगिरि और वारंगल के राजाओं की सहायता से द्वारसमुद्र पर 1310 ई० में आक्रमण किया था। राजा सुंदर पांड्य के विरुद्ध उसके भाई वीर पांड्य की सहायता करने के लिए दक्षिण गया हुआ था। वह दक्षिण से तुरंत लौट आया और बहादुरी से लड़ा, परंतु मलिक काफूर ने उसे पकड़कर सुल्तान की सेवा में भेज दिया। उसे सुल्तान से संधि करनी पड़ी और सुल्तान को वार्षिक कर के अतिरिक्त नकदी, सोना, चाँदी और जेवर देने पड़े। परंतु बल्लाल तृतीय ने मलिक काफूर के दिल्ली लौटने के कुछ समय पश्चात ही वार्षिक कर देना बंद कर दिया। उसने 1316 में पांड्य राजाओं से भी युद्ध आरंभ कर दिया और बाद में मुहम्मद तुगलक के विद्रोही चचेरे भाई बहाउद्दीन गुर्शप को भी शरण दे दी। इन सब कारणों से मुहम्मद तुगलक के सेनानायक मलिकजादा ख्वाजा-ए-जहान ने दुर्ग की तरफ से द्वारसमुद्र पर आक्रमण करके 1327 में यहाँ काफी लूट-पाट मचाई। बल्लाल तृतीय ने इस विपत्ति से बचने के लिए गुर्शप को बंदी बनाकर मलिकजादा को सौंप दिया और स्वयं सुल्तान का प्रभुत्व स्वीकार कर लिया। बाद में वह मदुरा के मुस्लिमों से युद्ध करता हुआ 1342 में त्रिचनापल्ली में मारा गया।

हेलीबिड की एक नक्काशी

पुरातात्विक महत्त्व होयसल राजाओं ने यहाँ बारहवीं शती में चालुक्य शैली में अनेक होयसलवाड़ा मंदिर बनवाए। इनमें से होयसलवाड़ा मंदिर अधिक प्रसिद्ध है। ऐसा माना जाता है कि इस मंदिर का निर्माण होयसल राजा विष्णुवर्धन के एक अफसर केतममल्ला ने 1121 में कराया था। मंदिर में दो देवगृह हैं। प्रत्येक देवगृह में नवरंग, दालान, मंडप और देवढ़ी है। मंदिर के दक्षिणी भाग में स्थापित शिवलिंग विष्णुवर्धन होयसलेश्वर तथा उत्तरी भाग में स्थापित शिवलिंग होयसलेश्वर के नाम से जाना जाता है। मंदिर की बाहरी दीवारों पर विग्रह और मूर्तियाँ खुदी हुई हैं, जो प्राचीन हिंदू शिल्प कला का सुंदर नमूना हैं। मंदिर में स्थापित मूर्तियों और प्रतिमाओं के माध्यम से नृत्य, संगीत, युद्ध और प्रेम जैसे जीवन के विविध रंग दर्शाए गए हैं। मलिक काफूर ने भी यहाँ एक मस्जिद बनवाई थी। मंदिर के लॉन में 12वीं-13वीं शताब्दी की मूर्तियाँ तथा उस समय प्रयुक्त सोने के सिक्के दर्शनीय हैं। यहाँ ठहरने के लिए पर्यटन विभाग की टूरिस्ट कॉटेज तथा कई छोटे-बड़े होटल हैं। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन 31 किमी दूर हासन है।

165. नागरहोल यह स्थान मैसूर से 93 किमी दूर है। यह अपने उद्यान के लिए जाना जाता है, जो गुजरात के गीर वन जैसा है। इस उद्यान की स्थापना 1955 में की गई थी। 1975 में इसे राष्ट्रीय उद्यान का दर्जा दिया गया। यहाँ कबानी नदी के पानी से एक बहुत बड़ा बाँध बनाया गया है। इस बाँध के साथ ही बांदीपुर राष्ट्रीय उद्यान है। यहाँ गौर, हाथी, चीतल, तेंदुए तथा सांभर अधिक संख्या में हैं। पर्यटक यहाँ अक्तूबर से अप्रैल महीनों के बीच अधिक आते हैं। इसके जंगली जीव वन विभाग द्वारा स्थापित वाच टॉवरों से आसानी से देखे जा सकते हैं। यहाँ वन विभाग के कॉटेज तथा फोरेस्ट लॉज में आवासीय सुविधा है।

166. पट्टाडाकल यहाँ चालुक्य राजाओं के शासन काल के छठी शताब्दी के दस मंदिर हैं। इनमें से चार नागर शैली में और छह द्रविड़ शैली में हैं। इनमें नागर शैली का पंपानाथ तथा द्रविड़ शैली का विरूपाक्ष मंदिर
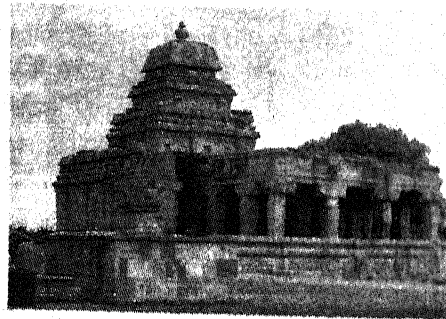
पट्टाडाकल मंदिर

सर्वोत्तम हैं। इनके अतिरिक्त मल्लिकार्जुन मंदिर तथा राष्ट्रकूट काल का जैन मंदिर भी है।

167. बंगलौर—ऐतिहासिक महत्त्व आधुनिक कर्नाटक की राजधानी बंगलौर को लार्ड कार्नवालिस ने 1790 ई० के एक युद्ध में हैदर अली से छीन लिया था, परंतु रसद की कमी के कारण उसे इसे छोड़ कर जाना पड़ा।

पर्यटन स्थल बंगलौर में अनेक दर्शनीय स्थल हैं। इनमें विधान सौध, कब्बन पार्क (जिसमें अट्टारा कचहरी, केंद्रीय पुस्तकालय, मछली घर, जवाहर बाल भवन, संग्रहालय, विश्वेश्वरैया इंडस्ट्रियल एंड टेक्नोलॉजिकल म्यूजम हैं), राजकीय संग्रहालय, वेंकटप्पा कला दीर्घा, लाल बाग, नेहरू तारामंडल, उलसूर लेक, टीपू का महल तथा बैल मंदिर प्रमुख हैं। बंगलौर के निर्माता कैंपगौडा ने यहाँ 1537 ई० में एक किला बनवाया था, जिसे हैदर अली ने मजबूती प्रदान की और टीपू सुल्तान ने वर्तमान रूप दिया। आजकल इसे टीपू का किला कहते हैं। लाल बाग का निर्माण 200 वर्ष पूर्व हैदर अली ने करवाया था। यह एशिया के विशालतम वानस्पतिक उद्यानों में से एक है। यह 240 एकड़ में फैला हुआ है। कब्बन पार्क का निर्माण 1864 ई० में लार्ड कब्बन के नाम पर हुआ था।

बंगलौर के आस-पास बानरघाट नैशनल पार्क (21 किमी), रामोहाली (28 किमी, जहाँ 3 एकड़ में फैला एक विशाल वट वृक्ष है), हेसरघाट (29 किमी), चामराज सागर (35 किमी), शिवगंगा पर्वतश्रेणी (56 किमी), सावनदुर्ग (58 किमी), चन्नापटना (60 किमी), नंदी की पहाड़ियाँ (60 किमी), कोलार गोल्ड फील्ड्स (90 किमी), देवरायण दुर्ग (हिल स्टेशन, 96 किमी), मेकदातू (पिकनिक स्थल, 96 किमी), शिवान समुद्रम् (पानी के झरने, 122 किमी), सोमनाथपुर (प्रसिद्ध मंदिर, 137 किमी) तथा हाजनक्काल झरने (140 किमी) दर्शनीय हैं। इनके अतिरिक्त बंगलौर से श्रीरंगापटना तथा मैसूर के लिए भी केऐसटीडीसी तथा प्राइवेट टूर संचालकों की बसें प्रतिदिन चलती हैं, जो सुबह 07:30 बजे चलकर उसी दिन रात को 21:30 के आस-पास लौट आती हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ बंगलौर देश के अन्य शहरों से रेल, वायु तथा सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। स्थानीय यातायात के लिए यहाँ बसें, टैक्सियाँ तथा आटो-रिक्शे उपलब्ध हैं। रहने के लिए यहाँ सस्ते-महंगे होटलों की भरमार है। पर्यटन सूचना एवं बुकिंग के लिए केऐसटीडीसी का कार्यालय 10/4, कस्तूरबा रोड; बादामी हाउस, एन आर स्क्वेयर; सिटी रेलवे स्टेशन; कर्नाटक दर्शिनी, पर्यटन विभाग, 64, सेंट मार्क्स रोड; पर्यटन विभाग, पहली मंजिल, एफ ब्लॉक, कॉवेरी भवन, के.

जी. रोड तथा मेसर्स जंगल लॉजिज एंड रिसॉर्ट्स लि०, शृंगार शॉपिंग सेंटर, एम जी रोड पर हैं। आईटीडीसी का पर्यटक सूचना केंद्र 48, चर्च स्ट्रीट पर केऐफसी बिल्डिंग में है। यहाँ का तापमान गर्मियों में अधिकतम 35°से तथा सर्दियों में न्यूनतम 14°से रहता है।

168. बाँदीपुर राष्ट्रीय उद्यान यह मैसूर से 80 किमी दूर है। यह राष्ट्रीय उद्यान तमिल नाडु और केरल की सीमा पर पश्चिमी घाट पर नीलगिरि पर्वत के पास स्थित है। प्रारंभ में इसकी स्थापना 1932 में हुई थी। बाद में 1974 में इसे राष्ट्रीय पार्क का दर्जा दे दिया गया। यह बाघ संरक्षण का एक केंद्र है। यहाँ वन विभाग द्वारा संचालित टाइगर सफारी के दौरान लगभग 300 प्रकार के जंगली पशु देखने को मिलते हैं, जिन्हें देखने के लिए पर्यटक नवंबर से मई के बीच अधिक आते हैं। यह उद्यान अपनी प्राकृतिक सुंदरता के लिए जाना जाता है। यहाँ से मैसूर रेलवे स्टेशन 65 किमी और बंगलौर हवाई अड्डा 190 किमी है। यहाँ ठहरने के लिए कमरे और कॉटेज हैं।

169. बादामी यह स्थान पट्टाडाकल के पास है। यह चालुक्य राजाओं की राजधानी थी। इसे वातापी भी कहा जाता है।

ऐतिहासिक महत्त्व जिस समय वर्धन वंश ने उत्तर में शासन किया, उसी समय पुलकेसिन प्रथम ने बादामी में 553 ई० में चालुक्य वंश की स्थापना की। उसके बाद कीर्ति वर्मा प्रथम (566-97), मंगलेश (597-611) और पुलकेसिन द्वितीय (611-42) ने शासन किया। पुलकेसिन द्वितीय ने बनवासी के कदंबों, कोंकण के मौर्यों तथा कन्नौज के हर्षवर्धन को हराया और मैसूर के गंग तथा आलूप राजाओं तथा उत्तर में लाट, मालव और गुर्जर राजाओं को अपनी अधीनता स्वीकार करने के लिए विवश किया। उसने पूर्व में कलिंगों को, काँची के पल्लव शासक महेंद्रवर्मन को और पिष्टपुर के राजा को भी हराया। 642 में पल्लव राजा नरसिंहवर्मन ने उसे हराकर बादामी पर कब्जा कर लिया। बाद में पुलकेसिन के पुत्र विक्रमादित्य प्रथम ने पल्लव राजा महेंद्रवर्मन द्वितीय को हराकर उससे अपने राज्य का दक्षिणी भाग वापस ले लिया। उसके बाद विनयादित्य (681-96), विक्रमादित्य द्वितीय (733-44) और कीर्तिवर्मन द्वितीय (744-53) ने बादामी में शासन किया। 753 ई० में राष्ट्रकूट राजा दंतिदुर्ग ने कीर्तिवर्मन द्वितीय को हराकर यहाँ चालुक्य वंश का अंत कर दिया और अपनी राजधानी बादामी से मान्यखेट बदल ली। इसके बाद इस क्षेत्र पर 973 ई० तक राष्ट्रकूट राजाओं का शासन रहा। पुलकेसिन प्रथम ने यहाँ एक मजबूत किला बनवाया था। पुलकेसिन द्वितीय के काल में 641 में यहाँ ह्यून सांग आए थे और उसने उसे "तीन राज्यों
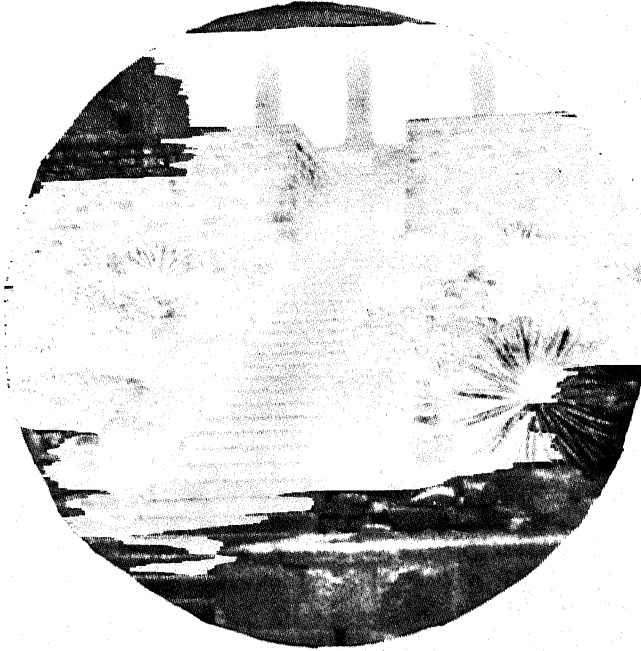
बादामी का गुफा मंदिर

का नियंता" उपाधि दी थी।

पुरातात्विक महत्त्व बादामी में छठी शताब्दी ई० के द्रविड़ शैली के पत्थर के मंदिर हैं। राष्ट्रकूट राजाओं ने यहाँ 550 ई० में और उसके बाद चार गुहा मंदिरों का निर्माण करवाया था, जिनके द्वार, लेख और जीवंत प्रतिमाएँ देखने लायक हैं। इन मंदिरों में शिव, नंदी, विष्णु और दुर्गा की प्रतिमाएँ हैं। एक गुहा मंदिर विष्णु का है। एक अन्य गुहा मंदिर में पार्श्वनाथ और महावीर की मूर्तियाँ हैं। भूतनाथ मंदिर और संग्रहालय यहाँ के अन्य आकर्षण हैं। ठहरने के लिए यहाँ रामदुर्ग रोड पर होटल मयूर चालुक्य तथा अन्य होटल हैं।

170. बानरघाट राष्ट्रीय उद्यान यह उद्यान बंगलौर से 21 किमी दूर है। इसकी स्थापना 1974 में की गई थी। इसमें एक मगरमच्छ पार्क तथा एक चीता एवं शेर सफारी है। इनके अतिरिक्त यहाँ प्राकृतिक सुंदरता और पशु-

पक्षियों, जिनमें जंगली सूअर, चीता, हाथी, भालू तथा चीतल प्रमुख हैं, को देखने के लिए पर्यटक काफी संख्या में आते रहते हैं। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन अरेकल 19 किमी और हवाई अड्डा बंगलौर 28 किमी है।

170. बीजापुर—ऐतिहासिक महत्त्व कर्नाटक में स्थित यह शहर सदा से इतिहास की सुर्खियों में रहा है। 1489 ई० में शिया मतावलंबी आदिलशाह ने यहाँ बहमनी वंश के पतन पर आदिलशाही वंश के शासन की नींव डाली। 1490 से 1506 के बीच विजयनगर साम्राज्य के शासक इम्माड़ि नरसिंह के काल में नरसा नायक ने बीजापुर को हराया। 1498 में उसने बीजापुर के आदिल खाँ को फिर हराया। उसके बाद उसके पुत्र इस्माइल आदिलशाह ने 1510 से 1534 तक राज्य किया। 1530 के आस-पास उसने विजयनगर के अच्युतदेव राय पर आक्रमण करके उससे रायचूर और मुद्गल के किले छीन लिए। इस्माइल के बाद उसका बेटा मल्लू (1534), मल्लू का भाई इब्राहिम आदिलशाह प्रथम (1534-57) और इब्राहिम का पुत्र अली आदिलशाह (1557-59) बीजापुर के शासक हुए। 1558 में अहमदनगर के शासक हुसैन निजामशाह ने गोलकुंडा के सुल्तान इब्राहिम कुतुबशाह के साथ मिलकर बीजापुर पर आक्रमण कर दिया। परंतु बीजापुर ने विजयनगर के रामराय की सहायता से उसे वापस धकेल दिया और 1559 में उसे एक अपमानजनक संधि करने पर विवश कर दिया। अली आदिलशाह के बाद उसके भतीजे इब्राहिम आदिलशाह द्वितीय ने 1626 तक राज्य किया। वह इस वंश का एक अन्य प्रसिद्ध शासक हुआ। शाहजहाँ ने बीजापुर पर आक्रमण करके आदिलशाह द्वितीय को अपना प्रभुत्व
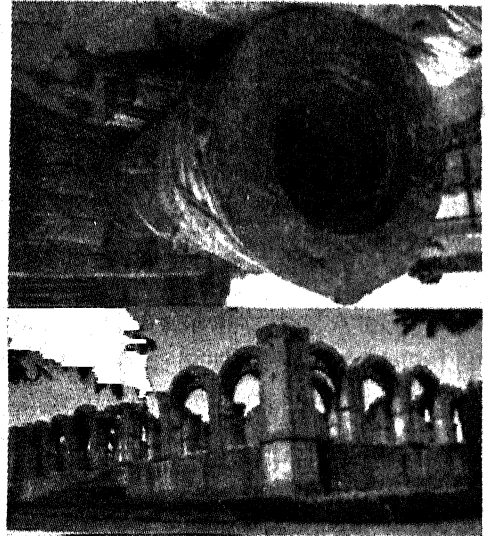
मध्य काल की सबसे बड़ी तोप मलिक-ए-मैदान (ऊपर) और बड़ा कमान (नीचे), बीजापुर

स्वीकार करने, 20 लाख रुपये वार्षिक खिराज देने और अपने पास केवल 50 परगने रखने को विवश किया। 1635 से 1644 तक औरंगजेब की दौलताबाद की पहली सूबेदारी के बाद बीजापुर स्वतंत्र हो गया था। उसकी दूसरी सूबेदारी (1653-57) के दौरान महाबत खाँ ने 1656 में आदिलशाह की सेना को हरा दिया, जो मुहम्मद अफजल खाँ के नेतृत्व में लड़ी थी। शिवाजी के पिता शाहजी भोंसले यहाँ के बड़े जागीदार थे। एक बार शिवाजी ने भी बीजापुर का घेरा डाल लिया था। सन् 1675, 1679-80 तथा 1684 में औरंगजेब ने भी आदिलशाह से युद्ध किया था, परंतु उसे सफलता नहीं मिली। फिर 1685 ई० में मुहम्मद आजम ने इसका घेरा डालकर एक कड़ी लड़ाई के बाद इसे 1686 ई० में छीन लिया। शाह को पकड़कर दौलताबाद के किले में बंद कर दिया गया और बाद में एक लाख रुपये सालाना पेंशन देकर छोड़ दिया गया। 1719 ई० में बालाजी विश्वनाथ ने यहाँ से चौथ और सरदेशमुखी वसूल किए। उस समय यहाँ सम्राट फरुखशियार का शासन था। 1759 की चढ़ाई के बाद बीजापुर के शाह ने इसे नाना साहब को सौंप दिया। 1759 में ही बालाजी बाजीराव के चचेरे भाई सदाशिव राव भाऊ के हाथों पराजित होने के बाद हैदराबाद के निजाम-उल-मुल्क सलाबत जंग ने उसे बीजापुर का आधा भाग सौंप दिया।

पर्यटन स्थल बीजापुर मोहम्मद आदिलशाह के मकबरे गोल गुंबज के लिए बहुत प्रसिद्ध है। इस मकबरे का गुंबज विश्व में दूसरा सबसे बड़ा है। इसका व्यास 44 मी है। इस गुंबज के अलावा यहाँ आदिलशाह के पिता इब्राहिम रोजा का मकबरा, आदिलशाह का अधूरा मकबरा, असर-ए-शरीफ महल, आनंद महल (हरम), गगन महल, सात मंजिला महल, चीनी महल, जामा मस्जिद, अंडु मस्जिद, मध्य काल की सबसे बड़ी तोप मलिक-ए-मैदान, अफजल खाँ का मकबरा, बड़ा कमान, अमीन दरगाह, फरुख महल, जहाज महल, छोटी मक्का और मेहतार महल दर्शनीय हैं। इनमें से कुछ इमारतों को औरंगजेब ने नष्ट-भ्रष्ट करवा दिया था। बीजापुर भ्रमण के लिए नवंबर से मार्च तक का समय उपयुक्त रहता है। यहाँ ठहरने के लिए सर्किट हाउस, केऐसटीडीसी का ट्रैवजर्ल लॉज तथा होटल मयूर आदिलशाही, आईटीडीसी का अशोक लॉज तथा कुछ छोटे-बड़े होटल हैं।

172. बीदर—ऐतिहासिक महत्त्व बीदर दक्षिण की पाँच मुख्य सल्तनतों में से एक थी। बहमनी राज्य और विजयनगर साम्राज्य के एक-दूसरे के शत्रु होने के कारण बहमनी सुल्तान शियाबुद्दीन अहमद शाह (1422-35) ने अपनी राजधानी गुलबर्ग से यहाँ बदल ली थी। उसने इसका नाम मुहम्मदाबाद रखा। उसने अफाकियों (ईरानियों, अरबों और तुर्कों) के नेता खलाफ हसन को

वकील-ए-सल्तनत (प्रधान मंत्री) पद देकर मलिक-उल-तज्जर की उपाधि दी। उसने ईरान से कुछ शिया संतों को भी बुलाया। इससे अफाकियों और दक्खन के सुन्नी मुसलमानों में वैमनस्य बढ़ गया। 1425 में उसने वेलम सरदार को पराजित किया, 1426 में माहूर के विद्रोह का दमन किया और 1429 में मालवा की होशंगशाही सेना को हराया। उसके बाद अलाउद्दीन अहमद द्वितीय (1436-58) के काल में अफाकियों का दबदबा पहले से भी अधिक बन गया। उसने तेलंगाना, खानदेश, गुजरात, विजयनगर, मालवा और उड़ीसा के गजपति नरेशों से संघर्ष किया, परंतु अधिकांश संघर्ष निरर्थक साबित हुए। 1458 में अपनी मृत्यु से पहले उसने अपने बड़े पुत्र हुमायूँ को उत्तराधिकारी बना दिया था। हुमायूँ (1458-61) ने महमूद गावाँ को अपना प्रधान मंत्री नियुक्त किया। गावाँ एक सफल सेनानायक था। हुमायूँ की सभी सफलताओं का श्रेय उसी को जाता है। हुमायूँ की मृत्यु के समय उसका पुत्र निजामुद्दीन अहमद केवल आठ वर्ष का था, जिस कारण शासन का काम एक परिषद ने संभाला। परिषद के चार सदस्यों में राजमाता और महमूद गावाँ भी शामिल थे। इस दौरान उड़ीसा के कपिलेश्वर गजपति ने बीदर पर आक्रमण किया, परंतु उसे खदेड़ दिया गया। बाद में मालवा के महमूद खिलजी ने गजपति नरेश और खानदेश के फारुखी सुल्तान से मिलकर बीदर पर आक्रमण करके इसे घेर लिया। महमूद गावाँ ने गुजरात के सुल्तान की सहायता से मालवा के इस अभियान तथा 1462 के उसके दूसरे अभियान को भी निष्फल कर दिया। 1463 में निजामुद्दीन के छोटे भाई शमसुद्दीन मुहम्मद तृतीय दस वर्ष की आयु में शासक हुआ। उसका काल महमूद गावाँ के वर्चस्व का काल था। महमूद गावाँ ने जौनपुर, बंगाल और गुजरात के सुल्तानों से मिलकर 1466 और 1467 में मालवा, जिसने खेर्ला पर अधिकार कर लिया था, के विरुद्ध दो अभियान छेड़े। दूसरे अभियान में मालवा हार गया और उसे खेर्ला के बदले बहमनियों को बरार देना पड़ा। गावाँ ने 1470 में कपिलेश्वर गजपति की मृत्यु के बाद हंबीर की राजा
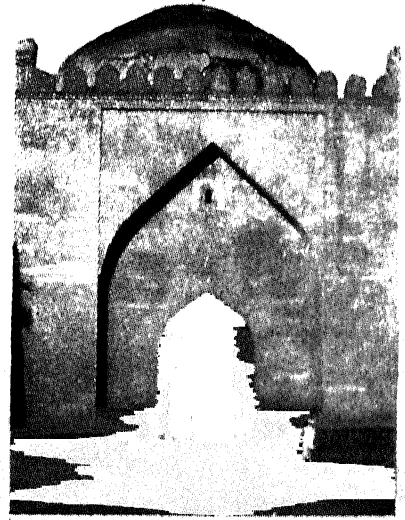
बीदर का किला

बनने में सहायता की। उड़ीसा से लौटते समय उसने राजामुंद्री पर अधिकार कर लिया। उसने खेलना के सरदारों का दमन किया, 1471 में संगमेश्वर को अपने अधीन किया तथा 1472 में गोआ पर और 1473 में बेलगाम पर विजय प्राप्त की। सुल्तान महमूद तृतीय ने भी 1477-78 के आस-पास कोंडविदु के विद्रोहियों और पुरुषोतम गजपति को दो बार परास्त किया। 1480-81 में कोंडविदु के सूबेदार ने विजयनगर के सालुंब नरसिंह से मिलकर विद्रोह कर दिया। सुल्तान ने इस विद्रोह का दमन करने के साथ-साथ विजयनगर की सेना को नेल्लोर और काँची में हरा दिया। 1481 में महमूद गावाँ के विरोधियों ने उसके विरुद्ध एक षङ्यंत्र रचकर उसे मृत्यु दंड दिला दिया। 1482 में मुहम्मद तृतीय की मृत्यु के बाद शिहाबुद्दीन महमूद (1482-1518) के काल में प्रांतीय तराफदारों ने अपनी स्वतंत्रता घोषित करनी प्रारंभ कर दी। उसके शासन के आरंभिक चार वर्षों में सत्ता निजाम-उल-मुल्क के हाथों में केंद्रित रही, परंतु सुल्तान ने तेलंगाना अभियान के दौरान उसकी हत्या करवा दी। अफाकियों और दक्खिनियों के कारण शहर में कई बार कत्ले आम हुआ, जिसने साम्राज्य को पतन के कगार पर ला दिया। 1490 से 1506 के बीच विजयनगर के सेनानायक नरसा नायक ने बीदर को परास्त किया। 1509-10 में बीदर के सुल्तान ने विजयनगर के कृष्णदेव राय पर आक्रमण किया, परंतु हारा। बाद में बीदर के कोतवाल कासिम बरीद ने बीदर के सुल्तान को अपने हाथों की कठपुतली बना लिया। शीघ्र ही बहमनी साम्राज्य पाँच भागों में विभाजित हो गया। 1489 में युसुफ आदिल ने बीजापुर में आदिलशाही वंश, फतेह उल्ला खाँ इमदाद-उल-मुल्क ने बरार में इमदाद शाही वंश, अहमद निजाम-उल्-मुल्क ने अहमदनगर में निजामशाही वंश, कुतुब-उल-मुल्क ने गोलकुंडा में कुतुबशाही वंश और कासिम बरीद ने सुल्तान को कैद करके बीदर में बरीदशाही वंश के शासन की स्थापना कर ली। 1657 में औरंगजेब और मीर जुमला की सहायता से शाहजहाँ ने इस पर कब्जा कर लिया था। 1719 में बालाजी विश्वनाथ ने बीदर से चौथ और सरदेशमुखी वसूल किए तथा 1760 में बालाजी बाजीराव के चचेरे भाई सदाशिव राव भाऊ ने इसे हैदराबाद के निजाम-उल-मुल्क सलाबत जंग से छीन लिया।

यहाँ बहमनी शासकों ने पंद्रहवी शताब्दी में एक किला बनवाया था, जिसके खंडहर आज भी देखने को मिलते हैं। यहाँ का रंगीन महल, मुहम्मद गावाँ का मदरसा तथा बहमनी और बरीदशाही राजाओं के मकबरे भी दर्शनीय हैं। यह शहर पात्रों पर की जाने वाली अपनी बीदरी कला के लिए विशेष रूप से प्रसिद्ध है।

173. बेलगाम— पुरातात्विक महत्त्व के पर्यटन स्थल बेलगाम एक ऐतिहासिक शहर है। यहाँ के चालुक्य राजाओं ने यहाँ एक किला बनवाया था। इस किले में 1204 में निर्मित कमला बस्ती नाम से एक पुरानी बस्ती है। बेलगाम में अन्य दर्शनीय स्थल सफा मस्जिद, जामिया मस्जिद, कपिलेश्वाड़ा मंदिर, अनंतशयन मंदिर, मारुति मंदिर, शिव मंदिर, विठोबा मंदिर, द्यामव्वा मंदिर और मिलिट्री महादेव मंदिर प्रमुख हैं। यह शहर कित्तूर की रानी चेनम्मा के लिए भी जाना जाता है, जिसने विदेशी राज से जमकर लोहा लिया। यहीं पर 1924 में महात्मा गाँधी की अध्यक्षता में हुए कांग्रेस के अधिवेशन के समय निर्मित पंपा सरोवर, संभाजी उद्यान, नाथ पाई पार्क और शिवाजी उद्यान भी हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ यह शहर देश के अन्य नगरों से वायु, रेल तथा सड़क

बेलूर का एक भित्तिचित्र

मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ ठहरने के लिए हुडको कंप्लेक्स में होटल मयूर मालप्रभा तथा कुछ अन्य होटल हैं। यहाँ वर्ष में कभी भी जाया जा सकता है।

174. बेलारी यहाँ नवपाषाण युग के अवशेष काफी मात्रा में पाए गए हैं।

175. बेलूर यह स्थान बंगलौर से 222 किमी और हेलीबिड से 17 किमी दूर है।
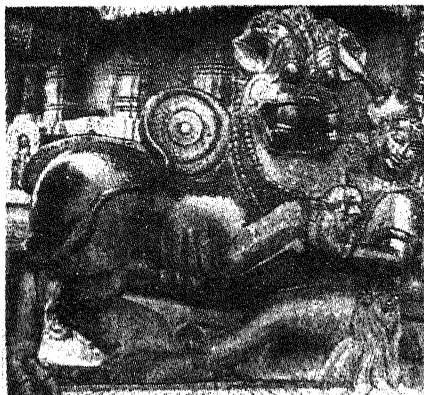
बेलूर का अन्य शिल्प

पुरातात्विक महत्त्व बेलूर होयसल राजाओं की कला, मठों और मंदिरों का प्रसिद्ध केंद्र रहा है। इसलिए यह दक्खन वाराणसी के रूप में भी जाना जाता है। होयसल राजा विष्णुवर्धन (विटिग्ग) ने यहाँ 1117 ई० में होयसल शैली में चेन्नकेशव मंदिर बनवाया था। इस मंदिर की दीवारों पर देवी-देवताओं और उनके अवतारों, शिकारियों, नृतकों, संगीतकारों और मदनिकाओं की मूर्तियाँ तथा चमकते स्तंभ आर्कषण के केंद्र हैं। चेन्नकेशव मंदिर के अतिरिक्त यहाँ चुन्नीगार्य मंदिर तथा वीर नारायण द्वारा बनवाया गया होयसल मंदिर है। यहाँ 1382 का एक लेख भी पाया गया है, जिससे पता चलता है कि दक्षिण के 27 शहरों में वस्तुओं की बिक्री के लिए मेले लगते थे। इस सूची में विजयनगर, हस्तिनावती, द्वारसमुद्र, गूटी, पेनुगोंडा, अदोनी, उदयगिरि, चंद्रगिरि, मलवय, काँचीपुरम्, बरकूट, सदेरस, मुलारे, पदाइविदु तथा होनावर आदि शहर शामिल हैं। यहाँ ठहरने के लिए टेंपल रोड पर होटल मयूर वेलापुरी व कुछ अन्य होटल तथा बंगले हैं। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन 34 किमी दूर हासन है।

176. ब्रह्मगिरी यह स्थान चित्तलदुर्ग जिले में सिद्धपुरा के निकट है।

पुरातात्विक महत्त्व 1942 और 1947 में की गई खुदाइयों से यहाँ महापाषाण युग (तीसरी शताब्दी ई०पू० से प्रथम शताब्दी ई०) की पत्थर की और गड्ढे खोदकर बनाई गई वृत्ताकार कब्रें पाई गई हैं। अशोक ने 258-52 ई०पू० में यहाँ दो लघु शिलालेख स्थापित कराए थे, जिनमें उसने अपने निजी जीवन एवं ध

ार्मिक विश्वास के बारे में प्रकाश डाला है। ब्रह्मगिरि में पालिश किए गए पत्थर के कुल्हाड़े पाए गए हैं। इस सभ्यता के लोगों को ताँबे और काँसे की जानकारी थी।

177. मंगलौर दूसरे मैसूर युद्ध के दौरान इस पर टीपू सुल्तान ने विजय प्राप्त करने का प्रयत्न किया था, परंतु वह असफल रहा। 11 मार्च, 1784 को यहाँ टीपू सुल्तान और अंग्रेजों के मध्य एक संधि हुई थी, जिसके तहत दोनों ने एक-दूसरे की पूर्व स्थिति मान ली थी। मंगलौर भारत के पश्चिमी घाट पर एक सुंदर समुद्री-स्थल है।

178. मान्यखेट इसका आधुनिक नाम मालखेड है।

ऐतिहासिक महत्त्व आठवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में मान्यखेट में चालुक्यों का शासन था। इस शताब्दी के उत्तरार्द्ध में यहाँ राष्ट्रकूट शासकों ने अपना आधिपत्य कर लिया था। राष्ट्रकूट शासक पहले चालुक्य शासकों के सामंत थे। राष्ट्रकूट वंश के शासन की स्थापना करने वाला दंतिदुर्ग अपने अधिपति विक्रमादित्य द्वितीय की ओर से अवनिजनाश्रय पुलकेसिन के साथ अरबों के साथ युद्ध करने गया और उन्हें बुरी तरह हराया। 743 में उसने विक्रमादित्य द्वितीय के साथ पल्लवों को हराया। 744 में विक्रमादित्य द्वितीय की मृत्यु हो गई। इसके बाद उसने नंदीपुरी के गुर्जर राज्य, मालवा और मध्य प्रदेश को जीता। 753 ई० में उसने चालुक्य राजा कीर्तिवर्मन को हराकर महाराष्ट्र पर भी अधिकार कर लिया। इस प्रकार 753 में एक स्वतंत्र राष्ट्रकूट राज्य का उदय हुआ। दंतिदुर्ग ने अपनी राजधानी मान्यखेट बनाई। उसके बाद शासन की बागडौर संभालने वाले कृष्ण प्रथम (758-73) ने तो चालुक्य राज्य को पूरी तरह ही समाप्त कर दिया। उसने मैसूर के गंग राजा पर आक्रमण किया। उसके पुत्र गोविंदराज ने वेंगी के चालुक्य राजा विष्णुवर्धन चतुर्थ को हराकर समस्त हैदराबाद राज्य को राष्ट्रकूट राज्य में मिला लिया। उसने राहप्प नामक राजा को हराकर दक्षिणी कोंकण पर भी आधिपत्य जमाया। एलोरा का प्रसिद्ध कैलाश मंदिर उसी ने बनवाया था। उसके बाद गोविंद द्वितीय राजा बना। वह एक निर्बल शासक था। 780 में उसके छोटे भाई ध्रुव ने उसे गद्दी से उतार दिया। ध्रुव ने 13 वर्ष तक राज्य किया। वह अपनी विजयों के लिए प्रसिद्ध हुआ। उसने गंग राजा श्री पुरुषमुत्तरस और वेंगी के चालुक्य राजा विष्णुवर्धन चतुर्थ को हराया। पल्लव राजा दंतिवर्मन ने उसे कुछ हाथी भेंट किए। उसने दोआब में प्रतिहार राजा वत्सराज को हराया। वत्सराज द्वारा मगध और बंगाल के राजा धर्मपाल से छीने गए दो सफेद छत्र

और बंगाल की लूट भी ध्रुव के हाथ लगी। उसने धर्मपाल को भी हराया। उसके बाद गोविंद तृतीय शासक हुआ। गोविंद तृतीय ने सबसे पहले अपने भाई स्तंभ के विद्रोह को दबाया और पल्लव राजा दंतिग को बहुत से हाथी देने को विवश किया। ध्रुव के दक्षिण चले जाने के बाद गौड़ राजा धर्मपाल ने उसके समर्थक इंद्रायुद्ध को हराकर चक्रायुद्ध को कन्नौज का राजा बना दिया था। प्रतिहार राजा वत्सराज के पुत्र नागभट्ट द्वितीय ने भी उसके कई जनपदों पर अधिकार कर लिया था। उसने चक्रायुद्ध को हटाकर इंद्रायुद्ध को पुनः राजा बनाया और 802 में नागभट्ट द्वितीय को हराया। परंतु नागभट्ट द्वितीय ने धीरे-धीरे अपनी शक्ति बढ़ाकर 810 में कन्नौज को जीतकर उसे अपनी राजधानी बना लिया। गोविंद ने वेंगी के चालुक्य राजा विजयादित्य द्वितीय के विरुद्ध उसके छोटे भाई भीम सालुकी की सहायता की और वहाँ भी अपना आधिपत्य स्थापित किया। उसने पल्लव, पांड्य, केरल और गंग राजाओं द्वारा उसके विरुद्ध बनाए गए संगठन को तोड़ा। लंका के राजा ने उससे मैत्री संबंध कायम किया। उसके उत्तराधिकारी अमोघवर्ष या शर्व ने 814 से 878 तक राज्य किया। उसके काल में वेंगी के चालुक्य राजा विजयादित्य द्वितीय ने विद्रोह कर दिया। उसने उसे 830 में हराकर वेंगी को अपने साम्राज्य में मिला लिया। उसके काल में गंग वंश के राजा स्वतंत्र हो गए। 850 ई० में उसने चालुक्य राजा विजयादित्य तृतीय को हराकर उसे अपना आधिपत्य मानने को विवश कर दिया, परंतु विजयादित्य तृतीय कुछ समय बाद उसके आधिपत्य से मुक्त हो गया। अमोघवर्ष के बाद कृष्ण द्वितीय (878-914) को भी उसने हराया। कृष्ण ने चालुक्य राजा भीम को हराकर बंदी बना लिया। बाद में उसने उसे वेंगी का सामंत बना दिया। बाद में भीम ने विद्रोह किया, परंतु हार गया। कृष्ण द्वितीय के काल में प्रतिहार राजा भोज ने 888 में मालवा और काठियावाड़ पर अधिकार कर लिया। कृष्ण द्वितीय के उत्तराधिकारी इंद्र तृतीय (914-22) ने प्रतिहार राजा महीपाल को हराकर कन्नौज पर अधिकार कर लिया। उसके बाद गोविंद चतुर्थ (अपने बड़े भाई द्वितीय को हराकर), अमोघवर्ष तृतीय (936-39) और कृष्ण तृतीय राजा बने। कृष्ण तृतीय ने अपने जीजा गंग राजा बूतुग की सहायता से 943 में काँची और तंजौर पर अधिकार कर लिया। 949 में टक्कोल के युद्ध में उसने चोल राजा परांतक को फिर हराया। अपनी इस विजय के बाद उसने रामेश्वर में एक स्तंभ बनवाया। उसने तोंडैमंडल पर भी अधिकार किया। 963 के बाद उसने परमार राजा सीयक को हराकर उज्जयिनी पर अधिकार कर लिया। उसने वेंगी पर भी अपना आधिपत्य स्थापित किया। कृष्ण तृतीय के बाद कृष्ण चतुर्थ (965-67), खोट्टिग (967 ई० में) और कक्क द्वितीय सिंहासन पर बैठे। खोट्टिग के काल में परमार

राजा सीयक ने मान्यखेट पर आक्रमण करके उसे खूब लूटा। उसके समय में बीजापुर जिले का चालुक्य वंशीय तैल द्वितीय 975 में दक्षिण भारत में स्वतंत्र हो गया।

179. मान्यपुर—ऐतिहासिक महत्त्व यह शहर मैसूर के गंगों की राजधानी थी।

ऐतिहासिक महत्त्व राष्ट्रकूट राजा कृष्ण प्रथम (758-73) ने कुछ समय के लिए मान्यपुर पर अधिकार कर लिया था। एक अन्य राष्ट्रकूट राजा ध्रुव ने गंग वंश के श्रीपुरुष मुत्तरस को हराकर उसके पुत्र शिवकुमार को बंदी बना लिया और संपूर्ण गंगवाड़ी पर कब्जा करके अपना राज्य कावेरी नदी तक बढ़ा लिया। उसके पुत्र गोविंद तृतीय ने उसे छोड़ दिया था, परंतु उसकी विद्रोही गतिविधियों के कारण उसे फिर कैद कर लिया। बाद में गंगों ने एक लंबे युद्ध के बाद राष्ट्रकूटों को अपने राज्य से बाहर कर दिया।

180. मालखेड कृपया मान्यखेट देखें।

181. मास्की—पुरातात्विक महत्त्व मैसूर क्षेत्र में स्थित मास्की में की गई खुदाइयों से पता चलता है कि यह स्थल नव-पाषाण युग और ताम्र-पाषाण युग का एक केंद्र था। यहाँ इन सभ्यताओं के विकास के तीन स्तर पाए गए हैं। पहले स्तर की सभ्यता के मिट्टी के बर्तन बुर्जहोम के बर्तनों से मिलते-जुलते पाए गए हैं। दूसरे स्तर की सभ्यता पर मालवा संस्कृति का प्रभाव देखने में आया है और तीसरे स्तर की सभ्यता के बर्तन जोर्वे से मिलते-जुलते हैं। 1942 और 1947 ई० में यहाँ महापाषाण युग की कब्रें पाई गईं। यहाँ 257-56 ई०पू० में स्थापित अशोक का एक शिलालेख भी पाया गया है, जिसमें उसके व्यक्तिगत जीवन का उल्लेख है।

182. मैसूर यह शहर बंगलौर के दक्षिण-पश्चिम में 139 किमी दूर 2500 फुट की ऊँचाई पर है।

ऐतिहासिक महत्त्व सन् 305 ई०पू० के शीघ्र बाद इसे चंद्रगुप्त मौर्य ने जीत लिया था। राष्ट्रकूट राजा कृष्ण प्रथम (758-73) ने मैसूर के गंग राजा पर आक्रमण किया था। राष्ट्रकूट राजा ध्रुव (780-93) ने भी गंग राजा को हराया था। विजयनगर राज्य के पतन के बाद मैसूर में वाडियार वंश का शासन आ गया था। परंतु अट्ठारहवीं सदी के मध्य तक यह वंश लगभग शक्तिहीन हो गया।

मैसूर के मंत्री नंजराज ने हैदर अली को देवनहाली के किले का रक्षक बनाया था। कुछ समय बाद जब मराठों ने मैसूर पर चढ़ाई की, तो हैदर अली ने उसकी रक्षा की। मौका पाकर उसने मैसूर के नए मंत्री खांडेराव को कैद कर लिया और स्वयं मंत्री बन गया। 1766 में राजा के देहांत के बाद उसने मैसूर की गद्दी पर अधिकार कर लिया। इसके बाद मैसूर 1766 से 1782 ई० तक हैदर अली की राजधानी रहा। मैसूर में 1767-69, 1780-84, 1790-92 और 1799 में चार ऐतिहासिक युद्ध हुए। पहली लड़ाई हैदर अली और अंग्रेजों के मध्य हुई, जिसमें हैदर अली की विजय हुई। नवंबर, 1767 में मद्रास सरकार और हैदराबाद के निजाम सलाबत जंग ने मैसूर के शासक हैदर अली के विरुद्ध मिलकर एक संधि की, जिसकी अन्य शर्तों के अलावा निजाम द्वारा हैदर अली पर आक्रमण की स्थिति में अंग्रेजों द्वारा निजाम का साथ दिया जाना तय हुआ। तदनुसार निजाम ने कर्नल स्मिथ की सहायता से अगस्त, 1767 में मैसूर राज्य पर आक्रमण कर दिया। हैदर अली ने तब मराठों को अपनी ओर कर लिया। बाद में उसने निजाम को भी साथ मिला लिया। इस प्रकार अंग्रेज अकेले पड़ गए और लड़ाई के दौरान हैदर अली का बेटा टीपू सुल्तान लूट-पाट करता हुआ मद्रास तक जा पहुँचा। 4 अपैल, 1769 को दोनों के मध्य हुई संधि के बाद युद्ध विराम हुआ। 1770 में मैसूर पर पेशवा माधवराव ने आक्रमण किया। हैदर अली ने उसके विरुद्ध अंग्रेजों की मद्रास सरकार से सहायता माँगी, परंतु अंग्रेजों ने न तो युद्ध में सहायता की, न ही युद्ध-सामग्री दी। तब मराठों ने हैदर अली के साथ एक समझौता किया, जिसके तहत उन्हें मैसूर में व्यापार करने का अधिकार मिल गया, बदले में हैदर अली को बंदूकें, शोरा, सीसा आदि मिले। दूसरी लड़ाई भी इन्हीं दोनों के मध्य हुई, परंतु लड़ाई के बीच में ही हैदर अली की मृत्यु हो गई। उसके पुत्र टीपू सुल्तान ने लड़ाई जारी रखी। यह लड़ाई 11 मई 1784 की मंगलौर की संधि के बाद समाप्त हो गई। तीसरी और चौथी लड़ाई अंग्रेजों
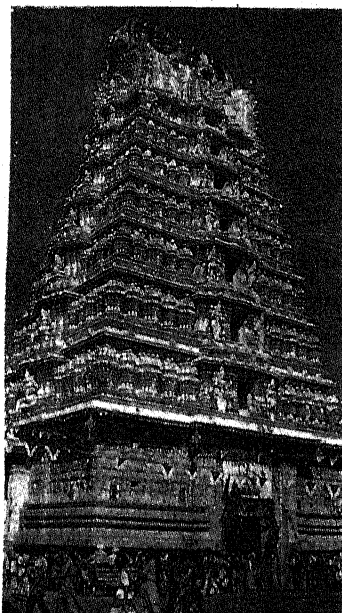
चामुंडेश्वरी मंदिर, मैसूर

व टीपू सुल्तान के मध्य हुई। श्रीरंगापटना में हुई 1792 की संधि के बाद दोनों पक्षों ने तीसरी लड़ाई से अपनी सेनाएँ वापस हटा लीं। टीपू सुल्तान को अंग्रेजों को अपना आधा क्षेत्र तथा 3.5 करोड़ रु. की क्षतिपूर्ति देने के साथ-साथ उनकी शरण में अपने दो पुत्र भी भेजने पड़े। अंग्रेजों, निजाम और मराठों ने इस क्षेत्र को आपस में बाँट लिया। चौथी लड़ाई के दौरान मई, 1799 ई० में टीपू सुल्तान मारा गया और अंग्रेजों ने मैसूर पर कब्जा कर लिया। बाद में उन्होंने इसे हिंदू राजा श्रीकृष्णराज वाडियार तृतीय को सौंप दिया। हैदर अली ने 1766 में वाडियार वंश से ही शासन छीना था। टीपू के मंत्री पूर्णिया को शासन प्रबंध का काम सौंपा गया। टीपू के लड़कों को पेंशन दे दी गई। वाडियार वंश 1947 तक यहीं से मैसूर राज्य का शासन चलाता रहा।
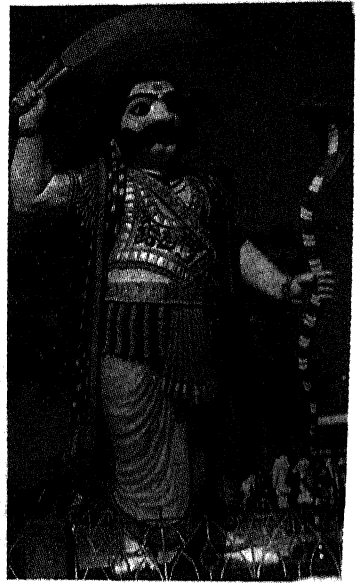
महिषासुर, चामुंडेश्वरी पहाड़ी, मैसूर
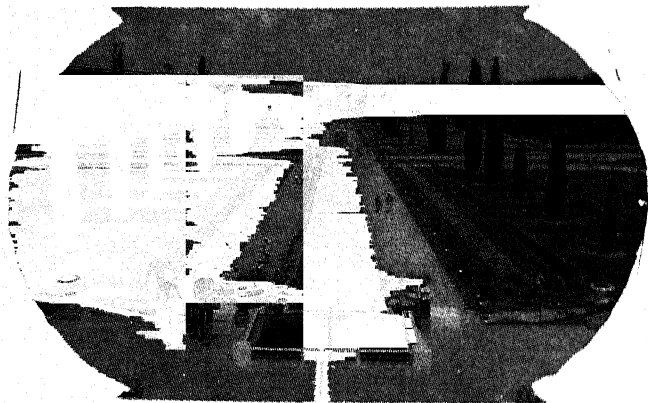
वृंदावन बाग, मैसूर
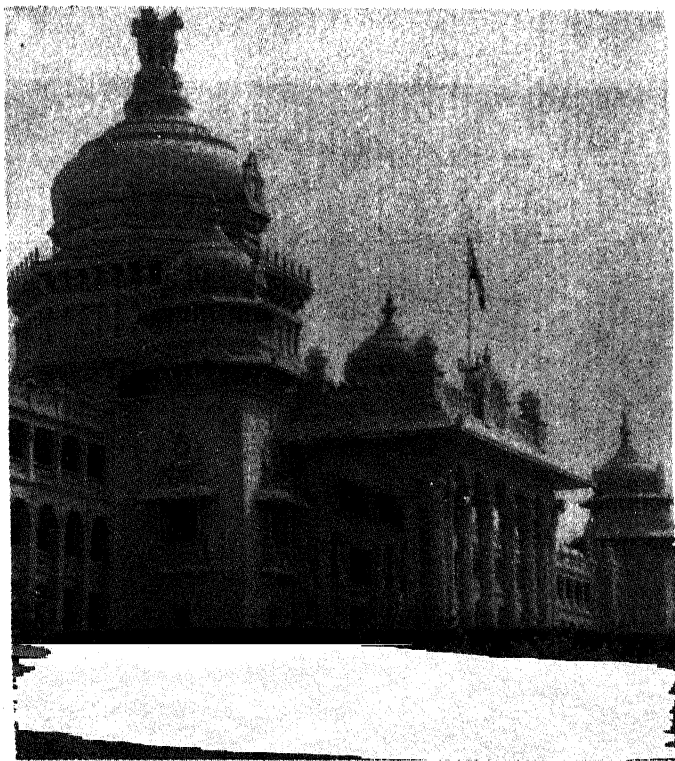
विधान सौध, मैसूर

इस वंश ने आधुनिक कर्नाटक के विकास में बहुत योगदान दिया। इसका अंतिम महाराजा इतना लोकप्रिय था कि 1947 में देश की स्वतंत्रता के बाद भारत सरकार ने उसे ही कर्नाटक का राज्यपाल बना दिया। मैसूर जिले में नव-पाषाण युग के अवशेष काफी मात्रा में मिले हैं।

पर्यटन स्थल मैसूर का सबसे प्रसिद्ध पर्यटन स्थल महाराजा का महल है। इस महल का निर्माण 1907 ई० में हुआ था। महल के नक्काशीदार दरवाजे, भव्य सजावटी कक्ष तथा महाराजा का म्यूजम देखते ही बनते हैं। इससे पहले यहाँ लकड़ी का महल था, जो 1897 ई० में आग लगने के कारण नष्ट हो गया था। वर्तमान महल भारतीय-सारसेनी शैली में बना हुआ है। दशहरे के समय दस दिन तक यह बल्बों की रोशनी से जगमगाता रहता है। मैसूर में ही चामुंडी हिल के पास सफेद रंग का ललित महल है, जिसे अब होटल का रूप दे दिया गया है।
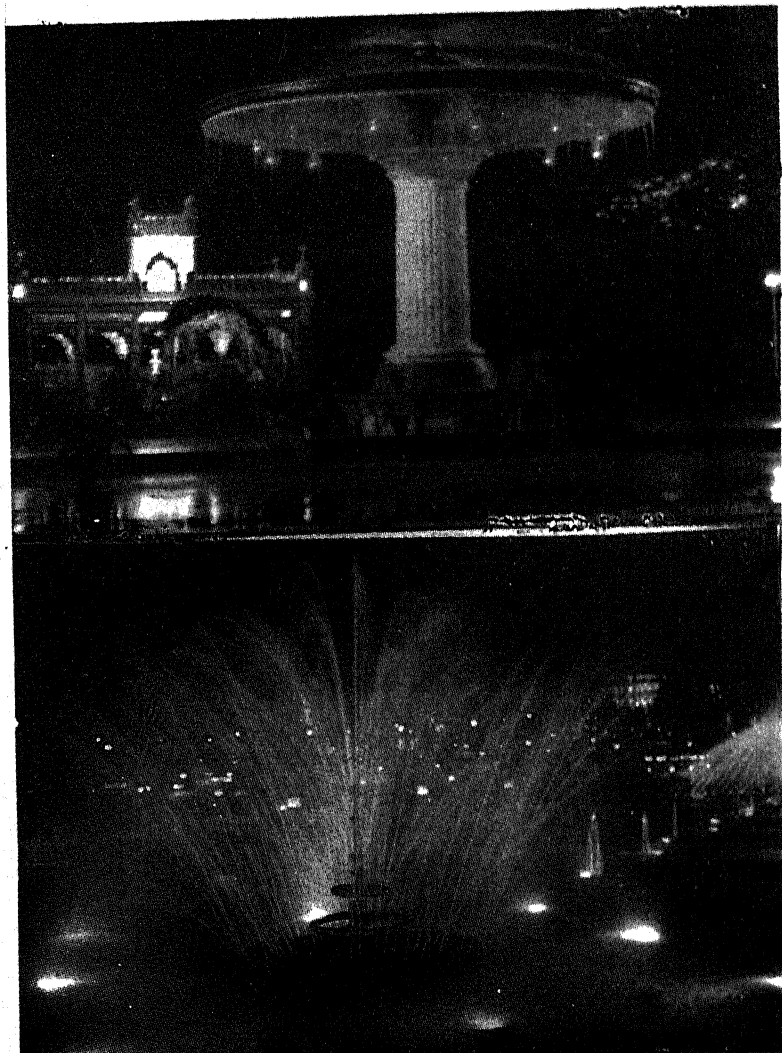
वृंदावन बाग, मैसूर के दो फव्वारे
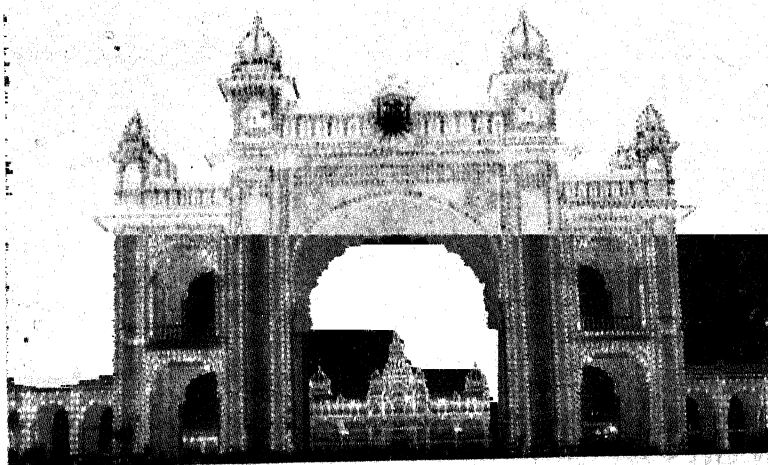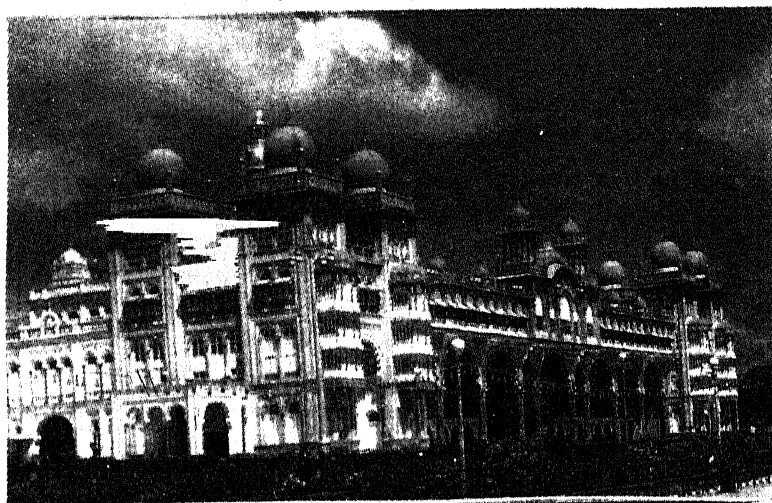
महाराजा महल, मैसूर

जयचामराजेंद्र आर्ट गैलरी में शाही परिवार की चित्रकारी, फर्नीचर, वाद्य यंत्र, मूर्तियाँ, पेक्षागृह आदि हैं। यहीं पर एक रेल संग्रहालय भी है। मैसूर का चिड़ियाघर, सेंट फिलोमिना चर्च तथा कृष्णाराज सागर बाँध के पास म्यूजिक फाउंटेन-युक्त वृंदावन बाग विशेष रूप से दर्शनीय हैं। यहाँ पास में ही चामुंडी पहाड़ी पर बारहवीं शताब्दी में बना चामुंडेश्वरी मंदिर, नंदी तथा महिषासुर राक्षस, जिसे चामुंडी देवी ने मारा था, की प्रतिमा भी दर्शनीय हैं।
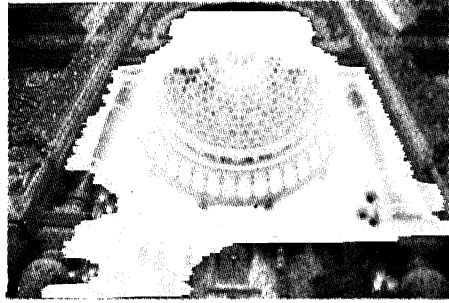
महाराजा महल, मैसूर का एक कक्ष

कैसे जाएँ मैसूर देश के अन्य शहरों से रेल एवं सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा 135 किमी दूर बंगलौर में है। स्थानीय भ्रमण के लिए यहाँ बसें, टैक्सियाँ तथा आटो-रिक्शे उपलब्ध हैं। रहने के लिए यहाँ अनेक होटल हैं। यहाँ पर्यटक सूचना केंद्र मयूर यात्री निवास, नं० 2, जेऐलबी रोड पर; पुरानी एग्जीबिसन बिल्डिंग, इरविन रोड पर तथा चामुंडी गेस्ट हाउस, झाँसी लक्ष्मीबाई रोड पर है। मैसूर चंदन की लकड़ी पर कारीगरी तथा रेशम की साड़ियों के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ का तापमान गर्मियों में अधिकतम 35°से तथा सर्दियों में न्यूनतम 14°से रहता है। यहाँ वर्ष भर कभी भी जाया जा सकता है।

183. रामेश्वर यह स्थान कर्नाटक के चित्तलदुर्ग जिले में है।

पुरातात्विक महत्त्व अशोक ने यहाँ 258-52 ई०पू० में दो लघु शिलालेख स्थापित कराए थे, जिनमें उसने निजी जीवन और धार्मिक विश्वास का वर्णन किया है। राष्ट्रकूट राजा कृष्ण तृतीय ने 949 में टक्कोल के युद्ध में चोल सेना को हराने के बाद रामेश्वर में एक विजय स्तंभ बनवाया था।

184. रायचूर यह स्थान कृष्णा-तुंगभद्रा दोआब में है और विजयनगर तथा बहमनी साम्राज्यों के मध्य कई युद्धों का कारण और स्थान रहा है। इन साम्राज्यों के मध्य संघर्ष के कई कारण रहे हैं। इस दोआब में स्थित किले इन दोनों साम्राज्यों के संयुक्त अधिकार में थे। दूसरे, बहमनी साम्राज्य अपना विस्तार

तुंगभद्रा के दक्षिण की तरफ और विजयनगर साम्राज्य उत्तर की तरफ करना चाहता था। बहमनी साम्राज्य तीन ओर से तीन शक्तिशाली राज्यों उड़ीसा, गुजरात और मालवा से तथा विजयनगर साम्राज्य तीन तरफ से समुद्र से घिरा हुआ था। इस प्रकार इन दोनों साम्राज्यों के विस्तार की संभावना रायचूर दोआब में ही थी। तीसरे, कृष्णा का दक्षिणी भाग बहुत उपजाऊ था। चौथे, दक्षिणी भारत के अधिकांश बड़े-बड़े बंदरगाह इसी भाग में थे। इनके अतिरिक्त निर्यात योग्य वस्तुओं का उत्पादन भी इसी क्षेत्र में होता था और हीरे तथा लोहे जैसी चीजें भी यहीं की खानों से निकलती थीं।

प्रथम बहमनी सुल्तान अलाउद्दीन ने जब रायचूर के किले का घेरा पहली बार डालने के लिए अपने सेनानायक मुबारक खाँ को भेजा, तो विजयनगर के नरेश हरिहर प्रथम ने घोड़े और धन देकर संधि कर ली। अलाउद्दीन के पुत्र मुहम्मद शाह प्रथम और बुक्काराय प्रथम के काल में तीन युद्ध हुए, परंतु इनका कोई परिणाम नहीं निकला। मुहम्मद शाह प्रथम के उत्तराधिकारी मुजाहिद शाह ने बुक्काराय प्रथम से रायचूर देने की माँग की, जिसके इंकार करने पर दोनों में युद्ध हुआ, परंतु फिर कोई परिणाम नहीं निकला। मुजाहिद की हत्या के बाद हरिहर द्वितीय ने बहमनी शासक से अदोनी, चोल, डाभोल और गोआ छीन लिए और कृष्णा नदी तक के क्षेत्र पर अधिकार कर लिया। चौदहवीं शताब्दी के अंत में सुल्तान फिरोज ने विजयनगर तक सैनिक अभियान किया, परंतु फिर इन दोनों ने एक-दूसरे की सीमाओं का अतिक्रमण न करने का वचन देकर संधि कर ली। 1406 में फिरोज शाह ने देवराय प्रथम पर आक्रमण किया। देवराय प्रथम ने उसके साथ अपनी पुत्री का विवाह करके और बांकापुर का किला दहेज में देकर संधि कर ली। परंतु यह संधि स्थायी सिद्ध नहीं हुई। फिरोज ने वेलम मित्र की राजधानी रचकोंडा पर आक्रमण कर दिया। बाद में फिरोज का वेलम मित्र देवराय से मिल गया और फिरोज की हार हुई। परंतु उसके उत्तराधिकारी अहमद प्रथम ने तेलंगाना तथा विजयनगर के कई क्षेत्रों पर कब्जा कर लिया। उसके उत्तराधिकारी अलाउद्दीन अहमद ने विजयनगर से चार युद्ध किए। पहले दो युद्धों में वह जीत गया, तीसरे युद्ध में देवराय द्वितीय की विजय हुई और चौथे युद्ध के बाद दोनों ने संधि कर ली। 1471 में बहमनी सेनानायक महमूद गावाँ ने गोआ पर और बाद में नेल्लोर और काँची पर अधिकार कर लिया। 1485 में विजयनगर के पहले वंश संगम वंश का पतन हो गया और कुछ समय बाद बहमनी साम्राज्य भी विभाजित हो गया, परंतु तब रायचूर दोआब विजयनगर के परवर्ती वंशों और बीजापुर के आदिलशाही सुल्तानों के मध्य उसी प्रकार एक समस्या बना रहा।

185. वातापी कृपया बादामी देखें।

186. विजयनगर यह स्थान कर्नाटक में हॉंपी के निकट तुंगभद्रा नदी के दक्षिणी किनारे पर है। इसकी स्थापना मुहम्मद तुगलक के काल में 1336 ई० में संगम के पुत्रों हरिहर और बुक्काराय ने अपने गुरु विद्यारण्य की सहायता से की थी। हरिहर प्रथम ने 1343 ई० में इसे अपनी राजधानी बनाया। उन दिनों इसे हस्तिनावती कहा जाता था।

विजयनगर की स्थापना की भूमिका 1325 में मुहम्मद-बिन-तुगलक के चचेरे भाई बहाउद्दीन गुर्शप ने कर्नाटक में सागर नामक स्थान पर विद्रोह कर दिया। जब तुगलक उसका दमन करने के लिए सागर आया, तो उसने कर्नाटक में कंपिली के राजा के यहाँ शरण ले ली। तुगलक ने कंपिली के राजा को हराकर कंपिली को भी दिल्ली सल्तनत में मिला लिया तथा उस राज्य के दो प्रमुख अधिकारियों हरिहर और बुक्काराय को बंदी बनाकर दिल्ली ले गया। बाद में आंध्र के तटवर्ती प्रदेश, बीदर, गुलबर्ग, मदुरा और पुनः कंपिली में भी विद्रोह हुए। साथ ही देवगिरि भी स्वतंत्र होने का प्रयास कर रही थी। तुगलक ने हरिहर और बुक्काराय को मुक्त करके उन्हें दक्षिण के विद्रोहों को शांत करने के लिए अनीगुंडी के प्रमुख अधिपति बनाकर भेजा। उन्होंने कंपिली के विद्रोह का दमन किया। परंतु इसी दौरान वे संत विद्यारण्य के संपर्क में आए और उन्होंने उनकी प्रेरणा से विजयनगर में अपने पिता के नाम पर संगम वंश की नींव डाली।

विजयनगर का शासन हरिहर यहाँ संगम वंश का पहला शासक था। उसने 1336 से 1356 तक राज्य किया, परंतु उसने आपको सम्राट घोषित नहीं किया। उसके बाद बुक्काराय ने 1377 तक राज्य किया। उसने मदुरा की सल्तनत को जीतकर विजयनगर साम्राज्य में मिला लिया। उसके बाद हरिहर द्वितीय (1347-1404), विरुपाक्ष (1404-05), देवराय प्रथम (1405-22) उत्तराधिकारी हुए। देवराय प्रथम ने अपने काल में बहमनी शासकों के साथ-साथ आंतरिक विद्रोहों को भी सफलतापूर्वक दबाया। उसने तुंगभद्रा नदी पर बाँध बनाकर नहरें निकालीं। उसके बाद बीर विजय, रामचंद और देवराय द्वितीय शासक हुए। एक बार बीदर के शासक शियाबुद्दीन अहमद शाह (1422-35) ने विजयनगर का घेरा डाल लिया था, परंतु युद्ध की क्षतिपूर्ति मिलने के बाद उसने घेरा उठा लिया। देवराय द्वितीय ने आंध्र के कोंडविदु को हराकर अपने साम्राज्य की नींव कृष्णा नदी तक बढ़ा ली और वेलम के शासक को अपनी प्रभुसत्ता स्वीकार करने के लिए बाध्य किया। उसके काल में केरल सहित अधिकांश दक्षिणी भारत विजयनगर साम्राज्य

में शामिल कर लिया गया था। फारस के राजदूत अब्दुर रजाक विजयनगर में 1442 में आए थे। उसने लिखा है कि उस समय यह शहर सात दीवारों से घिरा हुआ था। 1446 में मल्लिकार्जुन गद्दी पर बैठा, परंतु उसके काल में इस साम्राज्य का पतन होना आरंभ हो गया। उसके उत्तर-पूर्वी इलाकों पर उड़ीसा के गजपति राजा कपिलेश्वर ने अधिकार कर लिया। 1454 तक गजपति सेनाएँ कर्नाटक में रामेश्वर तक पहुँच गईं। 1465 में मल्लिकार्जुन की मृत्यु के बाद विरुपाक्ष द्वितीय राजा बना। उसके काल में कपिलेश्वर ने उसके अनेक तटवर्ती क्षेत्रों पर कब्जा कर लिया। चंद्रगिरि में उसके राज्यपाल सालुंब नरसिंह ने गजपति नरेश का वीरता से सामना किया। बहमनी सुल्तान मुहम्मद अष्टम् ने नेल्लोर और काँची तक आक्रमण किए। 1485 में उसके बड़े बेटे ने उसकी हत्या कर दी। उसके बाद प्रौढ़ देवराय ने कुछ समय तक शासन संभाला, परंतु सालुंब नरसिंह ने नायक राजाओं से मिलकर उसके शासन को समाप्त करने की योजना बना ली। सालुंब नरसिंह के सेनानायक नरसा नायक ने राजमहल पर अधिकार करके उसकी गद्दी पर बैठने में सहायता की। यहीं से विजयनगर में संगम वंश के शासन का अंत और सालुंब वंश के शासन का आरंभ हो गया।

सालुंब नरसिंह ने अपने सामंतों और विद्रोही नायकों का दमन किया। उसके काल में पुरुषोत्तम गजपति ने विजयनगर और उदयगिरि पर अधिकार करके उसे बंदी बना लिया। बाद में उसने उदयगिरि पर अधिकार रखकर उसे छोड़ दिया। सालुंब नरसिंह ने कर्नाटक के तुलु क्षेत्र पर अधिकार किया। 1490 में उसकी मृत्यु हो गई, जिसके बाद उसका अल्पवयस्क बेटा इम्माड़ि नरसिंह नरसा नायक के संरक्षण में राजा बना। नरसा नायक ने साम्राज्य की सारी सत्ता अपने हाथ में ले ली, जिस कारण इम्माड़ि के वयस्क होने के बाद दोनों में विवाद हुआ। नरसा नायक ने उसे पेनुकोंडा के किले में नजरबंद करके बीजापुर, बीदर और मदुरा वापस लेने के अभियान छेड़े। उसने कासिम बरीद से मिलकर रायचूर दोआब के अनेक किलों पर कब्जा कर लिया। उसने बीजापुर के आदिलखाँ को हराकर कुछ समय तक उसे बंदी बनाए रखा। नरसा नायक ने चोल, पांड्य और चेर राजाओं पर आक्रमण करके उनसे अपनी प्रभुसत्ता स्वीकार करवाई। उसने गजपति नरेश प्रताप रूद्र के दक्षिण में साम्राज्य विस्तार के प्रयासों को भी असफल किया। 1505 ई० में नरसा नायक के पुत्र वीर नरसिंह ने इम्माड़ि नरसिंह की हत्या करके विजयनगर में तुलुव वंश के शासन की स्थापना की।

वीर नरसिंह ने 1509 ई० तक शासन किया, परंतु उसके काल में उस पर आंतरिक विद्रोहों और बाहरी आक्रमणों दोनों का दबाव बना रहा। उसके बाद उसके छोटे भाई कृष्णदेव राय ने गद्दी संभाली। कृष्णदेव राय विजयनगर

साम्राज्य का महानतम् शासक था। उसने 1509-10 ई० में बीदर के सुल्तान महमूदशाह के आक्रमण को निष्फल करके उसे पराजित किया और उसका कोविलकोंडा तक पीछा किया। यद्ध में बीजापुर का सुल्तान यूसुफ मारा गया। यूसुफ का उत्तराधिकारी इस्माइल नाबालिग होने के कारण बीजापुर में अव्यवस्था उत्पन्न हो गई। इस स्थिति का लाभ उठाकर कृष्णदेव राय ने 1512 में रायचूर पर अधिकार कर लिया। उसने गुलबर्ग को भी जीता और बीदर पर आक्रमण करके बहमनी सुल्तान महमूद शाह को बरीद के चंगुल से मुक्त कराकर उसे दुबारा शासनारूढ़ किया और "यवनराज्य स्थापनाचार्य" विरुद धारण किया। उसने उम्मतूर के सामंत गंग राजा को हराकर श्रीरंगम् और शिवसुंदरम् पर अधिकार कर लिया। 1513 से 1518 के बीच उसने उड़ीसा के गजपति नरेश प्रताप रूद्र से चार युद्ध किए और उसे चारों बार हराया। इन युद्धों के फलस्वरूप कृष्णदेव की सेना उनकी राजधानी कटक तक जा पहुँची। अंत में गजपति नरेश ने अपनी पुत्री का विवाह कृष्णदेव राय से करके उससे संधि कर ली। कृष्णदेव राय ने कृष्णा के उत्तर के विजित प्रदेश उसे वापस कर दिए। जब कृष्णदेव राय उड़ीसा में व्यस्त था, उस समय गोलकुंडा के सुल्तान कुली कुतुब शाह ने उसके पांगल और गुंटूर के किलों के साथ-साथ कोंडविदु के किले पर भी अधिकार कर लिया। बाद में कृष्णदेव राय के सेनापति सालुंब तिम्म ने कुतुबशाही सेना को हराकर इन किलों पर पुनः अधिकार किया। इसी दौरान बीजापुर के सुल्तान इस्माइल आदिल ने रायचूर के किले पर अधिकार कर लिया। कृष्णदेव राय ने उसे अनेक जगह हराया और वह बीजापुर तक जा पहुँचा। उसने बीजापुर को क्षतिग्रस्त किया। वापसी में उसने गुलबर्ग पर आक्रमण करके वहाँ के किले में कैद तीन बहमनी शहजादों को मुक्त कराया। इस प्रकार 1520 तक उसने विजयनगर के सारे शत्रुओं को परास्त करके विजयनगर को पुनः एक शक्तिशाली साम्राज्य का रूप दे दिया। कालिकट और गोआ पर पुर्तगालियों का कब्जा हो जाने के कारण उसने अपने व्यापारिक हितों को ध्यान में रखते हुए उनके साथ उदार रुख अपनाया। 1529 में कृष्णदेव राय की मृत्यु हो गई। इटली के एक लेखक निकोली कोंति कृष्णदेव राय के काल में विजयनगर आए थे। उसने लिखा है कि उस समय यह संसार का सबसे बड़ा शहर था। यह एक किलेबंद शहर था तथा यहाँ बाग और फलोद्यान काफी संख्या में थे। कोंति ने लिखा है कि कृष्णदेव राय सेना तथा क्षेत्र दोनों दृष्टियों से सबसे शक्तिशाली राजा था। कृष्णदेव राय की मृत्यु के समय उसका पुत्र सदाशिव केवल 18 महीने का था। इसलिए कृष्णदेव राय ने अपने जीवन काल में ही अपने चचेरे भाई अच्युत को अपना उत्तराधिकारी मनोनीत कर दिया था, परंतु उसके दामाद रामराय (राम

राजा) ने सदाशिव का पक्ष लिया। दूसरी ओर अच्युत के साले सलकराज तिरुमल और चिन तिरुमल अच्युत का पक्ष ले रहे थे। इस स्थिति से निपटने के लिए अच्युत ने रामराय को शासन में सहभागी बना दिया। ऐसी स्थिति का लाभ उठाकर कटक के प्रताप रूद्र ने विजयनगर पर आक्रमण कर दिया। अच्युत ने उसके आक्रमण को विफल किया। बीजापुर के इस्माइल आदिल ने भी उस पर आक्रमण किया और रायचूर तथा मुद्गल के किलों पर अधिकार कर लिया। 1530 ई० में गोलकुंडा के सुल्तान ने कोंडविदु पर आक्रमण किया, परंतु पराजित हुआ। 1534 ई० में अच्युत ने बीजापुर की अव्यवस्था का लाभ उठाकर उससे रायचूर और मुद्गल वापस ले लिए। जब अच्युत इन विजयों के लिए राजधानी से अनुपस्थित था, तब रामराय ने शासन पर कब्जा कर लिया और उसके लौटने पर उसे बंदी बना लिया और विरोधों से बचने के लिए उसने सदाशिव को नाममात्र के लिए गद्दी पर बैठा दिया, परंतु जब रामराय सुदूर दक्षिण में विद्रोह का दमन करने के लिए गया हुआ था, तो अच्युत ने अपने साले तिरुमल की सहायता से शासन पर अधिकार कर लिया। जब रामराय विजयनगर लौटा, तो उसी समय बीजापुर के इब्राहिम आदिल ने विजयनगर को घेर लिया। इब्राहिम उन दोनों में समझौता कराकर लौट गया। अब मदुरा, जिंजी और तंजौर स्वतंत्र हो गए तथा पुर्तगालियों ने टुटिकोरिन के मोती उत्पादक क्षेत्रों पर अधिकार कर लिया। 1542 में अच्युत का निधन हो गया। अच्युत के निधन के बाद सलकराज तिरुमल ने उसके अवयस्क पुत्र वेंकट प्रथम को गद्दी पर बैठाकर सत्ता अपने हाथ में ले ली। राजमाता वरदेवी अपने पुत्र वेंकट को अपने भाई तिरुमल के चंगुल से छुड़ाना चाहती थी। उसने इब्राहिम आदिल से सहायता माँगी। उसी दौरान रामराय भी इब्राहिम से जा मिला और उसकी सहायता से सलकराज तिरुमल को हराकर सदाशिव को गद्दी पर बैठा दिया। अब सत्ता रामराय के हाथ में आ गई। रामराय ने सदाशिव के गद्दी पर बैठने के पहले वर्ष (1542) में ही त्रावणकोर के शासक को दंडित करने और पुर्तगालियों के सत्ता विस्तार तथा उनके द्वारा हिंदू मंदिरों की लूट को रोकने के लिए सेना भेजी। उसने साम्राज्य के आंतरिक विद्रोहों का भी दमन किया। 1546 ई० में उसने पुर्तगालियों के साथ व्यापारिक समझौता करने के बावजूद उनकी धर्म-परिवर्तन और साम्राज्यवादी नीतियों को सफल नहीं होने दिया। बीजापुर के इब्राहिम आदिल ने उसके अदोनी के किले पर आक्रमण करके उसे एक समझौते के लिए विवश किया। 1542-43 ई० में इब्राहिम ने अहमद नगर के बुरहान निजामशाह के साथ मिलकर विजयनगर पर आक्रमण कर दिया और उसके कुछ क्षेत्रों पर अधिकार कर लिया। रामराय ने बुरहान निजामशाह को अपनी ओर मिलाकर आदिलशाह को लगातार तीन

युद्धों में पराजित किया। 1552 ई० तक उसने रायचूर और मुद्गल दोनों पर अधिकार कर लिया। 1558 में बुरहान निजामशाह के पुत्र हुसैन निजामशाह ने गोलकुंडा के सुल्तान इब्राहिम कुतुबशाह के साथ मिलकर बीजापुर पर आक्रमण कर दिया था। बीजापुर के अनुरोध पर रामराय ने उसकी सहायता की और 1559 ई० में अहमदनगर को एक अपमानजनक संधि पर हस्ताक्षर करने के लिए विवश किया। 1560 ई० तक विजयनगर दक्षिण भारत का एक शक्तिशाली साम्राज्य बन गया था। विजयनगर की बढ़ती हुई शक्ति से दक्षिण भारत की मुस्लिम सल्तनतों को खतरा पैदा हो गया। रामराय से निपटने के लिए अहमदनगर, बीजापुर, गोलकुंडा और बीदर की सल्तनतों ने अपने भेद-भाव भुलाकर विजयनगर साम्राज्य का अंत करने की योजना बनाई। योजनानुसार अली आदिलशाह ने रामराय से रायचूर, मुद्गल और अन्य दुर्ग वापस माँगे, जिन्हें देने से रामराय ने इंकार कर दिया। 25 जनवरी, 1565 ई० को दक्षिण की इन चारों सल्तनतों और रामराय के मध्य तलिकोटा के पास रक्षसी-तंगड़ी में युद्ध हुआ। हालाँकि आरंभ में रामराय ने उन्हें पराजित कर दिया था, परंतु बाद में विजयनगर की सेना मुस्लिम तोपखाने का सामना नहीं कर सकी। इसी दौरान रामराय के मुस्लिम सैनिक भी इन सल्तनतों की सेनाओं से जा मिले। रामराय की हार हुई और उसका वध कर दिया गया। मुस्लिम सेनाओं ने विजयनगर को लूटकर उसे नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। युद्ध में रामराय का भाई वेंकटाद्रि भी मारा गया। यूँ इस युद्ध के बाद विजयनगर साम्राज्य लगभग 100 वर्षों तक और चलता रहा, परंतु अब उसकी संपन्नता और शक्ति नष्ट हो गई थी। तिरुमल ने सदाशिव के संरक्षक के रूप में पेनुकोंडा से शासन करना आरंभ किया और बाद में उसने विजयनगर के चौथे राजवंश अंडविदु की नींव डाली। तिरुमल ने पेनुकोंडा को अपनी राजधानी बनाया। बाबर के आक्रमण के दौरान विजयनगर अपनी राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक प्रसिद्धि के शिखर पर था।

व्यापारिक महत्त्व अपनी ख्याति के समय में विजयनगर का व्यापारिक एवं वाणिज्यिक महत्त्व बहुत अधिक था। इसी महत्त्व को ध्यान में रखते हुए सदाशिव राव तथा पुर्तगालियों ने यहाँ 1547 ई० में एक संधि की, जिसकी शर्तों के अनुसार यह तय हुआ कि विजयनगर से निर्यात की जाने वाली सभी वस्तुएँ होनावर तथा बसरून भेजी जाएँगी तथा पुर्तगाली भी अपना ताँबा, पारा, चीनी, रेशमी कपड़े, मूँगे तथा सिंदूर केवल विजयनगर साम्राज्य को ही बेचेंगे।

187. श्रवणबेलगोल यह स्थान कर्नाटक के विंध्याचल जिले में बंगलौर के पश्चिम में 158 किमी दूर है। यह 1000 वर्ष पूर्व गंग राजाओं द्वारा
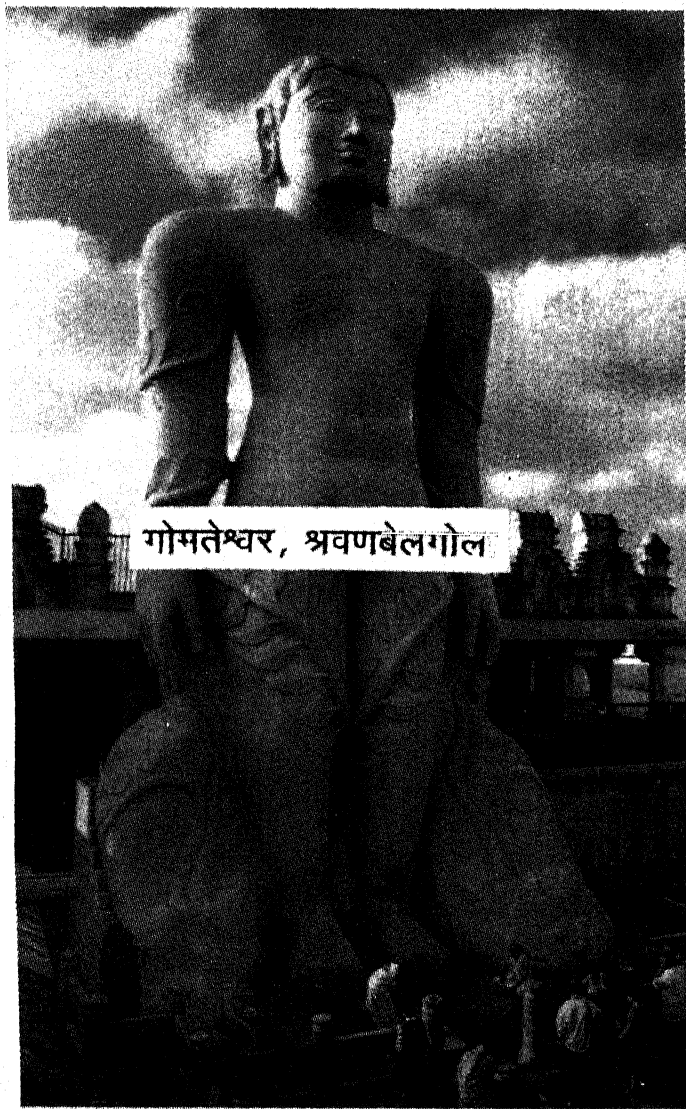
गोमतेश्वर, श्रवणबेलगोला

स्थापित गोमतेश्वर की विशालकाय प्रतिमा के लिए जाना जाता है। गोमतेश्वर प्रथम जैन तीर्थंकार ऋषभदेव के सबसे बड़े पुत्र बाहुबली का ही अन्य नाम है। यहाँ की इंद्रगिरि पहाड़ी पर स्थापित यह प्रतिमा ग्रेनाइट के एक ही पत्थर से बनी gSvk$ 57 फुट ऊँची है। इस प्रतिमा में इस श्रवण को खड़ी अवस्था में कठोर तप करते हुए दिखाया गया है और वह अपने पैरों में पड़े साँपों तथा उनके बिलों से बेखबर है। इसका निर्माण गंग राजा रचमात्ता के मंत्री चामुंड राय द्वारा 983 में कराया गया था। प्रत्येक बारह वर्ष बाद इस प्रतिमा का महामस्तकाभिषेक किया जाता है, जिसमें दूध, दही, शहद, फल, सोने, चाँदी और बहुमूल्य रत्नों का प्रयोग किया जाता है। बाहुबली (गोमतेश्वर) की एक हजारवीं वर्षगाँठ के अवसर पर यहाँ 22 फरवरी, 1981 को उसकी एक अन्य प्रतिमा भी स्थापित की गई। इंद्रगिरि पहाड़ी पर ही कुछ छोटी प्रतिमाएँ और एक मंदिर भी है।

बाहुबली के जैन धर्म की ओर प्रवृत होने की कथा इस प्रकार है। जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकार ऋषभदेव धर्म की ओर प्रवृत्त हो चुके थे, परंतु उनका बड़ा पुत्र भरत अयोध्या के राजा के रूप में और छोटा पुत्र बाहुबली वाल्मीक के राजा के रूप में राजधर्म निभा रहे थे और दोनों बड़े अहंकारी थे। बड़े होने के नाते भरत ने बाहुबली को अपनी अधीनता स्वीकार करने के लिए कहा, परंतु अहंकारी बाहुबली ने यह आदेश नहीं माना। फलतः दोनों में कठोर संघर्ष हुआ, जिसमें बाहुबली की विजय हुई। परंतु इस विजय के बाद बाहुबली में विरक्ति आ गई और वह सारा राज्य भरत को सौंपकर कठोर तप में लीन हो गया।

इतिहास से पता लगता है कि चंद्रगुप्त मौर्य और भद्रबाहु भी श्रवणबेलगोला आए थे। भद्रबाहु की तो मृत्यु भी यहीं हुई। इस प्रकार श्रवणबेलगोला 1000 वर्षों से जैन धर्मावलंबियों का तीर्थ स्थान है। श्रवण-बेलगोला में 600 ई० के आस-पास के कई लेख भी पाए गए हैं।

यहाँ घूमने के लिए नवंबर से मार्च तक का समय उपयुक्त रहता है। ठहरने के लिए यहाँ एक साधारण डाक बंगला है।

188. श्रीरंगापटना यह शहर बंगलौर-मैसूर मार्ग पर बंगलौर से 123 तथा मैसूर से 16 किमी दूर कावेरी नदी पर बसा है।

ऐतिहासिक महत्त्व सन् 1782 से 1799 ई० तक यह टीपू सुल्तान की राजधानी थी। इतिहास में श्रीरंगापटना टीपू सुल्तान और लार्ड कार्नवालिस के मध्य हुई एक संधि के लिए जाना जाता है। इस संधि के तहत टीपू सुल्तान ने कॉर्नवालिस को एक करोड़ रु. वार्षिक आय वाला क्षेत्र देने, युद्ध क्षतिपूर्ति के रूप में तीन करोड़ रु. हर्जाना देने और अपने दो पुत्रों को अंग्रेजों के दरबार में भेजने
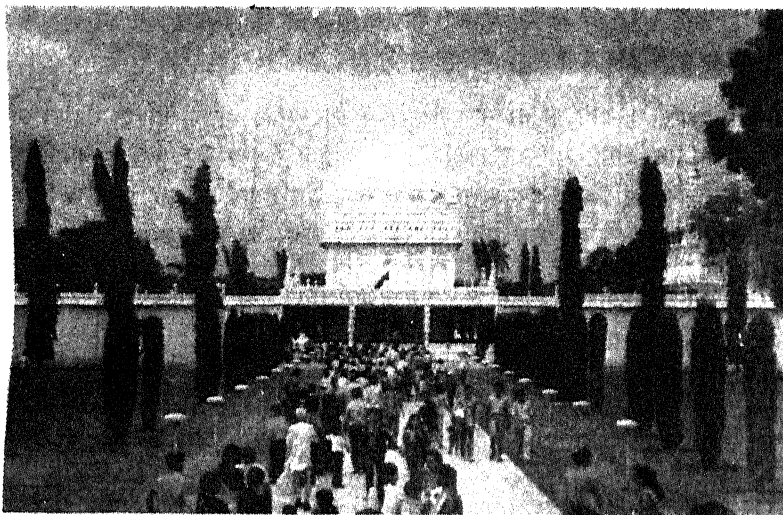
गुंबज, श्रीरंगापटना

की शर्त मानी। मैसूर की चौथी लड़ाई भी 1799 ई० में यहीं हुई थी, जिसमें टीपू सुल्तान मारा गया। इसके बाद इस पर अंग्रेजों ने कब्जा कर लिया। बाद में उन्होंने इसे हिंदू राजा श्रीकृष्णराज वाडियार तृतीय को सौंप दिया। उसका वंश
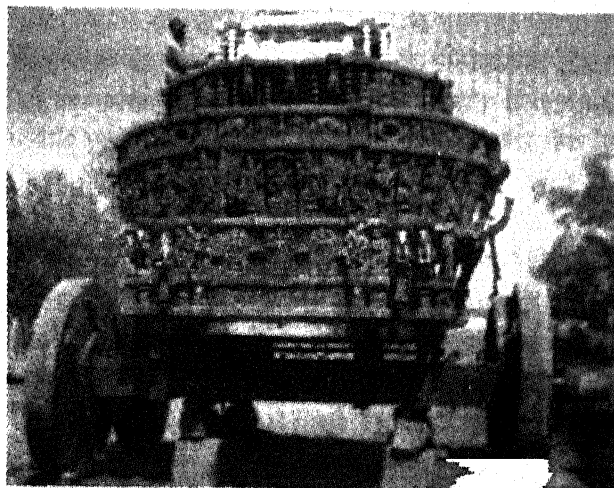
35 फुट ऊँचा रथ, श्रीरंगापटना

1947 तक मैसूर से कर्नाटक का शासन चलाता रहा। इस वंश ने आधुनिक कर्नाटक के विकास में बहुत योगदान दिया।

पर्यटन स्थल यहाँ के दर्शनीय स्थलों में श्रीरंगनाथ मंदिर, दरिया दौलत बाग महल, गुम्बज, शाही मस्जिद तथा वेल्जली ब्रिज प्रमुख हैं। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन 52 किमी दूर हासन और निकटतम हवाई अड्डा 152 किमी दूर बंगलौर है। ठहरने के लिए यहाँ होटल मयूर रीवर व्यू तथा अन्य होटल हैं।

189. शृंगेरी हिंदू संत शंकराचार्य द्वारा एक मठ की स्थापना के बाद यह हिंदुओं का प्रमुख धार्मिक स्थल बन गया है।

190. संगनकल्लू यहाँ प्रागैतिहासिक काल की सभ्यता के अवशेष पाए गए हैं। पाए गए अवशेषों में पत्थर के कुल्हाड़े तथा पीले-भूरे रंग के मिट्टी के बर्तन प्रमुख हैं, जो 1000 ई०पू० के हैं।

191. सिद्धपुर सिद्धपुर कर्नाटक के चित्तलदुर्ग जिले में है।

पुरातात्विक महत्त्व अशोक ने यहाँ 258-252 ई०पू० में दो लघु शिलालेख स्थापित करवाए थे। एक शिलालेख में उसके निजी जीवन और दूसरे में उसके धार्मिक विश्वास का उल्लेख है। अहमदाबाद के शासक अहमदशाह ने पंद्रहवीं शताब्दी के आरंभ में सिद्धपुर के शासक को हराया था।

192. सेठीहाली अभयारण्य यह अभयारण्य शिमोगा से 5 किमी दूर है और कर्नाटक में पश्चिमी घाट का दूसरा महत्त्वपूर्ण अभयारण्य है। अधिक वर्षा के कारण यहाँ घने वन हैं, जिनमें बंदर, चीतल, हाथी, तेंदुए और तरह-तरह के हरिण मिलते हैं। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा मंगलौर 190 किमी की दूरी पर है।

193. सोमनाथपुर यह स्थान मैसूर के उत्तर-पूर्व में लगभग 35 किमी दूर है। यहाँ होयसल राजाओं द्वारा तेरहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में निर्मित प्रसन्न चेन्न केशव मंदिर दर्शनीय है। इस मंदिर के चबूतरे, दीवारों आदि पर तरह-तरह के पशु-पक्षियों के भित्तिचित्र होने से यह बहुत आकर्षक लगता है। ठहरने के लिए यहाँ होटल मयूर केशव तथा अन्य होटल हैं।

194. हल्लूर यहं स्थान गोदावरी नदी के दक्षिण में है।

पुरातात्विक महत्त्व हल्लूर में नवपाषाण तथा महापाषाण काल के अवशेष मिले हैं। यहाँ इन कालों की तीन अवस्थाएँ मिली हैं, जिनमें विकास का क्रम सतत है। इनमें बस्तियाँ एक ही स्थान पर रहीं। इनके पत्थर के औजार मध्य भारत तथा दक्षिणापथ के मध्यपाषाण युगीन औजारों जैसे हैं। लोगों का मुख्य धंधा पशु-पालन और चने तथा बाजरे की कृषि करना था। पहली अवस्था के मिट्टी के बर्तन बुर्जहोम के बर्तनों जैसे हैं। यहाँ के मिट्टी के भूरे रंग के बर्तन उत्तर-पूर्वी ईरान के बर्तनों जैसे तथा लाल और काले रंग के बर्तन बलोचिस्तान की हड़प्पा पूर्व काल की संस्कृति जैसे हैं। दूसरी अवस्था में मालवा तथा तीसरी अवस्था में जोर्वे के मिट्टी के बर्तनों जैसे बर्तन मिले हैं।

सन् 1942 और 1947 में की गई खुदाइयों में यहाँ महापाषाण युग की कब्रें पाई गई हैं। उस युग के लोग समाधियाँ बड़े-बड़े अनगढ़े पत्थरों से बनाते थे। हर बस्ती में 90 से लेकर 100 तक झोंपड़ियाँ होती थीं। हर झोंपड़ी का आकार 3 x 2.7 मी होता था। ये झोंपड़ियाँ वर्गाकार, गोल अथवा आयताकार होती थीं। इनकी दीवारें मिट्टी की और खंभे लकड़ी के होते थे। छत बोरा तथा पत्तों के ऊपर मिट्टी डालकर बनाई जाती थी। फर्श को पक्का बनाने के लिए बजरी तथा रेती का प्रयोग होता था। मिट्टी के बड़े-बड़े माट, चूल्हा तथा ओखली प्रायः हर घर में मिले हैं। कटोरे और लोटे भी मिले हैं, परंतु थालियाँ नहीं मिलीं। मिट्टी के बर्तनों की लाल सतह पर हरिण, कुत्तों तथा ज्यामितीय नमूनों की काले रंग की चित्रकारियाँ हैं। इस सभ्यता के लोग कते हुए सूत तथा रेशम के कपड़ों का प्रयोग करते थे। लोग ताँबे और सोने से परिचित थे, परंतु चाँदी से अपरिचित थे। आभूषणों में वे कीमती मोतियों की मालाओं, अंगूठी तथा ताँबे, हाथी दाँत, हड्डी अथवा पकी मिट्टी की चूड़ियों का प्रयोग करते थे। वे ताँबे की कुल्हाड़ियों, काल्सिडोनी के फलक वाले बाणों, गुलेल के लिए क्वार्टजाइट की गोलियों, हसियों, तकुओं, खुर्पों और दुधारी चाकुओं का प्रयोग करते थे। बड़े-बड़े औजार डोलेराइट या ताँबे के होते थे। पत्थर के पहियों का भी उपयोग होता था। लोगों का भोजन गाय, भैंस, भेड़, बकरी और घोंघों का माँस तथा अन्न था। अन्न को ओखलियों में कूटा जाता था।

195. हस्तिनावती कृपया विजयनगर देखें।

196. हाँपी–ऐतिहासिक महत्त्व यहाँ 1336 ई० में विजयनगर साम्राज्य के संस्थापक हरिहर का राज्याभिषेक हुआ था। 1343 तक यह उसकी राजधानी थी। 1343 में उसने विजयनगर का निर्माण करवाकर अपनी राजधानी
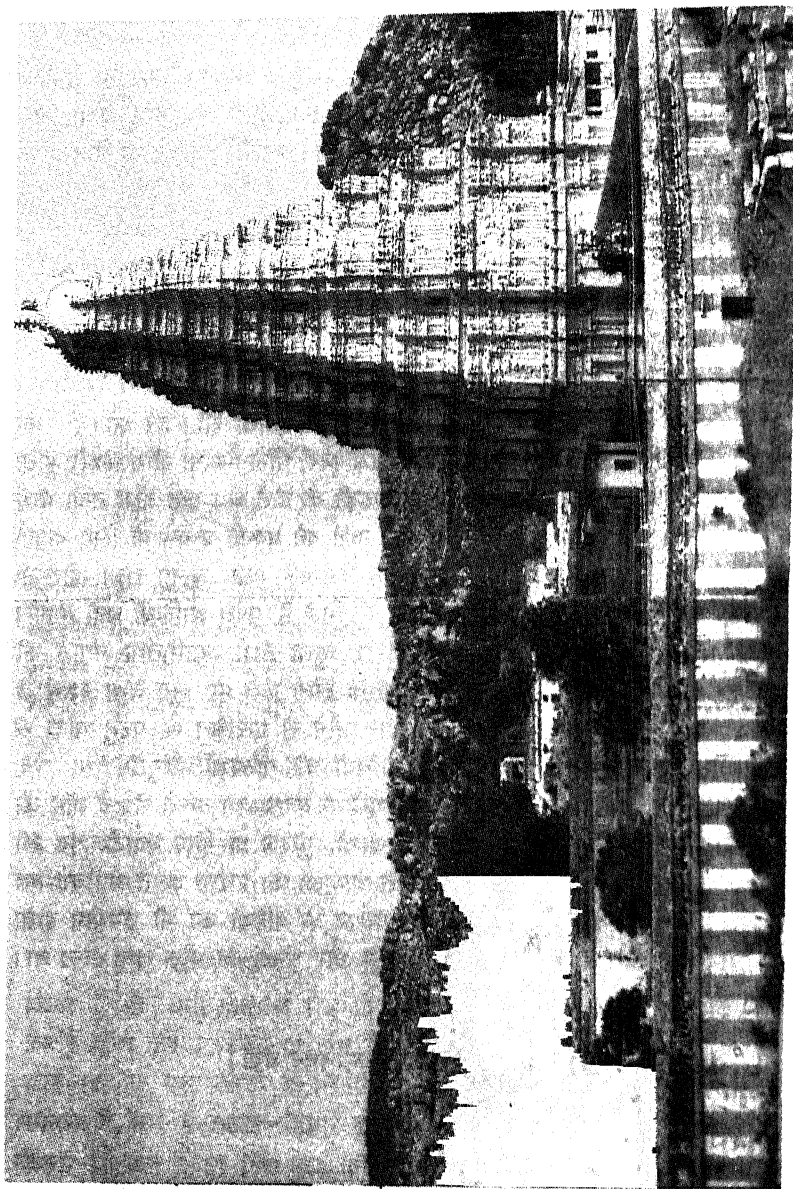
विरूपाक्ष मंदिर, हाँपी

वहाँ बदल ली। उन दिनों विजयनगर का नाम हस्तिनावती था।

पुरातात्विक महत्त्व हाँपी के ध्वंसावशेष उस समय की विशिष्ट वास्तुकला के उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। कृष्णदेव राय ने यहाँ सोलहवीं शताब्दी में विट्ठलस्वामी मंदिर बनवाया था, जो आज भी देखा जा सकता है। उसने यहाँ प्रसिद्ध हजारा मंदिर द्वारा बनवाया। पट्टाभिराम, हाथीबाड़ा, हमाम, लोटस पाविलियन, उग्र नरसिंह की मूर्ति तथा पाषाण-रथ भी दर्शनीय हैं। राजा की मृत्यु के बाद यहाँ एक टीले पर हजारों औरतें सती हो गईं। इनके अतिरिक्त यहाँ विरुपाक्ष मंदिर, पुष्करिणी तालाब, महानवमी डिब्बा भी दर्शनीय हैं। ठहरने के लिए यहाँ होटल मयूर तथा कई अन्य होटल हैं।

उग्र नरसिंह, हाँपी

197. हेलीबिड कृपया द्वारसमुद्र देखें।

***

केरल

ऐतिहासिक विवरण

केरल भूमि की उत्पत्ति समुद्र से हुई मानी जाती है। ऐसा माना जाता है कि विष्णु के अवतार परशुराम क्षत्रियों का नाश करने के बाद पश्चाताप से भर गए थे। उन्होंने एक पर्वत पर तपस्या करनी आरंभ की। इस तपस्या के दौरान उन्होंने क्षत्रियों का नाश करने वाले अपने कुल्हाड़े को समुद्र में फेंक दिया, जिसके दबाव से गाकर्णम् से कन्याकुमारी तक की भूमि समुद्र से निकल आई। मिथक जो भी हो, केरल सदा से ही भारत भूमि का एक अभिन्न अंग रहा है। यह चेदि शासकों की युद्ध भूमि रही है। समय-समय पर यहाँ चोलों, विजयनगर के शासकों और पांड्यों का प्रभाव भी रहा।

केरल का क्षेत्रफल 38,863 वर्ग किमी है। राज्य में कुल 14 जिले हैं। राज्य में जनसंख्या का घनत्व 749 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी और साक्षरता दर लगभग 90% है।

उत्सव

केरल का ओणम् त्यौहार पूरे भारत में जाना जाता है। यह त्यौहार
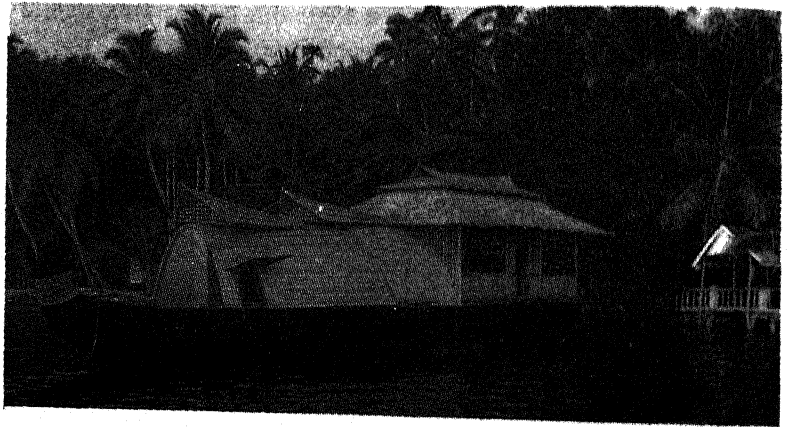
केरल की एक दृश्यावली

महाबली की वापसी की खुशी में भाद्रपद मास में चार दिनों तक मनाया जाता है। महाबली केरल का एक राजा था। उसके शासन के दौरान बहुत समृद्धि थी। विष्णु ने उसे वामन का रूप देकर अनुपजाऊ क्षेत्रों में भेज दिया था। ओणम् के अतिरिक्त केरल में नव वर्ष के अवसर पर सरस्वती पूजा का उत्सव मनाया जाता है। प्रयाग के कुंभ मेले की तरह यहाँ पेरियार नदी के किनारे 41 दिनों तक महाशिवरात्रि पर्व मनाया जाता है। साबरीमाला अयप्पन मंदिर में मकर विलक्कू तथा त्रिचूर के वडक्कूनाथ मंदिर में पुरम् उत्सव मनाया जाता है। क्रिस्मस और ईस्टर राज्य के मुख्य ईसाई त्योहार हैं। राज्य में मरमन पर्व के अवसर पर पुम्बा नदी पर एशिया में ईसाइयों का सबसे बड़ा मेला लगता है। मुस्लिम बकरीद, रमजान, मुहर्रम, जर्रम और नेचा त्योहार मनाते हैं। केरल में नावों की दौड़ का वल्लमकाली त्योहार देश में अपनी तरह का सबसे अलग त्योहार है। इनके अतिरिक्त माघ माह की मकर संक्रांति के पहले दिन पोंगल तथा वैशाख में विशु पर्व भी मनाए जाते हैं। केरल कथकली नृत्य की जन्म-भूमि भी है। त्रिसूर की कलामंडलम् संस्था इसी नृत्य के विकास के लिए जानी जाती है।

कथकली नृत्य, केरल

नृत्य

केरल में भगवती देवी के सम्मान में कन्नियरकली नृत्य किया जाता है। केरल की महिलाएँ कथकली और भरत नाट्यम के सम्मिश्रण से अस्तित्व में आया मोहिनी अट्टम नृत्य करती हैं। इनके अतिरिक्त प्रदेश में थिय्याम, थायंबक्का और कालाडी पायट्टु नृत्य भी किए जाते हैं।

पर्यटन

केरल में टेक्काडी,परंबीकुलम्, मनंथावाड़ी,सुल्तान-बाथरी और वायनाड में प्रमुख पशु-पक्षी अभयारण्य हैं। कोवलम् राज्य के साथ-साथ देश का प्रसिद्ध समुद्री तट है। त्रिवेंद्रम् में पदमनाभस्वामी मंदिर, साबरीमाला

में भगवान अयप्पा का मंदिर, वेली, नेयार डैम तथा पानमुड़ी हिल स्टेशन; आदि शंकराचार्य का जन्म स्थान कालाडी, गुरूवायूर में भगवान कृष्ण का मंदिर, कासरगोड़ में बैकल तथा पालक्काड में मालमपुज समुद्री तट तथा करवा द्वीप, पक्षीपातलम् और ऐडाक्कल गुफाएँ राज्य के प्रमुख पर्यटन आकर्षण हैं।

198. आलवाय आलवाय कोचीन के 15 किमी उत्तर में है। यहाँ 1790 ई० में टीपू सुल्तान ने धावा बोला था, परंतु पेरियार नदी में भारी बाढ़ के कारण उसे लौट जाना पड़ा था। आलवाय का महत्त्व इसके कालाडी के रास्ते में पड़ने के कारण अधिक बढ़ जाता है। कालाडी अद्वैत सिद्धांत के प्रचारक शंकराचार्य का जन्म स्थान है। आलवाय में ठहरने के लिए एक सुसज्जित पर्यटक बंगला है। यह बंगला पहले यहाँ के शासक का महल था।

199. एलिप्पि यह कोच्चि के 64 किमी दक्षिण में है। इसे अलापुजा भी कहा जाता है। इसकी स्थापना त्रावणकोर के दीवान राजा केशवदास द्वारा 1762 में की गई थी। इसे 'पूर्व के वेनिस' के रूप में जाना जाता है।

पर्यटन स्थल यह स्थान अपनी नहरों और बैक वाटर पर्यटन के रूप में प्रसिद्ध है। करुमडी कुट्टन, कुमारकोडी मंदिर, कॉयर विलेज तथा अमृतपुरी यहाँ के प्रमुख पर्यटन स्थल हैं। यहाँ अगस्त मास के दूसरे शनिवार को आयोजित होने वाली नेहरू ट्रॉफी बोट रेस बहुत आकर्षक होती है। इसके अतिरिक्त समय-समय पर नावों की अन्य दौड़ें भी होती हैं। यहाँ से 47 किमी दूर कायाकुलम् में कृष्णपुरम् पैलेस केरल वास्तुकला का एक प्ररूपी नमूना है।

उपलब्ध सुविधाएँ इन स्थलों पर जाने के लिए एटीडीसी किल्लौं (कोल्लम्) तक की बैकवाटर यात्रा का प्रबंध करता है। ऐटीडीसी का कार्यालय बस स्टेशन के पास है। ठहरने के लिए यहाँ कई होटल तथा हाउस बोट भी हैं। हाउस बोटों में बैक वाटर की यात्रा भी की जा सकती है। ऐलिप्पि कोचीन, कोल्लम् कोट्टायम्, चंगनचेरी और चेंगन्नूर से जलमार्ग से जुड़ा हुआ है। निकटतम हवाई अड्डा 164 किमी दूर तिरुवनंतपुरम् है।

200. ऐरावीपुलम राष्ट्रीय उद्यान इस उद्यान की स्थापना नीलगिरि के थारों के संरक्षण के लिए की गई थी। 1978 में इसे राष्ट्रीय उद्यान का दर्जा दिया गया। उद्यान में कुछ पहाड़ियाँ और घाटियाँ हैं, जिन्हें देखने के लिए प्रकृति-प्रेमी वर्ष भर आते रहते हैं। इस उद्यान में नीलगिरि थार और नीलगिरि लंगूर को विशेष संरक्षण प्रदान किया गया है। इस उद्यान में शेर के भी

दर्शन होते हैं। इसके अतिरिक्त यहाँ तेंदुए, हाथी और बाघ भी देखने को मिलते हैं। यहाँ से निकटतम नगर 16 किमी दूर मन्नार तथा निकटतम हवाई अड्डा 145 किमी दूर कोचीन है।

201. कन्नानौर कृपया नौरा देखें।

202. कालिकट यह केरल में मालाबार तट पर एक मुख्य शहर है। आजकल इसे कोझीकोड कहते हैं। 20 मई, 1498 को भारत की खोज के बाद वास्कोडिगामा सर्वप्रथम यहीं के हिंदू राजा जमोरिन के समक्ष उपस्थित हुआ था। जमोरिन से तात्पर्य समुद्र का अधीश है। उसके आने के बाद यह एक अंतर्राष्ट्रीय बंदरगाह बन गया। गैबरेल ने यहाँ भारत की पहली पुर्तगाली फैक्टरी की स्थापना की। अंग्रेज कालिकट में सबसे पहले 1615 में आए थे। कालिकट विजयनगर साम्राज्य और मुगल शासन के दौरान व्यापार का एक प्रसिद्ध केंद्र था। यहाँ से पुर्तगाल, मलाया, बर्मा, चीन, साउदी अरबिया और दक्षिणी अफ्रीका के साथ व्यापार होता था। 1790-92 के मैसूर के तीसरे युद्ध के बाद टीपू सुल्तान और अंग्रेजों के बीच श्रीरंगापटना की संधि हुई थी, जिसकी अन्य शर्तों के अलावा टीपू सुल्तान ने अपना आधा राज्य अंग्रेजों को देना स्वीकार कर लिया था। इस भाग में कालिकट भी शामिल होने के कारण कालिकट पर 1792 से अंग्रेजों का शासन स्थापित हो गया।

पर्यटन स्थल कालिकट में ईस्ट हिल पर पुरातत्व विभाग का पाझासिराज संग्रहालय है, जहाँ प्राचीन सिक्के, सिस्ट समाधियाँ, डोलमेन समाधियाँ, मंदिरों के माडल आदि प्रदर्शित हैं। आर्ट गैलरी तथा कृष्णा मेनन संग्रहालय में अन्य कलाकारों के साथ-साथ राजा रवि वर्मा तथा राजा राजराजा की चित्रकारियाँ भी हैं। माननचिरा, बेपोर तथा बीच यहाँ के पर्यटन आकर्षण के अन्य केंद्र हैं।

यहाँ केटीडीसी के सूचना केंद्र केटीडीसी कॉर्नर, रेलवे स्टेशन तथा सिविल स्टेशन पर हैं। यहाँ ठहरने के लिए अनेक होटल हैं।

203. किल्लौं यह स्थान कोचीन के दक्षिण में एक बंदरगाह है। इसे कोल्लम् भी कहा जाता है। चोल राजा राजराजा ने इस पर चेरों के शासन काल के दौरान आक्रमण किया। किल्लौं मालाबार तट पर भारत की प्राचीनतम बंदरगाहों में से एक है। यहाँ से प्राचीन काल में फिनीशिया, ईरान, यूनान, रोम, अरब और चीन के साथ व्यापार होता था। चीन में सातवीं से दसवीं शताब्दी तक टांग वंश के शासन के दौरान यहाँ अपना व्यापारिक स्थल भी बना लिया था

और तेरहवीं शताब्दी के दौरान दोनों ने एक-दूसरे के यहाँ अपने राजदूत भी भेजे थे।

पर्यटन स्थल किल्लौं में अष्टमुदी झील पर्यटकों को अपनी तरफ बरबस आकर्षित करती है। इसके किनारे तीवैली महल और एक सरकारी आवास है। किल्लौं से लगभग तीन किमी दूर टंगेसरी का दीप घर और एक पुराना किला देखने लायक है। किल्लौं से एलिप्पि तक 80 किमी लंबी समुद्री पानी की झील और इसके किनारे-किनारे नारियल के पेड़ बहुत अच्छे लगते हैं। इस दृश्य का नजारा मोटर लांच में बैठकर देखा जा सकता है।

उपलब्ध सुविधाएँ किल्लौं देश के अन्य भागों से रेल तथा सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। निकटतम हवाई अड्डा 71 किमी दूर तिरुवनंतपुरम् है। यहाँ की जिला पर्यटन विकास परिषद (डीटीपीसी) बैक वाटर टूर तथा हाउस बोट से होलीडे पैकेज टूर संचालित करती है। परिषद के सूचना केंद्र बस स्टैंड पर तथा आसरामाम् गेस्ट हाउस कंप्लेक्स में हैं।

204. कोचीन यह केरल की एक प्रमुख बंदरगाह है। इसे कोच्चि भी कहा जाता है। प्रथम शताब्दी ई० में प्रथम चेर शासक पेरुनार और उसके बाद अद्वान, अद्वान द्वितीय, सेनगुट्टुवन तथा अन्य चेर शासकों ने यहाँ से शासन किया। पुर्तगालियों ने यहाँ 1498 से 1502 के मध्य एक कारखाना लगाया था। मुगल काल में यह उनके व्यापार का मुख्य केंद्र था। यहाँ से वे वस्तुएँ लिस्बन भेजते थे। भारत में पुर्तगाल के दूसरे गवर्नर ने यहाँ के राजा की अनुमति लेकर यहाँ एक किला बनवाया था। सतरहवीं शताब्दी में यह शहर पुर्तगाली बस्ती के रूप में उभर कर आ चुका था। कोचीन में फोर्ट कोचीन नाम की जगह भारत में प्राचीनतम यूरोपीय बस्ती है। फोर्ट कोचीन का निर्माण ऐल्बुकर्क ने 1503 ई० में कराया था। उसने यहाँ इस किले में 1510 में सेंट फ्रांसिस का चर्च बनवाया। यह भारत का सबसे पुराना यूरोपीय गिरजाघर है। वास्कोडिगामा यहाँ 1502 और 1524 ई० में आया था। उसकी मृत्यु भी यहीं हुई थी और उसे सेंट फ्रांसिस चर्च में दफनाया गया था। कोचीन के मट्टनचेरी सिनेगॉग में राजा भास्कर रवि वर्मा द्वारा चौथी शताब्दी ई० में भेंट की गई ताँबे की प्लेटें हैं, जिनमें यहाँ के यहूदियों को अंजुवन्नम् नामक गाँव दान में देने का वर्णन है।

पर्यटन स्थल अट्ठारहवीं शताब्दी के मध्य में एजकील राहाबी ने यहाँ एक घंटाघर बनवाया था। मट्टनचेरी में ही डच पैलेस नामक एक महल है, जिसका निर्माण पुर्तगालियों ने 1557 में करवाया था। कोचीन से कुछ ही दूरी पर

तिरुपुनीतुरा में हिंदू मंदिर और महल, मूलनतुरिती में सीरियाई चर्च (700 वर्ष पुराना) तथा नरक्कल में बेलियट्टापरमबिल मंदिर दर्शनीय हैं। यहाँ के अन्य दर्शनीय स्थलों में सांताक्रुज बैसीलिका चर्च, मछली पकड़ने के चीनी जाल, यहूदी सिनेगाग, यहूदी नगर, चेराई बीच, बोलघाट्टी द्वीप में डचों द्वारा 1744 में निर्मित बोलघाट्टी पैलेस, विलिंगडन द्वीप, वाइपीन द्वीप में लाइट हाउस, गुंडु द्वीप में पल्लीपुरम् फोर्ट, 1865 में कोच्चि के शाही परिवार द्वारा अपने निवास के लिए निर्मित तिरुपुनीतुरा में हिल पैलेस (जो आजकल एक संग्रहालय है), परीक्षित तंपूरन् संग्रहालय (एर्णाकुलम्) तथा एडापल्ली में केरल का ऐतिहासिक संग्रहालय प्रमुख हैं।

शहर से 20 किमी दूर अलुवा, कोडुंगलूर (50 किमी), अलापुजा (70 किमी), अतिरापल्ली जल-प्रपात (78 किमी), कुमारकोम बैकवाटर (88 किमी) तथा वझाचल दृश्यावली (90 किमी) भी दर्शनीय हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ कोचीन देश के अन्य भागों से वायु, रेल, सड़क तथा जल मार्ग से जुड़ा हुआ है। शहर के द्वीपों में आने-जाने के लिए फेरी सेवाएँ हैं। केटीडीसी शहर तथा आस-पास के स्थानों के लिए टूर संचालित करता है। कोचीन में आईटीडीसी का कार्यालय विलिंगडन रोड पर तथा केटीडीसी के कार्यालय पार्क एवेन्यू, शंखमुखम् बीच, एयरपोर्ट और मुख्य बोट जेट्टी पर हैं। कोचीन में वाटर स्कीइंग की भी सुविधा है। ठहरने के लिए यहाँ अनेक होटल हैं।

205. कोच्चि कृपया कोचीन देखें।

206. कोझिकोड कृपया कालिकट देखें।

207. कोल्लम् कृपया किल्लौं देखें।

208. कोवलम् यह स्थान केरल में तिरुवनंतपुरम् से 16 किमी दूर है। यह एक आकर्षक समुद्री तट है, जहाँ देशी-विदेशी पर्यटक काफी संख्या में आते रहते हैं। तिरुवनंतपुरम् का दर्शन कराने वाली केटीडीसी की बस यहाँ भी ले जाती है। यहाँ पाँच प्राकृतिक तट हैं, जिनमें लाइट हाउस बीच और समुद्र बीच प्रमुख हैं। ये दोनों तट बरसात के मौसम में और भी अच्छे लगते हैं।

ठहरने के लिए यहाँ कुछ लॉज तथा 'समुद्र' होटल हैं। विदेशियों के लिए धूप सेकने के लिए यहाँ समुद्र के किनारे एक अलग अहाता बनाया गया है, जहाँ वे शुल्क देकर चारपाइयों व कुर्सियों पर आराम कर सकते हैं। भारतीयों के इस अहाते में जाने पर पाबंदी है। यहाँ तैरने तथा मालिश कराने की भी

सुविधा है। यदि रात को कोवलम् न ठहरना हो, तो वापस त्रिवेंद्रम् भी जाया जा सकता है।

कोवलम् के आस-पास के दर्शनीय स्थलों में तिरुवनंतपुरम् के रास्ते में 6 किमी दूर तिरुवल्लम् बैक वाटर, 40 किमी दूर पद्मनाभपुरम् पैलेस, 46 किमी दूर नेयार बाँध, 54 किमी दूर वरक्कल बीच, 56 किमी दूर सुचिंद्रम् में स्थाणुमलय मंदिर, 64 किमी दूर पेप्पर वन्य जीव अभयारण्य, 70 किमी दूर कन्याकुमारी, 77 किमी दूर पानमुडी और 86 किमी दूर कोल्लम् बैक वाटर प्रमुख हैं।

209. टिंडिश इसे टोंडी भी कहा जाता है। इसका आधुनिक नाम पोन्नई है। संगम युग में यह पश्चिमी तट पर एक महत्त्वपूर्ण बंदरगाह थी। यहाँ से उस काल के व्यापार की जानकारी के लिए कृपया बकारे देखें।

210. टोंडी कृपया टिंडिश देखें।

211. तिरुवनंतपुरम् कृपया त्रिवेंदम् देखें।

212. त्रावणकोर—ऐतिहासिक महत्त्व विजयनगर के शासक सदाशिव राय (1542-72) ने 1542 में त्रावणकोर के शासक को दंडित करने के लिए सेना भेजी थी। मदुरा के पांड्य राजा मारवर्मा कुलशेखर ने त्रावणकोर पर आक्रमण किया था। अट्ठारहवीं सदी में यहाँ का राजा मार्तंड वर्मा (1729-58) मालाबार तट को अपने अधीन लाने का सपना देख रहा था। उसके बाद उसके उत्तराधिकारी भतीजे रामवर्मा ने महसूस किया कि मैसूर राज्य की बढ़ती हुई शक्ति से उसके राज्य को खतरा पैदा हो रहा है। अतः उसने दूसरे मैसूर युद्ध में अंग्रेजों की सहायता की। 1788 में उसे अंग्रेजों से दो बटालियनें अपने खर्चे पर रखने को मिलीं, जिनसे वह टीपू से अपनी रक्षा कर सकता था। इस प्रकार अपने आपको सशक्त पाकर उसने मैसूर के जागीरदारों को उकसाने का भी प्रयत्न किया। 1792 की मंगलौर की संधि में उसे अंग्रेजों के सहायक राज्य के रूप में मान्यता मिली।

213. त्रिचूर यह स्थान आलवाय के पास है। यहाँ एक चिड़ियाघर (जिसमें एक स्नेक पार्क भी है), टाउन हाल में कला दीर्घा, एक पुराना महल और एक पुराना किला है। यहाँ अप्रैल-मई के दौरान पुरम् त्यौहार बड़ी धूम-धाम से मनाया जाता है। यहाँ ठहरने के लिए होटलों के अलावा एक टूरिस्ट बंगला भी है।

214. त्रिवेंद्रम् इसका आधुनिक नाम तिरुवनंतपुरम् है। विष्णु को

समर्पित यहाँ का पद्मनाभस्वामी मंदिर विशेष रूप से प्रसिद्ध है। इस मंदिर का गोपुरम् (प्रवेश द्वार) सात मंजिला है। मंदिर के कुलशेखर मंडप में और दीवारों पर हजारों भित्तिचित्र बने हैं। केरल और द्रविड़ शैली में बने इस मंदिर में केवल भारतीय ही जा सकते हैं। त्रिवेंद्रम् चेर राजाओं का मुख्य आधार था और मालाबार तट पर एक समुद्री बंदरगाह थी। चोल राजा राजराजा (985-1013) ने त्रिवेंद्रम् पर आक्रमण करके चेर राजाओं के युद्ध-पोतों को नष्ट कर दिया था।

पर्यटन स्थल पद्मनाभस्वामी मंदिर के अलावा त्रिवेंद्रम् में चित्रालयम् (कला दीर्घा), चिड़ियाघर, मछलीघर तथा त्रावणकोर-कोचीन के महाराजा का कोडियार महल दर्शनीय है। चित्रालयम् में राजपूत, मुगल तथा तंजौर शैली के चित्र; अजंता व सिगिरिया के भित्तिचित्रों की नकलें; चीन, जापान, तिब्बत और बाली की कलाकारी तथा आधुनिक चित्रकारों के चित्र लगे हैं। त्रिवेंद्रम् म्यूजम में स्थानीय कला और हस्त-शिल्प के नमूने हैं। इनके अतिरिक्त यहाँ नेपियर संग्रहालय, कनककुननु पैलेस, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संग्रहालय, महाराजा स्वाति तिरुमल बलराम वर्मा द्वारा बनवाया गया महल कुटीरमल्लिका (पुटेमल्लिका) (जिसे अब संग्रहालय के रूप में इस्तेमाल किया जा रहा है), शंखमुखम् बीच, बेली टूरिस्ट विलेज तथा अक्कुलम् बोट क्लब भी आकर्षण के केंद्र हैं। त्रिवेंद्रम् से केवल दस किमी दूर भारत का प्रसिद्ध समुद्री तट कोवलम् बीच है।

उपलब्ध सुविधाएँ यह शहर देश के अन्य शहरों से वायु, रेल तथा सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। स्थानीय यातायात के लिए यहाँ बसें, टैक्सियाँ, आटो तथा रिक्शे मिलते हैं। ठहरने के लिए सस्ती दरों के अनेक होटल हैं। यहाँ होटल चेतराम, तंपानूर के पास केटीडीसी का टूरिस्ट स्वागत केंद्र है, जो तिरुवनंतपुरम् और आस-पास के स्थानों के टूर संचालित करता है। इनके अतिरिक्त पार्क व्यू, तंपानूर रेलवे तथा बस स्टेशन, एयरपोर्ट व कोवलम् में पर्यटक सूचक केंद्र है। आईटीडीसी का पर्यटक सूचना केंद्र हवाई अड्डे पर है।

215. नेयार अभयारण्य यह विहार केरल के दक्षिण में कट्टकंड से दस किमी दूर है। यहाँ अजगर, जल बिलाव, जलगोह, घड़ियाल, साँप आदि जल जीव, शेर सफारी पार्क, हरिण पार्क तथा जंगली सूअर, सिंहपुच्छ बंदर, नीलगिरि लंगूर, नीलगिरि थार, तेंदुए और गौर अधिक संख्या में देखने को मिलते हैं।

216. नेलसिंडी यह स्थान कोट्टायम के निकट है। संगम युग में यह

पश्चिमी तट पर पांड्य राजाओं की एक प्रमुख बंदरगाह थी। इस बंदरगाह से पटसन के कपड़े और सुरमे का निर्यात किया जाता था। यहाँ से उन दिनों के व्यापार की अधिक जानकारी के लिए कृपया बकारे देखें।

217. नौरा इसका आधुनिक नाम कन्नानौर है। कालिकट के बाद वास्कोडिगामा नौरा में ही 1498 ई० में आए थे। 1501-02 ई० में भारत दुबारा आने के बाद वास्कोडिगामा ने यहाँ एक कारखाना लगाया था। बाद में पुर्तगालियों ने यहाँ एक किला बनाकर इसे अपने व्यापार का एक केंद्र बना लिया था। यहाँ से रोम को वस्तुएँ भेजी जाती थीं। 1887 तक यह शहर पुर्तगालियों की राजधानी रहा। संगम युग के दौरान भी यह व्यापार का एक बड़ा केंद्र था। यहाँ से उस काल के व्यापार के लिए कृपया बकारे देखें।

218. परमबीकुलम् अभयारण्य यह अभयारण्य पोल्लाकुची से 40 किमी दूर है। इसकी स्थापना 1962 में की गई थी। यहाँ सांभर, सिंहपुच्छ बंदर, गौर, चीतल, घड़ियाल, नीलगिरि थार, तेंदुए और हाथी देखने को मिलते हैं। यहाँ जाने का उपयुक्त समय फरवरी से मई तक का होता है। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन और हवाई अड्डा 100 किमी दूर कोयंबटूर है।

219. पानमुडी यह केरल का एक रमणीक हिल स्टेशन है। पानमुडी तिरुवनंतपुरम् से 61 किमी और कोवलम् से 77 किमी दूर है। भारत का यही एकमात्र ऐसा हिल स्टेशन है, जहाँ से समुद्र भी दिखाई देता है। यहाँ के मिर्च-मसालों की खेती, चाय के बाग, नारियल के पेड़, बहते हुए झरने और दक्षिण की भीष्ण गर्मी में सुहावना मौसम इसे वास्तविक रूप में हिल स्टेशन का दर्जा देते हैं। हिल स्टेशन के पास स्थित एक हरिण पार्क और गोल्डन वैली इस स्थान की यात्रा को और स्मरणीय बना देते हैं।

220. पेरियार राष्ट्रीय उद्यान यह उद्यान केरल का प्रमुख राष्ट्रीय उद्यान है और बाघ संरक्षण का केंद्र है। यह पश्चिमी घाट के छोटे-छोटे पहाड़ों पर बनाया गया है। यह उद्यान अन्य उद्यानों की अपेक्षा अधिक आकर्षक है। इसमें 26 वर्ग किमी क्षेत्रफल की एक बड़ी झील तथा पहाड़ियों की घाटी है, जिस कारण यहाँ जल तथा जंगल दोनों में रहने वाले जीव देखने को मिलते हैं। भारत के जंगली हाथियों को यहाँ अधिक निकटता से देखा जा सकता है। ये हाथी गोताखोरी में बहुत कुशल हैं और काफी देर तक पानी में डूबे रहते हैं। यहाँ तगड़े-तगड़े सांभर हरिणों को भी विचरण करते हुए और ऊद बिलावों को

मछलियाँ खाते हुए देखा जा सकता है। पक्षियों में यहाँ बगुले, डालटर, कटफोड़े एवम् धनेश तथा जंगली जानवरों में भालू, चीतल, बाघ आदि हैं। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय मई से अक्तूबर तक का होता है। यहाँ से निकटतम शहर चार किमी दूर कुंबली है। निकटतम रेलवे स्टेशन कोट्टायम (114 किमी) और हवाई अड्डा कोचीन (190 किमी) है।

ठहरने के लिए यहाँ एक आकर्षक अतिथि गृह है, जो कभी त्रावणकौर के राजा का ग्रीष्मकालीन आवास होता था। यहाँ हाथियों के झुंडों और अन्य जानवरों को वृक्षों पर विशेष रूप से बनाए गए मचानों पर अथवा नावों में बैठकर देखने की सुविधा है। मछली पकड़ने के लिए अस्थायी लाइसेंस देने की भी सुविधा है।

221. पोन्नई कृपया टिंडिश देखें।

222. पोरक्काड कृपया बकारे देखें।

223. पोर्टलाम यहाँ प्राचीन काल से ही पूर्वी तट पर एक बंदरगाह है। यहाँ की गई खुदाइयों में महापाषाण काल की कब्रें पाई गई हैं।

224. बंदर संगम साहित्य में वर्णन है कि संगम काल में बंदर चेर राज्य की एक प्रमुख बंदरगाह थी।

225. बकारे इसका आधुनिक नाम पोरक्काड है। संगम युग के दौरान यह पश्चिमी तट पर एक महत्त्वपूर्ण बंदरगाह थी। पेरिप्लस (75 ई०) के लेखक ने लिखा है कि उन दिनों इस बंदरगाह पर बड़े-बड़े जहाज आते थे, जो काफी मात्रा में सिक्के; कुछ कम मात्रा में पुखराज और महीन कपड़े; चित्रित कपड़े, सुरमा, मूँगे, कच्चा काँच, टिन, सीसा; बेरीगाजा जितनी मात्रा में शराब; मनःशिला और हरताल तथा नाविकों के लिए पर्याप्त मात्रा में गेहूँ लाते थे। वापसी में वे मिर्च, सुंदर मोती, हाथी दाँत, रेशमी कपड़ा, गंगा के क्षेत्र से जटामांसी, अंदरूनी इलाकों से मालाबाथरम, हर तरह के पारदर्शी नग (मुख्य रूप से कोयंबटूर से वैदूर्य अर्थात् लहसुनिया पत्थर, जिसकी रोम में हमेशा माँग बनी रहती थी), हीरे, नीलम और कच्छप खोल ले जाते थे। हिप्पालस द्वारा छोटी नाव द्वारा समुद्री तट के साथ का रास्ता अपनाने की बजाय मानसून के दौरान भी बड़े जहाज में सीधे रास्ते से व्यापार की संभावना खोज लेने के बाद यह व्यापार और बढ़ गया।

226. मरंदाई—ऐतिहासिक महत्त्व उदीयंजेराल ने यहाँ 130 ई०

में चेर वंश के शासन की नींव डाली। उसके पुत्र नेडुंजेराल आदन ने मालाबार तट के कुछ स्थानीय शत्रुओं को जल-युद्ध में हराया। उसने कुछ यवन व्यापारियों को भी बंदी बनाया, परंतु उनसे काफी धन ऐंठने के बाद उन्हें छोड़ दिया। उसने बहुत से युद्ध लड़े। उसने सात-क्राउनधारी राजाओं को हराकर इमायवरंबम् (हिमालय की सीमा तक का शासक) विरुद धारण किया। उसने मरंदाई को अपनी राजधानी बनाया। उसने अपने समकालीन चोल राजा से युद्ध किया, जिसमें दोनों मारे गए। आदन के छोटे भाई कुट्टुवन ने कोंगु जीतकर चेर साम्राज्य को कुछ समय के लिए पश्चिमी तट से पूर्वी तट तक बढ़ा दिया। उसके एक पुत्र ने टगादुर के आदिगईमान सरदार अंजी को हराया और टुल्लु प्रदेश में मालाबार के उत्तरी इलाकों के शासक नन्नन पर आक्रमण किया। वह भी सात-क्राउनधारी राजा था। आदन का दूसरा पुत्र सेनगुट्टुवन था। उसके समकालीन कवि परनार ने अपने काव्य में लिखा है कि उसने माहुर के सरदार को हराया और समुद्र में अपनी शक्ति का विस्तार किया।

संगम युग के काव्य पदीर्रुप्पट्टु में उदीयंजेराल वंश की तीन पीढ़ियों के पाँच शासकों द्वारा 201 वर्ष तक तथा इसी वंश की दूसरी शाखा के तीन अन्य राजाओं द्वारा 58 और वर्षों तक शासन करने का वर्णन है।

227. वरक्कल यह शहर तिरुवनंतपुरम् के 32 मील उत्तर में है। **पर्यटन स्थल** अपने 2000 वर्ष पुराने जनार्दन मंदिर के कारण यह हिंदुओं का एक धार्मिक स्थान बन गया है। वरक्कल हिंदू धर्म के महान समाज सुधारक नारायण गुरू स्वामी के समाधि स्थल के कारण भी जाना जाता है। उन्होंने यहाँ 1928 में समाधि ली थी। उनका एक ही नारा था — "एक जाति, एक धर्म, एक ईश्वर।" यहाँ से पास में ही अंजेगो नामक ऐतिहासिक स्थल है, जिसे ईस्ट इंडिया कंपनी ने अपना पहला व्यापारिक स्थल बनाया था। यहाँ उन द्वारा सतरहवीं शताब्दी में बनाए गए किले के ध्वंसावशेष अब भी देखे जा सकते हैं। यहाँ प्राकृतिक दृश्य बहुत ही सुंदर हैं। पापनाशम् बीच में पहाड़ियों से झरता खनिज जल इसमें चार चाँद लगा देता है।

228. साईलेंट वैल्ली राष्ट्रीय पार्क इस पार्क की स्थापना 1984 में की गई थी। यह तमिल नाडु की सीमा पर स्थित है। यहाँ लंबी पूँछ वाले शेर, हाथी, बाघ तथा तरह-तरह के अन्य पशु-पक्षी देखने को मिलते हैं। यहाँ से निकटतम नगर मन्नरक्काड 32 किमी, रेलवे स्टेशन कालधार 75 किमी और हवाई अड्डा कोयंबटूर 120 किमी दूर है।

❑❑❑

गुजरात

ऐतिहासिक विवरण

गुजरात का इतिहास 2000 ई०पू० से आरंभ होता है। भगवान श्री कृष्ण ने मथुरा छोड़ने के बाद आधुनिक गुजरात के द्वारिका नामक स्थान को ही अपनी नई कर्मभूमि के रूप में चुना था। गुजरात में मोर्यों, गुप्तों, प्रतिहारों तथा चालुक्यों का शासन रहा। चालुक्य (सोलंकी) राजा भीम के काल में 1025 ई० में महमूद गजनी ने यहाँ के सोमनाथ मंदिर पर आक्रमण करके मंदिर को ध्वस्त कर दिया था तथा उसका सारा खजाना लूट लिया था। उसके बाद गुजरात पर मुगलों, मराठों तथा अंग्रेजों का राज्य रहा। गुजरात पहले बंबई राज्य का हिस्सा था, जिसमें आधुनिक गुजरात और महाराष्ट्र शामिल थे। 1 मई, 1960 को तत्कालीन
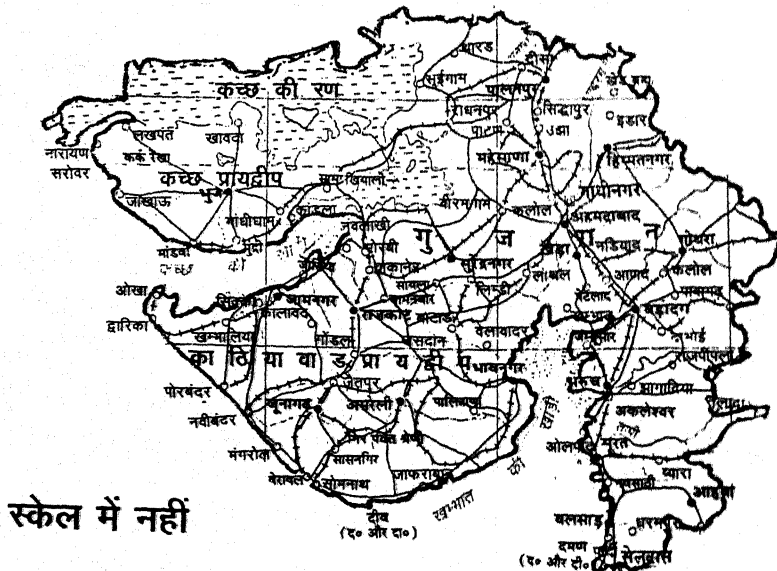
सौराष्ट्र राज्य, कच्छ संघ शासित क्षेत्र तथा ब्रिटिश प्रभाव वाले गुजराती क्षेत्रों को बंबई राज्य से अलग करके नया गुजरात राज्य बना दिया गया।

राज्य का कुल क्षेत्रफल 196024 वर्ग किमी है। राज्य में जनसंख्या का घनत्व 211 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी और साक्षरता दर 61% है। राज्य में कुल 19 जिले हैं, जिनकी प्रमुख भाषा गुजराती है।

उत्सव

गुजरात में तर्णतार गाँव में भाद्र मास में शिव मेला, माधवपुर में चैत्र मास में माधवराय मेला तथा बनासकाँठा जिले में अंबाजी मेला लगता है। द्वारिका में भगवान श्री कृष्ण का जन्म दिन बड़े उत्साह के साथ मनाया जाता है। मकर संक्रांति, नवरात्रि, डांगी दरबार, शामलाजी मेला, भवनाथ मेला आदि राज्य के अन्य प्रमुख उत्सव हैं। इनके दिवाली के दसवें दिन देव दीवाली और आश्विन मास के पहले 9 दिनों तक नवरात्रि त्योहार भी मनाए जाते हैं। राज्य में लगभग 2000 मेले लगते हैं, जिनमें से 25 में लगभग एक-एक लाख लोग जुटते हैं। गर्भा राज्य का प्रमुख लोक नृत्य है।

नृत्य

गुजरात के प्रमुख नृत्य डांडिया रास और गर्भा है। डांडिया नृत्य बड़ौदा के पास गुजरात पहाड़ियों के मेड़ों द्वारा किया जाता है। इस नृत्य में ढोल, खड़ताल और बाँसुरी का प्रयोग किया जाता है। इनके अतिरिक्त प्रदेश में कहाड़िया नृत्य भी प्रचलित है, जिसमें कलाबाजी का कौशल दिखाया जाता है।

पर्यटन

द्वारिका, सोमनाथ, पालिताणा, पावागढ़, अंबाजी, भाद्रेश्वर, शामलाजी, तारंग, गिरनार, पोरबंदर, पाटण, सिद्धपुर धुमली, दाभोई, वाडनगर, माढ़ेड़ा, लोठल, अहमदाबाद, चोरवाड़, उभाड़त, तीठल आदि राज्य के प्रमुख पर्यटन स्थल हैं। राज्य में 600 पुरातात्विक स्थल, 85 ऐतिहासिक स्थल, किले और महल, 22 धार्मिक और राष्ट्रीय महत्त्व के स्थल, 24 राष्ट्रीय पार्क एवं पक्षी विहार तथा देश का सबसे बड़ा समुद्री तट है। राज्य में 60 सरकारी एवं गैर-सरकारी संग्रहालय हैं, जिनमें कला की अदभुत चीजें देखी जा सकती हैं।

229. अनहिलवाड़ा गुजरात में स्थित यह शहर प्राचीन गुजरात तथा चालुक्य राजाओं की राजधानी थी। यह आजकल पाटण कहलाता है।

ऐतिहासिक महत्त्व चावड़ा वंश के जयशेखर के पुत्र वनराज ने सर्वप्रथम

अणहिलपाटन या अणहिलपत्तन में चालुक्य वंश की स्थापना करके इसे 745 में अपनी राजधानी बनाया। उसके वंशज यहाँ से 961 ई० तक राज्य करते रहे। चालुक्य राजा मूलराज प्रथम (942-95) ने गुजरात के एक बड़े हिस्से को जीतकर अनहिलवाड़ा को राजधानी बनाया। एक समय चेदि के कलचूरी राजा लक्ष्मणराज ने उसे हराया। यह शहर चालुक्य और परमार राजाओं के मध्य कई बार झगड़े का कारण रहा, जिसके परिणामस्वरूप इस पर स्वामित्व बार-बार बदलता रहा। मूलराज के बाद चामुंडराज ने 996 से 1010 तक, दुर्लभ राज ने 1010 से 1022 तक और भीम प्रथम ने 1022 से 1064 तक राज्य किया। 1025 में अनहिलवाड़ा पर महमूद गजनी ने आक्रमण किया। तब भीम प्रथम कच्छ भाग गया। जिस समय भीम सिंध विजय के लिए गया हुआ था, उसी समय मांडू के परमार राजा भोज के सेनापति कुलचंद्र ने अनहिलवाड़ा को खूब लूटा। बाद में उसने परमार शासक को हराकर उससे चित्रकूट छीन लिया। भीम के बाद कर्ण (1064-94) और जयसिंह सिद्धराज (1094-1143) राजा बने। कर्ण ने बहुत से स्मारक बनवाए। उसके समय में नाडोल के चौहानों ने उससे अनहिलवाड़ा छीन लिया। जयसिंह सिद्धराज ने सोमनाथ का यात्री कर हटा दिया। उसने नाडोल के चौहान जोजल्ल के सामंत आशाराज को हराकर अनहिलवाड़ा पर पुनः कब्जा किया। उसने मालवा के नरवर्मा तथा उसके पुत्र यशोवर्मा को हराकर कुछ समय तक मालवा पर भी कब्जा किया। उसने शाकंभरी के चौहान अर्णोराज को भी हराया, परंतु बाद में उससे अपनी पुत्री काँचन देवी का विवाह करके उससे मित्रता कर ली। उसने चंदेल शासक मदनवर्मा से भिलसा छीना और कल्याणी के चालुक्य राजा विक्रमादित्य चतुर्थ को परास्त किया। अपने शासन के अंतिम दिनों में उसने अपने मंत्री उदयन के लड़के बाहड़ को अपना उत्तराधिकारी बनाया, परंतु जयसिंह की मृत्यु के बाद कुमारपाल ने उसे हटाकर शासन पर अधिकार कर लिया। कुमारपाल (1143-72) ने कोंकण के राजा मल्लिकार्जुन, अजमेर के राजा अर्णोराज और सौराष्ट्र के अनेक राजाओं को हराया। उसने सोमनाथ का मंदिर फिर से बनवाया। कुमारपाल के बाद उसका भतीजा अजयपाल राजा बना। 1176 में उसकी हत्या हो गई। तब उसकी पत्नी ने उसके पुत्र मूलराज द्वितीय की अभिभाविका के रूप में शासन किया। उसने 1178 में शिहाबुद्दीन मुहम्मद गौरी की सेना को आबू के निकट हराया। इस लड़ाई के बाद गौरी के मुट्ठी भर सैनिक ही गजनी लौट सके। भारत में यह उसकी पहली हार थी। 1178 में भीम द्वितीय राजा बना। वह एक कमजोर शासक था। उसने 1196 में कुतुबुद्दीन ऐबक के विरुद्ध अजमेर के राजपूतों की सहायता की थी। कुतुबुद्दीन ऐबक ने 1197 में अनहिलवाड़ा पर आक्रमण करके राजा भीम को

हराया, परंतु दिल्ली से दूर होने के कारण उसने गुजरात को अपने साम्राज्य में नहीं मिलाया। भीम द्वितीय काल में बघेल सामंत लवण प्रसाद ने शक्ति अपने हाथ में ले ली। उसके काल में ही मांडू के परमार राजा सुमटवर्मा (1193-1218) ने अनहिलवाड़ा पर आक्रमण किया। भीम द्वितीय की मृत्यु के बाद 1232 में लवण प्रसाद का पुत्र वीरध्वल राजा बना। उसने दिल्ली के बहरामशाह को हराया। उसके पुत्र विशालदेव (1243-61) ने अपनी प्रजा की दुर्भिक्ष से रक्षा की। राय कर्णदेव के शासन काल में अलाउद्दीन खिलजी ने 1297 में अनहिलवाड़ा पर आक्रमण किया। कर्णदेव ने दक्षिण की तरफ भागकर अपनी पुत्री देवल देवी सहित देवगिरि के राजा रामचंद्र देव के यहाँ शरण ली। मुगल सेना ने गुजरात के कुछ भाग में लूट-पाट की। यहीं पर नसरत खाँ ने मलिक काफूर नाम का एक हिजड़ा दास खरीदा, जो बाद में अलाउद्दीन खिलजी का विश्वासपात्र और एक सफल सेनानायक बना। 1391 में यहाँ दिल्ली सल्तनत के सूबेदार के रूप में जाफर खाँ को नियुक्त किया गया था। 1398 में तैमूरलंग के आक्रमण के बाद दिल्ली सल्तनत की शक्ति क्षीण हो गई थी। 1401 ई० में जाफर खाँ ने सल्तनत की अधीनता त्याग दी। उसने अपने पुत्र तातार खाँ को नासिरुद्दीन मुहम्मद शाह की पदवी देकर सिंहासन सौंप दिया। परंतु 1407 ई० में उसकी जहर देकर हत्या कर दी गई और जाफर खाँ ने स्वयं मुजफ्फरशाह के नाम से फिर शासन संभाला। 1411 में उसके पुत्र अल्प खाँ ने उसे जहर देकर मार डाला और स्वयं अहमदशाह के नाम से तख्त पर आसीन हो गया। उसने असावल के निकट अहमदाबाद नाम का नया नगर बसाया और संभवतः उसे अपनी राजधानी भी बनाया।

अनहिलवाड़ा व्यापारियों के लिए एक अच्छा स्थान था।

230. अमरेली यह स्थान काठियावाड़ क्षेत्र में है।

पुरातात्विक महत्त्व यह महापाषाण काल का एक स्थल था। यहाँ श्री ऐस. आर. राव द्वारा 1953 में करवाई गई खुदाई में मिली कब्रों में कई प्रकार की चीजें पाई गई हैं। अमरेली की पिट सर्किल कब्रों में लाल रंग की पालिश किए हुए बर्तन, बाणों की लोहे की नोंकें, चाकू, चूड़ियाँ और आदमी की कुछ जली हुई हड्डियाँ पाई गई हैं। यहाँ शवों के अवशेष सुरक्षित रखने के लिए पत्थर की समाधियाँ बनाने के पहले प्रमाण मिले हैं।

231. अहमदाबाद यह गुजरात में साबरमती नदी के किनारे स्थित है। किसी समय इसका नाम कर्णवती भी होता था।

ऐतिहासिक महत्त्व

अहमदाबाद की झूलती मीनारें

अनहिलवाड़ा के शासक अहमदशाह (1411-41) ने इसे 1411-12 में बसाकर अपनी नई राजधानी बनाया। वह एक पराक्रमी राजा और अच्छा प्रशासक था। अपने शासन काल में उसने कभी पराजय का मुँह नहीं देखा। उसके पौत्र महमूद बेगड़ा ने 1459 से 1511 तक यहाँ से शासन किया। महमूद बेगड़ा एक प्रतापी राजा था। उसने चंपानेर के किले, जूनागढ़, कच्छ, अहमदनगर के निजामशाही सुल्तान तथा अनेक नरेशों को हराया। उसने पुर्तगालियों के खिलाफ तुर्की की आटोमन सल्तनत से संधि करके 1507 में बंबई के दक्षिण में चोल के पास एक पुर्तगाली जहाज को डुबो दिया, परंतु बाद में दीव (जो उस समय गुजरात का एक भाग था) के पास हुए एक युद्ध में महमूद बेगड़ा का एक जहाजी बेड़ा नष्ट कर दिया गया। बहादुरशाह इस वंश का एक और प्रसिद्ध शासक था। उसने 1526 से 1537 तक राज्य किया। उसने 1531 में मालवा को जीतकर गुजरात राज्य में मिला लिया और 1534 में चित्तौड़ पर आक्रमण किया। 1535 में उसे हुमायूँ ने हरा दिया। बहादुरशाह ने मालवा में शरण ली। हुमायूँ ने चंपानेर के किले पर अधिकार कर लिया। परंतु शेरखाँ की गतिविधियों के कारण हुमायूँ को गुजरात छोड़कर शीघ्र वापस जाना पड़ा और
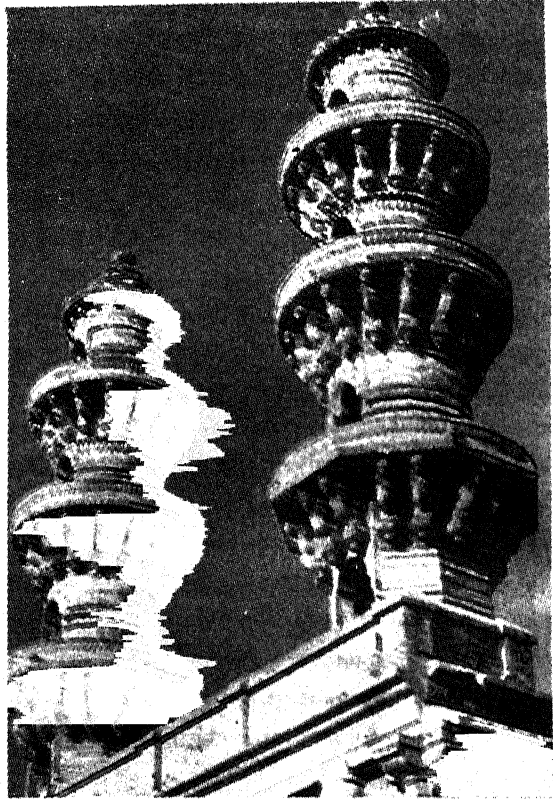
बहादुरशाह को गुजरात तथा चंपानेर का किला फिर मिल गया। 1537 ई० में उसे पुर्तगालियों से संधि करने के लिए उनके जहाज पर जाना पड़ा। ऐसा माना जाता है कि रास्ते में ही उसे मार दिया गया। 1572 ई० में मुजफ्फरशाह तृतीय ने अहमदाबाद अकबर को सौंप दिया था, जिसने गुजरात को अपने राज्य में मिला लिया। उन दिनों अहमदाबाद विश्व के सबसे अच्छे शहरों में से एक था। छह महीनों के बाद ही अहमदाबाद में पुनः विद्रोह हो गया। अकबर ने फतेहपुर से अहमदाबाद तक 600 मील की दूरी केवल 9 दिनों में तय करके वहाँ विद्रोह को दबा दिया। मिर्जा कोका को गुजरात का गवर्नर बनाकर वह अक्तूबर, 1573 में वापस लौट आया। शाहजहाँ ने अपने विवाह के पश्चात् कुछ वर्ष यहाँ बिताए थे। प्रथम असहयोग आंदोलन के दौरान दिसंबर, 1921 में अहमदाबाद में आयोजित कांग्रेस के अधिवेशन में महात्मा गाँधी को आंदोलन चलाने और आवश्यकता होने पर अवज्ञा आंदोलन चलाने का अधिकार दिया गया। 1915 में महात्मा गाँधी ने यहाँ साबरमती आश्रम स्थापित किया। 12 मार्च, 1930 को उन्होंने यहीं से डांडी यात्रा आरंभ की। सी आर दास, विट्ठल भाई पटेल और मोती लाल नेहरू ने ब्रिटिश सरकार को राजनैतिक रूप से निर्बल बनाने के लिए मार्च, 1923 में स्वराज पार्टी का गठन यहीं किया था। अक्तूबर, 1946 में यहाँ बड़े स्तर पर सांप्रदायिक दंगे हुए। अहमदाबाद वस्त्र-निर्माण और वाणिज्य का एक बड़ा केंद्र होने के कारण इसे भारत का मानचेस्टर भी कहा जाता है।

पर्यटन स्थल यहाँ राजपुर बीबी और सीदी बशीर की मस्जिदों में बनी झूलती मीनारें मध्यकालीन स्थापत्य कला की अदभुत नमूना हैं। इनमें से यदि एक को हिलाएँ, तो दूसरी अपने आप हिलने लगती है। यहाँ सुल्तान कुतुबुद्दीन ने 1415 ई० में काँकरिया झील, सुल्तान अहमदशाह ने 1423 ई० में जुम्मा मस्जिद और शेरशाह शूरी ने जामा मस्जिद का निर्माण कराया। शेरशाह का मकबरा यहाँ माणक चौक पर देखा जा सकता है। यहीं पर जूनागढ़ के अंतिम राजा की समाधि है। उसे जबरदस्ती मुस्लमान बनाए जाने के दुख में उसकी मृत्यु हो गई थी। राजा वीर सिंह की रानी रूपाबाई ने यहाँ से 19 किमी दूर अदलाज गाँव में 1499 में एक बड़े तथा कलात्मक कुएँ का निर्माण करवाया था। इस कुएँ में पानी की सतह तक पहुँचने के लिए सीढ़ियाँ बनी हुई हैं तथा कई मंजिलें हैं। ऐसे ही कुएँ आसवी दादाहरि और माता भवानी में हैं, जहाँ कुओं के साथ ही दादाहरि की मस्जिद है, जो अहमदाबाद की अच्छी इमारतों में से एक है। इसी प्रकार का कुआँ लखनऊ के बड़े इमामबाड़े में भी देखने को मिलता है। अहमदाबाद से 32 किमी दूर कुछ ही वर्ष पहले विकसित स्वामी नारायण संप्रदाय का अक्षर धाम

मंदिर स्थापत्य कला की दृष्टि से एक अजूबा है। यह एक विशाल, भव्य, सुंदर, कीमती, शिक्षाप्रद, मनोरंजक तथा आकर्षक मंदिर है, जो भारत में अपनी तरह का एक ही है। यदि अहमदाबाद जाकर इस मंदिर को न देखा, तो समझिए कि आपने अहमदाबाद में कुछ नहीं देखा। इस मंदिर के अलावा शहर में कुछ पुराने मंदिर भी हैं। इनमें सेठ हठी सिंह का शिव मंदिर, लक्ष्मी नारायण मंदिर तथा जैन मंदिर प्रसिद्ध हैं। अहमदाबाद में अहमदशाह और उसकी रानियों का सुंदर मकबरा, हैबत खाँ का मकबरा, अहमदशाह के दास सीदी सैयद का मकबरा और बेगड़ में सुल्तान महमूद बेगड़ा के आध्यात्मिक गुरु शाह आलम का मकबरा, रानी रूपमती की कब्र, साबरमती आश्रम, रानी क्षिप्री की मस्जिद तथा माता भवानी मंदिर भी देखने लायक हैं। सीदी सैयद की मस्जिद में पत्थर तराश कर भारत में अपनी तरह की सबसे अलग और उत्तम जालियाँ हैं। ये जालियाँ आपस में गुँथी हुई पेड़ की शाखाओं के रूप में हैं और अपनी उत्कृष्टता का प्रभाव छोड़े बिना नहीं रहतीं। अहमदशाह ने यहाँ तीन दरवाजे भी बनवाए थे। यहाँ के भाद्र किले का नाम अनहिलवाड़ा के हिंदू किले के नाम पर रखा गया है। अहमदाबाद में ली कार्बूजियर द्वारा डिजाइन किया गया संस्कार केंद्र, म्यूनिसिपल संग्रहालय, टेक्सटाइल संग्रहालय, साबरमती में गाँधी स्मारक संग्रहालय, श्रेयस लोक कला संग्रहालय, ट्राइबल म्यूजम तथा ऐल डी इंस्टीच्यूट ऑफ इंडोलोजी भी दर्शनीय हैं।

अहमदाबाद के आस-पास के दर्शनीय स्थानों में सतपुड़ा की पहाड़ियाँ और 52 किमी दूर महालबर्दी पाड़ा का वन्य जीव अभयारण्य तथा गिरा जल-प्रपात प्रमुख हैं। यहाँ के लिए सरकारी तथा गैर-सरकारी बसें मिल जाती हैं। शहर से 87 किमी दूर सिंधु घाटी सभ्यता का प्रमुख स्थल लोठल और 119 किमी दूर माढेड़ा का सूर्य मंदिर है। यह मंदिर वास्तुकला के सर्वोत्तम नमूनों में से एक है। अहमदाबाद में गुप्त शासक कुमारगुप्त प्रथम (414-55) के सिक्के मिले हैं।

व्यापार एवं वाणिज्य प्राचीन काल में अहमदाबाद सूती तथा रेशमी वस्त्रों के लिए प्रसिद्ध था। इसकी पटोला रेशम हालैंड, जापान, फिलिपीन, बोर्निया, जावा, सुमात्रा आदि तक निर्यात की जाती थी। यहाँ सुनार और हस्तशिल्पी काफी संख्या में रहते थे। कारीगरों ने अपने व्यापार संघ बनाए हुए थे।

उपलब्ध सुविधाएँ अहमदाबाद देश के अन्य शहरों से वायु, रेल तथा सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। स्थानीय भ्रमण के लिए यहाँ बसें, रिक्शे, टैक्सियाँ आदि मिल जाते हैं। एटीडीसी अहमदाबाद दर्शन के लिए लाल दरवाजा से प्रतिदिन टूरिस्ट बसें चलाता है। वहीं इसका पर्यटन सूचना कार्यालय भी है। गर्मियों के

मौसम को छोड़कर यहाँ वर्ष में कभी भी जाया जा सकता है।

232. ओडुंबर कृपया कच्छ देखें।

233. कच्छ इसका पुराना नाम ओडुंबर था। प्राचीन काल में कच्छेश्वर अथवा कोटेश्वर इसकी राजधानी थी।

ऐतिहासिक महत्त्व 130 से 150 ई० तक यहाँ उज्जयिनी के शक् क्षत्रप रूद्रदामा का शासन था। चालुक्य राजा मूलराज प्रथम (942-55) ने इसे यहाँ के राजा से दसवीं शताब्दी ई० में छीन लिया था। सन् 1025 में मोहम्मद गजनवी द्वारा अनहिलवाड़ा पर आक्रमण किए जाने के बाद वहाँ का राजा भीमदेव कच्छ भाग आया था, परंतु गजनवी के वापस चले जाने पर भीमदेव भी वापस चला गया था। मोहम्मद गौरी ने यहाँ की रानी को फुसलाकर 1178 में कच्छ को अपने साम्राज्य में मिला लिया था। अहमदाबाद के सुल्तान महमूद बेगड़ा (1459-1511) ने कच्छ पर सफल आक्रमण किया था।

कच्छ में भारत के पश्चिमी राज्यों के अंग्रेज रेजीडेंट का मुख्यालय हुआ करता था। कच्छ के रण (रन) की भूमि में कुछ झील होने के कारण मानसून में पानी भर जाने से यह अरब सागर का भाग बन जाती है। मानसून के बाद दलदली और गर्मियों में सूख कर चटक जाती है। यहाँ न कोई पेड़ है और न ही कोई फसल होती है। इस क्षेत्र में काली पहाड़ी के नाम से एक पहाड़ी है। भुज इस इलाके का एक अन्य मुख्य शहर है, जो देश के अन्य भागों से सड़क, रेल तथा वायु मार्ग से जुड़ा हुआ है।

234. खम्भात्—ऐतिहासिक महत्त्व गुजरात के राजा राय कर्णदेव पर चढ़ाई के दौरान अलाउद्दीन खिलजी के सेनानायकों उलुग खाँ (बलबन) और नसरत खाँ ने यहाँ 1297 में भारी लूट-पाट की। नसरत खाँ ने यहाँ से 1000 दीनारों में मलिक काफूर को खरीद कर उसे सुल्तान की सेवा में भेज दिया। बाद में काफूर सुल्तान के सर्वाधिक विश्वासपात्र सेनानायकों में से एक बन गया। तेरहवीं-चौदहवीं शताब्दी में यह एक बंदरगाह थी। यह वस्त्र, सोने और चाँदी के लिए प्रसिद्ध था। यहाँ से लाल सागर और फारस के शहरों से व्यापार किया जाता था। यहाँ धनी सौदागरों के बड़े-बड़े मकान थे।

235. खानदेश यह ताप्ती नदी की घाटी में प्रदेश के दक्षिण में है।

ऐतिहासिक महत्त्व कभी यह दिल्ली सल्तनत का एक भाग था। सल्तनत के

पतन के बाद यह मलिक राजा फरुखी के अधीन स्वतंत्र राज्य बन गया। 29 अप्रैल, 1339 को उसकी मृत्यु के बाद उसका पुत्र मलिक नासिर शासक बना। उसने हिंदू शासक से असीरगढ़ छीन लिया। उसे गुजरात के सुल्तान अहमदशाह और उसके अपने ही दामाद अलाउद्दीन अहमद ने हराया। उसकी मृत्यु के बाद उसका पुत्र आदिल खाँ प्रथम (1438-41) और पोता मुबारक खाँ प्रथम (1441-57) गद्दी पर बैठे। अंत में आदिल खाँ फरुखी द्वितीय (1457-1503) ने इस राज्य की समृद्धि बढ़ाने के लिए बहुत प्रयास किया। खानदेश पर गुजरात के शासक भी प्रभुत्व जमाना चाहते थे, अतः इस पर दोनों राज्यों में दुश्मनी बनी रही। उसकी मृत्यु 1501 में हुई, जिसके बाद उसके भाई दाउद ने 1508 तक शासन किया। 1508 के बाद खानदेश में उत्तराधिकार के प्रश्न पर अव्यवस्था उत्पन्न हो गई। अंत में आदिल खाँ तृतीय (25 अगस्त, 1520 तक) और उसके बाद मोहम्मद प्रथम गद्दी पर बैठा। खानदेश की इस अवस्था की तरफ उस समय दिल्ली सल्तनत का ध्यान नहीं गया। बाबर के आक्रमण के समय मीरन मोहम्मद यहाँ का शासक था। अकबर ने इस पर 1601 ई० में अपना आधिपत्य स्थापित किया। शिवाजी के पुत्र राजा राम ने खानदेश से सरदेशमुखी और चौथ वसूल किया। 1752 ई० में बालाजी बाजीराव ने इसे हैदराबाद के निजाम-उल-मुल्क से छीन लिया।

236. खिजादिरा पक्षी विहार यह विहार गुजरात में समुद्र के किनारे स्थित है, जिस कारण यहाँ ध्रुव क्षेत्रीय पक्षी, खारे जल के मगरमच्छ, कछुए, गोह, जलमुर्गी, चमचाचोंच, बाज, पिही और मोर प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। यहाँ घूमने का सबसे अच्छा समय नवंबर से जनवरी तक का होता है। यहाँ से निकटतम बड़ा शहर जामनगर 16 किमी की दूरी पर है।

237. गाँधीनगर यह स्थान अहमदाबाद के 32 किमी उत्तर-पश्चिम में साबरमती नदी के पश्चिमी किनारे पर है। 1960 में तत्कालीन बम्बई राज्य के वर्तमान महाराष्ट्र और गुजरात राज्यों में विभाजन के बाद राजधानी बम्बई महाराष्ट्र में चली गई। तब गुजरात की नई राजधानी गाँधीनगर का निर्माण हुआ। यहाँ स्वामीनारायण सम्प्रदाय का अक्षरधाम मंदिर देश में दूर-दूर तक प्रसिद्ध है। अहमदाबाद अथवा गाँधी नगर जाने पर इसे अवश्य देखना चाहिए, क्योंकि वास्तुकला और सांस्कृतिक विरासत की दृष्टि से देश में ऐसा और कोई मंदिर नहीं है। गाँधीनगर देश के अन्य भागों से रेल तथा सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। निकटतम हवाई अड्डा अहमदाबाद है।

238. गिरनार कृपया गिरिनगर देखें।

239. गिरिनगर गिरनार पर्वत की तलहटी में बसे इस शहर का आधुनिक नाम गिरनार है। इसे जूनागढ़ भी कहा जाता है।

ऐतिहासिक महत्त्व मौर्य काल में यह सौराष्ट्र प्रांत की राजधानी थी। उस समय पुष्यगुप्त यहाँ चंद्रगुप्त मौर्य का राज्यपाल था। तुषाष्फ और पर्णदत्त भी गिरिनगर के राज्यपाल रहे थे। वल्लभी वंश के पतन के बाद यहाँ का राज्यपाल स्वतंत्र हो गया था। उसने यहाँ चूड़ाश्मा वंश की नींव डाली और गिरिनगर को अपनी राजधानी बनाया। गिरिनगर शक् शासक रूद्रदमन की राजधानी भी थी। दसवीं शताब्दी के अंत में चेदि के कलचूरी राजा लक्ष्मणराज ने जूनागढ़ के आभीर शासक ग्राहरियु को हराया। पंद्रहवीं शताब्दी के आरंभ में अहमदाबाद के राजा अहमदशाह ने यहाँ के शासक को हराया और अहमदाबाद के एक अन्य शासक ने इसी शताब्दी के मध्य में जूनागढ़ पर अपना दबादबा बनाया।

देश की स्वतंत्रता के बाद जूनागढ़ के नवाब ने सितंबर, 1947 में पाकिस्तान में शामिल होने की मंशा जाहिर की थी, जबकि जूनागढ़ चारों ओर से भारत से घिरा हुआ था तथा इसकी अधिकांश जनता हिंदू थी। जनता ने नवाब के इस निर्णय के विरुद्ध विद्रोह करके एक अंतरिम सरकार की स्थापना कर ली, जिसने भारत में शामिल होने की घोषणा की। नवाब पाकिस्तान भाग गया। प्रदेश में जनमत संग्रह गया, जिसने जूनागढ़ को भारत में मिलाने का निर्णय दिया और जूनागढ़ को भारत में मिला लिया गया।

पुरातात्विक महत्त्व राजनीति और इतिहास में गिरिनगर का महत्त्व प्रमुख रूप से कई राजाओं द्वारा स्थापित इसके लेखों के कारण बना रहा है। पहला शिलालेख सम्राट अशोक द्वारा 257-56 ई०पू० में स्थापित किया गया था, जिसमें उसके शासन और नैतिक नियमों का उल्लेख है। दूसरा लेख रूद्रदमन का है, जिसमें चंद्रगुप्त मौर्य के विवरण के अतिरिक्त स्वयं उसके शासन और सार्वजनिक कार्यों का विवरण है। स्कंदगुप्त ने भी यहाँ उसी शिला पर अपना लेख खुदवाया था, जिस पर अशोक के चौदह आदेश और रूद्रदमन का विस्तृत विवरण खुदा है। इसमें उसने अपने शत्रुओं के विरुद्ध युद्ध के बारे में लिखा है। मौर्यों ने यहाँ एक पुल और एक बाँध बनवाया था। चंद्रगुप्त मौर्य के राज्यपाल पुष्यगुप्त ने यहाँ की पहाड़ियों की तलहटी में एक झील बनवाई थी। बाद में शक् क्षत्रप रूद्रदमन ने 150 ई० में, स्कंदगुप्त ने 455-56 ई० में और उसके राज्यपाल पर्णदत्त ने भी इसकी मरम्मत कराई थी। गिरिनगर में बारहवीं शताब्दी ई० के जैन मंदिर भी पाए गए हैं। यहाँ गुप्त राजा कुमारगुप्त प्रथम के सिक्के पाए गए हैं।

धार्मिक महत्त्व इस पहाड़ी पर एक किला है, जिसका प्रवेश द्वार तोरण के रूप में है। किसी-किसी जगह इसकी दीवार की ऊँचाई 70 फुट तक है। इस किले में अब एक हिंदू मंदिर ही शेष बचा है। यहाँ पाई गई गुफाओं से पता लगता है कि पहले यहाँ बौद्ध भिक्षु रहते थे। इन गुफाओं में एक दुमंजिली गुफा, गोलाकार सीढ़ी और नक्काशीदार खंभे तथा दो गहरे कुएँ प्रमुख हैं। पुराना जूनागढ़ शहर कभी किले की चारदीवारी से घिरा हुआ था। यहाँ कई उद्यान भी हैं। इनमें से शक्कर बाग गार्डन प्रमुख है। जू में गीर शेर को भी देखा जा सकता है। सुल्तान बेगड़ा ने यहाँ के राजपूत राजा की सोने की छतरी को प्राप्त करने के लिए कभी जूनागढ़ पर आक्रमण था।

गिरनार की पहाड़ी जैनियों के लिए दूसरी पवित्र पहाड़ी है। यहाँ पर उनके अनेक मंदिर दर्शनीय हैं। ये मंदिर देखने के लिए दामोदर टैंक से लगभग 2000 फुट की ऊँचाई पैदल अथवा डोली में बैठकर चढ़नी होती है। सबसे ऊँचा मंदिर अंबा माता चोटी पर है और इसी नाम से है। यहाँ नवविवाहित जैनी अपने गठजोड़े बाँधते हैं। कालका चोटी पर त्यौहारों के दौरान बहुत से जैनी साधु इकट्ठे होते हैं। बाईसवें तीर्थंकार नेमिनाथ की स्मृति में बारहवीं शताब्दी में बनाया गया मंदिर सबसे पुराना और बड़ा है। इसकी 70 कोठड़ियों में से हरेक में नेमिनाथ की मूर्ति है। यहीं पास में ही ढोलका राजा के दो मंत्रियों, तेजपाल और वस्तुपाल, जो दोनों भाई भी थे, ने यहाँ तीन मंदिर बनवाए थे। पहाड़ी पर एक खुले हाल में उन्नीसवें तीर्थंकार मल्लिनाथ की काले रंग की मूर्ति है।

240. गीर राष्ट्रीय उद्यान यह उद्यान गुजरात के सौराष्ट्र क्षेत्र में है। इसकी स्थापना 1965 में की गई थी। यह सिंह के लिए संरक्षित क्षेत्र है। इस समय यहाँ सैंकड़ों सिंह हैं। शेर आदमियों को बहुत कम खाता है। सिंह के अतिरिक्त यहाँ चिंकारे, चीतल, तेंदुए, नीलगाय, बाघ, सांभर, चौसिंघे और सूअर अधिक मिलते हैं। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय दिसंबर से अप्रैल तक का होता है। गीर राष्ट्रीय उद्यान देखने के लिए शासनगीर से चढ़ाई आरंभ होती है। इसे देखने के लिए जीप, गाईड और दूरबीन की सुविधा है। ठहरने के लिए यहाँ वन विभाग के लॉज भी हैं। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन एक किमी दूर शासन है। निकटतम बड़ा शहर 42 किमी दूर वेरावल और निकटतम हवाई अड्डा 86 किमी दूर केसोध है।

241. चंपानेर चंपानेर मालवा क्षेत्र में है।

ऐतिहासिक महत्त्व खानदेश और मालवा पर नियंत्रण रखने के लिए यह एक

अच्छी जगह थी। 1414 ई० में यहाँ के राजा द्वारा आत्मघात किए जाने के बाद इसका पतन हो गया। महमूद बेगड़ा (1469-1511) ने इस पर आक्रमण करके इसे अपने आधिपत्य में ले लिया था। उसने चंपानेर के निकट मुहमदाबाद नाम से नया शहर बसाया था। आजकल यह शहर खंडहर में बदल चुका है। हुमायूँ ने इसे गुजरात के बहादुरशाह से 1535 में छीन लिया था, परंतु बहादुरशाह ने इसे अगले वर्ष ही पुनः प्राप्त कर लिया। उस समय के स्मारकों के प्रमाण के रूप में यहाँ की जामा मस्जिद ही एकमात्र इमारत बची है। यहाँ जैन वास्तुकला भी दर्शनीय है।

242. जामनगर इस शहर की स्थापना जडेजा राजपूतों द्वारा 1540 ई० में की गई थी। उन्हें पहले जाम कहा जाता था।

पर्यटन स्थल यहाँ शहर के मध्य में एक सुंदर झील है, जिसके पास कोठा (जिसमें शस्त्रागार है) तथा लकोठा नाम की दो पुरानी इमारते हैं। कोठा में एक ऐसा कूप है, जिसमें से पानी फर्श में बने एक छेद में फूँक मारने से निकलता है। लकोठा की इमारत नौवीं शताब्दी में बनाई गई थी। यहाँ के संग्रहालय में बरदो की पहाड़ियों में चौदहवीं शताब्दी के घुमली नगर के पुरातात्विक अवशेष रखे हुए हैं। जामनगर में एक घूमता हुआ टावर है, जिसमें पूरे दिन धूप आती रहती है और जहाँ मरीजों का इलाज सौर किरणों द्वारा किया जाता है।

243. जूनागढ़ कृपया गिरिनगर देखें।

244. जेस्सोर अभयारण्य यह राजस्थान की सीमा पर स्थित है। इसकी स्थापना 1978 में की गई थी। यहाँ तेंदुए, नीलगाय और भालू अधिक हैं। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय नवंबर से मार्च तक का होता है। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन और हवाई अड्डा अहमदाबाद है।

245. जैतपुर जैतपुर गुजरात में राजकोट और जूनागढ़ के मध्य है।

ऐतिहासिक महत्त्व बुंदेलखंड के राजा छत्रसाल ने पेशवा बाजीराव प्रथम की सहायता से मुगल सम्राट मुहम्मदशाह बंगश के सेनापति मोहम्मद खान को यहाँ अप्रैल, 1729 में हराया था। विजय के बाद छत्रसाल ने बाजीराव को सागर, झाँसी और कालपी के जिले देने के साथ-साथ एक खूबसूरत मुस्लिम सुंदरी मस्तानी भी दी, जिसे बाजीराव ने अपनी पत्नी बना लिया। डलहौजी ने विलय की नीति

अपनाकर जैतपुर रियासत को 1849 ई० में ब्रिटिश साम्राज्य में मिला लिया।

246. ढोलका यह गुजरात के प्राचीनतम शहरों में से एक है। ऐसा माना जाता है कि पांडवों और सूर्यवंश के राजकुमार कनकसेन ने यहाँ की यात्रा की थी। यहीं तेरहवीं शताब्दी में बघेला वंश के शासन की नींव डाली गई थी। उस काल के महलों, पक्के तालाबों, मस्जिदों और लगभग 6 किमी लंबी कच्ची दीवार के अवशेष यहाँ अब भी देखे जा सकते हैं।

247. दाभोई दाभोई बड़ौदा के दक्षिण-पूर्व में 17 मील दूर है। बाजीराव प्रथम ने अपने विद्रोही त्रियंबक राव डाभेड़े को यहाँ अप्रैल, 1731 में हराया था। कभी तेरहवीं शताब्दी में संपन्न रहे इस शहर की पुरानी इमारतें खंडहरों में बदल चुकी हैं। यहाँ पाए जाने वाले कुछ मंदिर, द्वार और दीवारें हिंदू वास्तुकला की गुजरात शैली के सर्वोत्कृष्ट नमूनों में से एक हैं। यह स्थान अपने द्वारों के लिए अधिक जाना जाता है। इसके चार प्रसिद्ध वर्तमान द्वारों में से डायमंड गेट सबसे अलग तरह का है। इस द्वार में मलिका माटा (काली) का मंदिर है। द्वार पर नक्काशी भी भिन्न प्रकार की है। कभी शहर की चारदीवारी के अंदर एक वानस्पतिक उद्यान और जलाशय हुआ करता था। इस जलाशय में पानी नदी से लाया जाता था।

248. दुमकल अभयारण्य यह अभयारण्य गुजरात में महाराष्ट्र की सीमा पर है। इसकी स्थापना मुख्य रूप से भालुओं की रक्षा के लिए की गई थी। भालुओं के अलावा यहाँ चिंकारे, भेड़िये और हरिण अधिक संख्या में मिलते हैं। यहाँ घूमने के लिए उपयुक्त समय नवंबर से मार्च तक का होता है।

249. द्वारिका द्वारिका गुजरात में समुद्री तट पर एक शहर हुआ करता था, जो आजकल समुद्र में समाया हुआ है। प्राचीन काल में यह सात पुरियों (पवित्र शहरों) में से एक था। ऐसा माना जाता है कि इसकी प्रथम बार स्थापना विश्वकर्मा ने अपने भक्त अनर्त के लिए की थी। उस समय यह अनर्त देश कहलाता था। बाद में विश्वकर्मा ने विष्णु के अवतार श्रीकृष्ण के लिए इसका पुनः निर्माण किया। कंस वध के बाद भगवान श्री कृष्ण ने मथुरा का राज्य कंस के पिता राजा उग्रसेन को सौंप दिया और स्वयं द्वारिका चले आए तथा इसे अपनी राजधानी बना लिया। प्राचीन द्वारिका आधुनिक द्वारिका से 85 मील दूर थी। ऐसा भी विश्वास है कि भगवान श्रीकृष्ण के मानव शरीर त्यागने के बाद द्वारिका भी समुद्र में विलीन हो गई। हाल ही तक इसे एक किंवदंति ही माना

जाता था, परंतु कुछ वर्ष पूर्व यहाँ समुद्र तल से इस नगरी के ध्वंसावशेष मिलने पर भारत के इस पौराणिक विश्वास को पुनः ठोस आधार मिला। शंकराचार्य ने यहाँ एक मठ की स्थापना की। यहाँ एक द्वारिकानाथ मंदिर है, जिसमें 60 खंभे हैं। इसका बाहरी भाग अलंकृत है। मंदिर में गैर-हिंदुओं को जाने की इजाजत नहीं है। पंद्रहवीं शताब्दी के आरंभ में इसे अहमदाबाद के शासक महमूद बेगड़ा ने हड़प लिया था।

250. धारगंधा अभयारण्य यह विहार छोटे रण के कच्छ में स्थित है। इसकी स्थापना जंगली गधों के संरक्षण के लिए 1973 में की गई थी। जंगली गधों के अलावा यहाँ काली बतखें, चिंकारे, बिल्ली और लोमड़ी भी दिखाई देते हैं। धारगंधा शहर यहाँ से 22 किमी की दूरी पर है। यहाँ घूमने के लिए जनवरी से जून तक का समय ठीक रहता है।

251. नलसरोवर पक्षी विहार यह विहार गुजरात के मध्य भाग में है। इसकी स्थापना 1969 में हुई थी। यहाँ बतख और हरे कछुए अधिक दिखाई देते हैं। यहाँ पर्यटन के लिए नवंबर से फरवरी तक का समय सुहावना होता है। ठहरने के लिए यहाँ वन विभाग का बंगला है। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन और हवाई अड्डा अहमदाबाद है।

252. पाटण कृपया अनहिलवाड़ा देखें।

253. पालिताणा यह स्थान भावनगर के दक्षिण-पश्चिम में है। यह शत्रुंजय पहाड़ी का प्रवेश द्वार है। यह पहाड़ी इसी नाम की नदी के किनारे है। पहाड़ी लगभग एक हजार जैन मंदिरों से ढकी हुई है। जैन धर्मावलंबियों द्वारा जैन मंदिरों से आच्छादित पाँच पहाड़ियों में से शत्रुंजय पहाड़ी सबसे पवित्र मानी जाती है। पहाड़ी पर सबसे पहले आदिनाथ का मंदिर 960 ई० में बनाया गया था। बाद में ग्यारहवीं, बारहवीं तथा सोलहवीं शताब्दी में यहाँ अनेक मंदिर बने। यहाँ आदीश्वर बाग मंदिर के पास एक मंदिर में संत सूरी के पद चिह्न हैं। इस संत ने सम्राट अकबर से मंदिरों को ध्वस्त न करने और इस क्षेत्र में वर्ष के आधे समय पशु न मारने का फरमान जारी करा लिया था। यहाँ ये मंदिर अहातों में बने हुए हैं। प्रत्येक अहाते में एक बड़ा मंदिर है और अनेक छोटे-छोटे मंदिर हैं। पहाड़ी के उत्तरी छोर पर बना चौमुख मंदिर सबसे बड़ा है। इस मंदिर में आदिनाथ की संगमरमर की चार मुख वाली प्रतिमा स्थापित है। मंदिर भी चारों ओर से खुलता है। मंदिर का निर्माण एक साहूकार ने 1618 ई० में कराया था।
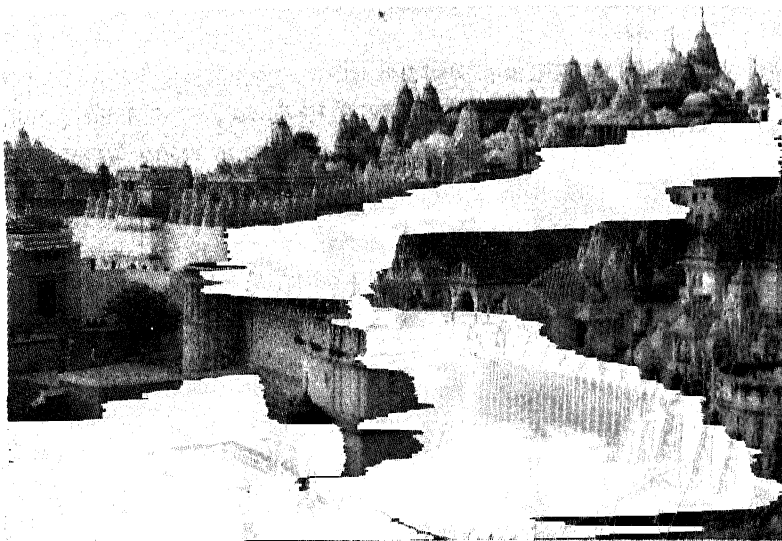
पालिताणा के जैन मंदिर

अन्य उत्कृष्ट मंदिरों में कुमारपाल, सम्प्रति राजा तथा विमल शाह के मंदिर प्रमुख हैं। आदीशवाड़ा मंदिर सबसे पवित्र माना जाता है। पहाड़ी पर एक मुस्लिम मस्जिद भी है, जिसमें संतानरहित औरतें संतान की आशा में छोटे-छोटे पालने भेंट करती हैं। महाराजा के निवास हवा महल के पास एक हिंदू मंदिर भी खड़ा है। शत्रुंजय पहाड़ी लगभग 2000 फुट ऊँची है और इस पर पैदल ही जाना होता है। असक्त लोगों को कुली डोलियों अथवा कुर्सियों में बैठाकर ले जाते हैं।

254. पोरबंदर यह शहर गुजरात के काठियावाड़ जिले में है। प्राचीन समय में यह एक अच्छी बंदरगाह थी। यहाँ 2 अक्तूबर, 1869 ई० को महात्मा गाँधी का जन्म हुआ था। यहाँ का गीता मंदिर देखने लायक है। गाँधी जी के स्मारक के रूप में यहाँ कीर्ति मंदिर नाम से एक मंदिर बनाया गया है, जिसमें उनके जन्म स्थान की जगह एक
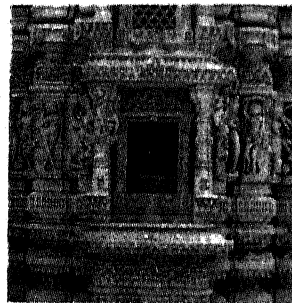
पालिताणा के एक जैन मंदिर की नक्काशी

कमरा, एक कताई हाल, एक प्रार्थना हाल आदि हैं। इसकी 79 फुट ऊँची मीनार महात्मा गाँधी की आयु की प्रतीक है। उनका जीवन वृत मंदिर की दीवारों के बाहरी ओर संगमरमर पर खुदा हुआ है। यहाँ का आर्य कन्या गुरुकुल भी प्रसिद्ध है। पोरबंदर में यहाँ के भूतपूर्व महाराजा का एक महल भी देखने योग्य है।

255. प्रभास कृपया सोमनाथ देखें।

256. बड़ौदा बड़ौदा से अभिप्राय है बड़ के पेड़ों के बीच स्थित। इसका आधुनिक नाम वडोदरा है।

ऐतिहासिक महत्त्व 119-24 तक यहाँ शक् क्षत्रप नहपान का शासन था। ताराबाई ने इसे 1706 ई० में अपने अधीन किया था। उस समय वह अपने पुत्र शिवाजी द्वितीय की संरक्षिका के रूप में शासन कर रही थी। यहाँ का शासक दामाजी गायकवाड़ पेशवा के एक मराठा सेनानायक का पुत्र था। पेशवा ने उसे उस द्वारा विजित क्षेत्रों से चौथ अर्थात् आय का चौथा हिस्सा वसूल करने की इजाजत दे दी थी। यहाँ के शासक दामाजी द्वितीय (1732-68) ने पेशवा से मिलकर 1753 में अहमदाबाद जीतकर देश के पश्चिमी क्षेत्र से मुस्लिम शासन को समाप्त कर दिया था। 14 जनवरी, 1761 को पानीपत की दूसरी लड़ाई के बाद पेशवा की शक्ति बहुत क्षीण हो गई थी, जिसका लाभ उठाकर दामाजी द्वितीय स्वतंत्र हो गया। उसने अनहिलवाड़ा पट्टन को अपनी राजधानी बनाया। धीरे-धीरे गायकवाड़ शासक का क्षेत्र कम होता गया। दामाजी द्वितीय के बाद गोबिंद राव (1768-71 और 1793-1800), सयाजी राव प्रथम (1771-78), फतेह सिंह (1778-89), मानाजी (1789-93) और कुछ अन्य व्यक्तियों ने शासन किया। 1800 में आनंदराव शासक बना। 1802 में अंग्रेजों की सहायता लेने के फलस्वरूप उसे बड़ौदा में एक रेजीडेंट रखना पड़ा तथा कुछ और भूमि अंग्रेजों को देनी पड़ी। उसने 1819 तक शासन किया। बाद में सयाजी राव द्वितीय (1819-47), गणपत राव (1847-56) और खांडे राव (1856-70) शासक बने। अंग्रेजों ने अपनी सर्वोच्चता की शक्ति का प्रयोग सबसे पहले बड़ौदा में ही 1870 में किया था। खांडे राव भाई की मृत्यु के बाद 1870 में मल्हारराव गायकवाड़ बड़ौदा की गद्दी पर बैठा। अंग्रेजों ने उसकी शासन व्यवस्था अच्छी न होने का दोष देकर उसे इसे 18 महीनों में सुधारने की चेतावनी दी थी। परंतु उसने इस चेतावनी की तरफ कोई ध्यान न देकर बड़ौदा में स्थित ब्रिटिश रेजिडेंट को जहर देकर मारने की कोशिश की। अंग्रेजी सरकार ने उसे 1875 में गद्दी से

उतारकर उसकी जगह खांडे राव के अवयस्क पुत्र सयाजी राव तृतीय (1875-1939) को शासक बना दिया। फिर भी देश की स्वतंत्रता तक बड़ौदा पर इसी वंश का शासन चलता रहा।

पर्यटन स्थल यहाँ गेंडा, पानी और मार्किट गेट नाम से तीन द्वार प्रसिद्ध हैं। यहाँ कीर्ति मंदिर अथवा शाही संग्रहालय और एक कला दीर्घा है, जिनकी स्थापना बड़ौदा के गायकवाड़ ने 1894 में की थी। यहाँ नजर बाग में उनका एक महल भी है। बड़ौदा के दक्षिण में प्रताप विलास और मरकरपुरा नाम से दो अन्य महल हैं। यहाँ के लक्ष्मी विलास महल के दरबार हाल की शोभा देखते ही बनती है। यह महल भारतीय-सारसेनी शैली में बना हुआ है। बड़ौदा में महाराजा फतेहसिंह संग्रहालय भी है, जिसमें देश-विदेश के कलाकारों की तरह-तरह की चित्रकारियाँ हैं। यहाँ की चित्रकला की भी अपनी अलग शैली है। संग्रहालय में काँसे की कुछ चुनिंदा मूर्तियाँ रखी गई हैं, जिनके अंडाकार और नाजुक चेहरों पर मुस्कान के जीवंत भाव हैं। ये मूर्तियाँ वल्लभियों के काल तक की हैं, जिन्होंने इस क्षेत्र पर 470 से 790 ई० तक भावनगर के पास वल्ल से शासन किया था।

257. बरदा अभयारण्य यह अभयारण्य गुजरात में है। इसकी स्थापना 1979 में की गई थी। यहाँ चिंकारे, नीले साँड और लोमड़ियाँ मिलते हैं। यहाँ से निकटतम शहर रनबाग 8 किमी की दूरी पर है। निकटतम हवाई अड्डा 22 किमी दूर पोरबंदर है। यहाँ घूमने का अच्छा समय नवंबर से मार्च तक का होता है।

258. बसंद राष्ट्रीय उद्यान यह उद्यान गुजरात के दक्षिणी भाग में बलसाड़ जिले में है। यहाँ तेंदुए, लोमड़ी और सांभर अधिक मात्रा में हैं। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय नवंबर से अप्रैल तक का होता है।

259. बेरीगाजा कृपया भरूकच्छ देखें।

260. बेलावदार राष्ट्रीय उद्यान यह उद्यान गुजरात के दक्षिण में है। इसकी स्थापना काली बत्तखों के संरक्षण के लिए की गई थी। काली बत्तखों के अलावा यहाँ लोमड़ी तथा तरह-तरह के पक्षी देखने को मिलते हैं। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय नवंबर से मई तक का होता है। यहाँ से निकटतम बड़ा शहर बल्वीपुर 32 किमी की दूरी पर है।

261. भड़ौंच कृपया भरूकच्छ देखें।

262. भरूकच्छ—नामकरण यह गुजरात में नर्मदा नदी के तट पर आधुनिक भड़ौंच है। इसका प्राचीन नाम भृगुकच्छ भी था, जो भृगु ऋषि के नाम पर पड़ा था। इसे बेरीगाजा भी कहा जाता था। ऐसा माना जाता है कि बाली ने यहाँ एक यज्ञ किया था।

ऐतिहासिक महत्त्व 119 से 124 ई० तक भड़ौंच शक् क्षत्रप नहपान के अधीन था। 648 ई० के भड़ौंच के एक लेख से ज्ञात होता है कि वल्लभी के मैत्रक वंश के शासक ध्रवसेन चतुर्थ ने गुर्जरों के प्रदेश को जीतकर अपने राज्य का विस्तार किया था। आठवीं शताब्दी के मध्य में भरूकच्छ पर कुछ समय के लिए सिंध के सूबेदार जुनैद ने कब्जा कर लिया था। 1803 की सुर्जी अर्जनगाँव की संधि के अनुसार उज्जैन के सिंधिया शासक ने भड़ौंच वेल्जली को सौंप दिया था।

व्यापार बंदरगाह होने के कारण भरूकच्छ प्राचीन काल से ही व्यापार का एक प्रमुख केंद्र रहा है। नासिक के शक् क्षत्रप नहपान (119-24) के काल में उसकी राजधानी मिन्नगर से कपास तथा उज्जैन, प्रतिष्ठान और तगर से अन्य सामान भड़ौंच लाकर विदेश भेज दिया जाता था। वह विदेशों से चाँदी के बर्तन, गायक, सुंदर कुमारियाँ, बढ़िया किस्म की शराब, बारीक कपड़ा और औषधियाँ मंगाता था। यहाँ से निर्यात की जाने वाली वस्तुओं में रेशमी धागे, वस्त्र, रंगीन लाख, काली मिर्च, दालचीनी, बालछड़, अगर, नील, राब, खंडसारी, चंदन, आबनूस, चीनी मिट्टी के बर्तन, औषधियाँ, मोती, मसाले, मखमल, बरछे, हीरे, नीलमणि, सागवान, सुलेमानी पत्थर, लोहे की तलवारें आदि शामिल थे। अधिकतर व्यापार रोम से किया जाता था। भारत से इतनी भारी मात्रा में निर्यात से घबराकर प्लिनी ने लिखा था कि भारत रोम के धन को लूट रहा है। अरब और मिस्त्र से यहाँ सुंदर-सुंदर कन्याओं, कुशल कारीगरों और घोड़ों; चीन से रेशम; अमन से शराब, सोना, चाँदी और खजूर; ईरान से बेंजोइन तथा मिस्र से खनिज डामर के अतिरिक्त लौंग, टिन, ताँबा, काँच, सुरमा, प्रसाधन सामग्री और लाल हरताल का आयात किया जाता था। इतनी बड़ी व्यापारिक गतिविधियों से भरूकच्छ एक बहुत समृद्ध शहर बन गया था। यह सड़क मार्ग से मथुरा, मसूलीपट्टम्, प्रतिष्ठान आदि से जुड़ा हुआ था। इन स्थानों से यहाँ सामान बैलगाड़ियों में लाया जाता था। उसे आगे सुमात्रा, जावा और रोम को समुद्री जहाजों द्वारा भेज दिया जाता था।

263. भसीन—ऐतिहासिक महत्त्व पुर्तगालियों ने इसे 1534 ई० में गुजरात के सुल्तान बहादुर से छीनकर अपने कब्जे में ले लिया था। यह 205 वर्ष

तक उनके कब्जे में रहा। बाजीराव प्रथम के चचेरे भाई चिमनाजी अप्पा ने इसे उनसे 1737-39 ई० में छीन लिया था। 1780 में कर्नल गोडार्ड ने भसीन के किले पर धावा बोलकर इसे अपने अधीन कर लिया था। 1802 ई० में यहाँ पेशवा बाजीराव द्वितीय और अंग्रेजों के मध्य एक संधि हुई, जिसके तहत बाजीराव द्वितीय ने लार्ड वेल्जली की सहायक संधि स्वीकार कर ली और पेशवा को उसके शत्रुओं से संरक्षण मिल गया।

264. भृगुकच्छ कृपया भरूकच्छ देखें।

265. माढेड़ा माढेड़ा अहमदाबाद के उत्तर पश्चिम में लगभग 90 किमी दूर है। महमूद गजनी ने भारत आक्रमण के दौरान 1026 ई० में यहाँ भी आक्रमण किया था। यह स्थान अपने सूर्य मंदिर के लिए बहुत प्रसिद्ध है। इस मंदिर का निर्माण अनहिलवाड़ा पट्टन के सोलंकी राजाओं द्वारा महमूद गजनी पर विजय प्राप्त करने के दृढ़ संकल्प स्वरूप कराया गया था। यह मंदिर उन द्वारा बनवाए गए अनेक मंदिरों में से सर्वोत्तम है। इस मंदिर की मेहराब और इसके स्तंभ सोमनाथ मंदिर जैसे ही हैं। यह मंदिर एक तालाब के किनारे स्थित है।

266. मैरीन राष्ट्रीय पार्क यह पार्क समुद्र के किनारे पर है। इसकी स्थापना 1982 में की गई थी। यहाँ पर समुद्री पक्षी अधिक देखने को मिलते हैं। यहाँ घूमने का सबसे अच्छा समय नवंबर से जनवरी तक का होता है। यहाँ से निकटतम शहर जामनगर की दूरी 60 किमी है।

267. रंगपुर यह स्थान झालावार जिले के काठियावाड़ क्षेत्र में भादर नदी के किनारे पर है। बुद्ध की मृत्यु के 20 वर्ष बाद तक यह उदयीभद्र की राजधानी रहा। उसके बाद उसने इसे पाटलीपुत्र बदल लिया। आजकल यह जैन मंदिरों के लिए प्रसिद्ध है।

पुरातात्विक महत्त्व इतिहास में रंगपुर का महत्त्व मुख्य रूप से इसकी पुरातात्विक खोजों के कारण है। यहाँ 1931 और 1934 में की गई खुदाइयों से पता चला है कि रंगपुर सिंधु घाटी सभ्यता का एक स्थल था। यहाँ पाई गई वस्तुओं से इस बात का प्रमाण जुटता है कि यहाँ यह सभ्यता एकदम खत्म नहीं हुई, बल्कि धीरे-धीरे खत्म हुई। यहाँ यह सभ्यता मोहनजोदाड़ो के विनाश के बाद भी जारी रही। यहाँ इस सभ्यता की तीन सतहें पाई गई हैं। सबसे निचली सतह के लोग छोटे-छोटे जीवाश्मों का प्रयोग करते थे। मध्यवर्ती सतह की वस्तुएँ

हड़प्पा की वस्तुओं से मिलती-जुलती थीं। इनमें ईंट की इमारतें, कच्ची ईंट की दीवारें, मिट्टी के बर्तनों पर चित्रकारी, जेवरात, उपकरण, औजार और माप प्रमुख थे। इस सतह में कुछ नई तरह के मिट्टी के बर्तन भी पाए गए हैं। इनमें से कुछ लाल और काले हैं, जबकि अन्य लाल हैं। इन पर सफेद रंग से चित्रकारी की हुई है। अशोक ने भी यहाँ एक स्तूप बनवाया था।

268. राजनमल पशु विहार यह विहार मध्य प्रदेश की सीमा से लगता हुआ है। यहाँ चिंकारे, नीलगाय, भेड़िए, सांभर और तरह-तरह के पक्षी मिलते हैं।

269. रोजड़ी यह स्थान काठियावाड़ क्षेत्र में भादर नदी के किनारे है।

पुरातात्विक महत्त्व 1931 और 1934 में यहाँ की गई खुदाइयों से पता चला है कि यह स्थान सिंधु घाटी सभ्यता का एक स्थल था। खुदाइयों में स्मारक, जल-निकास व्यवस्था, मिट्टी के बर्तन, माप आदि पाए गए हैं। इसके ध्वंसावशेषों से पता चलता है कि सिंधु सभ्यता यहाँ एकदम खत्म न होकर धीरे-धीरे खत्म हुई।

270. लोठल यह स्थल सौराष्ट्र क्षेत्र में अहमदाबाद से 87 किमी दूर भोगवा नदी के किनारे है।

पुरातात्विक महत्त्व लोठल सिंधु घाटी सभ्यता के एक प्रमुख स्थल के रूप में जाना जाता है। इस शहर के यहाँ छह बार बसने और उजड़ने के प्रमाण पाए गए हैं। यहाँ की गई खुदाइयों में 46.6 मी लंबा नाला, 3.7 मी चौड़ी सड़क, मिट्टी के लाल और काले रंग के बर्तन (यथा गिलास, कप, प्यालियाँ आदि), नाँद, लैंप, फन्नियाँ, बरछे और तीरों की नौकें, सुइयाँ, चाकू, पिनें, मछली पकड़ने के काँटे (सभी ताँबे अथवा पीतल के), गेहूँ, चावल, घोड़ों की अस्थियाँ, सेलखड़ी पत्थर की चूड़ियाँ, अकीक और माप पाए गए हैं। बर्तनों पर ताड़, पीपल, पेड़ों की शाखाओं, फूलों, चिड़ियों, मछलियों, साँपों और हरिणों के चित्र पाए गए हैं। सिंधु घाटी की मुहरों से मिलती-जुलती कुछ मुहरें भी पाई गई हैं। इन मुहरों पर हरिणों, हाथियों और साँपों के चित्र बने हैं। एक मुहर के चित्र में मुँह ऊँट का, सींग हरिण के, दाढ़ी बकरे की और धड़ बैल का पाया गया है। एक मुहर के चित्र में तीर में लगी मछली पाई गई है। ज्यादातर घर कच्ची ईंट के बने होते थे, परंतु कुछ घर पकी ईंट के भी पाए गए हैं। एक घर 4.8 मी x 3.7 मी आकार का पाया गया है। इस घर में रसोई, स्नानघर तथा इन दोनों में जल-निकास की व्यवस्था पाई गई है।

लोठल तीन किमी के घेरे में फैला हुआ था। लोठल में की गई सबसे प्रमुख खोज तिकोणी गोदी है, जो पकी ईंट की है। इसका साइज 40 x 40 x 216 मी था। भोगवा नदी से पानी लेने और उसमें पानी छोड़ने के लिए इसमें सात मी चौड़ा नाला भी बना हुआ था। यहाँ सौदागरों की नावें ठहरती थीं। यहाँ से मिश्र, सुमेरिया और पश्चिमी एशिया के साथ व्यापार किया जाता था। यहाँ पाई गई फारस की खाड़ी की मुहरों से मिलती-जुलती मुहरों से पता लगता है कि लोठल के ईरान से भी व्यापारिक संबंध थे। यहाँ हाथी पालने और चावल की खेती के प्रमाण भी मिले हैं। शहर छह खंडों में विभाजित था। प्रत्येक खंड कच्ची ईंट के बड़े चबूतरे पर बना था। यहाँ की गई खुदाइयों में मिट्टी की गोल मुहरें तथा कारीगरों के प्रयोग के ताँबे और काँसे के औजार पाए गए हैं। लोठल शहर का निर्माण योजनाबद्ध तरीके से हुआ था और इसमें जल-निकास की अच्छी व्यवस्था थी। कब्रिस्तान शहर के बाहर था। इस कब्रिस्तान में आदमियों और औरतों की साथ-साथ पाई गई हड्डियों से आभास मिलता है कि उन दिनों यहाँ सती प्रथा का प्रचलन था। यहाँ सिंधु सभ्यता का अंत अचानक नहीं, बल्कि धीरे-धीरे हुआ था। यहाँ यह सभ्यता मोहनजोदाड़ो के ह्रास के बाद भी जारी रही।

271. वडोदरा कृपया बड़ौदा देखें।

272. वल्लभी यह स्थान गुजरात के सौराष्ट्र क्षेत्र में हुआ करता था। इसका नामकरण वल्लभ वंश पर पड़ा।

ऐतिहासिक महत्त्व वल्लभ वंश के शासकों ने इस पर 319 ई० में कब्जा करके इसे अपनी राजधानी बनाया। गुप्त वंश के पतन के बाद भट्टारक ने यहाँ मैत्रक वंश के शासन की नींव डाली। उसके बाद यहाँ धारसेन प्रथम और द्रोण सिंह शासक बने। इन्हें हूणों का आधिपत्य स्वीकार करना पड़ा था, परंतु कुछ समय बाद ये स्वतंत्र हो गए। आई सांग और ह्यून सांग भी यहाँ आए थे। ह्यून सांग की यात्रा के दौरान ध्रुवसेन द्वितीय यहाँ का शासक था। हर्षवर्धन ने उसे सातवीं शताब्दी के प्रारंभिक भाग में हराया था। उसे भड़ौंच के राजा दद्द द्वितीय के यहाँ शरण लेनी पड़ी। परंतु बाद में हर्ष ने वल्लभी ध्रुवसेन को ही लौटा दी। ध्रुवसेन ने हर्ष की पुत्री से विवाह किया। वह हर्ष द्वारा प्रयाग में आयोजित उत्सव में भी शामिल हुआ। उसके बाद ध्रुवसेन चतुर्थ राजा हुआ। उसने परमभट्टारक, महराजाधिराज, परमेश्वर, चक्रवर्ती आदि विरुद धारण किए। 648 ई० के भड़ौंच के अभिलेख से ज्ञात होता है कि उसने गुर्जरों के प्रदेश को जीतकर अपने राज्य का विस्तार किया। अरबी हमलावरों ने 650 में ही वल्लभी को नष्ट कर दिया था,

परंतु इसके ध्वंसावशेष अकबर के समय तक भी थे।

शिक्षा वल्लभी उन दिनों पश्चिमी भारत का शिक्षा का एक बड़ा केंद्र हुआ करता था। वल्लभी विश्वविद्यालय में हीनयान धर्म की शिक्षा दी जाती थी। गुणमति और स्थिरमति इसके प्रसिद्ध अध्यापकों में से थे। वल्लभी राजाओं ने इस विश्वविद्यालय के माध्यम से शिक्षा प्रसार के लिए दिल खोल कर दान दिया।

धार्मिक महत्त्व वल्लभी का धार्मिक महत्त्व भी पर्याप्त था। पाँचवीं शताब्दी में यहाँ एक बड़ी जैन सभा हुई, जिसमें जैन धर्म की धार्मिक पुस्तकों – अंग और उपांग को वर्तमान रूप दिया गया। वल्लभी के सौ मठों में लगभग 6000 भिक्षु रहा करते थे। अशोक ने उनके लिए यहाँ एक स्तूप का निर्माण कराया था। वल्लभी में कुमारगुप्त प्रथम के सिक्के मिले हैं।

273. वेरावल वेरावल गुजरात में सोमनाथ के उत्तर-पश्चिम में समुद्री किनारे पर एक बंदरगाह है। सोमनाथ और वेरावल के बीच बालक तीर्थ मंदिर है, जिसमें श्रीकृष्ण की एक लेटी हुई मूर्ति रखी हुई है। यह मूर्ति उनके स्वर्गवास को प्रकट करती है। ऐसा माना जाता है कि जब श्रीकृष्ण यहाँ मृग छाल ओढ़े ध्यान मग्न बैठे थे, तब एक शिकारी भील ने उन्हें मृग समझकर उनके पैरों में तीर मार दिया। इस तीर से उनके पैर में समाई हुई दैवी शक्ति की प्रतीक मणि निकल गई, जिससे वे दैवी शक्तिहीन होकर स्वर्गारोहण कर गए। वेरावल के पास ही तीन नदियों के संगम पर उनका समाधि स्थल है। उनके मृत्युशोक में यहाँ अहीर जाति की अनेक औरतें अब भी शोक के प्रतीक काले कपड़े का इस्तेमाल करती हैं।

274. सरखेज यह स्थान अहमदाबाद से दस किमी दूर है और महमूद बेगड़ा की मस्जिद और मकबरे के लिए जाना जाता है। सरखेज में ही उसके काल के एक संत और उसके आध्यात्मिक गुरु गंज बक्श का मकबरा है।

275. सुतकांगडोर यह एक तटीय स्थान है। यहाँ सिंधु घाटी सभ्यता की विकसित अवस्था के प्रमाण पाए गए हैं। इस बस्ती के चारों ओर एक दीवार हुआ करती थी।

276. सुरकोटड़ा सुरकोटड़ा एक तटीय स्थान है। यहाँ सिंधु घाटी सभ्यता की विकसित अवस्था के प्रमाण पाए गए हैं।

277. सूरत सूरत खंभात की खाड़ी में एक बंदरगाह है।

ऐतिहासिक महत्त्व राजा भगवान दास ने अकबर के लिए इसे इब्राहिम हुसैन मिर्जा से 1572 ई० में छीन लिया था। इसके बाद मुस्लिम इसी बंदरगाह से मक्का जाने लगे। 1612 ई० में कैप्टन बैस्ट के नेतृत्व में ब्रिटिश बेड़े ने पुर्तगालियों को सूरत के निकट ही स्वाली में हराया था। अपनी इस विजय के परिणामस्वरूप अंग्रेजों ने यहाँ 1613 में भारत में अपना पहला कारखाना लगाया। जहाँगीर के शासन काल में 1613 ई० में ब्रिटिश राजदूत विलियम हाकिंस सर्वप्रथम यहीं आया था। 1688 में औरंगजेब के बंगाल प्रांत के सूबेदार शाइस्ता खाँ और सर जोशिया चाइल्ड के मध्य हुए युद्ध के पश्चात् मुगलों ने इस कारखाने पर कब्जा कर लिया और अंग्रेजों को सूरत छोड़ने का आदेश दे दिया। परंतु उनके मध्य हुई एक संधि के बाद इस आदेश को वापस ले लिया गया। जनवरी 1664 और 1670 में शिवाजी ने सूरत पर धावा बोला और यहाँ से क्रमशः एक करोड़ तथा 66 लाख रुपये वसूले। 1672 में शिवाजी ने सूरत में चौथ वसूला। भारत में पहला फ्रांसीसी कारखाना भी सूरत में ही लगा। यह कारखाना फ्रांसिस कैरन ने 1668 ई० में लगाया था। पुर्तगालियों ने भी सतरहवीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों में यहाँ अपनी बस्तियाँ बसाईं। सूरत में 7 मार्च, 1775 ई० को राघोबा और अंग्रेजों के मध्य एक संधि हुई थी, जिसके अनुसार राघोबा ने पेशवाई दिलाने के बदले अंग्रेजों को सालसेट और भसीन देना स्वीकार किया था, परंतु नाना फड़नवीस ने लार्ड हेस्टिंग्ज से 1 मार्च, 1776 को पुरंदर की संधि करके भसीन की संधि को भंग करवा दिया। 1801 ई० में अंग्रेजों ने सूरत को अपने राज्य में मिला लिया और यहाँ के नवाब को पेंशन दे दी गई। सूरत 1907 ई० में कांग्रेस के अधिवेशन के दौरान इसके पहले विभाजन के लिए भी जाना जाता है। उस समय रास बिहारी बोस इसके अध्यक्ष थे। इस अधिवेशन के बाद कांग्रेस नर्म और गर्म दो दलों में बँट गई थी। गर्म दल का नेतृत्व बाल गंगाधर तिलक ने किया। लाला लाजपतराय और विपिन चंद्र पाल इस दल के दो अन्य प्रमुख नेता था। इतिहास में उन्हें "लाल, बाल, पाल" के रूप में जाना गया। बंदरगाह होने के कारण मुगलों के समय में सूरत व्यापार और वाणिज्य का एक प्रमुख केंद्र था। सूरत से 16 किमी दूर डुमास एक स्वास्थ्यवर्धक स्थान है। 28 किमी दूर हजीरा तट और 42 किमी दूर उभाड़त तट है।

पर्यटन स्थल सूरत में एक किला है, जिसका निर्माण मुहम्मद-बिन-तुगलक ने भीलों से अपनी रक्षा के लिए चौदहवीं शताब्दी में करवाया था।

278. सोमनाथ सोमनाथ गुजरात में समुद्री तट पर है। यह अपने ज्योतिर्लिंग मंदिर के कारण जाना जाता है। यह ज्योतिर्लिंग बारह ज्योतिर्लिंगों
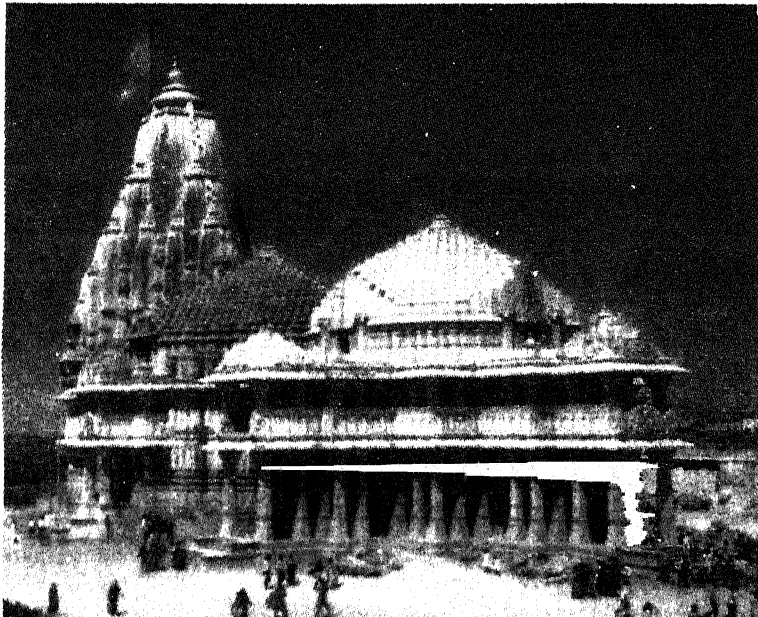
सोमनाथ का आधुनिक मंदिर

में से एक है। 119 से 124 ई० तक सोमनाथ शक् क्षत्रप नहपान के अधीन था। दसवीं-ग्यारहवीं शताब्दी में यहाँ एक विशाल मंदिर था, जिसमें भारी मात्रा में सोना-चाँदी था। महमूद गजनी के काल के इतिहासकार अल बरूनी ने ग्यारहवीं शताब्दी के प्रारंभ में जब इस स्थान की यात्रा की, तो उसने गजनी वापस जाकर इस मंदिर और इसके वैभव का इतने प्रभावी ढंग से वर्णन किया कि महमूद गजनी इस मंदिर के धन को लूटने के लिए लालायित हो गया। फलस्वरूप उसने भारत पर कई आक्रमण किए और अंत में 1025 में उसने सोमनाथ पर धावा बोलकर इसका सारा धन-माल लूट लिया। महमूद गजनी ने सोमनाथ में इसके किले के जूनागढ़ द्वार से प्रवेश किया था। सोमनाथ का ज्योतिर्लिंग मंदिर विदेशियों के लिए सदा से ही आकर्षक रहा है। इससे आकर्षित होकर मुस्लमानों ने इससे पहले भी इस पर दो बार आक्रमण किए तथा इसका धन-माल लूटकर और इसे ध्वस्त करके चले गए थे। सबसे पहला मंदिर यहाँ पहली अथवा दूसरी शताब्दी में बनवाया गया था। मुस्लिम आक्रमणकारियों ने इसे चार बार और लूटा और इस जगह को अपवित्र तथा ध्वस्त किया। इस प्रकार यहाँ ज्योतिर्लिंग मंदिर

की स्थापना और इसका विध्वंस पहली से अट्ठारहवीं शताब्दी तक चलता रहा। अट्ठारहवीं शताब्दी के बाद मंदिर पुनर्निर्माण कार्य बंद हो गया। वर्तमान मंदिर 1783 में महारानी अहिल्याबाई द्वारा बनवाए गए मंदिर का ही स्वरूप है। बीसवीं शताब्दी के पचासवें दशक में मंदिर का पुनर्निर्माण कार्य फिर शुरू हुआ और यहाँ अब अर्चना-पूजा पुनः की जानी आरंभ हो गई है। सोमनाथ मंदिर के पास ही सूरज मंदिर है, जो काफी आकर्षक है। महमूद गजनी ने इस मंदिर को भी ध्वस्त किया था। उसके जाने के बाद यहाँ के चावरिश राजपूतों ने इसका पुनर्निर्माण कराया। सोमनाथ मंदिर के बचे हुए स्मृति शेष यहाँ के एक पुराने मंदिर में बने संग्रहालय में रखे हैं।

279. हिंगोलगढ़ अभयारण्य यह अभयारण्य गुजरात के राजकोट जिले में है। यहाँ नीलगाय, भेड़िये और सांभर देखने को मिलते हैं। यहाँ से निकटतम बड़ा शहर राजकोट है।
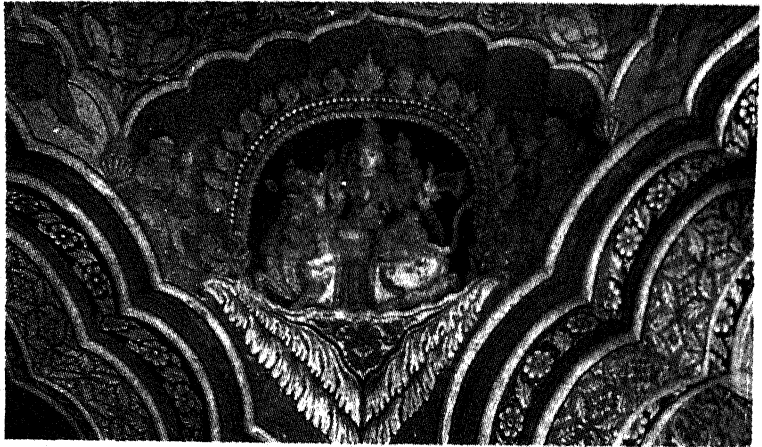
मराठा दरबार हाल, तंजावुर

***

गोआ

ऐतिहासिक विवरण

बीते दिनों में गोआ गोमन चाला, गोपकपट्टम, गोपकपुरी, गोआपुरी, गोमंतक आदि कहा जाता था। प्रथम शताब्दी ई० में गोआ सातवाहनों के अधीन था। इसके बाद यहाँ बनवासी के कदंब, मालखेड के राष्ट्रकूट, अनहिलवाड़ा के चालुक्य तथा सिलहर राजाओं का शासन रहा। चौदहवीं शताब्दी में दिल्ली के सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी ने इसे यहाँ के यादव राजाओं से छीन लिया। 1510 ई० में ऐल्फोंसो डी ऐल्बुकर्क ने विजयनगर के राजा की सहायता से गोआ पर अधिकार कर लिया। 1542 में यहाँ जीसस संत फ्रांसिसको जैवियर आए। 19 दिसंबर, 1961 तक पुर्तगालियों के अधीन रहने के बाद यह गोआ, दमन एवं दीव नाम से एक अलग संघ शासित क्षेत्र बन गया। 30 मई, 1987 को गोआ ने एक पृथक राज्य का रूप ले लिया। दमन एवं दीव अलग संघ शासित क्षेत्र बना रहा।

गोआ का कुल क्षेत्रफल 3702 वर्ग किमी है। राज्य में उत्तरी गोआ तथा दक्षिणी गोआ नाम से दो जिले हैं, जिनमें कोंकणी तथा मराठी भाषाएँ बोली जाती हैं। राज्य की साक्षरता दर लगभग 75% तथा जनसंख्या का घनत्व 316 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी है।

उत्सव

गोआ में मार्गाओ के निकट कैंसोलिम में प्रति वर्ष 6 जनवरी को जात्रा उत्सव मनाया जाता है, जो शिशु यीशु को देखने के लिए बीटलहम गए तीन पूर्वी राजाओं की यात्रा की स्मृति के रूप में मनाया जाता है। वेल्हा में 3 दिसंबर को सेंट फ्रांसिस जेवियर की स्मृति में दावत उत्सव मनाया जाता है। इसी दिन फ्रांसिस जेवियर का रसायन मढ़ा पार्थिव शरीर दर्शनार्थियों को हर दस वर्ष बाद दिखाया जाता है। मार्च-अप्रैल में लैंट से पूर्व तीन दिन तक रोमन कैथालिकों द्वारा एक जुलूस निकाला जाता है। इनके अतिरिक्त दिवाली, क्रिस्मस, गणेश चतुर्थी, शीरीगाओ जात्रा और फाटोरपा जात्रा गोआ के अन्य प्रमुख उत्सव हैं।

नृत्य

गोआ के प्रमुख नृत्य घोड़ मोदनी, मंडो, देखनी, गोफ, तालगाड़ी, शिगमो, टोनीमेल, ढंगर, मुसाल खेल, जागोर, सुवारी, फुगडी, ढालो, लैंप, वीरभद्र और कुनबी हैं।

राज्य के मुख्य पर्यटन केंद्र नीचे दिए गए हैं।

280. गोआ गोआ अपने ही नाम के राज्य का एक प्रमुख शहर है।

ऐतिहासिक महत्त्व बीजापुर राज्य में गोआ एक प्राकृतिक बंदरगाह एवं गोदी हुआ करती थी। चौदहवीं शताब्दी के अंत में यहाँ बहमनी वंश के मुजाहिद का शासन था। उसकी हत्या के बाद विजयनगर के हरिहर द्वितीय (1377-1405) ने यहाँ से बहमनी सेना को निकालकर इस पर अधिकार कर लिया था। 1472 ई० में बहमनी वंश के महमूद गावाँ ने गोआ पर आक्रमण करके इसे आसानी से जीत लिया था। मुगल काल में यह व्यापार का एक प्रमुख केंद्र था। गोआ 1510 ई० तक पूर्वी साम्राज्य का एक प्रमुख केंद्र था, जब भारत में पुर्तगाल के दूसरे राज्यपाल एल्फोंसो डी एल्बुकर्क ने इसे बीजापुर के सुलतान से छीन लिया था। 1540 ई० में पुर्तगालियों ने यहाँ के सारे हिंदू मंदिरों को नष्ट कर दिया। 18 दिसंबर, 1961 तक यह उन्हीं के अधीन रहा। उस दिन पुर्तगालियों ने इसे भारत को सौंप दिया।

पर्यटन स्थल गोआ में भारत का सबसे प्रमुख और सबसे लंबा दर्शनीय समुद्री तट है, जहाँ पर्यटक हर वर्ष लाखों की संख्या में आते हैं। इसकी लंबाई 105 किमी है। ऐसा भी माना जाता है कि यहाँ प्रतिवर्ष इसकी जनसंख्या से अधिक पर्यटक आते हैं। लंबे समय तक पुर्तगालियों के अधीन और अंग्रेजों के संपर्क में रहने के कारण यहाँ भारत, पुर्तगाल और इंग्लैंड की मिश्रित संस्कृति के दर्शन होते हैं। यहाँ के कुछ नगरों के नाम भी पुर्तगाल के प्रसिद्ध व्यक्तियों यथा वास्कोडिगामा, मार्गाओ, मापुआ, पोंडा, बोंडला आदि के नामों पर हैं। यहाँ का प्रमुख भोजन चावल और मछली है। गोआ भारत के रोमांचक समुद्री तट के रूप में ख्यात हो चुका है, इसलिए यहाँ हनीमून मनाने आए भारतीय जोड़े काफी संख्या में देखे जा सकते हैं। बरसात के मौसम में यह और अधिक आकर्षक हो जाता है। इसकी छह नदियाँ – मांडवी, जुआरी, साल, तीराकोल चापोरा और तालपोना इसी के बीचों से होकर अरब सागर में मिलती हैं। तटों पर नारियल, खजूर, कटहल, आम और काजू के पेड़ों के झुरमुट इनके सौंदर्य में और वृद्धि कर देते हैं। कालंगूट यहाँ का सबसे प्रसिद्ध बीच है, जो गोआ से 25 किमी दूर

है। इसके साथ ही अंजुना तथा कैंडोलिम बीच हैं। कोलवा बीच अपने सूर्योदय तथा सूर्यास्त के लिए जाना जाता है। यह बीच पणजी के दक्षिण में स्थित मार्गाओ से छह किमी दूर है। सात किमी दक्षिण में दोना पाउला बीच पर जुआरी नदी अरब सागर में मिलती है। मीरामार बीच पणजी से तीन किमी दूर है और आरामबोल बीच 50 किमी दूर है। अन्य बीचों में अगोडा, बेतूल, वागाटोर, बागमालो, बलसाओ, पालोलम, मार्गाओ और सेरनबातिन बीच प्रमुख हैं। इन सब में आरामबोल बीच कहीं अधिक निर्जन एवं रोमांचकारी है। इन सभी बीचों को देखने के लिए मार्गाओ को आधार बनाना चाहिए। मार्गाओ में यूनिवर्सिटी सर्किल से पालोलम बीच देखने के लिए मोटर साइकिल तथा स्कूटर भी किराए पर मिल जाते हैं। इन बीचों पर कई दिन का समय आराम से बिताया जा सकता है।

गोआ में कुछ चर्च तथा मंदिर भी दर्शनीय हैं। सोलहवीं शताब्दी में बना बाम जीसस चर्च है, जहाँ संत फ्रांसिस जेवियर्स का 500 वर्ष पुराना पार्थिव शरीर चाँदी के ताबूत में रखा है। यहीं पर लगभग 450 वर्ष पुराना सेंट कैथेड्रॉल चर्च, मंगेशी में मंगेश मंदिर, मरदोल में महालसा मंदिर, पणजी से 23 किमी दूर पोंडा में 400 वर्ष पुराना शिवमंदिर तथा 33 किमी दूर केवलम में शांता दुर्गा मंदिर है। मंदिर का निर्माण सतारा के महाराज साहू ने 1728 में कराया था। इसी नाम के दो मंदिर गोआ में भी हैं। यहाँ बिचोलिम में सप्तकोटेश्वर मंदिर है।

गोआ के अन्य पर्यटन स्थलों में केसरवाल तथा दूध सागर प्रपात, भगवान महावीर एवं कोठी गाओ वन्य जीव अभयारण्य, डॉ सलीम अली पक्षी विहार, मोयम झील, गोआ संग्रहालय तथा अगोडा किला प्रमुख हैं।

कैसे तथा कब जाएँ गोआ वायु तथा सड़क मार्ग के अतिरिक्त देश-विदेश के अन्य शहरों से जल-मार्ग से भी जुड़ा हुआ है। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन 43 किमी दूर मार्गाओ तथा वास्कोडिगामा है। यहाँ का तापमान वर्ष भर 33°से से 20°से के बीच रहता है। जून से सितंबर तक बरसात के दिनों को छोड़कर यहाँ कभी भी जाया जा सकता है।

ठहरने की सुविधाएँ गोआ में ठहरने के लिए अनेक होटल तथा सरकारी टूरिस्ट होम एवं कॉटेज हैं, जिनमें पहले बुकिंग करा लेना ठीक रहेगा। कालंगूट बीच में पर्यटकों के ठहरने की अच्छी सुविधा है।

पर्यटन सुविधाएँ गोआ का जीटीडीसी पणजी से उत्तरी तथा दक्षिणी गोआ के भागों का टूर आयोजित करता है, जिनके अंतर्गत सभी प्रमुख स्थलों का भ्रमण कराया जाता है। पणजी में जीटीडीसी का कार्यालय त्रायोनोरा अपार्टमेंट, डॉ

अल्वारेज कोस्टा मार्ग पर तथा पर्यटन विभाग का टूरिस्ट होम पत्तो में है। पर्यटन सूचना केंद्र टूरिस्ट शोपिंग कंप्लेक्स, मापुसा; टूरिस्ट होस्टल, मार्गाओ; डेबोलिम एयरपोर्ट; टूरिस्ट होस्टल, वास्को और कदंब बस स्टैंड, पणजी में हैं। मापुसा बीच से नोर्थ गोआ टूर, साउथ गोआ दर्शन तथा तेरेखोल फोर्ट के टूर; कोलवा बीच से नोर्थ गोआ दर्शन और पारंपरिक टूर; वास्को से नोर्थ गोआ टूर तथा पारंपरिक टूर; मागाओ बीच से नोर्थ गोआ दर्शन टूर और पारंपरिक टूर तथा कालंगूट बीच से नोर्थ गोआ टूर और बीच स्पेशल टूर भी संचालित किए जाते हैं। गोआ में सांता मोनिका, राधिका और मालविका समुद्री जहाजों द्वारा जल यात्रा भी कराई जाती है। दोना पाउला एवं मार्गाओ हार्बर के मध्य तथा जुआरी एवं मांडवी नदियों पर अनेक जगह मोटर बोट, लाँच तथा नौकाएँ उपलब्ध रहती हैं। चाँदनी रात में जल-क्रीड़ा के लिए यहाँ होवरक्राफ्ट तथा जलबाइक भी मिलते हैं। स्थानीय भ्रमण के लिए यहाँ सरकारी बसें, टैक्सियाँ तथा मोटर साइकिलें मिलती हैं।

281. चौरावों पक्षी विहार इस विहार की स्थापना पणजी के उत्तर-पश्चिम में समुद्री पक्षियों के अध्ययन के लिए की गई है, जिसके लिए पर्यटक यहाँ कई-कई दिन ठहरे रहते हैं। यहाँ समुद्री जीव-जंतु, धनेश, पिसूरी हरिण, उड़ने वाली गिलहरी आदि देखने को मिलते हैं।

282. पणजी यह शहर गोआ से 9 किमी दूर है और गोआ राज्य की राजधानी है। समुद्र के किनारे बसा होने के कारण यह देशी-विदेशी पर्यटकों का एक चहेता स्थान है।

पर्यटन स्थल पणजी के पर्यटन स्थलों की जानकारी के लिए कृपया गोआ देखें। जीटीडीसी पणजी से उत्तरी गोआ, दक्षिणी गोआ, ग्राम-दर्शन, दुधसागर, तेरेखोल फोर्ट तथा बीच स्पेशल टूर आयोजित करता है। पणजी में जीटीडीसी का आरक्षण कार्यालय त्रायोनोरा अपार्टमेंट, डॉ. अल्वारेस कोस्टा रोड पर है। आईटीडीसी का पर्यटक सूचना केंद्र वर्च स्क्वेयर में कम्युनीडेड बिल्डिंग में है।

283. बनवासी यह गोवा के निकट है। प्राचीन काल में इसे वैजयंती भी कहा जाता था।

ऐतिहासिक महत्त्व प्रथम शताब्दी ई०पू० में चेर राजा नेडुंजेराल अदन ने इसे जीत लिया था। समुद्रगुप्त के आक्रमण के पश्चात जब पल्लव शक्ति क्षीण हो गई, तो चौथी शताब्दी ई० के मध्य में भारत के दक्षिण-पश्चिमी भाग में मयूरवर्मा

(345-60) ने कदंब वंश की स्थापना की और बनवासी को अपनी राजधानी बनाया। उसके बाद कंगवर्मा (360-85), भागीरथ (385-410), रघु (410-25), कुकुस्थवर्मा (425-50), मृगेश वर्मा (475-88), मांधतावर्मा (488-500), रविवर्मा (500-36) तथा कृष्णवर्मा द्वितीय (550-85) ने यहाँ से शासन किया। कदंब राजा मानव्य वंश के ब्राह्मण थे। कुकुस्थवर्मा इस वंश का सबसे प्रसिद्ध राजा था। उसके राज्यकाल में समृद्धि थी। उसने अपनी एक पुत्री का विवाह गुप्त राजकुमार से किया था। उसका पुत्र शांतिवर्मा भी एक प्रसिद्ध शासक था। उसने अपने दक्षिणी क्षेत्र अपने छोटे भाई कृष्णवर्मा को सौंप दिए थे। इस प्रकार कृष्णवर्मा उन क्षेत्रों का स्वतंत्र शासक बन गया। उसने एक स्वतंत्र शासक की तरह अश्वमेध यज्ञ भी किया। कृष्णवर्मा पल्लवों के साथ लड़ता हुआ मारा गया। बाद में शांतिवर्मा के पुत्र मृगेशवर्मा ने गंगों और पल्लवों के साथ युद्ध किए, परंतु हार गया। हरिवर्मा के समय में कदंबों ने अपने राज्य का उत्तरी भाग खो दिया। पुलकेसिन प्रथम ने उनके अधीनस्थ बादामी में 545 ई० में एक मजबूत किला बनवा लिया। बाद में पुलकेसिन प्रथम के पुत्र कीर्तिवर्मा ने बनवासी को अपने कब्जे में कर लिया। तेरहवीं शताब्दी में द्वारसमुद्र के होयसल राजा नरसिंह द्वितीय (1220-38) ने कदंब के राजा को हराया। बनवासी में महाराष्ट्र के चूटुकूल राजाओं के लेख मिले हैं।

284. भगवान महावीर राष्ट्रीय उद्यान यह उद्यान पश्चिमी घाट की पहाड़ियों की तलहटी में कर्नाटक की सीमा के साथ समुद्र के समीप स्थित है। इसे राष्ट्रीय उद्यान का दर्जा 1978 में दिया गया था। समुद्र के निकट होने के कारण यहाँ समुद्री जीव-जंतु और हाथी, भालू, चीतल, तेंदुए आदि देखने को मिलते हैं। यहाँ से निकटतम बड़ा शहर 29 किमी दूर पोंडा है। यहाँ का हवाई अड्डा डैबोलिम 40 किमी दूर है।

285. वैजयंती कृपया बनवासी देखें।

चंडीगढ़

286. चंडीगढ़—निर्माण चंडी (दुर्गा) का गढ़ अर्थात् चंडीगढ़ भारत की स्वतंत्रता के बाद का स्थापित नगर है। तत्कालीन पंजाब की राजधानी लाहौर के पाकिस्तान में चले जाने के कारण पंजाब के लिए नई राजधानी के निर्माण की आवश्यकता पड़ी। इसी आवश्यकता को पूरा करने के लिए सुनियोजित एवं खुला शहर चंडीगढ़ बनाया गया। इस शहर का नक्शा प्रसिद्ध फ्रांसीसी वास्तुकार ली कार्बूजियर द्वारा बनाया गया था। 1966 में पंजाब के पुनर्गठन के बाद पंजाब राज्य में से पंजाब एवं हरियाणा दो राज्य बना दिए गए। तब दोनों राज्यों ने चंडीगढ़ को अपने में शामिल करने की माँग की। यह मामला हल न होने के कारण इसे 1 नवंबर, 1966 को दोनों राज्यों की राजधानी बना दिया गया तथा चंडीगढ़ शहर एवं इसके आस-पास के कुछ गाँवों को संघ शासित क्षेत्र घोषित कर दिया गया। दोनों राज्यों के साथ-साथ संघ शासित क्षेत्र की राजधानी होने के कारण यहाँ भारी संख्या में सरकारी कर्मचारी रहते हैं, जिस कारण इसे बाबुओं की नगरी भी कहा जाता है।

संघ शासित क्षेत्र का क्षेत्रफल केवल 114 वर्ग किमी है। क्षेत्र में जनसंख्या का घनत्व 5632 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी है, जो दिल्ली के बाद देश में दूसरे नंबर पर है। क्षेत्र की साक्षरता दर लगभग 78% है। क्षेत्र की मुख्य भाषाएँ हिंदी और पंजाबी हैं।

रॉक गार्डन, चंडीगढ़ की एक कला

पर्यटन स्थल चंडीगढ़ में कई दर्शनीय स्थल हैं। चंडीगढ़ के

उत्तरी भाग से दक्षिणी भाग तक आठ किमी लंबे क्षेत्र में लेजर वैली फैली है। बागों और फूलों से भरी यह सैरगाह एकदम शांत और पर्यटकों के लिए मनमोहक है। चंडीगढ़ में सचिवालय और हाईकोर्ट की इमारतें भी दर्शनीय हैं। इनके पास ही रॉक गार्डन है, जो बेकार चीजों से बनाया गया है। इसका निर्माण नेकचंद द्वारा किया गया था। इसके पास ही सुखना झील है। इसका निर्माण 1958 में किया गया था। यह पिकनिक व नौका विहार के लिए अच्छा स्थान है। नौवीं एशियाई नौकायन प्रतियोगिता यहीं हुई थी। चंडीगढ़ की हृदय स्थली सैक्टर 17 के सामने एक विशाल रोज गार्डन है। भारत के पूर्व राष्ट्रपति जाकिर हुसैन के नाम पर इसका नाम जाकिर रोज गार्डन रखा गया है। इस बाग में हजारों किस्मों के गुलाबों की प्रजातियाँ हैं। इसके बीच में एक शक्तिशाली फव्वारा भी है, जिसकी धार लगभग 60 फुट ऊपर तक जाती है। सैक्टर 10 में एक राजकीय संग्रहालय है। यहाँ एक बड़ा दर्शनीय चंडी मंदिर भी है। चंडीगढ़ से लगभग 20 किमी दूर छतबीड़ चिड़ियाघर है, जहाँ शेर एवं हरिण सफारी की भी व्यवस्था है।

उपलब्ध सुविधाएँ चंडीगढ़ देश के सभी भागों से वायु, रेल एवं सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। ठहरने के लिए यहाँ सैक्टर 24बी में चंडीगढ़ यात्री निवास तथा सैक्टर 18 में पंचायत भवन एवं यात्री निवास है, जहाँ सस्ती दरों पर ठहरने की सुविधाएँ हैं। इसके अलावा यहाँ जगह-जगह अनेक पेइंग गेस्ट-हाउस एवं छोटे-बड़े होटल हैं। यहाँ गर्मियों में तापमान 43°से और 35°से के बीच तथा सर्दियों में 14°से और 6°से के बीच रहता है।

रॉक गार्डन, चंडीगढ़ की एक कला

✪✪✪

जम्मू एवं कश्मीर

ऐतिहासिक विवरण

राजतरंगिणी तथा निलमत पुराण के अनुसार **कश्मीर क्षेत्र** पहले एक बहुत बडी झील था। ऐसा माना जाता है कि कश्यप ऋषि ने इसके पानी को उलीचकर यहाँ जमीन निकाल दी। अशोक ने यहाँ तीसरी शताब्दी ई०पू० में तथा बाद में कनिष्क ने बुद्ध धर्म का प्रचार करवाया। छठी शताब्दी ई० में इस पर हूणों का कब्जा हो गया। 530 ई० में यह घाटी स्वतंत्र हो गई, परंतु शीघ्र ही इस पर उज्जैन के शासक ने कब्जा कर लिया था। ललितादित्य (697-738) यहाँ का प्रसिद्ध हिंदू राजा था। तेरहवीं-चौदहवीं शताब्दी में यहाँ मुस्लिम राजाओं का

स्केल में नहीं
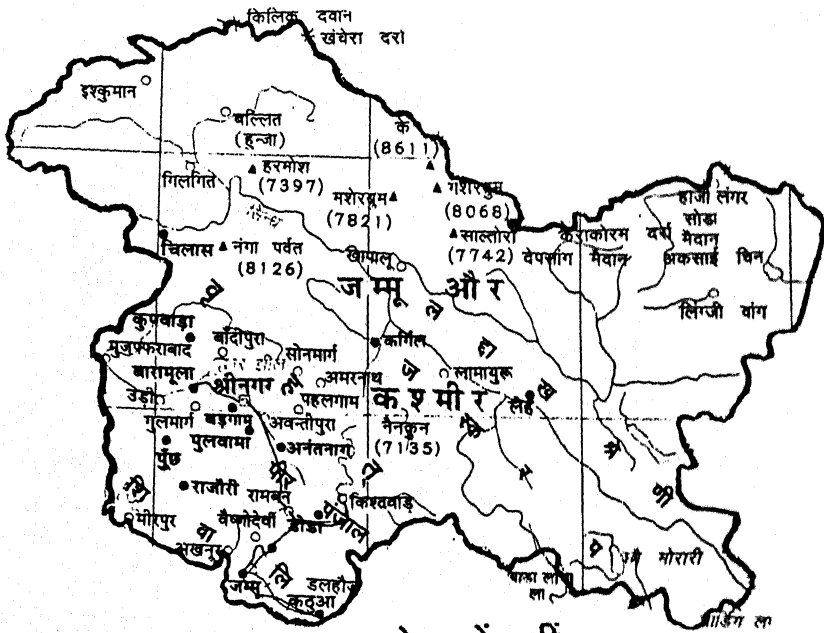
शासन रहा। जैनुल आबेदीन (1420-70) यहाँ का प्रसिद्ध मुस्लिम शासक था। वह तातारखाँ के आक्रमण के बाद यहाँ के हिंदू राजा सिंहदेव के भाग जाने पर कश्मीर आया था। बाद में चकों ने उसके पुत्र हैदरशाह को हराकर यहाँ 1586 तक राज्य किया। 1586 में अकबर ने तथा 1752 में अहमदशाह अब्दाली ने कश्मीर पर कब्जा कर लिया। पठानों ने यहाँ 1819 तक राज्य किया।

जम्मू क्षेत्र पहले बारह छोटी-छोटी रियासतों में बँटा हुआ था। डोगरा राजा मालदेव ने कुछ रियासतों को जीतकर जम्मू क्षेत्र को संगठित किया। बाद में रणजीत देव ने जम्मू में 1733 से 1782 तक राज्य किया। उसके उत्तराधिकारी कमजोर होने के कारण महाराजा रणजीत सिंह ने इस क्षेत्र को पंजाब में मिला लिया। मार्च, 1846 की अमृतसर की संधि के तहत ईस्ट इंडिया कंपनी ने महाराजा रणजीत सिंह के पुत्र महाराजा दलीप सिंह से कश्मीर लेकर उसे जम्मू के तत्कालीन महाराजा गुलाब सिंह को एक करोड़ रुपए में बेच दिया। राजा गुलाब सिंह महाराजा रणजीत सिंह के गवर्नरों में से ही एक था। रणजीत सिंह की मृत्यु के बाद वह जम्मू में स्वतंत्र हो गया था। 1947 तक जम्मू-कश्मीर राज्य डोगरा शासकों के अधीन ही रहा। देश की स्वतंत्रता के बाद तत्कालीन महाराजा हरिसिंह ने 26 अक्तूबर, 1947 को इसे भारत में मिला दिया। उनके पुत्र युवराज कर्णसिंह ने धर्म के क्षेत्र में देश की बहुत सेवा की। इस पुस्तक के छपने तक वे इस सेवा में ही लगे हुए थे।

राज्य का कुल क्षेत्रफल 222236 वर्ग किमी है। राज्य में कुल 14 जिले हैं, जिनमें उर्दू, कश्मीरी, डोगरी, पहाड़ी, बाल्टी, लद्दाखी, पंजाबी, गुजरी और दादरी भाषाएँ बोली जाती हैं।

उत्सव

राज्य में आशोज मास की शुक्लपदी की दसमी को रावण पर राम की विजय का पर्व मनाया जाता है। इसके अतिरिक्त शिवरात्रि तथा मुस्लिमों के ईद-उल-फितर, ईद-उल-जुहा, ईद-उल-मिलाद-उल-नबी, मिराज आलम तथा मुहर्रम त्यौहार भी मनाए जाते हैं। लद्दाख की हिमश गुफा में जून मास में एक विश्व प्रसिद्ध बौद्ध पर्व मनाया जाता है, जिसके दौरान एक नकाब नृत्य किया जाता है। लेह के स्पितुक मठ में काली देवी, रामबाण में सिंह संक्रांति, भादरवाह और किस्तवाड़ में मेला पाट त्यौहार भी मनाए जाते हैं। चैत्र माह (मार्च-अप्रैल) में शुक्ल पूर्णिमा को नव वारीह, वैशाख के पहले दिन वैशाखी, ज्येष्ठ के शुक्ल पक्ष में जेठ अष्टमी, आषाढ़ मास की शुक्ल पूर्णिमा को हर नवमी तथा श्रावण मास की पूर्णिमा को छड़ी मुबारक त्योहार मनाए जाते हैं। इनके अतिरिक्त प्रदेश में

शाह हमदान उर्स तथा पौष मास में खिचड़ी अमावस्या मनाई जाती है। प्रदेश में भाका और चकरी नृत्य प्रचलित हैं।

पर्यटन

कश्मीर की खूबसूरती एवं प्राकृतिक दृश्यों के कारण यह पूरे संसार में जाना जाता है तथा इसे धरती का स्वर्ग कहा जाता है। राज्य में चश्मा शाही झरने, शालीमार बाग, डल झील, गुलमर्ग, सोनमर्ग, पहलगाम, वैष्णोदेवी, पटनीटाप आदि अनेक पर्यटन स्थल हैं।

287. अमरनाथ अमरनाथ जम्मू-कश्मीर में पहलगाम और कारगिल के बीच हिंदुओं का एक पवित्र तीर्थ स्थल है। यह स्थान लगभग 12929 फुट की ऊँचाई पर है। हिंदू यात्री यहाँ एक गुफा में शिवलिंग के दर्शन करने के लिए प्रति वर्ष भारी संख्या में आते हैं। पहलगाम से यहाँ की यात्रा पहाड़ी रास्तों, सायं-सायं चलती हुई ठंडी हवा और अनेक जगह सुनसान जगहों के बीच से पैदल ही पार करनी होती है। कश्मीर की लिद्दर घाटी में स्थित यह गुफा केवल गर्मियों के दिनों में ही खुली रहती है।

अमरनाथ की गुफा पहलगाम से लगभग 50 किमी दूर है। ऐसा माना जाता है कि शिवजी ने पहलगाम से अमरनाथ तक की यात्रा पार्वती के साथ की थी और पहलगाम में उन्होंने अपने नंदी का त्याग कर दिया था। पहलगाम के बाद इस यात्रा का पहला पड़ाव 16 किमी दूर चंदनबाड़ी है। यह जगह लिद्दर नदी की दो शाखाओं के बीच है। ऐसा माना जाता है कि शिवजी ने चंदनबाड़ी में अपने अर्ध चंद्र का त्याग कर दिया था। चंदनबाड़ी के बाद एक बर्फ का पुल आता है। इस पुल को पार करने के बाद कठिन चढ़ाई आरंभ हो जाती है, जिसे पिस्सू घाटी कहा जाता है। इस चढ़ाई में 9 किमी के रास्ते में 2000 फुट चढ़ना होता है। चंदनबाड़ी से लगभग 16 किमी दूर 11500 फुट की ऊँचाई पर शेषनाग का पठार आता है। जनश्रुति के अनुसार शिवजी ने यहाँ अपने शेषनाग का त्याग कर दिया था। पठार से लगभग 500 फुट नीचे शेषनाग की गहरी झील है। यहीं से लिद्दर नदी निकलती है। शेषनाग से लगभग 8 किमी दूर 5500 मी की ऊँचाई पर महागुनस की चोटी है। इससे लगभग 800 मी चलने के बाद उतराई शुरू हो जाती है। यहाँ रास्ता बर्फ को काटकर बनाया जाता है। इस रास्ते के बाद पंचतरणी नामक पड़ाव आता है। पंचतरणी लगभग 12000 फुट की ऊँचाई पर है और शेषनाग से 13 किमी दूर है। यहाँ पंचतरणी नदी बहती है। जनश्रुति के अनुसार शिवजी ने यहाँ गंगा को छोड़ दिया था। पंचतरणी से 2 किमी बाद तंग और चढ़ाई तथा उतराई वाले बर्फ से ढके रास्तों से गुजरना होता है। इसके

बाद अमरनाथ की गुफा आती है। अमरनाथ की गुफा जिस उपत्यका में है, वहाँ अमरावती नाम की जलधारा बहती है। गुफा के सामने एक झरना बहता है। गुफा में प्रवेश करने से पहले यात्री इस झरने के पानी में नहाते हैं। गुफा में यात्री बर्फ से बने शिवलिंग की पूजा करते हैं।

अमरनाथ बारह ज्योतिर्लिंगों में से एक है। गुफा में चातुर्मास की प्रतिपदा को हिम के लिंग का निर्माण अपने आप आरंभ होता है और पूर्णिमा को पूरा हो जाता है। अमरनाथ की यात्रा पुण्यप्रद और मुक्तिदायिनी है। कहा जाता है कि भगवान शिव इस गुफा में पहले-पहल श्रावण की पूर्णिमा को आए थे। इसलिए उस दिन अमरनाथ की यात्रा का विशेष महत्त्व है। शिवलिंग के इस दिन दर्शन करने के लिए यात्रियों का एक बड़ा जुलूस श्रीनगर से श्रावण पंचमी को रवाना होता है। इसका नेतृत्व कश्मीर शारदा पीठाधीश्वर श्री शंकराचार्य जी महाराज करते हैं। जुलूस के आगे छड़ी मुबारक चलती है। इस जुलूस में साधू, नागा, संत, महंत, बैरागी, सन्यासी और गृहस्थ सभी तरह के लोग भाग लेते हैं। अमरनाथ की गुफा 150 फुट लंबी तथा 90 फुट चौड़ी है। ऐसा माना जाता है कि शिवलिंग के बाईं ओर गणेश तथा दाईं ओर पार्वती और भैरव की मूर्तियों का निर्माण होता है। सर्दियों के दिनों में यह गुफा बर्फ से ढक जाती है तथा रास्तों में भी बर्फ पड़ने के कारण इस गुफा तक नहीं जाया जा सकता।

उपलब्ध सुविधाएँ अमरनाथ श्रीनगर से लगभग 105 किमी और पहलगाम से 50 किमी दूर है। पहलगाम तक बसें मिल जाती हैं और पहलगाम से चंदनबाड़ी तक जीपें मिल जाती हैं। चंदनबाड़ी से आगे का रास्ता पैदल या खच्चर पर बैठकर पार करना पड़ता है। यदि खच्चर पर बैठकर जाना हो, तो इसका आरक्षण पहले करा लेना चाहिए। चंदनबाड़ी में ठहरने और खाने-पीने की सुविधाएँ भी हैं। चंदनबाड़ी के बाद का रास्ता जल्दी-जल्दी पार कर लेना चाहिए, क्योंकि इस रास्ते में कभी भी बर्फीला तूफान आ सकता है। रास्ते में थक कर घास में बैठकर सुस्ताना भी नहीं चाहिए, क्योंकि ऑक्सीजन की कमी के कारण यह घास भी जहरीली होती है। इसलिए थके होने पर भी रास्ते को जल्दी से जल्दी पार कर लेना ही उचित होता है। अमरनाथ की यात्रा का रास्ता बहुत कठिन और ठंड वाला होता है, अतः यात्रियों को अपने साथ पर्याप्त ऊनी कपड़े, कम्बल, ऊनी टोप, बड़े-बड़े जूते, दस्ताने आदि साथ ले जाने चाहिए। पर्यटन संबंधी सूचना के लिए पहलगाम के पर्यटन अधिकारी से संपर्क करना चाहिए।

अमरनाथ की यात्रा बहुत कष्टकर होती है। इसमें 14500 फुट तक की ऊँचाई अत्यंत प्रतिकूल परिस्थितियों में पैदल चढ़नी होती है। यात्रा के दौरान

मौसम के भी किसी भी समय खराब हो जाने और भयंकर रूप ले लेने की संभावना बनी रहती है। अमरनाथ की पवित्र गुफा के दर्शन करने के लिए यात्रियों को पहलगाम से अमरनाथ तक ऐसे प्रतिकूल मौसम में छह दिन (आने-जाने को मिलाकर) का सफर तय करना होता है। अतः इस यात्रा पर जाने वाले यात्रियों को शारीरिक रूप से योग्य होना चाहिए। यात्रा पर जाने के लिए निम्नलिखित जगहों पर स्थित जम्मू एवं कश्मीर राज्य के पर्यटन कार्यालयों से पहले रजिस्ट्रेशन कराना अनिवार्य होता है :

1) जम्मू एवं कश्मीर सरकार अतिथि गृह, चाणक्य पुरी, कौटिल्य मार्ग, नई दिल्ली (दिल्ली, राजस्थान, हरियाणा और राजस्थान के निवासियों के लिए),

2) 25-नॉर्थ विंग, वर्ल्ड ट्रेड सेंटर, कफ परेड, कोलाबा, मुंबई (महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश और गोआ के निवासियों के लिए),

3) 12-चौरंगी, कलकत्ता (पश्चिमी बंगाल, उड़ीसा, बिहार और पूर्वोत्तर के राज्यों के निवासियों के लिए),

4) दूसरी मंजिल, 36/36-ए, नार्थ उस्मान रोड, चेन्नई-17 (तमिल नाडु, केरल और पांडिचेरी के निवासियों के लिए),

5) एयरलाइंज हाउस, लाल दरवाजा, अहमदाबाद (गुजरात राज्य के निवासियों के लिए),

6) पाँचवीं मंजिल, लैफ्ट विंग, चंद्र विहार कंप्लेक्स, ऐम जे रोड, हैदराबाद (आंध्र प्रदेश और कर्नाटक के निवासियों के लिए),

7) पर्यटक स्वागत केंद्र, वीर मार्ग, जम्मू (जम्मू, पंजाब हिमाचल प्रदेश और चंडीगढ़ के निवासियों के लिए), तथा

8) पर्यटक स्वागत केंद्र, श्रीनगर (उनके लिए जो राज्य के पर्यटन कार्यालय के मुख्यालय को सीधे आवेदन करना चाहते हैं)।

आवेदन निम्नलिखित प्रोफार्मे में हर वर्ष 15 जुलाई के आस-पास तक करना होता है :

अमरनाथ यात्रा के पंजीकरण के लिए आवेदन का फार्म

1. नाम .... 2. आयु ....
3. पिता का नाम .... 4. स्थायी पता ....
5. दर्शन की वांछित तिथि ....
6. क्या ग्रुप में यात्रा कर रहे हैं .... (यदि हाँ, तो ग्रुप में व्यक्तियों की संख्या और उनका विवरण भी बताएँ)

फोटो

आवेदक के हस्ताक्षर

शारीरिक योग्यता का प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि आवेदक समुद्र तल से 14000 फुट की ऊँचाई पर यात्रा करने के योग्य है।

डाक्टर के हस्ताक्षर
एवं मुहर

रजिस्ट्रेशन-सह-पहचान पत्र

नाम .... आयु ....
पिता का नाम .... राज्य ....
पता ....
रजिस्ट्रेशन सं० .... (कार्यालय द्वारा दी जाएगी)
दर्शन की तिथि .... (कार्यालय द्वारा दी जाएगी)

आवेदन के साथ स्पीड पोस्ट की टिकट लगा तथा पता लिखा लिफाफा तथा शारीरिक योग्यता प्रमाण-पत्र लगा हो। रजिस्ट्रेशन फार्म तथा गाइड बुकें उपर्युक्त कार्यालयों में भी निःशुल्क उपलब्ध रहते हैं। रजिस्ट्रेशन हो जाने के बाद प्रत्येक यात्री को रजिस्ट्रेशन तथा पहचान पत्र दिया जाता है, जो उसे यात्रा के दौरान अपने साथ रखना होता है। साधुओं को रजिस्ट्रेशन कराने की आवश्यकता नहीं है। इसके बदले उन्हें संबंधित पंजीकरण कार्यालय द्वारा जम्मू/श्रीनगर में स्थित धर्मार्थ ट्रस्ट/दर्शनी अखाड़ा के माध्यम से यात्रा पर्चियाँ जारी की जाती हैं। पवित्र गुफा के दर्शन के लिए प्रतिदिन लगभग 2500 यात्रियों को 'पहले आओ, पहले जाओ' के आधार पर जाने दिया जाता है। यात्रियों को दर्शन की तिथि से 5 दिन पहले जम्मू तथा 4 दिन पहले पहलगाम पहुँचना होता है। जेकेटीडीसी तथा प्राइवेट पार्टियाँ इस यात्रा के प्रत्येक चरण पर ठहरने के लिए टेंट की अच्छी सुविधा उपलब्ध कराते हैं। इस सुविधा के लिए भुगतान करना होता है। इसकी बुकिंग पहलगाम से भी कराई जा सकती है। यात्रा प्रतिकूल मौसम में होने के कारण यात्रियों को यात्रा पर रवाना होने से पहले अपना बीमा करा लेना चाहिए तथा अपने साथ बरसाती कोट, गर्म कपड़े, छाता, लाठी, फर्स्ट ऐड का सामान (विशेषकर अपनी-अपनी जरूरत के लिए) ले जाना चाहिए।

288. किस्तवाड़ राष्ट्रीय पार्क इस पार्क की स्थापना 1981 में जम्मू-कश्मीर और हिमाचल प्रदेश की सीमा पर की गई। यहाँ तेंदुए, जंगली बिल्ली, हरिण, हंगुल, मरखोर, भूरे लंगूर आदि मिलते हैं।

289. कुंडलवन यह स्थान श्रीनगर के पास है।

धार्मिक महत्त्व कुंडलवन में प्रथम शताब्दी ई० में बौद्ध धर्म की चौथी सभा (महासंगीति) हुई थी, जिसे राजा कनिष्क ने बुलाया था। इसमें अश्वघोष, नागार्जुन, पार्श्व और अग्निमित्र समेत 500 भिक्षुओं ने भाग लिया था। इस सभा के प्रधान वसुमित्र थे। अश्वघोष नामक विद्वान ने इसमें प्रमुख रूप से भाग लिया था। कनिष्क उसे मगध से पेशावर अपने साथ लाया था। इस सभा में बौद्ध धर्म की पुस्तकों पर टीकाएँ और महाविभाष्य नामक पुस्तकें लिखी गईं। ऐसा माना जाता है कि कनिष्क ने इस सभा के निर्णय ताम्रपत्रों पर खुदवाकर उन्हें एक बक्से में बंद करके एक स्तूप के नीचे गड़वा दिया था। इस सभा के बाद बौद्ध धर्म हीनयान और महायान दो शाखाओं में बँट गया।

290. कुड यह स्थान जम्मू से पाँच घंटे की दूरी पर है। यह वैष्णो देवी के रास्ते में पड़ता है। वैष्णो देवी जाते या आते समय इसे भी देखा जा सकता है। झरना, स्वामी की तलाई, नागदेवता को समर्पित पहाड़ी मंदिर यहां की दर्शनीय चीजें हैं .... और प्रकृति की तरफ से आप यहाँ से लेकर जाएँगे, शीतल समीर का स्वास्थ्यवर्धक अनुभव, चमकती-दमकती और हरी-भरी पर्वतीय दृश्यावली तथा इंद्रदेव के सतरंगे उपहार इंद्रधनुष का नजारा। ऐसे स्थान का अवलोकन करने से भला आप क्यों चूकें ?

291. गुलमर्ग गुलमर्ग (फूलों की घाटी) 8500 फुट की ऊँचाई पर श्रीनगर के दक्षिण में है। श्रीनगर से यहाँ कार तथा उसके बाद खच्चर से पहुँचा जा सकता है। गुलमर्ग कभी ब्रिटिश रेजीडेंट का ग्रीष्मकालीन आवास हुआ करता था। इस कारण यहाँ यूरोपियाई वातावरण अर्थात् टेनिस कोर्ट, गोल्फ कोर्स तथा बड़े-बडे होटल देखने को मिलते हैं। यहाँ से श्रीनगर सहित पूरी कश्मीर घाटी तथा 26 हजार फुट ऊँचे नंगा पर्वत के दर्शन किए जा सकते हैं। गुलमर्ग में स्कीइंग की सुविधा भी है। इसके लिए कई स्कीइंग लिफ्टें और उपकरण उपलब्ध हैं। स्कीइंग के लिए दिसंबर से मार्च तक का समय सर्वोत्तम होता है। गुलमर्ग के पास खिलनमार्ग, कोंगडोरी, सेवन स्प्रिंग और अलपत्थर झील दर्शनीय हैं।

यहाँ एक जीव विहार भी है। यह विहार 180 वर्ग किमी क्षेत्र में फैला हुआ है। यहाँ पर देवदार के वन मिलते हैं। इन वनों में तेंदुए, भूरे भालू, मरखोर, कस्तूरी मृग, कश्मीरी बारासिंघे और विभिन्न प्रकार के पक्षी मिलते हैं। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय अप्रैल से अक्तूबर तक का होता है।

292. जम्मू—ऐतिहासिक महत्त्व मार्च, 1846 की अमृतसर की संधि के तहत ईस्ट इंडिया कंपनी ने कश्मीर को पंजाब के महाराजा दलीप सिंह से लेकर जम्मू के तत्कालीन महाराजा गुलाब सिंह को एक करोड़ रु. में बेच दिया था। महाराजा गुलाब सिंह के बाद उनके पुत्र रणवीर सिंह यहाँ के महाराजा हुए। परंतु चीन की सीमा पर स्थित होने के कारण कश्मीर को गुलाब सिंह को बेचने के तुरंत बाद रूस, अफगानिस्तान, तिब्बत और अंग्रेजों को कश्मीर के गिलगिट क्षेत्र का महत्त्व समझ में आ गया और वे इसे अपने अधिकार में लेने की कोशिश करने। सर्वप्रथम अंग्रेजों ने इसे 1885 में अपने अधिकार में लिया। तब के बाद देश की स्वतंत्रता तक यह कभी अंग्रेजों के हाथों में रहा और कभी कश्मीर के महाराजा के हाथों में। 1936 में अंग्रेजों ने इसे कश्मीर के महाराजा हरिसिंह से 60 वर्ष के पट्टे पर ले लिया। देश की स्वतंत्रता के समय कश्मीर को भारत की अन्य रियासतों की तरह भारत अथवा पाकिस्तान में मिलने का निर्णय तुरंत करना था। भारत के तत्कालीन गवर्नर-जनरल लार्ड माउंटबेटन यह नहीं चाहते थे कि कश्मीर भारत में शामिल हो। क्योंकि इससे उसे शीत युद्ध संबंधी नीति के अंतर्गत सोवियत संघ को घेरने के लिए गिलगिट में अपने सामरिक अड्डे स्थापित करने की संभावनाएँ समाप्त होती दिखाई दे रही थीं। अतः माउंटबेटन ने महाराजा हरिसिंह के प्रधान मंत्री रामचंद्र काक की अंग्रेज पत्नी के माध्यम से महाराजा हरिसिंह को जम्मू-कश्मीर का भारत में विलय न करने के लिए उकसाया। हालाँकि महाराजा इसे पाकिस्तान में भी शामिल नहीं करना चाहता था, फिर भी वह जानता था कि रियासत के सभी रास्ते पश्चिमी पंजाब के उस क्षेत्र से होकर गुजरते थे, जो पाकिस्तान में चले गए थे। उधर 16 अगस्त, 1947 तक गुरदासपुर जिले के भारत अथवा पाकिस्तान में मिलने के बारे में भी कोई फैसला नहीं हो सका था। ऐसी स्थिति को देखते हुए महाराजा ने भारत तथा पाकिस्तान के साथ यथास्थिति रखने की पेशकश की। इसे पाकिस्तान ने तो स्वीकार कर लिया, लेकिन भारत ने इस समझौते पर हस्ताक्षर नहीं किए। पाकिस्तान के तत्कालीन गवर्नर-जनरल जिन्ना ने इस समझौते के बावजूद जम्मू-कश्मीर में आवश्यक वस्तुओं की पूर्ति रोक दी। साथ ही उसने अपने अंग्रेज सैनिक सचिव को तीन बार श्रीनगर भेजकर कश्मीर को पाकिस्तान में मिलाने के

अमर महल संग्रहालय, जम्मू

लिए दबाव डाला। जब ऐसे बात न बनी, तो पाकिस्तान ने सितंबर, 1947 में अपने सैनिक कबाइलियों की आड़ में कश्मीर भेजने शुरू कर दिए। अक्तूबर के मध्य में जब हालात बिगड़ गए, तो महाराजा हरिसिंह ने सरदार विट्ठल भाई पटेल की सलाह पर 15 अक्तूबर, 1947 को रामचंद्र काक को प्रधानमंत्री पद से हटाकर लाहौर उच्च न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधीश मेहरचंद महाजन को नया प्रधानमंत्री बना दिया। इसके बाद महाजन तथा सरदार पटेल ने एक योजना बनाई, जिसके अनुसार राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के तत्कालीन सरसंघ चालक श्री माधव सदाशिव गोलवलकर को 17 अक्तूबर, 1947 को श्रीनगर भेजा गया। गोलवलकर ने महाराजा पर कश्मीर को भारत में मिलाने के लिए दबाव डाला, परंतु पाकिस्तान को इस समाचार की भनक लग गई और उसने 21 अक्तूबर, 1947 को अपनी गतिविधियाँ तेज कर दीं। स्थिति को बिगड़ता हुआ देख महाराजा हरिसिंह ने 24 अक्तूबर, 1947 को भारत सरकार से मदद की अपील की। अपील प्राप्त होते ही लार्ड माउंटबेटन की अध्यक्षता में भारत सरकार की प्रतिरक्षा समिति की बैठक हुई। बैठक में यह तय हुआ कि गृह सचिव श्री वी.पी. मेनन तुरंत श्रीनगर जाकर वहाँ के हालात की रिपोर्ट दें। मेनन ने अपनी रिपोर्ट में रियासत की पूरी मदद करने की सिफारिश की। परंतु लार्ड माउंटबेटन ने एक कानूनी पहलू उठा दिया। उन्होंने कहा कि कश्मीर ने अभी भारत या पाकिस्तान में से किसी एक में शामिल होने का निर्णय नहीं किया है और वह अभी भी एक स्वतंत्र देश है, इसलिए वहाँ भारतीय सेना भेजना ठीक नहीं होगा। उन्होंने कहा

कि यदि महाराजा भारत की मदद चाहते हैं, तो पहले जम्मू-कश्मीर को भारत में मिल जाना चाहिए। महाराजा ने यह माँग स्वीकार कर ली और कश्मीर को भारत में मिला दिया गया। श्रीनगर में भारतीय सेना भेज दी गई। इसकी पहली टुकड़ी सिख बटालियन की थी, जो गुड़गाँव जिले में तैनात थी। कुछ दिनों बाद संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद में पश्चिमी देशों की दुरभिसंधि के फलस्वरूप 1 जनवरी, 1949 को युद्ध रोक दिया गया। इस प्रकार गिलगिट ऐजेंसी सहित जम्मू-कश्मीर का 40% हिस्सा पाकिस्तान के कब्जे में रह गया। संविधान की धारा 370 के अनुसार जम्मू-कश्मीर का अलग संविधान बनाकर उसका अलग सदरे रियासत (राष्ट्रपति) नियुक्त कर दिया गया। शेख अब्दुल्ला को राज्य का प्रधान मंत्री बनाया गया। महाराजा हरिसिंह ने कश्मीर छोड़ दिया। कश्मीर में प्रवेश के लिए परमिट प्रणाली लागू कर दी गई। तब डॉक्टर श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने परमिट प्रणाली तोड़कर कश्मीर में प्रवेश किया। उन को नजरबंद कर लिया गया और नजरबंदी के दौरान ही जून, 1953 में रहस्यपूर्ण परिस्थितियों में उनकी मृत्यु हो गई। इसी दौरान भारत को शेख अब्दुल्ला के ब्रिटिश ऐजेंट होने के दस्तावेजी प्रमाण मिल गए। फलस्वरूप 1953 में उसे प्रधानमंत्री के पद से हटाकर बंदी बना लिया गया। परमिट प्रणाली समाप्त कर दी गई। कश्मीर को भारत के सर्वोच्च
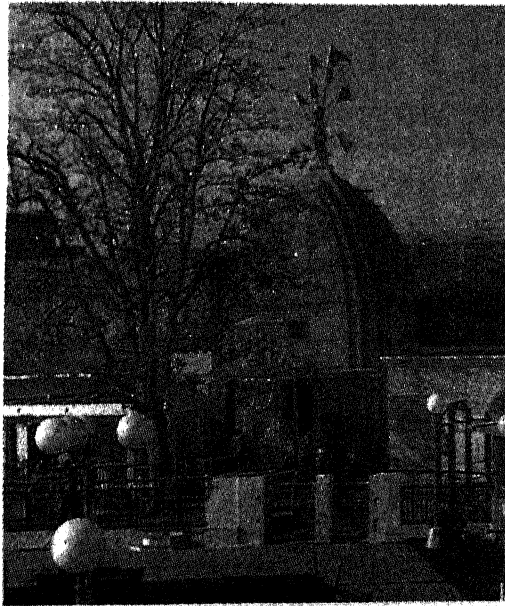
बावे वाली माता मंदिर, जम्मू

न्यायालय, चुनाव आयोग तथा महालेखा परीक्षक के अधिकार-क्षेत्र में शामिल कर दिया गया। कुछ दिनों बाद सदरे रियासत का पद समाप्त करके राज्यपाल का पद बनाया गया। राज्यपाल की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाने लगी। प्रधानमंत्री पद को मुख्यमंत्री पद में बदल दिया गया। बाद में शेख अब्दुल्ला को भी रिहा कर दिया गया था। परंतु उनकी भारत विरोधी गतिविधियों को देखते हुए उन्हें फिर कैद कर लिया गया। उधर पाकिस्तान ने 13 अगस्त, 1948 और 5 जनवरी, 1949 के सुरक्षा परिषद के प्रस्तावों को आधार बनाकर कश्मीर में जनमत संग्रह कराने के लिए दबाव डाला। परंतु भारत ने स्पष्ट कर दिया कि 13 अगस्त, 1948 के प्रस्ताव के आधार पर पहले पाकिस्तान को कश्मीर अधिकृत क्षेत्र से अपनी सेनाएँ हटानी थीं तथा इसके बाद ही 5 जनवरी, 1949 के प्रस्ताव के आधार पर जनमत संग्रह प्रशासक की नियुक्ति होनी थी, परंतु पाकिस्तान ने इसे कभी नहीं माना। फलस्वरूप कश्मीर की समस्या आज तक भी वैसी की वैसी बनी हुई है। पाकिस्तान ने कश्मीर पर कब्जा करने के इरादे से 1999 में भी कई हजार घुसपैठिए राज्य के कारगिल क्षेत्र मे भेज दिए, परंतु भारतीय सेना ने उन्हें खदेड़ कर वापस भेज दिया।

पर्यटन स्थल आधुनिक काल में भी जम्मू, जम्मू-कश्मीर राज्य का प्रवेश द्वार है और राज्य की शीतकालीन राजधानी है। हिमालय पर्वत की घाटियों में तवी नदी के किनारे स्थित यह शहर एक मनोहरी पर्यटक स्थल है। जम्मू में प्राकृतिक सौंदर्य तो है ही, कला संस्कृति एवं ऐतिहासिकता की दृष्टि से भी यह एक महत्त्वपूर्ण स्थान है।

जम्मू में तवी नदी के किनारे अमर महल संग्रहालय है, जिसमें पहाड़ी चित्रकला तथा शाही परिवार से संबंधित वस्तुएँ हैं। इसका निर्माण फ्रेंच महल के नमूने पर किया गया है। यहीं पर महाराजा गुलाब सिंह ने 1835 ई० में रघुनाथ मंदिर बनवाना शुरू किया था, जिसे बाद में उनके पुत्र महाराजा रणवीर सिंह ने 1860 ई० में पूरा कराया। इसमें सोने की पत्तियाँ लगी हैं। जम्मू में 'रणवीरेश्वर मंदिर' के नाम से एक प्रसिद्ध शिव मंदिर भी है, जिसे 1883 ई० में महाराजा रणवीर सिंह ने बनाया था। जम्मू में राजाओं के कुछ महल थे, जो पुराने सचिवालय के रूप में प्रयुक्त किए गए थे। मुबारक मंडी अपनी कारीगरी के लिए जानी जाती है। इसी में डोगरा आर्ट गैलरी भी है।

जम्मू के अन्य दर्शनीय स्थलों में बाहु का किला, महामाया मंदिर, पीर बद्धन अली शाह की दरगाह, पीर खो गुफा मंदिर, पंचबख्तर मंदिर, बावे वाली माता मंदिर, अमर महल संग्रहालय तथा बाग-ए-बाहु प्रमुख हैं।

जम्मू के आस-पास के दर्शनीय स्थलों में अखनूर (32 किमी), जाजर कोटली (35 किमी), पुरमंडल मंदिर (40 किमी), सुरिंसर झील (42 किमी), कटरा (50 किमी), मसर झील (60 किमी), बाबा धनसर पिकनिक स्थल (65 किमी), डेरा बाबा बंदा (75 किमी), सलाल बाँध और झील (95 किमी), शिव खोरी गुफा (100 किमी), कुड (106 किमी), पटनीटाप (112 किमी), सनासर झील (119 किमी), शुद्ध महादेव (120 किमी), बटोटे (125 किमी), गौरी कुंड, मंतालाई ओर क्रिमची मंदिर समूह भी देखे जा सकते हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ जम्मू देश के अन्य भागों से वायु, रेल व सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। जेकेटीडीसी यहाँ के आस-पास के स्थलों के टूर संचालित करता है। निगम के पर्यटक स्वागत केंद्र वीर मार्ग, रेलवे स्टेशन तथा एयरपोर्ट पर हैं। जम्मू क्षेत्र में ट्रैकिंग, स्कीइंग और आकाशीय खेलों की सुविधाएँ भी हैं। जम्मू का तापमान गर्मियों में 43°से और 23.4°से के मध्य तथा सर्दियों में 26.2°से और 4.3°से के मध्य रहता है। यहाँ भ्रमण के लिए सितंबर से अप्रैल तक का समय अच्छा रहता है।

293. डल झील डल झील श्रीनगर के पास एक प्रमुख आकर्षण है। यह श्रीधरा पर्वत की तलहटी में है। यह झील झरनों के पानी से भरी होने के कारण इसका पानी बिल्कुल साफ रहता है। यह 12 वर्ग मील क्षेत्र में फैली हुई है। इसके आस-पास चिनार के पेड़ों के झुरमुट हैं। ये पेड़ मुगलों ने लगवाए थे और शालीमार बाग की आधार दृश्यावली का काम करते हैं। शालीमार बाग से तात्पर्य है प्रेम का उद्यान। इस उद्यान का निर्माण जहाँगीर ने नूरजहाँ के भ्रमण के लिए करवाया था। डल झील का आनंद हाउस बोट में बैठकर लिया जा सकता है। यह नाव पूरे घर की तरह बनी होती है और इसका विकास एक तात्कालिक आवश्यकता के रूप में हुआ था। जम्मू एवं कश्मीर राज्य ब्रिटिश शासन के अधीन नहीं था। उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में यहाँ के महाराजा ने अंग्रेजों को यहाँ की धरती पर रहने से मना कर दिया था। फलस्वरूप वे घर की तरह ढकी हुई नाव बनाकर इस झील में रहने लगे। तब से झील में हाउस बोट डालने की परम्परा बन गई और आज यही हाउस बोट भारत में अपनी तरह की पहली तथा अलग होने के कारण पर्यटकों के लिए आकर्षण का केंद्र बिंदु बन जाती है। इस हाउस बोट तक जाने के लिए शिकारा का प्रयोग किया जाता है। शिकारा छोटी-छोटी नावें होती हैं, जिनमें अधिकतम चार आदमी बैठ सकते हैं। इन हाउस बोटों में स्थानीय व्यक्ति छोटी-छोटी चीजें बेचते हुए मिल जाते हैं। सर्दी के मौसम में डल झील जम जाती है, तब पर्यटक यहाँ स्केटिंग का आनंद

उठाते हैं। डल झील से ही सीढ़ीदार जमीन पर फूलों के पेड़ों से निशात बाग आरंभ होता है। इसका निर्माण नूरजहाँ के भाई आसफ खाँ ने करवाया था। इसी के सामने झील के दूसरी ओर नसीम बाग (प्रातःकालीन समीर का बाग) है। नसीम बाग यहाँ का सबसे पुराना बाग है। इसका निर्माण अकबर ने कश्मीर की विजय के बाद करवाया था। डल झील से कुछ दूर श्रीनगर के पास चश्माशाही (शाही झरने) हैं। इस झील में ठहरने के लिए हाउस बोटों में छोटे-छोटे केबिन बने हुए हैं। इन केबिनों में ठहरने से एक अलग तरह का अनुभव होता है।

294. त्रिकुट जीव विहार यह विहार जम्मू के पर्वतीय क्षेत्र में तीन वर्ग किमी में फैला हुआ है। यहाँ पर जंगली बिल्ली, चीतल, सेही, मरखोर, लमचीते, मोनाल आदि जीव मिलते हैं। यहाँ से निकटतम शहर जम्मू है।

295. दाचीग्राम राष्ट्रीय उद्यान यह उद्यान जम्मू-कश्मीर की राजधानी श्रीनगर से 22 किमी की दूरी पर स्थित है। यह उद्यान हंगल जाति के हरिणों के लिए स्थापित किया गया हे। यहाँ पर काले भालू, तेंदुए, सेरौंव, मोनाल, लंबी पूँछ वाले मोर, सेह और नाना प्रकार के पक्षी मिलते हैं। यहाँ भ्रमण का उपयुक्त समय मई से सितंबर तक का होता है।

296. पटनीटाप पटनीटाप जम्मू मंडल के उधमपुर जिले में जम्मू-श्रीनगर मार्ग पर जम्मू से 108 किमी दूर एक रमणीय स्थल है। 6400 फुट की ऊँचाई पर स्थित पटनीटाप आपको अपनी ओर बरबस आकर्षित कर लेगा। यहाँ आने वालों की भीड़ देखकर यह आभास हो जाता है कि आखिर पटनीटाप में अवश्य ऐसा कुछ है, जिसे देखने के लिए लोग यहाँ चले आते हैं। अगर आप पटनीटाप में वैसा कुछ देखने की सोचकर जा रहे हों, जैसा मैदानी शहरों में मिलता है यानि मंदिर, संग्रहालय आदि, तो वैसा यहाँ कुछ नहीं मिलेगा, परंतु यहाँ प्रकृति प्रेमियों के लिए बहुत कुछ है – लंबे-लंबे चीड़ और देवदार के वृक्ष, बर्फ के फाहों की बरसात, सफेद बर्फ से ढकी हुई ढलवाँ चोटियाँ, गहरे वन, कम आबादी तथा कम ट्रैफिक वाले क्षेत्र, हहर-हहर करते बादल, मनोरम पैदल स्थलियाँ और बदन को चीर देने वाली धुंधुआती हवा। तब आपको यहाँ राबर्ट फ्रास्ट की यह पंक्ति याद आ जाएगी – The woods are lovely, dark and deep ...... and miles to go before I sleep. फिर तो आप यहाँ से भी आगे चलते ही रहिए और 15 किमी दूर आप पाएँगे बठोटे, जहाँ से किस्तवाड़ एक अच्छा ट्रैकिंग स्थल है।

उपलब्ध सुविधाएँ पटनीटाप तक पहुँचने के लिए जम्मू और कटरा से सवारी बसें और टैक्सियाँ मिल जाती हैं। पटनीटाप में गर्मियों में अधिक भीड़ होती है। सर्दियों में यहाँ हिमपात, पैराग्लाइडिंग व स्कीइंग का आनंद उठाया जा सकता है। स्कीइंग और स्कीइंग सिखाने की व्यवस्था यहाँ जम्मू कश्मीर पर्यटन विभाग व जेकेटीडीसी द्वारा की गई है। अभी हाल ही में यहाँ पटनीटाप विकास प्राधिकरण का गठन भी किया गया है, जो पटनीटाप तथा इसके आस-पास के धार्मिक स्थलों यथा शुद्ध महादेव, मानतलाई, चिनैनी, सनासर आदि का विकास भी कर रहा है।

ठहरने की सुविधाएँ पटनीटाप में ठहरने के लिए जेकेटीडीसी व राज्य पर्यटन विभाग के कई टूरिस्ट बंगले और हट्स हैं।

297. पहलगाम पहलगाम लिद्दर नदी और शेषनाग झील की धाराओं के संगम पर स्थित है। यह कश्मीर का एक सुंदर स्थल तथा अमरनाथ यात्रा का आधार स्थल है। यहाँ ट्रैकरों के रहने की सुविधा भी है। यहाँ के आस-पास के स्थानों में बैसाराँ, हाजन, चंदनबाड़ी (16 किमी), शेषनाग (27 किमी), पंचतरणी (40 किमी) तथा अमरनाथ गुफा (46 किमी) दर्शनीय हैं। चंदनबाड़ी तक रास्ता समतल है और टैक्सी आदि से जाया जा सकता है। परंतु इससे आगे पैदल/खच्चर या डांडी पर बैठकर ही पहुँचा जा सकता है। राज्य सरकार ने खच्चर और डांडी वालों की दरें निर्धारित की हुई हैं।

298. बुर्जहोम यह स्थान जम्मू श्रीनगर के उत्तर-पूर्व में छह मील दूर है।

पुरातात्विक महत्त्व बुर्जहोम उन्नीसवीं शताब्दी ई०पू० के दौरान नवपाषाण युग का एक केंद्र था। उस युग के लोग यहाँ छाँद से ढके गड्ढों में रहा करते थे। वे मिट्टी के धूसर बर्तनों, पत्थर के औजारों, कुल्हाड़ियों, मूसलों, हड्डियों के सुओं, सुइयों, बरछों और पत्थर के चाकुओं का प्रयोग करते थे। वे कुत्तों और भेड़ियों को भी दफनाया करते थे। बुर्जहोम सभ्यता हड़प्पा-पूर्व और हड़प्पा-काल की थी।

299. मानसर मानसर जम्मू से 60 किमी दूर एक मनोहारी झील है। मिथक के अनुसार इसकी उत्पत्ति अर्जुन और नागकन्या अलूपी से उत्पन्न उनके पुत्र बब्रूवाहन के तीर से हुई थी। झील के किनारे पर शेषनाग, शिव, नरसिंह अवतार और दुर्गा के मंदिर हैं। इसके पास ही सरुनसर नामक एक अन्य झील

है। मानसर झील का क्षेत्रफल आधा मील है। बैशाखी, चैत्र चोदस तथा शिवरात्रि के दिन यहाँ बहुत भीड़ रहती है। झील के पास ही एक अभयारण्य है, जिसमें चीतल, नीलगाय, सारस, मोर तथा तरह-तरह के पक्षी देखे जा सकते हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ मानसर में जेकेटीडीसी का टूरिस्ट बंगला, हटें तथा डोरमिटरी है, जहाँ हर तरह की सुविधाएँ हैं।

300. लद्दाख लद्दाख हिमालय पर्वत की 14000 फुट ऊँची बर्फीली चोटियों पर बसा हुआ है और जम्मू-कश्मीर के चौदह जिलों में सबसे बड़ा है। जम्मू-कश्मीर का लगभग 70% भाग इसी जिले में है। सिंधु नदी इसी जिले से निकलती है। लेह में इस जिले का मुख्यालय है। जम्मू-कश्मीर राज्य में लद्दाख कोई शहर नहीं है, बल्कि यह एक जिले का नाम है। इस जिले में केवल बर्फ से ढकी ऊँची-ऊँची पहाड़ियाँ ही होने के कारण यहाँ जनसंख्या का घनत्व केवल 5 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी है, इसलिए यहाँ इस पूरे जिले के दर्शनीय स्थानों के बारे में प्रकाश डाला जा रहा है।

पर्यटन स्थल लद्दाख नैसर्गिक छटा का अप्रतिम भंडार है और बौद्ध मत के अध्ययन का एक बड़ा केंद्र हे। यह कश्मीर घाटी से सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यह सड़क सिंध नदी के किनारे बसे दृश्यावलियों से भरपूर गाँवों से होकर गुजरती है। लद्दाख पहुँचने के लिए सोनमर्ग स्थान के बाद 11575 फुट ऊँचा जोजीला दर्रा पार करना होता है। इस दर्रे के दूसरी ओर द्रास घाटी है। इसके बाद लद्दाख जिले का दूसरा सबसे बड़ा शहर कारगिल आता है, जो सूखी नदी के किनारे बसा हुआ है। यह नदी मरूल में सिंध नदी में मिल जाती है। घाटी के बाद 12200 फुट ऊँचा नामि ला दर्रा और 13479 फुट ऊँचा फोतु ला दर्रा पार करना होता है। इस दर्रे के बाद लामायुरू, जहाँ लद्दाख का सबसे पुराना बौद्ध मठ है, दिखाई देता है। लामायुरू के बाद 11500 फुट की ऊँचाई पर बसा जिले का मुख्यालय लेह आता है।

लेह में शहर के बीच में सोलहवीं शताब्दी में बनाया गया लेह महल है, जिसमें बौद्ध जीवन से संबंधित चित्रकारी देखी जा सकती है। लद्दाख अपने मठों के लिए बहुत प्रसिद्ध है। यहाँ मठ थोड़ी-थोड़ी दूर पर देखने को मिल जाते हैं। प्रसिद्ध मठों में नामग्याल तेस्मो बौद्ध मठ तथा चित्रों से सुसज्जित अलची, लिकिर और लामायुरू मठ हैं। इनके अतिरिक्त गोंपा तेस्मो में बुद्ध की डबल स्टोरी मूर्ति, थिम्से मठ में बुद्ध की सोने से मढी हुई ताँबे की विशाल मूर्ति तथा लद्दाख की बौद्ध संस्कृति का केंद्र हेमिस मठ प्रमुख हैं। इनके अतिरिक्त लेह

और हेमिस गोंपा के मध्य स्थित टिस्के मठ, लेह से तीन किमी दूर कोसकब्कुल गोंपा तथा स्पितुक और फायन गोंपा हैं। लेह से 15 किमी दूर यहाँ के राजा का ग्रीष्मकालीन आवास है।

लद्दाख जिले में ही भारत-पाक सीमा पर नुब्रा घाटी है, जहाँ लद्दाख का दुर्लभ ऊँट मिलता है। नुब्रा घाटी में ही मोटर गाड़ियों के आवागमन के लायक संसार का सबसे ऊँचा मार्ग और सबसे ऊँचा दर्रा खारदुंगला है। यह दर्रा लेह से 50 किमी दूर है। यहाँ जाने के लिए लेह से जीप मिल जाती है। ऊपर वर्णित दर्रों के अलावा 17000 फुट ऊँचा चाँग ला तथा 17588 फुट ऊँचा ताँगलाँग ला दर्रे हैं। लद्दाख में चाँग ला दर्रे और चुसहुल के बीच खारे पानी की अति सुंदर झील पंगांग त्सो, बिआमा घाटी तथा सिंधु नदी पर फैसे नीमो दर्शनीय हैं। पंगांग त्सो और त्सो मो रीरी के कैंपिंग दौरे के लिए भी प्राइवेट ट्रैवल ऐजेंसियों से लेह से जीप और टेंट किराए पर मिल जाते हैं। ये दोनों जगहें जाने के लिए जिले के उपायुक्त की अनुमति लेनी होती है। जोरावर का किला और जापानियों द्वारा बनाया गया एक बौद्ध मंदिर अन्य प्रमुख स्थल हैं। इतना ही नहीं, लद्दाख के गाँव भी अपने आप में दर्शनीय स्थल हैं। पर्यटकों को लद्दाख का एक गाँव भी अवश्य देखना चाहिए।

उपलब्ध सुविधाएँ लद्दाख जाने के लिए पहले हवाई जहाज से लेह जाना होता है। सड़क मार्ग से जाने के लिए श्रीनगर-लेह मार्ग (434 किमी) तथा मनाली-लेह मार्ग, जो रोहतांग दर्रा होकर जाता है, अपनाया जा सकता है। सड़क मार्ग जून से अक्तूबर तक खुला रहता है। शेष समय यहाँ हवाई मार्ग से ही जाना चाहिए। चूँकि लद्दाख क्षेत्र में परिवहन, खान-पान और आवास संबंधी सुविधाएँ सीमित मात्रा में हैं, अतः यहाँ जाने से पूर्व राज्य के पर्यटन विभाग से संपर्क कर लेना चाहिए।

लद्दाख में ट्रैकिंग के लिए लेह-कारगिल (सुरू घाटी होकर), कारगिल-सुरू-जंस्कर-किस्तवाड़-मनाली, लेह-जंस्कर-किस्तवाड़-मनाली, कारगिल-सुरू-वर्दवान-किस्तवाड़-पहलगाम पथ हैं। लेह के आस-पास कुछ छोटे-छोटे पथ भी हैं। इन सभी क्षेत्रों का विवरण पर्यटन विभाग से प्राप्त कर लेना चाहिए।

ठहरने की सुविधाएँ लद्दाख क्षेत्र में ठहरने के लिए पीडब्ल्यूडी के रेस्ट हाउस, डाक बंगले तथा सर्किट हाउस हैं। सोनमर्ग में एक आर्मी ट्रांजिट कैंप है।

301. वैष्णो देवी वैष्णो देवी का मंदिर प्रदेश में त्रिकुट पर्वत मालाओं में 5200 फुट की ऊँचाई पर है। इसके लिए जम्मू शहर से 48 किमी

दूर कटरा जाना होता है। कटरा में बाण गंगा नामक पवित्र स्थान से वैष्णो देवी के लिए 13 किमी की चढ़ाई पैदल ही पार करनी होती है। रास्ते में अधक्वारी माता की गुफा आती है, जिसे गर्भजून भी कहा जाता है। इस गुफा को स्थान-स्थान पर लेटकर अथवा झुककर पार करना होता है। गुफा की लंबाई 20 फुट है। ऐसा माना जाता है कि माता वैष्णो देवी ने काल भैरव से लड़ाई के दौरान यहाँ नौ माह तक विश्राम किया था। इस गुफा के बाद 6200 फुट की सीधी चढ़ाई आती है, जिसे हाथी मत्था कहते हैं। हाथी मत्था के बाद साँझी छत आती है। यहाँ से माता का दरबार कुछ ही दूर रह जाता है।

मंदिर गर्भगृह में महालक्ष्मी, महाकाली और महासरस्वती तीन पिंडियाँ हैं। इनमें से बीच वाली पिंडी को वैष्णो देवी नाम दिया गया है। इन तीन पिंडियों के बीच से तेज पानी की धारा बहती रहती है। श्रद्धालुओं को प्रसाद के रूप में पैसे भेंट किए जाते हैं। जनसमूह का विश्वास है कि माता वैष्णो देवी के दर्शन करने से मनोकामना पूरी होती है। इस यात्रा से कश्मीर के अप्रतिम सौंदर्य को देखने का अवसर भी मिलता है।
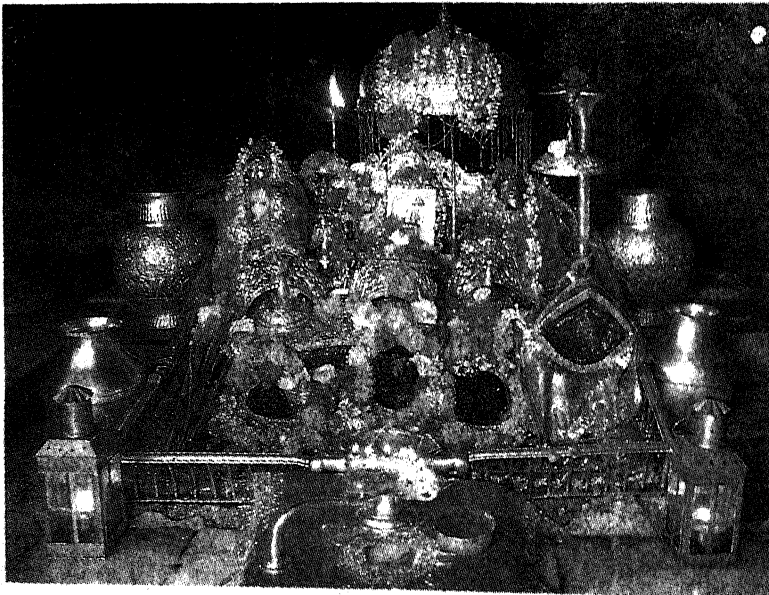
वैष्णो देवी

उपलब्ध सुविधाएँ वैष्णो देवी के मंदिर से निकटतम रेलवे स्टेशन तथा हवाई अड्डा जम्मू है। जम्मू से कटरा तक सरकारी बसें मिल जाती हैं। कटरा से आगे की दूरी पैदल तय करनी होती है। अशक्त व्यक्तियों के लिए पालकी, खच्चर और पिट्ठुओं की सुविधा निर्धारित दरों पर उपलब्ध रहती है। रास्ते में अनेक आश्रय स्थल और जलपान केंद्र हैं। नवरात्रों के दौरान माता के दर्शन करने में दो-तीन दिन लग जाते हैं। तब तक दर्शनार्थियों को वैष्णो देवी के भवन के निकट बनी सरायों तथा धर्मशालाओं में ठहरना होता है, जहाँ हर तरह की सुविधाएँ निःशुल्क होती हैं। दरबार की यात्रा के लिए कैनवस के जूते, बाँस की छड़ी, सूती थैले, टोपियाँ, बैटरियाँ और बरसाती कोट किराये पर मिलते हैं।

सावधानियाँ यात्री कटरा बस स्टैंड पर स्थित यात्री स्वागत केंद्र से यात्रा पर्ची प्राप्त करके ही कटरा से आगे बढ़ें। इस पर्ची के बिना बाण गंगा चेक पोस्ट से आगे जाने नहीं दिया जाता। यात्री केवल रजिस्टर्ड पिट्ठू, घोड़े अथवा डांडी की सेवा ही लें और सेवा के दौरान उनका टोकन अपने पास रखें। चढ़ाई में सीढ़ियों की अपेक्षा पक्के रास्ते से जाएँ और छोटे रास्ते से न जाएँ, क्योंकि छोटा रास्ता घातक भी हो सकता है।

302. श्रीनगर यह शहर आधुनिक जम्मू एवं कश्मीर की ग्रीष्मकालीन राजधानी है। इसका प्रचीन नाम पर्वतपुर था। इसकी स्थापना सम्राट अशोक ने की थी। श्रीनगर शहर झेलम नदी के दोनों किनारों पर बसा हुआ है। यह मुगल शासकों द्वारा बनवाए गए उद्यानों के लिए विशेष रूप से प्रसिद्ध है। जहाँगीर ने यहाँ शालीमार बाग और नूरजहाँ के भाई आसफ खाँ ने निशात बाग बनवाया था। यहीं पर विश्व प्रसिद्ध नगीन और डल झीलें हैं।

कश्मीर में दुर्लभवर्धन राजा ने 631 ई० में कार्कोट वंश के हिंदू शासन की नींव डाली। उसने बौद्ध ग्रंथों की प्रतिलिपि करने के लिए ह्यून सांग की अध्यक्षता में 20 लेखक रखे। ह्यून सांग के अनुसार तक्षशिला, उरशा (हजारा), सिंहपुर, राजपुरी और पर्णोत्स के राजा उसका आधिपत्य स्वीकार करते थे। उसके काल में बौद्ध धर्म के अलावा ब्राह्मण धर्म की भी बहुत उन्नति हुई। उसने 36 वर्ष तक राज्य किया। उसके बाद उसके पुत्र दुर्लभक ने 50 वर्ष राज्य किया। दुर्लभक के पुत्र चंद्रापीड़ ने 713 ई० में अरब की सेना को हराया। 720 ई० में चीन के राजा ने उसे स्वतंत्र राजा के रूप में स्वीकार कर लिया। उसके बाद उसका छोटा भाई ललितादित्य मुक्तापीड़ (724-60) राजा बना। ललितादित्य ने यशोवर्मा से संधि करके तिब्बत के राजा को हराया। इसके अतिरिक्त उसने अपने राज्य के उत्तर तथा उत्तर-पश्चिम में बसने वाली दर्द, कांबोज और तुरुष्क

जातियों को हराया। बाद में उसने यशोवर्मा को भी हराकर कान्यकुब्ज तथा उसके अधीनवर्ती पूर्वी प्रदेशों पर अधिकार किया। उसने प्रसिद्ध मार्तंड मंदिर बनवाया। उसके पोते जयापीड़ ने मध्य देश पर आधिपत्य करने का प्रयत्न फिर किया, परंतु सफल न हो सका।

नौवीं शताब्दी में कश्मीर में अवंतिवर्मा (855-88) ने उत्पल वंश की नींव डाली। उसने अवंतिपुर नगर बसाया। उसके दरबार में रत्नाकर तथा आनंदवर्धन नामक दो विद्वान रहते थे। उसके बाद शंकरवर्मा ने शासन की बागडोर संभाली। प्रतिहार राजा भोज ने कश्मीर के आस-पास का कुछ प्रदेश जीत लिया था। शंकरवर्मा ने उसे वापस ले लिया। उसने गुर्जर राजा अलखान से भी चिनाब नदी के पूर्व का टक क्षेत्र छीन लिया। 902 में उरशा के अभियान के दौरान उसकी मृत्यु हो गई। इस वंश के अंतिम राजा शूरवर्मा ने 939 ई० तक राज्य किया।

939 में ब्राह्मणों की सभा ने यशस्कर को राजा बनाया। उसके समय (939-48) में कश्मीर की फिर समृद्धि हुई। परंतु उसके बाद उसका मंत्री पर्वगुप्त उसके अवयस्क पुत्र संग्रामदेव को मारकर स्वयं राजा बन गया। पर्वगुप्त के बाद उसका पुत्र क्षेमगुप्त तथा क्षेमगुप्त की मृत्यु के बाद उसकी रानी दिद्दा ने राज्यशक्ति को किसी न किसी प्रकार अपने हाथ में रखने का प्रयत्न किया। अपने पुत्र अभिमन्यु की मृत्यु के बाद उसने अपने तीनों पोतों को मरवा दिया और किसी भी मंत्री या सेनापति को अधिक समय तक न जमने दिया। 1003 में अपनी मृत्यु से पूर्व उसने लोहर वंश के अपने भानजे संग्राम को अगले राजा के रूप में मनोनीत कर दिया।

संग्राम ने 1028 ई० तक शासन किया। 1028 में अनंत राजा बना। उसने चंपा और दर्वाभिसार के राजाओं से अपना आधिपत्य स्वीकार कराया। उसने अपने पुत्र कलश के लिए राजसिंहासन छोड़ दिया, परंतु कलश ने अपने माता-पिता के साथ विश्वासघात किया। अनंत ने उसकी कृतघ्नता देखकर आत्महत्या कर ली तथा उसकी पत्नी सूर्यमती सति हो गई। बाद में कलश ने ठीक तरह से शासन किया। उरशा से काष्ठावाट तक के आठ राजाओं ने उसकी अधीनता मानी। उसके बाद उसके पुत्र हर्ष ने कश्मीर का शासन संभाला। हर्ष ने राजपुरी और दुग्धघाट के विरुद्ध क्रमशः दो तथा एक बार सेना भेजी। 1101 में उच्छल तथा सुस्सल के नेतृत्व में प्रजा ने विद्रोह करके उसे तथा उसके पुत्र को मार डाला। उच्छल कश्मीर का नया राजा बना। उच्छल ने अपने भाई सुस्सल को लोहर वंश का राजा बनाया। परंतु 1111 में रद्द ने उच्छल को मार दिया और 1112 में सुस्सल ने रद्द को मार दिया। बाद में सुस्सल के अत्याचारों से दुखी होकर प्रजा ने उसे गद्दी से उतार दिया और हर्ष के पोते भिक्षाचर को राजा

बना दिया। फिर भी एक साल बाद सुस्सल फिर राजा बन गया। 1128 में भिक्षाचर ने सुस्सल को मरवा दिया। परंतु सुस्सल के पुत्र जयसिंह ने भिक्षाचर से राज्य छीन लिया। जयसिंह ने 27 वर्ष तक राज्य किया। उसने अपने सामंतों के विद्रोह को दबाया। 1155 में उसकी मृत्यु के बाद उसका पुत्र परमानुक राजा बना। परमानुक के बाद उसका भाई वंतिदेव 1172 में लोहर वंश का अंतिम राजा बना। लोहर वंश के अंत के बाद अनेक अयोग्य व्यक्ति राजा बने। अंत में 1339 में शाह मिर्जा नामक मुसलमान ने हिंदू रानी कोटा को गद्दी से उतारकर कश्मीर में मुस्लिम वंश के शासन की नींव डाली।

शाह मिर्जा ने शमसुद्दीन शाह के नाम से 1349 तक शासन किया। उसके बाद उसके पुत्रों जमशीद, अलाउद्दीन, शिहाबुद्दीन और कुतुबुद्दीन ने एक-एक करके 1394 तक राज्य किया। 1394 में कुतुबुद्दीन का पुत्र सिकंदर कश्मीर की गद्दी पर बैठा। उसके बाद उसके सबसे बड़े पुत्र अली शाह और छोटे पुत्र शाही खाँ ने एक-एक करके जून, 1420 तक राज्य किया। कश्मीर का सर्वाधिक प्रमुख शासक जैनुल आबेदीन (1420-70) था। उसने धार्मिक सहिष्णुता का परिचय दिया और संस्कृत को संरक्षण दिया। उसे कश्मीर का अकबर कहा जाता है। 1470 में उसकी मृत्यु के बाद उसका पुत्र हैदरशाह राजा बना, परंतु उसके काल में कश्मीर में अराजकता फैल गई। 1540 में हुमायूँ के एक रिश्तेदार मिर्जा हैदर ने कश्मीर को जीतकर यहाँ 1551 तक एक स्वतंत्र शासक की तरह राज्य किया। उसके सूर वंश के शासक इस्लाम शाह के साथ घनिष्ठ संबंध थे। 1551 में उसे उसके मंत्रियों ने हटा दिया। 1555 में इस पर चकों ने कब्जा कर लिया। अकबर के समय में यहाँ का शासक युसुफ शाह था। राजा भगवान दास ने अकबर के लिए इसे युसुफ शाह से और कासिम खाँ ने युसुफ शाह के पुत्र याकूब से 1587 में जीतकर इसे काबुल प्रांत का हिस्सा बना दिया। युसुफ शाह और उसके पुत्र को जागीर देकर मनसबदार बना दिया गया। अकबर ने 1589 में कश्मीर की यात्रा की। 1819 में महाराजा रणजीत सिंह ने कश्मीर पर कब्जा कर लिया। फरवरी, 1846 में इस पर अंग्रेजों का कब्जा हो गया। उन्होंने गुलाब सिंह को इसका शासक नियुक्त किया।

पर्यटन स्थल श्रीनगर के दर्शनीय स्थलों में शहर से पाँच किमी दूर शहर की सबसे पुरानी मस्जिद शाह हमदान मस्जिद, 11 किमी दूर शरीका पर्वत पर हरी पर्वत किला, प्राचीन बौद्ध मठ, परी महल, डल झील, महाराजा अशोक के पुत्र जलुका द्वारा तख्त-ए-सुलेमान पहाड़ी पर 200 ई०पू० में निर्मित शंकराचार्य मंदिर, नेहरू पार्क, चश्माशाही, मुगल उद्यान, शालीमार बाग, छठी पादशाही गुरुद्वारा

शहर से आठ किमी दूर नगीन झील, निशात बाग के सामने शहर से 9 किमी दूर हजरत बल दरगाह (जहाँ हजरत मुहम्मद साहब की निशानी के रूप में उनका एक पवित्र बाल रखा है) हैं। अंकर झील में कमल के तैरते हुए फूल हैं। प्रताप सिंह संग्रहालय में तीसरी शताब्दी के बौद्ध स्थल हरवान से प्राप्त चीजें रखी हैं।

29 किमी दूर अवंतिपुर, 30 किमी दूर शेख नूरुद्दीन की दरगाह चरारे शरीफ, 51 किमी दूर अहर बल झरना, 58 किमी दूर नूरजहाँ का पर्यटन स्थल अच्छाबल, 61 किमी दूर मट्टन (शिव मंदिर एवं झरना), 64 किमी दूर मार्तंड में ललितादित्य मुक्तापीड़ द्वारा सातवीं-आठवीं शताब्दी में निर्मित सूर्य मंदिर के खंडहर, 70 किमी दूर कोकरनाग का झरना, 80 किमी दूर झेलम का स्रोत-स्थल बेरी नाग, 96 किमी दूर लिद्दर नदी पर अमरनाथ की यात्रा का आधार शिविर तथा रमणीय स्थल पहलगाम, सोनमर्ग (सोने की घाटी) तथा गुलमर्ग (फूलों की घाटी) अत्यंत दर्शनीय हैं। श्रीनगर के उत्तर में 60 किमी दूर वुल्लर झील है, जो एशिया की ताजा पानी की सबसे बड़ी
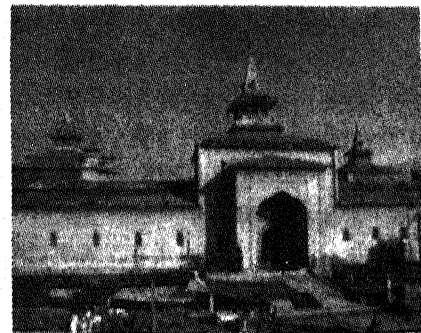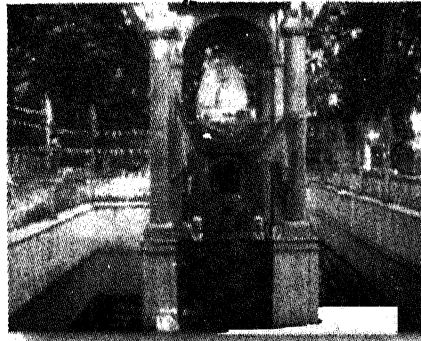
शंकराचार्य मंदिर (ऊपर), हरि पर्वत किले पर सारिका देवी का मंदिर (बीच में) और देवी रागिनिया का मंदिर (नीचे)

झील है। इस झील पर सूर्योदय और सूर्यास्त बहुत मनोहारी लगते हैं। वुल्लर झील से कुछ आगे मानस बल झील है, जो अपने कमल के फूलों के लिए जानी जाती है। श्रीनगर तथा वुल्लर झील के पूर्व में लगभग 75 किमी दूर 9 हजार फुट की ऊँचाई पर सोनमर्ग है।

उपलब्ध सुविधाएँ श्रीनगर देश के अन्य शहरों से वायु व सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन जम्मू 305 किमी दूर है। हरी पर्वत किला भ्रमण के लिए वसंत ऋतु, पहलगाम भ्रमण के लिए अप्रैल से अक्तूबर तथा गुलमर्ग भ्रमण के लिए अक्तूबर से मार्च तक का समय सर्वोत्तम होता है, हालाँकि पर्यटक वर्ष के किसी भी समय श्रीनगर भ्रमण का कार्यक्रम बना सकते हैं। गर्मियों में यहाँ का तापमान 30°से से 11°से के मध्य व सर्दियों में 7.5°से से 2°से के मध्य रहता है।

303. सनासर

सनासर बिना किसी जोखिम के कम ऊँचाई पर ही कश्मीर की भूमिका बाँध देता है। यहाँ
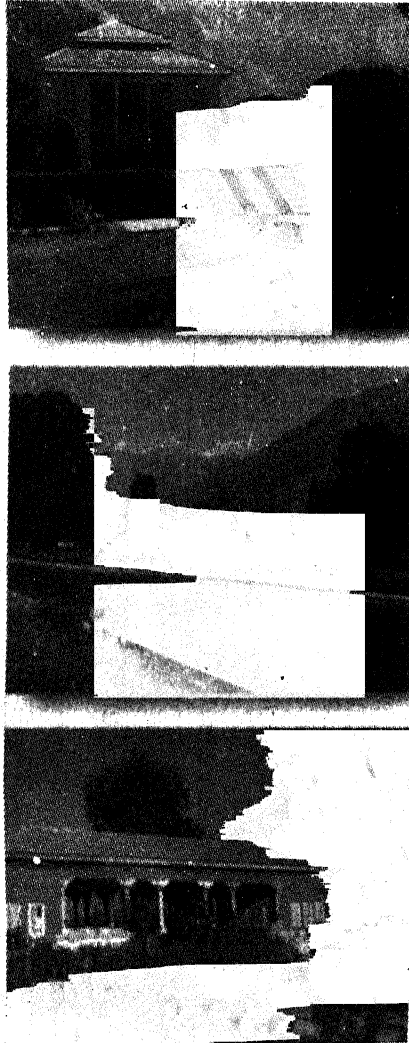
चश्माशाही (ऊपर), निशात बाग (बीच में) और शालीमार बाग (नीचे)

एक पर्वत से दूसरे पर्वत तक विशाल जगह में फैली हुई हरियाली को देखकर ऐसा लगता है जैसे प्रकृति ने यहाँ हरे रंग की लंबी-चौड़ी मखमली कालीन बिछा दी हो। वैष्णो दैवी के रास्ते में पड़ने वाला यह स्थल एक छोटे गुलमर्ग जैसा है। सनासर में प्रति वर्ष ग्रीष्म ऋतु में पैराग्लाईडिंग की सुविधा उपलब्ध कराई जाती है। यहाँ ठहरने के लिए एक यूथ होस्टल है, जिसमें कोई भी ठहर सकता है। राज्य सरकार ने यहाँ टूरिस्ट हट और रैस्ट हाउस बनाए हुए हैं। अब यहाँ बहुत सारे होटल भी बन गए हैं।

304. हेमिस राष्ट्रीय पार्क इस राष्ट्रीय पार्क की स्थापना 1981 में लद्दाख में की गई थी। यह राष्ट्रीय पार्क बर्फ में पैदा होने वाले जीव-जंतुओं की सुरक्षा के लिए बनाया गया है। यहाँ पर हिम कुक्कुट बहुतायत में मिलते हैं। यहाँ से निकटतम नगर लेह मात्र 30 किमी की दूरी पर है।
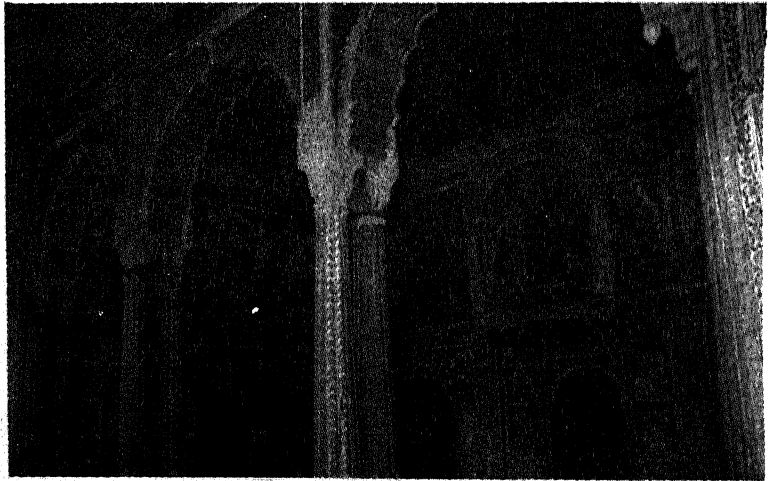
दरिया दौलत महल, श्रीरंगापटना, कर्नाटक

***

तमिल नाडु

ऐतिहासिक विवरण

तमिल नाडु का लिखित इतिहास पल्लवों के शासन से उपलब्ध होता है। उन्होंने यहाँ चौथी शताब्दी से लेकर दसवीं शताब्दी तक राज्य किया। दसवीं शताब्दी में अंतिम पल्लव शासक अपराजित के काल में विजयालय और आदित्य आदि चोल राजाओं ने यहाँ अपने वंश के शासन की स्थापना कर ली। ग्यारहवीं शताब्दी के अंत में तमिल नाडु के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में चालुक्यों, चोलों और पांड्यों ने राज्य किया। अगली दो शताब्दियों में चोल सर्वशक्तिशाली हो गए। चौदहवीं शताब्दी के मध्य में यहाँ बहमनी और विजयनगर के शासकों का प्रभाव रहा। 1653 में ईस्ट इंडिया कंपनी ने मद्रास में एक किला बनाकर यहाँ मद्रास प्रेजीडेंसी के शासन की स्थापना की। 1746 से 1748 तक की दो वर्ष की अवधि, जब यहाँ फ्रांसीसी गवर्नर डुप्ले का शासन रहा, को छोड़कर देश की स्वतंत्रता तक यहाँ अंग्रेजों का ही शासन रहा। देश की स्वतंत्रता के बाद मद्रास प्रजीडेंसी के प्रभाव वाले क्षेत्र का पुनर्गठन करके आधुनिक तमिल नाडु राज्य बना दिया गया।

तमिल नाडु का कुल क्षेत्रफल 130058 वर्ग किमी है। राज्य में जनसंख्या का घनत्व 429 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी है। राज्य की साक्षरता दर लगभग 62% है। राज्य में 29 जिले हैं, जिनकी मुख्य भाषा तमिल है।

उत्सव

तमिल नाडु में तमिल मार्गाषी मास में पोंगल, आडी मास में आडी पेरुक्कु पर्व, कार्तिगाई मास में तिरुवन्नामलाई में कार्तिगाई दीपम् पर्व तथा मार्च-अप्रैल में शिव मंदिरों में पंकुणि उत्तरम् उत्सव मनाया जाता है। चेन्नई स्थित मायलपुर के कपालीश्वरार मंदिर में अरुपतिमुआर उत्सव, मदुरै में चित्तीराई तथा वंडियुर मरियम्मम् मंदिर में फ्लोर पर्व; श्रीरंगम्, काँचीपुरम् और श्रीविल्लिपुतुर में ब्रह्मोत्सवम्, वेलंकन्नी में वेलंकन्नी उत्सव तथा नागौर में नागौर कंडुरि उत्सव मनाया जाता है। तंजौर से 13 किमी दूर तिरुवैयारू में संत कवि त्यागराज की स्मृति में जनवरी में संगीत उत्सव मनाया जाता है, जिसमें सम्पूर्ण देश के संगीतकार भाग
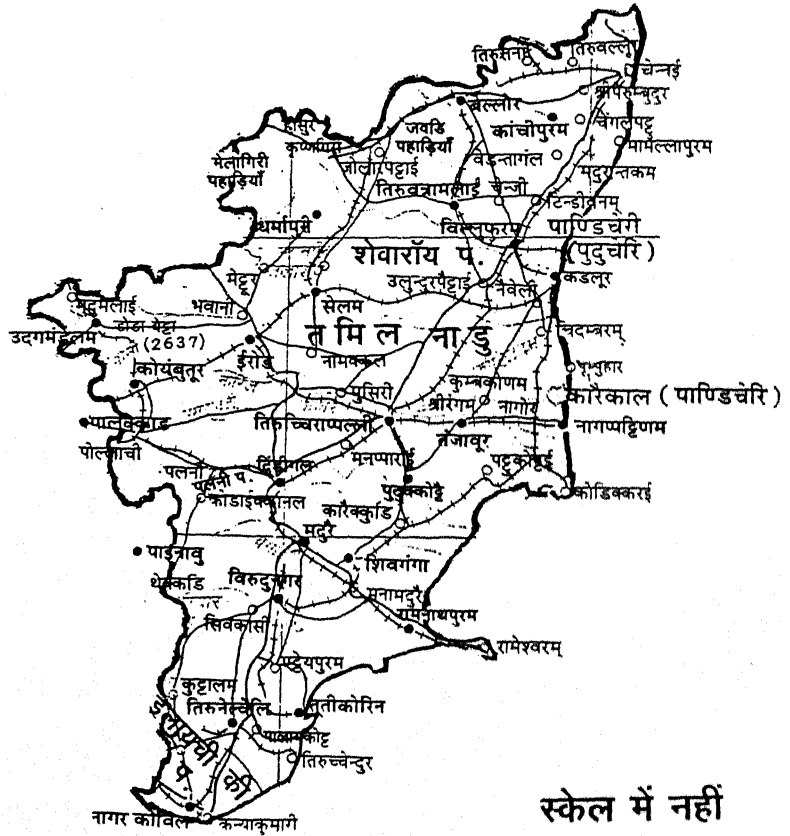
स्केल में नहीं

लेते हैं। ऊदगमंडलम्, कोडाईकनाल और पेरक्काड में ग्रीष्मोत्सव मनाया जाता है। इसी प्रकार चिदंबरम् में महाशिवरात्रि के दिन नाटयांजलि तथा कोर्टलाम में जुलाई-अगस्त के दौरान सरल विषा उत्सव मनाए जाते हैं। कुंबकोणम् में बारह वर्ष में एक बार महामाघम् उत्सव मनाया जाता है। कृष्णगिरि में जून माह में अखिल भारतीय आम उत्सव तथा चेन्नई में दिसंबर-जनवरी में वार्षिक संगीत एवं नृत्य कार्यक्रम होता है। इनके अतिरिक्त तमिल नव वर्ष दिवस उत्सव, मदुरै में अप्रैल-मई (वैशाख) में वैगाई नदी उत्सव, अगस्त में कावेरी नदी उत्सव, सितंबर-अक्तूबर में नवरात्रि उत्सव, श्रीरंगम् में नवंबर-दिसंबर (अग्रहायण) में बैकुंठ

एकादसी और सेंट थोमस दिवस उत्सव मनाए जाते हैं।

नृत्य

तमिल नाडु में देवों के सम्मान में करगम और कावडी नृत्य किए जाते हैं। मरियम्मम् देवी को प्रसन्न करने के लिए महिलाएँ और पुरुष हाथों में अग्नि-पात्र लेकर मरियम्मम् नृत्य करते हैं। नृत्य में शंख और तुरही का प्रयोग किया जाता है। प्रदेश में इनके अतिरिक्त टाइगर नृत्य भी प्रचलित है। प्रदेश का भरत नाट्यम् शास्त्रीय नृत्य पूरे देश में प्रसिद्ध है।

305. अन्नामलाई

अभयारण्य यह अभयारण्य नीलगिरि पर्वत की कारडोमॉम श्रृंखला के उत्तर में है। यहाँ नीलगिरि लंगूर, हाथी, गौर, चीतल, वन बिलाव, सांभर, तेंदुए आदि जीव मिलते हैं। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा कोयंबटूर है।

भरत नाट्यम की एक मुद्रा

306. अमृतलिंगम् यहाँ महापाषाण काल की कब्रें पाई गई हैं।

307. अरिकामेडु इसका अर्थ अरुहन मेडु (जैन टीला) है। यह पांडिचेरी के छह किमी दक्षिण में आधुनिक पडुक्का है।

व्यापारिक गतिविधियाँ यह चोल राजाओं के समय में बौद्ध धर्म का एक केंद्र था। तब यह भारत के पूर्वी तट पर एक प्रसिद्ध बंदरगाह थी। अरिकामेडु से रोम के साथ व्यापार किया जाता था। रोम से यहाँ सुरा तथा काँचाभ मिट्टी के लाल बर्तन आते थे। यहाँ पाए गए प्रथम शताब्दी के रोम के कारखाने और इटली में बने मिट्टी के तीन बर्तनों से संगम राजाओं के काल तथा रोम के साथ उनके

व्यापार की पुष्टि होती है। 200 ई० के आस-पास इस शहर का पतन हो गया। यहाँ पाई गई वस्तुएँ पांडिचेरी के संग्रहालय में रखी हैं।

308. अर्काट—ऐतिहासिक महत्व सतरहवीं-अट्ठारहवीं शताब्दी में कर्नाटक दक्खन (हैदराबाद) के निजाम का एक सूबा था, जिसकी राजधानी अर्काट थी। इसका प्रशासनिक मुखिया सूबेदार होता था। उसे नवाब कहा जाता था। औरंगजेब ने 1690 ई० में जुल्फीकार अली खाँ को यहाँ का सबसे पहला नवाब बनाया था। उसने 1703 ई० तक शासन किया। उसके बाद दाउद खाँ (1703-10), मुहम्मद सैयद सआदत उल्ला खाँ (1710-32) और दोस्त अली (1732-40) यहाँ के नवाब हुए। परंतु हैदराबाद का निजाम मराठों और उत्तरी भारत के मामलों में इतना अधिक व्यस्त रहता था कि वह अर्काट पर अपना पूर्णाधिकार स्थापित नहीं कर पाता था। 1740 में मराठों ने दोस्त अली को मारकर यहाँ खूब लूट-पाट की तथा उसके दामाद चंदा साहिब को कैद करके सतारा ले गए। दोस्त अली के पुत्र सफदर अली खाँ ने मराठों को एक करोड़ रु. देने का वचन देकर अपनी जान और अपना राज्य बचाया। परंतु उसके एक चचेरे भाई ने 1742 में उसकी हत्या कर दी। उसके अवयस्क पुत्र सआदत उल्ला खाँ द्वितीय उर्फ मुहम्मद सैयद को नवाब बनाया गया। तब 1743 में हैदराबाद का निजाम यहाँ शांति स्थापित करने आया। 1744 में वह अपने एक विश्वस्त सेवक अनवरुद्दीन खान को कर्नाटक का नवाब बनाकर चला गया। निजाम द्वारा बाहर के व्यक्ति को कर्नाटक का नवाब बनाया जाना दोस्त अली के रिश्तेदारों को बहुत खला। वैसे भी बहुत सी जागीरें और किले अभी इन रिश्तेदारों के पास ही थे।

उन दिनों कर्नाटक राज्य के कोरोमंडल तट के माध्यम से अंग्रेजी और फ्रांसीसी कंपनियाँ अपना व्यापार शांतिपूर्वक चला रही थीं। कर्नाटक का नवाब, अंग्रेज अथवा फ्रांसीसी एक-दूसरे के कार्यों में दखल नहीं देते थे। परंतु यह शांति अधिक दिन तक नहीं चली। इग्लैंड और फ्रांस ने यूरोप में आस्ट्रिया के उत्तराधिकार के युद्ध (1740-48) में एक-दूसरे के विपक्ष में भूमिका निभाई। फलस्वरूप भारत में भी वे एक-दूसरे के विरोधी हो गए। अंग्रेज नौसेनानायक बर्नट ने कुछ फ्रांसीसी जहाज पकड़ लिए। फ्रांसीसियों के पास जल-युद्ध करने के लिए भारत में कोई बेड़ा नहीं था। फ्रांसीसी गवर्नर जनरल ने मारीशस में फ्रांस के गवर्नर लॉ बुर्दोनईस से सहायता लेकर अंग्रेजों के बेड़े पर आक्रमण कर दिया। अंग्रेज हुगली की ओर भाग गए और डुप्ले ने मद्रास पर अधिकार कर लिया। अंग्रेजों ने अनवरुद्दीन से सहायता की माँग की। परंतु फ्रांसीसियों ने

अनवरुद्दीन से कहा कि वे अंग्रेजों से मद्रास छीनकर अनवरुद्दीन को ही दे देंगे। इसलिए अनवरुद्दीन ने अंग्रेजों की सहायता नहीं की। परंतु फ्रांसीसियों ने मद्रास छीनकर अनवरुद्दीन को नहीं दिया। फलस्वरूप नवाब ने फ्रांसीसियों पर आक्रमण कर दियां, परंतु डुप्ले की सेना ने उसे हरा दिया। कुछ दिनों बाद ही मद्रास के आस-पास भारी समुद्री तूफान आ गया, जिसमें बुर्दोनईस का बेड़ा नष्ट-भ्रष्ट हो गया। बुर्दोनईस मारीशस वापस चला गया। उसके वापस जाते ही बास्कोवन के नेतृत्व में अंग्रेजी नौसेना मद्रास पर कब्जा करने के लिए चल पड़ी। परंतु इसी दौरान आस्ट्रिया का उत्तराधिकार का युद्ध अक्ष-ला-शैपेल की 1748 की संधि के बाद खत्म हो गया। संधि के अनुसार मद्रास अंग्रेजों को वापस मिल गया। इस सारे घटनाक्रम को कर्नाटक का पहला युद्ध कहा गया। कुछ दिनों बाद कर्नाटक का दूसरा युद्ध शुरू हो गया, जिसका वर्णन निम्न प्रकार है :

कर्नाटक के पहले युद्ध से अंग्रेजों और फ्रांसीसियों को समुद्री प्रभुता की महत्ता का पता लग गया था। 1748 में चंदा साहिब मराठों की जेल से छूटकर भाग गया था। उसने अनवरुद्दीन खान से अपने ससुर दोस्त अली की गद्दी छीनने की योजना बनाई। 1748 में ही हैदराबाद में निजामशाही शासन के संस्थापक आसफ जाह निजाम-उल-मुल्क की मृत्यु हो गई। उसकी मृत्यु के बाद उसके पुत्र नासिरजंग और पोते मुजफ्फरजंग में उत्तराधिकार का युद्ध शुरू हो गया। डुप्ले ने चंदा साहिब और मुजफ्फरजंग का पक्ष लेकर उन्हें अपने साथ मिला लिया। 3 अगस्त, 1749 को अनवरुद्दीन को एक युद्ध में मार दिया गया। उसका पुत्र मुहम्मद अली त्रिचनापल्ली भाग गया। चंदा साहिब अर्काट का नवाब बन गया। अब अंग्रेज नासिरजंग तथा मुहम्मद अली की तरफ हो गए, परंतु डुप्ले की सेना के साथ हुए एक युद्ध में नासिरजंग मारा गया। फ्रांसीसियों ने मुजफ्फरजंग को हैदराबाद का निजाम बना दिया और फ्रांसीसी गवर्नर बूसी को उसकी रक्षा के लिए हैदराबाद में सेना सहित तैनात कर दिया।

अब डुप्ले ने त्रिचनापल्ली का घेरा डालने के लिए फ्रांसीसी सेना भेज दी। अंग्रेज मुहम्मद अली के साथ हो गए। उन्होंने मुहम्मद अली को सुझाव दिया कि जब तक अंग्रेजी सेना त्रिचनापल्ली न पहुँच जाए, तब तक वह फ्रांसीसियों को बातों में उलझाए रखे। मुहम्मद अली ने ऐसा ही किया। फ्रांसीसियों के साथ चंदासाहिब भी अपनी सेना साहित त्रिचनापल्ली गया हुआ था। इसी दौरान अंग्रेज सेनानायक क्लाईव ने अर्काट पर कब्जा कर लिया। चंदा साहिब का पुत्र अपनी आधी सेना लेकर त्रिचनापल्ली से अर्काट की तरफ दौड़ा। अंग्रेजों के साथ हुए एक युद्ध में वह मारा गया। बाद में चंदा साहिब ने भी आत्म-समर्पण कर दिया। 1753 में उसे मारकर उसकी जगह मुहम्मद अली को कर्नाटक का नवाब बना

दिया गया। 1753 में डुप्ले को वापस बुलाकर उसकी जगह गोदेहु को भारत भेज दिया गया। गोदेहु ने अंग्रेजों के साथ समझौता करके अंग्रेजों द्वारा विजित प्रदेशों पर उनका अधिकार मान लिया। इस प्रकार कर्नाटक के दूसरे युद्ध का अंत हो गया। दूसरे युद्ध के बाद अंग्रेजों और फ्रांसीसियों में तीसरा युद्ध भी हुआ, परंतु इसमें कर्नाटक के नवाब ने कोई उल्लेखनीय भूमिका नहीं निभाई। 1780 में हैदर अली ने अंग्रेज सेनापति बैली को मारकर अर्काट पर कब्जा कर लिया था।

यूँ मुहम्मद अली को अर्काट में कर्नाटक का नवाब बना दिया गया था, परंतु वह इतना ऐशपसंद शासक था कि उसने अपना सारा पैसा चेपक में आरामपरस्ती में खत्म करके कंपनी के नौकरों से भारी ब्याज पर पैसा उधार लेना शुरू कर दिया। अंग्रेजी बोर्ड ऑफ कंट्रोल ने निर्णय लिया कि नवाब का कर्ज कर्नाटक के राजस्व से चुकता किया जाए। 2 नवंबर, 1781 को हुई व्यवस्था के अनुसार कर्नाटक के राजस्व पर अंग्रेजों ने नियंत्रण कर लिया। नवाब को उसका छठा हिस्सा उसके खर्चे के लिए दे दिया गया। जब कंपनी के नौकरों ने अपना पैसा वापस देने के लिए दबाव डाला, तो मुहम्मद अली का राजस्व इकट्ठा करने का अधिकार बहाल कर दिया गया। परंतु वह अब भी पहले की तरह ऋण में ही डूबता रहा। 24 फरवरी, 1787 को भारत में कंपनी के नए गवर्नर जनरल ने नवाब के साथ इस आशय की संधि की कि कंपनी 15 लाख पगोडा (52 लाख रु.) के बदले कर्नाटक की रक्षा करेगी। परंतु टीपू के साथ तीसरे मैसूर युद्ध (1790-92) के दौरान कंपनी ने कर्नाटक के शासन पर भी अपना कब्जा कर लिया। युद्ध के बाद 12 जुलाई, 1792 को हुई संधि के तहत कर्नाटक नवाब को वापस दे दिया गया। साथ ही ब्रिटिश माँग 15 लाख पगोडा से घटाकर 9 लाख पगोडा कर दी गई।

13 अक्तूबर, 1795 को मुहम्मद अली की मृत्यु के बाद उसका पुत्र अमदूत-उल-उमरा कर्नाटक का नवाब बना। मद्रास के अंग्रेजी गवर्नर होबर्ट ने उस पर कंपनी की बकाया राशि के बदले जमानत में रखे गए क्षेत्र सौंपने का दबाव डाला, परंतु वह नहीं माना। लार्ड वेल्जली द्वारा बाद में श्रीरंगापटना में पाए गए तथाकथित प्रलेखों से यह सिद्ध हुआ कि मुहम्मद और अमदूत-उल-उमरा दोनों टीपू सुल्तान से राजद्रोहात्मक पत्राचार कर रहे थे। उसने घोषणा की कि अपने इस कार्य से उन्होंने कर्नाटक की गद्दी पर बने रहने का अधिकार खो दिया है। 15 जुलाई, 1801 को अमदूत-उल-उमरा की मृत्यु हो गई। वेल्जली ने उसके पुत्र अली हुसैन के नवाबी के दावे की अनदेखी करके अमदूत-उल-उमरा के एक भतीजे आजिमुद्दौला के साथ 25 जुलाई, 1801 को संधि कर ली,

जिसके अनुसार आजिमुद्दौला को कर्नाटक के कुल राजस्व का पाँचवाँ हिस्सा पेंशन के रूप में देकर उसे नाम-मात्र का नवाब बना दिया गया। बदले में कंपनी ने राज्य का सिविल और सैनिक शासन अपने हाथ में ले लिया। आजिमुद्दौला 1819 तक नवाब रहा। उसके बाद आजम जाह (1819-25) और आजिम जाह बहादुर (1867-74) कर्नाटक के उल्लेखनीय नवाब रहे।

309. आदिचन्नाल्लूर यह स्थल तिनवेल्ली जिले में है।

पुरातात्विक महत्त्व आदिचन्नालूर में महापाषाण काल की चीजों से मिलती-जुलती चीजें पाई गई हैं। इनमें लोहे के उपकरण तथा काले और लाल रंग के बर्तन प्रमुख हैं। यहाँ ऐसे बर्तन भी पाए गए हैं, जिनमें शव रखकर गाड़े जाते थे। अनेक शवों के ऊपर समाधियाँ मिली हैं तथा कुछ शवों में भस्म-पात्र मिले हैं। यहाँ 1200 ई०पू० के समय के फिलस्तीन तथा सीरिया और साइप्रस से मिलती-जुलती ताँबे की सामग्रियाँ, स्वर्ण-किरीट और मुँह ढकने के टुकड़े पाए गए हैं। दक्षिण में ऐसी सामग्रियाँ और किरीट अन्य कहीं नहीं पाए गए। इनमें त्रिशूल प्रमुख है। इस काल में लोहे की चीजों का प्रयोग भारी मात्रा में होता था। यहाँ प्राप्त सामग्रियों से यह भी पता चलता है कि तमिलों के आधुनिक देव मुरुगन अथवा वेल्लन की पूजा उस काल में भी होती थी। भगवान का प्रमुख हथियार वेल (त्रिशूल) और उसका प्रतीक जंगली बाज होता था। आदिचन्नाल्लूर में लोहे के त्रिशूलों के अलावा लोहे के पत्तर और बाज की काँसे की मूर्तियाँ भी पाई गई हैं। मिट्टी के अनेक बर्तनों में धान के भूसे और ताँबे के बर्तन में चावल पाए जाने से पता चलता है कि उन दिनों चावल की खेती की जाती थी।

310. उरैयुर—ऐतिहासिक महत्त्व अशोक के काल में चोलों का एक स्वतंत्र राज्य था। प्राचीन तमिल साहित्य से ज्ञात होता है कि प्रथम शताब्दी ई०पू० से प्रथम शताब्दी ई० के अंत तक चोल राजाओं ने पांड्यों और चेरों को हराकर उन पर अपना प्रभुत्व स्थापित किया था। संगम साहित्य से ज्ञात होता है कि इस वंश का संगम युग का प्रथम ज्ञात एवं प्रसिद्ध राजा कारिकल था। उसने चेर और पांड्य राजाओं को पराजित किया और लंका पर आक्रमण किए। उसने कई वैदिक यज्ञ किए। उसने कई नहरें बनवाईं, उद्योगों और व्यापार को बढ़ावा दिया और तमिल लेखकों को संरक्षण दिया। वह न्यायप्रियता के लिए भी प्रसिद्ध था। उसकी राजधानी उरैयुर थी। उसके काल में उरैयुर सूती कपड़ों के व्यापार के लिए प्रसिद्ध था। उन दिनों तटों से प्राप्त सारे मोती यहाँ लाए जाते थे तथा

यहाँ से मलमल का निर्यात किया जाता था। मदुरा के पांड्य राजा मारवर्मा सुंदर पांड्य (1216-28) ने चोलों से उरैयुर छीन लिया था।

311. ऊटी यह तमिल नाडु का प्रमुख हिल स्टेशन है। इसे ऊदगमंडलम् भी कहा जाता है। यह समुद्र तल से 7500 फुट की ऊँचाई पर है। प्राकृतिक सौंदर्य एवं छटा से परिपूर्ण यह स्थान पर्यटकों को अपनी ओर साल भर आकर्षित करता रहता है। दार्जिलिंग की तरह यहाँ भी चलने वाली छोटी गाड़ी ब्लू माउंटेन एक्स्प्रेस में सफर करना बहुत आनंददायक है।

पर्यटन स्थल ऊटी में कई दर्शनीय स्थल हैं। यहाँ से तीन किमी दूर एक खूबसूरत झील है। झील में लिलि के फूल खिलते हैं। इसके पास ही खिलौना गाड़ी है। ऊटी में बच्चों के लिए आकर्षक चिल्ड्रंज गार्डन तथा बड़ों के लिए वनस्पति उद्यान है। इस उद्यान के पास टोडा मुंडा नामक वह स्थान है, जहाँ 1882 में कोयंबटूर के कलेक्टर जान सुलिवान ने एक स्टोन हाउस बनवाया था जिसके बाद यहाँ ऊटी शहर की नींव पड़ गई। ऊटी से 10 किमी दूर नीलगिरि पर्वत की सबसे ऊँची चोटी दोड्डा बेट्टा (8640 फुट) है, जहाँ से दूरबीन से ऊटी के चारों ओर की प्राकृतिक छटा देखी जा सकती है। इन स्थलों के अतिरिक्त ऊटी में और इसके आस-पास गवर्नमेंट म्यूजम, रोज गार्डन, फन सिटी (सभी दो-दो किमी), सिम्स् पार्क (3 किमी), मरलीमंड झील (4 किमी), वैल्ली व्यू प्वाइंट (5 किमी), सेंट कैथरीन वाटरफाल्ज (6 किमी), लैंब्ज फाल (7 किमी), लैंब्ज रॉक (8 किमी), वैनलोक डाउन्ज (9 किमी), कामराज सागर बाँध (11 किमी), नीडल व्यू प्वाइंट (12 किमी), डोलफिन नोज (12 किमी), कालाहट्टी झरने (14 किमी), फ्रोग हिल व्यू (14 किमी), रंगास्वामी पीक (16 किमी), काडानंद व्यू प्वाइंट (16 किमी), वैलिंगटन, ग्लेन मुरुगन (17 किमी), ड्रूग (17 किमी), पार्सन्ज वैल्ली (19 किमी), प्याकरा बाँध (23 किमी), प्याकरा झरने (24 किमी), देवर बेट्टा (40 किमी), मुकुरती पीक (40 किमी), भवानी सागर (60 किमी) और मुडुमलाई वन्य जीव विहार (67 किमी) भी दर्शनीय हैं। उपर्युक्त सभी दूरियाँ ऊटी बस स्टैंड से हैं। यहाँ के मूल निवासी टोडा जन जाति के हैं, जिनकी संस्कृति पर्यटकों को आकर्षित करती है।

उपलब्ध सुविधाएँ ऊटी में गोल्फ, टेनिस, होबर्ट पार्क में घुड़दौड़ एवं शिकार की सुविधाएँ हैं। वृक्ष प्रेमियों के लिए यहाँ एक वानस्पतिक उद्यान है। यहाँ की झील में नौकायन और मत्स्यन की सुविधा भी है। यहाँ ठहरने के लिए हर प्रकार के होटल हैं। ऊटी में पर्यटक सूचना केंद्र भी है। यहाँ पूरे वर्ष जाया जा सकता है, फिर भी मार्च से जून तक का समय ज्यादा अनुकूल होता है। स्थानीय भ्रमण के लिए यहाँ सिटी बसें, टैक्सियाँ तथा ऑटो रिक्शे मिलते हैं। ऊटी का तापमान

सर्दियों में 19°से और 0°से तथा गर्मियों में 23°से और 8°से के मध्य रहता है।
कैसे जाएँ ऊटी से मुख्य लाइन का निकटतम रेलवे स्टेशन कोयंबटूर (889 किमी) है। रेलगाड़ी से ऊटी जाने के लिए मेट्टुपालयम् से खिलौना गाड़ी मिलती है, जो कुन्नूर होते हुए जाती है। कोयंबटूर, मैसूर, बंगलौर आदि से ऊटी के लिए पर्यटक बसें प्रतिदिन मिलती हैं।

312. ऊदगमंडलम् कृपया ऊटी देखें।

313. कन्याकुमारी यह शहर भारत की मुख्य भूमि के दक्षिणी छोर पर है। ऐसा माना जाता है कि शिव ने हिमालय पर्वत की पुत्री पार्वती से यहीं विवाह किया था तथा उस समय वारे गए सात रंग के चावल के दाने यहाँ के सात रंग के रेत में बदल गए। इस रेत में लाल, भूरे, पीले, नारंगी, रजत, गहरे नीले और बैंगनी रंग के कण हैं। मान्यता है कि इन रंगों को वरुण देव ने बचाए रखा है। यहाँ अंतरीप पर हिंदुओं का कन्याकुमारी मंदिर है। प्राचीन काल में कन्याकुमारी एक अच्छी बंदरगाह थी। यह शहर विवेकानंद रॉक मेमोरियल के लिए जाना जाता है, जिस कारण यह धर्म और पर्यटन का एक बड़ा केंद्र बन गया है।
पर्यटन स्थल विवेकानंद रॉक मेमोरियल यहाँ का सबसे प्रसिद्ध पर्यटन स्थल है, जिसे प्रतिदिन हजारों लोग देखने आते हैं। अमरीका के शिकागो शहर में 1893 में हुए सर्वधर्म सम्मेलन में प्रवचन देने के लिए रवाना होने से पहले स्वामी विवेकानंद इसी स्मारक की चट्टान पर ध्यान मग्न होकर बैठे थे। यहाँ का सूर्योदय और सूर्यास्त भी देखने लायक है। यहाँ समुद्र से प्राप्त शंख, घोंघे, मोती, शैवाल आदि और इनसे बनी चीजों का व्यापार होता है। यहाँ जगह-जगह इन्हीं
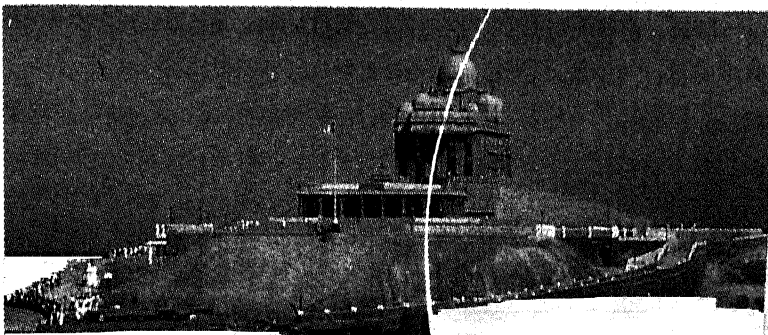
विवेकानंद स्मारक, कन्याकुमारी

वस्तुओं की दुकानें हैं, जहाँ ये चीजें सस्ती दरों पर खरीदी जा सकती हैं। कन्याकुमारी में गाँधी स्मारक, राजकीय संग्रहालय, कुम्मार अम्मान मंदिर और गुगनंत स्वामी मंदिर भी देखे जा सकते हैं। कन्याकुमारी के कुछ ही मील दूर उत्तर में नागरकोविल में वन्य जीव विहार और उसके पास ही पंद्मनाभपुरम् में एक पुराना किला और एक पुराना पगोडा है। कन्याकुमारी से 13 किमी दूर सुचिंद्रम् में हनुमान की 18 फुट ऊँची मूर्ति का मंदिर (नौवीं शताब्दी में बना) तथा 34 किमी दूर उदयगिरि का किला है, जिसे अट्ठारहवीं शताब्दी में राजा मार्तंडवर्मा ने बनवाया था।

उपलब्ध सुविधाएँ यहाँ त्रिवेंद्रम्, नागरकोविल आदि से रेल और बस सुविधाएँ उपलब्ध हैं। कन्याकुमारी में जगह-जगह अनेक होटल हैं, जहाँ वाजिब दरों पर ठहरने की सुविधा है। विवेकानंद रॉक मेमोरियल पहुँचने के लिए फेरी सेवा है। टीटीडीसी का पर्यटन सूचना केंद्र बीच रोड पर है। यहाँ गर्मियों में न्यूनतम तापमान 34°से तथा सर्दियों में 22°से होता है। अतः यहाँ वर्ष भर कभी भी जाया जा सकता है। निकटतम हवाई अड्डा 90 किमी दूर तिरुवनंतपुरम् है। पर्यटन सूचना केंद्र बीच रोड पर है।

314. कपातपुरम् पांड्य काल में यह दूसरे संगम का स्थल था। तोलक्कापियम् नामक तमिल व्याकरण इसी संगम में लिखी गई थी। इस पुस्तक के तीन भाग हैं। पहले भाग में वर्ण विन्यास, दूसरे में व्युत्पत्ति और तीसरे में विषय-वस्तु का विवेचन है। इसमें धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारों पुरुषार्थों का वर्णन है।

315. करूर यह वन्नी नदी के किनारे स्थित है। इसका प्राचीन नाम वंजी है।

ऐतिहासिक महत्त्व दूसरी और तीसरी शताब्दी में करूर चेर राजाओं की दूसरी शाखा की राजधानी थी। इस शाखा के राजा केरल में मरंदाई की मुख्य शाखा के समकालीन थे। इसका प्रथम ज्ञात राजा अंडुवन था। वह एक विद्वान था। आय और पारी उसके समकालीन सरदार थे। आय ने तमिल प्रदेश के कई भागों पर शासन किया। पारी का राज्य कोडुंगुरम् अथवा पिरानमलाई नामक पहाड़ी के चारों ओर था। पारी के दरबार में कपिलार नाम का एक कवि रहता था। पारी की मृत्यु के बाद कपिलार अंडुवन के पुत्र सेलवक्कडुगो वाली आदन के दरबार में चला गया। आदन के बाद उसका पुत्र पेंरुजेराल इरुंपोराई (190 ई०) शासक

बना। उसने आदिगाईमान सरदारों की राजधानी टगादुर (सेलम जिले में धर्मपुरी) के गढ़ को ढ़ा दिया। उसने कलुवुल नामक विद्रोही का दमन करके उसके किले पर कब्जा कर लिया। उसने अनेक यज्ञ भी किए। आदिगाईमान, जिसे नेडुमान अंजी भी कहा जाता था, इरुंपोराई का शत्रु था। अंजी के दरबार में ओवैयार नामक कवयित्री रहती थी। अंजी ने सात राजकुमारों को हराया और अनेक गढ़ों को ढ़ाया, जिनमें कोवालुर भी शामिल था। इरुंपोराई द्वारा टगादुर के आक्रमण के दौरान उसने पांड्य और चोल राजाओं से सहायता ली, परंतु इससे उसे कोई फायदा न हुआ। अंत में उसे इरुंपोराई का आधिपत्य स्वीकार करना पड़ा। बाद में उसने इरुंपोराई की तरफ से नन्नन की राजधानी पर आक्रमण किया। इस युद्ध में वह तथा एक अन्य चेर सरदार आय एयीनान नन्नन के बहादुर सेनापति निमिली अथवा मिनिली के हाथों मारे गए।

अगला चेर राजा पेरुंजेराल इरुंपोराई का चचेरा भाई कुडक्कों इलंजेराल इरुंपोराई था। उसने पांड्य और चोल राजाओं के विरुद्ध युद्ध लड़े और पोट्टी के चोल राजा तथा पलैयान मारन को हराया और उनसे काफी धन प्राप्त किया। एक अन्य चेर शासक मांडरंजेराल इरुंपोराई (210 ई०) था। उसे उसके समकालीन पांड्य शासक नेडुंजेलियन, जिसने तलैयालंगनम् को जीता था, ने कैद कर लिया था, परंतु समय रहते उसने उससे अपने आपको मुक्त करा लिया।

अंग्रेजों और हैदर अली के मध्य 1769 में हुई संधि के अनुसार करूर किला और जिला हैदर अली के पास रहा।

316. काँची

यह शहर मद्रास के पास आधुनिक काँचीपुरम् है।

ऐतिहासिक महत्त्व तीसरी-चौथी शताब्दी में काँची में पल्लव शासकों का राज्य था। ये राजा पहले सातवाहनों को अपना अधिपति मानते थे और बाद में स्वतंत्र हो गए थे। सबसे पहला स्वतंत्र राजा सिंहवर्मा प्रथम (275-300) था। उसका एक लेख गुंटूर जिले के पलनाद तालुके में मिला है। यह प्राकृत में है और इसके अक्षर ईक्षवाकुओं के लेखों से मिलते हैं, जिससे प्रतीत होता है कि वह ईक्षवाकुओं का समकालीन था। इस कुल का एक शासक स्कंदवर्मा था। उसने अश्वमेध, वाजपेय और अग्निष्टोम यज्ञ किए और काँची को अपनी राजधानी बनाया। उसने तीसरी शताब्दी के अंत में राज्य किया। इस वंश का एक अन्य शासक विष्णुगोप समुद्रगुप्त (335-75 ई०) का समकालीन था। समुद्रगुप्त के दक्षिण अभियान के समय उसने अपने सामंत पालक्क उग्रसेन की सहायता से समुद्रगुप्त का विरोध किया था, परंतु हार गया था। इस वंश के अन्य राजाओं में स्कंदवर्मा (370-85), वीरवर्मा (385-400), स्कंदवर्मा द्वितीय (400-36), सिंहवर्मा द्वितीय

(436-40), स्कंदवर्मा तृतीय (460-80), नंदीवर्मा (480-510), कुमारविष्णु द्वितीय (510-30), बुद्धवर्मा (530-40) और कुमारविष्णु तृतीय (540-50) ने काँची से शासन किया।

छठी शताब्दी के अंत में पल्लव वंश में सिंहविष्णु नाम का प्रसिद्ध राजा हुआ। उसने चोल प्रदेश पर अधिकार करके पल्लवों की शक्ति को बढ़ाया। सन् 600 से 630 ई० तक महेंद्रवर्मा प्रथम के काल में चालुक्य राजा पुलकेसिन ने चोल, केरल और पांड्य राजाओं की सहायता से उसे हरा दिया और वेंगी तथा उसके राज्य के उत्तरी भाग पर अधिकार कर लिया। उसके बाद नरसिंहवर्मा प्रथम महामल्ल (630-38) ने चालुक्य राजा पुलकेसिन द्वितीय को तीन बार हराया और 642 में उसकी राजधानी बादामी पर अधिकार कर लिया। उसने चोल, चेर और कलभ्रों को भी हराया और लंका के राजा मानवर्मा को गद्दी पर बैठने के लिए सैनिक सहायता दी। 665 ई० में चालुक्य राजा विक्रमादित्य ने उसे परास्त कर दिया और कुछ समय के लिए काँची पर अधिकार कर लिया। उसके राज्यकाल में ह्यून सांग 640 ई० में काँची आया था। उसके उत्तराधिकारी महेंद्रवर्मा द्वितीय (668-70) को चालुक्य राजा विक्रमादित्य प्रथम, मैसूर के गंग राजा और मदुरा के पांड्य राजा ने एक युद्ध में मार दिया। उसके बाद परमेश्वरवर्मा प्रथम (670-92) गद्दी पर बैठा। चालुक्य राजा विक्रमादित्य प्रथम ने उसकी राजधानी काँची पर अधिकार कर लिया था। उसे पांड्यों ने भी हराया, परंतु अंततः उसने चालुक्य और पांड्य राजाओं की सेना को पेरुवलनल्लूर में करारी हार दी। उसके बाद नरसिंहवर्मा द्वितीय (695-722) ने चीन के सम्राट के यहाँ एक शिष्टमंडल भेजा। उसके राज्य में शांति थी। उसने काँची का कैलाशनाथ मंदिर और महाबलीपुरम् के तट पर कई मंदिर बनवाए। उसके दरबार में दंडी विद्वान रहता था, जिसने दशकुमारचरित ग्रंथ लिखा था। नरसिंहवर्मा द्वितीय के बाद परमेश्वरवर्मा द्वितीय राजा बना। उसके काल में चालुक्य युवराज विक्रमादित्य द्वितीय ने आक्रमण किया। परमेश्वरवर्मा द्वितीय ने उसे बहुत सा धन देकर विदा किया। परमेश्वरवर्मा द्वितीय के बाद नंदीवर्मा द्वितीय ने 731 से 36 तक शासन किया। उसके काल में पांड्य राजा राजसिंह प्रथम ने राज्य के एक दूसरे दावेदार का साथ दिया था, परंतु नंदीवर्मा ने उदयचंद्र नामक अपने सेनापति की सहायता से विजय प्राप्त कर ली। उदयचंद्र ने उसके लिए उत्तर में भी कुछ प्रदेश जीते। उसने कोंगु और केरल के राजाओं से मिलकर एक संघ बनाया, किंतु पांड्य राजा जटिल परांतक ने उसे हरा दिया और कोंगु को अपने राज्य में मिला लिया। चालुक्य राजा विक्रमादित्य द्वितीय ने कुछ समय के लिए काँची पर अधिकार कर लिया था। 753 के बाद राष्ट्रकूट राजा दंतिदुर्ग ने भी काँची पर आक्रमण किया।

नंदीवर्मा ने गंग राजा श्रीपुरुष को हराकर उसके राज्य के कुछ भाग पर कब्जा कर लिया। उसने राष्ट्रकूट राजा गोविंद द्वितीय को ध्रुव के विरुद्ध सहायता दी। ध्रुव के राजा बनने पर नंदीवर्मा ने उसे बहुत सा धन देकर प्रसन्न किया। उसके बाद दंतिवर्मा ने 796 से 840 ई० तक 44 साल तक राज्य किया। उसके राज्य काल में राष्ट्रकूट राजा गोविंद तृतीय तथा पांड्य राजा वरगुण प्रथम ने आक्रमण किया। पांड्य राजा ने उसका कावेरी क्षेत्र छीन लिया। दंतिवर्मा के बाद नंदीवर्मा तृतीय (840-62) ने पांड्य राजा को तेल्लरू नामक स्थान पर हराकर अपना राज्य वापस प्राप्त कर लिया। अपने शक्तिशाली जहाजी बेड़े की सहायता से उसने मलाया द्वीप पर प्रभुत्व स्थापित किया। उसके राज्य काल के अंत में पांड्य राजा ने उसे हरा दिया। उसके उत्तराधिकारी नृपतुंग वर्मा (862-91) ने पांड्य राजा श्रीमार को पराजित किया। उसके काल में अपराजित नामक सेनानायक ने पांड्य राजा वरगुण द्वितीय को चोल सामंत आदित्य प्रथम की सहायता से 880 ई० में कुंबकोणम् के पास श्रीपुरंबियम् में हराया। इससे प्रसन्न होकर अपराजित ने पांड्यों के प्रदेश आदित्य प्रथम को दे दिए। परंतु आदित्य प्रथम ने 891 में पल्लव राजा अपराजित को हराकर टोंडईमंडलम् पर अधिकार कर लिया। काँची के आस-पास का इलाका टोंडईमंडलम् कहलाता था। इसके पश्चात् काँची पर चोल शासकों का प्रभुत्व हो गया। 943 में राष्ट्रकूट राजा कृष्ण तृतीय ने अपने बहनोई गंग राजा बुतुग की सहायता से काँची पर अधिकार कर लिया। 1085 में कल्याणी के चालुक्य राजा विक्रमादित्य षष्ठ ने काँची पर अधिकार कर लिया। वारंगल के काकतीय राजा गणपति (1199-1262) ने भी काँची पर अधिकार किया, परंतु पांड्य राजा जटावर्मा सुंदर ने इसे उससे 1250 में छीन लिया। दूसरे मैसूर युद्ध के दौरान हैदर अली ने 1780 में यहाँ काफी लूट-पाट मचाई।

धर्म संस्कृति एवं कला काँची देश की सप्तपुरियों में से एक है। शेष छह नगर हरिद्वार उज्जैन, वाराणसी, मथुरा, अयोध्या और द्वारिका हैं। इसे दक्षिण की वाराणसी भी कहा जाता है। प्राचीन काल में काँची धर्म, शिक्षा और वास्तुकला का एक प्रख्यात केंद्र था। यहाँ तत्कालीन सभी धर्मों के लोग रहते थे तथा यहाँ विभिन्न धर्मों के 80 मंदिर थे, जिनमें से कुछ पत्थर के ब्लॉकों के बने हुए थे। द्रविड़ शैली में बना आठवीं शताब्दी का वैंकटेश्वर मंदिर और नंदीवर्मन द्वारा बनवाया गया मुक्तेश्वर मंदिर यहाँ आज भी स्थित हैं। इसके अतिरिक्त नरसिंहवर्मन द्वितीय के काल के राजसिंह शैली में बने कैलाशनाथ, एरावतेश्वर और वैकुंठ पेरूमल मंदिर भी हैं। इन मंदिरों में पल्लवों और चालुक्यों के बीच हुए युद्ध के भित्तिचित्र बने हुए हैं। काँची के कई मंदिरों के गोपुरम् काफी ऊँचे हैं। इनमें से

एक एकंबरेश्वर मंदिर का गोपुरम् 188 फुट ऊँचा और वरदराजस्वामी के मंदिर का गोपुरम् 100 फुट ऊँचा है। वरदराजस्वामी मंदिर के 96 स्तंभों पर बहुत बढ़िया मूर्तियाँ बनी हुई हैं। ह्यून सांग ने लिखा है कि यहाँ सौ मठों में 10,000 बौद्ध भिक्षु रहते थे। यूँ शैव धर्म राजधर्म था, फिर भी यहाँ जैन और बुद्ध धर्म भी प्रचलित थे। बुद्ध काँची कई बार गए थे। अशोक ने काँची में हर उस जगह स्तूप बनवाए थे, जहाँ बुद्ध ने धर्म प्रवचन किया था। इनमें से एक स्तूप 100 फुट ऊँचा था। पल्लव शासक महेंद्रवर्मन, नरसिंहवर्मन और नंदीवर्मन के काल में यहाँ कला खूब फली-फूली। उत्सवों के दौरान यहाँ साहित्यकार और कलाकार इकट्ठे होकर भजन गाया करते थे। काँची तमिल और संस्कृत के अध्ययन का केंद्र भी था।

व्यापार प्राचीन काल में काँची दक्षिण भारत की एक बंदरगाह थी। पहली शताब्दी ई० के दौरान यहाँ से चीन के साथ व्यापार होता था। चीन को यहाँ से मोती, काँच आदि भेजे जाते थे तथा चीन से सोना और रेशम मंगाए जाते थे। यहाँ की काँजीवरम् साड़ी आज भी बहुत प्रसिद्ध है।

पर्यटन स्थल काँची में उपर्युक्त प्रसिद्ध मंदिरों के अलावा कामाक्षी अम्मान मंदिर है। यह मंदिर भारत की तीन शक्ति पीठों में से एक माना जाता है। अन्य दो शक्ति पीठें मदुरै और वाराणसी में हैं। इस मंदिर का निर्माण चोल राजाओं ने चौदहवीं शताब्दी में करवाया था। काँची में सी. ऐन. अन्नादुराई की स्मृति में अन्ना स्मारक भी है। तमिल में अन्ना से तात्पर्य बड़ा भाई होता है।

काँची से 5 किमी दूर एनातुर विश्वविद्यालय है। इस विश्वविद्यालय में प्राचीन पांडुलिपियाँ और आदिशंकर की 60 फुट ऊँची मूर्ति है। 5 किमी दूर ही तिरुपरुति कुंडलम् जैन धर्म का केंद्र है। 28 किमी दूर उत्तीरामेरुर में एक शिव मंदिर और अष्टांग विमान वाला एक विष्णु मंदिर तथा 29 किमी दूर श्री पेरुमबुदूर में वैष्णव संत रामानुजन का जन्म-स्थल और श्री राजीव गाँधी का स्मारक हैं। इनके अतिरिक्त वंडालूर (35 किमी) में दक्षिण का सबसे बड़ा चिड़ियाघर, भगवान सुब्रमण्य के छह आवासों में से एक तिरुतानी (42 किमी), वेदांतंगल जल-पक्षी विहार (48 किमी) और जिंजी फोर्ट (110 किमी) भी देखने योग्य स्थल हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ काँची देश के अन्य भागों से रेल और सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा चेन्नई है। ठहरने के लिए यहाँ अनेक होटल हैं। यहाँ का तापमान गर्मियों में 37°से और 21°से तथा सर्दियों में 28°से और 20°से के मध्य रहता है। यहाँ वर्ष में कभी भी जाया जा सकता है।

317. काँचीपुरम् कृपया काँची देखें।

318. किष्किंधा यह बिल्लारी जिले के हिंपी गाँव के निकट तुंगभद्रा नदी के उत्तरी किनारे पर है। किष्किंधा बाली और सुग्रीव की राजधानी थी।

319. कुंबकोणम् कुंबकोणम् चिदंबरम्-तिरुच्चरापल्ली मार्ग पर चिदंबरम् से 70 किमी दूर है। कावेरी नदी पर स्थित यह शहर दक्षिण के प्राचीनतम शहरों में से एक है। मदुरा के पांड्य राजा श्रीमार श्रीवल्लभ (815-62) ने गंग, पल्लव, चोल, कलिंग और मगध के राजाओं के संगठन को कुंबकोणम् में हराया था। इसी वंश के वरगुणवर्मा द्वितीय ने पल्लव नरेश नृपतुंग का आधिपत्य स्वीकार कर लिया था। कुछ समय बाद जब उसने स्वतंत्र होने की कोशिश की, तो पल्लवों ने उसे कुंबकोणम् के पास 880 में पराजित कर दिया। इस शहर में 18 हिंदू मंदिर हैं, जिनमें से एक रामास्वामी मंदिर पर प्रचुर मात्रा में नक्काशी का काम है। यहाँ के महासंघम् सरोवर में हर 12 वर्ष के बाद आयोजित स्नान पर्व पर भारी भीड़ जुटती है। कुंबकोणम् का पान दक्षिण में दूर-दूर तक प्रसिद्ध है। तंजावुर यहाँ से आधे घंटे की दूरी पर है। यहाँ के अनेक मंदिरों में से कुंभेश्वर, शार्गंपाणि, नागेश्वर, रामस्वामी, चक्रपाणि, महाकालेश्वर, सुंदरेश्वर शिवलिंग, इंद्र तथा महामाया मंदिर अधिक प्रसिद्ध हैं। यहाँ स्टेशन के पास चोल्ट्री में ठहरने की सुविधा है।

320. कोडाईकनाल कोडाईकनाल नगर समुद्र तल से 7375 फुट की ऊँचाई पर मदुरै के 120 किमी उत्तर-पश्चिम में पालनी की पहाड़ियों में है। यह जगह ताड़ व सिल्वर ओक के वृक्षों, कॉफी के बागों, अमरावती बाँध, झरनों, झीलों, गुफाओं तथा तरह-तरह के फूलों के लिए प्रसिद्ध है। इस जगह को सबसे पहले ले. वार्ड ने 1821 में खोजा था।

पर्यटन स्थल सर वेरे हेंड्री लेविंज द्वारा 1863 में बनवाई गई और 24 एकड़ में फैली कोडाई झील यहाँ का सबसे प्रमुख आकर्षण है। इस झील से 1 किमी दूर कोकर्स वाक है। इस पर एक दूरबीन लगी है। कुरिंजी अंदावर मंदिर (3 किमी) से प्रकृति का सुंदर नजारा देखने को मिलता है। यहाँ सिल्वर कास्केड (8 किमी), ग्लेन फाल्ज, बीयर शोला फाल्ज और फेयरी फाल्ज (5 किमी) नाम से कई झरने हैं। इनमें फेयरी फाल्ज सबसे अधिक आकर्षक है। पर्यटक इसी झरने पर स्नान करते हैं। इनके अतिरिक्त ब्रायंट पार्क फूलों के व्यापार के लिए प्रसिद्ध हैं। लूथरन चर्च (आधुनिक पेंटिंग और बाटिक कला का संग्रहालय), लेक से 850

फुट ऊँची और 32 किमी दूर जिंजुपुरम् पहाड़ी पर 1899 में निर्मित मौसम विज्ञान एवं सौर भौतिकी संबंधी वेधशाला, क्राइस्ट किंग चर्च, ग्रीन वैल्ली व्यू (5.5 किमी) तथा संग्रहालय भी दर्शनीय हैं। कोडाईकनाल से आठ किमी दूर डोलफिंज नोज तथा 35 किमी दूर कुकल केव भी यहाँ के विशेष आकर्षण हैं। कुरिंजी पौध ाा और उसके फूल कोडाईकनाल के विशेष आकर्षण हैं। कुरिंजी का पौधा बारह वर्ष में एक बार खिलता है।

उपलब्ध सुविधाएँ यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा मदुरै और रेलवे स्टेशन कोडाई रोड (80 किमी) है। झील से 7.4 किमी दूर 122 मी ऊँची तीन चट्टानें स्तंभों की तरह साथ-साथ खड़ी हैं और अच्छा दृश्य प्रस्तुत करती हैं। यहाँ से 3 किमी दूर मूर प्वाइंट और इससे आगे साइलेंट वैल्ली है। झील से 19 किमी दूर बेरीपाम लेक तथा डोलमैन सर्किल तथा 64 किमी दूर पालनी धार्मिक स्थान है। वहाँ से कोडाईकनाल सड़क मार्ग द्वारा जाया जा सकता है। ठहरने के लिए यहाँ कई छोटे-बड़े होटल हैं। स्थानीय भ्रमण के लिए यहाँ टैक्सियाँ और कुछ सिटी बसें हैं। गर्मियों में यहाँ का तापमान 19.8°से और 11.3°से के मध्य तथा सर्दियों में 17.3°से और 8.3°से के मध्य रहता है। झील पर साइकिल, घुड़सवारी, नौकायन और पुस्तकालय की सुविधा है। पर्यटक सूचना केंद्र बस स्टैंड पर है।

321. कोडुंगलूर यह आलवाय के उत्तर में है। इसका प्राचीन नाम क्रैंगनौर है। यहाँ कभी चेरामन पेरूमल शासकों का राज्य था। यह उनकी राजधानी थी। यहाँ स्थित चेरामन परंबु नामक उनका राजमहल आज भी देखा जा सकता है। उन दिनों कोडुंगलूर एक अंतर्राष्ट्रीय बंदरगाह हुआ करती थी। यहाँ एक पुर्तगाली किला, कुछ हिंदू मंदिर (जिनमें तिरुवंचिपुरम् और भगवती मंदिर प्रमुख हैं) तथा भारत की पहली मस्जिद देखी जा सकती है। पास ही में कोट्टपुरम् है। ऐसा माना जाता है कि सेंट थोमस भारत में सबसे पहले कोट्टपुरम् आए थे। उनके नाम से यहाँ एक गिरजाघर भी है।

322. कोरकई इसका प्राचीन नाम कोलची था। संगम युग में यह दक्षिण की एक बंदरगाह थी। यहाँ पांड्यों के शासन के दौरान समुद्र से मोती निकाले जाते थे, जिन्हें सजा-प्राप्त अपराधियों द्वारा तराशा जाता था।

323. कोलची कृपया कोरकई देखें।

324. कोवी वेन्नी कृपया वेन्नी देखें।

325. क्रैंगनोर

कृपया कोडुंगलूर देखें।

326. क्रैंगनानोर

कृपया मुसिरि देखें।

327. गंगईकोंडाचोलापुरम्

यह स्थान कावेरी नदी के मुहाने पर तंजौर के उत्तर-पूर्व में 60 किमी दूर है। चोल राजा राजेंद्र चोल प्रथम (1013-35) ने गंगा नदी पार करके बंगाल के स्थानीय राजाओं को हराया था। इस विजय के उपरांत उसने गंगईकोंडा (गंगा को जीतने वाला) की उपाधि धारण की और गंगईकोंडाचोलापुरम् की स्थापना की। उसने इसे अपनी राजधानी भी बनाया। उसने यहाँ बृहदीशवरार मंदिर बनवाया। यहाँ राजाओं और सौदागरों के भव्य महलों का निर्माण हुआ। राजराजा प्रथम ने यहाँ गंगईकोंड-चोला चोलेश्वर मंदिर का निर्माण कराया। आजकल यह एक छोटा सा गाँव है।

राजेंद्र चोल का राज्याभिषेक करते हुए शिव और पार्वती की मूर्ति, गंगईकोंडाचोलापुरम्

328. गिंडी राष्ट्रीय उद्यान यह उद्यान मद्रास से केवल एक किमी दूर है। इसकी स्थापना साँपों के संरक्षण के लिए की गई है। यहाँ सैंकड़ों तरह के साँपों का एक अजायबघर है। इसके अतिरिक्त यहाँ तरह-तरह की मछलियाँ भी हैं। इस पार्क में पर्यटकों की भीड़ लगी रहती है। गर्मी के मौसम को छोड़कर यहाँ साल में कभी भी जाया जा सकता है।

329. चेंगलपट्टु यह स्थान काँचीपुरम् के पश्चिम में है। यहाँ की गई खुदाइयों में महापाषाण काल की स्तूपाकार एवं डोल्मेन आकार की समाधियाँ पाई गई हैं। स्तूपाकार समाधियों में बड़े-बड़े पत्थरों से बने एक वृत्त के मध्य में शव की भस्म के पात्र रखे जाते थे। डोल्मेन समाधि में पत्थर का यह पात्र पृथ्वी के अंदर न होकर पृथ्वी के ऊपर होता था।

330. चिदंबरम् यह शहर पांडिचेरी के 60 किमी दक्षिण में है। यहाँ नौवीं शताब्दी में बना प्रसिद्ध नटराज मंदिर है, जो 32 एकड़ में फैला हुआ है। इसके चार गोपुरमों (तोरणों) में से दो पर भरत नाट्यम् की 108 भंगिमाएँ ग्रेनाइट के पत्थर पर उकेरी गई हैं। इस मंदिर में चार सभा मंडप हैं, जिनमें से राजा सभा मंडप सबसे प्रमुख है। यह मंडप 340' x 190' आकार का है और इसके 1000 स्तंभ हैं। यहाँ पांड्य और चोल शासकों ने विजय पर्व मनाए थे। नृत्य सभा मंडप में पत्थर पर देवरथ की नक्काशी की गई है। मंदिर के गर्भ-गृह में पाँच धातुओं से बनी शिव की नटराज मूर्ति है। चिदंबरम् में विष्णु को समर्पित गोविंदराज मंदिर भी है। यह मंदिर नटराज मंदिर से काफी बाद का है। इसमें विष्णु को सर्प शैय्या पर सोते हुए दिखाया गया है। चिदंबरम् के उत्तर में एक काली मंदिर और पूर्व में अन्नामलाई विश्वविद्यालय है।
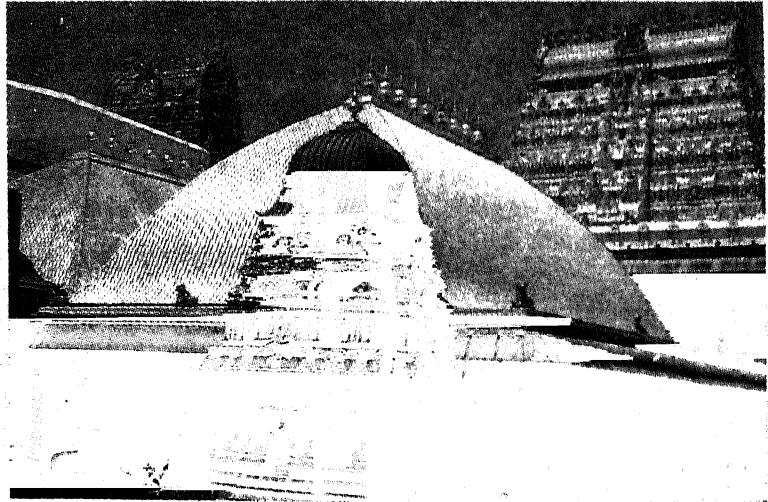
नटराज मंदिर, चिदंबरम्

चिदंबरम् के आस-पास के दर्शनीय स्थलों में तिरुवेट्टकलम, 20 किमी दूर वृद्धाचलम् में शिव मंदिर, 25 किमी दूर काट्टुमन्नारगुडी में वीर नारायण का मंदिर, वरेमा में देवनारायण मंदिर, सिलागी में विष्णु मंदिर, वैदीश्वरन कोइल (24 किमी) में वैद्येश्वर शिव मंदिर, तिरुवेंकाडु में शिव मंदिर और श्रीमुश्नम् का वराह अवतार मंदिर हैं। ऐसा माना जाता है कि वैद्येश्वर शिव मंदिर के सिद्धामृतम् सरोवर का स्नान रामबाण की तरह काम करता है। 37 किमी दूर वडालूर में सत्य ज्ञान सभा मंदिर तथा 85 किमी दूर माइलम् में मुरुगन मंदिर देखा जा सकता है। ऐतिहासिक स्थलों में पूमपुहार (40 किमी), सतरहवीं शताब्दी में नायकों द्वारा श्रीमुषणम् (45 किमी) में बनवाया गया नक्काशीदार भुवरथ मंदिर, गंगईकोंडाचोलापुरम् (50 किमी) का शिव मंदिर, प्राचीन व्यापारिक एवं पुरातात्विक स्थल अरिकामेडु (75 किमी) तथा जिंजी का किला (132 किमी) प्रमुख हैं। 16 किमी दूर पिछवरम् एक सुंदर प्राकृतिक स्थल है, जहाँ बैक वाटर, जल-क्रीड़ा, जल-भ्रमण, नौकायन, वन-भ्रमण, पक्षियों की भिन्न-भिन्न जातियों तथा वनस्पति का नजारा लिया जा सकता है।

उपलब्ध सुविधाएँ चिदंबरम् देश के अन्य भागों से रेल तथा सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। निकटतम हवाई अड्डा तिरुची (168 किमी) है। यहाँ टीटीडीसी का पर्यटन सूचना केंद्र रेलवे फीडर रोड पर है। यहाँ का तापमान गर्मियों में 37.1°से और 36.4°से के मध्य रहता है। सर्दियों में भी गर्म कपड़ों की जरूरत नहीं पड़ती। ठहरने के लिए यहाँ अनेक होटल हैं।

331. चेन्नई कृपया मद्रास देखें।

332. चोल यह स्थान मदुरै के निकट पश्चिमी तट पर है। गुप्त काल में यह एक महत्त्वपूर्ण बंदरगाह थी। विजयनगर के शासक हरिहर द्वितीय ने बहमनी शासक मुजाहिद की हत्या के बाद चोल से बहमनी सेना को निकालकर इस पर अधिकार कर लिया।

333. जिंजी जिंजी टिंडीवन्नम् के पास है।

ऐतिहासिक महत्त्व जिंजी ने इतिहास में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान बनाया है। शिवाजी ने यहाँ के किले पर 1677 में कब्जा किया था। औरंगजेब द्वारा रायगढ़ के किले पर कब्जा किए जाने, साहू को पकड़ने और शिवाजी के सबसे बड़े बेटे संभाजी को मारने के बाद शिवाजी के दूसरे पुत्र राजाराम ने जिंजी में ही शरण ली थी। 1694 और 1697 के मध्य जुल्फीकार खाँ, काम बख्श और बहुत से अन्य

मुगल सेनानायकों ने इस पर कब्जा करने की कोशिश की थी। आठ साल के लंबे घेरे के बाद ही जुल्फीकार खाँ 1698 ई० में जिंजी पर कब्जा कर सका, परंतु राजाराम सतारा भाग निकला। 1761 में सर आयरकूट ने इसे फ्रांसीसी राज्यपाल बूसी से छीन लिया था।

यहाँ से लगभग 60 किमी दूर तिरुवन्नामलाई में दक्षिणी भारत के सबसे अच्छे मंदिरों में से एक मंदिर है, जो 25 एकड़ भूमि में फैला हुआ है। तेजोलिंगम् (अग्नि देव) को समर्पित यह मंदिर अरुणाचल मंदिर के नाम से जाना जाता है। यह मंदिर एक पहाड़ी की तलहटी में है। यहाँ कार्तिकेय दीपम् पर्व पर बहुत चहल-पहल रहती है।

334. तंजावुर कृपया तंजौर देखें।

335. तंजौर—ऐतिहासिक महत्त्व आजकल इसे तंजावुर कहा जाता है। यह दसवीं से चौदहवीं शताब्दी तक चोल शासकों की राजधानी रही। चोल राजा विजयालय ने पांड्य राजा से 850 ई० में तंजौर दूसरी बार छीनकर इसे अपनी राजधानी बनाया था। उसने यहाँ चोल वंश के शासन की नींव रखी।
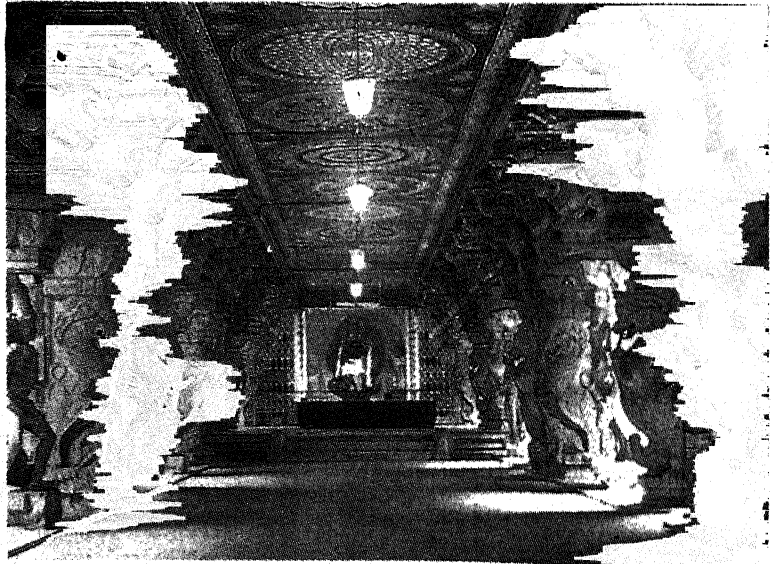
एक हजार स्तंभों का हाल, मीनाक्षी मंदिर, तंजौर

चोल शासक पहले पल्लव शासकों के सामंत थे। नौवीं शताब्दी के अंत में विजयालय (चोल) ने काँची के पल्लव शासक को भी परास्त करके उसकी हत्या कर दी और काँची के आस-पास का संपूर्ण क्षेत्र, जिसे टोंडईमंडलम् कहते हैं, अपने अधीन कर लिया। इस प्रकार उन्हें पल्लवों और पांड्यों दोनों से मुक्ति मिल गई और उन्होंने तंजौर में अपने स्वतंत्र शासन की स्थापना की। विजयालय के बाद उसका पुत्र आदित्य प्रथम 885 ई० में शासक बना। उसने अपने पल्लव अधिपति अपराजित को पांड्य राजा के विरुद्ध जिताया था। अपराजित ने पांड्य राज्य के विजित क्षेत्र उसी को दे दिए। आदित्य प्रथम उसकी दुर्बलता को भाँप गया और उसने उसे हराकर टोंडईमंडलम् अपने अधिकार में ले लिया। उसने गंगों की राजधानी तालक्काड पर भी अपना दबदबा कायम किया। आदित्य के बाद परांतक प्रथम (907-53) ने दक्षिण की ओर स्थित शेष पांड्य राज्य को समाप्त करके अपने राज्य की सीमा कन्याकुमारी तक बढ़ा ली। उसने श्रीलंका पर चढ़ाई की, परंतु सफल न हो सका। जब पल्लव शासक पुनः सिर उठाने लगे, तो उसने उनको भी दबा दिया। मान्यखेट के राष्ट्रकूट राजा कृष्ण तृतीय ने उसे तक्कोलम् के स्थान पर हराकर उससे 943 में टोंडईमंडलम् छीन लिया। इस प्रकार कुछ काल तक चोलों की शक्ति दब गई। बाद में परांतक द्वितीय (953-73) ने राष्ट्रकूट शासक को हराकर उससे टोंडईमंडलम् वापस ले लिया। 973 में मधुरांतक उत्तर चोल और 985 में राजराजा प्रथम शासक बना। राजराजा प्रथम ने त्रिवेंद्रम् पर आक्रमण करके चेर राज्य के बेड़े को कांदलूरशालय के निकट तहस-नहस कर दिया। उसने किल्लौं पर भी धावा बोला और मदुरै पर आक्रमण करके पांड्य शासक को बंदी बना लिया। उसने श्रीलंका के शासक को भी पराजित

नटराज

किया और उसके राज्य का कुछ भाग छीन लिया। राजराजा ने मालदीव को भी जीता। उसने कलिंग के गंग राजा और वेंगी को परास्त किया। राजराजा के काल में चालुक्य राजा सत्याश्रय ने चोल साम्राज्य पर आक्रमण किया। उसके पुत्र राजेंद्र प्रथम (1013-35) ने सत्याश्रय को हराया। उसने चेर और पांड्य राज्यों को रौंदकर अपने राज्य में मिला लिया। उसने श्रीलंका को भी पूरी तरह परास्त किया, जिससे अगले 50 वर्षों तक श्रीलंका चोल शासक के अधीन रहा। उसने कलिंग पार करके गंगा नदी पार की और दो स्थानीय राजाओं, जिनमें से एक बंगाल का राजा महीपाल था, को हराकर गंगईकोंड (गंगा पर विजय प्राप्त करने वाला) विरुद धारण किया। उसने कावेरी नदी के मुहाने पर गंगईकोंडाचोलापुरम् नगर बसाया और उसे अपनी राजधानी बनाया। अगला शासक राजाधिराज तंजौर की गद्दी पर 1035 में बैठा। उसने चालुक्य राजा विक्रमादित्य को धन्नद और पुंडूर में हराया और कल्याणी को लूटा। उसने लंका से भी युद्ध किया। अपनी विजयों के उपलक्ष्य में उसने अश्वमेध यज्ञ किए। वह 1052 में चालुक्य राजा सोमेश्वर प्रथम के साथ युद्ध करता हुआ कोप्पम् नामक स्थान पर मारा गया। उसके बाद 1052 से 1063 तक उसके छोटे भाई राजेंद्र द्वितीय ने शासन किया। उसने चालुक्यों को हराकर कोल्हापुर को लूटा और वहाँ एक विजय स्तंभ बनवाया। उसने लंका पर भी आक्रमण किया। वहाँ के राजा विजयबाहु ने एक पहाड़ी किले में शरण ली। उसके काल में 1055 ई० में घोर अकाल पड़ा। 1063 में उसका छोटा भाई वीर राजेंद्र गद्दी पर बैठा। उसने चालुक्य राजा सोमेश्वर को तुंगभद्रा और कृष्णा नदियों के संगम पर करारी मात दी और तुंगभद्रा के तट पर विजय स्तंभ बनवाया। सोमेश्वर प्रथम की मृत्यु के बाद उसके पुत्र
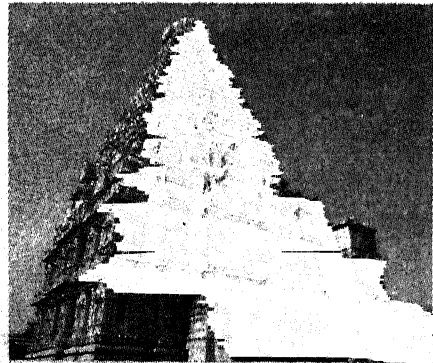
बृहदीशवाड़ा मंदिर, तंजौर

विक्रमादित्य ने चोलों की अधीनता स्वीकार कर ली। वीर राजेंद्र के काल में लंका का राजा स्वतंत्र हो गया। 1070 में वीर राजेंद्र का पुत्र अधिराजेंद्र शासनारूढ़ हुआ। उसके गद्दी पर बैठते ही विद्रोह आरंभ हो गए और चोल सत्ता का प्रभाव कम हो गया। कुछ ही महीने बाद उसकी मृत्यु हो गई। कुलोतुंग प्रथम 1070 में तंजौर का अगला राजा बना। उसने चालुक्य नरेश विक्रमादित्य सप्तम्, पांड्यों और चेरों को हराया। उसने लंका के राजा विजयबाहु के पुत्र से अपनी पुत्री का विवाह करके लंका से संधि कर ली। 1075 में उसने विक्रमादित्य को हराकर गंग राज्य पर अधिकार कर लिया। उसने चीन, कंबोज, कन्नौज और पेगन (बर्मा) के राजाओं से कूटनीतिक संबंध स्थापित किए। उसके शासन के अंतिम वर्षों में होयसल राजा विष्णुवर्मन ने उसके राज्य के कुछ भाग पर अधिकार कर लिया तथा चालुक्यों ने भी कुछ क्षेत्र हथिया लिए। कुछ सामंत भी स्वतंत्र हो गए। उसका उत्तराधिकारी विक्रम चोल उसकी मृत्यु के बाद 1122 में तथा विक्रम चोल का पुत्र कुलोतुंग द्वितीय 1135 में राज्य का स्वामी बना। उसके बाद राजराजा द्वितीय ने 1150 से 1173 तक शासन किया। उसके काल में पांड्य स्वतंत्र हो गए। उसके बाद राजाधिराज द्वितीय (1173-79), कुलोतुंग तृतीय, राजराजा तृतीय (1216-46) तथा राजेंद्र तृतीय (1246-79) राजा बने। इनके काल में पांड्यों और होयसलों ने चोल राज्य की नींव हिला दी। सुंदर पांड्य ने राजेंद्र तृतीय को हराकर तंजौर में चोल वंश का लगभग अंत कर दिया। इसके बाद चोल शासक स्थानीय सरदारों की तरह रह गए। 14वीं शताब्दी में विजयनगर साम्राज्य के हाथों इस राज्य के अंतिम चिह्न भी मिट गए। 1751 में फ्रांसीसी सेना ने इस पर कब्जा करने का असफल प्रयास किया। फ्रांसीसी सेनापति लैल्ली ने तंजौर के राजा से 70 लाख रु. की बकाया राशि वसूल करने के लिए 18 जुलाई, 1758 को इस का घेरा डाल लिया, परंतु गोला बारूद की कमी के कारण वह इस पर कब्जा नहीं कर सका और अंग्रेजी सेना के तंजौर पहुँच जाने पर उसने 10 अगस्त, 1758 को इसका घेरा उठा लिया।

पर्यटन स्थल अपनी विजयों के उपलक्ष्य में चोल राजाओं ने यहाँ शिव और विष्णु मंदिर बनवाए। इनमें से राजराजा प्रथम (985-1016 ई०) द्वारा बनवाया गया राजराजेश्वर मंदिर भी है। इसका निर्माण 1010 ई० में पूरा हुआ था। यहाँ बने मंदिरों की दीवारों पर कुछ लेख भी खुदे हैं, जो वर्णनात्मक हैं। राजराजा प्रथम द्वारा बनवाया गया बृहदीशवाड़ा मंदिर, जिसे राजराजा मंदिर भी कहा जाता है, द्रविड़ शैली की वास्तुकला का सबसे बढ़िया नमूना है। इसमें राजा, रानी और देवी-देवताओं की प्रतिमाएँ स्थापित हैं। इसकी ऊँचाई 200 फुट है। यूँ यह मंदिर

शिव को समर्पित है तथा इसमें शिवलिंग स्थापित होने के साथ-साथ भारत में नंदी की दूसरी सबसे बड़ी प्रतिमा (16 फुट लंबी) है, फिर भी इसकी दीवारों की अंदरूनी सतह पर शैव के अतिरिक्त बौद्ध एवं वैष्णव धर्म के भित्तिचित्र भी बने हुए हैं। ये भित्तिचित्र चोल शासकों (दसवीं-ग्यारहवीं शताब्दी) और नायक वंश (सतरहवीं शताब्दी) के काल के हैं। भारत में नंदी की सबसे बड़ी प्रतिमा अनंतपुर के पास लेपाक्षी में है। चोल शासकों ने तंजौर में जिस जगह से शासन किया था, वहाँ अब सरस्वती महल पुस्तकालय और काँसे की उत्कृष्ट प्रतिमाओं का एक संग्रहालय है। तंजौर में शिवगंगा सरोवर, सुब्रमण्य मंदिर तथा एक राजा द्वारा 1779 में बनवाया गया स्वाट्र्ज गिरिजाघर भी है। तंजौर के पास ही तिरुवैयार है, जहाँ उन्नीसवीं शताब्दी के दौरान दक्षिण के महान संत एवं संगीतकार त्यागराज रहा करते थे।

तंजौर के आस-पास तिरुवैयारु, तिरुकंडीयुर, कुंबकोणम्, तिरुभुवनम् तथा धारासुरम् (सभी 40 किमी), गंगईकोंडाचोलापुरम् (71 किमी) का शिव मंदिर, मुस्लिम तीर्थ स्थान नागौर (85 किमी) तथा ईसाइयों का धर्म स्थल वेलंकन्नी (90 किमी) का भ्रमण किया जा सकता है।

उपलब्ध सुविधाएँ तंजौर देश के अन्य भागों से रेल तथा सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। निकटतम हवाई अड्डा 60 किमी दूर तिरुच्चिरापल्ली है। ठहरने के लिए यहाँ अनेक होटल हैं। पर्यटन सूचना केंद्र जवान भवन में है।

336. तिरुच्चिरापल्ली

कृपया त्रिचनापल्ली देखें।

337. त्रिचनापल्ली

यह तंजौर के 55 किमी पश्चिम में है। इसका आधुनिक नाम तिरुच्चिरापल्ली है। इसे त्रिची भी कहा जाता है।

ऐतिहासिक महत्त्व द्वारसमुद्र के होयसल वंश का अंतिम शासक बल्लाल तृतीय 1342 में मुस्लिमों से युद्ध करता
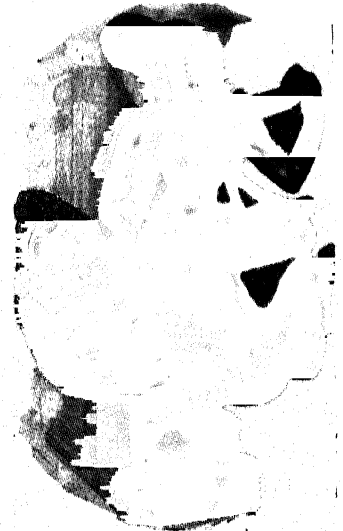
तिरुनेलवेल्ली से 13 किमी दूर तिरुवेंकटनाथन् मंदिर में नृत्य करती रति की प्रतिमा

हुआ त्रिचनापल्ली में ही मारा गया था। 1732 में अर्काट के नवाब दोस्त अली ने अपने दामाद चंदा साहिब को त्रिचनापल्ली पर कब्जा करने के लिए भेजा था। चंदा साहिब ने यहाँ की विधवा रानी को प्रेम-पाश में फँसाकर त्रिचनापल्ली पर कब्जा कर लिया। 1740 में मराठों ने इसे उससे छीन लिया। पेशवा ने सात साल तक चंदा साहिब को बरार और सतारा में कैद करके रखा, परंतु 1748 में वह सतारा से बच निकला। अगस्त, 1749 में हैदराबाद के मुजफ्फरजंग और डुप्ले की सहायता से जब उसने अर्काट पर धावा बोला, तो अर्काट का नवाब अनवरुद्दीन मारा गया और उसके पुत्र मोहम्मद अली ने त्रिचनापल्ली के किले में शरण ली। अब डुप्ले ने त्रिचनापल्ली पर पुनः कब्जा करने का विचार किया। उसने एक बड़ी सेना त्रिचनापल्ली भेजी, परंतु वह सेना तंजौर पर कब्जा करने के असफल प्रयास में लग गई। उधर त्रिचनापल्ली के किले में शरण लिए मोहम्मद अली को अंग्रेजों ने यह संदेश भेज दिया कि वे उसकी मदद के लिए शीघ्र आ रहे हैं और जब तक अंग्रेजी सेना त्रिचनापल्ली न पहुँच जाए, वह डुप्ले को बातों में उलझाए रखे। मोहम्मद अली ने ऐसा ही किया। मई, 1751 में ब्रिटिश सेना त्रिचनापल्ली के लिए रवाना हो गई। उधर डुप्ले ने मि० लॉ के नेतृत्व में त्रिचनापल्ली सेना भेज दी, परंतु लॉ अपने कार्य में असफल रहा। वर्ष के अंत तक अंग्रेजों, मैसूर, तंजौर और मराठों की सेनाएँ त्रिचनापल्ली पहुँच गईं। अंग्रेजों ने एक चाल और चली। ब्रिटिश सेना में भर्ती कलाईव के सुझाव पर अंग्रेजों ने अर्काट पर कब्जा कर लिया। इसका परिणाम यह हुआ कि चंदा साहिब ने अपने पुत्र के नेतृत्व में आधी सेना अर्काट पर पुनः कब्जा करने के लिए भेज दी और शेष के साथ वह स्वयं त्रिचनापल्ली में जुटा रहा। जब क्लाईव की सेना अर्काट पर कब्जा कर लिया, तो त्रिचनापल्ली में फ्रांसीसी सेना कमजोर पड़ गई। 31 दिसंबर, 1752 को डुप्ले ने त्रिचनापल्ली का घेरा फिर डाल लिया। 1753 में चंदा साहिब ने आत्म-समर्पण कर दिया। अंग्रेजों ने उसे मारकर उसकी जगह मुहम्मद अली को अर्काट का नवाब बना दिया। 1753 के अंत तक दोनों सेनाओं में वारदातें होती रहीं, जिनमें कभी किसी का पलड़ा भारी रहता, कभी किसी का। फिर भी डुप्ले ने त्रिचनापल्ली लेने का विचार नहीं बदला। परंतु फ्रांसीसी सरकार डुप्ले की योजनाओं को नहीं समझ सकी। अगस्त, 1754 में उसने डुप्ले को वापस बुला कर गोदेहू को भारत भेज दिया। गोदेहू ने अंग्रेजों से संधि कर ली, जिसके अनुसार दोनों पक्षों ने एक-दूसरे द्वारा विजित प्रदेशों को मान्यता दे दी। इस प्रकार त्रिचनापल्ली अंग्रेजों के हाथ में आ गया।

पर्यटन स्थल कावेरी नदी के किनारे 300 मी की ऊँचाई पर स्थित इस किले

को आजकल रॉक फोर्ट भी कहा जाता है। इस किले में सौ स्तंभों का एक हाल और शिव को समर्पित श्री थायुमानस्वामी (मातृभूतेश्वरार) मंदिर है। इस मंदिर के गुंबद पर सोने का पत्तर चढ़ा हुआ है। तिरुच्चिपल्ली शहर तथा किले का निर्माण मदुरै के नायकों ने कराया था। पहाड़ी के सबसे ऊपर गणेश को समर्पित उच्चीपिलैयार कोइल नाम का मंदिर है। मंदिर केवल पहाड़ी के ऊपर ही नहीं है, बल्कि इसे काटकर भी गुफा मंदिर बनाए गए हैं। यहाँ के दोनों बड़े गुफा मंदिर (श्री थायुमानस्वामी और विनायक मंदिर) पल्लव शासकों द्वारा बनवाए गए थे। इन मंदिरों के सम्मुख भाग में सात स्तंभ तथा एक कोने में एक वर्गाकार मंदिर है।

त्रिचनापल्ली में क्लाईव का निवास स्थल, आधुनिक सेंट जोसेफ कॉलेज, डेनमार्क के ईसाई प्रचारक सी वी स्वाट्र्ज द्वारा बनवाया गया ईसाई गिरजाघर, संग्रहालय और टेप्पकुलम् सरोवर है।

तिरुच्चिरापल्ली के आस-पास भी अनेक दर्शनीय स्थल हैं। यहाँ से 7 किमी दूर तिरुवनैकावल में जम्बूकेश्वर मंदिर है। इसके अतिरिक्त व्यालूर (8 किमी) में भगवान मुरुगन का मंदिर, श्रीरंगम् (10 किमी) में तेरहवीं शताब्दी में बना श्री रंगनाथस्वामी मंदिर, मुकोंबू (18 किमी) में कोल्लीडम नदी पर पिकनिक स्थल, समयपुरम् (20 किमी) में मरियम्मम् देवी का मंदिर, ग्रांड अनीकूट (कलानै) (24 किमी) में कारिकल के चोलों द्वारा बनवाया गया बाँध, विरालीमलाई (30 किमी) में भगवान सुब्रमण्य का मंदिर, नारथामलाई मंदिर (37 किमी), कोडुंगलूर (मूवारकोइल) (42 किमी) में दसवीं शताब्दी के मंदिर, सिट्टनवासल (58 किमी) में प्राचीन जैन मठ, पुलियाँचोलाई पिकनिक स्थल (72 किमी) तथा गंगईकोंडाचोलापुरम् (72 किमी) अच्छे दर्शनीय स्थल हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ तिरुच्चिरापल्ली देश के अन्य भागों से वायु, रेल व सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। स्थानीय भ्रमण के लिए यहाँ सिटी बसें, टैक्सियाँ, आटो रिक्शे तथा रिक्शे मिलते हैं। यहाँ का तापमान गर्मियों में 37°से तथा 26°से के मध्य रहता है। यहाँ पर्यटक सूचना केंद्र हवाई अड्डे, रेलवे जंक्शन तथा कैंटोनमेंट में 1, विलियम्ज रोड पर हैं। ठहरने के लिए यहाँ छोटे-बड़े अनेक होटल हैं।

338. त्रिची कृपया त्रिचनापल्ली देखें।

339. नागपट्टम् कृपया नागपट्टीनम् देखें।

340. नागपट्टीनम् इसे नागपट्टम भी कहा जाता है।

ऐतिहासिक महत्त्व पुर्तगालियों ने इसे सोलहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में अपने कब्जे में करके सतरहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक यहाँ अपनी बस्तियाँ बसा ली थीं। बाद में 1759 ई० में अंग्रेजों ने इसे उनसे छीन लिया। यहाँ डच व्यापारियों का भी मुख्यालय था। 1781 ई० में सर आयरकूट और हैदर अली के मध्य हुई सोलंगीर की लड़ाई के समय नागपट्टीनम् हैदर अली के कब्जे में था, परंतु अंग्रेजों ने युद्ध में हैदर अली को परास्त करके नागपट्टीनम् को अपने कब्जे में कर लिया।

341. नीलगिरि थार अभयारण्य यह अभयारण्य केरल व कर्नाटक की सीमा के पास नीलगिरि पर्वत की ढलानों पर है। इसका विकास विशेष रूप से नीलगिरि थारों के संरक्षण के लिए किया गया है। नीलगिरि थार के अतिरिक्त यहाँ नीलगिरि लंगूर, भौंकने वाले हरिण, काले हरिण, वन बिलाव आदि जंतु मिलते हैं। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय फरवरी से जनवरी तक का होता है। यहाँ से निकटतम प्रसिद्ध शहर ऊटी है।

342. पडुक्का कृपया अरिकामेडु देखें।

343. पुहार कृपया पूमपुहार देखें।

344. पूमपुहार चोलों के समय में समुद्र में मिलती हुई कावेरी नदी को पुहार कहा जाता था। परंतु इस स्थान के सौंदर्य को देखते हुए बाद में इसे पूमपुहार कहा जाने लगा। इसका एक अन्य नाम कावेरी पूमपट्टीनम् भी है। यह कारिकल के लगभग 15 किमी उत्तर में है। पूर्ववर्ती चोल राजाओं के अधीन यह पूर्वी तट पर सबसे बड़ी बंदरगाह हुआ करती थी। इस शहर की ख्याति संगम युग की कविताओं तथा शिल्पद्दीकारम् और मणिमेकलाई नामक महाकाव्यों में वर्णित है। शिल्पद्दीकारम् के समय को पूमपुहार में पुनः जीवन्त किया गया है। पूमपुहार की सज्जात्मक दृश्यावली को यहाँ की कला दीर्घा में इलांजी मनरम्, पवई मनरम्, बौद्ध स्कूल, अरुगन कोट्टम, तिरुमल कोटटम, मुरुग कोट्टम आदि के सृजन ने दूसरी शताब्दी जैसा बना दिया है।

उपलब्ध सुविधाएँ पूमपुहार का सुंदर और शांत समुद्री तट स्नान के अनुकूल है। टीटीडीसी ने यहाँ सैल (shell) के आकार के टूरिस्ट कॉटेज बनाए हुए हैं। यहाँ एक पर्यटन सूचना केंद्र भी हैं।

345. पोर्टो नोवो दूसरे मैसूर युद्ध के दौरान 1780 में हैदर अली ने यहाँ लूट-पाट मचाई थी। उसने कर्नल बैल्ली और फ्लैचर की सेना को बुरी तरह मार गिराया। अंग्रेज प्रमुख सेनापति मुनरो भी भाग गया। शीघ्र ही सर आयरकूट आ गया। हैदर अली ने वंदीवाश से टीपू सुल्तान को बुला लिया। परंतु अगस्त, 1781 में आयरकूट ने हैदर अली को सोलंगीर में हरा दिया और पोर्टो नोवो पर कब्जा कर लिया।

346. बलिता इसका आधुनिक नाम वरक्कालाई है। संगम युग के दौरान यह दक्षिणी भारत की एक बंदरगाह थी। दमीरिका में बनी सभी वस्तुएँ यहाँ आती थीं और मिश्र में बनी वस्तुएँ देश के अन्य भागों के अलावा यहाँ अधिक आती थीं।

347. मन्नार राष्ट्रीय पार्क यह पार्क तमिल नाडु के दक्षिण में है और समुद्री जंतुओं के संरक्षण के लिए बनाया गया है। यहाँ समुद्री कौआ, व्हेल, किंग फिशर कछुआ, डालफिन मछली, पिसूरी हरिण, जंगली बिल्ली, वन बिलाव और लंगूर आदि जीव देखने को मिलते हैं।

348. मदुरा यह शहर तमिल नाडु में वैगान नदी के किनारे स्थित है। यह दो ओर से यन्नई मलाई (हाथी पहाड़ी) और नाग मलाई (नाग पहाड़ी) से घिरा हुआ है। यन्नई मलाई 8 किमी लंबी है और एक लेटे हुए हाथी जैसी लगती है। मदुरा मथुरा का ही तमिल रूप है। मदुरा से तात्पर्य है मधुर शहर। ऐसा माना जाता है कि यहाँ शिव की जटाओं से अमृत वर्षा हुई थी।

ऐतिहासिक महत्त्व पांड्य शासकों ने यहाँ प्रथम शताब्दी ई० से बारहवीं शताब्दी ई० तक समय-समय पर राज्य किया था। अपने अस्तित्व के लिए उन्हें पल्लवों से कई बार युद्ध करना पड़ा और उन्हें ज्यादातर बार हराया। उन्होंने अपनी राजधानी मनवर से मदुरा भी बदली। अशोक के काल में मदुरा में पांड्यों का स्वतंत्र राज्य था। इस वंश का एक प्रसिद्ध राजा नेडुंजेलियान था। उसकी राजधानी मदुरा पर चेर, चोल और पाँच अन्य छोटे-छोटे राज्यों ने आक्रमण किया। उसने उन्हें तलैयालंगनम् नामक स्थान पर हराया तथा कोंगु व कुछ अन्य क्षेत्रों को जीतकर अपने राज्य का विस्तार किया। उसने अनेक वैदिक यज्ञ किए।

छठी शताब्दी के अंत में कुडुंगन (560-90) ने पांड्य शक्ति को दुबारा जुटाया। उसके बाद मारवर्मा अवनिसुलमाणी (590-620), सेलियान सेडल (620-50) तथा अरिकेसरी परांकुस मारवर्मा (650-700) राजा हुए। इस वंश के अगले

राजा अरिकेसरी मारवर्मा (700-10) ने केरल तथा अन्य राज्यों को जीता। उसने पल्लवों के विरुद्ध चालुक्य राजा विक्रमादित्य प्रथम से संधि करके पल्लव राजा परमेश्वरवर्मा को हराया। उसके बाद कोच्चडयन (710-35) ने कोंगु जीत लिया और मारवर्मा राजसिंह प्रथम (735-65) ने गंग तथा चालुक्य राजाओं की सम्मिलित सेना को 700 ई० के आस-पास वेण्बाई के स्थान पर पराजित किया। बाद में जटिल प्रातंक उर्फ वरगुण प्रथम (765-815) ने पल्लव राजा नंदीवर्मा द्वारा बनाए गए संघ को पराजित किया और अपने राज्य को त्रिचनापल्ली, सेलम तथा कोयंबटूर तक बढ़ाया। उसके उत्तराधिकारी श्रीवल्लभ (815-62) ने गंग, पल्लव, चोल, कलिंग और मगध राजाओं के संगठन को कुंबकोणम् के स्थान पर हराया। उसने लंका पर आक्रमण करके वहाँ की राजधानी को लूटा। इसी दौरान उसके पुत्र वरगुणवर्मा ने विद्रोह कर दिया और लंका के राजा को पांड्य राज्य पर आक्रमण करने के लिए निमंत्रित किया। इसी समय पल्लव राजा नृपतुंग ने भी पांड्य राज्य पर आक्रमण कर दिया। श्रीमार की हार हुई और लंका के राजा ने उसकी राजधानी पर कब्जा कर लिया। उसकी मृत्यु के पश्चात वरगुण वर्मा द्वितीय ने पल्लव नरेश नृपतुंग का आधिपत्य स्वीकार कर लिया। जब वरगुण ने कुछ समय बाद स्वतंत्र होने का प्रयास किया, तो पल्लवों ने उसे 880 ई० के आस-पास श्रीपुरमबियम् के स्थान पर बुरी तरह हराया। उसके बाद प्रांतक उर्फ वीरनारायण षडयन (880-900) तथा मारवर्मा राजसिंह द्वितीय (900-20) राजा बने। 910 ई० के आस-पास चोल के पुत्र प्रांतक ने पांड्य राजाओं की राजधानी पर अधिकार कर लिया। पांड्य राजा ने लंका के राजा से मिलकर चोलों के विरुद्ध एक संगठन बनाया। चोलों ने उनकी सम्मिलित सेना को 920 ई० के आस-पास मदुरा के निकट हरा दिया। इसके बाद काफी समय तक चोलों ने पांड्य राज्य पर शासन किया। चोल राजा प्रांतक ने इसे 907 और 953 ई० के मध्य पांड्य राजा राजसिंह से छीना था। 949 ई० में राष्ट्रकूट राजा कृष्ण तृतीय ने इसे अपने कब्जे में कर लिया। राजराजा ने इसे पुनः अपने कब्जे में कर लिया और यहाँ एक मठ बनवाया। बारहवीं शताब्दी में कुलोतुंग प्रथम के बाद तंजौर के चोल राजाओं की शक्ति क्षीण हो गई। इस स्थिति का लाभ उठाकर पांड्य राजाओं ने अपनी शक्ति बढ़ा ली, परंतु ऐसे समय में कुलशेखर और वीर पांड्य राज्य के दो दावेदार खड़े हो गए। लंका के राजा ने वीर पांड्य की सहायता की और चोल राजा ने कुलशेखर की। अंत में 1182 में कुलशेखर का पुत्र विक्रम मदुरा की राजगद्दी पर बैठा। परंतु विक्रम चोलों को अधिपति मानता था। फिर भी अगले शासक जयवर्मा कुलशेखर (1190-1216) चोलों से पूरी तरह स्वतंत्र हो गया। उसके उत्तराधिकारी के रूप में मारवर्मा सुंदर पांड्य (1216-28)

राजा बना। उसने चोल राजा कुलोतुंग तृतीय को हराकर उससे उरैयुर और तंजौर छीन लिए तथा उसे कर देने के लिए विवश किया। बाद में कुलोतुंग ने होयसल राजाओं की सहायता से अपना राज्य वापस ले लिया, फिर भी उसे चोल राजा का आधिपत्य स्वीाकर करना पड़ा। सुंदर पांड्य ने चोल राजा राजराजा तृतीय के विद्रोह को दबाकर उसे पराजित किया। परंतु उसे भी होयसल राजा की सहायता मिल गई। मारवर्मा सुंदर पांड्य के बाद मारवर्मा सुंदर पांड्य द्वितीय (1228-51) और जटावर्मा सुंदर पांड्य (1251 ई०) राजा बने। जटावर्मा सुंदर पांड्य ने वारंगल के काकतीयों, सेंधमंडलम् के पल्लव सामंतों और द्वारसमुद्र के होयसलों को हराकर अपना राज्य सुदूर दक्षिण तक बढ़ाया। चोल राजा राजेंद्र भी उसका आधिपत्य मानता था। उसने लंका के राजा को हराया और उससे बहुत से मोती प्राप्त किए। जटावर्मा सुंदर पांड्य ने काँची पर अधिकार करके अपना वीराभिषेक कराया। लंका के एक भाग के शासक मलय प्रदेश के राजा चंद्रभान ने भी उसका आधिपत्य स्वीकार किया। उसके बाद मारवर्मा कुलशेखर राजा बना। 1311 ई० में मलिक काफूर ने यहाँ के पांड्य राजा वीर पांड्य पर आक्रमण कर दिया। यह आक्रमण उसने सुदर पांड्य के निमंत्रण पर किया था। उन दिनों सुदर पांड्य का अपने भाई वीर पांड्य से झगड़ा चल रहा था। हालाँकि मलिक काफूर उसे हरा न सका, परंतु ऐसा कहा जाता है कि उसे यहाँ से इतना धन मिला कि उसका इतिहास में कोई पूर्व उदाहरण नहीं था। 1333 में मदुरा के तुगलक गवर्नर जलालुद्दीन अहसान ने अपने आपको स्वतंत्र कर लिया। 1356 में विजयनगर साम्राज्य के संस्थापक हरिहर ने मदुरा पर आक्रमण कर दिया। उसके उत्तराधिकारी बुक्का राय (1356-77) ने मदुरा को जीतकर उसे अपने साम्राज्य में मिला लिया। 1490 से 1506 के बीच इम्माड़ि नरसिंह के काल में नरसा नायक ने भी मदुरा को जीता।

धर्म, शिक्षा और कला मदुरा एक किलेबंद शहर था। नायक राजाओं ने यहाँ सोलहवीं शताब्दी ई० में मीनाक्षी मंदिर बनवाया था, जिसके कारण यह आज भी प्रसिद्ध है। पांड्यों के शासन के दौरान यहाँ तीसरे संगम का आयोजन हुआ था। इस संगम में पचास विद्वानों ने भाग लिया था।

तीसरे संगम के तीन संग्रह उपलब्ध हैं – पुत्थुप्पात्तु, एतुत्थोकई और पदिनेन कीलकनक्कु। पुत्थुप्पात्तु में दस काव्य हैं। इनमें नक्किरर, रुद्रवन कन्नार, मरुथनार, कन्नियार, नत्यथनार, नप्पुथनार, कपिलार और कैसिकनार के काव्य हैं। एतुत्थोकई में कविताओं के आठ संग्रह हैं। पदिनेन कीलकनक्कु में 28 संग्रह हैं। इनमें सबसे प्रसिद्ध रचना तिरुवल्लुवर की है। तीसरे संगम में उपर्युक्त

तीन संग्रहों के अतिरिक्त तीन महाकाव्यों की रचना भी हुई। सबसे प्रसिद्ध महाकाव्य इलंगो का शिलप्पदिकारम् है, जिसमें कोवलन और कन्नकी की कथा है। दूसरा महाकाव्य मणिमेखलय और तीसरा जीवककृत जीवक चिंतामणि है। संगम साहित्य का रचना काल 100 ई० से 250 ई० के बीच का है। मदुरा की प्राकृतिक गुफाओं में दूसरी और पहली शताब्दी ई०पू० के संगम् युग के ब्राह्मी लिपि में कुछ छोटे-छोटे लेख भी पाए गए हैं। ब्राह्मण धर्म युग का प्रमुख धर्म था।

व्यापार मदुरा एक समृद्ध शहर था। यहाँ से हीरों का व्यापार किया जाता था। अधिकांश व्यापार रोम के साथ किया जाता था। रोम सम्राट के दरबार में एक पांड्य राजदूत भी रहा करता था।

पर्यटन स्थल नायक वंश के शासकों ने यहाँ प्रसिद्ध मीनाक्षी मंदिर और इसके दस ऊँचे-ऊँचे गोपुरमों का निर्माण कराया। मीनाक्षी शिव की अर्धांगिनी का नाम है। मंदिर में शिव और मीनाक्षी की पूजा की जाती है। मंदिर में शिव की मूर्ति सुंदरेश्वरार के रूप में है। मंदिर में ही सुनहरी तिल्ली तालाब है, जहाँ श्रद्धालु स्नान करते हैं। मंदिर में 1000 स्तंभों वाला एक हाल है, जिसका निर्माण 1560 ई० के आस-पास किया गया था। यह हाल इंजीनियरी और कला दोनों दृष्टियों से बेजोड़ है। इसके स्तंभों पर जीवन के विभिन्न रंगों की तस्वीरें बनी हुई हैं। इस हाल के बाहर कुछ अन्य स्तंभ हैं, जिन्हें टनकाने से सुरों की-सी आवाज निकलती है। मंदिर में कंबट्टी मंडपम् भी है, जिसके स्तंभों पर शिव के विभिन्न अवतारों के भित्तिचित्र बनाए गए हैं। मंदिर के अन्य मंडपों में मीनाक्षी नायकम् मंडप, अंधेरा मंडप, किलिकुंड मंडप, उत्सव मंडप, पुरुषमृग मंडप, सभा मंडप, पदु मंडप तथा मीनाक्षी कल्याण मंडप शामिल हैं। मंदिर में अप्रैल महीने के दौरान महाशिवरात्रि के दिन भारी भीड़ जुटती है। इस अवसर पर मंदिर में शिव पार्वती के विवाह का मंचन किया जाता है और दोनों की मूर्तियों के शहर में तीन दिन तक दर्शन कराए जाते हैं। मीनाक्षी मंदिर के अलावा नायकों की स्थापत्य कला का एक और अजूबा तिरुमल नायक का राजमहल है, जो हिंदू-सारसेनी शैली में बना हुआ है। मदुरा से पाँच किमी दूर टेप्पकुलम् सरोवर और 21 किमी दूर अझगरकोविल में विष्णु मंदिर में श्रेष्ठ शिल्पकला के नमूने देखने को मिलते हैं। हिंदू शास्त्रों में अझगर मीनाक्षी के भाई का नाम है। इनके अतिरिक्त पाझामुतीरचोलाई में भगवान सुब्रमण्य का मंदिर (4 किमी), तिरुपारंकुंडरम् में मुरुगन मंदिर (8 किमी), वैगाई बाँध (68 किमी), पालनी मंदिर (122 किमी), सुरुली के झरने (128 किमी) और केरल राज्य में पेरियार वन्य जीव विहार (146 किमी) भी पर्यटन के अनुकूल स्थान हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ मदुरा देश के अन्य नगरों से रेल, सड़क तथा वायु मार्ग से जुड़ा हुआ है। ठहरने के लिए यहाँ आईटीडीसी तथा टीटीडीसी के होटल और अनेक प्राइवेट होटल हैं। पर्यटन सूचना केंद्र होटल तमिल नाडु और रेलवे स्टेशन पर है।

अन्ना स्मारक, चेन्नई

349. मदुरै कृपया मदुरा देखें।

350. मद्रास—स्थापना यह तमिल नाडु का प्रमुख शहर है। 1996 में इसका नाम बदलकर चेन्नई रख दिया गया है। यहाँ देश की सर्वोत्तम कृत्रिम बंदरगाहों में से एक बंदरगाह है। 1639 में चंद्रगिरि के राजा ने फ्रांसिस डे और एंड्रू कोगन को ईस्ट इंडिया कंपनी का व्यापारिक स्थल खोलने के लिए मद्रास शहर की जगह, जिसे उन दिनों मद्रासपत्रम् कहा जाता था, पट्टे पर दी थी।
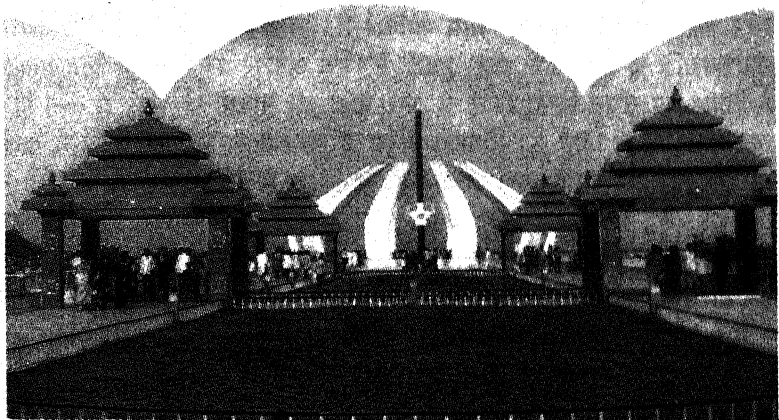
ऐमजीआर स्मारक, चेन्नई

अगले वर्ष इस जमीन पर सेंट जार्ज किला बनना आरंभ हो गया और 1653 में यह किला तैयार हो गया। बाद में इस किले के आस-पास ही मद्रास शहर का विकास हो हुआ।

ऐतिहासिक महत्त्व 1740 में मद्रास में स्थित ईस्ट इंडिया कंपनी और पांडिचेरी में स्थित फ्रांसीसी कंपनी के मध्य युद्ध की स्थिति उत्पन्न हो गई थी। डुप्ले ने इस स्थिति को टालने के लिए ब्रिटिश गवर्नर से अनुरोध किया, परंतु वह नहीं माना, क्योंकि उसे इंग्लैंड से और सैनिक सहायता मिलने की उम्मीद थी। तब डुप्ले ने कर्नाटक के नवाब से दखलंदाजी करने का अनुरोध किया। नवाब ने दोनों कंपनियों को शांति बनाए रखने के लिए कहा। इसी दौरान ब्रिटिश कंपनी की सहायता करने के लिए इंग्लैंड से और फ्रांसीसी कंपनी की सहायता करने के लिए मारीशस से लॉ बुर्दोनईस के नेतृत्व में सेनाएँ भारत पहुँच गईं। शीघ्र ही ब्रिटिश टुकड़ी हुगली चली गई। अपनी स्थिति को मजबूत देखकर डुप्ले ने लॉ बुर्दोनईस की सहायता से मद्रास का घेरा डाल लिया। अब ब्रिटिश कंपनी ने नवाब से

"तिरुक्कुल" के रचयिता संगम युग के कवि तिरुवल्लुवर की स्मृति में चेन्नई में बनाया गया स्मारक वल्लुवरकोट्टम्

फ्रांसीसी कंपनी को यह कहने का अनुरोध किया कि वह शांति बनाए रखने के लिए मद्रास पर कब्जा छोड़ दे, परंतु डुप्ले ने नवाब को इस बात के लिए राजी कर लिया कि यदि वह उसे मद्रास पर कब्जा करने दे, तो उसे जीतने के बाद वह उसे नवाब को ही सौंप देगा। इस प्रकार डुप्ले ने मद्रास पर सितंबर, 1746 में कब्जा कर लिया, परंतु इसी दौरान डुप्ले और बुर्दोनईस में अनबल हो गई। बुर्दोनईस ने एक लाख पगोडा की रिश्वत और 40 हजार पौंड के बदले मद्रास अंग्रेजों को सौंप दिया। फिर भी डुप्ले ने मद्रास पर पुनः अधिकार कर लिया। जब नवाब ने डुप्ले को मद्रास सौंपने के लिए कहा तो उसने ऐसा करने से इन्कार कर दिया। फलस्वरूप दोनों में अड्यार में एक युद्ध हुआ, जिसमें डुप्ले की विजय हुई। बाद में डुप्ले और अंग्रेजों के मध्य 1748 में एक संधि हुई, जिसके तहत अंग्रेजों को मद्रास और फ्रांसीसियों को उत्तरी अमरीका में लुईसबर्ग वापस मिल गया। 1746 से 1748 तक की दो वर्ष की अवधि को छोड़कर 1653 से लेकर भारत की स्वतंत्रता तक यह किला अंग्रेजों के ही अधीन रहा। बाद में इसी किले के आस-पास मद्रास शहर का विकास हुआ, जिसे प्रारंभ में जार्ज टाउन कहा जाता था। इस किले की 20 फुट ऊँची दीवारें आजकल भी देखी जा सकती हैं। इसी किले में क्लाईव और वेल्जली के निवास के अलावा 1680 में स्थापित मद्रास का पहला ऐंग्लीकन गिरजाघर और एक संग्रहालय है। लार्ड केनिंग ने 1857 में यहाँ मद्रास विश्वविद्यालय बनवाया। कांग्रेस का तीसरा अधिवेशन बदरुद्दीन तैयब जी की अध्यक्षता में 1887 में मद्रास में ही हुआ था। एक रूसी महिला ब्लावट्स्की और अमरीकी कर्नल हेनरी स्टील ऑलकॉट द्वारा न्यूयार्क में 1875 ई० में स्थापित थ्योसोफिकल सोसायटी का भारत में पहला केंद्र मद्रास में अड्यार में 1883 में खोला गया। 1916 में एनी बेसेंट ने यहाँ होम रूल लीग की स्थापना की।

पर्यटन स्थल मद्रास देश के चार महानगरों में से एक है। यहाँ अनेक मनोरम एवं आकर्षक पर्यटन स्थल हैं। इनका विहंगम् दृश्य मद्रास हाई कोर्ट की बिल्डिंग में बने 160 फुट ऊँचे दीपघर से देखा जा सकता है। दर्शनीय स्थलों में मद्रास में ही फोर्ट सेंट जार्ज तथा सेंट मैरी चर्च, अष्ट लक्ष्मी मंदिर, राजकीय संग्रहालय, वल्लुवरकोट्टम, बिरला तारामंडल, स्नेक पार्क, मरीना बीच, ऐमजीआर फिल्म सिटी, वंडालूर चिड़ियाघर, किष्किंधा थीम पार्क, इलियट बीच, चिन्नामलाई, फेयरलैड्ज, थ्योसोफिकल सोसायटी का मुख्यालय; गाँधी, राजाजी और कामराज के स्मारक, गिंडी नैशनल पार्क और अन्ना स्क्वेयर बीच प्रमुख हैं।

मद्रास की राष्ट्रीय कला दीर्घा में दसवीं शताब्दी के चोल शासन के

दौरान बनी नटराज की काँसे की प्रसिद्ध मूर्ति रखी हुई है। यह मूर्ति दो फुट ऊँची है और अपने कलात्मक प्रभाव के कारण घूमती हुई सी प्रतीत होती है। अड्यार में कलाक्षेत्र नाम से नृत्य का एक केंद्र है, जिसकी स्थापना रुक्मिणी देवी ने की थी। ऐसा माना जाता है कि थोमस यहाँ प्रचारक के रूप में आए थे और उन्हें आधुनिक मद्रास हवाई अड्डे के पास सेंट थोमस माउंट पर 78 ई० में मार दिया गया था।

मद्रास का मरीना बीच विश्व का दूसरा सबसे बड़ा बीच है। इस बीच के पानी में शार्क मछलियाँ होने के कारण यहाँ तैरना ठीक नहीं है। इस बीच पर स्थित मछलीघर के पास एक आइस हाउस है, जिसमें अंग्रेजों के लिए इग्लैंड से लाई हुई बर्फ रखी जाती थी। दूसरी शताब्दी में लिखी गई तमिल भाषा की सबसे महान पुस्तक कुराल के रचयिता यहीं रहते थे। मायलपुर में भगवान कपालीश-बरार (शिव) का मंदिर है। ट्रिप्लीकेन में विष्णु का पार्थसारथी मंदिर है, जिसका निर्माण पल्लव राजाओं ने आठवीं शताब्दी में करवाया था।

मद्रास से 25 किमी दूर डैश एंड स्पलैश, डिजी वर्ल्ड पिकनिक स्थल (36 किमी), तिरुपुर (42 किमी) में भगवान मुरुग का मंदिर, क्रोकोडाइल बैंक (44 किमी), 46 किमी दूर लिटिल फाक और इतनी ही दूर मुट्टुकाडु, वीजीपी बीच, मम्मलपुरम् (58 किमी), तिरुकलुकंडरम् (74 किमी) का प्राचीन शिव मंदिर (पक्षी
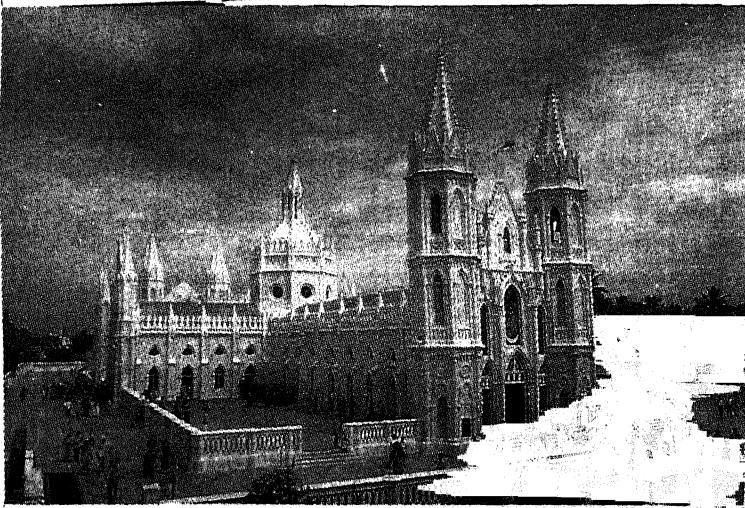
आवर लेडी ऑफ हैल्थ गिरजाघर, वेलंकन्नी

तीर्थम्), काँचीपुरम् (75 किमी) तथा वेदांतगल जल-पक्षी विहार (85 किमी) आकर्षक पर्यटन स्थल हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ मद्रास देश का अंतर्राष्ट्रीय शहर होने के कारण देश के अन्य भागों से रेल, वायु और सड़क मार्ग से तथा विदेशों से वायु एवं जल मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ भ्रमण का सर्वोत्तम समय नवंबर से मार्च तक का होता है। ठहरने के लिए यहाँ हर तरह के होटल हैं। 1008, पीऐच रोड पर वाईऐमसीऐ गेस्ट हाउस; 12, दुर्गाबाई देशमुख रोड पर टूरिस्ट होस्टल और 2, एवेन्यू, इंदिरा नगर में यूथ होस्टल हैं।

टीटीडीसी शहर तथा शहर के आस-पास के इलाकों में भ्रमण के लिए टूर संचालित करता है, जिसकी बुकिंग नं० 4, ईवीआर रोड, पार्क टाउन (सेंट्रल रेलवे स्टेशन के सामने); नं० 25, डॉ राधाकृष्णन सलाई, मायलपुर; हाई कोर्ट के पीछे; सेंट्रल रेलवे स्टेशन के गेट नं० 2; एग्मोर रेलवे स्टेशन तथा हवाई अड्डे से कराई जा सकती है। शहर के आस-पास के इलाकों में से मम्मलपुरम्, पांडिचेरी, तिरुपति, देवियार दर्शन, तिरुमल दर्शन और वेलंकन्नी के टूर तथा निकटवर्ती एवं दूर-दराज के विभिन्न स्थानों के स्टूडेंट पैकेज टूर संचालित किए जाते हैं। आईटीडीसी का पर्यटक सूचना केंद्र 154, अन्ना सलाई में है। मद्रास का तापमान गर्मियों में 37°से और 21°से के मध्य तथा सर्दियों में 32°से और 20°से के मध्य रहता है।

351. मम्मलपुरम् कृपया महाबलीपुरम् देखें।

352. महाबलीपुरम् यह स्थान तमिल नाडु में मद्रास के दक्षिण में 50 किमी दूर है। इसका निर्माण पल्लव राजा मम्मल नरसिंहवर्मन प्रथम (630-638 ई०) ने कराया था। आजकल इसे मम्मलपुरम् कहा जाता है। यह कभी पल्लव राजाओं की प्रमुख बंदरगाह होती थी।

पुरातात्विक महत्त्व महाबलीपुरम् में मम्मल शैली में शिलाओं को काट-काटकर बनाए गए मंदिर और मूर्तियाँ पाई गई हैं। यहाँ विभिन्न देवी-देवताओं के दस मंडप भी हैं, जिनमें से वराह, त्रिमूर्ति, आदि वराह, महिषमर्दिनी और पांडव मंडप विशेष उल्लेखनीय हैं। नरसिंह वर्मन प्रथम द्वारा बनवाए गए द्रौपदी, अर्जुन, भीम, सहदेव, युधिष्ठिर, गणेश, पिजरी और वल्लैकुट्टै के आठ रथ मंदिर भी पाए गए हैं। इन रथ मंदिरों को पगोडा भी कहा जाता है। इनके समीप ही हाथी, शेर और बैल की मूर्तियाँ हैं। उन दिनों शहर में आदमियों और पशुओं दोनों की शानदार
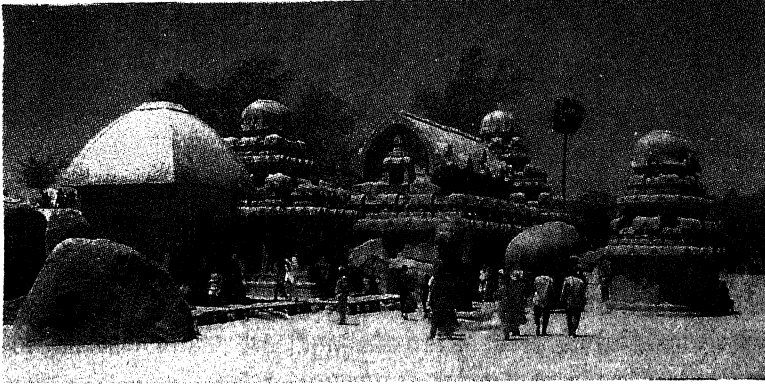
मम्मलपुरम् के पाँच रथ

मूर्तियाँ जगह-जगह लगी होती थीं। इनमें से ज्यादातर मूर्तियाँ बढ़िया दर्जे की थीं। महाबलीपुरम् नरसिंहवर्मन द्वितीय (695-722 ई०) द्वारा राजसिंह शैली में बनवाए गए मंदिर के लिए भी जाना जाता है। इस मंदिर के पास कई मंदिर और भी थे, जो अब नष्ट हो चुके हैं। "गंगा अवतरण" यहाँ पल्लव शासकों की शिल्प कला का सर्वोत्तम नमूना है। महाबलीपुरम् में भारत के सर्वाधिक जीवंत 9 गुफा मंदिर हैं। महिषासुरमर्दिनी मंडपम् में दुर्गा और महिषासुर (भैंसा दैत्य) के मध्य लड़ाई का चित्रण है। एक अन्य नक्काशी में विष्णु को साँप की कुंडलियों पर सोते हुए तथा कृष्ण मंडपम् गुफा मंदिर में कृष्ण का जीवन चरित दिखाया गया है। इतना ही नहीं, "भगीरथ की तपस्या" नामक नक्काशी तो कला का एक उत्कृष्ट नमूना है और संसार की सबसे बड़ी नक्काशी है। यह 80' x 20' आकार की है। इसमें सबसे महत्त्वपूर्ण चित्रण हाथियों के एक समूह का है, जिनमें से एक की लंबाई 16 फुट है। इस नक्काशी को "अर्जुन की तपस्या" भी कहा जाता है। महाबलीपुरम् में यहाँ और इसके आस-पास प्राप्त अवशेषों का एक संग्रहालय भी है। इसका समुद्री तट भी मनोरंजन एवं पिकनिक का अच्छा स्थान है।

मम्मलपुर के आस-पास के स्थलों में तिरुक्कल्लुकुंडरम् का शिव मंदिर, क्रोकोडाइल बैंक और वीजीपी गोल्डन बीच दर्शनीय हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन 30 किमी दूर चेंगलपट्टु और निकटतम हवाई अड्डा चेन्नई है। चेन्नई से घंटे-घंटे बाद यहाँ के लिए बसें भी चलती हैं। स्थानीय यातायात के लिए रिक्शों तथा ऑटो के अतिरिक्त साईकिलें व मोटर-साईकिलें किराए पर उपलब्ध रहती हैं। सभी दर्शनीय स्थल

पास-पास होने के कारण पैदल भी घूमा जा सकता है। यहाँ टीटीडीसी का पर्यटन सूचना केंद्र भी है। यहाँ का तापमान गर्मियों में 37°से और 21°से तथा सर्दियों में 31°से और 20°से के मध्य रहता है।

353. मुजिरिश कृपया मुसिरी देखें।

354. मुसिरी इसे मुजिरिश भी कहा जाता था। इसका आधुनिक नाम क्रैगनानोर है। संगम युग में यह चेर राज्य की महत्त्वपूर्ण बंदरगाह थी। इस बंदरगाह से पटसन के कपड़ों, सोने और सुरमे का आयात होता था। यहाँ से अरब और रोम के साथ व्यापार किया जाता था। रोमवासियों ने यहाँ ऑगस्टस मंदिर बनवाया था। वे वापसी में मिर्च और समुद्री तथा पर्वतीय उत्पाद ले जाते थे।

355. रामेश्वरम् यह स्थान भारत के पूर्वी तट पर पाक जल संधि में एक टापू है। यहीं पर बंगाल की खाड़ी और हिंद महासागर मिलते हैं। ऐसा विश्वास है कि लंका पर आक्रमण करते समय श्रीरामचंद्र ने यहाँ धनुषकोटि नामक स्थान पर समुद्र में पत्थर डालकर नल-नील की सहायता से एक पुल बनाया था, जिसे सेतुबंध रामेश्वरम् कहा जाता है। आजकल यह श्रीरामचंद्र की
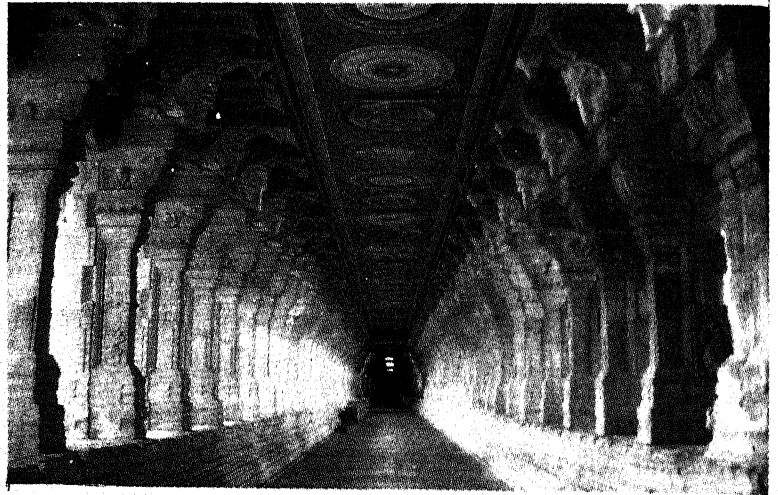
रामनाथस्वामी का मंदिर, रामेश्वरम्

स्मृति में बनवाए गए मंदिर के लिए विख्यात है। इस स्थान से श्रीलंका केवल 70 किमी दूर है। यहाँ का रामनाथ स्वामी मंदिर हिंदुओं का एक पवित्र तीर्थ स्थान है। यह मंदिर उस जगह बना हुआ है, जहाँ श्रीरामचंद्र ने रावण को मारकर शिव की पूजा की थी। शिल्प की दृष्टि से रामेश्वरम् का मंदिर भारत के मंदिरों में सर्वोत्तम श्रेणी का माना जाता है। पौराणिक कथा के अनुसार भगवान श्रीरामचंद्र ने रावण-हत्या के पाप से मुक्ति पाने के लिए शिव की पूजा करने का संकल्प किया। उन्होंने यह पूजा बालू का एक शिवलिंग बनाकर की, जिसे आजकल श्रीरामलिंगम् कहा जाता है। श्रीरामनाथस्वामी के प्रसिद्ध मंदिर का निर्माण बारहवीं शताब्दी में आरंभ हुआ। बारहवीं शताब्दी में श्रीलंका के नरेश दराक्रय बाहू ने श्रीरामलिंगम् के शिवलिंगम् और अंबाल मंदिरों का निर्माण कराया। बाद में रामनाथपुरम् के सेतुपति और चेट्टिनाथ साहूकारों ने इनका विस्तार कराया। रामेश्वर मंदिर का निर्माण सतरहवीं शताब्दी में शुरू हुआ। इस मंदिर के दक्षिणी ओर पर्वतवर्धिनी (पार्वती जी) और इसके पास ही सेतु माधव (विष्णु) का मंदिर है। पास में ही हनुमदीश्वर मंदिर है, जिसमें हनुमान द्वारा कैलाश पर्वत से लाई गई शिव की दिव्य मूर्ति, जिसे काशी विश्वनाथ के नाम से जाना जाता है, स्थापित है। यह 1000 फुट लंबा और 600 फुट चौड़ा है। इसके चारों ओर 4000 फुट तक लंबा बरामदा है। प्रवेश द्वार पर 38 मी ऊँचे गोपुरम् हैं। मंदिर छह हेक्टेयर भूमि में बना हुआ है।

रामेश्वरम् भारत के चार धामों और बारह ज्योतिर्लिंगों में से एक है। रामेश्वरम् धाम में 24 तीर्थ हैं। इनमें से एक अग्नितीर्थम् 'सागर', दो सरोवर, दो बावली और 19 कूप हैं। ऐसा माना जाता है कि माता सीता ने श्रीलंका से लौटने के बाद अग्नि परीक्षा यहीं दी थी, जिसके बाद उन्होंने अग्नितीर्थम् कुंड में स्नान किया था। मान्यता है कि इस कुंड में स्नान करने के बाद पारिवारिक व मानसिक शांति मिलती है। इस कुंड में स्नान के बाद पर्यटक समुद्र तट पर रेत का शिवलिंग बनाते हैं और पूजा के बाद उसे समुद्र में प्रवाहित कर देते हैं। सागर में बना पमबग रेलवे पुल बहुत रोमांचकारी है और देश का सबसे बड़ा रेलवे पुल है।

रामेश्वरम् का सबसे ऊँचा शिखर गंधमादन पर्वत है, जहाँ सूर्यवंशी राजा पुरुरवा ने उर्वशी नामक अप्सरा के साथ विहार किया था। रामेश्वरम् में इनके अलावा राम झरोखा, रामकुंड, लक्ष्मणकुंड, शंकराचार्य मठ तथा भैरव तीर्थ दर्शनीय हैं। रामेश्वरम् द्वीप के छोर पर धनुषकोटि नामक जगह पर ही बंगाल की खाड़ी हिंद महासागर से मिलती है। हिंदू लोग यहाँ स्नान करना पवित्र समझते हैं। रामनाथपुरम् में रामलिंग विलास महल है। 14 किमी दूर तिरुपलानि (दर्भशयनम्)

में विष्णु का मंदिर तथा 18 किमी दूर धनुषकोटि में कोदंडस्वामी मंदिर है। एक ताम्रलेख के अनुसार गौड़ के पाल शासक देवपाल (810-50) का शासन सेतुबंध रामेश्वरम् तक था। मलिक काफूर ने वीर पांड्य का रामेश्वरम् तक पीछा किया था।

उपलब्ध सुविधाएँ रामेश्वरम् दक्षिण के अन्य शहरों से सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। रेलवे स्टेशन रामेश्वरम् मंडपम् है। निकटतम हवाई अड्डा 173 किमी दूर मदुरै है। गर्मियों में यहाँ अधिकतम तापमान 48°से तथा सर्दियों में न्यूनतम तापमान 25°से होता है। ठहरने के लिए यहाँ स्वामी रंगनाथ टूरिस्ट होम, यूथ होस्टल तथा रेलवे विश्राम कक्ष के अलावा अनेक होटल हैं। यहाँ होटल तमिल नाडु से टीटीडीसी द्वारा संचालित बसें चलती हैं। रामेश्वरम् में पर्यटन सूचना केंद्र 14, ईस्ट, कार स्ट्रीट में और रेलवे स्टेशन पर हैं।

356. वंजी कृपया करूर देखें।

357. वंदीवाश—ऐतिहासिक महत्त्व वंदीवाश में 1760 ई० में फ्रांसीसी कमांडर काउंट लैल्ली तथा अंग्रेजी कमांडर सर आयरकूट के मध्य एक युद्ध हुआ था, जिसमें काउंट लैल्ली हार गया। उसे इंग्लैंड भेज दिया गया तथा वहीं कैद करके रखा गया। इस युद्ध के बाद अंग्रेजों ने पांडिचेरी पर कब्जा कर लिया। वंदीवाश की लड़ाई फ्रांस और इंग्लैंड के मध्य उस समय चल रहे सप्तवर्षीय युद्ध (1756-63) की एक महत्त्वपूर्ण घटना थी। एक बार टीपू सुल्तान ने भी वंदीवाश पर कब्जा कर लिया था, परंतु हैदर अली ने उसे बीच में ही पोर्टो नोवो वापस बुला लिया।

358. वरक्कालाई कृपया बलिता देखें।

359. वेन्नी यह स्थान तंजावुर के पूर्व में पंद्रह किमी दूर है। इसका आधुनिक नाम कोवी वेन्नी है।

ऐतिहासिक महत्त्व तीसरे संगम के काल की एक पुस्तक पत्थुप्पात्तु में लिखा है कि प्रथम चोल राजा कारिकल ने यहाँ हुए एक युद्ध में विजय प्राप्त की थी। इस युद्ध में उसने ग्यारह शासकों, जिनमें पांड्य और चेर राजा भी शामिल थे, को हराया था। चेर राजा ने पीठ में घाव खाया। वेन्नी में कारिकल की इस विजय ने उसके विरुद्ध बने संघ को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। समुद्रगुप्त (335-375 ई०) ने यहाँ के राजा हस्तीवर्मन को हराया था।

360. वेल्लोर यह शहर काँचीपुरम् के लगभग 60 किमी पश्चिम में है। यह पालर नदी के किनारे स्थित है।

ऐतिहासिक महत्त्व 915 ई० में चोल राजा प्रांतक ने पांड्य नरेश राजसिंह और श्री लंका की सम्मिलित सेना को वेल्लोर में हराया था। 1565 में तलिकोटा की लड़ाई में विजयनगर के शासक रामराय की मृत्यु के बाद तिरुमल ने युद्ध क्षेत्र से भागकर अपनी जान बचाई थी। वह अपने साथ सम्राट का खजाना भी ले गया। उसने पेनुकोंडा को अपनी राजधानी बनाया था। पेनुकोंडा से शासन करने वाले इस साम्राज्य के एक शासक वेंकट ने दक्षिण के विद्रोहों को दबाने के बाद वेल्लोर को अपनी राजधानी बनाया। उसने यहाँ से 1614 तक शासन किया। अपनी मृत्यु के बाद उसने अपने भानजे श्रीरंगा को अपना उत्तराधिकारी बनाया। परंतु जग्गा राय ने उसे गद्दी से उतारकर वेंकट की पत्नी के अवयस्क दत्तक पुत्र राम को राजा बना दिया। शीघ्र ही याचम्मा ने जग्गा राय को एक युद्ध में हरा दिया। बाद में जग्गा राय ने मदुरा के मुत्तु वीरप्प, नायक और जिंजी के कृष्णप्पा नायक की सहायता से टोपुर के निकट याचम्मा से फिर युद्ध किया। परंतु 1616 में याचम्मा ने उसे फिर हरा दिया। 1630 में राम की मृत्यु हो गई। उसके कोई पुत्र या भाई नहीं था। उसने रामराय के पोते और अपने चचेरे भाई पेडा वेंकट को अपना उत्तराधिकारी मनोनीत कर दिया। परंतु राम के मामा टिम्मा राय ने पेडा वेंकट (वेंकट तृतीय) से गद्दी छीन ली। फिर भी जिंजी, तंजौर और मदुरा की सहायता से वेंकट तृतीय को गद्दी वापस मिल गई। वेंकट तृतीय ने नायकों की सहायता से बीजापुर के सुल्तान से 1638 और 1641 के बीच कई बार अपनी रक्षा की। 1642 में उस पर गोलकुंडा के सुल्तान ने आक्रमण कर दिया। वेंकट तृतीय जंगलों में भाग गया, जहाँ 10 अक्तूबर, 1642 को उसकी मृत्यु हो गई। वेंकट के कोई पुत्र न होने के कारण उसका धोखेबाज भतीजा श्रीरंगा तृतीय राजा बन गया। उसने अपने काल में कई घरेलू विद्रोहों को दबाया। गोलकुंडा की सेना पुलिकट तक पहुँच गई थी, परन्तु पुर्तगाली सेनानायक ने उसे वापस भेज दिया। जिंजी के नायक को गोलकुंडा की मदद करने से रोकने के दृष्टिकोण से श्रीरंगा ने उससे संधि कर ली। उसने गोलकुंडा की सेना को भी हरा दिया और कंडुकर तक उसका पीछा किया। परंतु बाद में बीजापुर और गोलकुंडा के मध्य संधि हो जाने के कारण वह उनकी सम्मिलित सेना के समक्ष नहीं टिक सका। शीघ्र बाद ही दक्षिण के नायकों ने मदुरा के तिरुमल नायक के नेतृत्व में विद्रोह कर दिया। बीजापुर के सुल्तान ने भी अपने सेनापति मुस्तफा खाँ के नेतृत्व में वेल्लोर पर आक्रमण कर दिया। इसी समय गोलकुंडा

ने भी वेनुकोंडा और उदयगिरि की तरफ से धावा बोल दिया। उधर मुगल सम्राट औरंगजेब ने भी बीजापुर और गोलकुंडा को वेल्लोर पर आक्रमण करने के लिए प्रेरित किया। श्रीरंगा ने धर्म के नाम पर आस-पास के हिंदू राजाओं और प्रजा से सहायता की माँग की। दिसंबर, 1645 में उसे नायकों ने हरा दिया। गोलकुंडा ने भी मीर जुमला के नेतृत्व में उसके नेल्लोर और कडप्पा क्षेत्र छीन लिए। मुस्तफा खाँ ने भी अपना आक्रमण पुनः तेज कर दिया। श्रीरंगा ने महिलाओं और तिरुपति मंदिर के गहनों की सहायता से राज्य की रक्षा करने का प्रयत्न किया, परंतु उसके सेनापतियों में मतभेद के कारण वह हार गया। बाद में 4 अप्रैल, 1646 को विरिंचीपुरम् में एक और युद्ध हुआ। अब मैसूर, मदुरा और तंजौर की सहायता के बावजूद श्रीरंगा हार गया। मुस्तफा खाँ ने वेल्लोर पर अधिकार कर लिया। मीर जुमला ने पूर्वी तट पर पुलिकट तक के इलाके पर कब्जा कर लिया। श्रीरंगा ने तंजौर में शरण ली। 1649 में तंजौर ने भी बीजापुर से हार मान ली। अब श्रीरंगा मैसूर चला गया। परंतु मदुरा और मैसूर के सम्मिलित प्रयासों के बावजूद वेल्लोर की रक्षा न हो सकी और 1652 में बीजापुर ने इस पर पूरी तरह कब्जा कर लिया। वेल्लोर पर पुनः कब्जा करने की आशा से श्रीरंगा ने केलाडी मुखियाओं की सहायता से बेलुर में अपना दरबार स्थापित किया। परंतु 1672 में अपनी मृत्यु तक वह अपने सपने को पूरा न कर सका। 1677 में वेल्लोर पर शिवाजी ने कब्जा कर लिया।

जुलाई, 1806 में यहाँ एक सैनिक आंदोलन भी हुआ। सर जार्ज बार्लो ने यहाँ स्थित हिंदू टुकड़ी को विशेष प्रकार की वर्दी और पगड़ी पहनने, विशेष प्रकार से बाल बहाने और माथे पर तिलक न लगाने का आदेश दिया। हिंदू सैनिकों ने इसे अपने धार्मिक मामलों में दखलंदाजी समझा और उन्होंने आंदोलन करके कई ब्रिटिश अधिकारियों को मार दिया। ऐसा समझा गया कि टीपू सुल्तान के लड़कों ने उन्हें भड़काकर विद्रोह कराया है। मद्रास का गवर्नर विलियम बैंटिक इस स्थिति को संभाल नहीं पाया। उसे वापस बुलाकर अर्काट से फौज भेजी गई। इस फौज ने विद्रोह शांत कर दिया। टीपू के लड़के कलकत्ता भेज दिए गए। इस प्रकार भारतीय सैनिकों ने 1857 के स्वतंत्रता आंदोलन की झलक यहाँ 50 वर्ष पूर्व ही दिखा दी। यहाँ तेरहवीं शताब्दी में बना एक किला आज भी बहुत अच्छी अवस्था में है। किले में चौदहवीं सदी में बना एक शिव मंदिर है, जिसकी छत और स्तंभों पर काफी नक्काशी है।

361. श्रीरंगम् यह स्थान त्रिचनापल्ली के पाँच किमी उत्तर में कावेरी नदी की दो शाखाओं के बीच एक द्वीप के रूप में है।

ऐतिहासिक महत्त्व विजयनगर के शासक कृष्णदेव राय (1509-29) ने उम्मतूर के सामंत शासक गंग राजा को पराजित कर श्रीरंगम् पर अधिकार कर लिया था। त्रिचनापल्ली पर कब्जा करने के लिए भेजे गए फ्रांसीसी सेनापति मि० लॉ को जब सफलता नहीं मिली, तो उसने श्रीरंगम् में शरण ले ली। राबर्ट क्लाईव के कहने पर अंग्रेजी सेना ने इसका घेरा डाल लिया। लॉ ने 9 जून, 1752 को आत्म-समर्पण कर दिया।

अश्व स्तंभ, श्रीरंगम्

धार्मिक महत्त्व श्रीरंगम् भगवान रंगनाथन् की स्मृति में तेरहवीं शताब्दी में बने मंदिर के लिए प्रसिद्ध है। विष्णु को समर्पित इस मंदिर में श्रद्धालुओं की भारी भीड़ जुटती है। श्रीरंगम् वस्तुतः इस मंदिर की चारदीवारी के अंदर है। मंदिर की ऐसी सात दीवारें हैं। वास्तविक मंदिर चौथी दीवार के पास बने 940 स्तंभों वाले मंडपम् से आरंभ होता है। इसके 21 गोपुरम् हैं। वैकुंठ एकादशी पर दिसंबर में यहाँ हर वर्ष मेला लगता है। इस अवसर पर भगवान रंगनाथ की प्रतिमा जनता के दर्शनों के लिए गर्भगृह से मंडपम् में लाई जाती है। मंदिर में भगवान रंगनाथ को अर्पित गहनों का एक अच्छा संग्रह है। मंदिर से लगभग 2 किमी दूर शिव के एक छोटे परंतु बेहतर मंदिर जंबूकेश्वरम् पगोडा में शिवलिंग जल में निमज्जित है। ग्यारहवीं शताब्दी में एक चोल राजा ने यहाँ कावेरी पर पत्थर का बाँध बनवाया था, जो 1000'x600' आकार का है और आज भी देखा जा सकता है।

362. सालियुर संगम युग में यह पांड्य राजाओं की सबसे महत्त्वपूर्ण बंदरगाह थी। इस बंदरगाह के माध्यम से घोड़ों का आयात किया जाता था। यहाँ समुद्री जहाजों की मरम्मत भी की जाती थी। बंदरगाह पर भिन्न-भिन्न देशों के व्यापारी आते रहने के कारण सालियुर एक सार्वदेशिक शहर बन गया था। यहाँ एक दीपघर भी था।

363. हाजनकल

यह एक स्वास्थ्यवर्धक स्थान के रूप में जाना जाता है। यहाँ एक झरना है, जिसके पानी में औषधीय गुण माने जाते हैं। यहाँ कावेरी नदी का "परिसाल" पर्यटन एक स्मरणीय यादगार छोड़ता है।

उपलब्ध सुविधाएँ यह स्थान देश के अन्य भागों से रेल तथा सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा बंगलौर (130 किमी) है। ठहरने के लिए यहाँ पेन्नागारम्, हाजनक्कत् में टीटीडीसी का होटल तमिल नाडु है।
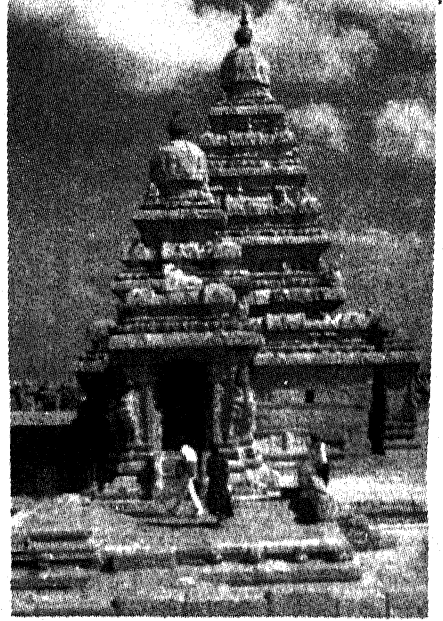
शोर टेंपल, तंजौर

○○○

त्रिपुरा

ऐतिहासिक विवरण

त्रिपुरा का ऐतिहासिक कालक्रम बहुत स्पष्ट रूप से नहीं मिलता है। उन्नसवीं शताब्दी में यहाँ के महाराजा बीरचंद्र किशोर माणिक्य बहादुर ने अपना शासन अंग्रेजी नमूने पर चलाया। उसके वंशजों ने यहाँ से 15 अक्तूबर, 1949 तक शासन किया। उस दिन त्रिपुरा भाग 'ग' का राज्य बन गया। 1956 में यह संघ शासित क्षेत्र तथा 1972 में पूर्ण राज्य बन गया।

राज्य का कुल क्षेत्रफल 10491.69 वर्ग किमी है। राज्य में जनसंख्या का घनत्व 263 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी और साक्षरता दर लगभग 49% है। राज्य में चार जिले हैं, जिनमें बंगाली और कोक बोराक भाषाएँ बोली जाती हैं।

उत्सव

त्रिपुरा में उनाकोटि में मकर संक्रांति, होती तथा अशोकाष्टमी; तीर्थमुख में मकर संक्रांति, मोहनपुर में ब्रह्मकुंड तथा जंपुई में क्रिस्मस त्यौहार मनाए जाते हैं। इनके अतिरिक्त राज्य भर में रास, बंगाली नववर्ष, गारिया, बिजु, होजागिरि, मानसमंगल केर, खारची, सारा, दिवाली तथा बुद्ध पूर्णिमा त्यौहार मनाए जाते हैं।

नृत्य

त्रिपुरा में मुख्य रूप से त्रिपुरी, रीयांग, चकमा, हालम, गारो, लुसाई, डारलोंग और मोग जन-समुदाय हैं, जिनके अलग-अलग नृत्य हैं। प्रदेश में आधे से अधिक लोग त्रिपुरी जन-जाति के हैं। त्रिपुरी औरतें शरीर के ऊपरी भाग में चोली के ऊपर रिशा और निचले
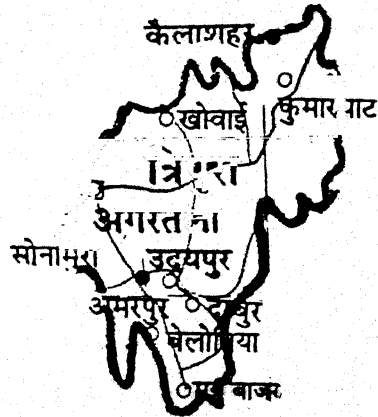
भाग में पाचरा (लुँगी की तरह घुटनों तक बाँधी जाने वाली धोती) पहनती हैं। ये लोग झुम खेती करते हैं। बीज बुआई के बाद अप्रैल में यहाँ के लोग गारिया भगवान की पूजा और गारिया नृत्य करते हैं। फसल बुआई से मानसून तक के समय में ये लेबांग बूमनी नृत्य करते हैं। दोनों नृत्यों में बाँस के बने खाम्ब, बाँसुरी, सरिंदा और लेबांग साजों का प्रयोग किया जाता है। रीयाँग जन-जाति की औरतें होजागिरि नृत्य करती हैं। वे काला पाचरा और रीया (अंग वस्त्र) पहनती हैं। चकमा जन-जाति के लोग बीजू (चैत्र-संक्रांति) नृत्य करती हैं। चैत्र-संक्रांति को बंगाली वर्ष खत्म हो जाता है। इस नृत्य में स्त्री-पुरुष दोनों भाग लेते हैं। इसमें खेंगारंग और धुकुक साजों का प्रयोग किया जाता है। पलम जन-जाति के लोग शाक्त और वैष्णव हैं। लक्ष्मी पूजा के दिनों में हालम महिलाएँ हाई-हक नृत्य करती हैं। गारो जन-जाति का प्रिय नृत्य वांगला है। धान की फसल कटाई के बाद पहली बार चावल खाने का पर्व है। वांगला नृत्य डम और औडुरी साजों की लय पर किया जाता है। लुसाई जन-जाति के लोग किसी प्रिय अतिथि के आगमन के समय स्वागत नृत्य करते हैं। डारलोंग जन-जाति के लोग महिलाओं के प्रसव से पहले चेरा नृत्य करते हैं। मोग जन-जाति में सांगरी (चैत्र मास तथा बंगाली वर्ष का अंतिम दिन) को बड़ा पर्व तथा बंगालियों में आश्विन की पूर्णमासी को 'वे' (लैंप) पर्व एवं 'वे' नृत्य प्रचलित हैं। त्रिपुरा की औरतें रबीन्द्र संगीत के अनुसार रबीन्द्र नृत्य तथा गायन व साड़ी नृत्य और विवाहों, त्योहारों आदि के अवसर पर धमैल नृत्य करती हैं।

364. अगरतला अगरतला आधुनिक त्रिपुरा की राजधानी है।

पर्यटन स्थल यह एक प्रदूषण से मुक्त शहर है, जिसमें कई स्थल दर्शनीय हैं। इनमें उज्जयंता पैलेस (जहाँ म्यूजिक फाउंटेन लगा है) प्रमुख है। आजकल यह विधान सभा भवन के रूप में काम में लिया जा रहा है। इसका निर्माण महाराजा राधाकिशोर माणिक्य ने 1901 में कराया था। लक्ष्मीनारायण मंदिर, संग्रहालय, राजबाड़ी, रबींद्र कानन तथा रबींद्र भवन यहाँ के अन्य दर्शनीय स्थल हैं।

अगरतला के आस-पास के दर्शनीय स्थलों में नीर महल विशेष रूप से प्रसिद्ध है। यह अगरतला से 53 किमी दूर रूद्रसागर झील के मध्य स्थित है। इसका निर्माण महाराजा बीर बिक्रम किशोर माणिक्य ने अपने ग्रीष्म ऋतु के निवास के रूप में हिंदू-मुस्लिम शैली में 1930 में कराया था। अगरतला से 30 किमी दूर सिपाहीजाला वन्य जीव विहार है, जहाँ 150 से अधिक प्रजातियों के पक्षियों के अतिरिक्त आर्किड के बाग, वनस्पति उद्यान, चिड़ियाघर तथा रबड़ व

कॉफी के बाग हैं। इस विहार में ठहरने के लिए पर्यटक कॉटेज और वन विभाग का अभसरिका नाम का बंगला है। अगरतला से 30 किमी दूर बांग्ला देश की सीमा पर एक पहाड़ी पर कमल सागर नामक एक विशाल झील है। इस झील के किनारे यहाँ के महाराजा धन्य माणिक्य ने पंद्रहवीं शताब्दी में काली मंदिर का निर्माण कराया था। कमल सागर एक अच्छा पिकनिक स्थल है।

उपलब्ध सुविधाएँ अगरतला दिल्ली, कलकत्ता और गुवाहाटी से वायु मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन 140 किमी दूर कुमारघाट है। यह ढाका तथा गुवाहाटी से सड़क मार्ग से जुड़ा है। स्थानीय भ्रमण के लिए यहाँ टैक्सियाँ, आटो आदि मिलते हैं। अगरतला में पर्यटन कार्यालय श्वेत महल में है। यहाँ ठहरने के लिए सस्ती दरों पर अनेक होटल हैं। रूद्रसागर झील पर ठहरने के लिए सागर महल तथा टूरिस्ट लॉज हैं।

अगरतला का मौसम पूरे साल पर्यटन के लायक बना रहता है। गर्मियों में यहाँ का अधिकतम तापमान 36.6°से और सर्दियों में न्यूनतम तापमान 7.7°से रहता है।

365. उदयपुर उदयपुर अगरतला से 55 किमी दूर एक जिला मुख्यालय है। इसे मंदिरों और झीलों का शहर भी कहा जाता है। यह शहर एक पहाड़ी पर स्थित त्रिपुरा सुंदरी मंदिर के लिए जाना जाता है। इसे हिंदू धर्म-यात्राओं की 51 पीठों में से एक माना जाता है। इसका निर्माण महाराजा धन्य माणिक्य ने 1901 ई० में कराया था। उदयपुर में ही जगन्नाथ तथा भुवनेश्वरी मंदिर भी हैं, जो गोमती नदी के किनारे स्थित हैं। यहाँ माताबाड़ी पंथ निवास में ठहरने की व्यवस्था है।

366. उनाकोटि यह स्थान अगरतला से 178 किमी दूर है। उनाकोटि सातवीं से नौवीं शताब्दी के मध्य पहाड़ी की ढलानों को काट कर बनाई गई मूर्तियों के लिए प्रसिद्ध है। उनाकोटि से तात्पर्य है एक करोड़ से एक कम। यहाँ शिलाओं को तराशकर बनाई गई दीवारें, शिव-मुख तथा गणेश की 30' ऊँची मूर्ति विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। ये प्रतिमाएँ नक्काशी करके बनाई गई भारत की सबसे बड़ी प्रतिमाएँ हैं।

यहाँ उत्तरमेघ टूरिस्ट लॉज में ठहरने की व्यवस्था है।

367. चारलिंब जीव विहार यह विहार बांग्ला देश की सीमा पर अगरतला के दक्षिणी भाग में है। यहाँ पर फायरबंदर और सेरॉंव अधिक संख्या

में पाए जाते हैं। इनके अतिरिक्त हाथी, भालू, शाल आदि पशु और कई प्रकार के पक्षी देखने को मिलते हैं। यहाँ से निकटतम शहर अगरतला है।

368. जंपुई

जंपुई अगरतला से 250 किमी दूर 3000 फुट की ऊँचाई पर है। इस स्थान की जलवायु बहुत अच्छी है। यह एक पहाड़ी स्थान है, जो स्थायी झरने के रूप में जाना जाता है। यहाँ का सूर्योदय और सूर्यास्त भी देखने लायक है। इस स्थान का प्राकृतिक सौंदर्य, सुहावना मौसम, तरह-तरह के पेड़, संतरों के बाग, ट्रैकिंग पथ, झीलें तथा नौकायन इसे एक अच्छा पिकनिक स्थल बना देते हैं। जंपुई जाने का सर्वोत्तम समय शीत ऋतु का है, जब सड़कों के दोनों ओर पेड़ों से संतरे लटकते दिखाई देते हैं।

त्रिपुरा सरकार के पर्यटन विभाग ने जंपुई पहाड़ी के वैंगमुन गाँव में 20 पर्यटकों के ठहरने की क्षमता वाला ईडन टूरिस्ट
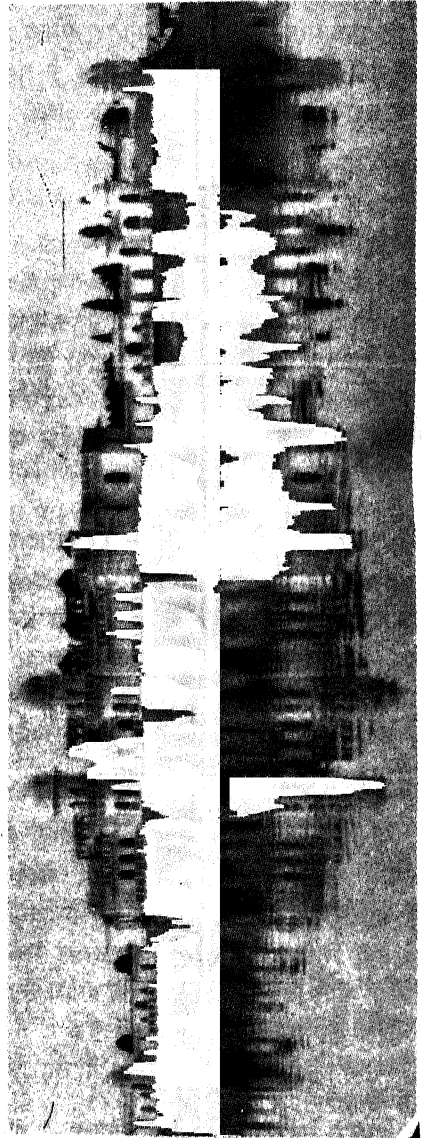
नीर महल, रुद्रसागर झील

लॉज बनाया हुआ है। इसके अतिरिक्त यहाँ के लोगों ने अनेक पेइंग गेस्ट हाउस भी बनाए हुए हैं। यहाँ के सबुआल गाँव में नौकायन की सुविधा भी है। पर्यटन विभाग अगरतला से यहाँ के लिए पैकेज टूर संचालित करता है।

369. डंबूर यह स्थान अगरतला से 141 किमी है। यहाँ 41 वर्ग किमी क्षेत्रफल वाली एक विशाल झील है, जिसमें 48 द्वीप हैं। यहाँ प्रवासी पक्षियों, नौकायन, जल-क्रीड़ाओं तथा वन्य जीव-जंतुओं का आनंद लिया जा सकता है। ठहरने के लिए यहाँ के निकट जाटनबाड़ी में रैमा टूरिस्ट लॉज है।

370. तृष्णा जीव विहार इसकी स्थापना कुछ वर्ष पहले ही हुई थी। यहाँ बाघ, हाथी, गौर, सेरॉंव, फायरबंदर, सूअर आदि पशु अधिक देखने को मिलते हैं। इनके अतिरिक्त यहाँ नाना प्रकार के पक्षी भी हैं। यहाँ से निकटतम शहर अगरतला है।

371. देवतामुड़ा यह स्थान गोमती नदी के सामने वाली पहाड़ी पर अगरतला से 75 किमी दूर है। इससे तात्पर्य देवशिखर है। यहाँ पहाड़ी काटकर प्रतिमाएँ बनाई गई हैं। ठहरने के लिए यहाँ के निकट जाटनबाड़ी में रैमा टूरिस्ट लॉज है।

372. पिलक यह स्थान अगरतला से 90 किमी दूर है। यहाँ बुद्ध काल की टेराकोटा प्लेक, अवलोकितेश्वर तथा नरसिंहन की प्रतिमाएँ पाई गई हैं।

XXX

दमन एवं दीव

विवरण

दमन एवं दीव संघ शासित क्षेत्र का कुल क्षेत्रफल 112 वर्ग किमी है। क्षेत्र में जनसंख्या का घनत्व 907 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी है। क्षेत्र की साक्षरता दर लगभग 71% है। क्षेत्र की राजधानी दमन तथा मुख्य भाषा गुजराती है। क्षेत्र के ऐतिहासिक विवरण के लिए कृपया गोआ देखें। नारियल पूर्णिमा और क्रिसमस यहाँ के प्रमुख त्योहार हैं। गर्भा तथा पुर्तगाली नृत्य यहाँ के प्रमुख नृत्य हैं।

373. दमन दमन-गंगा नदी के किनारे स्थित यह शहर अपने में एक बहुत ही सुंदर दृश्यावली समेटे हुए है। यहाँ की अनंत विविधता को न कोई परिपाटी भंग कर सकी है, न ही कालचक्र।

दमन कभी गोआ, दमन एवं दीव संघ शासित क्षेत्र का भाग था। 1535 से लेकर 1961 तक यह पुर्तगालियों के कब्जे में रहा। यहाँ विभिन्न जातियों के सम्मिश्रण से नई संस्कृति का उदय देखने को मिलता है।

पर्यटन स्थल दमन में देवका बीच, दमन-गंगा पर्यटन कंप्लेक्स, जंपूर बीच, नैनी दमन, सत्य सागर उद्यान, वाम जीसस चर्च तथा मोती दमन का किला मुख्य पर्यटन स्थल हैं। देवका बीच पर स्थित मनोरंजन पार्क में एक संगीतमय फव्वारा है। नैनी दमन में गाँधी पार्क तथा नैनी दमन का किला है। मोती दमन में एक किला, दीपघर, बाग, ऐतिहासिक इमारतें तथा पुराने गिरजाघर हैं। मोती दमन

दमन गंगा पर्यटन कंप्लेक्स, काचीगाम

दमन का एक नृत्य

का किला 1593 में पूरा हुआ था।

यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन मुंबई-दिल्ली रेलवे लाइन पर 13 किमी दूर वापी है। दमन का तापमान वर्ष भर शीतोष्ण बना रहता है, अतः यह एक शाश्वत पर्यटन स्थल है।

374. दीव यहाँ 1509 ई० में एक तरफ पुर्तगालियों और दूसरी तरफ गुजरात के महमूद बेगड़ा तथा मिश्र के सुल्तान के मध्य एक युद्ध हुआ था। पुर्तगालियों के सुल्तान ने एक समुद्री पोत को डुबो दिया था तब हुमायूँ ने जब गुजरात के शासक बहादुरशाह की राजधानी का घेरा डाला, तो बहादुरशाह अन्न की कमी के कारण पहले मांडू और वहाँ से दीव चला आया था। 1535 में बहादुरशाह जब दीव के बंदरगाह और किले के बारे में पुर्तगाली राज्यपाल नुनोद
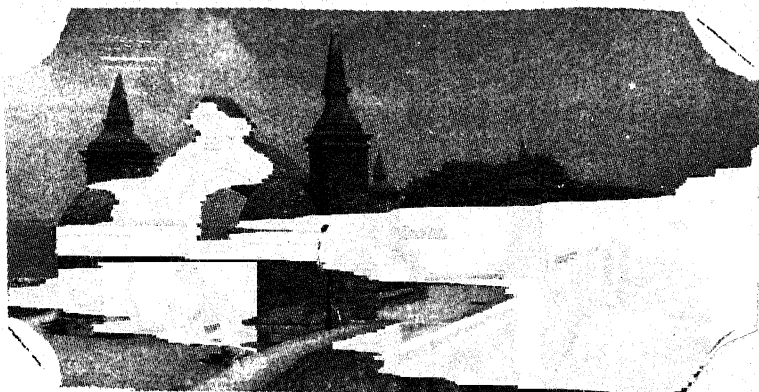
द्वीव के किले का एक द्वार

कुन्हा से समझौता करने के लिए पुर्तगाली जहाज पर गया, तब समुद्र में ही उसकी मृत्यु हो गई अथवा कर दी गई। दीव पुर्तगालियों के हाथ लगा। मुगलों के काल में यह व्यापार के प्रमुख केंद्रों में से एक था।

पर्यटन स्थल दीव में नगोआ बीच, जालंधर मंदिर, 1541 में निर्मित किला, 1610 में निर्मित सेंट पाल गिरजाघर, संग्रहालय, गंगेश्वर मंदिर, पणिकोटा का किला, घोघला बीच तथा चक्रतीर्थ बीच प्रमुख हैं। यहाँ का पर्यटन विभाग सोमनाथ मंदिर (100 किमी), गीर वन, द्वारका मंदिर, पालिताणा तथा जूनागढ़ के टूर संचालित करता है।

उपलब्ध सुविधाएँ दीव से निकटतम् रेलवे स्टेशन 90 किमी दूर वेरावल है। गुजरात एयरवेज मुंबई-दीव के बीच एक उड़ान प्रतिदिन संचालित करता है। स्थानीय भ्रमण के लिए यहाँ टैक्सियाँ, बसें, रिक्शे आदि मिलते हैं। ठहरने के लिए यहाँ शिविर, होटल आदि हैं।
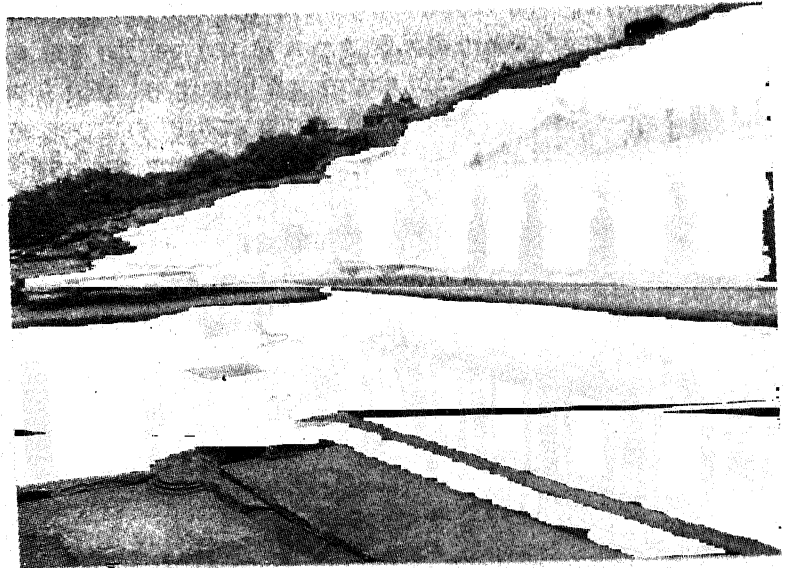
उदयगिरि की गुफाएँ, उड़ीसा

❍❍❍

दादरा और नगर हवेली

विवरण

दादरा और नगर हवेली गुजरात तथा महाराष्ट्र राज्यों के बीच 70 गाँवों का एक समूह है। यह पुर्तगाली शासन से 1954 में मुक्त हुआ था। संघ शासित क्षेत्र का क्षेत्रफल 491 वर्ग किमी है। क्षेत्र की जनसंख्या का घनत्व 282 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी तथा साक्षरता दर लगभग 40% है। तर्पा, मास्क तथा भावड़ा यहाँ के प्रमुख नृत्य हैं।

375. सिल्वासा सिल्वासा में वनधारा उद्यान, पिपरिया उद्यान, छोटा चिड़ियाघर, बाल उद्यान तथा जन-जातीय संस्कृति संग्रहालय दर्शनीय स्थल हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ सिल्वासा से निकटतम रेलवे स्टेशन 14 किमी दूर वापी और भिलाड़ हैं। निकटतम हवाई अड्डा 180 किमी दूर मुंबई है। ठहरने के लिए यहाँ सर्किट हाउस, राजकीय अतिथि गृह तथा अनेक होटल हैं।

अन्य दर्शनीय स्थल सिल्वासा के अतिरिक्त संघ शासित क्षेत्र में दादरा में वनगंगा झील तथा द्वीप बाग, खनवेल तथा दुधनी में वन विहार टूरिस्ट कंप्लेक्स, वसोना में वनस्पति उद्यान, बृंद्राबिन में ताड़केश्वर शिव मंदिर, मधुबन बाँध तथा एक पुर्तगाली गिरजाघर भी देखा जा सकता है।

दादरा का एक नृत्य

❖❖❖

नागालैंड

ऐतिहासिक विवरण

नागालैंड मुख्य रूप से जन-जातियों को प्रदेश है। प्रत्येक जन-जाति के अपने अलग-अलग नियम हैं। उन्नीसवीं शताब्दी में अंग्रेजों ने इसे अपने अधीन कर लिया था। देश की स्वतंत्रता के बाद 1957 में नागालैंड एक संघ शासित क्षेत्र बना। तब इसका नाम नागा हिल्ज ट्यूनसांग क्षेत्र रखा गया। 1961 में इसका नाम बदलकर नागालैंड कर दिया गया और इसे एक पूर्ण राज्य का दर्जा दे दिया गया।

राज्य का कुल क्षेत्रफल 16579 वर्ग किमी और इसकी जनसंख्या का घनत्व 73 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी और साक्षरता दर 61% है। राज्य में कुल सात जिले हैं, जिनमें अंगामी,

चाखसाँग पुरुष (ऊपर) और आओ महिलाएँ (नीचे)

आओ, चाँग, कोन्याक, लोथा, साँगताम, सेमा और चागँसाँग भाषाएँ बोली जाती हैं।

नृत्य के लिए तैयार सेमा लड़के (ऊपर) और कोहिमा में पत्थर खींचने का त्येहार (नीचे)

उत्सव

नागालैंड की प्रत्येक जाति के अपने अलग-अलग त्योहार है, जिन्हें बड़े रंग-बिरंगे ढंग से और धूम-धाम से मनाया जाता है। राज्य की अंगामी जन-जाति फरवरी में सेक्रेन्यी उत्सव, रेंगमा जन-जाति नवंबर में न्गाडा उत्सव, जेलियांग जन-जाति दिसंबर में न्गा-न्गाई, कुकी जन-जाति जनवरी में मिमकुत, चाँगसाँग जन-जाति मार्च-अप्रैल में त्सुखेन्यी, पोचुरी जन-जाति जुलाई-अगस्त में नाजु, आओ जन-जाति मई में मोआत्सु, कोन्याक जन-ज़ाति अप्रैल में आओलिंग, फॉम जन-जाति अप्रैल में मोन्यु, ख्यामंगन जन-जाति मई में मिउ, चाँग जन-जाति जुलाई में न्कान्युलुम, यिम चुंगर जन-जाति अगस्त में मेतेम्नियो, सांगताम जन-जाति सितंबर में तोख्युमोंग और सेमा जन-जाति जुलाई में तुलिनि उत्सव मनाती है।

पर्यटन

नागालैंड जाने वाले भारतीय पर्यटकों को दिल्ली, कलकत्ता, शिलांग,

चाँग ग्राम रक्षी परेड करते हुए (ऊपर) और अपनी पारंपरिक पोशाक में जेलियांग किशोरियाँ (नीचे)
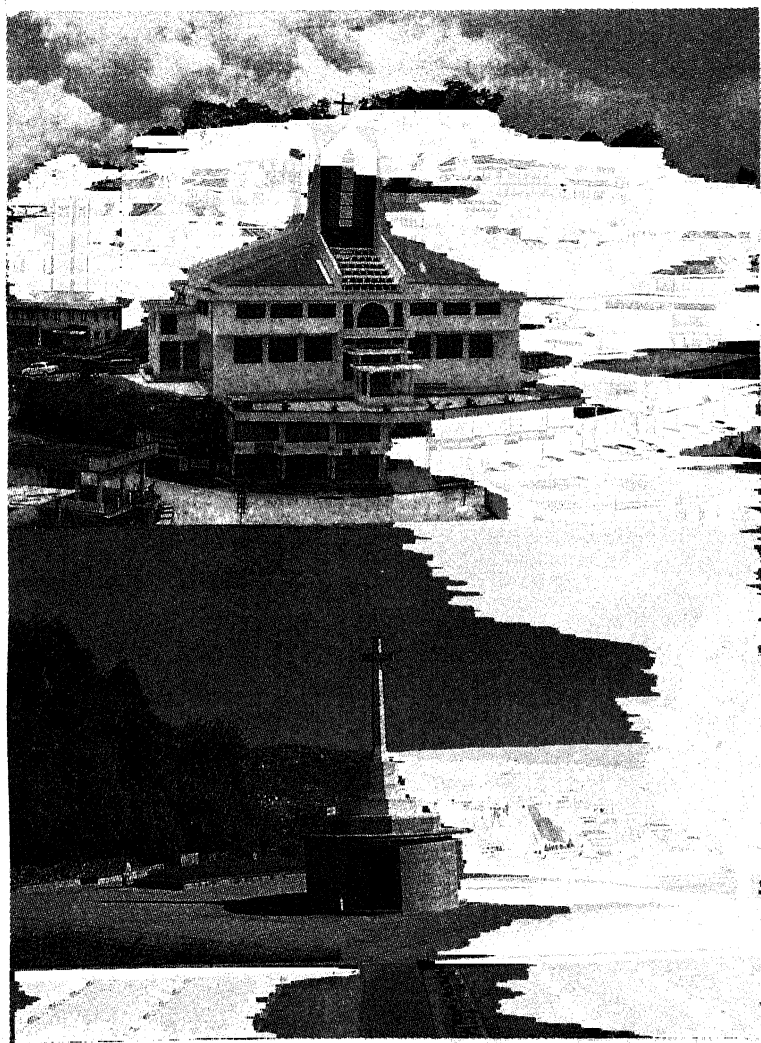
गोकोकचंग का एक दृश्य (ऊपर) और कोहिमा में द्वितीय विश्वयुद्ध का शहीद स्मारक (नीचे)

डीमापुर, कोहिमा और मोकोकचुंग स्थित नागालैंड की रेजीडेंसियों से इनर लाइन परमिट तथा विदेशी पर्यटकों को साउथ ब्लॉक, नई दिल्ली स्थित गृह मंत्रालय से प्रतिबंधित क्षेत्र परमिट लेना होता है।

376. ईंतंग्की राष्ट्रीय पार्क इस राष्ट्रीय पार्क की स्थापना 1983 में की गई थी। यह पार्क नागालैंड के दक्षिण-पश्चिमी भाग में असम की सीमा पर स्थित है। यहाँ तेंदुए, गिब्बन, फुलाम तथा उड़ने वाली गिलहरी मिलती हैं। डीमापुर यहाँ का सबसे निकटतम शहर है। यह विहार पक्षियों के संरक्षण का केंद्र भी है।

377. कोहिमा यह शहर नागालैंड की राजधानी है।

पर्यटन स्थल यहाँ दूसरे विश्व युद्ध में मारे गए शहीदों की याद में बनाया गया कब्रगाह, जन-जातीय संग्रहालय, चिड़ियाघर, गिरजाघर तथा कोहिमा गाँव देखने लायक हैं। यहाँ से 15 किमी दूर जाफू पीक, 20 किमी दूर खोनोमा गाँव, 30 किमी दूर जुको घाटी, 40 किमी दूर जुलेकी, 55 किमी दूर त्सेमिनयु और 84 किमी दूर पेरेन दर्शनीय स्थल हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ कोहिमा से निकटतम हवाई अड्डा तथा रेलवे स्टेशन 74 किमी दूर डीमापुर है। राज्य के अन्य भागों से यह सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। ठहरने के लिए यहाँ टूरिस्ट लॉज तथा छोटे-बड़े अनेक होटल हैं।

378. डीमापुर यह स्थान प्राचीन कछार राज्य की राजधानी तथा महापाषाण युग का एक महत्त्वपूर्ण केंद्र रहा है। तेरहवीं शताब्दी में इस क्षेत्र

डीमापुर में कछार राज्य के अवशेष

पर ओहोम जन-जाति ने कब्जा कर लिया था। यहाँ कछारी राज्यों की इमारतों से ध्वंसावशेष आज भी देखे जा सकते हैं। डीमापुर से 37 किमी दूर ईंतंग्की राष्ट्रीय पार्क भी देखने लायक है।

उपलब्ध सुविधाएँ यह स्थान देश के अन्य भागों से रेल, सड़क तथा वायु मार्ग से जुड़ा हुआ है। ठहरने के लिए यहाँ अनेक होटल हैं।

स्केल में नहीं

❖❖❖

पंजाब

ऐतिहासिक विवरण

पंजाब का इतिहास बहुत पुराना है। यह वेदों, सिंधु घाटी की सभ्यता तथा तक्षिला विश्वविद्यालय की भूमि रहा है। यहाँ के लोग हृष्ट-पुष्ट, वीर और खुशदिल हैं। समय-समय पर यहाँ मौर्यों, बक्टीरियाइयों, यूनानियों, शकों, कुषाणों, गुप्तों, गज़नी, गौरी, खिलजियों, तुगलकों, लोदियों और मुगलों का शासन रहा। पंद्रहवीं और सोलहवीं शताब्दी ने यहाँ के इतिहास में मुख्य भूमिका निभाई। इस अवधि के दौरान यहाँ गुरु नानक की शिक्षाओं के कारण भक्ति आंदोलन का जन्म हुआ। इस आंदोलन के दौरान यहाँ के लोगों ने खालसा पंथ और सिख धर्म को अपनाया। अट्ठारहवीं सदी के आरंभ में गुरु गोविंद सिंह ने तथा सदी के अंत में महाराजा रणजीत सिंह ने यहाँ के इतिहास में मुख्य भूमिका निभाई।

स्केल में नहीं
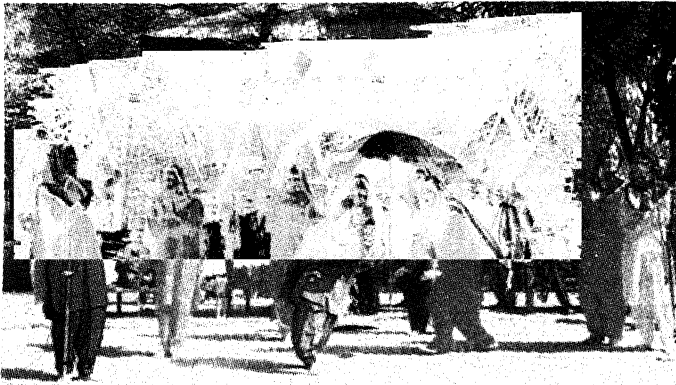
गिद्दा नृत्य, पंजाब

1849 में अंग्रेजों ने इसे अपने साम्राज्य में मिला लिया। राज्य ने देश के स्वतंत्रता आंदोलन में मुख्य योगदान दिया। देश की स्वतंत्रता के समय तत्कालीन पंजाब राज्य का पूर्वी हिस्सा भारत में तथा पश्चिमी हिस्सा पाकिस्तान में चला गया। स्वतंत्रता के समय पूर्वी पंजाब में ही स्थित आठ देसी रियासतों को मिलाकर एक नया राज्य बनाया गया, जिसका नाम पेप्सू (PEPSU--Patiala and the East Punjab States Union) रखा गया। इसकी राजधानी पटियाला थी। 1956 में पेप्सू राज्य को पंजाब राज्य में मिला दिया गया। 1 नवंबर, 1966 को पंजाब का पुनर्गठन करके इसमें से एक अन्य राज्य हरियाणा बना दिया गया।

राज्य का कुल क्षेत्रफल 50362 वर्ग किमी है। राज्य में जनसंख्या का घनत्व 403 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी है। राज्य की साक्षरता दर लगभग 58.5 प्रतिशत है। राज्य में कुल सतरह जिले हैं। मुख्य भाषा पंजाबी है।

उत्सव

दशहरा, दिवाली, होली, लोहड़ी, टीका, बैसाखी, होला मोहल्ला, बसंत पंचमी तथा माघी मेला पंजाब के प्रमुख उत्सव हैं। इनके अतिरिक्त जालंधर में दिसंबर माह में हरबल्लभ संगीत सम्मेलन होता है।

पर्यटन

पंजाब में अनेक पर्यटन केंद्र हैं, जिनमें से 23 पीटीडीसी के हैं। मुख्य पर्यटन केंद्र अमृतसर का स्वर्ण मंदिर, दुर्गियाना मंदिर और जलियाँवाला बाग; तख्त केशगढ़ साहिब, आनंदपुर साहिब, भाखड़ा बाँध तथा सरहिंद हैं।

नृत्य

पंजाब का पुरुषों का भाँगड़ा और महिलाओं का गिद्दा नृत्य पूरे देश में प्रसिद्ध हैं। गिद्दा नृत्य मुख्य रूप से सावन के महीने में तीयाँ (तीज) पर्व के अवसर पर 12 दिनों तक किया जाता है। इनके अतिरिक्त प्रदेश में गुगा नृत्य भी प्रचलित है।

379. अटक—ऐतिहासिक महत्त्व यह शहर अमृतसर जिले में पाकिस्तान की सीमा से लगता हुआ भारत का आखिरी शहर है। अकबर ने यहाँ एक किला बनवाया था। बालाजी बाजीराव के मराठा सेनापतियों मल्हारराव होल्कर तथा रघुनाथ राव ने अटक को मई, 1758 में छीनकर यहाँ शक्तिशाली सेना रख दी थी और इस विजय में उनकी सहायता करने वाले जालंधर दोआब के गवर्नर अदीना बेग को पंजाब का गवर्नर नियुक्त कर दिया था। बाद में 1813 में रणजीत सिंह ने इसे अफगानों से छीनकर अपने राज्य में मिला लिया था।

380. अबोहर जीव विहार यह विहार फिरोजपुर जिले में है। यहाँ पर भेड़िये, मरुस्थलीय बिल्ली, कौवे, बत्तख आदि जीव मिलते हैं।

381. अमृतसर—निर्माण अकबर ने सिखों के चौथे गुरु, गुरु रामदास (1574-81) की पत्नी बीबी भाणी के नाम से 1577 ई० में 500 बीघा जमीन दान में दी थी। गुरु रामदास ने इस जमीन पर संतोखसर और अमृतसर नाम के दो पवित्र सरोवर बनवाए। उन्होंने इन सरोवरों के आस-पास विभिन्न वस्तुओं के 52 व्यापारियों को बसने का निमंत्रण दिया। इस प्रकार यहाँ एक बस्ती बस गई, जिसे चक गुरु अथवा रामदासपुरा कहा जाने लगा। व्यापारियों के बाजार को गुरु का बाजार कहा गया। आजकल यही संपूर्ण बस्ती अमृतसर कही जाती है। पाँचवें गुरु, गुरु अर्जुन देव ने यहाँ हर मंदिर (जिसे अब स्वर्ण मंदिर कहा जाता है) बनवाया और छठे गुरु, गुरु हरगोबिंद ने इसका अकाल तख्त बनवाया तथा अमृतसर शहर की किलेबदी करवाई। इस मंदिर के कलशों व दीवारों पर सोना मढ़ा है। यह परंपरा महाराजा रणजीत सिंह द्वारा आरंभ की गई थी।

ऐतिहासिक महत्त्व अमृतसर में गुरु हरगोबिंद सिंह और शाहजहाँ की सेना के मध्य 1628 ई० में लड़ाई हुई थी। इस लड़ाई में सिखों के सेनापति भाई माड़ू तथा मुगल सेनापति मुखलिस खान दोनों मारे गए थे। युद्ध में सिखों की विजय हुई थी। 1710 ई० के आस-पास बंदा बहादुर के नेतृत्व में सिखों ने अमृतसर पर कब्जा कर लिया था। 1762 ई० में अहमदशाह अब्दाली ने अमृतसर को अपने

कब्जे में लेकर हर मंदिर को नष्ट कर दिया। 1802 ई० में महाराजा रणजीत सिंह ने इसे भंगी मिसिल से छीन लिया। 1809 में उसने अंग्रेजों से अमृतसर की संधि की, जिसके अनुसार उसने सिस-सतलुज राज्यों को संरक्षण देना स्वीकार किया। 1831 में उसने इसका नवीकरण किया। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान यह शहर 13 अप्रैल, 1919 को दुनिया की सुर्खियों में उस समय आया, जब जनरल डायर ने रौलट एक्ट के विरोध में यहाँ के जलियाँवाला बाग में हुई सभा पर गोलियाँ बरसा दीं। इस जघन्य हत्याकांड में दो हजार लोग मारे गए थे। कुछ ने यहाँ बने कुएँ में छलांग लगा दी। इस कुएँ को राष्ट्रीय स्मारक का दर्जा दिया गया है। बाद में सरदार उधम सिंह ने जनरल डायर को लंदन में मार गिराया।

पर्यटन स्थल यहाँ स्थित स्वर्ण मंदिर, दुर्गियाना मंदिर, लक्ष्मी और नारायण मंदिर, अकाल तख्त, कंपनी बाग, जलियाँवाला बाग, गोबिंदगढ़ किला, राम बाग तथा संग्रहालय दर्शनीय स्थान हैं। स्वर्ण मंदिर के ऐतिहासिक तोशखाने में इसकी बहुमूल्य चीजें रखी हैं। पर्यटकों के लिए इसे साल में एक बार खोला जाता है। स्वर्ण मंदिर के सामने ही अकाल तख्त है, जो कभी सिख गुरुओं का आसन था। आजकल यहाँ से सिख समुदाय के लिए हुक्मनामे जारी होते हैं। अमृतसर के केंद्रीय सिख संग्रहालय में सिख इतिहास से संबंधित चित्र व दुर्लभ वस्तुएँ देखने लायक हैं। अमृतसर में बाबा अटल राय व गुरुद्वारा शहीदाँ भी हैं। साथ ही यहाँ महाराजा रणजीत सिंह, सिखों तथा मुगलों से संबंधित अनेक यादगारें हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ यह शहर देश के अन्य भागों से रेल, वायु व सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ के गुरुद्वारे और धर्मशालाएँ तीन दिन तक ठहरने और खाने की निःशुल्क सुविधाएँ देते हैं। इसके अतिरिक्त सस्ती दरों पर रेलवे विश्राम गृह, टूरिस्ट गेस्ट हाउस आदि छोटे-बड़े होटल भी हैं। यहाँ वर्ष में कभी भी जाया जा सकता है।

382. आनंदपुर साहिब—निर्माण गुरु तेग बहादुर के जीवन काल में यह स्थान रोपड़-नंगल मार्ग पर रोपड़ जिले में मखोवाल के पास एक गाँव था। बाद में इसे आनंदपुर कहा जाने लगा। सतलुज नदी इसके बीच से होकर गुजरती है। इसके उत्तर-पूर्व से सतलुज-यमुना लिंक नहर गुजरती है। अपने विरोधियों के अत्याचारों से बचने के लिए गुरु तेग बहादुर यहाँ कुछ समय ठहरे थे।

खालसा का जन्म स्थान आनंदपुर, जिसे आजकल आनंदपुर साहिब कहा जाता है, खालसा पंथ का जन्म स्थान है। इस पंथ के अस्तित्व में आने की प्रक्रिया इस

गुरुद्वारा श्रीकेशगढ़ साहिब

प्रकार है। गुरु नानक के समय से सिख इतिहास में गुरु परम्परा भक्ति मार्ग के रूप में चल रही थी। परंतु अकबर के शासन के बाद दिल्ली के सम्राटों में सांप्रदायिक सद्भावना खत्म होने लगी थी। यूँ जहाँगीर (1605-27 ई०) एक न्यायप्रिय शासक था, परंतु उसके शासन काल में 30 मई, 1606 ई० को सिखों के पाँचवें गुरु, गुरु अर्जुन देव के वध ने भक्ति मार्ग के स्वरूप परिवर्तन की दिशा में एक शुरुआत कर दी थी। तत्कालीन मुस्लिम अत्याचारों को भाँपते हुए उन्होंने अपने बलिदान से कुछ समय पहले ही छठे गुरु हरगोबिंद सिंह को यह संदेश भेजा था कि आसन पर सदा शस्त्रों के साथ बैठना चाहिए और आवश्यकता पड़े तो सेना भी रखनी चाहिए। गुरु अर्जुन देव के इस उपदेश और सामयिक आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए गुरु हरगोबिंद अपनी कमर में मीरी (राजसत्ता) और पीरी (आध्यात्मिकता) की प्रतीक दो तलवारें बाँधा करते थे। इस प्रकार खालसा पंथ के अस्तित्व में आने से पहले ही पंथ में शस्त्रों का प्रवेश हो गया था। गुरु हरगोबिंद सिंह ने मुगलों के साथ कुछ छोटी-बड़ी लड़ाइयाँ भी लड़ीं। फिर भी नवें गुरु, गुरु तेग बहादुर तक गुरु परंपरा भक्ति मार्ग के रूप में ही आगे बढ़ती रही। इस समय तक हिंदुओं पर मुगलों के अत्याचारों में अतिशय वृद्धि हो चुकी थी। मई, 1675 में गुरु तेग बहादुर जब आनंदपुर में भक्ति पाठ में लीन थे, तब उनके पास कुछ कश्मीरी पंडित आए, जिन्होंने उनसे मुगलों के अत्याचारों से बचाने का अनुरोध किया। उन दिनों औरंगजेब ने यह फरमान जारी किया हुआ था कि जब तक वह हिंदुओं के सवा मन जनेऊ नहीं उतरवा लेगा (अर्थात् इतने

हिंदुओं को मुसलमान नहीं बना लेगा), तब तक शाम का भोजन नहीं करेगा। गुरु तेग बहादुर औरंगजेब के ये अत्याचार रोकने के लिए भाई मतिदास, भाई जतिदास, भाई गुरदित्ता आदि के साथ दिल्ली की ओर चल पड़े। परंतु औरंगजेब से इनकी मुलाकात का कोई फल नहीं निकला और उसने इन सबको बंदी बना लिया। उसने उनके समक्ष मुसलमान बन जाने पर रिहा कर देने का प्रस्ताव रखा, जो इन स्वाभिमानी देशभक्तों ने न माना। फलस्वरूप भाई मतिदास को लकड़ी के शिकंजे में कसकर आरे से चिरवा दिया गया। बाद में उसने उसके अन्य साथियों तथा गुरु तेग बहादुर को 11 नवंबर, 1675 ई० को तरह-तरह के कष्ट देकर मरवा दिया। इन बलिदानों ने भक्ति मार्ग को शक्ति मार्ग में बदलने की प्रक्रिया को पूरा कर दिया और हाथ में जपमाला के स्थान पर खड्ग आ गई। शास्त्र के साथ-साथ शस्त्र रखने को भी मान्यता दे दी गई। दिल्ली में गुरु गोबिंद सिंह और भाई मतिदास का जहाँ बलिदान हुआ था, वहाँ आजकल क्रमशः गुरुद्वारा शीशगंज तथा भाई मतिदास चौक (दोनों चाँदनी चौक में) हैं। गुरु तेग बहादुर के पुत्र और सिखों के दसवें गुरु, गुरु गोबिंद सिंह ने अपने पिता का शीश लाकर आनंदपुर में जिस जगह दफनाया, वह जगह आजकल गुरुद्वारा केशगढ़ है।

अपने काल में गुरु गोबिंद सिंह ने भी मुगलों से छोटी-बड़ी कई लड़ाइयाँ लड़ी थीं। उन्होंने पंथ के बचाव के लिए सैनिक शक्ति बढ़ाने की आवश्यकता को अधिक सशक्त रूप से महसूस किया। इसलिए उन्होंने आनंदगढ़, लोहगढ़, केशगढ़ तथा फतेहगढ़ के किले भी बनवाए। उन्होंने महसूस कर लिया था कि उन्हें अपने बचाव के लिए अपनी संगत को सिंहों का रूप देना होगा। उन्होंने कहा था कि हमें युद्ध करना है और नए पंथ को दैत्यों (मुसलमानों) से बचाना है। इसलिए देवी से आदेश लेकर मुंडन क्रिया को क्षमा करवाना है, क्योंकि युद्ध में जनेऊ, तिलक और मुंडन क्रिया की मर्यादा रखनी कठिन होती है। उन्होंने 13 अप्रैल, 1699 ई० को बैशाखी के दिन आनंदपुर साहिब में केशगढ़ गुरुद्वारे में 80 हजार अनुयायियों की एक बड़ी सभा की। इस सभा में उन्होंने नंगी तलवार लेकर अपनी संगत को कहा कि देश को बचाने हेतु दुर्गा पर बलि चढ़ाने के लिए उन्हें एक व्यक्ति की जरूरत है। एक व्यक्ति खड़ा हुआ। गुरु जी उसे मंच के पीछे लगी कनात के पीछे ले गए और खून से लथपथ तलवार हाथ में लेकर वापस आए। संगत सन्न रह गई। उन्होंने इसी तरह एक-एक करके तीन अन्य लोगों की बलि माँगी और हर बार खून से सनी तलवार लेकर लौटे। उन्होंने पाँचवीं बार फिर एक व्यक्ति को बलि देने के लिए आगे आने के लिए कहा। एक आदमी और आगे आया, परंतु इस बार वे खून से सनी तलवार लेकर लौटने की बजाय अपनी

तरह केसरिया वस्त्र धारण किए पाँचों व्यक्तियों के साथ लौटे, क्योंकि उन्होंने आत्म-बलिदान का व्रत ले लिया था। ये व्यक्ति थे लाहौर से खत्री जाति के दयाराम, हस्तिनापुर से जाट जाति के धर्मदास, बीदर से नाई जाति के साहिब चंद, जगन्नाथपुरी से झींवर जाति के हिम्मत राय और द्वारिका से छीबा जाति के मोहकम चंद। गुरु जी ने लोहे के बर्तन में सतलुज का जल और उनकी माँ ने बतासे डाले। इन्हें तलवार से मिलाया गया। इसे खंड का पाहुल कहा गया। इसके बाद उन्होंने जपुजी, आनंद, जप साहिब आदि पाँच वाणियों का जप करके उन्हें इस अमृत का पान कराकर घोषणा की कि आज से किसी की कोई जाति नहीं है। इसलिए आज से सभी एक-दूसरे को भाई पुकारो। आज हम लोगों ने अमृत छका है और खालसा (विशुद्ध) हृदय से भक्ति और शक्ति के समन्वय का मार्ग अपनाने का निश्चय किया है, अतः आज से हम खालसा कहलाएँगे। गुरु जी ने इन्हें 'पाँच प्यारे' कहा और इनके नाम बदलकर क्रमशः दयासिंह, धर्मसिंह, साहिबसिंह, हिम्मत सिंह और मोहकम सिंह रखे। इस प्रकार इन पाँच अनुयायियों को उन्होंने सिंहों का विशिष्ट रूप दिया और उन्हें खालसा पंथ के प्रथम पाँच अनुयायी बनाया। उन्होंने स्वयं भी उनके सामने घुटने टेककर उनसे अमृत चखा और वे भी खालसा पंथ के अनुयायी बने।

इस प्रक्रिया से उन्होंने निर्बल लोगों में जान डालकर शून्य से सृष्टि रच डाली। यही प्रक्रिया खालसा पंथ (पवित्र पंथ) का सृजन थी और यहीं से पूर्णतः अलग सिख धर्म का उदय हुआ। इससे पहले पंजाब के सभी लोग हिंदू थे और कोई भी दाढ़ी तथा केश धर्म के प्रतीक के रूप में नहीं रखता था। गुरु जी ने अन्य आदमियों को भी अपने नाम के पीछे 'सिंह' तथा औरतों को 'कौर' शब्द लगाने के लिए कहा। इनसे तात्पर्य था फलाँ नाम का सिंह और फलाँ नाम की राजकुमारी। उन्होंने स्वयं भी अपने नाम के पीछे 'सिंह' शब्द लगाया। इससे पहले उनका नाम गोबिंद राय था। उन्होंने खालसा पंथ के अनुयायियों को धर्म के बाहरी प्रतीक के रूप में कच्छा, कंघा, कड़ा, केश और कृपाण धारण करने का भी आदेश दिया। गुरु हरगोबिंद सिंह द्वारा धारण की गई मीरी और पीरी की दो तलवारें तथा कृपाण खालसा पंथ की निशानी बनीं। गुरुग्रंथ साहिब को पवित्र ग्रंथ के रूप में और "वाहेगुरु जी का खालसा, वाहेगुरु जी की फतह", "बोले सो निहाल, सत श्री अकाल" अभिवादन के रूप में अपनाए गए। प्रत्येक प्रार्थना से पहले और उसके बाद "नानक नाम चड़दी कला, तेरे भाणे सरबत का भला" स्वस्ति वाचन अपनाया गया। साथ ही देग (लंगर), तेग (भगवती की तलवार) और फतह (खालसा अर्थात् भगवान की फतह) प्रथाएँ भी अंगीकार की गईं।

गुरु गोबिंद सिंह ने यहाँ ठहरकर सैनिक प्रशिक्षण लिया और फारसी, गुरुमुखी, हिंदी तथा संस्कृत सीखीं। उन्होंने अपने अनुयायियों को भी सैनिक प्रशिक्षण देकर एक-एक में सवा लाख के समक्ष खड़े होने का दुर्धर्ष आत्म-विश्वास पैदा किया। चमकौर के युद्ध में उन्होंने हजारों-लाखों शत्रुओं से तीन-तीन चार-चार सिंहों की टुकड़ियों को ही लड़ाया था।

खालसा पंथ के सृजन के 300 वर्ष पूरे होने के उपलक्ष्य में आनंदपुर साहिब में 13 अप्रैल 1999 को एक बड़े स्तर पर समारोह हुआ। इससे पहले गुरु गोबिंद सिंह के जन्म स्थान पटना, जहाँ वे माता गुजरी की कोख से 1666 ई० में पैदा हुए थे, के तख्त श्री पटना साहिब से पवित्र ज्योति लाकर यहाँ स्थापित की गई। तख्त पटना साहिब सिख धर्म के पाँच तख्तों में से एक है।

ऐतिहासिक महत्त्व यहाँ गुरु गोबिंद सिंह और बिलासपुर (हिमाचल प्रदेश) के राजा भीमचंद के मध्य 1701 ई० में आनंदपुर की पहली लड़ाई हुई थी। राजा भीमचंद को अन्य पहाड़ी राजाओं का समर्थन भी मिला हुआ था, परंतु गुरु गोबिंद सिंह ने उन्हें हरा दिया। आनंदपुर की दूसरी लड़ाई गुरु गोबिंद सिंह और मुगलों के मध्य 1703-04 में हुई। मुगलों का नेतृत्व राजा अजमेर चंद ने किया था तथा अमीर खाँ, नजाबत खाँ और वाहिद खाँ ने उसका साथ दिया व सरहिंद के गवर्नर वजीर खाँ ने सहायता की थी। 1706 की मुक्तसर की लड़ाई के बाद गुरु गोबिंद सिंह को आनंदगढ़ का किला छोड़ना पड़ा था।

पर्यटन स्थल आनंदपुर साहिब में पाँच प्यारा पार्क, खालसा हेरिटेज, प्राकृतिक जीव संरक्षण पार्क, मार्शल आर्ट्स अकादेमी और सबसे बढ़कर केशगढ़, आनंदगढ़, फतेहगढ़, शीशगंज तथा भोरा साहिब गुरुद्वारे देखने लायक हैं। इनके अतिरिक्त यहाँ मीनार-ए-खालसा तथा खालसा स्मारक का निर्माण कार्य जारी है।

उपलब्ध सुविधाएँ आनंदपुर साहिब देश के अन्य भागों से रेल एवं सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा चंडीगढ़ है। ठहरने के लिए यहाँ अनेक गुरुद्वारे, एक तीन-सितारा होटल तथा एक पीडब्ल्यूडी रेस्ट हाउस है। यहाँ पर्यटन सूचना केंद्र होटल के पास है। यहाँ का मौसम पूरे वर्ष भ्रमण के लिए उपयुक्त रहता है।

383. करतारपुर यह शहर पंजाब के जालंधर जिले में सतलुज नदी के बाएँ किनारे पर है। गुरु नानक की मृत्यु 1533 ई० में यहीं हुई थी। इसकी स्थापना गुरु अर्जुनदेव और इसका निर्माण गुरु हरगोबिंद सिंह द्वारा करवाया गया था। 1634 ई० में यहाँ एक घमासान युद्ध लड़ा गया था, जिसमें एक ओर

जगजीत पैलेस, करतारपुर

गुरु हरगोबिंद की तरफ से भाई विधिचंद, तेग बहादुर और बाबा गुरदित्ता थे तथा दूसरी ओर शाहजहाँ की तरफ से पांडे खाँ और काले खाँ थे। इस युद्ध में गुरु हरगोबिंद सिंह की विजय हुई। पांडे खाँ और काले खाँ मारे गए। युद्ध के बाद गुरु हरगोबिंद सिंह यहीं बस गए। 1645 में उनकी तथा 1661 में अगले गुरु हर राय की मृत्यु यहीं हुई थी। करतारपुर में ही 1656 में गुरु हर कृष्ण का जन्म हुआ था।

384. कलानौर यह गुरदासपुर जिले का एक शहर है। चौदह वर्ष की उम्र में अकबर का राज्याभिषेक 1556 ई० में यहीं हुआ था। 1710 ई० के आस-पास बंदा बहादुर के नेतृत्व में सिखों ने इस शहर पर कब्जा कर लिया था।

385. कोटला महंगखाँ रोपड़ जिले में स्थित यह शहर सिंधु घाटी सभ्यता का एक स्थल था।

386. गुजराँवाला यहाँ 1783 ई० में महाराजा रणजीत सिंह का जन्म हुआ था।

387. गोइंदवाल इस शहर की स्थापना सिखों के दूसरे गुरु, गुरु अंगद (1538-52) ने गोइंदा नामक जमींदार, जिसने इसके लिए जमीन दी थी, के नाम पर की थी। तीसरे गुरु, गुरु अमरदास (1552-74) ने गोइंदवाल में अपने शिष्यों से 84 पैड़ियों वाली बावली बनवाई। उसने लोगों को बताया कि जो

व्यक्ति इस बावली में 84 बार नहाएगा और 84 बार जपुजी का पाठ करेगा, वह 84 लाख योनियों से मुक्ति पा लेगा। इसके बाद यह गुरु के शिष्यों का एक अलग धार्मिक स्थान बन गया।

388. तराईं यह स्थान भटिंडा से 21 मील दूर है।

ऐतिहासिक महत्त्व 1191 ई० में यहाँ पृथ्वीराज चौहान और मुहम्मद गौरी के मध्य एक घमासान युद्ध हुआ था, जिसमें मुहम्मद गौरी की हार हुई थी। बाण भट्ट ने इस युद्ध का वर्णन अपनी पुस्तक काव्य कादंबिनी में किया है। इस युद्ध के पश्चात् पृथ्वीराज चौहान ने भटिंडा के किले को छीन लिया था। तराईं में ही दोनों के मध्य 1192 में एक और युद्ध हुआ था। इस बार मुहम्मद गौरी ने पृथ्वीराज चौहान को परास्त कर दिया और उसका वध कर दिया। इस युद्ध के बाद गौरी ने हाँसी, कुहराम, सरस्वती और अजमेर के क्षेत्र हथिया लिए।

389. पटियाला यह शहर पटियाला रियासत की राजधानी के रूप में प्रसिद्ध रहा है। यहाँ किला अंद्रूँ, शीश महल, मोती बाग पैलेस, बारादरी गार्डन, कला दीर्घाएँ देखने लायक हैं। यह अपनी चुन्नियों तथा जूतियों के लिए भी जाना जाता है।

शीश महल, पटियाला
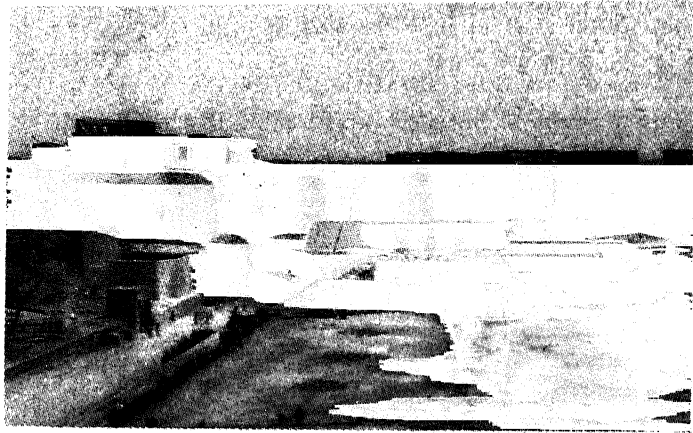
भटिंडा का किला

390. भटिंडा—ऐतिहासिक महत्त्व दसवीं शताब्दी के अंत में यहाँ हिंदू राजा जयपाल का राज्य था। उसका राज्य-क्षेत्र लमगान से चिनाब नदी तक फैला हुआ था। उसने गजनी के मुस्लिम पंथी शासक सुबुक्तगीन (977-97) पर चढ़ाई की थी, परंतु वह उससे हार गया और उसने हर्जाने के रूप में काफी पैसा देने तथा कुछ सीमावर्ती इलाके छोड़ देने की संधि की। परंतु जयपाल ने संधि तोड़कर सुबुक्तगीन के उन्हीं अफसरों को कैद कर लिया, जो उन इलाकों का कब्जा लेने आए थे। तब सुबुक्तगीन ने जयपाल पर 991 ई० में आक्रमण कर दिया। जयपाल ने हिंदू राजाओं का संघ बनाकर 100 000 सैनिकों के साथ युद्ध किया, परंतु हार गया। फलस्वरूप उसे लमगान से पेशावर तक के इलाके छोड़ने पड़े। सुबुक्तगीन के बाद उसका बेटा महमूद गजनी, गजनी का शासक बना। उसने 1001 ई० में जयपाल के राज्य पर आक्रमण कर दिया। जयपाल ने उससे पेशावर के निकट युद्ध किया, परंतु वह फिर हार गया। उसे युद्ध क्षतिपूर्ति और 50 हाथी देने पड़े तथा अपने एक बेटे व पोते को गजनी भेजना पड़ा। इससे अपमानित होकर उसने आत्म-हत्या कर ली। जयपाल के बाद उसका पुत्र आनंदपाल भटिंडा का राजा बना। महमूद गजनी और आनंदपाल के मध्य 31 दिसम्बर, 1008 को युद्ध हुआ, जिसमें हिंदू राजा की हार हुई। 1190-91 में मुहम्मद गौरी ने पृथ्वीराज की सीमा चौकी भटिंडा पर कब्जा कर लिया था, जिसे पृथ्वीराज ने उसी वर्ष वापस ले लिया। 1765 के बाद फुलकियाँ मिसल के सरदार अमर सिंह ने भटिंडा पर कब्जा किया।

391. भाखड़ा बाँध भाखड़ा बाँध देश की सबसे बड़ी महत्त्वाकांक्षी परियोजना है। यह बाँध नंगल के पास हिमाचल प्रदेश की सीमा पर सतलुज नदी के पानी को रोककर बनाया गया है। आम तौर पर ऐसे बाँधों का निर्माण बाढ़ रोकने और सिंचाई कार्यों के लिए किया जाता है, परंतु भाखड़ा बाँध से बिजली बनाने का काम भी लिया जाता है। इस बाँध की ऊँचाई 740 फुट है और यह संसार में दूसरा सबसे ऊँचा बाँध है। यह बाँध शिवालिक की पहाड़ियों की दरारों में कंक्रीट भरकर बनाया गया है। इसके निर्माण में इतना कंक्रीट लगा, जितना 1954 में पूरा चंडीगढ़ शहर बनाने में नहीं लगा। पहाड़ों की दरारों को भरकर जो पानी रोका गया, उसे गोविंद सागर नाम दिया गया है। यह बाँध बनाने की योजना सबसे पहले पंजाब के उपराज्यपाल सर लूईस ने 1908 में बनाई थी, परंतु देश की स्वतंत्रता तक इस पर कोई कार्य नहीं हुआ। स्वतंत्रता के बाद सिंचाई वाला अधिकांश इलाका पाकिस्तान में चले जाने के कारण इस परियोजना को दिन-रात लगकर बड़ी तेजी से पूरा किया गया। परियोजना से देश में बाढ़ रोकने, हरित क्रांति लाने और बिजली उत्पादन बढ़ाने में बहुत सहायता मिली।

392. मुक्तसर यह शहर पंजाब के फिरोजपुर जिले में है। मध्य काल में इसका नाम खिदराना हुआ करता था। 1703-04 में आनंदपुर की दूसरी लड़ाई के दौरान चालीस सिख गुरु गोबिंद सिंह का गुरुत्व मानने से इंकार करके उसे विपत्ति में छोड़कर चले गए। सन् 1706 में गुरु ने मुगलों के साथ खिदराना में अपनी अंतिम लड़ाई लड़ी। ये चालीस सिख गुरु जी से यहाँ पुनः आ मिले और उन्होंने धर्म के लिए अपना जीवन बलिदान कर दिया। गुरु ने उन्हें क्षमा करके मुक्ति का आशीर्वाद दिया। इस घटना के बाद खिदराना को मुक्तसर कहा जाने लगा।

393. रोपड़ रोपड़ पंजाब में सतलुज नदी के किनारे है।

पुरातात्विक महत्त्व इतिहास में रोपड़ अपने पुरातात्विक महत्त्व के कारण जाना जाता है। यह सिंधु घाटी सभ्यता का एक महत्त्वपूर्ण स्थल था। यहाँ 1953-56 में खुदाई की गई थी। विदेशी आक्रमणकारियों के रास्ते में स्थित होने के कारण यह कई बार नष्ट हुआ। यहाँ की गई खुदाइयों में सभ्यता के छह स्तर पाए गए हैं। इसी कारण इसकी सभ्यता को छह कालों में बाँटा गया है – प्रथम काल 2000 ई०पू० से 1400 ई०पू० तक का और दूसरा 1000 ई०पू० से 700 ई०पू० तक का है। यहाँ इन कालों के मिट्टी के बर्तन, खरपतवार और बालों की पिनें पाई गई हैं। रोपड़ में हड़प्पा संस्कृति के बाद की नवपाषाण संस्कृति के अवशेष भी मिले हैं। इस संस्कृति के मिट्टी के बर्तन भूरे रंग के और चित्रित होते थे। लोग

मकान बनाने के लिए कच्ची ईंट तथा सरकंडों का प्रयोग करते थे। वे घोड़े और ताँबे से परिचित थे। सभ्यता के अंतिम दिनों में लोहे का प्रयोग भी होने लगा था। वे चावल के अतिरिक्त गाय तथा हरिण का माँस खाते थे। तीसरा काल 600 ई०पू० से 200 ई०पू० तक का है, जिसके काली पालिश किए हुए बर्तन, चाँदी तथा ताँबे की मुहरें और कुछ उपकरण पाए गए हैं। चौथा काल 200 ई०पू० से 200 ई० तक का है। इस काल की चीजों में कुषाण शासक वासुदेव की कुछ मुहरें भी हैं। पाँचवाँ काल 800 ई० से 1000 ई० तक का है और छठा काल 1300 से 1700 ई० तक का है। रोपड़ के लोग अपने घर कंकड़-पत्थरों की गारा से चिनाई करके बनाते थे। उनके जेवर और मिट्टी के कुछ बर्तन हड़प्पा के जेवरों और बर्तनों से मिलते-जुलते थे। कुछ बर्तन अलग तरह के थे। कब्रिस्तान शहर से दूर था। ऐसा अनुमान है कि मिट्टी के धूसर रंग के बर्तनों का इस्तेमाल करने वाले लोगों ने इस कब्रिस्तान को नष्ट किया था। रोपड़ की खुदाइयों से हड़प्पा काल से लेकर रोपड़ के मध्य काल तक की जानकारी के साथ-साथ इस बात की जानकारी भी मिलती है कि हड़प्पा काल सबसे पुराना काल था तथा नवपाषाण युग का एक केंद्र था, क्योंकि यहाँ उस काल के मिट्टी के धूसर रंग के चित्रित बर्तन मिले हैं।

394. लुधियाना—ऐतिहासिक महत्त्व 1806 में रणजीत सिंह ने लुधियाना पर कब्जा कर लिया था। काबुल के दो शासकों जमान शाह और शाह
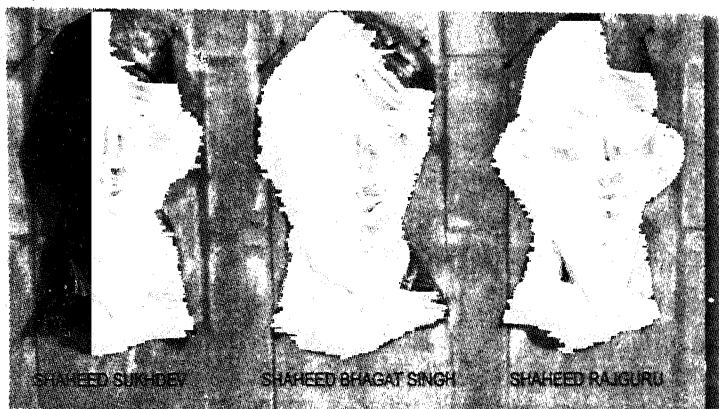
शहीद स्मारक, हुसैनीवाला

गुरुद्वार, तलवंडी साबो

शुजा की गद्दियाँ छिनने के बाद उन्होंने लुधियाना में ही क्रमशः 1800 तथा 1816 में शरण ली थी। प्रथम सिख युद्ध (1845-46) के दौरान यहाँ 35000 से अधिक सैनिक तैनात थे।

395. लोहगढ़ यह स्थान आनंदपुर शहर में है। इसका पुराना नाम मुख्लिशपुर है। गुरु गोबिंद सिंह ने यहाँ एक किला बनवाया था। दिसंबर, 1710 तक यह बंदा बहादुर की गतिविधियों का मुख्य केंद्र था। 1710 ई० में बहादुरशाह के सूबेदार आमीन खाँ ने लोहगढ़ पर आक्रमण करके इसे अपने कब्जे में ले लिया। बंदा बहादुर को पहाड़ियों में शरण लेनी पड़ी। फरुखसियार के मुगल सेनानायक अब्दुल समद ने भी इस पर आक्रमण किया। उसने बंदा बहादुर को ढुंढवा कर उसे उसके 740 सैनिकों सहित जून, 1716 में मृत्यु दंड दे दिया।

396. संघोल यह स्थान प्रदेश के लुधियाना जिले में है।

पुरातात्विक महत्त्व यहाँ श्री ऐस ऐस तलवार और श्री आर ऐस बिष्ट के मार्गदर्शन में 1968 में खुदाई करवाई गई थी, जिससे पता चला है कि यह सिंधु घाटी सभ्यता के प्रमुख स्थलों में से एक था। यहाँ पाए गए बर्तन, पत्थर, मुहरें, मूर्तियों के टुकड़े और टूटे-फूटे घर इसके सिंधु सभ्यता से संबंध को जताते हैं। खुदाई से पता चला है कि शहर के चारों ओर पानी से भरी एक खाई होती थी। यहाँ भी रोपड़ की तरह सभ्यता की छह परतें पाई गई हैं तथा यहाँ पाई गई

चीजें हड़प्पा और मोहनजोदाड़ो की चीजों से मिलती-जुलती हैं। फरवरी, 1985 में यहाँ लाल रंग के बलुई पत्थर की बहुत सी प्रतिमाएँ और मूर्तियाँ पाई गईं। ये प्रतिमाएँ और मूर्तियाँ कुषाण काल (पहली और दूसरी शताब्दी) की हैं और मथुरा शैली में बनी हैं।

397. सरहिंद—ऐतिहासिक महत्त्व मुहम्मद गौरी ने लाहौर के बाद सरहिंद पर 1189 में आक्रमण करके इसे जीत लिया था, परंतु पृथ्वीराज चौहान ने उसे 1191 में हुए तराई के पहले युद्ध में हरा दिया था। दिल्ली के अंतिम सैयद शासक मुहम्मद शाह के काल में बहलोल लोदी यहाँ तथा लाहौर का सूबेदार था। 1555 (मई) में सरहिंद में एक ऐतिहासिक लड़ाई हुई थी, जिसमें हुमायूँ ने सूर वंश के अंतिम शासक सिकंदर सूर को हराकर 15 वर्ष बाद भारत में मुगल साम्राज्य की नींव पुनः रखी। इस लड़ाई के बाद सिकंदर सूर पंजाब की पहाड़ियों में भाग गया। सरहिंद एक दर्द भरी दास्तान का गवाह भी है। औरंगजेब ने गुरु गोबिंद सिंह के दो पुत्रों जोरावर सिंह (9 वर्ष) और फतेह सिंह (5 वर्ष) को सरहिंद में ही दीवार में जिंदा चिनवा दिया था। यहाँ के मुगल सूबेदार वजीर खाँ को मारने के बाद बंदा बहादुर ने इसे 12 मई, 1710 को जीत लिया और बाज सिंह को इसका राज्यपाल नियुक्त कर दिया। परंतु अगले ही महीने मुगल सम्राट बहादुरशाह के सेनानायक आमीन खाँ से वह हार गया। 1743 ई० में इसे अहमदशाह अब्दाली ने जीत लिया, परंतु मुगल सेना ने उसे सरहिंद के निकट शीघ्र बाद ही हरा दिया। नवंबर, 1750 और 1758 ई० में अब्दाली ने पुनः आक्रमण किया और दोनों बार इस पर कब्जा किया। फिर भी जालंधर दोआब के सूबेदार अदीना बेग की सहायता से बालाजी बाजीराव के दो मराठा सेनापतियों मल्हार राव होल्कर और रघुनाथ राव ने इसे मार्च, 1758 में अब्दाली से पुनः छीन लिया।

398. सुल्तानपुर लोदी यह शहर कपूरथला जिले में है और गुरु नानक का निवास स्थल रहने के कारण अधिक जाना जाता है। इस शहर के मुहल्ला सिखाँ में सिखों के प्रथम गुरु, गुरु नानक की बड़ी बहन बेबे नानकी जी का घर था। गुरु जी अपनी बहन के घर रहने के लिए आए थे। उनकी बहन का विवाह लोदी के नवाब दौलत खाँ के राजस्व अधिकारी श्री जयराम से हुआ था। गुरु जी को दैवी प्रेरणा यहीं रहते हुए मिली थी, जिसके बाद वे दुनिया को सच्चाई का मार्ग दिखाने के लिए निकल पड़े। सिख इतिहास में गुरु जी द्वारा इस कस्बे में दिखाए गए अनेक अजूबे वर्णित हैं। उनकी याद में ऐसे सभी स्थानों पर

गुरुद्वारे बने हुए हैं, जहाँ उन्होंने ये अजूबे दिखाए थे और जिनके कारण इसे गुरुद्वारों का कस्बा कहा जाता है। बेबे नानकी के घर को लोग यहाँ बेबे नानकी की धर्मशाला कहते हैं। मकान के मुख्य द्वार के बाहर एक प्राचीन कुआँ और एक वट वृक्ष है। ऐसा माना जाता है कि यह वट वृक्ष बेबे नानकी ने ही लगाया था। इस मकान के निकट बेबे नानकी की याद में गुरुद्वारा बनाए जाने की योजना है।

399. हरिके झील पक्षी विहार यह विहार अमृतसर जिले में है। इसमें पक्षियों की नाना प्रकार की जातियाँ मिलती हैं। यहाँ विदेशों से भी पक्षी आते रहते हैं। देश-विदेश के पर्यटक यहाँ पक्षियों के बारे में जानने के लिए आते हैं।

वृषभ,चामुंडी पहाड़ी, मैसूर

★★★

पश्चिमी बंगाल

ऐतिहासिक विवरण

अलेक्जैंडर के आक्रमण के दौरान बंगाल में गंगारीदाई का शासन था। गुप्तों और मौर्यों के शासन ने भी बंगाल पर बहुत प्रभाव डाला। सातवीं शताब्दी ई० में राज्य में शशांक नाम का शक्तिशाली राजा हुआ। उसके बाद यहाँ आठवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में गोपाल नाम के राजा ने पाल वंश की तथा 1160 में विजयसेन ने सेन वंश की नींव डाली। बाद में बंगाल पर दिल्ली के सुल्तानों, शेरशाह सूरी, मुगलों तथा मुर्शिदाबाद के नवाबों का शासन रहा। 1757 में प्लासी की लड़ाई तथा 1764 में बक्सर की लड़ाई के बाद यहाँ के नवाबों पर अंग्रेजों का प्रभाव बढ़ गया। 1905 में अंग्रेजों ने बंगाल का विभाजन कर दिया तथा 1911 में इस विभाजन को समाप्त कर दिया। 1947 में देश की स्वतंत्रता के बाद बंगाल का पूर्वी हिस्सा पूर्वी पाकिस्तान के नाम से पाकिस्तान का एक भाग बना और पश्चिमी हिस्सा पश्चिमी बंगाल के नाम से भारत का एक राज्य बना।

पश्चिमी बंगाल का कुल क्षेत्रफल 88752 वर्ग किमी है। राज्य में जनसंख्या का घनत्व 767 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी है। राज्य में कुल 19 जिले हैं, जिनकी प्रमुख भाषा बंगाली है। पश्चिमी बंगाल ही देश का एकमात्र ऐसा राज्य है, जो उत्तर में हिमालय पर्वत और दक्षिण में सागर (बंगाल की खाड़ी) से जुड़ा हुआ है।

उत्सव

पश्चिमी बंगाल के मुख्य उत्सव दुर्गा पूजा तथा काली पूजा (दीपावली के अवसर पर) हैं। इनके अतिरिक्त बसंत पंचमी, लक्ष्मी पूजा, होली, शिवरात्रि, जन्माष्टमी, विश्वकर्मा पूजा तथा ईद-उल-फितर त्योहार भी धूम-धाम से मनाए जाते हैं। गंगासागर में गंगासागर स्नान पर्व, फरवरी-मार्च (फाल्गुन) में रामकृष्ण उत्सव, चैतन्य महाप्रभु के जन्म दिवस के अवसर पर मार्च-अप्रैल (चैत्र) में डोल पूर्णिमा तथा 14 अप्रैल को नव बर्ष दिवस मनाया जाता है। दिसंबर में विष्णुपुर मेला, शांतिनिकेतन में पौष मेला तथा मई में रवीन्द्र नाथ टैगोर का जन्म दिवस भी धूमधाम से मनाया जाता है।

दार्जिलिंग
कालिम्पोंग
कार्सियांग
सिलीगुड़ी
जलपाईगुड़ी
अलिपुर-दुआर
कोचबिहार
दिनहाटा
चोपड़ा
रायगंज
देवीकोट
बालुरघाट
इंगराज बाजार
नल हाटी
मुर्शिदाबाद
बहरामपुर
सिउड़ी
पलासी
चितरंजन
आसनसोल
शान्ति निकेतन
आद्रा
दुर्गापुर
पुरुलिया
पश्चिमी
कृष्णानगर
विश्नुपुर
बलरामपुर
बाँकुरा
वर्द्धमान
मानबाजार
बंगाल
चुचुड़ा
चन्द्राकोना रोड
घाटल
दम दम
बारासात
हावड़ा
कलकत्ता
सिल्दा
मेदिनीपुर
नमकझील
अलीपुर
खड़गपुर
पोर्ट कैनिंग
डायमंड
हल्दिया
इग्रा
काकद्वीप
दीघा

स्केल में नहीं
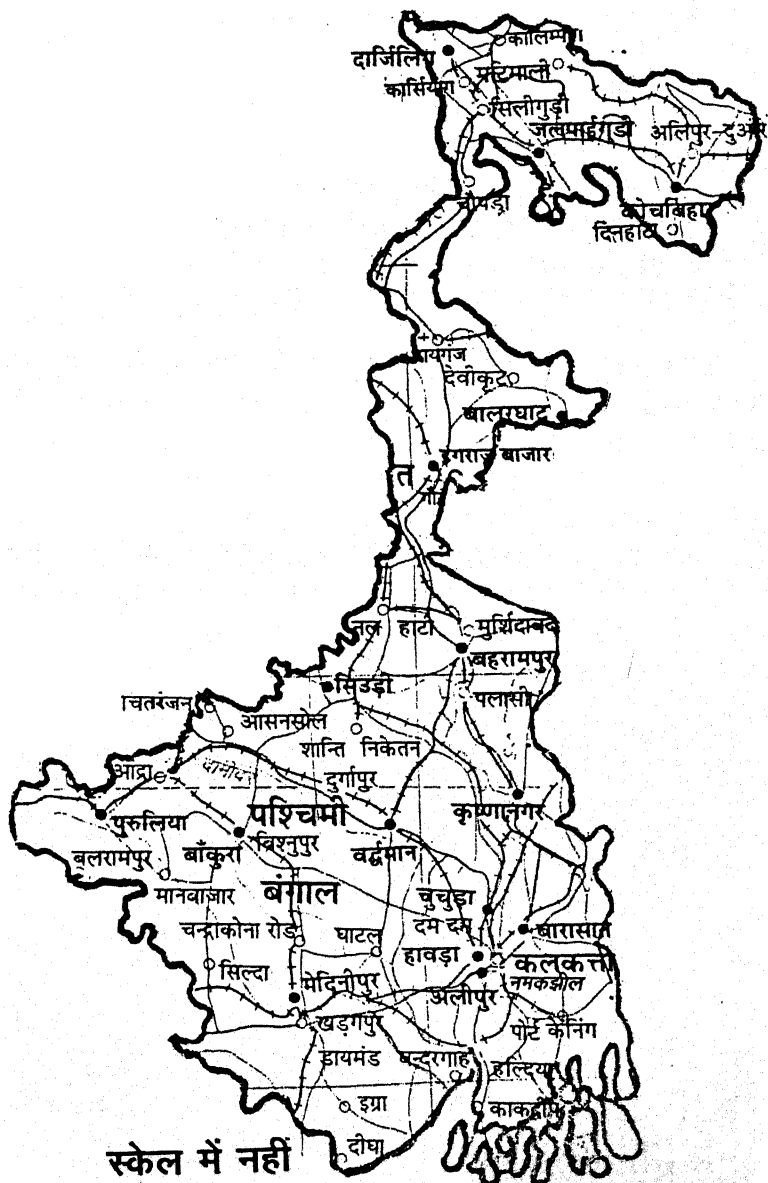
पश्चिमी बंगाल में रणपा नृत्य किया जाता है।

400. अदीना—पुरातात्विक महत्त्व पंडुआ के राजा सिकंदर शाह (1393) ने यहाँ एक भव्य मस्जिद बनवाई थी।

401. कमरपुकुर यह स्थान कलकत्ता से 113 किमी दूर है और श्री रामकृष्ण परमहंस का जन्म स्थान तथा हिंदुओं का धार्मिक स्थल है। श्री रामकृष्ण मिशन की तरफ से यहाँ आवास की भी व्यवस्था है। यह कलकत्ता से सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है।

402. कलकत्ता कलकत्ता आधुनिक पश्चिमी बंगाल की राजधानी है। ब्रिटिश काल में यह बंगाल प्रांत में था। 1688 में बंगाल के व्यापारियों और औरंगजेब के बंगाल के सूबेदार शाइस्ता खाँ के मध्य व्यापार को लेकर कोई विवाद हो गया था। ईस्ट इंडिया कंपनी के गवर्नर सर जोशिया चाइल्ड ने इंग्लैंड के राजा जेम्स द्वितीय की अनुमति से युद्ध कर दिया, परंतु वह औरंगजेब की शक्तिशाली सेना के आगे टिक न सका। 1690 ई० में ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी का एक व्यापारी जोब चारनक कलकत्ता आया था। उसे व्यापार के लिए कोई उचित स्थान चुनना था। उस समय आधुनिक हावड़ा स्टेशन के सामने हुगली
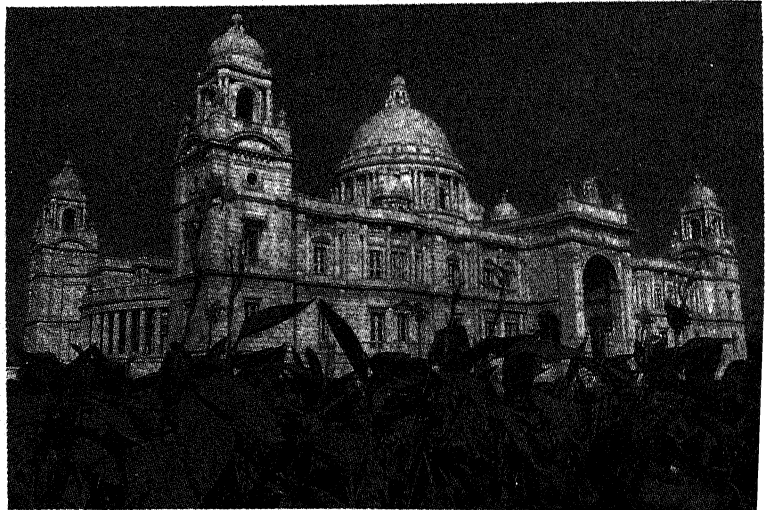
विक्टोरिया मेमोरियल, कलकत्ता

नदी के दूसरी ओर कालीकाता (काली का स्थान), सुतनती और गोबिंदपुर नाम के तीन गाँव थे। हुगली नदी के किनारे स्थित होने के कारण उसे अपने व्यापार के लिए यही स्थान अच्छा लगा। उसने इन्हें औरंगजेब से किराए पर ले लिया। व्यापारिक स्थल की सुरक्षा के लिए कंपनी ने 1696 ई० में फोर्ट विलयम बना लिया। इस प्रकार व्यापार के बहाने अंग्रेजों ने यहाँ अपना एक सैनिक गढ़ तैयार कर लिया। बाद में इस किले के इर्द-गिर्द ही कलकत्ता शहर का विकास हुआ।

राजनैतिक महत्त्व अंग्रेजी कंपनी की व्यापारिक गतिविधि फैलने के साथ कलकत्ता, मद्रास और बंबई की प्रेजीडेंसियों ने 1714 में सम्राट फरुखशियार के दरबार में जॉन सरमन के नेतृत्व में एक प्रतिनिधिमंडल भेजा। उन्होंने विलियम हैमिल्टन, जिसने सम्राट का इलाज किया था, की सहायता से जुलाई, 1717 में तीन फरमान प्राप्त कर लिए। इन फरमानों से कंपनी ने 3000 रु. सालाना शुल्क के अतिरिक्त और कोई शुल्क दिए बिना व्यापार करने, कलकत्ता के आस-पास और कोई क्षेत्र किराये पर लेने तथा कहीं भी रहने का अधिकार प्राप्त कर लिया। बाद में उन्होंने बंगाल के नवाबों से भी अपनी व्यापारिक वस्तुओं को करमुक्त करा लिया। इससे कंपनी को काफी लाभ हुआ, परंतु इसके साथ-साथ कंपनी के अधिकारियों और कर्मचारियों के मन में भी लोभ आ गया। वे कंपनी के माल के बहाने अपना माल भी बेचने लगे। इससे शाही खजाने में भारी घाटा होने लगा। तब 1756 ई० में बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला, जिसकी राजधानी उस समय मुर्शिदाबाद थी, ने 29 जून, 1756 को अंग्रेजों की कासिम बाजार की कोठी पर आक्रमण करके उसे अपने अधिकार में कर लिया। इसके बाद नवाब ने कलकत्ता पर आक्रमण कर दिया। किले में रहने वाले अंग्रेज भाग गए। नवाब ने कलकत्ता अपने अधिकार में कर लिया। परंतु कलकत्ता अधिक दिन तक उसके कब्जे में नहीं रहा। दिसंबर, 1756 में ही क्लाईव मद्रास से आ गया। उसने 2 जनवरी, 1757 को कलकत्ता पर अधिकार कर लिया। क्लाईव और सिराजुद्दौला के मध्य अलीनगर की संधि हुई। साथ ही क्लाईव ने सिराजुद्दौला के एक सेनानायक मीर जाफर को बंगाल का नवाब बनाने का लोभ देकर उसे अपनी ओर कर लिया। इस कारण 23 जून, 1757 ई० को लार्ड क्लाईव और सिराजुद्दौला के मध्य हुए युद्ध में मीर जाफर ने नवाब का साथ नहीं दिया और सिराजुद्दौला की उसी दिन हार हो गई। कलकत्ता कंपनी के हाथों में चला गया। इसके बाद मीर जाफर और मीर कासिम नवाब बने, परंतु अंग्रेजों ने उनके साथ भी वही व्यवहार किया। कंपनी के अधिकारियों ने निजी व्यापार भी जारी रखा। क्लाईव 1757 से 1760 तक यहाँ का गवर्नर रहा। अंग्रेजों की धोखाधड़ी मीर कासिम को

सहन नहीं हुई। उसने मुगल शासक शाह आलम और अवध के नवाब शुजाउद्दौला के साथ मिलकर 22 अक्तूबर, 1764 को अंग्रेज गवर्नर वांसिटार्ट से बक्सर का युद्ध किया, जिसमें अंग्रेजों की विजय हुई। इस युद्ध के बाद बंगाल पर अंग्रेजों का पूरा अधिकार हो गया। युद्ध ने प्लासी का बचा हुआ कार्य पूरा किया। 3 मई, 1765 को क्लाईव बंगाल का गवर्नर फ़िर बना दिया गया। बक्सर के युद्ध के बाद इलाहाबाद और अवध की संधियाँ हुईं। 1772 में वारेन हेस्टिंग्ज ब्रिटिश इंडिया (भारत में अंग्रेजों के अधीनस्थ क्षेत्र) का पहला गवर्नर बना। 1773 में उसने अपनी राजधानी मुर्शिदाबाद से कलकत्ता बदल ली। बाद में कार्नवालिस तथा अन्य गवर्नरों ने यहीं से शासन किया। इस प्रकार बक्सर के 1764 के युद्ध के बाद अंग्रेज व्यापारी की जगह राजा बन गए। 1780 में उन्होंने एक नई जगह फोर्ट विलियम बनवाया और इसके आस-पास के जंगलों को काटकर समतल कर दिया। इस स्थान को आजकल मैदान कहा जाता है। उस समय यह लगभग तीन किमी लंबा और दो किमी चौड़ा होता था। 1780 में कंपनी ने राईटर्ज बिल्डिंग बनवाई, जिसमें कंपनी के राईटरों (क्लर्कों) का दफ्तर था। कांग्रेस का दूसरा अधिवेशन दादाभाई नारोजी की अध्यक्षता में कलकत्ता में ही 1886 में हुआ था। 1905 में लार्ड कर्जन द्वारा बंगाल विभाजन के बाद कलकत्ता आधुनिक पश्चिमी बंगाल में आ गया। इस विभाजन के विरोध में विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार और स्वदेशी आंदोलन की शुरुआत हुई। क्रांतिकारियों ने यहाँ बंब बनाने का एक कारखाना भी खोला था। बाद में यह कारखाना पकड़ा गया और स्वतंत्रता आंदोलन की इस गतिविधि को अंग्रेजों ने अलीपुर षड्यंत्र नाम दिया। 1773 से कलकत्ता ही अंग्रेजों की राजधानी थी, परंतु यह क्रांतिकारियों का गढ़ होने के कारण लार्ड हार्डिंग ने 1911 में अपनी राजधानी कलकत्ता से दिल्ली बदल ली। राष्ट्रवादियों के भारी विरोध के दबाव में 1911 में बंग-भंग आदेश वापस ले लिया गया और कलकत्ता संयुक्त बंगाल प्रांत की राजधानी बनी। स्वराज की माँग काँग्रेस के 1920 के कलकत्ता अधिवेशन में ही पहली बार की गई। स्वराज आंदोलन के कारण बंगाल और केंद्रीय प्रांत में द्वैध शासन प्रणाली समाप्त कर दी गई। 1773 से 1911 तक कलकत्ता से शासन करने वाले ब्रिटिश गवर्नर जनरलों के लिए कृपया **"भारतीय शासक और उनका कालक्रम"** नामक अध्याय देखें।

1911 से 1947 तक कलकत्ता प्रेजीडेंसी के गवर्नर निम्नानुसार रहे :

1912	बैरन कार्मिकल ऑफ स्कर्लिंग
1917	अर्ल आफ रोनाल्डशे
1922 (मार्च)	सर हेनरी व्हीलर

1922	लार्ड लिटन
10 अप्रैल, 1925 - 7 अगस्त, 1925	सर जॉन केर
8 अगस्त, 1925 - 11 जून, 1926	लार्ड लिटन
11 जून, 1926 - 10 अक्तूबर, 1926	सर ह्यूग स्टीफेंशन
11 अक्तूबर, 1926 - 1927	लार्ड लिटन
1927 - 4 जून, 1930	सर फ्रांसिस स्टेनले जैकसन
5 जून, 1930 - अक्तूबर, 1930	सर ह्यूग स्टीफेंशन
अक्तूबर, 1930 - 1932	सर फ्रांसिस स्टेनले जैकसन
1932 - 1934	सर जॉन एंडरसन
अगस्त, 1934 - नवंबर 1937	जॉन वुडहैड
नवंबर, 1937 - जून, 1938	बैरन ब्राबोर्न
जून, 1938 - अक्तूबर, 1938	सर रोबर्ट रीड
तथा	
फरवरी, 1939 - जून, 1939	
जून, 1939	सर जॉन एक्रोयड वुडहैड
1939-1947	सर जॉन आर्थर हर्बर्ट

सामाजिक गतिविधियाँ कलकत्ता भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के मुख्य केंद्रो में से एक था। वारेन हेस्टिंग्ज ने अरबी और फारसी की पढ़ाई के लिए यहाँ 1781 में एक मदरसा खोला था। राजा राममोहन राय ने यहाँ 1814 में आत्मीय सभा, 1817 में हिंदू कालेज और 1828 में ब्रह्म समाज की स्थापना की। 1835 में यहाँ एक मेडिकल कॉलेज और 1857 में यूनिवर्सिटी की स्थापना हुई। 1868 में शिशिर कुमार और मोती लाल घोष ने अमृत बाजार पत्रिका निकालनी आरंभ की, परंतु जब देशी भाषा प्रेस एक्ट से देशी भाषाओं की पत्रिकाओं का मुँह बंद हो गया, तो यह पत्रिका अंग्रेजी में निकलने लगी। 1890 में इसने दैनिक पत्र का रूप ले लिया। जुलाई, 1876 में सुरेंद्र नाथ बनर्जी ने इंडियन एसोशिएशन की स्थापना की, जिसका पहला अधिवेशन आनंद मोहन बोस की अध्यक्षता में कलकत्ता में 1883 में हुआ। 1897 में विवेकानंद ने यहाँ रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। उसके गुरु परमहंस यहाँ के दक्षिणेश्वर मंदिर के पुजारी थे।

दर्शनीय स्थल कलकत्ता में विक्टोरिया मेमोरियल (जो रानी विक्टोरिया की यादगार में 1921 में बनवाया गया था और जिसमें ब्रिटिश शासन के स्मृति शेष रखे गए हैं), राष्ट्रीय संग्रहालय, राष्ट्रीय पुस्तकालय, बिड़ला तारामंडल, ईडन

गार्डन, मेट्रो रेलवे, दक्षिणेश्वर मंदिर, अलीपुर चिड़ियाघर, राजभवन, मार्बल पैलेस तथा पारसनाथ जैन मंदिर दर्शनीय स्थल हैं। यहाँ की परिवहन प्रणालियाँ – ट्राम, हाथ का रिक्शा, स्टीमर और मेट्रो रेलवे – सभी देश में अपनी तरह की अलग प्रणालियाँ हैं। हुगली नदी इस शहर के बीच से गुजरती है।

राष्ट्रीय संग्रहालय देश का सबसे बड़ा संग्रहालय है। डलहौजी स्क्वेयर बंगाल के तीन शहीदों – बिनय, बादल और दिनेश की स्मृति में बनवाया गया था। इसे बीबीडी बाग भी कहते हैं। इस चौक के आस-पास राजभवन, असैंबली हाउस, हाई कोर्ट तथा राईटर्ज बिल्डिंग हैं। काली घाट पर 1809 में स्थापित काली मंदिर बंगाली शैली में बना है। रवींद्र गैलरी में रवींद्र नाथ टैगोर से संबंधित कागजात तथा रवींद्र भारती म्यूजम में उनसे संबंधित वस्तुएँ हैं। चितपुर में रवींद्र नाथ टैगोर का उस समय का निवास स्थान है, जहाँ वे पैदा हुए और 1941 में स्वर्ग सिधारे। नाखुदा मस्जिद एक बड़ी मस्जिद है, जिसमें 10000 लोग नमाज पढ़ सकते हैं। 1867 में स्थापित पारसनाथ जैन मंदिर कलकत्ता के सबसे सुंदर मंदिरों में से एक है। हावड़ा पुल हुगली नदी पर 270 फुट ऊँचे केवल दो खंभों पर टिका हुआ है। यह पुल 1500 फुट लंबा और 71 फुट चौड़ा है। इनके अतिरिक्त यहाँ विद्यासागर सेतु, चौरंगी, जैन मंदिर, मदर हाउस, बोटेनिकल गार्डन, रवींद्र सरोवर, एस्पलेनेड, जोब चारनक का मकबरा और डॉयमंड हार्बर भी दर्शनीय हैं। कलकत्ता में अनेक म्यूजम भी हैं, जिनमें पहले वर्णित विक्टोरिया म्यूजम के अलावा बिड़ला इंडस्ट्रियल एंड टेक्नोलॉजिकल म्यूजम, आशुतोष म्यूजम, अरविंद भवन, इंडियन म्यूजम, नेहरू चिल्ड्रंज म्यूजम, नेताजी भवन, रबींद्र भारती म्यूजम, गुरु सदाय म्यूजम, 43/2 अपर सर्कुलर रोड पर बंगीय साहित्य परिषद का संग्रहालय तथा पार्क स्ट्रीट में एशियाटिक सोसायटी का संग्रहालय प्रमुख हैं।

अन्य दर्शनीय स्थलों में किडरपुर गोदी, टकसाल, रेस कोर्स, कृषि उद्यान, विधान शिशु उद्यान, देशप्रिय पार्क तथा निको पार्क देखे जा सकते हैं।

कलकत्ता के आस-पास के दर्शनीय स्थल कलकत्ता के स्थानीय दर्शनीय स्थलों के अलावा यहाँ आस-पास भी अनेक दर्शनीय स्थल हैं। इनमें बेलुर मठ, श्रीरामपुर (30 किमी), चंद्रनगर (फ्रांसीसी कलोनी) (39 किमी), नवदीप (40 किमी), बंदेल का पिकनिक स्थल (43 किमी), सुंदरबन (131 किमी), बकाहली का समुद्री तट (132 किमी), गंगा सागर का पौष संक्रांति मेला (135 किमी), जयरामबटी (138 किमी), श्री चैतन्य का जन्म स्थान मायापुर (139 किमी), रामकृष्ण परमहंस का जन्म स्थान कमरपुकुर (143 किमी), डीघा का समुद्री तट

(185 किमी), श्री रामकृष्ण परमहंस की पत्नी शारदा देवी का जन्म स्थान तथा प्रमुख हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ कलकत्ता शहर देश के अन्य भागों से रेल, सड़क और वायुमार्ग से जुड़ा हुआ है। शहर में भी बस, ट्राम, टैक्सी, मेट्रो रेलवे, स्टीमर, सर्कुलर रेलवे तथा उपनगरीय रेलगाड़ियाँ आदि आवागमन के पर्याप्त साधन हैं, परंतु यहाँ ट्रैफिक जाम के कारण कभी-कभी आने-जाने में बाधा पहुँचती है। यहाँ रेलवे आरक्षण कार्यालय हावड़ा स्टेशन तथा फेयरली प्लेस के अलावा 14-स्ट्रांड रोड पर नया कोयला घाट पर, 3-कोयलाघाट स्ट्रीट में पुराना कोयलाघाट पर तथा 61-जवाहरलाल नेहरू रोड पर रवींद्र सदन में हैं। ठहरने के लिए यहाँ 226, ऐरिकसन रोड पर विनायक मिश्र की धर्मशाला; 44, बद्रीदास टेंपल स्ट्रीट, मालिक तल्ला में धनसुख दास जेठमाता की जैन धर्मशाला; अगरतला स्ट्रीट में सेठ वासुदेव जेठर भाई धर्मशाला; कलाकार स्ट्रीट, बड़ा बाजार में फूलचंद मुकीन जैन की धर्मशाला; 172, महात्मा गाँधी रोड पर बाड़ा सिख संगत धर्मशाला; 169, ऐमजी रोड पर बाबूलाल अग्रवाल धर्मशाला; 10-ए चितपुर रोड पर श्यामदेव गोपीराम धर्मशाला (केवल जैनियों के लिए); 10, विवेकानंद रोड पर हरियाणा चैरिटेबल सोसायटी की धर्मशाला तथा 164, चितरंजन एवेन्यू में सेठ जमुनालाल बितरेवाल भवन प्रमुख हैं। इनके अतिरिक्त एएएआई का गैस्ट हाउस, कलकत्ता एयरपोर्ट का रेस्ट रूम, हावड़ा स्टेशन पर रेलवे रिटायरिंग रूम और रेलवे यात्री निवास; 25, जवाहरलाल नेहरू रोड तथा 42, ऐसऐन बैनर्जी रोड पर वाईएमसीए का गेस्ट हाउस एवं 1, मिडलटन रोड पर वाईडब्ल्यूसीए के गैस्ट हाउस (सिर्फ महिलाओं के लिए) में भी ठहरने की सुविधा है।

गर्मियों में कलकत्ता का अधिकतम ताममान लगभग 42°से और सर्दियों में न्यूनतम तापमान लगभग 10°से होता है।

पर्यटक सूचना केंद्र पश्चिमी बंगाल सरकार का टूरिस्ट ब्यूरो कलकत्ता दर्शन के लिए प्रतिदिन बसें चलाता है। ये बसें 3/2, टूरिस्ट ब्यूरो, बीबीडी बाग से चलती हैं और वहीं छोड़ती हैं। वहीं से इनकी टिकटें भी मिलती हैं। ब्यूरो के इसी कार्यालय में पर्यटन सूचना केंद्र भी है। कलकत्ता में भारतीय पर्यटन विकास निगम के कार्यालय 45-सी, जवाहरलाल नेहरू मार्ग पर; 4, शैक्सपियर सरणी में तथा 1/1, एजेंसी बोस रोड पर हैं। चित्ररेखा तथा मधुकर लाँच द्वारा सुंदरबन के टूर भी संचालित किए जाते हैं।

403. कामतापुर यह स्थान कूच बिहार के दक्षिण में कुछ मील दूर

है।

ऐतिहासिक महत्त्व पंद्रहवीं शताब्दी के आरंभ में यहाँ खेंस जाति ने अपना शासन स्थापित किया था। तब यह कामत राज्य के रूप में जाना जाता था। उन्होंने यहाँ लगभग 75 वर्षों तक राज्य किया। उनके अंतिम शासक नीलांबर को बंगाल के अलाउद्दीन हुसैन शाह ने लगभग 1498 में गद्दी से उतार दिया। कुछ वर्षों के बाद 1515 ई० में कोच जन-जाति के बिश्वा सिन्हा ने एक शक्तिशाली शासन की स्थापना कर अपनी राजधानी कोच बिहार बदल ली।

404. कालिमपोंग यह कस्बा सिलिगुड़ी-दार्जिलिंग मार्ग पर दार्जिलिंग से पहले आता है। सिलिगुड़ी-गंगटोक मार्ग पर तीसटा पुल से एक रास्ता गंगटोक और दूसरा कालिमपोंग को जाता है। कालिमपोंग इस पुल से 16 किमी दूर 1250 मी की ऊँचाई पर है। दार्जिलिंग के रास्ते में होने के कारण यहाँ पर्यटक काफी संख्या में आते रहते हैं। 1865 तक यह क्षेत्र भूटान शासकों के अधीन था। एंग्लो-भूटान युद्ध के पश्चात् यह अंग्रेजों के नियंत्रण में आ गया।

पर्यटन स्थल कालिमपोंग में मैक्फेयरलेन की याद में बनाया गया एक चर्च वास्तुकला एवं भौगोलिकी की दृष्टि से उत्तम है। इसका निर्माण 1891 में किया गया था। यहाँ का मंगलधाम मंदिर, थरपा चोलिंग बौद्ध विहार, दुरीपन डांडा पहाड़ियों पर 1975 में निर्मित जंगडोंग-पलरिफो बरांग विहार तथा गौरीपुर भवन दर्शनीय हैं। गौरीपुर भवन में रवींद्रनाथ टैगोर ने भी कुछ साल बिताए थे। दुरीपन डांडा के बौद्ध विहारों में 1956 और 1976 में दलाई लामा भी आए थे। कालिमपोंग की प्राकृतिक दृश्यावली के लिए कृपया 'दार्जिलिंग' देखें।

उपलब्ध सुविधाएँ यह शहर न्यू जलपाईगुड़ी (ऐनजेपी) रेलवे स्टेशन से खिलौना गाड़ी के मार्ग में आता है। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा बागडोगरा है। पहाड़ी स्थान होने के कारण यहाँ स्थानीय भ्रमण के लिए केवल जीप ही मिलती है। यूँ कालिमपोंग के सभी पर्यटन स्थल पास-पास होने के कारण इन्हें पैदल घूमकर भी देखा जा सकता है। यहाँ का तापमान दार्जिलिंग जितना ही रहता है।

405. कासिम बाजार यह स्थान कलकत्ता के पास है। सतरहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में यहाँ फ्रांसीसी और पुर्तगाली बस्तियाँ थीं। बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला ने इस पर 29 जून, 1756 को कब्जा कर लिया था। अंग्रेजों ने यहाँ अपनी बस्तियों की किलेबंदी करनी आरंभ कर दी थी, सिराजुद्दौला के

विरोधी शोकत जंग का पक्ष लिया था और एक सौदागर को वापस करने से इन्कार कर दिया था। अंग्रेजों का ऐसा आरोप था कि सिराजुद्दौला ने 146 अंग्रेजों को पकड़कर उन्हें एक कमरे में बंद कर दिया था। इनमें से 123 मर गए बताए। इसे ब्लैक होल कांड नाम दिया गया। इस घटना के फलस्वरूप प्लासी का युद्ध हुआ, जिसमें अंग्रेजों की विजय हुई।

406. कोच बिहार यह स्थान न्यू जलपाईगुड़ी के पूर्व में है। आजकल इसे कूच बिहार कहा जाता है।

ऐतिहासिक महत्त्व 1515 में यहाँ कोच जन-जाति के बिश्वा सिन्हा ने एक शक्तिशाली शासन की स्थापना की थी। वह कामत राज्य का राजा था। उसके बाद उसके पुत्र नर नारायण के काल में राज्य की काफी उन्नति हुई, परंतु 1581 में उसके भतीजे रघुदेव ने उससे संकोष नदी के पूर्व के इलाके छीन लिए। 1639 में इस पर मुस्लिमों ने अधिकार कर लिया। औरंगजेब के बंगाल के सूबेदार मीर जुमला ने 1661 में असम के राजा से कूच बिहार छीन लिया। केशव चंद्र सेन के नेतृत्व में भारतीय ब्रह्म समाज ने प्रयास करके 1872 में बाल विवाह के विरुद्ध विवाह अधिनियम पास कराया था, परंतु जब मार्च, 1878 में केशव चंद्र सेन ने अपनी 13 वर्षीय पुत्री का विवाह यहाँ के 14 वर्षीय राजकुमार के साथ कर दिया, तो उसके अनुयायी विद्रोह करके उससे अलग हो गए और उन्होंने साधारण ब्रह्म समाज की स्थापना कर ली।

407. कोच हाजो यह स्थान संकोष नदी के पूर्व में है।

ऐतिहासिक महत्त्व 1515 से 1581 तक यहाँ कोच बिहार के शासक बिश्वा सिन्हा और उसके पुत्र नर नारायण का शासन था। 1581 में नर नारायण के भतीजे ने उससे संकोष नदी के पूर्व का इलाका छीनकर कोच हाजो में अपना स्वतंत्र शासन स्थापित किया। 1639 में इस पर शान जन-जाति के ही एक गौत्र ओह्म जाति ने कब्जा कर लिया। ओह्म असम में 1215 ई० के आस-पास आए थे।

408. गंगा सागर यह स्थान गंगा नदी के मुहाने पर सुंदरबन के एक द्वीप पर कलकत्ता से 135 किमी दूर है। गंगासागर हिंदुओं का धार्मिक स्थल भी है। जनवरी माह में यहाँ हर वर्ष पौष संक्रांति मेला लगता है। यह कलकत्ता से सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यह एक सुंदर बीच है। कलकत्ता से यहाँ के लिए बसें तथा जलपोत मिल जाते हैं।

पुरातात्विक महत्त्व यहाँ से दूसरी शताब्दी ई०पू० – प्रथम शताब्दी ई० काल के चाँदी के छेद वाले सौ सिक्के और पकी मिट्टी की मुहरे पाई गई हैं। यह काल निर्धारण उन पर लिखे ब्राह्मी अक्षरों की बनावट के आधार पर किया गया है।

409. गौड़—ऐतिहासिक महत्त्व सातवीं शताब्दी में यहाँ शशांक का राज्य था। हर्षवर्धन ने उसे कामरूप (आधुनिक असम) के राजा भास्करवर्मन की सहायता से हरा दिया था। इसके बाद बंगाल के पूर्वी भाग, जिसमें गौड़ पड़ता था, को भास्करवर्मन ने और पश्चिमी भाग को हर्षवर्धन ने अपने साम्राज्य में मिला लिया। आठवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में कन्नौज के यशोवर्मा ने गौड़ के राजा को परास्त किया। इसके बाद कश्मीर के ललितादित्य, कामरूप के श्री हर्ष तथा कुछ अन्य राजाओं ने इस प्रदेश को रौंदा। इस प्रकार जब यहाँ अधिक अराजकता फैल गई, तो जनता ने गोपाल को अपना शासक चुनकर उसे राज्य भार सौंपा। उसने गौड़ में पाल वंश की नींव डाली। गोपाल ने यहाँ 780 ई० तक राज्य किया। उसके बाद धर्मपाल (780-810), देव पाल (810-50) और महीपाल ने राज्य किया। धर्मपाल को अपने अस्तित्व के लिए प्रतिहार राजा वत्सराज से युद्ध करना पड़ा था, परंतु हार गया। परंतु राष्ट्रकूट शासक ध्रुव की सहायता से वह पुनः जीत गया। बाद में उसे प्रतिहार शासक नागभट्ट द्वितीय से पुनः लड़ना पड़ा और पुनः मुँह की खाई। परंतु इस बार उसे राष्ट्रकूट शासक गोबिंद राय की सहायता मिल गई और वह फिर जीत गया। उसके पुत्र देवपाल (815-54) ने असम के राजा को परास्त किया, उत्कल के राजा से अपनी अधीनता स्वीकार कराई, हूणों की शक्ति को भंग किया और नागभट्ट के पुत्र को हराकर प्रतिहारों पर अपना सिक्का जमाया। देवपाल के बाद नारायणपाल (854-60) के शासन में प्रतिहार राजा भोज ने मगध और पाल राज्य के पश्चिमी भाग पर कब्जा कर लिया, परंतु अपनी मृत्यु से पूर्व नारायणपाल ने इन्हें वापस ले लिया। नारायणपाल के बाद राज्यपाल, गोपाल द्वितीय और विग्रहपाल द्वितीय शासक रहे, परंतु ये सब निर्बल राजा थे। चेदि के कलचूरी राजा युवराज प्रथम ने गौड़ के शासक को हराया। दसवीं शताब्दी में चालुक्य राजा यशोवर्मन ने भी गौड़ पर विजय प्राप्त की थी। 992 से 1026 तक महीपाल ने बागडौर संभाली। उसके राज्य में गया, पटना और मुजफ्फरपुर शामिल थे। 1023 में राजेंद्र चोल, कलचूरी और चालुक्य राजाओं ने उस पर आक्रमण किया। उसने इनसे अपने राज्य की रक्षा की। महीपाल के काल में संस्कृति की काफी उन्नति हुई। उसके काल में महमूद गजनवी ने 1025 ई० में सोमनाथ पर आक्रमण किया था। परंतु महीपाल इस

आक्रमण से रक्षा के लिए बने संघ में शामिल न हो सका। उसके उत्तराधिकारी नयपाल को त्रिपुरी के कलचूरी राजा गांगेयदेव ने 1034 में हराकर बनारस पर अधिकार कर लिया। गांगेयदेव के पुत्र कर्ण ने भी नेपाल पर आक्रमण किया। एक बौद्ध दीपंकर श्रीज्ञान ने दोनों के मध्य संधि कराई। नयपाल के पश्चात विग्रहपाल तृतीय राजा बना। कर्ण ने उस पर भी आक्रमण किया, परंतु हार गया। उसने अपनी पुत्री यौवनश्री का विवाह पाल राजा से किया। ग्यारहवीं शताब्दी के अंत में दक्षिण कौशल के सोमवंशी राजा महाशिवगुप्त तृतीय ने गौड़ के राजा को हरा दिया था। 1070 में महीपाल द्वितीय राजा बना। उसे कुछ विद्रोहियों ने हराकर मार दिया। उसके बाद दिव्यकैर्त और भीम राजा बने। महीपाल द्वितीय के भाई रामपाल ने भीम को हराकर उत्तरी बंगाल पर फिर अधिकार कर लिया। उसने कामरूप को जीता, पूर्वी बंगाल के वर्मा शासक से अपनी अधीनता स्वीकार कराई, गहड़वाल राजा गोविंद चंद्र से युद्ध करके उसे पूर्व की ओर बढ़ने से रोका तथा उड़ीसा राज्य के एक दावेदार को सहायता देकर उसे वहाँ का राजा बनाया। इस प्रकार रामपाल ने बंगाल को फिर शक्तिशाली राजा बना दिया। उसकी मृत्यु 1120 में हुई। रामपाल के पुत्र कुमारपाल और मदनपाल के राज्य कालों में सामंतों ने फिर विद्रोह कर दिया। गहड़वाल शासकों ने मगध पर अधिकार कर लिया। कर्नाटक के कुछ शासकों ने उत्तर बिहार में अपना स्वतंत्र राज्य स्थापित कर लिया। बारहवीं शताब्दी के मध्य में दक्षिण कौशल के सोमवंशी राजा महाशिवगुप्त तृतीय के पुत्र उद्योत-केसरी महाभवगुप्त चतुर्थ ने गौड़ के राजा को हराया। पश्चिमी बंगाल में सेन राजाओं ने अपनी शक्ति बढ़ा ली। मदनपाल बिहार के कुछ भाग पर 1160 ई० तक राज्य करता रहा। अंत में विजयसेन ने अपने पुत्र लक्ष्मण सेन की सहायता से गौड़ पर अधिकार कर लिया। विजयसेन (1160-78) के बाद बल्लाल सेन ने और उसके बाद लक्ष्मण सेन ने 1178 में शासन की बागडौर संभाली। लक्ष्मण सेन ने अपनी राजधानी लखनौती बदल ली। 1197 ई० में कुतुबुद्दीन ऐबक ने बख्तियार खिलजी की सहायता से पाल वंश को बिल्कुल नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। 1493 में पंडुआ के अबीसीनियाई शासक शमसुद्दीन अबु नासर मुजफ्फरशाह की मृत्यु के बाद उसके अरब मंत्री अलाउद्दीन हुसैनशाह ने शासन की बागडौर अपने हाथ में ले ली और गौड़ में हुसैनशाही वंश की स्थापना की। उसने असम के शासक से कामरूप तथा जौनपुर के शर्की शासक से मगध को छीनकर अपने राज्य में मिला लिया, परंतु असम के शासक ने कामरूप शीघ्र ही वापस ले लिया। हुसैनशाह ने 1498 में कोच बिहार में कामतापुर छीन लिया। 1518 में उसका सबसे बड़ा पुत्र नसीब खाँ राजा बना। उसने नासिरुद्दीन नुसरत शाह नाम धारण किया। उसने तिरहुत के राजा को

मारकर अलाउद्दीन और मखदूम-ए-आलम को वहाँ का शासन कार्य सौंपा। 1533 में उसकी मृत्यु के बाद अलाउद्दीन फिरोजशाह तथा ग्यासुद्दीन महमूद शाह शासक बने। ग्यासुद्दीन महमूद शाह बंगाल में हुसैनशाही वंश का अंतिम शासक था। उसे शेरखाँ ने गद्दी से उतार दिया। गौड़ शेरशाह सूरी के बंगाल प्रांत की राजधानी भी थी। हुमायूँ उसकी अनुपस्थिति में इसे जीतकर यहाँ 1530 ई० में आठ महीनों तक रहा था, जबकि शेरशाह यहाँ के खजाने को पहले ही स्थानांतरित कर चुका था।

पुरातात्विक महत्त्व नासिरुद्दीन महमूद (1412-60) ने यहाँ कुछ इमारतें बनवाई थीं। हुसैनशाह (1493-1528) ने यहाँ अपना ईंट का मकबरा बनवाया। नुसरत शाह (1518-33) द्वारा बनवाई गई सुप्रसिद्ध सोन मस्जिद और कदम रसूल यहीं पर हैं।

410. चंद्रनगर यह स्थान कलकत्ता से 39 किमी दूर है। इसकी स्थापना फ्राँसिस मार्टिन द्वारा 1690-92 में की गई थी। मार्च 1757 में अंग्रेजों के हाथों परास्त होने तक यह फ्रांसीसियों का गढ़ था। इसे चंदननगर भी कहा जाता है।

411. चिंसुरा 17वीं शताब्दी में यह एक पुर्तगाली बस्ती थी। 1759 ई० में अंग्रेजों ने इसे उनसे छीन लिया। यहाँ डचों ने अपना एक कारखाना खोला था।

412. जयरामबटी यह स्थान कलकत्ता से 138 किमी दूर है। यह श्री रामकृष्ण परमहंस की पत्नी शारदा देवी के जन्म स्थान के रूप में जाना जाता है और हिंदुओं का धार्मिक स्थल है। यह कलकत्ता से सड़क मार्ग से जुड़ा है। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा विष्णुपुर है।

413. जलदापाड़ा विहार यह विहार भूटान की सीमा के पास तोंरसा नदी के दोनों ओर फैला हुआ है। इसकी स्थापना 1943 में की गई थी। गैंडों के लिए यह एक अच्छा विहार माना जाता है। गैंडों के अलावा यहाँ जंगली सूअर, हाथी, हरिण, सांभर, गौर और तेंदुए देखने को मिलते है। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय नवंबर से अप्रैल तक का होता है। निकटतम रेलवे स्टेशन ऐनजेपी ओर निकटतम हवाई अड्डा बागडोगरा है। यहाँ ठहरने के लिए से टूरिस्ट लॉज है।

414. डीघा डीघा कलकत्ता से 163 किमी की दूरी पर एक खूबसूरत

तट है। प्राकृतिक संपदा से भरपूर और छह किमी लंबा यह तट संसार के लंबे समुद्री तटों में गिना जाता है। यह पश्चिमी बंगाल का सबसे लोकप्रिय तट भी है। डीघा के पास दादनपात्र में नमक बनाया जाता है। यहाँ से लगभग आठ किमी दूर चंदनेश्वर में एक प्राचीन शिव मंदिर है। दस किमी दूर शंकरपुर मछली बंदरगाह तथा लगभग 41 किमी दूर दरियापुर में एक प्रकाश स्तंभ है। इतनी ही दूर समुद्री जीवों संबंधी एक संग्रहालय है। डीघा से सागर द्वीप भी जाया जा सकता है, जहाँ गंगा समुद्र में मिलती है। यहाँ पर प्रति वर्ष मकर संक्रांति के अवसर पर मेला लगता है। कपिल मुनि का आश्रम यहीं पर था।

उपलब्ध सुविधाएँ डीघा जाने के लिए पहले कलकत्ता से खड्गपुर तक रेलगाड़ी से जाना होता है। फिर बस से डीघा जाया जा सकता है। टूरिस्ट ब्यूरो कलकत्ता से डीघा के लिए प्रतिदिन बसें भी चलता है। कलकत्ता में एस्प्लेनेड, गोल पार्क अथवा उल्टा डांगा बस अड्डों से साधारण बसें भी ली जा सकती हैं। वहाँ से ये बसें छह घंटों में डीघा पहुँचा देती हैं। डीघा में ठहरने के लिए टूरिस्ट काटेज तथा यूथ होस्टल हैं। सागर द्वीप में यूथ होस्टल तथा भारत सेवा संघ की धर्मशाला है।

415. तामलुक कृपया ताम्रलिप्ति देखें।

416. ताम्रलिप्ति ताम्रलिप्ति पश्चिमी बंगाल में गंगा के पूर्व-पश्चिमी डेल्टा पर स्थित है। इसे तामलुक भी कहा जाता है।

व्यापार मौर्य-पूर्व और मौर्य काल के दौरान यह एक बंदरगाह थी। यहाँ से दक्षिण-पूर्व एशिया, चीन, बर्मा, जावा, सुमात्रा, कम्बोडिया और रोम के साथ व्यापार किया जाता था। रोम भारत को शराब, दुहत्थे कलश और लाल रंग के चमकीले बर्तन तथा चीन रेशमी वस्तुएँ भेजता था। भारत से इन देशों को मोती, बहुमूल्य रत्न, वस्त्र, मसाले, हाथी दाँत की वस्तुएँ, नील, दवाइयाँ, नारियल और सुगंधित तेल भेजे जाते थे। सड़क मार्ग से यह स्थान पाटलीपुत्र, प्रयाग, कान्यकुब्ज और पुष्कलावती से जुड़ा हुआ था। यहाँ पाए गए 200 ई०पू० के 350 सिक्कों से सिद्ध होता है कि यह स्थान उन दिनों व्यापार का प्रमुख केंद्र था। यहाँ अशोक का स्तूप और बहुत से बौद्ध मठ भी पाए गए हैं। इन बौद्ध मठों में अनेक बौद्ध रहते थे। सांस्कृतिक दृष्टि से भी प्राचीन काल में यह एक महत्त्वपूर्ण शहर था।

417. तिरहुत—ऐतिहासिक महत्त्व ग्यारहवीं शताब्दी के अंत में

तिरहुत में कर्नाटक के राजा नान्यदेव का शासन था। उसने नेपाल पर अधिकार करके उस राज्य पर 1118 तक शासन किया। उसके बाद नेपाल के राजा स्वतंत्र रूप से शासन करने लगे, परंतु उन्हें तिरहुत के राजाओं का आधिपत्य स्वीकार करना पड़ा। ग्यासुद्दीन तुगलक ने बंगाल के बहादुर बूर पर विजय प्राप्त करने के बाद दिल्ली लौटते समय तिरहुत के राजा हरिसिंह पर 1324 ई० में आक्रमण किया। हरिसिंह नेपाल भाग गया। वहाँ उसने आसानी से अपना कब्जा कर लिया और उसके वंशज वहाँ 100 वर्षों तक राज्य करते रहे। पंडुआ के हाजी इलियास (1345-57) ने तिरहुत के राजा से खिराज वसूल किया था। नुसरत शाह (1528-30) ने तिरहुत पर विजय प्राप्त करके इसे बंगाल के हुसैनी राज्य में मिला दिया। उसने यहाँ का शासन अलाउद्दीन और मखदूम-ए-आलम को सौंपा। कुछ समय बाद ही शेर खाँ ने इसे अपने राज्य में मिला लिया। अकबर ने तिरहुत को अपने साम्राज्य 1576 ई० में मिलाया।

418. दामोदरपुर—पुरातात्विक महत्त्व यह स्थान अपने कई ताम्रलेखों के लिए जाना जाता है। एक ताम्रलेख कुमारगुप्त प्रथम (414-55) ई० का है। 482 ई० के ताम्रलेख सं० 2 से ज्ञात होता है कि गुप्त राजा बुधगुप्त उस समय अपनी परकाष्ठा पर था। 543 ई० के एक लेख से ज्ञात होता है कि उत्तरी बंगाल के शासक उस समय तक गुप्त सम्राटों को अपना अधिपति मानते थे। इसी वर्ष के लेख सं० 5 में कुमारगुप्त तृतीय (543-49) को परमदैवत परमभट्टारक महाराजाधिराज पृथ्वीपति कहा गया है, जिससे पता लगता है कि गुप्त साम्राज्य की सीमा अभी तक काफी विस्तृत थी तथा पुंड्रवर्धन और अयोध्या अभी भी गुप्त साम्राज्य में सम्मिलित थे।

419. दार्जिलिंग हिमालय पर्वत की पूर्वोत्तर श्रृंखलाओं में बसा शांतमना दार्जिलिंग शहर पर्यटकों को बरबस ही अपनी ओर आकर्षित कर लेता है। लगभग 7000 फुट तक की ऊँची श्रृंखलाओं को काट-काटकर बसा यह ढलवाँ शहर पर्यटकों के लिए नयनाभिराम दृश्य प्रस्तुत करता है। अत्यंत साफ-सुथरा दार्जिलिंग अपने निश्छल-हृदय निवासियों का प्रतिबिंब है। यह ऐसा शहर है, जिसकी यात्रा के आरंभ-स्थल से ही मन रोमांचित होना शुरू हो जाता है। इसकी यात्रा का वह आरंभ-स्थल है न्यू जलपाईगुड़ी स्टेशन, जिसे संक्षेप में ऐनजेपी भी कहते हैं। दार्जिलिंग के लिए ऐनजेपी स्टेशन से रेलगाड़ी पकड़नी होती है। यह गाड़ी खिलौना गाड़ी के नाम से ज्यादा जानी जाती है। इसे 1881 में फ्रैंकलिन प्रैस्टेज द्वारा चलाया गया था। ज्यों-ज्यों हम ऐनजेपी से दार्जिलिंग की ओर बढ़ते हैं, इसका चुंबकीय आकर्षण हमें बरबस अपनी ओर खींचता

महसूस होता है। इसी आकर्षणवश हम प्रकृति की गोद में समाते चले जाते हैं। दार्जिलिंग वस्तुतः प्रकृति की गोद है। इस गोद में जो आकर्षण है, जो स्नेह है, जो मधुरता है और जो विशालता है, वह यहाँ की घाटियाँ स्वयंमेव अनुभव करा देती हैं। दार्जिलिंग की यात्रा का प्रत्येक घटक तथा प्रत्येक पहलू अपने आप में विशिष्ट है।

यह रेल भारत की सबसे छोटी पटरी पर चलती है। इसमें बस जितने केवल दो-चार डिब्बे होते हैं। तीन या चार डिब्बे होने पर एक डिब्बा प्रथम श्रेणी का होता है। डीलक्स बस की तरह इसके शीशे बड़े-बड़े होते हैं तथा सीटों के मध्य ऊपर छत तक कोई पार्टीशन नहीं होता, यानि खुला डिब्बा होता है। इन डिब्बों का रंग हल्का नीला होता है। इस रेलगाड़ी का इंजन आकार में दरियाई घोड़े जितना होता है। हाथी इसके इंजन से दुगुना लंबा-चौड़ा और ऊँचा लगता
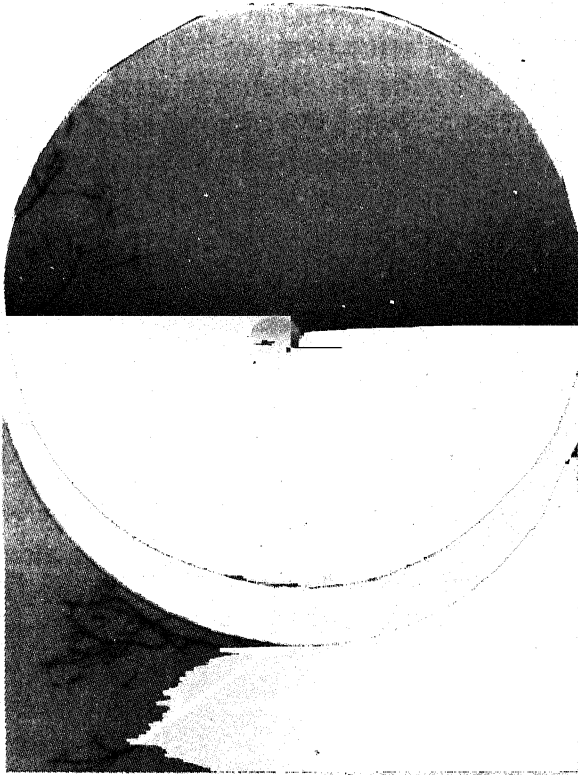
दार्जिलिंग का सूर्योदय

है। यदि चलने से पहले हाथी इसके आगे अड़कर टक्कर ले ले, तो शायद यह चल न पाए। इसकी पानी की टंकी से ज्यादा पानी ऊँट अपने पेट में समा सकता है, इसीलिए इसे रास्ते में हर घंटे बाद पानी लेना पड़ता है। फिर जैसा इसका इंजन है, वैसी ही इसकी गति है। आधुनिक जमाने में जहाँ 350 किमी प्रति घंटा की गति से गाड़ियाँ दौड़ती हैं, उसे देखते हुए इसकी गति को गति नहीं कहा जा सकता। ऐनजेपी से दार्जिलिंग के बीच 88 किमी लंबा सफर यह गाड़ी औसतन 11 किमी प्रति घंटा की दर से आठ घंटे में तय करती है। शताब्दी और राजधानी एक्स्प्रैस आपको इतनी दूर 45 मिनट में ही पहुँचा देंगी। फिर भी इस गाड़ी से यात्रा करने के अपने अलग आकर्षण और लाभ हैं। हजारों फुट ऊँचे पहाड़ों के किनारों पर बनी सड़क पर यदि आप बस से सफर करेंगे, तो बस के बार-बार मुड़ने, ब्रेक लगने, संकरे किनारे से गुजरने और नीचे घाटी की गहराई और ऊपर पर्वत की ऊँचाई देखकर आपका दिल दहलने लगता है। हर समय यही भय बना रहता है कि बस अब गिरी, अब गिरी। हालाँकि ऐसी कोई विशेष बात आमतौर पर नहीं होती। फिर भी ऐसे दुर्गम रास्तों से अनभ्यस्त अनेक यायावर अपना साहस खो बैठते हैं और उनको बार-बार उल्टियाँ, पेशाब तथा चक्कर आता है और उनका जी मचलने लगता है। इस प्रकार वे अपना साहस खोकर सफर का सारा आनंद ही खो बैठते हैं। रेल से सफर करने पर हमारी सुरक्षा सुनिश्चित है, उपर्युक्त शिकायतें नहीं होतीं और हम निश्चिंत होकर यात्रा का आनंद उठा सकते हैं।

पर्यटन मानचित्र पर दार्जिलिंग का एक विशेष स्थान होने के कारण इस छोटी सी रेलगाड़ी में ही आपको भारत के विभिन्न भागों के लोगों और विदेशी पर्यटकों से भी मुलाकात हो जाएगी और आप यात्रा का अधिक लुत्फ उठा सकेंगे। इसके अतिरिक्त रेलगाड़ी में स्थानीय लोग भी होने के कारण आपकी किंचित जिज्ञासाओं, उदाहरणार्थ ठहरने के लिए होटल, दार्जिलिंग में दर्शनीय स्थल, उपलब्ध वाहन आदि का भी समाधान होता जाएगा और आप एक आश्वस्त पर्यटक के रूप में दार्जिलिंग में प्रवेश करेंगे।

हालाँकि पर्वतीय बच्चों को व्यायाम की कोई कमी नहीं होती, फिर भी यह रेलगाड़ी उनके व्यायाम और मनोरंजन दोनों का अच्छा साधन है। रेलगाड़ी से होड़ में आगे निकलकर वे ड्राइवर और यात्रियों को चिढ़ाते रहते हैं, बार-बार चढ़ते हैं, उतरते हैं, पानी पीते हैं और फिर दौड़कर चढ़ जाते हैं। जो भी हो, ये बाल-सुलभ चंचलताएँ वहाँ देखने में आती रहती हैं। आपने सड़कें तो मुख्य बाजारों के बीच से गुजरती देखी होंगी, परंतु रेल-पटरी या रेलगाड़ी नहीं। परंतु खिलौना गाड़ी के मामले में ऐसा नहीं है। यह बाजारों और घरों के बीच से

निस्संकोच आती-जाती है। कई जगह दुकानों के शो-केस और गाड़ी के बीच इतना अंतर रह जाता है कि उनके बीच आदमी का बचना मुश्किल हो जाता है। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं कि कोई बच्चा चलती गाड़ी से बिना हाथ बढ़ाए किसी की दुकान से केला तोड़ ले या अपने घर की देहली में खड़े किसी व्यक्ति से हाथ मिलाता चले। परंतु ऐसी शरारतें प्रायः नहीं होतीं, अन्यथा दुकानदार भी रेलगाड़ी में चढ़कर उनकी मरम्मत कर सकता है। और तो और, पहाड़ों से छलाँग लगाकर बंदर भी रेल की छत पर सवारी का आनंद उठाते रहते हैं।

ऐनजेपी से गाड़ी में बैठते ही मन प्रश्न करने लगता है कि कैसा होगा दार्जिलिंग का रास्ता। जी हाँ, प्रश्न सही उठता है। परंतु आप एक बात जान लीजिए कि जब पहाड़ हैं, तो रास्ता पहाड़ी यानि जंगली, मोड़-ताड़ वाला, चढ़वाँ-ढलवाँ, घुमावदार तो होगा ही। इसके लिए आप तैयार होकर चलें। ऐनजेपी से सिलीगुड़ी जं. और उससे कुछ आगे तक एक घंटे का मैदानी इलाका है। इसके बाद ताड़, देवदार, बाँस के पेड़ों से ढका पहाड़ी सफर आरंभ हो जाता है और इसके साथ ही आरंभ हो जाता है वह रोमांच, जिसकी आप आशा करके आए थे। सिलिगुड़ी जं. के बाद सड़क रेलवे लाइन की साथिन हो जाती है और दार्जिलिंग तक साथ निभाती है। आपने सड़क को रेलवे लाइन क्रॉस करते देखा होगा, परंतु यहाँ रेलवे लाइन सड़क को बार-बार क्रॉस करती है। कभी इसके बीचों-बीच चलती है, कभी दाएँ किनारे, कभी बाएँ किनारे। कहीं रेलवे लाइन के ऊपर सड़क का पुल है और कहीं सड़क के ऊपर रेलवे लाइन का पुल। इस प्रकार कहीं रेल बस के ऊपर और कहीं बस रेल के ऊपर चलती दिखाई देती है। इस पहाड़ी दुर्गम रास्ते में रेलवे यातायात सुगम बनाने के लिए कई तकनीकों का प्रयोग किया गया है। रेलगाड़ी का चलना कई तरह नियत किया गया है क्षैतिज, ऊर्ध्वज, गोलाकार और स्तरित रूप में। क्षैतिज रूप में गाड़ी मैदानी इलाकों की तरह सीधी चलती जाती है। ऊर्ध्वज रूप में गाड़ी सीधी दूरी तय करने की बजाय ऊँचाई प्राप्त करती है। इसके लिए आवश्यकतानुसार किसी जगह विशेष पर रेलवे लाइन बंद कर दी गई है और वहाँ से दूसरी लाइन, जो पहली लाइन की दिशा में ही उल्टी जाती हुई ऊँचाई प्राप्त करती जाती है, कुछ दूरी तक जाती है। चूँकि दूसरी लाइन पर रेलगाड़ी को वापस पहली लाइन की दिशा में जाना होता है, अतः दूसरी लाइन पर इंजन पीछे से ही रेलगाड़ी को धकेलता है। थोड़ी दूर जाने पर दूसरी लाइन भी बंद हो जाती है और वहाँ से एक तीसरी लाइन फिर दूसरी लाइन से ऊँचाई प्राप्त करती जाती है। तीसरी लाइन पर इंजन फिर रेलगाड़ी के आगे होता है। गोलाकार लाइन, जिसे लूप कहते हैं, गोल छल्ले की भाँति ऊँचाई ग्रहण करती जाती है। स्तरित रूप में लाइन किसी पहाड़ी के एक

ही ओर कुछ-कुछ ऊँचाई/निचाई पर कई-कई जगह दिखाई देती है। इस विधि से रेलगाड़ी पहाड़ पर चढ़ती है या उससे नीचे उतरती है। कई बार एक किमी की दूरी तय करने के लिए छह-छह किमी की दूरी तय करनी होती है। भूस्खलन रोकने के लिए कई जगह रेलवे लाइन के पचासों फुट नीचे से पत्थरों की रोक लगाई गई है। इन पत्थरों की चिनाई नहीं की गई, बल्कि इन्हें अच्छी तरह जँचा कर तार-जालियों से बाँध दिया गया है। कई जगह घाटियों में ऊँचाई पर पुल बनाए गए हैं। सड़क और रेलवे लाइन साथ-साथ होने के कारण वाहन तथा रेलगाड़ी कंधे से कंधा मिलाकर चलते हैं। वाहन, बच्चे तथा साइकिलमैन रेलगाड़ी से आगे बढ़ कर रेलवे लाइन क्रॉस करते रहते हैं। पहाड़ियों पर जो त्रिस्तरीय लाइन की बात कही गई है, उसमें रेलगाड़ी को निचली लाइन से ऊपर तीसरी लाइन पर पहुँचने में या ऊपरी लाइन से निचली लाइन पर पहुँचने में घंटे भर का समय लग जाता है। इन लाइनों के बीच जिसका घर होता है, वह रेलगाड़ी से उतरकर पहाड़ पर पैदल ही सीधी उतराई/चढ़ाई के बाद खाना-पीना करके घंटे भर बाद पुनः रेलगाड़ी पकड़ लेता है।

इस रेलगाड़ी को ढलानों में अपनी गति बढ़ने और चढ़ाइयों पर वापस फिसलने का भी डर बना रहता है अर्थात् ढलान पर अधिक गति और चढ़ाई पर कम गति दोनों ही इसके लिए खतरनाक साबित होती हैं। गति को नियंत्रित करने के लिए इसके ब्रेक ही काफी नहीं होते, बल्कि इंजन के आगे दोनों ओर बैठे दो आदमी रेलवे लाइन पर रेत डालते रहते हैं। जहाँ भी गाड़ी रुकती है, वहीं इसके इंजन की सरसरी जाँच अवश्य कर ली जाती है और कुछ ठोक-पीट भी होती रहती है। इसके इंजन में ड्राइवरों के खड़े होने के लिए दो फुट की ही जगह होती है। लाइन बदलने के लिए जगह-जगह छोटी-छोटी चौकियाँ बनी हैं।

अब प्रकृति की देन, वातावरण की बात करते हैं। दार्जिलिंग पहुँचते-पहुँचते यहाँ के पर्यावरण के दर्शन से ऐसी अनुभूति होने लगती है, मानों वस्तुतः स्वर्ग लोक पहुँच गए हों। फिल्मों में स्वर्ग के जो दृश्य दिखाई देते हैं, वे यहाँ साकार रूप लिए होते हैं, जिस कारण यहाँ का पर्यावरण महसूस ही नहीं होता, बल्कि उसका दर्शन, साक्षात् दर्शन होता है। जी हाँ, आप चाहें तो बादलों को अपने आलिंगन में ले लें, हिम-कण युक्त शीतल पवन को मुट्ठी में भर लें या बादलों में लुप्त हो जाएँ। आप बादलों में विचरण करते हैं, उससे भी ऊपर। मैदानी इलाकों में हमें ऐसा महसूस होता है मानो बादल न जाने कितनी ऊपर हों। परंतु यहाँ बादल आपके ऊपर नहीं, आपके नीचे होते हैं। देखने में आता है कि नीचे घाटियाँ बादलों से ढकी पड़ी हैं और आप बादलों की पालकी पर बैठे हैं। ऊपर साफ वातावरण है, धूप निकली हुई है, जबकि नीचे मैदानों में बादल

छाए होने के कारण सूरज दिखाई नहीं देता, अंधेरा-सा लगता है। दार्जिलिंग (आकाशीय बिजली का घर) में बादल साक्षात रूप धारण करते हुए दिखाई देते है। आप देखेंगे कि बादल आपके हजारों फुट नीचे से बनकर ऊपर की ओर चले आ रहे हैं। ठंडे दिनों में विशेषकर वसंत ऋतु में यह मेघ-दर्शन ज्यादा, मनोरम एवं सुखद होता है। यहाँ पता लगता है कि बादल क्या होते हैं, कैसे बनते हैं और वर्षा कैसे होती है। यहाँ पुस्तकों में दिए गए पाठ नहीं, बल्कि इनका व्यावहारिक रूप सामने आता है। जैसे हम धुएँ के बीच से गुजर सकते हैं, वैसे ही यहाँ पहाड़ों पर गहराए बादलों के बीच से गुजर सकते हैं। मैदानों में छाए कुहासे या धुंध को जलकण-युक्त बादलों का ही एक रूप कह सकते हैं, जो देव-कृपा से कभी-कभी अपनी अनुभूति कराने नीचे चले आते हैं। ठंडे मौसम में यहाँ ऊँचे-ऊँचे पहाड़ों से जब नीचे पहाड़ियों पर देखते हैं, तो पहाड़ियों की बजाय बादलों का ही समुद्र दिखाई देता है। बादल उठते-गिरते, लहराते, चमकते, दमकते और अठखेलियाँ करते नजर आते हैं। ऐसा महसूस होता है, जैसे इनके नीचे कोई दुनिया नहीं है और सब शून्य ही शून्य होगा। हम स्वर्ग में उड़ान भरते महसूस करते हैं और दिल करता है कि अपने नीचे फैले बादलों पर जा बैठें। आँखें होने का फायदा यहीं नजर आता है।

यह वह प्रदेश है, जहाँ शाम होती नहीं, बल्कि उतरती नजर आती है। धीरे-धीरे पहाड़ियों से ओझल होता सूरज और उसके साथ गिरता हुआ अंधेरा हमें एक प्राकृतिक परिवर्तन का मूक दर्शक बना देते हैं। अंधकार के साथ यहाँ सब कुछ विलुप्त नहीं होता। नीचे घरों और गलियों की बस्तियाँ तारों-सी टिमटिमाती हैं और अपने नीचे कोई आसमान होने का आभास कराती हैं। ऊपर भी तारे चमकते दिखाई देते हैं और नीचे भी तारे-से चमकते दिखाई देते हैं। ऐसा लगता है मानो हम कहीं अंतरिक्ष में खो गए हों। रात होने पर यहाँ वाहनों की दौड़-धूप और कोलाहल बंद हो जाता है। तब यह समूचा प्रदेश प्रकृति की शरण में चला गया हुआ लगता है। जब भोर छँटती है, तो छिटकती और चटकती हुई सी महसूस होती है। प्राकृतिक फूल-पंत्तियाँ सूर्य की रोशनी की चमक में खिलती हुई और हँसती हुई सी दिखाई देती हैं। कभी कोई पहाड़ी नवारूण (प्रातःकाल का सूर्य) की आभा से लोहित होती हुई दिखाई देती है तो कभी कोई। छिटकता हुआ यह प्रकाश-पुंज फिर इस उपत्यका में एक नया जीवन प्रदान कर अलसाये मानुष में स्फूर्ति भर देता है।

जब दिन निकलता है और हम नीचे अति दूर फैले मैदानी इलाके को देखते हैं, तो वह पाताल-सा नजर आता है। ऊपर पहाड़ पर बैठे हम यह नहीं मान सकते कि यह मैदानी विस्तार पाताल नहीं है तथा यह कि तथाकथित

पाताल लोक इसके भी नीचे है। यहाँ विभिन्न कारणों से हुए प्रकाशकीय परावर्तन से धरती माँ का मुख-मंडल दैदीप्यमान होता लगता है।

पर्यटन स्थल अभी तक आपने दार्जिलिंग तक पहुँचने के रास्ते का दिग्दर्शन किया है। आइए, अब दार्जिलिंग का दर्शन भी करें। दार्जिलिंग से पहले घुम नाम का एक कस्बा आता है, जिसकी ऊँचाई 7407 फुट है। कहा जाता है कि घुम विश्व में दूसरा सबसे ऊँचा रेलवे स्टेशन है। पूर्वोत्तर भारत में दार्जिलिंग से बेहतर कोई पर्यटन स्थल नहीं है। आकाश-भेदी हिमाच्छादित चोटियाँ इसकी भव्यता एवं सुंदरता में चार चाँद लगा देती हैं। इस शहर की अनेक जगहों से आपको के-2, जानू, काब्रू आदि उन हिमशिखरों के दर्शन हो जाते हैं, जिनका संसार में कोई ही सानी है। के-2 विश्व की तीसरी सर्वोच्च चोटी है। इसकी ऊँचाई 28156 फुट है। महान हिमालय की गोदी में समाए दार्जिलिंग से सर्वत्र मनोहारी दृश्य देखने को मिलते हैं।

दार्जिलिंग में टाइगर हिल, बतासिया लूप (5 किमी), बौद्ध मठ (घुम) (आठ किमी) और धीर धाम मंदिर, तेनजिंग रॉक, गोंबू रॉक, हिमालय पर्वतारोहण संस्थान (दो किमी), चिड़ियाघर, फुलवाड़ी, नेच्युरल हिस्ट्री म्यूजम, शिव को समर्पित महाकाल गुफा में वेधशाला, राजभवन, विश्व का सबसे छोटा रेस कोर्स लेबांग, लाल कोठी, रणजीत वैल्ली रोपवे, भूटिया तिब्बती मठ, आलूबाड़ी मठ, हैप्पी वैल्ली टी इस्टेट आदि अनेक दर्शनीय स्थल हैं। इनमें से टाइगर हिल, बौद्ध मठ (घुम), हिमालय पर्वतारोहण संस्थान तथा रज्जु मार्ग अधिक आकर्षक हैं। टाइगर हिल शहर से लगभग तेरह किमी दूर और लगभग 8482 फुट ऊँची है। यहाँ से स्वर्णिम सूर्योदय का रोमांचक दर्शन होता है। के-2 भी यहाँ से साफ दिखाई देती है। रज्जु-मार्ग की सवारी रोमांचक है, परंतु बहुत महंगी है। फुलवाड़ी के लिए विलियम लायड ने 1878 में जमीन दान में दी थी।

ट्रैकरों के लिए भी दार्जिलिंग एक अनुकूल जगह है। यहाँ से फलूत (160 किमी), बिजनबाड़ी (153 किमी) और मानीभजांग (180 किमी) तक के तीन ट्रैक-पथ हैं। सिंगालिला श्रेणी में स्थित संदाक्फू दार्जिलिंग जिले की सर्वोच्च चोटी (11929 फुट) है और ट्रैकरों का स्वर्ग है।

दार्जिलिंग से बाहर 49 किमी दूर मिरिक झील 5800 फुट की ऊँचाई पर एक अच्छा पर्यटन स्थल है। यह यहाँ से लगभग एक घंटे की दूरी पर है। यह झील लगभग 1.25 किमी लंबी है। यहाँ नौकायन तथा सस्ते होस्टल व कॉटेज उपलब्ध हैं। टाइगर हिल के पास की सैंचाल झील, सिंगला बाजार, बिजनबाड़ी आदि भी पिकनिक मनाने की अच्छी जगहें हैं। यहाँ से गंगटोक, कालिमपोंग (51

किमी) आदि जगह भी जाया जा सकता है। कालिमपोंग पेडोंग, थोस्सा, थारपा आदि मठों के लिए प्रसिद्ध है। दार्जिलिंग जाते समय रास्ते में कुर्सियांग और सिलिगुड़ी भी देखे जा सकते हैं।

दार्जिलिंग की कुछ अन्य विशिष्टताएँ

1) दार्जिलिंग का रज्जु-मार्ग सवारी बैठाने के भारत के गिने-चुने रज्जु-मार्गों में से एक है। यहाँ एक-दो कंपनियों ने भी सामान ढोने के लिए अपने रज्जु-मार्ग बनाए हुए हैं।

2) दार्जिलिंग की छोटी लाइन भारत की तीन छोटी लाइनों में से एक है। दूसरी छोटी लाइन कालका-शिमला के बीच है और तीसरी मेट्टुपालयम्-ऊटी (कर्नाटक) के बीच है।

3) यहाँ बौद्ध मठ अधिक संख्या में पाए जाते हैं। यह बौद्ध धर्म और दर्शन के अध्ययन का अच्छा केंद्र है।

4) यहाँ भारत-प्रसिद्ध हिमालय पर्वतारोहण संस्थान है, जहाँ माउंट एवरेस्ट पर चढ़ने का प्रशिक्षण दिया जाता है। इसे 1954 में नेहरू जी ने स्थापित किया था।

5) दार्जिलिंग की मुख्य खेती चाय है। यहाँ की चाय अपने जायके के लिए पूरे विश्व में प्रसिद्ध है। संसार की सबसे महंगी चाय (लगभग 10,000 रु. प्रति किलोग्राम) के बाग यहीं पर हैं। यहाँ चाय की फैक्टरियाँ भी हैं।

6) दार्जिलिंग जिले के एक ओर नेपाल तथा दूसरी ओर भूटान देश है। इसके तीसरी ओर सिक्किम है, जो स्वयं पहले एक स्वतंत्र देश था और अब भारत का एक हिस्सा (राज्य) है। चीन की सीमा भी यहाँ से कुछ ही घंटों की दूरी पर है! टूरिस्ट ब्यूरो की मिरिक जाने वाली बस नेपाल सीमा पर बसे पशुपति नगर होकर जाती है।

7) दार्जिलिंग पश्चिमी बंगाल का एक जिला है। पश्चिमी बंगाल ही भारत का एक ऐसा राज्य है, जो हिमालय पर्वत और समुद्र दोनों से जुड़ा हुआ है।

8) दार्जिलिंग के लोग हृस्ट-पुष्ट, भोले-भाले तथा परिश्रमी हैं।

9) यहाँ अंग्रेजी, हिंदी, गोरखा और बंगला भाषाएँ बोली और समझी जाती हैं।

10) यहाँ देवदार तथा बाँस के वृक्ष बहुतायत में हैं।

11) यहाँ गर्मियों के दिनों में अधिकतम तापमान 14.89 डिग्री से. तथा न्यूनतम तापमान 8.59 डिग्री से. होता है। इस प्रकार यहाँ गर्मियों में भी पूरी बाजू के गर्म कपड़े पहनने पड़ते हैं। सर्दियों में अधिकतम तथा न्यूनतम तापमान क्रमशः 6.1°से और 1.5°से होता है। यहाँ चलने वाली ठंडी हवा तथा पल-पल में छाने वाले

बादलों के कारण मौसम बदलने में देर नहीं लगती। एक ही दिन में कई बार भी मौसम बदल सकता है। यहाँ घूमने के लिए अप्रैल से जून और सितंबर से नवंबर तक का समय ठीक रहता है।

12) यहाँ का प्रशासन नगरपालिका की बजाय दार्जिलिंग गोरखा पर्वतीय परिषद द्वारा चलाया जाता है। यह परिषद एक स्वतंत्र प्रशासनिक इकाई है।

13) दार्जिलिंग से निकटतम हवाई अड्डा 90 किमी दूर बागडोगरा है। स्थानीय भ्रमण के लिए यहाँ जीपें मिलती हैं। पहाड़ी क्षेत्र देखने के लिए चौरस्ता से खच्चर भी किराए पर मिलते हैं।

पर्यटक सहायता केंद्र दार्जिलिंग में पश्चिमी बंगाल सरकार के पर्यटक सूचना केंद्र 1, नेहरू रोड पर; सिल्वर फर, भानु सरणी में; दार्जिलिंग रेलवे स्टेशन पर; न्यू कार पार्क, लेडन ला रोड पर तथा बागडोगरा हवाई अड्डे पर हैं। इनके अतिरिक्त सिल्वर फर, भानु सरणी में दार्जिलिंग गोरखा पर्वतीय परिषद द्वारा नियंत्रित पर्यटन कार्यालय भी है। दार्जिलिंग टूरिस्ट ब्यूरो टाइगर हिल, दार्जिलिंग व गंगटोक के लिए टूर संचालित करता है।

निवास सुविधाएँ दार्जिलिंग में माल रोड पर भानु सरणी में पश्चिमी बंगाल पर्यटन विकास निगम का टूरिस्ट लॉज है, जहाँ सस्ती दर पर रहने की सुविधा है। डॉ. जाकिर हुसैन रोड पर प. बंगाल सरकार का यूथ होस्टल है, जो मुख्यतः छात्र पर्यटकों के लिए है। कुर्सियाँग में टूरिस्ट सेंटर तथा स्नो व्यू यूथ होस्टल हैं।

इनके अतिरिक्त दार्जिलिंग के घर-घर तथा गली-गली में हर स्तर के टूरिस्ट होटल हैं। दार्जिलिंग पहुँचते ही इन होटलों के एजेंट आपको रेलवे स्टेशन, बस स्टैंड आदि पर अपने आप ही मिल जाएँगे। परंतु यदि मौसम साफ हो और आपके पास सामान ज्यादा न हो, तो इन एजेंटों के चक्कर में न आएँ और अपनी पसंद का होटल ढूँढने में कोई कोताही न बरतें।

420. नवद्वीप नवद्वीप कलकत्ता से 120 किमी दूर है। प्राचीन काल में यह संस्कृत शिक्षा और वैष्णव दर्शन के लिए प्रसिद्ध था। नवद्वीप कभी श्री चैतन्य के आंदोलन से भी जुड़ा हुआ था। कलकत्ता से यह रेल एवं सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है।

421. नादिया—ऐतिहासिक महत्त्व नादिया सेन राजपूतों की राजधानी थी। मुहम्मद गौरी के सहायक सेनानायक बख्तियार खिलजी ने नादिया

पर 1197 ई० में घोड़ों के सौदागर के रूप में उस समय आक्रमण कर दिया, जिस समय यहाँ का राजा लक्ष्मण सेन युद्ध के लिए तैयार न था। फलस्वरूप वह यहाँ से भाग खड़ा हुआ। गौरी ने बंगाल पर आधिपत्य कर लिया और बख्तियार खिलजी को बंगाल तथा बिहार का राज्यपाल बना दिया। 1206 ई० में गौरी की मृत्यु के बाद बख्तियार खिलजी यहाँ का स्वतंत्र शासक बन बैठा। बाद में अली मर्दान ने बख्तियार खिलजी का वध करके नादिया पर क़ब्जा कर लिया, परंतु इसका भी उसी के सेनानायकों द्वारा वध कर दिया गया। नादिया को लेकर एक ओर इसके सूबेदार तथा उसके पुत्र व दूसरी ओर अल्तमश के मध्य 1225 से 1230 तक युद्ध होते रहे। श्रीकृष्ण के प्रसिद्ध अनुयायी चैतन्य महाप्रभु का जन्म नादिया में ही 1485 ई० में हुआ था।

422. नेयोरा राष्ट्रीय पार्क यह पार्क भूटान की सीमा के साथ लगता हुआ हिमालय पर्वत की तलहटी में स्थित है। इस पार्क में जंगली बिल्ली, हाथी, तेंदुए, सांभर और तरह-तरह के पक्षी विचरण करते रहते हैं। वर्षा ऋतु को छोड़कर यहाँ साल में कभी भी जाया जा सकता है। यहाँ से निकटतम बड़ा शहर न्यू जलपाईगुड़ी तथा निकटतम हवाई अड्डा बागडोगरा है।

423. पंडुआ यह स्थान गोलपाड़ा के निकट है। मध्य काल में यह बंगाल प्रांत का एक हिस्सा हुआ करता था।

ऐतिहासिक महत्त्व मुहम्मद तुगलक के काल में अलाउद्दीन अली शाह (1339-45) ने अपने आपको लखनौती में स्वतंत्र घोषित कर तत्कालीन बंगाल प्रांत के पश्चिमी हिस्सों पर कब्जा कर लिया और अपनी राजधानी लखनौती से पंडुआ बदल ली। 1345 में उसके सौतेले भाई हाजी इलियास ने अपने आपको पूरे बंगाल प्रांत का स्वतंत्र शासक घोषित कर लिया और अपने राज्य की सीमा पश्चिम में बनारस तक बढ़ा ली। फिरोजशाह तुगलक ने उस पर चढ़ाई करके उससे एक संधि की और इलियास एक स्वतंत्र शासक की तरह बना रहा। उसने उड़ीसा पर आक्रमण करके चिल्का झील तक के इलाके को रौंद डाला। उसके बाद उसका पुत्र सिकंदर 1357 में यहाँ का शासक बना। फिरोज ने बंगाल को जीतने का प्रयास एक बार फिर किया, परंतु सफल न हो सका। 1398 में तैमूरलंग के आक्रमण के बाद दिल्ली सल्तनत की शक्ति और क्षीण हो गई और यहाँ के शासक आजम शाह (1389-1409) को अब दिल्ली का कोई डर न रहा। आजम शाह ने चीन में एक राजदूत भेजा और एक राजदूत चीन से उसके दरबार में आया। उसके बाद 1410 में शैफुद्दीन हमजा शाह, 1411 में शाहबुद्दीन

बयाजिद शाह और उसके बाद अलाउद्दीन फिरोज शाह शासक बने, परंतु ये सब भाटूरिया और दीनाजपुर के राजा गणेश और उसके बाद जादू उर्फ जलालुद्दीन मुहम्मद शाह के हाथों में कठपुतली बने रहे। मुहम्मद शाह के बाद शमसुद्दीन अहमद (1431-42), नासिर खाँ, इलियास का पोता नासिरुद्दीन अब्दुल मुजफ्फर मुहम्मद शाह (1443-60), रुकनुद्दीन बरबक शाह (1462-74), शमसुद्दीन अब्दुल मुजफ्फर युसुफ शाह (1474-81), सिकंदर द्वितीय, जलालुद्दीन फाथ शाह (1481-86), बरबक शाह, इंदिल खाँ उर्फ सैफुद्दीन फिरोज (1486-89) तथा नासिरुद्दीन महमूद शाह द्वितीय (1489-90) शासक बने। शाह द्वितीय को एक अबीसीनियाई सेनानायक सीदी बदर ने मार दिया और स्वयं शमसुद्दीन अबु नासर मुजफ्फर शाह (1490-93) नाम से शासक बन बैठा। मुजफ्फर शाह एक अत्याचारी शासक था, जिस कारण उसके सैनिकों में काफी असंतोष था। उन्होंने उसे 1493 में गौड़ में चार महीनों तक घेरे रखा, जिस दौरान उसकी मृत्यु हो गई। उसके बाद उसके अरब मंत्री अलाउद्दीन हुसैन ने गौड़ में हुसैनशाही वंश के शासन की स्थापना की।

424. प्लासी यह मुर्शिदाबाद के दक्षिण में 23 मील दूर एक गाँव है।

ऐतिहासिक महत्त्व मुर्शिदाबाद के नवाब सिराजुद्दौला द्वारा कलकत्ता में तथाकथित ब्लैक होल दुर्घटना में 123 अंग्रेज मार दिए जाने के बाद क्लाईव ने उससे बदला लेने की ठान ली। उसने नवाब के वित्त मंत्री राय दुर्लभ, प्रमुख सेनापति मीर जाफर और कलकत्ता के सबसे धनी व्यापारी जगत सेठ को विद्रोह के लिए उकसाकर सेठ अमीचंद के माध्यम से षड्यंत्र किया, जिसके तहत मीर जाफर द्वारा युद्ध के दौरान सिराजुद्दौला का साथ न देना तय हुआ। 23 जून, 1757 को यहाँ क्लाईव और सिराजुद्दौला के मध्य एक युद्ध हुआ। षड्यंत्र के अनुसार मीर जाफर ने सिराजुद्दौला का साथ नहीं दिया। सिराजुद्दौला हार गया। वह प्लासी से मुर्शिदाबाद और मुर्शिदाबाद से पटना भाग गया। परंतु मीर जाफर के पुत्र मीरन ने उसे पकड़कर उसकी हत्या कर दी। इस विजय से भारत में अंग्रेजी राज्य का मार्ग प्रशस्त हो गया। क्लाईव ने मीर जाफर को नवाब बनाया, परंतु मीर जाफर को एक करोड़ रु. का हर्जाना देने के साथ-साथ अंग्रेजों के सारे अधिकार वापस करने पड़े। उसे अंग्रेजों को चौबीस परगना सौंपना पड़ा। उसने अंग्रेज अधिकारियों को काफी भेंट दी, जिसमें क्लाईव का हिस्सा उन दिनों 3,34,000 पौंड (लगभग 16700000 रु.) था।

425. बंदेल यह स्थान कलकत्ता से 48 किमी दूर है। यह एक अच्छा

पिकनिक स्थल है। यहाँ पुर्तगालियों के समय की एक अच्छी इमारत भी है। यह कलकत्ता से रेल तथा सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है।

426. बकरेश्वर यह स्थान कलकत्ता से 229 किमी दूर है। यह अपने गर्म पानी के चश्मों तथा हिंदुओं के धार्मिक स्थल के रूप में प्रसिद्ध है। यहाँ रहने के लिए एक टूरिस्ट लॉज है। यह कलकत्ता से सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। निकटतम रेलवे स्टेशन बोलपुर/शांतिनिकेतन है।

427. बकाहली यह स्थान पश्चिमी बंगाल में कलकत्ता से 132 किमी दूर है। यह अपने आकर्षक समुद्री तट के लिए जाना जाता है। यहाँ के लिए कलकत्ता से रेलगाड़ियाँ, बसें, टैक्सियाँ आदि उपलब्ध रहती हैं। यहाँ ठहरने के लिए एक टूरिस्ट लॉज है।

428. बेलूर बेलूर कलकत्ता से 16 किमी दूर है। यहाँ विवेकानंद द्वारा 1897 में एक मठ स्थापित करवाया गया था, जिसमें रामकृष्ण परमहंस का मुख्यालय है। मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारे और गिरजाघर के मिले-जुले रूप में बना यह मठ सांप्रदायिक सद्भाव का प्रतीक है। कलकत्ता से यहाँ के लिए रेल, बसें तथा जलयान चलते हैं।

निकटतम हवाई अड्डा कलकत्ता है।

429. बैरकपुर—ऐतिहासिक महत्त्व लार्ड एम्हर्स्ट के काल (1823-26) में यहाँ एक सैनिक आंदोलन हुआ था। उसने यहाँ स्थित एक हिंदू टुकड़ी को बर्मा युद्ध में भाग लेने का आदेश दिया। हिंदू सैनिकों का विचार था कि दूसरे देश में जाने से उनका धर्म भ्रष्ट हो जाएगा। अतः उन्होंने यह आदेश मानने से इन्कार कर दिया। एम्हर्स्ट ने अनेक सैनिकों को मारने का आदेश दे दिया। बैरकपुर ही वह स्थान है, जहाँ प्रथम स्वतंत्रता आंदोलन की चिंगारी प्रज्वलित हुई। यहाँ पर एक अंग्रेजी कंपनी ठहरी हुई थी, जिसमें अनेक हिंदू और मुस्लिम सिपाही थे। ऐसा विश्वास है कि अंग्रेज इन सैनिकों को गाय और सूअर की चर्बी वाले कारतूस प्रयोग करने के लिए देते थे। 29 मार्च, 1857 को एक सैनिक मंगल पांडे ने ऐसे कारतूसों का प्रयोग करने से मना कर दिया और तीन अंग्रेज अधिकारियों को मार डाला, जिनमें मेजर हसन भी शामिल था। परंतु जनरल हियरसे ने शीघ्र ही आंदोलन को दबा दिया। अंग्रेजों ने 8 अप्रैल, 1857 को मंगल पांडे को मौत की सजा सुनाई। यहीं से स्वतंत्रता के प्रथम संग्राम का सूत्रपात हो गया।

430. महानंदा जीव विहार यह विहार 1976 में स्थापित किया गया था। यहाँ पर तेंदुए, हाथी, गौर, सांभर, सेराँव, हरिण, भालू आदि मिलते हैं। यहाँ से निकटतम स्टेशन सिलीगुड़ी आठ किमी की दूरी पर है। निकटतम हवाई अड्डा बागडोगरा है। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय नवंबर से मार्च तक का होता है।

431. मायापुर मायापुर पश्चिमी बंगाल में कलकत्ता से 114 किमी दूर है। यह इस्कॉन का मुख्यालय है। यह श्री चैतन्य का जन्म स्थान होने के कारण यहाँ उनको समर्पित अनेक मंदिर हैं। यह कलकत्ता से रेल एवं सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है।

432. मुर्शिदाबाद यह शहर कलकत्ता से 221 किमी दूर है।

ऐतिहासिक महत्त्व औरंगजेब के समय में आजिम यहाँ का सूबेदार था। औरंगजेब की मृत्यु के बाद वह अपने दीवान और नाएब सूबेदार मुर्शीद कुली जाफर खाँ को शासन-भार सौंपकर दिल्ली चला गया। 1713 में फरुखसियार ने मुर्शीद कुली जाफर खाँ को बंगाल का और 1719 में बिहार का सूबेदार बना दिया। 1727 में मुर्शीद कुली की मृत्यु के बाद उसका बेटा शुजाउद्दीन सूबेदार बना। 1733 में शुजाउद्दीन को बिहार का शासन भार सौंप दिया गया। 1739 में उसकी मृत्यु के बाद उसका बेटा सरफराज खाँ तीनों प्रांतों का नवाब बना। 1740 में अलीवर्दी खाँ सरफराज खाँ को मारकर स्वयं नवाब बन गया। दिल्ली के सम्राट ने उससे दो करोड़ रु. की भेंट लेकर उसकी सूबेदारी को मान्यता दे दी। साहू के पेशवा बालाजी बाजीराव ने मुर्शिदाबाद जीतकर चौथ के रूप में 12 करोड़ रुपये वसूले। अलीवर्दी खाँ के बाद उसके भाई का पोता मिर्जा मुहम्मद उर्फ सिराजुद्दौला (1756-57) यहाँ का नवाब बना। सिराजुद्दौला का अंग्रेजों से कई मामलों में टकराव हो गया। अंग्रेज कंपनी के माल के बदले तीनों सूबों में अपने माल का निःशुल्क व्यापार कर रहे थे, सिराजुद्दौला ने तथाकथित ब्लैक होल कांड में 123 अंग्रेजों को मरवा दिया था आदि, आदि। फलस्वरूप दोनों के मध्य में 1757 प्लासी का युद्ध हुआ, जिसमें सिराजुद्दौला के सेनापति मीर जाफर ने उसका साथ नहीं दिया। प्लासी के युद्ध में क्लाईव ने सिराजुद्दौला को हराकर उसे मुर्शिदाबाद की ओर भागने को विवश कर दिया, परंतु मीर जाफर के पुत्र मीरन ने उसे पकड़कर मार दिया। क्लाईव ने युद्ध क्षतिपूर्ति, भेंट आदि लेकर मीर जाफर (1757-60) को बंगाल का नवाब बना दिया। 1760 में उसके दामाद मीर कासिम ने अंग्रेजों से गुप्त संधि करके बंगाल की नवाबी

हथिया ली। उसने बंगाल पर 1760 से 1763 तक राज्य किया। उसने अपनी राजधानी मुर्शिदाबाद से मुंगेर बदल ली। मेजर एडम्ज ने उसे 1763 ई० में हरा दिया। 1773 ई० में वारेन हेस्टिंग्ज ने अपनी राजधानी मुर्शिदाबाद से कलकत्ता बदल ली। यूनाईटिड ईस्ट इंडिया कंपनी के मुर्शिदाबाद से शासन करने वाले गवर्नर जनरलों के लिए कृपया **"भारतीय शासक और उनका कालक्रम"** नामक अध्याय देखें।

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों में मुर्शिदाबाद भारतीय हस्तकला का मुख्य केंद्र था, जिससे पर्याप्त मात्रा में विदेशी मुद्रा अर्जित होती थी।

हातरा मस्जिद तथा हजारद्वारी यहाँ की दर्शनीय ईमारतें हैं। हजारद्वारी को अब संग्रहालय में बदल दिया गया है। यहाँ से 12 किमी दूर बरहामपुर में डब्ल्यूबीटीडीसी का टूरिस्ट लॉज है। यह कलकत्ता से सड़क व रेल मार्ग से जुड़ा हुआ है।

433. लखनौती—ऐतिहासिक महत्त्व इख्तियारुद्दीन मुहम्मद-बिन-बख्तियार खिलजी ने यहाँ के सेन राजा लक्ष्मण सेन (1178-1205) पर 1202 में उस समय आक्रमण कर दिया, जब यह उस की राजधानी थी और वह युद्ध के लिए बिल्कुल तैयार न था। हालाँकि लक्ष्मण सेन बिना लड़े लखनौती छोड़कर भाग गया था, परंतु बंगाल के पूर्वी हिस्से पर उसका शासन 1205 तक बना रहा। 1206 में मुहम्मद गौरी की मृत्यु के बाद भी बख्तियार खिलजी ने यहाँ ऐबक के प्रतिनिधि के रूप में ही शासन किया। परंतु अली मर्दान उसकी हत्या करके स्वयं शासक बन गया। खिलजी सरदार उसके इस कार्य से नाराज हो गए। उन्होंने उसे पकड़कर जेल में डाल दिया और महमूद शेख को शासक बना दिया। अली मर्दान बचकर कुतुबुद्दीन ऐबक के पास लाहौर पहुँच गया और उसकी सहायता पाकर पुनः बंगाल का सूबेदार बन गया। 1210 में ऐबक की मृत्यु के बाद वह स्वतंत्र हो गया, परंतु वह एक निर्दयी शासक था। उसके सरदारों ने उसके विरुद्ध विद्रोह करके उसकी हत्या कर दी और एवाज को अपना शासक चुना। एवाज ने ग्यासुद्दीन की उपाधि धारण की और अल्तमश का आधिपत्य अस्वीकार कर दिया। अल्तमश ने जब 1225 में उस पर धावा बोला, तो उसने आधिपत्य स्वीकार कर लिया और सुल्तान की उपाधि त्याग दी। साथ ही बिहार पर भी अधिकार छोड़ दिया। परंतु अल्तमश के लौटते ही उसने फिर अपने आपको बंगाल का स्वतंत्र शासक घोषित कर लिया और बिहार पर पुनः कब्जा कर लिया। बाद में अल्तमश के पुत्र नासिरुद्दीन ने उसकी हत्या कर दी। अल्तमश ने नासिरुद्दीन को बंगाल का सूबेदार नियुक्त कर दिया। 1230 में नासिरुद्दीन

की मृत्यु हो गई। मौका पाकर ग्यासुद्दीन के पुत्र ने बंगाल पर अधिकार कर लिया। 1230-32 में अल्तमश ने बंगाल पर पुनः आक्रमण किया। ग्यासुद्दीन का पुत्र मारा गया और अलाउद्दीन जनी बंगाल का नया सूबेदार बना।

बलबन के समय में यहाँ का सूबेदार तुर्गिल खाँ था। उसने अपने आपको स्वतंत्र घोषित कर लिया था। बलबन ने उसे दबाने के लिए अमीर खाँ और बाद में मलिक तर्गी को भेजा, परंतु ये दोनों सफल न हो सके। तब बलबन ने लखनौती पर स्वयं चढ़ाई की। तुर्गिल बंगाल छोड़कर भाग गया। बलबन ने अपने पुत्र बुगरा खाँ को बंगाल और बिहार का सूबेदार बना दिया। बलबन की मृत्यु के बाद बुगरा खाँ ने 1287 में अपने आपको स्वतंत्र घोषित कर लिया और सुल्तान नसीरुद्दीन नया नाम ग्रहण किया। ग्यासुद्दीन तुगलक के समय तक यहाँ बलबन के वंशजों का ही राज्य था। जब वह दिल्ली का शासक बना, उस समय यहाँ का शासक बहादुर बूर था और बंगाल गृह-युद्ध की आग में जल रहा था। ग्यासुद्दीन ने स्थिति का लाभ उठाकर 1324 में स्वयं बहादुर बूर को पराजित किया और नासिरुद्दीन को बंगाल का सूबेदार नियुक्त कर दिया। उसने लखनौती को बंगाल का एक मंडल बनाया। मुहम्मद तुगलक ने कादर खाँ को यहाँ का सूबेदार बनाया था। कुछ दिनों बाद अलाउद्दीन अली शाह (1339-45) ने अपने आपको स्वतंत्र घोषित करके अपनी राजधानी लखनौती से पंडुआ बदल ली। 1542 में मालवा में मुल्लु खाँ उर्फ कादिर शाह को हराने के बाद उसे लखनौती का सूबेदार बना दिया गया था।

434. विष्णुपुर यह स्थान पश्चिमी बंगाल में कलकत्ता से 200 किमी दूर है। यह 17वीं-18वीं सदी के बंगाल टेराकोटा मंदिर के लिए जाना जाता है। यह ध्रुपद शैली के भारतीय शास्त्रीय गायन पद्धति के उद्भव-स्थान के रूप में भी जाना जाता है। यहाँ जुलाई-अगस्त में झापन सर्प उत्सव मनाया जाता है। यहाँ डब्ल्यूडीटीसी का टूरिस्ट बंगला आवासीय सुविधा प्रदान कराता है। यह कलकत्ता व अन्य शहरों से सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है।

435. शांतिनिकेतन इस शहर की स्थापना प्रकृति और मनुष्य के रिस्ते की बारीकियों को समझते हुए कविवर रविंद्रनाथ ने 1901 में की थी। यहाँ उन्होंने खुली जगह में कक्षाएँ चलाने की शुरुआत की थी। यह स्थान अब विश्वभारती विश्वविद्यालय के लिए जाना जाता है। इस विश्वविद्यालय में रवींद्र भवन तथा उत्तरायण देखने लायक हैं। रवींद्र भवन में रवींद्र नाथ टैगोर से संबंधित वस्तुएँ रखी हैं। उत्तरायण वह स्थान है, जहाँ उन्होंने अपने जीवन के अंतिम दिन बिताए थे। यहाँ से तीन किमी दूर श्रीनिकेतन ग्रामीण पुनर्निर्माण केंद्र

है, जिसकी स्थापना ग्रामीण पुनरुत्थान के लिए विश्वभारती की एक संस्था के रूप में की गई थी। यहाँ की चमड़े की वस्तुएँ, पॉटरी आदि अपने डिजाइन के लिए जाने जाते हैं। शांतिनिकेतन से तीन किमी दूर बल्लभपुर डीयर पार्क, 8 किमी दूर कंनकाली ताला, 23 किमी दूर नानूर, 42 किमी दूर गीत गोविंद के रचयिता जयदेव का जन्म स्थान केंडुली, 59 किमी दूर बकरेश्वर, 80 किमी दूर तारापीठ और 104 किमी दूर नाहाटी तीर्थ स्थल हैं। शांतिनिकेतन से 78 किमी दूर मयूराक्षी नामक नदी पर मासनजोर बाँध भी देखा जा सकता है।

उपलब्ध सुविधाएँ यह स्थान देश के अन्य शहरों से रेल व सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। निकटतम हवाई अड्डा कलकत्ता (212 किमी) है। यहाँ ठहरने के लिए विश्वविद्यालय का गेस्ट हाउस, पीडब्ल्यूडी का निरीक्षण भवन, वन विभाग का रैस्ट हाउस, टूरिस्ट लॉज, जिला परिषद् का डाक बंगला तथा रेलवे रिटायरिंग रूम के अलावा कई छोटे-बड़े होटल हैं।

436. श्रीरामपुर कलकत्ता से 30 किमी दूर स्थित श्रीरामपुर एक डेनमार्क कलोनी है, जहाँ डेनमार्क सरकार की एक इमारत तथा एक कब्रगाह है। यहाँ 1818 में स्थापित श्रीरामपुर कॉलिज बंगाल पुनर्जागरण का एक केंद्र रहा है। यह कलकत्ता से सड़क व रेल मार्ग से जुड़ा हुआ है।

437. सातगाँव—ऐतिहासिक महत्त्व ग्यासुद्दीन तुगलक ने जब बंगाल को तीन मंडलों में विभाजित किया था, तो उनमें से एक मंडल सातगाँव था। मुहम्मद तुगलक ने यहाँ इज-उद्-दीन आजम-उल-मुल्क को सूबेदार नियुक्त किया। नासिरुद्दीन अब्दुल मुजफ्फर महमूद शाह (1443-60) ने यहाँ एक मस्जिद बनवाई थी।

438. सुंदरबन राष्ट्रीय पार्क यह पार्क गंगा और ब्रह्मपुत्र नदियों के पठारी भाग में है और देश के महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय पार्कों में से एक है। यह बाघ संरक्षण का एक प्रमुख केंद्र है। भारत में सबसे अधिक बाघ यहीं पाए जाते हैं। सुंदरबन की मिट्टी लवणयुक्त है। यहाँ मछलियों का अपार भंडार है। पार्क बाघों के अलावा बड़े-बड़े डील-डौल वाले रोयल बंगाल टाइगर का मुख्य निवास भी है। बाघ तथा रोयल बंगाल टाइगर के अलावा यहाँ घड़ियाल, मछली खाने वाली बिल्ली, चंदनगोह, छोटी पूँछ का बंदर, सांभर और चीतल भी देखने को मिलते हैं। सुंदरबन बंगाल की खाड़ी के तट पर स्थित होने के कारण यहाँ तरह-तरह के जल पक्षी भी दिखाई देते हैं, जिनमें चैती, सीतपर, लालसर, किलकिला,

हम्मावर, टीकरी, बगुला, सारस, पैलीकान और बत्तख प्रमुख हैं। यहाँ पर देश से अलग तरह के जीव-जंतु मिलने के कारण यहाँ देशी और विदेशी पर्यटकों का ताँता लगा रहता है। यहाँ भ्रमण के लिए सितंबर से मार्च तक का समय सबसे अच्छा रहता है।

उपलब्ध सुविधाएँ यहाँ से निकटतम बड़ा शहर 50 किमी दूर जसावा और निकटतम हवाई अड्डा 166 किमी दूर कलकत्ता है। यहाँ सज्नेखली टूरिस्ट बंगले तथा जलयानों में ठहरने की व्यवस्था है।

439. सुनारगाँव इतिहास में सुनारगाँव अपनी व्यापारिक गतिविधियों के कारण प्रसिद्ध है। सल्तनत काल में यह प्रांतीय मुख्यालय और मुबारकशाह की राजधानी था। ग्यासुद्दीन तुगलक के काल में यह एक मंडल था। उसके बनाए हुए सिक्के कला के बेजोड़ नमूने माने जाते थे। मुहम्मद तुगलक ने ग्यासुद्दीन बहादुरशाह तथा उसके सौतेले भाई तारतार खाँ (बहराम खाँ) को सुनारगाँव का सूबेदार बनाया था। शीघ्र ही ग्यासुद्दीन ने विद्रोह कर दिया और सुनारगाँव तथा ग्यासपुर में अपने नाम के सिक्के जारी कर दिए। परंतु उसे शीघ्र ही हरा दिया और मार दिया गया। बहराम खाँ यहाँ का अकेला सूबेदार बना। 1336 में बहराम खाँ की मृत्यु के बाद उसके कवच धारक फखरुद्दीन ने फखरुद्दीन मुबारकशाह के नाम से अपने आपको बंगाल का शासक घोषित कर लिया। उसने 1345 तक बिना किसी बाधा के शासन किया। उसके बाद इख्तियारुद्दीन गाजी शाह सुनारगाँव का शासक बना। अंत में पंडुआ के शासक अलाउद्दीन अली शाह (जिसने अपनी राजधानी लखनौती से पंडुआ बदल ली थी) का सौतेला भाई हाजी इलियास शमसुद्दीन इलियास शाह के नाम से पूरे बंगाल प्रांत का स्वतंत्र शासक बना बैठा। उसने सुनारगाँव को 1352 में अपने राज्य में मिला लिया। व्यापार तथा प्रशासन को सशक्त बनाने के लिए शेरशाह ने यहाँ से पेशावर तक 1500 किमी लंबा एक महामार्ग बनवाया था। यह महामार्ग उन दिनों सड़क-ए-आजम के रूप में जाना जाता था। तेरहवीं तथा चौदहवीं शताब्दी ई० में यहाँ एक बंदरगाह भी थी। यहाँ से दक्षिण-पूर्व एशिया को कच्चे कपास, रेशम, महीन सूती कपड़े (मसलिन), चमड़े, धातु, दरी आदि का व्यापार किया जाता था।

440. सूरजगढ़ बिहार का शासक जलाल खाँ शेर खाँ के हाथों पराजित होने के बाद बंगाल के महमूद शाह की शरण में चला गया था। शेर खाँ ने उनकी सम्मिलित सेना को 1534 ई० में सूरजगढ़ में परास्त करके बंगाल को भी जीत लिया।

***

पांडिचेरी

विवरण

पांडिचेरी संघ शासित क्षेत्र में पांडिचेरी, कराईकल, माहे और यनम – चार मध्यकालीन बस्तियाँ शामिल हैं। इनमें से माहे मालाबार तट पर तथा शेष तीन कोरोमंडल तट पर हैं। इसमें इन्हीं चार बस्तियों के नाम से चार जिले हैं, जिनमें तमिल, तेलुगू, मलयालम, अंग्रेजी और फ्रांसीसी भाषाएँ बोली जाती हैं। प्राचीन काल में अगस्त्य ऋषि का आश्रम यहीं होता था।

पांडिचेरी का क्षेत्रफल 492 वर्ग किमी है। इसकी जनसंख्या का घनत्व 1642 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी और साक्षरता दर लगभग 75% है।

उत्सव

पांडिचेरी में जनवरी में अंतर्राष्ट्रीय योग उत्सव तथा पोंगल, मार्च में मासिमगम, मई में विलयानुर मंदिर का कार उत्सव, जुलाई में बैस्टाइल डे, अगस्त में खाद्योत्सव, बिरमपट्टीनम् कार उत्सव और श्री अरबिंद का जन्म दिन तथा स्वतंत्रता दिवस मनाए जाते हैं।

441. कारिकल यह स्थान कावेरी नदी के उत्तरी तट पर पांडिचेरी के 132 किमी दक्षिण में है। इसका प्राचीन नाम चमर और आधुनिक नाम कराईकल है। यही संभवतः कावेरीपट्टीनम् था। इसकी स्थापना प्रथम ज्ञात चोल राजा कारिकल ने दूसरी शताब्दी ई०पू० में की थी। उसके शासन काल में यह चोल राज्य की
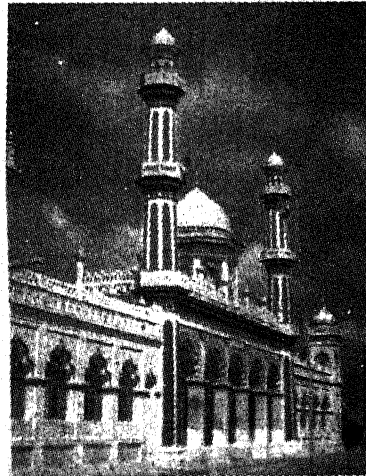
मुस्लिम दरगाह, कराईकल

राजधानी और बंदरगाह थी। उसने कावेरी नदी पर 150 फुट लंबा तटबंध बनवाया था। तंजौर की गद्दी के एक दावेदार के समर्थन के फलस्वरूप पांडिचेरी में फ्रांस के राज्यपाल डुमास को 1739 में कारिकल पुरस्कार में मिला था। 1760 में इस पर अंग्रेजों ने कब्जा कर लिया।

पांडिचेरी का प्रवेश द्वार

व्यापार प्राचीन समय में कावेरीपट्टीनम् व्यापार का एक प्रमुख केंद्र था। खुदाई में यहाँ एक बड़ी गोदी मिली है। यहाँ अन्य देशों से समुद्री जहाजों में घोड़े और काली मिर्च, उत्तरी पहाड़ियों से सोना और जवाहरात, पश्चिमी पहाड़ियों से चंदन, दक्षिणी समुद्र से मोती और पूर्वी समुद्र से मूँगे लाए जाते थे। सूती कपड़े का निर्यात बड़े स्तर पर होता था। यह एक समृद्ध नगर था और इसमें ऊँची-ऊँची इमारतों वाले बड़े-बड़े बाजार थे।

पर्यटन स्थल यहाँ पैगंबर मोहम्मद के वंशज मस्तान सैयद दाउद की दरगाह है। कराईकल से 5 किमी दूर तिरुनल्लार में शनि देव को समर्पित भारत का
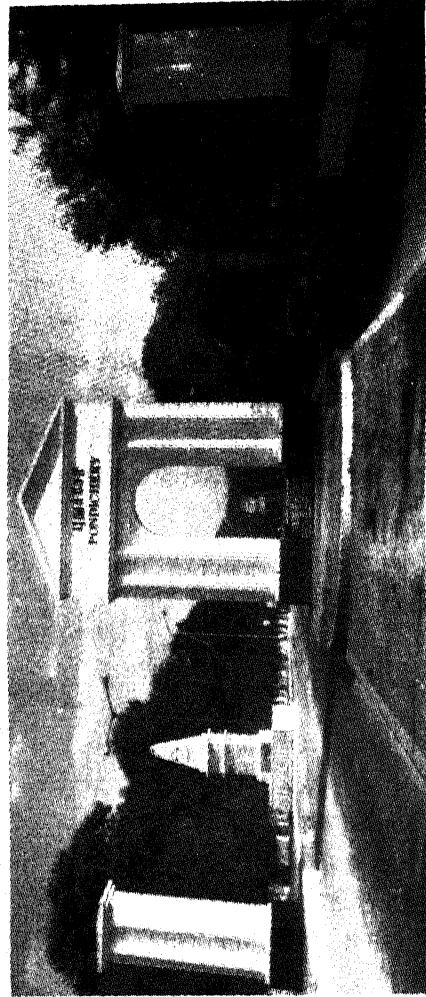
एकमात्र शनि मंदिर दरबारन्येश्वर है। 10 किमी दूर तमिल नाडु में नागौर में अंदावर दरगाह, इतनी ही दूर उत्तर में तरंगम्बाड़ी अथवा ट्रैंकबार तथा 26 किमी दूर वेलंकन्नी में लेडी ऑफ गुड हैल्थ का गिरजाघर दर्शनीय स्थल हैं। यहाँ पर्यटन सूचना ब्यूरो का कार्यालय भरतियार रोड पर है।

442. कावेरीपट्टीनम् कृपया कारिकल देखें।

443. चमर कृपया कारिकल देखें।

444. पांडिचेरी—ऐतिहासिक महत्त्व यह मद्रास से 85 मील दूर है। इसकी स्थापना बीजापुर के सुल्तान शेर खाँ लोदी से प्राप्त अनुदान की सहायता से 1674 ई० में फ्रांसिस-मार्टिन द्वारा की गई थी। यद्यपि मार्टिन को अपने देश से कोई सहायता नहीं मिली थी, फिर भी उसने इसे फ्रांसीसियों की एक प्रमुख बस्ती बना दिया। 1693 ई० में फ्रांसीसियों को इसे पुर्तगालियों को सौंपना पड़ा था, परंतु 1697 ई० में रइसविक की संधि के बाद यह उन्हें वापस मिल गई थी। तभी से यह पूर्वी तट पर एक बंदरगाह बनी हुई है। 1706 में मार्टिन की मृत्यु हो गई। 1735 में डुमास यहाँ का फ्रांसीसी गवर्नर बना। उसने
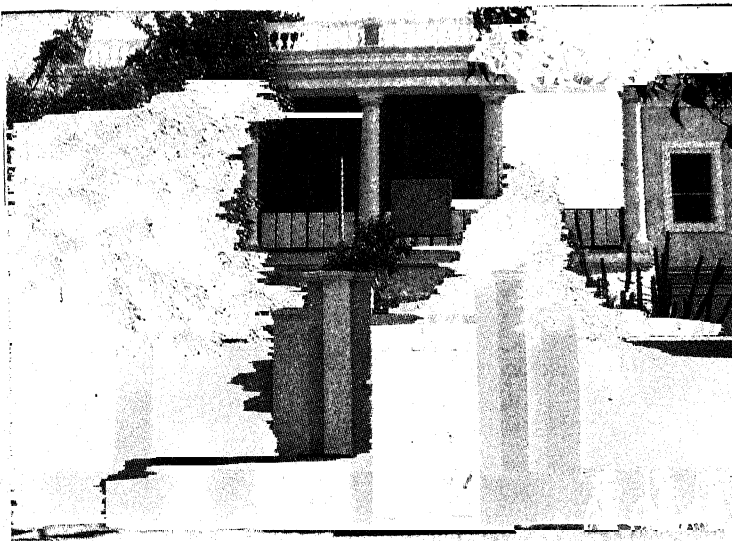
अरबिंद आश्रम, पांडिचेरी

दिल्ली के सुल्तान से अपने नाम के सिक्के जारी करने की अनुमति प्राप्त कर ली। 1742 में डुप्ले यहाँ का गवर्नर बना। प्रथम कर्नाटक युद्ध के दौरान जून, 1748 में रीयर-एडमिरल बास्कोवेन के नेतृत्व में अंग्रेजी नौसेना ने पांडिचेरी का घेरा डाल लिया था, परंतु वह इस पर कब्जा नहीं कर सकी। फ्रांसीसियों की सहायता से हैदराबाद का निजाम बनने के बदले मुजफ्फर जंग ने जून, 1750 में डुप्ले को पांडिचेरी के आस-पास का क्षेत्र दे दिया था। डुप्ले ने यहाँ 1754 तक शासन किया। उसके बाद गोदेहू गवर्नर बना। उसने 1755 में अंग्रेजों के साथ एक संधि की, जिसके तहत दोनों ने एक-दूसरे द्वारा विजित क्षेत्रों को मान्यता दे दी। इससे अंग्रेजों का पलड़ा भारी हो गया। गोदेहू के बाद फ्रांसीसी सरकार ने काउंट लैल्ली को पांडिचेरी का राज्यपाल बनाकर भेजा, परंतु अंग्रेजों की जल युद्ध में अधिक शक्ति के कारण वह मुश्किल से भारत पहुँचा। उसने फोर्ट सेंट डेविड पर कब्जा कर लिया। उसने दक्खन से बूसी को भी बुला लिया। लैल्ली ने मद्रास पर कब्जा करने की कोशिश की, परंतु वह हारकर वापस पांडिचेरी आ गया। जनवरी, 1760 में सर आयरकूट ने उसे वंदीवाश में हरा दिया। बूसी को कैद कर लिया गया। 16 जनवरी, 1761 को लैल्ली ने भी आत्म-समर्पण कर दिया। पांडिचेरी पर अंग्रेजों का कब्जा हो गया। दोनों के मध्य हुई 1763 की पैरिस की संधि के बाद लैल्ली को फ्रांस को वापस कर दिया गया, परंतु फ्रांस ने उसे दोषी करार देकर मृत्यु दंड दे दिया। इस संधि के बाद फ्रांस को उसकी
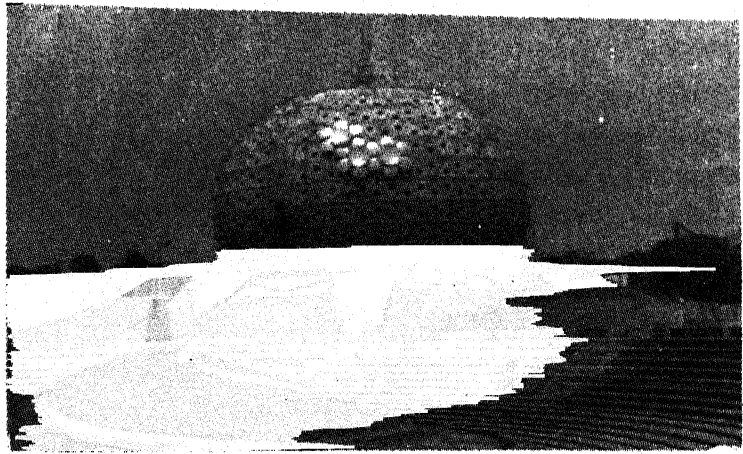
ओरोविल

बस्तियाँ वापस कर दी गईं, परंतु उन्हें उनकी किलेबंदी करने से मना कर दिया गया। मार्च, 1778 में अंग्रेजों ने पांडिचेरी पर आक्रमण करके इस पर कब्जा कर लिया। देश की स्वतंत्रता के बाद 1954 में यह भारतीय गणराज्य में मिल गया।

पर्यटन स्थल श्री अरविंद यहाँ 1910 से 1950 तक रहे थे। उन्होंने एक फ्रांसीसी महिला की सहायता से यहाँ अरविंद आश्रम की स्थापना की। यह महिला 1924 से 1950 तक उनकी शिष्या रही। उन्हें द मदर कहा गया। द मदर ने पांडिचेरी के उत्तर में 10 किमी दूर ओरोविल में 1968 में उषानगरी नाम से एक विश्वनगरी बनाई, जिसमें संसार भर के लोग रह सकें। इसका उद्देश्य मानव एकता को बढ़ाना है। पांडिचेरी में जोन ऑफ आर्क की प्रतिमा तथा प्रथम विश्वयुद्ध का एक स्मारक है। यहाँ के दर्शनीय स्थलों में डुप्ले-स्थल, राजभवन उद्यान, फ्रेंच संस्थान, मेडिकल कैंपस, समुद्र तट, डुप्ले की मूर्ति विलियानर मंदिर संग्रहालय, वनस्पति उद्यान, आनंद रंगा
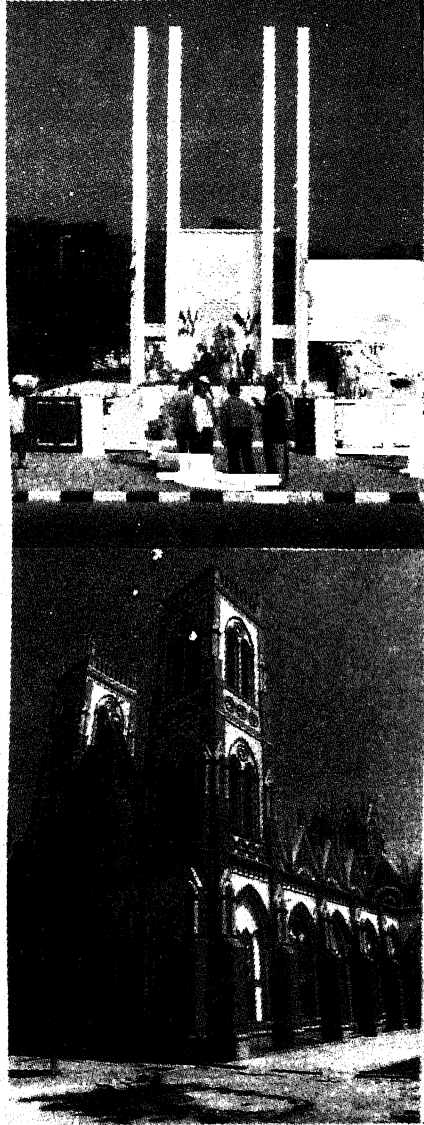
युद्ध स्मारक (ऊपर) और गिरजाघर सेक्रिड हॉर्ट ऑफ जेसिस क्राईस्ट(नीचे)

पिल्लै का महल; यात्रा देवी, भरतियार तथा भरतीदासन की प्रतिमाएँ व कई मंदिर और गिरजाघर है। पांडिचेरी योग का एक प्रसिद्ध केंद्र है। यहाँ अरबिंद आश्रम तथा अंतर्राष्ट्रीय योग शिक्षा एवं अनुसंधान केंद्र (आनंद आश्रम) में योग सिखाया जाता है। पांडिचेरी सरकार 4 से 7 जनवरी तक हर वर्ष अंतर्राष्ट्रीय योग उत्सव मनाती है। फ्रांसीसी कलोनी रहने के कारण यहाँ फ्रांसीसी भाषा प्रमुख रूप से बोली जाती है। यह भाषा इस संघ शासित क्षेत्र की राजभाषा भी है।

जोन ऑफ ऑर्क, पांडिचेरी

उपलब्ध सुविधाएँ पांडिचेरी देश के अन्य भागों से रेल एवं सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा चेन्नई (162 किमी) है। चेन्नई से यहाँ के लिए वायुदूत सेवा मिल जाती है। स्थानीय भ्रमण के लिए यहाँ टूरिस्ट टैक्सियाँ, आटो रिक्शे, रिक्शे और सिटी बसें मिलती हैं। ठहरने के लिए यहाँ अनेक होटल हैं। पांडिचेरी में पर्यटन सूचना ब्यूरो 40, गुबर्ट एवेन्यू (बीच रोड) पर है। यह कार्यालय पांडिचेरी और इसके आस-पास के क्षेत्रों के टूर प्रतिदिन संचालित करता है।

445. माहे यह स्थान मालाबार तट पर है।

ऐतिहासिक महत्त्व 1778 में इस पर अंग्रेजों ने आक्रमण कर दिया। इसका हैदर अली ने विरोध किया, क्योंकि उसे सैनिक सामान इसी बंदरगाह के माध्यम से प्राप्त होता था। फिर भी अंग्रेजों ने इस पर मार्च, 1779 में कब्जा कर लिया।

❀❀❀

बिहार

ऐतिहासिक विवरण

बिहार बुद्ध और चौबीस जैन तीर्थंकारों की प्रवचन स्थली रही है। यहाँ के मगध और गुप्त साम्राज्य बहुत शक्तिशाली रहे हैं। इन साम्राज्यों के प्रमुख शासक सम्राट अशोक, चंद्रगुप्त, समुद्रगुप्त आदि रहे हैं। बाद में यह क्षेत्र बंगाल के राजाओं तथा दिल्ली के सुल्तानों और मुगल सम्राटों के अधीन रहा। 1764 की बक्सर की लड़ाई के बाद अंग्रेजों को बिहार की दीवानी का अधिकार प्राप्त हो गया। 1911 तक बिहार अंग्रेजों की बंगाल प्रजीडेंसी का एक हिस्सा था। 12 दिसंबर, 1911 को उन्होंने बिहार एवं उड़ीसा

छऊ नृत्य, बिहार

नाम से एक पृथक राज्य बना दिया। 1936 में बिहार को उड़ीसा से अलग करके इसे एक नया भौगोलिक रूप दे दिया गया।

राज्य का कुल क्षेत्रफल 173877 वर्ग किमी है। राज्य में 55 जिले हैं, जिनकी प्रमुख भाषा हिंदी है। राज्य की जनसंख्या का घनत्व 497 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी है तथा साक्षरता दर लगभग 38.4% है। यह साक्षरता दर देश में सबसे कम है।

उत्सव

बिहार में सूर्य देवता की पूजा करने के लिए छठ उत्सव मनाया जाता है। बिहार के मुंडा आदिवासी लोग मार्च-अप्रैल (चैत्र) में सरहुल उत्सव मनाते हैं। यह
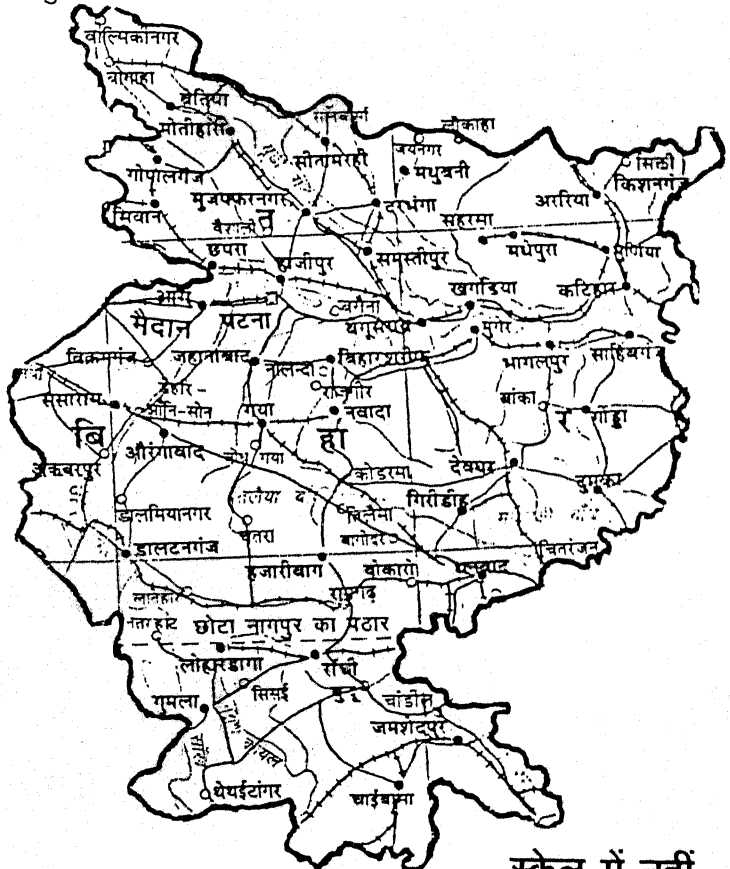
स्केल में नहीं

उत्सव मुख्य रूप से राँची, सिंघभूम, संथाल परगना और हजारीबाग जिलों में मनाया जाता है। अगस्त-सितंबर (भाद्रपद) में करम उत्सव मनाया जाता है। इनके अतिरिक्त प्रदेश में काली पूजा, दुर्गा पूजा, होली, दिवाली तथा अन्य हिंदू व मुस्लिम त्योहार मनाए जाते हैं।

नृत्य

बिहार में छऊ नृत्य प्रमुख है। बिहार की संथाल जन-जाति में नेतुआ डाक वपला डोन नामक नृत्य प्रचलित है, जिसमें स्त्री-पुरुष दोनों हिस्सा लेते हैं। इसमें औरतें हाथ में तलवार तथा कमर पर दर्पण की पट्टी बाँधकर ढोल, डाक और नगाड़े की थाप पर नृत्य करती हैं। भूत-प्रेत बाधाओं को दूर करने के लिए वे झींका दसाई और लाग्रो नृत्य करते हैं। बिहार में ही यादुई नृत्य भी प्रचलित है।

446. कटवाह मेजर एडम्ज ने मीर कासिम को 1763 ई० में यहीं हराया था।

447. कटिहार—ऐतिहासिक महत्त्व अट्ठारहवीं सदी के आरंभ में यहाँ रोहिल्ले रहते थे। इसलिए इसे रोहिलखंड कहा जाने लगा। उनका उत्थान दाउद नाम के एक छोटे से जागीरदार के नेतृत्व में हुआ। 1721 में दाउद का दत्तक पुत्र अली मोहम्मद खाँ रोहिल्ला उनका नेता बना। उसने स्वतंत्र रोहिला राज्य की स्थापना की। उसने 1727 में सम्राट के एक ख्वाजा सराय को लूटने के बाद नवाबी का ओहदा धारण किया, जिसे सम्राट ने 1737 में मान्यता दे दी। 1739 में नादिरशाह के आक्रमण के बाद उसने मुरादाबाद के कुछ क्षेत्रों पर कब्जा कर लिया। तब वहीं के राजा हरनंद अरोड़ा ने उस पर आक्रमण किया, परंतु अरोड़ा स्वयं मारा गया। इस प्रकार उसका प्रभुत्व बरेली, मुरादाबाद, हरदोई और बदायूँ तक फैल गया। सम्राट ने उसको कटिहार का सूबेदार बना दिया। इसके बाद उसने पीलीभीत, बिजनौर और कुमाऊँ पर भी कब्जा कर लिया। तब सम्राट ने उस पर स्वयं आक्रमण किया। अली मोहम्मद ने सम्राट के समक्ष समर्पण कर दिया। सम्राट ने उसे 4000 की मनसब और कटिहार के बदले सरहिंद का क्षेत्र दे दिया, परंतु जब 1748 में अहमदशाह अब्दाली ने पंजाब पर आक्रमण किया, तो वह कटिहार वापस चला गया। उसने वहाँ के जागीरदारों को हटाकर कटिहार पर पुनः कब्जा कर लिया। उसकी मृत्यु के बाद कटिहार तीन भागों में बँट गया, जिनमें से एक पर हाफिज रहमत खाँ का नियंत्रण हुआ। रोहिल्लों ने 1761 में पानीपत के तीसरे युद्ध के दौरान अहमदशाह अब्दाली की मदद की थी। इससे उन्हें काफी छूटें मिल गईं और वे रोहिलखंड क्षेत्र में स्वतंत्र शासक की

तरह राज्य करने लगे।

448. कैमूर पशु विहार यह विहार बिहार के पश्चिम में सोन नदी के पश्चिमी किनारे पर है। यहाँ चौसिंगे, चिंकारे, तेंदुए आदि अधिक मात्रा में हैं। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय नवंबर से मार्च तक का होता है। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा 112 किमी दूर वाराणसी है।

449. कोदेरमा पशु विहार यह मध्य बिहार में है। यहाँ सांभर, चीतल, तेंदुए, भालू और बाघ अधिक हैं। कोदेरमा रेलमार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा 110 किमी दूर राँची है।

450. गया कृपया बौद्ध गया देखें।

451. गिरिया मेजर एडम्स ने यहाँ 1763 ई० में मीर कासिम को हरायाा था।

452. गौतम बुद्ध पशु विहार इस विहार की स्थापना 1970 में की गई थी। यहाँ भालू, चीतल, लोमड़ी, तेंदुए, चिंकारे और बाघ अधिक देखने को मिलते हैं। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय दिसंबर से अप्रैल तक का होता है, यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा 65 किमी दूर गया है।

453. घाघरा—ऐतिहासिक महत्त्व पानीपत के युद्ध में इब्राहिम लोदी की मृत्यु हो गई थी। उस के बाद उसका भाई महमूद लोदी बिहार व बंगाल के आस-पास के इलाकों का स्वामी बन बैठा था। इस पर पानीपत के युद्ध के विजेता बाबर ने बिहार पर आक्रमण कर दिया, परंतु महमूद लोदी बंगाल के नुसरत शाह की शरण में चला गया। बाबर बंगाल की ओर बढ़ा और उसने अफगानों को 6 मई 1529 को घाघरा में हुए एक युद्ध में परास्त कर दिया। इसे घाघरा की लड़ाई कहा जाता है। इस युद्ध के बाद बाबर और नुसरत शाह में एक संधि हुई, जिसके द्वारा दोनों ने एक दूसरे की प्रभुसत्ता का सम्मान करने का वचन दिया।

454. चंपा यह स्थान भागलपुर के निकट है। इसे अनापुरी भी कहा जाता था। बुद्ध के काल में यह अंग महाजनपद की राजधानी थी।

ऐतिहासिक महत्त्व बिंबिसार ने चंपा को मगध साम्राज्य में मिला लिया था। अजातशत्रु के समय में यहाँ का राज्यपाल उदायीभद्र था, जिसे अवंति के राजा

पालक ने मरवा दिया था।

धार्मिक महत्त्व चंपा में बारहवें जैन तीर्थंकार वासुपूज्य का जन्म हुआ था और बुद्ध भी यहाँ कई बार आए थे। इस कारण चंपा बौद्ध एवं जैन दोनों धर्मों के केंद्र के रूप में जाना जाता है।

व्यापार मौर्यों के शासन से पूर्व बुद्ध काल में चंपा एक समृद्ध नगर था। शहर में मुहल्लों का विभाजन शिल्पवार था। ब्राह्मण व्यापार, तीरंदाजी और बढ़ईगिरी भी करते थे तथा क्षत्रिय खेती भी करते थे। चमारों, नटों, कसाइयों, शिकारियों, मछेरों, सँपेरों, गायकों, नृतकों आदि को कुम्हारों, मालियों, जुलाहों, ठठेरों, नाइयों आदि से कम सम्मान प्राप्त होता था। शिल्पकारों की अलग-अलग श्रेणियाँ थीं। श्रेणी का अध्यक्ष प्रमुख कहलाता था। व्यापारियों के अध्यक्ष को सेट्ठि कहते थे। बुद्ध के समय में अनाथ पिंडक एक महासेट्ठि था। उसके नीचे 500 सेट्ठि थे। किसानों का प्रतिनिधि 'भोजक' कहलाता था। यहाँ से पाटलीपुत्र, लंका, बर्मा और पूर्वी द्वीप समूह के साथ नावों से व्यापार किया जाता था। मौर्यों के काल में और उसके बाद यहाँ से वाराणसी के रास्ते कौशांबी तक नावों से व्यापार किया जाता था। छठी शताब्दी ई० में यह व्यापार का एक प्रमुख केंद्र था। उन दिनों यहाँ के सौदागर सुवर्णभूमि तक व्यापार करते थे। ह्यून सांग की यात्रा के दौरान इस नगरी का ध्वंस हो चुका था।

455. चुनार—ऐतिहासिक महत्त्व यह स्थान शेरशाह और हुमायूँ के मध्य युद्ध का कारण रहा है। शेरशाह ने चुनार के शासक ताजखाँ की विधवा पत्नी लाड मलिक से सुलह-मश्विरा करके उससे विवाह कर लिया था और इस प्रकार वह चुनार का शासक बन बैठा, परंतु 1532 ई० में उसे हुमायूँ की अधीनता स्वीकार करनी पड़ी। हुमायूँ ने चुनार पर 1537 ई० में पुनः आक्रमण करके इसे अपने कब्जे में कर लिया। 1540 में शेरशाह ने हुमायूँ से चुनार छीन लिया। सूर शासक मोहम्मद आदिल के समय में जब शेरशाह के भतीजे इब्राहिम सूर ने आगरा और दिल्ली पर कब्जा कर लिया, तो आदिल चुनार भाग आया था। 1555 में हुमायूँ ने इस पर पुनः कब्जा कर लिया। बक्सर के युद्ध में हार के बाद अवध के नवाब शुजाउद्दौला ने चुनार क्लाईव को दे दिया। 1778 में जब हेस्टिंग्ज ने बनारस के राजा चैत सिंह को कैद कर लिया था, तो चैत सिंह के सिपाहियों ने हेस्टिंग्ज के कई आदमियों को मार दिया। हेस्टिंग्ज ने भागकर चुनार में शरण ली। तीसरे मराठा युद्ध (1817-18) में जीत के बाद अंग्रेजों ने पूना के पेशवा के सहायक त्रियंबक को पकड़कर चुनार के किले में उम्र भर के

लिए कैद कर लिया था। प्रथम सिख युद्ध (1845-46) के बाद अंग्रेजों ने भी रानी जिन्दाँ से दलीप सिंह की अभिभाविका की शक्तियाँ छीनकर उसे चुनार भेज दिया और हेनरी लारेंस को लाहौर का रेजीडेंट नियुक्त कर दिया। चुनार में की गई खुदाइयों में पहली शताब्दी ई० के कुछ रोमन सिक्के प्राप्त हुए हैं, जिनसे यह सिद्ध होता है कि इसके रोम के साथ व्यापारिक संबंध थे।

456. चौसा यह स्थान भी शेरशाह और हुमायूँ के मध्य युद्ध का स्थल रहा है। शेरखाँ (शेरशाह) ने यहाँ एक युद्ध में 26 जून, 1539 को हुमायूँ को हराया था। इसके बाद उसने अपने आपको राजा घोषित कर लिया और वह हुमायूँ से पुनः लड़ने के लिए कन्नौज की ओर चल पड़ा। हुमायूँ ने वहाँ भी मुँह की खाई।

457. दलमा पशु विहार यह विहार बिहार के दक्षिण में पश्चिमी बंगाल की सीमा के पास है। इसकी स्थापना 1976 में की गई थी। यहाँ पर तेंदुए, चीतल, सांभर, लोमड़ी आदि पशुओं के अलावा नाना प्रकार के पक्षी भी हैं। यहाँ घूमने का सर्वोत्तम समय दिसंबर से अप्रैल तक का होता है। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा एवं रेलवे स्टेशन 12 किमी दूर जमशेदपुर है।

458. नालंदा यह स्थान पटना से 90 किमी दूर है।

ऐतिहासिक महत्त्व प्राचीन काल में नालंदा अपने विश्वविद्यालय के लिए जाना जाता था। इस विश्वविद्यालय की स्थापना शंकरादित्य ने की थी और बाद में पूर्णवर्मा, देवपाल, प्रतिहार राजा महेंद्र पाल आदि ने इसे संरक्षण प्रदान किया था। पूर्णवर्मा ने यहाँ बुद्ध की एक अस्सी फुट ऊँची प्रतिमा स्थापित करवाई थी। यह विश्वविद्यालय अपनी शिक्षा के लिए संसार भर में, विशेषकर एशिया में, प्रसिद्ध था। यहाँ लगभग 10000 देशी-विदेशी छात्र पढ़ते थे। एशिया भर के अनेक स्कूल इससे संबद्ध थे। यह तेरहवीं शताब्दी के ऑक्सफार्ड के रूप में जाना जाता है। यह एक निःशुल्क आवासीय विश्वविद्यालय था। धर्मपाल और शीलभद्र इसके कुलपति तथा चंद्रपाल, गुणमति, स्थिरमति और जीतमित्र इसके कुछ प्रसिद्ध अध्यापकों में से थे।

धर्म यहाँ के मठों में अनेक बौद्ध भिक्षु रहते थे। नालंदा में एक स्तूप और बुद्ध की आदमकद प्रतिमा पाई गई है। मुहम्मद गौरी के सेनानायक कुतुबुद्दीन ऐबक ने इस विश्वविद्यालय का विध्वंस कर दिया था। गौतम बुद्ध के अनुयायी सारीपुत्र का जन्म और मृत्यु यहीं हुई थी। सातवीं शताब्दी के दौरान ह्यून सांग भी यहाँ
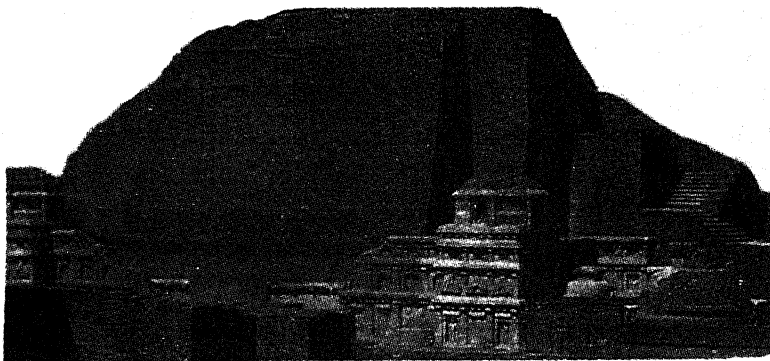
नालंदा के अवशेष

आए थे और यहाँ तीन वर्ष ठहरे थे।

पुरातात्विक महत्त्व नालंदा में चौदह हेक्टेयर में फैले प्राचीन विश्वविद्यालय के खंडहर के साथ-साथ बौद्धों के पूजा स्थल तथा भिहम छात्रावास के अवशेष हैं। साथ ही ह्यून सांग मेमोरियल हाल है। अशोक ने यहाँ सारीपुत्र की स्मृति में एक स्तूप बनवाया था। यहाँ समुद्रगुप्त के शासन के पाँचवें वर्ष के ताम्रलेख प्राप्त हुए हैं, जिनमें गुप्त काल पर प्रकाश डाला गया है। ऐसा माना जाता है कि हर्ष ने यहाँ एक पीतल का विहार बनवाया था। नालंदा के खंडहरों से देवी-देवताओं की काँसे, ताँबे और पत्थर की मूर्तियों के अतिरिक्त बुद्ध की काँसे की एक मूर्ति खड़ी अवस्था में और दूसरी पत्थर की मूर्ति बैठी हुई अवस्था में पाई गई है। जावा के एक शासक बलपुत्र देव ने यहाँ एक बौद्ध विहार बनवाया था। इन सबके अतिरिक्त नालंदा में विभिन्न सम्राटों द्वारा बनवाए गए मंदिर, स्तूप, तालाब, शयनागार, प्रवचन हाल आदि देखे जा सकते हैं। यहाँ एक पुरातात्विक संग्रहालय भी है, जिसमें गुप्त, मौर्य एवं अन्य कालों की हिंदू एवं बौद्ध संस्कृतियों के महत्त्वपूर्ण स्मृति-शेष रखे गए हैं। इनमें प्राचीन दुर्लभ सिक्के, ताँबे की प्लेटों पर बनी मूर्तियाँ तथा बुद्ध की मूर्तियाँ शामिल हैं। नालंदा में मिली एक मुहर में महाराजगुप्त को कुमारगुप्त का आदि पूर्वज और पुरुगुप्त को उसका पिता कहा गया है।

यहाँ नव नालंदा महाविहार में 1951 में एक अंतर्राष्ट्रीय अध्ययन केंद्र खोला गया था, जहाँ पाली तथा बौद्ध अध्ययन एवं अनुसंधान का बहुत बड़ा स्नातकोत्तर संस्थान है। इसमें पूर्वी और एशियाई देशों के अनेक विद्यार्थी अ

यथन करते हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ नालंदा देश के अन्य भागों से रेल एवं सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा पटना है। स्थानीय यातायात के लिए यहाँ रिक्शे एवं ताँगे मिलते हैं। नालंदा में ठहरने के लिए सरकारी रैस्ट हाउस, पीडब्ल्यूडी इंस्पेक्शन बंगला, यूथ होस्टल तथा कई होटल हैं। यहाँ पर्यटन सूचना केंद्र का कार्यालय भी है। सर्दियों में यहाँ का तापमान लगभग 28°से और 18°से के मध्य रहता है।

459. पटना कृपया पाटलीपुत्र देखें।

460. पलामू वन पशु विहार यह विहार बिहार में छोटे नागपुर के पठारी क्षेत्र में कोयल नदी के पास स्थित है। इसकी स्थापना 1960 में हुई थी। इस अभयारण्य में हाथी, चीतल, सांभर, छोटी पूँछ के बंदर, शाह, नीलगाय, काकड़, सूअर, बाघ, तेंदुए, भेड़िए, जंगली कुत्ते, बिल्लियाँ, गीदड़, लक्कड़बग्घे, मोर तथा लाल मुर्गियाँ पाई जाती हैं। यहाँ घूमने का सर्वोत्तम समय अक्तूबर से मई तक का होता है। यहाँ से निकटतम बड़ा शहर 25 किमी दूर डाल्टनगंज और निकटतम हवाई अड्डा 180 किमी दूर राँची है।

461. पाटलीपुत्र—स्थापना यह स्थान पटना के 4 किमी पूर्व में हुआ करता था और आधुनिक कुम्हरार है। प्राचीन काल में पाटलीपुत्र गंगा, गंडक और सोन नदी के संगम पर स्थित था। चौथी नदी सरयू भी इनमें थोड़ी दूर पर मिल जाती थी। पाटलीपुत्र की स्थापना गाधी की पुत्री पाटली के अनुरोध पर अजातशत्रु (493 ई०पू - 459 ई०पू०) द्वारा की गई थी। राजगृह के बाद यही मगध के साम्राज्य की राजधानी बनी। नदियों से घिरा हुआ होने के कारण पाटलीपुत्र प्राकृतिक रूप से सुरक्षित शहर था। यूनान के राजा सेल्युकस द्वारा अपने राजदूत के रूप में भेजा गया लेखक मैगस्थनीज यहाँ के सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य के दरबार में 302 ई०पू० से 298 ई०पू० तक रहा था। उसने अपनी पुस्तक "इंडिका" में लिखा है कि पाटलीपुत्र 20 वर्ग किमी क्षेत्र में बसा हुआ था। सम्राट के महल समेत सारा शहर लकड़ी का बना हुआ था। इसके किले में 570 मीनारें और 64 द्वार थे। यह किला चारों ओर से पानी से भरी खाई से घिरा हुआ था।

ऐतिहासिक महत्त्व मगध साम्राज्य के उदय से पूर्व 459 ई०पू० में अजातशत्रु की मृत्यु के बाद उसके पुत्र उदयन ने सबसे पहले पाटलीपुत्र को अपनी राजधानी बनाया था। उसके बाद 414 से 346 ई०पू० तक अनिरुद्ध, मुंड और

नागदासक ने यहाँ से राज्य किया, परंतु ये सब शासक निर्बल थे, जिस कारण यहाँ के एक मंत्री शिशुनाग ने अपनी शक्ति बढ़ाकर गद्दी पर कब्जा कर लिया। उसके बाद कालाशोक तथा कुछ और शासक गद्दी पर बैठे। कालाशोक के बाद के शासक भी काफी कमजोर थे। अंत में 345 ई०पू० के आस-पास यहाँ का शासन नंद वंश के हाथों में चला गया। महापदम नंद इस वंश का संस्थापक और प्रतापी राजा था। उसके बाद इस वंश के 21 अन्य शासकों ने 323 ई०पू० तक राज्य किया। इस वंश का अंतिक शासक धननंद था। अंत में चाणक्य की नीति से चंद्रगुप्त मौर्य ने यहाँ मौर्य वंश की नींव रखी। उसने 305 ई०पू० में सेल्युकस को हराकर उससे कंधार, हिरात और बलोचिस्तान के क्षेत्र ले लिए तथा उसकी पुत्री से विवाह किया। सेल्युकस ने अपना एक राजदूत मैगस्थनीज चंद्रगुप्त के दरबार में भेजा, जो यहाँ पाँच साल तक रहा। चंद्रगुप्त ने पाटलीपुत्र से 299 ई०पू० तक राज्य किया। बाद में बिंदुसार (299 ई०पू० - 273 ई०पू०), अशोक (269 ई०पू० - 232 ई०पू०) तथा कुछ अन्य शासकों ने पाटलीपुत्र से राज्य किया। 232 ई०पू० में अशोक का पौत्र दशरथ उसके पूर्वी प्रांत का राजा बना। उसने भी पाटलीपुत्र को अपनी राजधानी बनाया। बाद में पुष्यमित्र सुंग ने मौर्य वंश के
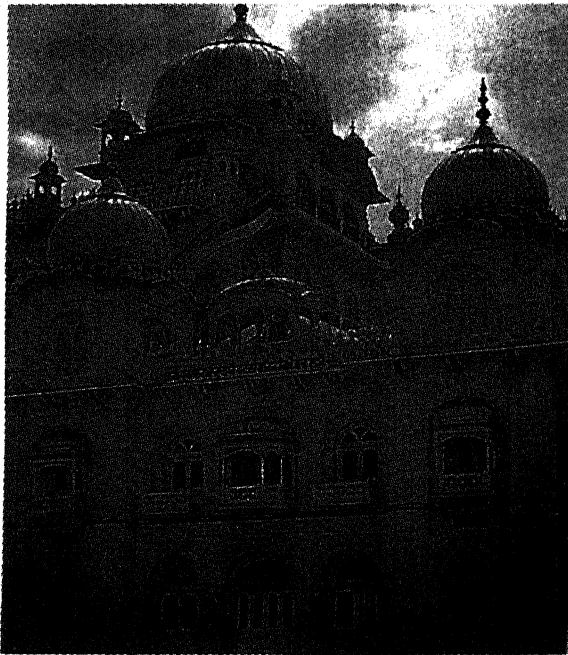
तख्त हरमंदर, साहिब पटना

अंतिम शासक बृहदरथ की हत्या करके यहाँ शुंग वंश की स्थापना की। उसने भी पाटलीपुत्र को अपनी राजधानी बनाया। 185 ई०पू० से 73 ई०पू० तक शुंग वंश के दस शासकों ने यहाँ से राज्य किया। 73 ई०पू० में वासुदेव ने शुंग वंश के अंतिम शासक देवभूमि को मारकर कण्व वंश की नींव रखी और पाटलीपुत्र को अपनी राजनैतिक गतिविधियों का केंद्र बनाया। पुनः आंध्र राजा सिमुक ने 30 ई०पू० में कण्व वंश के अंतिम शासक सुसारामन का वध कर दिया, जिससे मगध साम्राज्य का ही अंत हो गया। पाल वंश के शासक नरेंद्र गुप्ता ने भी पाटलीपुत्र को एक लड़ाई में नष्ट-भ्रष्ट कर दिया था। गुप्त राजाओं के उदय से पूर्व यहाँ मुरुंडों का शासन था। श्रीगुप्त (240-80 ई०) यहाँ का पहला गुप्त राजा, घटोत्कच गुप्त (280-319 ई०) दूसरा और चंद्रगुप्त प्रथम (319-35 ई०) तीसरा राजा बना। लिच्छवी शासक ने अपनी पुत्री कुमारदेवी का विवाह चंद्रगुप्त प्रथम के साथ करके उसे पाटलीपुत्र दहेज में दिया था। इसके बाद समुद्रगुप्त (335-75 ई०) और रामगुप्त राजा बने। रामगुप्त का शकों के साथ युद्ध हुआ। इस युद्ध में वह उनसे लड़ने की स्थिति में नहीं था। शकों ने उसकी स्त्री ध्रुवदेवी की माँग करके उसे छोड़ देने का आश्वासन दिया। रामगुप्त ने ध्रुवदेवी को देने का वचन दे दिया, परंतु उसके छोटे भाई चंद्रगुप्त द्वितीय ने इस प्रस्ताव का विरोध किया। वह ध्रुवदेवी के वेश में शक राजा के डेरे में गया और उसने शक् राजा को मार दिया। चंद्रगुप्त द्वितीय ने 375-418 ई० तक पाटलीपुत्र का शासन संभाला। उसने ध्रुवदेवी से विवाह किया। उदयगिरि के दरीगृह लेख से ज्ञात होता है कि चंद्रगुप्त ने अपने मंत्री वीरसेन शाब की सहायता से मालवा पर आक्रमण किया और वहाँ से शक् शासक को मार भगाया। चंद्रगुप्त द्वितीय के बाद कुमारगुप्त प्रथम (414-55 ई०), स्कंदगुप्त (455-67 ई०), पुरुगुप्त (467-69 ई०), कुमारगुप्त द्वितीय (473-76 ई०), बुद्धगुप्त (476-500 ई०), वैन्यगुप्त (507-10 ई०), भानुगुप्त (510 ई०), नरसिंह गुप्त बालादित्य (510 ई० के बाद), कुमारगुप्त तृतीय (543-44 ई०) तथा विष्णुगुप्त (544-50 ई०) यहाँ के शासक बने। चंद्रगुप्त द्वितीय के शासन काल के दौरान फाहियान यहाँ तीन वर्ष तक ठहरा था। 1124 में पटना के निकट गोविंदचंद्र गहड़वाल का शासन था। 1146 ई० में पटना पर पाल शासक मदनपाल का शासन था, परंतु 1175 से गहड़वालों ने पाल राजा को हटाकर पटना पर अपना अधिकार कर लिया। सतरहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में इसे पुर्तगालियों ने छीन लिया। 1757 से 1760 के बीच मुगल सम्राट आलमगीर का सबसे बड़ा बेटा अली गौहर विद्रोह करके पटना आ गया। उसने अवध के नवाब शुजाउद्दौला के चचेरे भाई और इलाहाबाद के सूबेदार मो० कुली खाँ की सहायता से पटना पर आक्रमण करके उसे अपने कब्जे में कर लिया। पटना उस

समय बंगाल के नवाब मीर जाफर के अधीन था। परंतु क्लाईव ने अली गौहर को हराकर पटना छीनकर मीर जाफर को दे दिया और बदले में मीर जाफर से कलकत्ता की दक्षिणवर्ती भूमि का राजस्व प्राप्त करने का अधिकार ले लिया। बाद में शाह आलम नाम से मुगल सम्राट बनने के बाद अली गौहर ने 1760 ई० में पटना पर फिर आक्रमण किया और फिर हार गया। बक्सर के युद्ध से पूर्वी बंगाल के नवाब मीर कासिम की आज्ञा से समरू ने पटना की अंग्रेजी कोठी के अध्यक्ष एलिस सहित 200 अंग्रेजों को मार दिया। इस घटना को पटना हत्याकांड नाम दिया गया।

पादरी की हवेली, पटना

धर्म पाटलीपुत्र में स्थूलभद्र की अध्यक्षता में जैन धर्म की एक सभा हुई थी, जिसके पश्चात् इस धर्म की श्वेतांबर एवं दिगंबर नाम से दो शाखाएँ हो गईं। यहाँ के लोग बौद्ध धर्म के अनुयायी थे। 251 ई० में अशोक ने भी बौद्ध धर्म में आई बुराइयों को दूर करने और बौद्ध भिक्षुओं के आपसी विवादों को समाप्त करने के लिए बौद्ध धर्म की तीसरी सभा बुलाई थी। इसके सभापति मोग्गालिपुत्ततिस्स थे। इस सभा में त्रिपिटकों में संशोधन किया गया और कथावथु नामक पुस्तक लिखी गई। वात्स्यायान, आर्यभट्ट, कालिदास और अश्वघोष यहाँ रहे थे। पाटलीपुत्र में उन दिनों विद्वानों की एक सभा हुआ करती थी।

व्यापार पाटलीपुत्र तीन नदियों के संगम पर स्थित होने के कारण इनसे व्यापार

और सेना के आने-जाने में सहायता मिली। इसके आस-पास गंगा की घाटी का मैदान बहुत उपजाऊ था। यहाँ अनाज भारी मात्रा में होता था और भारी कर चुकाने के बाद भी किसान काफी समृद्ध थे। पाटलीपुत्र सड़क मार्ग से प्रयाग, कान्यकुब्ज, ताम्रलिप्ति और पुष्कलावती से जुड़ा हुआ था। यहाँ तीन व्यापारिक रास्ते आकर मिलते थे – एक कौशंबी के रास्ते उज्जैन से आता था, जिसे दक्षिण-पश्चिमी मार्ग कहते थे। दूसरा वैशाली और श्रावस्ती से होकर नेपाल से आता था, जिसे उत्तरी मार्ग कहते थे। तीसरा सिंधु घाटी के उत्तरी भाग और मथुरा से होकर बक्टीरिया से आता था। इसे उत्तर-पश्चिमी मार्ग कहते थे। चंपा, लंका, पूर्वी द्वीप समूह और बर्मा के साथ नावों से व्यापार किया जाता था। व्यापार के कारण पहली शताब्दी ई० में यह एक समृद्ध नगर बन गया था। असम और बर्मा के रास्ते पाटलीपुत्र के दक्षिण-पश्चिम के साथ भी व्यापारिक संबंध थे। मगध साम्राज्य के पतन के बाद मौर्यों के शासन के दौरान यह शहर पुनः ख्याति में आ गया और उनके अधीन एक स्वतंत्र व्यापारिक केंद्र बन गया।

पुरातात्विक महत्त्व के पर्यटन स्थल कुम्हरार में की गई खुदाई में मौर्य और अन्य शासकों की इमारतों के भग्नावशेष मिले हैं। इनमें 80 स्तंभों वाला अशोक का सभा भवन तथा चरक के आरोग्य भवन के खंडहर प्रमुख हैं। पाटलीपुत्र में 1770 में एक भीषण अकाल पड़ा था, जिसके बाद वारेन हेस्टिंग्ज ने यहाँ 1786 ई० में सेना की रसद रखने के लिए गोलघर बनवाया था। शेरशाह सूरी ने 1545 ई० में शेरशाही मस्जिद, एक मदरसा तथा जहाँगीर के पुत्र परवेज शाह ने पत्थर की मस्जिद बनवाई थी। सिखों के दसवें गुरु, गुरु गोबिंद सिंह का जन्म 1660 ई० में यहीं हुआ था। महाराजा रणजीत सिंह ने उनकी स्मृति में यहाँ एक गुरुद्वारा तख्त हरमंदिरजी बनवाया था। यहाँ राष्ट्रीय महत्त्व का खुदाबख्श ओरियंटल पुस्तकालय है, जहाँ अरबी और फारसी की पुरानी पांडुलिपियाँ रखी हुई हैं। यहाँ एक अगम कुआँ भी है, जो बहुत गहरा है।

अन्य पर्यटन स्थल पाटलीपुत्र के अन्य दर्शनीय स्थलों में प्रथम राष्ट्रपति डॉ० राजेंद्र प्रसाद की स्मृति में 1963 में बनवाया गया संग्रहालय सदाकत आश्रम, बिड़ला मंदिर, नवाब शाहिद का मकबरा, पश्चिम दरवाजा, पादरी की हवेली, पटना संग्रहालय, शहीद स्मारक, जैविक पार्क, तारामंडल, राजभवन तथा चिड़ियाघर प्रमुख हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ पटना देश के सभी प्रमुख शहरों से वायु, रेल तथा सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ ठहरने के लिए रेलवे विश्राम गृह के अतिरिक्त सब्जी

बाग में बिड़ला धर्मशाला तथा उमा सिनेमा के पास रामप्यारी कुआँ धर्मशाला है। वीरचंद पटेल मार्ग पर टूरिस्ट भवन एवं निरीक्षण भवन और फ्रेजर रोड पर मारवाड़ी आवास गृह हैं। इनके अतिरिक्त शहर में छोटे-बड़े सरकारी तथा गैर-सरकारी अनेक होटल हैं। आईटीडीसी का पर्यटक सूचना केंद्र कांकर बाग रोड पर सुदामा पैलेस में है। सर्दियों में यहाँ का तापमान 20°से और 6°से के मध्य तथा गर्मियों में 43°से और 21°से के मध्य होता है। यहाँ वर्ष में कभी भी जाया जा सकता है।

462. पारसनाथ की पहाड़ी यह पहाड़ी बंगाल की सीमा पर बिहार के दक्षिणी भाग में छोटा नागपुर के पठार में है। यह जैन आराधना का पूर्वी केंद्र है। ऐसा माना जाता है कि पारसनाथ ने यहीं निर्वाण प्राप्त किया था। पहाड़ी पर पारसनाथ का मंदिर और तेईस अन्य मंदिर हैं। जैन श्रद्धालु यहाँ भारी संख्या में आते हैं। यहाँ एक वन्य जीव विहार भी है, जहाँ चीते, जंगली बिल्लियाँ, तेंदुए, भेड़िए और सांभर अधिक मात्रा में हैं। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय नवंबर से मार्च तक का होता है।

453. पूर्णिया यह स्थान उत्तरी बिहार में है। यहाँ नवाब शौकत जंग की गद्दी थी।

454. बक्सर यह शहर बिहार में गंगा नदी के किनारे है।

ऐतिहासिक महत्त्व बक्सर 23 अक्तूबर, 1764 ई० को हुए एक युद्ध के लिए जाना जाता है। यह युद्ध मेजर मुनरो और दिल्ली के सम्राट शाह आलम के मध्य लड़ा गया था। मुंगेर के नवाब मीर कासिम तथा अवध के नवाब शुजा-उद्-दौला ने शाह आलम का साथ दिया था। इस युद्ध में मेजर मुनरो की विजय हुई, जिसके फलस्वरूप 16 अगस्त, 1765 ई० को इलाहाबाद की संधि के बाद अंग्रेजों को बंगाल, बिहार और उड़ीसा के दीवानी अधिकार मिल गए। शाह आलम को 26 लाख रुपये वार्षिक पेंशन तथा कड़ा व इलाहाबाद के जिले मिले।

465. बराबर यह स्थान गया के निकट है।

पुरातात्विक महत्त्व . बराबर 256 और 250 ई०पू० के मध्य स्थापित अशोक के तीन लेखों के लिए प्रसिद्ध है। ये लेख यहाँ तीन गुफाओं के द्वारों पर लिखे मिले हैं। इन लेखों में अशोक ने अन्य समकालीन धर्मों, विशेषकर जैन धर्म के आजीवक मत के प्रति अपनी नीति का वर्णन किया है। यहाँ पर पर्वत काटकर

बनाए गए चैत्य हाल भी पाए गए हैं। बराबर की गुफाओं की दीवारें काँच की तरह चिकनी हैं।

बराबर की गुफा

466. बसाढ़ कृपया वैशाली देखें।

457. बौद्ध गया बौद्ध गया बिहार में गया से 12 किमी दूर निरंजना नदी पर है। इसका प्राचीन नाम उरु बिल्व था। शिशुनाग के समय में कालाशोक यहाँ का राज्यपाल था। 1176 में यहाँ कन्नौज के शासक जयचंद ने अधिकार कर लिया था, परंतु कुछ ही समय बाद बंगाल के राजा लक्ष्मण सेन ने इसे वापस ले लिया।

धार्मिक महत्त्व महात्मा बुद्ध ने 532 ई०पू० में यहाँ एक वट वृक्ष के नीचे केवल्य ज्ञान प्राप्त किया था। इसे बोधि वृक्ष का नाम दिया गया, इसी कारण यह स्थान बौद्ध धर्मावलंबियों के लिए तीर्थ बन गया है। बौद्ध गया में एक महाबोधि विश्वविद्यालय हुआ करता था। अशोक ने इस विश्वविद्यालय की अनेक यात्राएँ की थीं। उसकी 249 ई०पू० की एक यात्रा का उल्लेख 170 फुट ऊँचे साँची स्तूप के द्वार पर किया गया है।

यहाँ से 12 किमी दूर गया में प्रेत शिला पर्वत है। इस पर्वत पर महारानी अहिल्या बाई ने 1787 ई० में विष्णुपाद मंदिर बनवाया था, जो आज भी देखा जा सकता है। इसके पश्चिमी कोने में सूर्यकुंड तालाब है, जिसका ऐतिहासिक और धार्मिक महत्त्व है। प्रेत शिला पर्वत के नीचे ब्रह्म कुंड तालाब है। सामने एक मंदिर में पत्थर का हाथ बना हुआ है। ऐसा माना जाता है कि यह राजा दशरथ का हाथ है। गया से एक किमी पश्चिम में ब्रह्म योनि पर्वत है। ऐसा माना जाता है कि सम्राट अशोक ने यहाँ गौतम बुद्ध की स्मृति में एक स्तूप बनवाया था। यह स्तूप आजकल नहीं मिलता। आजकल यहाँ एक मंदिर है।
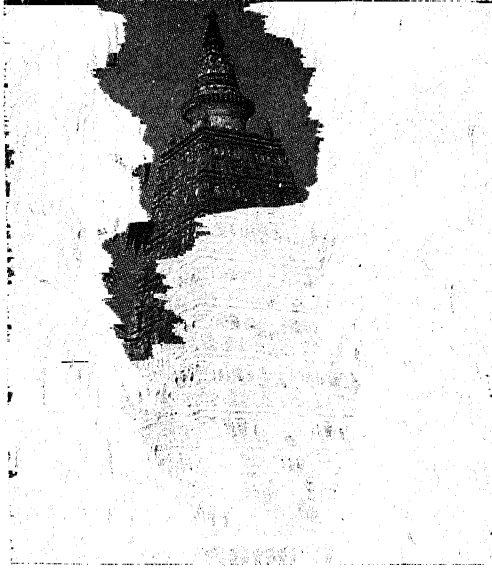
बौद्ध गया का मंदिर

पुरातात्विक महत्त्व बौद्ध गया में पुरातात्विक महत्त्व की कई चीजें पाई गई हैं। अशोक ने यहाँ एक सौ फुट ऊँचा स्तूप, महाबोधि मंदिर और एक स्तंभ बनवाया था। महाबोधि मंदिर उन दिनों की भारतीय वास्तुकला का एक सुंदर नमूना है। इस मंदिर की दीवारें शिल्प कौशल की दृष्टि से बहुत आकर्षक हैं। इस मंदिर में बुद्ध की एक भव्य प्रतिमा स्थापित है। इसके ऊपर वाले कक्ष में उसकी माँ माया देवी की प्रतिमा है। मंदिर के चारों ओर छोटे-छोटे कमरे और जालीदार नक्काशीयुक्त घेरा बना हुआ है। दक्षिण में बोधि सरोवर है। ऐसा माना जाता है कि तपस्या करने से पूर्व बुद्ध ने यहाँ स्नान किया था। बोधि वृक्ष मंदिर के उत्तर में है। मंदिर के दक्षिण और पश्चिम में अशोक द्वारा बनवाई गई चारदीवारी है, जिस पर जातक कथाएँ और दैनिक जीवन की क्रियाएँ चित्रित हैं। गुप्त काल में भी यहाँ एक बौद्ध मंदिर बनवाया गया था। यहीं पर समुद्रगुप्त के शासन काल के नौवें वर्ष का एक ताम्र-लेख पाया गया है, जिसमें गुप्त राजाओं के संवत् पर प्रकाश डाला गया है। समुद्रगुप्त से अनुमति लेकर सिंहल (आधुनिक श्रीलंका) के राजा मेघवर्मन ने यहाँ 350 ई० में एक विहार बनवाया था और बर्मा के बौद्ध भिक्षुओं ने 1079 ई० में बौद्ध गया के मंदिर की मरम्मत कराई थी। यहाँ अनिमेषलोचन स्तूप, रत्नागार मंदिर, राजयत्न वृक्ष और मुचलिंद झील भी हैं। ऐसा माना जाता है कि बुद्ध इनमें से प्रत्येक जगह एक-एक सप्ताह ठहरे थे। यहाँ पंच पांडव मंदिर भी है।
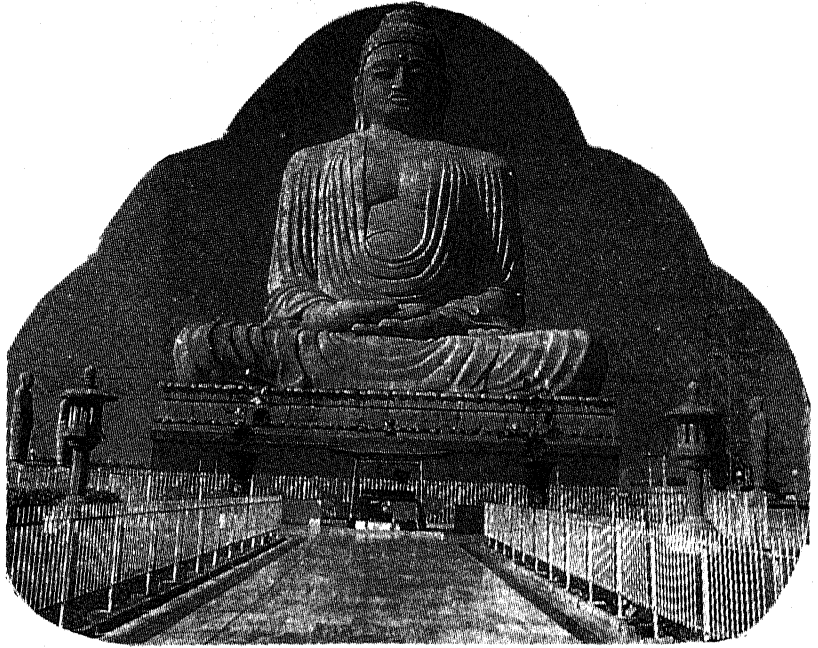
ध्यान-मग्न मुद्रा में भगवान बुद्ध
की 80' ऊँची मूर्ति, बौद्ध गया

उपलब्ध सुविधाएँ बौद्ध गया एवं गया से निकटतम हवाई अड्डा पटना (112 किमी) है। ये स्थान रेल और सड़क मार्ग से देश के सभी भागों से जुड़े हुए हैं। यहाँ आने के लिए पहले पटना आना होता है। सर्दियों के दिन यहाँ घूमने के लिए सबसे अधिक उपयुक्त हैं। स्थानीय यातायात के लिए यहाँ टैक्सियाँ, ऑटो रिक्शे, बसें आदि उपलब्ध हैं। बौद्ध गया में ठहरने के लिए राज्य पर्यटन विकास निगम के दो बंगले, महाबोधि मंदिर के पास बिड़ला धर्मशाला तथा इसके पीछे तिब्बत धर्मशाला, श्रीलंका रेस्ट हाउस के पीछे महाबोधि संस्था की धर्मशाला, होटल बौद्ध गया अशोक, बुद्ध विहार, सिद्धार्थ विहार, बिहार सरकार के दो पर्यटक विश्राम गृह; बर्मा, चीन और थाइलैंड के मठ, यूथ होस्टल, ट्रैवलर्ज लॉज, डाक बंगला, अशोक ट्रैवलर्ज लॉज, सर्किट हाउस तथा इंटरनैशनल बुद्धिस्ट हाउस एंड जापानीज टैंपल और कई छोटे-बड़े सरकारी तथा गैर-सरकारी होटल हैं। इसी प्रकार गया में शिव प्रसाद झुनझुनवाला धर्मशाला, टिल्ला धर्मशाला, स्वराज पुरी रोड पर भारत सेवाश्रम संघ की धर्मशाला तथा रमता रोड पर जैन धर्मशाला है।
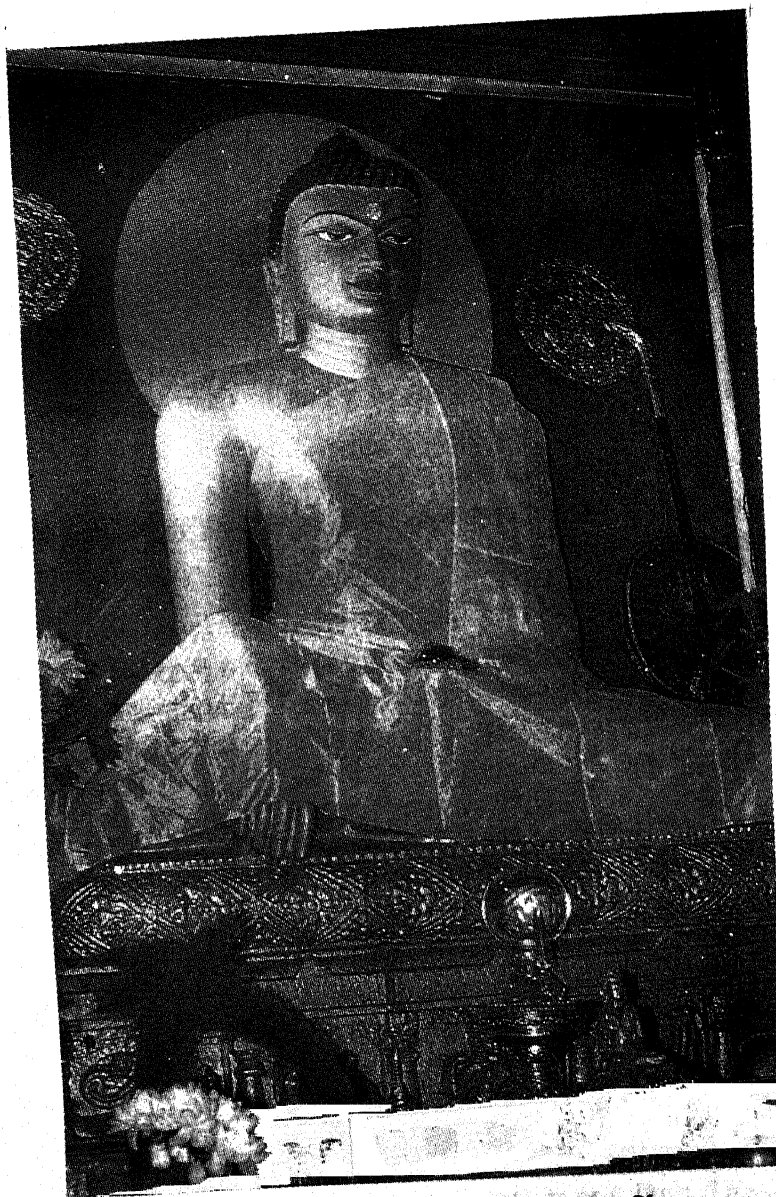
बौद्ध गया के मंदिर में भगवान बुद्ध की मूर्ति

इनके अतिरिक्त यहाँ भी कई छोटे-बड़े होटल हैं। बीऐसटीडीसी के पर्यटन कार्यालय गया रेलवे स्टेशन तथा बौद्ध गया में हैं।

महात्मा बुद्ध के पद-चिह्न, बौद्ध गया
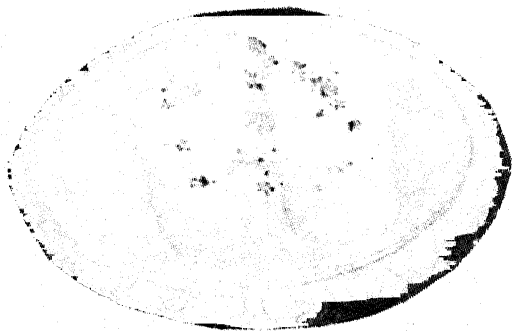
468. भीमबंध पशु विहार यह विहार पूर्वी बिहार में गंगा नदी के किनारे स्थित है। यहाँ तेंदुए, जंगली, बिल्ली, लोमड़ी, रीछ, चौसिंगे, चीतल आदि जानवर तथा शाल के पेड़ पाए जाते हैं। यहाँ भ्रमण के लिए उपयुक्त समय नवंबर से अप्रैल तक का होता है। यहाँ से निकटतम बड़ा शहर मुंगेर और निकटतम रेलवे स्टेशन जमूई में है। निकटतम हवाई अड्डा पटना 212 किमी दूर है।

469. महुआद्वार पशु विहार इसकी स्थापना 1976 में हुई थी। यहाँ भूरे रंग के भेड़िए, लोमड़ी, चीतल, सांभर और तेंदुए मिलते हैं। यहाँ जाने का उपयुक्त समय नवंबर से फरवरी तक का होता है। महुआद्वार नगर यहाँ से 12 किमी दूर है। निकटतम रेलवे स्टेशन 30 किमी दूर छिप्पाद्वार है। निकटतम हवाई अड्डा राँची है।

470. मिथिला इसका आधुनिक नाम जनकपुरी है। मिथिला विदेह राजा जनक की राजधानी थी, जिसने यहाँ सीता स्वयंवर के लिए यज्ञ किया था। महावीर और बुद्ध ने अपने-अपने समय में मिथिला की यात्रा की थी। बुद्ध के समय में मिथिला लिच्छवी गणतंत्र में शामिल थी। उस समय चेतक लिच्छवी गंणतंत्र का गणमुख्य था। उसने अपनी पुत्री का विवाह मगध के राजा बिंबिसार के साथ किया था। दसवीं शताब्दी ई० में इसे चालुक्य राजा यशोवर्मन ने जीत लिया था। मैथिली कवि विद्यापति यहीं रहा करते थे।

व्यापार मिथिला धर्म, व्यापार और संस्कृति का केंद्र थी। यहाँ हाथियों, घोड़ों और कीमती रत्नों का एक बड़ा बाजार हुआ करता था। श्रावस्ती के व्यापारी यहाँ अपनी वस्तुएँ बेचने के लिए ऊँटों पर लादकर लाया करते थे। बुद्ध काल

में मिथिला एक समृद्ध नगर था। यहाँ की उस काल की व्यापारिक स्थिति के लिए कृपया चंपा देखें।

471. मुंगेर—ऐतिहासिक महत्त्व आठवीं शताब्दी के अंत में प्रतिहार राजा नागभट्ट द्वितीय ने कन्नौज के चालुक्य शासक चक्रायुद्ध को गद्दी से हटाकर एक मायने में पाल शासक धर्मपाल को चुनौती दे दी थी, क्योंकि चक्रायुद्ध धर्मपाल की सहायता से ही कन्नौज का राजा बना था। उन दोनों में मुंगेर में एक युद्ध हुआ, जिसमें धर्मपाल की हार हुई। 1143 ई० में कन्नौज के गहड़वाल राजा गोविंदचंद्र ने मुंगेर पर अधिकार कर लिया था, परंतु 10 वर्ष बाद पाल शासक ने इसे उससे वापस ले लिया। बंगाल की नवाबी के दौरान मीर कासिम ने अपनी राजधानी मुर्शिदाबाद से मुंगेर बदल ली थी। मेजर एडम्स ने उसे यहाँ 1763 ई० में हराया। उसके बाद मीर जाफर पुनः (1763-65) नवाब बना। 1765 में उसकी मृत्यु के बाद उसका बेटा निजामुद्दौला (1765-66) गद्दी पर बैठा, परंतु वह अंग्रेजों के हाथों की कठपुतली बनकर रह गया। बंगाल का अंतिम नवाब सैफुद्दौला (1766-70) हुआ।

472. राँची राँची बिहार के दक्षिणी भाग में छोटा नागपुर के पठारी क्षेत्र में है। यह अपनी पहाड़ी, जिसे राँची की पहाड़ी कहा जाता है, के लिए जाना जाता है। पहाड़ी के ऊपर एक शिव मंदिर, एक कृत्रिम झील, दो अन्य मंदिर और एक स्नान घाट है। गवर्नमैंट पैलेस यहाँ की अन्य प्रमुख इमारत है।

राँची के दस किमी दक्षिण-पश्चिम में जगन्नाथपुर गाँव है, जहाँ पुरी के जगन्नाथ मंदिर जैसा ही जगन्नाथ का एक छोटा मंदिर है। पुरी की तरह यहाँ भी हर वर्ष छोटे स्तर पर रथ यात्रा निकाली जाती है। राँची के लगभग 40 किमी उत्तर-पूर्व में संसार के ऊँचे झरनों में से एक हुंड्रू झरना है। यहाँ पूरी सुवर्णरेखा नदी झरने के रूप में गिरती है। जब नदी में बाढ़ आई हुई होती है, तो झरना ज्यादा प्रचंड और अधिक देखने लायक होता है। हुंड्रू के पास ही दासम झरना है। एक अन्य झरना गौतम धारा है। राँची से 37 किमी दूर जोन्हा झरना है। लगभग 75 किमी दूर पारसनाथ की पहाड़ी है, जहाँ पारसनाथ ने निर्वाण प्राप्त किया था।

473. राजगीर कृपया राजगृह देखें।

474. राजगृह यह स्थान पटना के निकट है। इसे गिरिव्रज और राजगीर के नाम से भी जाना जाता है। यह नालंदा से 15 किमी दूर है। राजगृह
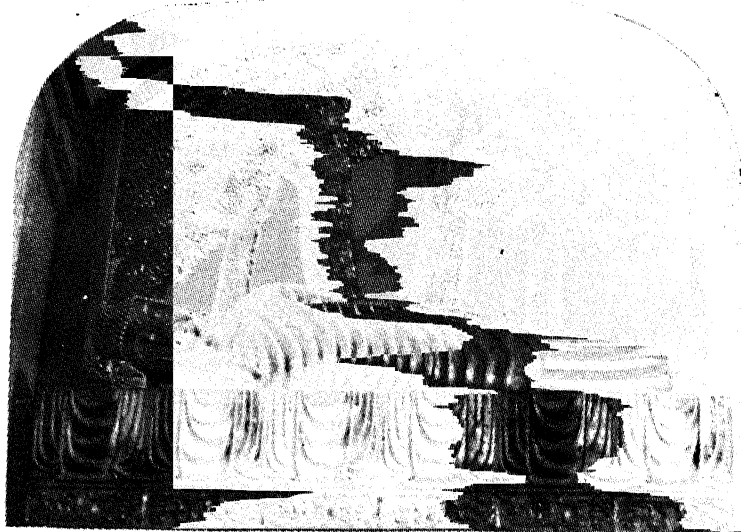
लेटी हुई अवस्था में बुद्ध, बौद्ध गया

एक सुरक्षित शहर हुआ करता था। यह पाँच पहाड़ियों से तथा तीन परकोटे से घिरा हुआ था। परकोटों में हर तरह की सुविधा थी, जिससे यह शत्रु का काफी समय तक सामना कर सकता था। अजातशत्रु द्वारा पाँचवीं शताब्दी ई०पू० में बनाए गए गिरिव्रज किले के ध्वंसावशेष यहाँ आज भी देखे जा सकते हैं।

ऐतिहासिक महत्त्व राजगृह में कंस के ससुर जरासंघ की राजधानी थी। 650 ई०पू० में यह शिशुनाग, 556-495 ई०पू० तक गिरिव्रज के बाद हर्यंक वंश के बिंबिसार, 495-462 ई०पू० तक अजातशत्रु तथा 462 से 459 ई०पू० तक मगध साम्राज्य के अन्य उत्तराधिकारियों की राजधानी रही। पाटलीपुत्र के मगध और मौर्य साम्राज्य की राजधानी बन जाने के बाद इसका ह्रास होना शुरू हो गया।

धार्मिक महत्त्व राजगृह बौद्धों और जैनों का एक प्रसिद्ध धार्मिक स्थान रहा है। 537 ई०पू० में घर छोड़ने (जिसे महाभिनिष्क्रमण कहा जाता है) के बाद गौतम बुद्ध सबसे पहले यहीं आए थे। बाद में उन्होंने यहाँ कई बार प्रवचन भी किए थे। ऐसा माना जाता है कि महात्मा बुद्ध ने यहीं के गृद्धकूट पर्वत पर मौर्य सम्राट बिंबिसार को बौद्ध धर्म की दीक्षा दी थी। जीवक ने यहाँ बुद्ध के लिए एक विहार बनवाया था। 487 ई० में अजातशत्रु ने यहाँ बौद्धपर्णी गुहा में पहली बौद्ध परिषद बुलाई थी। इसकी अध्यक्षता महाकश्यप ने की थी। त्रिपिटकों के शेष भाग इसी परिषद में लिखे गए थे। यहाँ एक पहाड़ी पर जापानी बौद्धों ने एक स्तूप बनवाया

बौद्ध गया में मन्नत के स्तूप

था, जहाँ रज्जू-मार्ग के रास्ते से भी जाया जा सकता है।

व्यापार राजगृह बुद्ध के काल में एक समृद्ध नगर था। यहाँ से श्रावस्ती तक एक महामार्ग था। यहाँ की उस समय की व्यापारिक स्थिति के लिए कृपया चंपा देखें।

पर्यटन स्थल यहाँ के दर्शनीय स्थलों में अजातशत्रु का किला, अमर वन, वेनु वन (बिंबिसार द्वारा महात्मा बुद्ध के लिए बनवाया गया विहार), बिंबिसार की जेल, गृद्धकूट (महात्मा बुद्ध का बरसाती मौसम का निवास) प्रसिद्ध हैं। इनके अलावा सप्तधारा, मनियार मठ, पिखलकैव, स्वर्ण भंडार, जैन मंदिर आदि भी दर्शनीय हैं। राजगृह से 25 किमी दूर बिहार शरीफ में 14वीं सदी के मुस्लिम संत मखदूम शाह शरीफुद्दीन का मकबरा है। अट्ठारह किमी दूर कुंडलपुर नामक जगह भगवान महावीर के जन्म स्थान के रूप में प्रसिद्ध है। इतनी ही दूरी पर स्वराजपुर बड़गाँव में झील और सूर्य मंदिर है, जहाँ वैशाख और कार्तिक में छठ पूजा के दौरान काफी पर्यटक आते हैं। यहाँ एक पशु विहार भी है, जिसमें चीते, चिंकारे, जंगली, बिल्ली, तेंदुए और भेड़िए बहुत मात्रा में हैं।
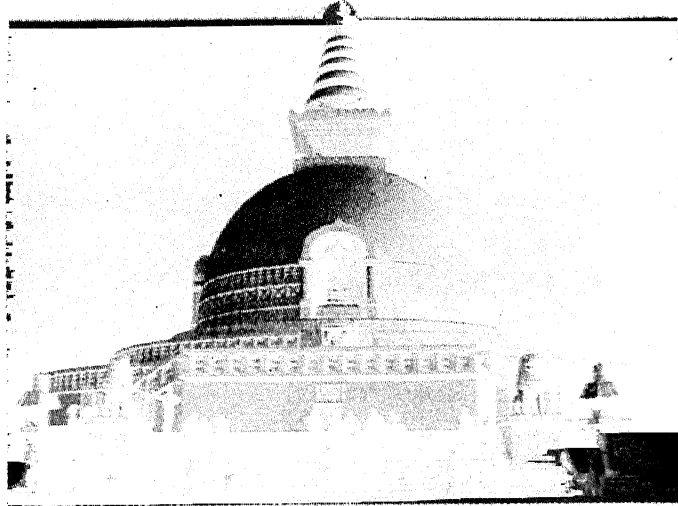
शान्ति स्तूप, राजगृह

475. लौरिया अराराज यह स्थान बिहार के चंपानेर जिले में है।
पुरातात्विक महत्त्व 243-42 ई०पू० में अशोक ने यहाँ एक स्तंभ लेख स्थापित करवाया था, जिसमें उसके धर्म और अहिंसा के सिद्धांत दिए गए हैं।

476. विक्रमशिला यह स्थान भागलपुर से करीब 36 किमी दूर था। इसकी स्थापना पाल राजा धर्मपाल, जिसे विक्रमशिला के नाम से भी जाना जाता था, ने की थी।

पुरातात्विक एवं शैक्षिक महत्त्व यह शहर शिक्षा के क्षेत्र में उपलब्धि के कारण जाना जाता है और इसी कारण इसका पुरातात्विक महत्त्व भी हो गया है। राजा धर्मपाल ने अंटीचक गाँव में आठवीं शताब्दी में एक विहार बनवाया था। बाद में यह विहार वज्रयान बौद्ध मतावलंबियों का एक रिहायशी विश्वविद्यालय बन गया, जिसका नाम विक्रमशिला विश्वविद्यालय पड़ा। ख्याति में यह नालंदा के बाद दूसरे नंबर पर था। यह एक पहाड़ी पर स्थित था। दीपंकर श्रीज्ञान इसका सबसे प्रसिद्ध अध्यापक था। इस विश्वविद्यालय द्वारा अन्य विश्वविद्यालयों के विद्वानों का भी सम्मान किया जाता था। ऐसे विद्वानों में नागार्जुन और अतिशकोर प्रमुख थे। यहाँ काफी दिनों तक बौद्ध धर्म और तंत्र-विद्या की शिक्षा दी जाती रही। यहाँ लगभग 1000 विद्यार्थी तथा 108 अध्यापक थे। इस स्थल की खुदाई 1961 और

1980 में की गई थी। खुदाई में पाए गए विहार में 263 कमरे पाए गए हैं। बख्तियार खिलजी ने इसे 1203 में नष्ट कर दिया। उसने यहाँ अनेक बौद्ध भिक्षुओं को भी मरवा दिया।

अशोक के स्तंभ का शीर्ष, वैशाली

477. वैशाली

यह स्थान मुजफ्फरपुर जिले में पटना से लगभग 55 किमी दूर है। इसका नाम राजा विशाल के नाम पर पड़ा। इसका प्राचीन नाम बसाढ़ है।

ऐतिहासिक महत्त्व ऐसा माना जाता है कि श्री रामचंद्र के काल में यहाँ सुमति का शासन था।
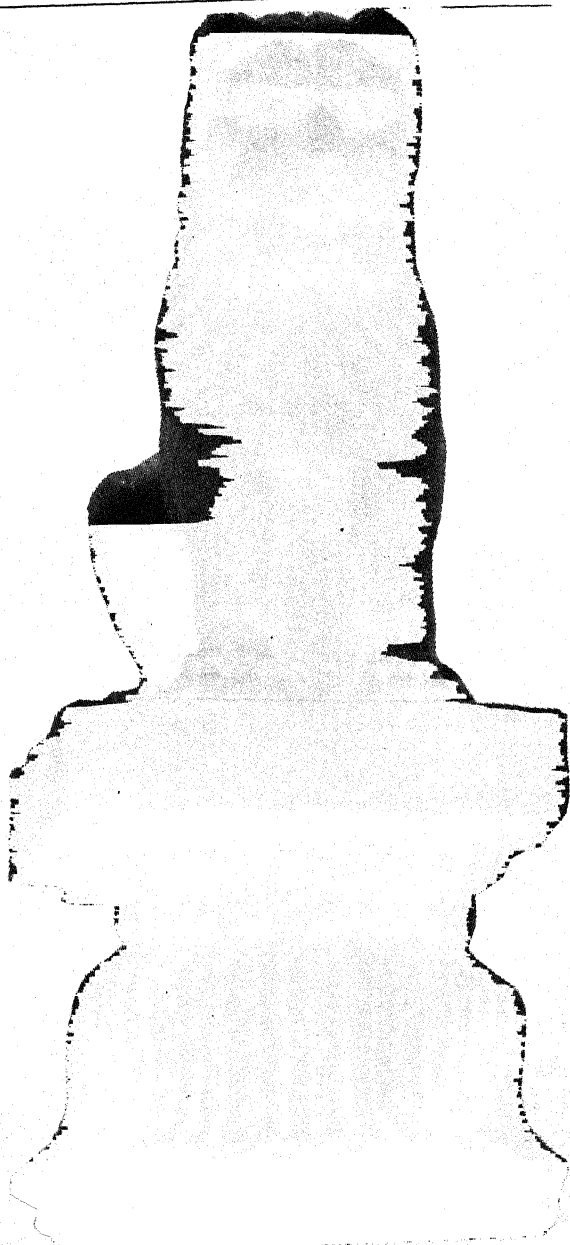
छठी शताब्दी ई०पू० में इसका विकास शिखर पर था। उस समय यहाँ प्रजातंत्र था, जिस कारण इसे विश्व के सबसे पुराने प्रजातंत्र के रूप में जाना जाता है। महावीर के पिता सिद्धार्थ भी यहीं के राजा था। बुद्ध के काल में वैशाली लिच्छवी शासक की राजधानी थी। चंद्रगुप्त प्रथम ने वैशाली के लिच्छवी राजा की पुत्री कुमारदेवी से विवाह किया था। इन दोनों ने अपने संयुक्त नाम से सिक्के जारी किए
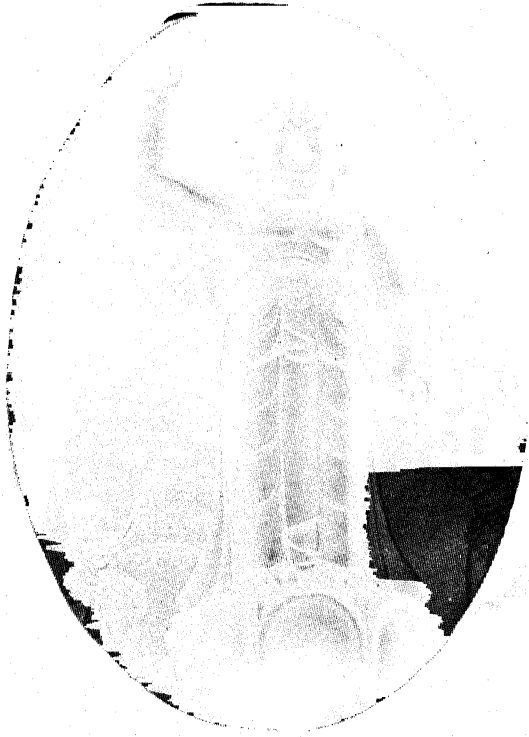
विश्व शांति स्तूप, वैशाली

थे। समुद्रगुप्त इसी लिच्छवी राजकुमारी का पुत्र था। गुप्त काल में यह बिहार की क्षेत्रीय राजधानी थी। उन दिनों फाहियान ने इस शहर की यात्रा की थी। सातवीं शताब्दी में ह्यून सांग भी यहाँ आए थे। आजकल यह शहर अपने बढ़िया किस्म के आमों, केलों और लीचियों के लिए जाना जाता है।

धार्मिक महत्त्व इतिहास में वैशाली का पर्याप्त धार्मिक महत्त्व रहा है। ऐसा माना जाता है कि समुद्र मंथन से पहले देवों और राक्षसों में वार्तालाप यहीं हुआ था। वर्धमान महावीर का जन्म 599 ई०पू० में वैशाली में ही हुआ था। गौतम बुद्ध ने भी इस शहर की यात्रा कई बार की थी तथा अपना अंतिम प्रवचन यहीं दिया था, जिसके दौरान उन्होंने अपने महापरिनिर्वाण की भविष्यवाणी कर दी थी। यहाँ 387 ई०पू० में दूसरी बौद्ध सभा भी हुई थी। यह सभा शिशुनाग ने बुलाई थी। इस सभा में बौद्ध धर्म की पुस्तकों में संशोधन किया गया था। बौद्ध ग्रंथों में इस

शहर की सामाजिक गतिविधियों का उल्लेख किया गया है। महावीर की जन्म भूमि होने, बुद्ध की कई यात्राओं तथा यहाँ के राजा शिशुनाग के बौद्ध होने के कारण यहाँ बौद्ध और जैन दोनों धर्मों के अनुयायी रहते थे। प्रसिद्ध नर्तकी आम्रपाली यहीं रहती थी। बाद में उसने बौद्ध धर्म अपना लिया था।

पुरातात्विक महत्त्व पुरातात्विक अवशेषों को प्राप्त करने के लिए वैशाली में अब तक 1801, 1903, 1913, 1950, 1958, 1976 और 1991 में सात बार खुदाई हो चुकी है। 1801, 1903 और 1913 में प्राप्त अवशेषों को कलकत्ता संग्रहालय में तथा 1950, 1958, 1976 और 1991 में प्राप्त अवशेषों को पटना संग्रहालय, वैशाली संग्रहालय तथा काशी प्रसाद जायसवाल शोध संस्थान में रखा गया है। अशोक ने यहाँ एक स्तंभ तथा एक स्तूप बनवाया था। स्तंभ के चारों ओर अनेक स्तूप हैं। वैशाली में 200-22 ई० काल की मिट्टी की एक मुहर भी पाई गई है। वैशाली में व्यापारिक संघ भी हुआ करते थे। बसाढ़ में गुप्त काल के व्यापारिक संघों द्वारा प्रयुक्त लिफाफे और उन्हें सीलबंद करने की 274 मुहरें भी पाई गई हैं। बसाढ़ में एक लेख भी पाया गया है, जिसमें चंद्रगुप्त विक्रमादित्य के शासन के बारे में विस्तार से बताया गया है।

व्यापार बुद्ध काल में वैशाली एक समृद्ध नगर था। यहाँ की उस काल की व्यापारिक स्थिति के लिए कृपया चंपा देखें।

पर्यटन स्थल वैशाली में देखने योग्य स्थान अशोक स्तंभ, रामकुंड, बासो कुंड ग्राम, मोहन की दरगाह, राजा विशाल का किला, संग्रहालय, अभिषेक पुष्करनी, कुंडलपुर (महावीर का जन्म स्थान), बावन पोखर मंदिर, दो बुद्ध स्तूप, शांति स्तूप, हरिकटोरा मंदिर, लोटस टैंक, जैन मंदिर, चौमुखी महादेव, मिरांजी की दरगाह तथा बौद्ध स्तूप हैं।

कैसे तथा कब जाएँ वैशाली से निकटतम हवाई अड्डा पटना (56 किमी) और रेलवे स्टेशन पटना हाजीपुर (35 किमी) तथा मुजफ्फरपुर (36 किमी) है। इन स्थानों से यहाँ से बस तथा टैक्सी सेवाएँ उपलब्ध हैं। गर्मियों में यहाँ का तापमान 44°से से 21°से तक और सर्दियों में 23°से से 6°से तक होता है। यहाँ भ्रमण के लिए अक्तूबर से अप्रैल तक का समय (विशेषकर मध्य अप्रैल, जब यहाँ महावीर का जन्म वैशाली महोत्सव के रूप में मनाया जाता है) उपयुक्त रहता है।

ठहरने की सुविधाएँ वैशाली, पटना तथा मुजफ्फरपुर में पीडब्ल्यूडी टूरिस्ट बंगले, यूथ होस्टल, बीऐसटीडीसी का टूरिस्ट बंगला तथा वैशाली में जैन

धर्मशाला है।

पर्यटन सूचना पर्यटन संबंधी सूचना के लिए पटना में कौटिल्य विहार, वीरचंद पटेल पथ स्थित बीऐसटीडीसी के कार्यालय और 9-डी हटमेंट, मुख्य सचिवालय स्थित बिहार के पर्यटन विभाग से संपर्क किया जा सकता है।

478. सहसराम—पुरातात्विक महत्त्व यहाँ शेरशाह ने अपना मकबरा बनवाया था। 1545 में उसकी मृत्यु के बाद उसे यहीं दफनाया गया था। यह एक विशाल और भव्य इमारत थी और 30 फुट ऊँचे चबूतरे पर बनाई गई थी। इसका बाहरी भाग मुस्लिम शैली में है और अंदरूनी भाग भारतीय शैली से सजाया गया है। डॉ वी ए स्मिथ ने लिखा है – "यह मकबरा भारत में निर्मित सबसे बढ़िया डिजाइन की गई और सुंदर इमारतों में से एक है तथा विशालता और भव्यता के मामले में उत्तरी प्रांतों में इससे पूर्व निर्मित कोई इमारत इसकी सानी नहीं रखती।" कन्निंघम ने तो इसे "प्रतिष्ठित ताज से भी अच्छी इमारत" माना है।

479. हजारी बाग पशु विहार यह विहार छोटा नागपुर के मध्य स्थित है। इसकी स्थापना 1954 में की गई थी। यह देश के सबसे आकर्षक पशु विहारों में माना जाता है। यहाँ जंगली बिल्ली, चीतल, तेंदुए, बाघ, नीलगाय और सांभर अधिक देखने को मिलते हैं। इस विहार में साल के पेड़ भी बहुत मात्रा में हैं। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन पाँच किमी दूर कोदेरमा तथा निकटतम हवाई अड्डा 115 किमी दूर राँची है।

+++

मणिपुर

ऐतिहासिक विवरण

मणिपुर में पाखंबा नाम के व्यक्ति ने 33 ई० में अपना शासन स्थापित किया था। बाद में उसी के वंश ने यहाँ से 1891 तक शासन किया। 1813 में ब्रह्मा के राजा ने मणिपुर पर कब्जा कर लिया था। 1890 में अंग्रेजों ने यहाँ अपनी शक्ति का प्रदर्शन किया। यहाँ के राजा सूर चंद्र को उसके विद्रोही भाई सेनापति ने गद्दी से उतार दिया। उस समय गद्दी का उत्तराधिकारी युवराज बाहर था। उसने आकर शासन संभाल लिया। परंतु सूर चंद्र स्वयं शासक बनना चाहता था। उसने अंग्रेजों से सहायता की अपील की, परंतु अंग्रेजों ने युवराज का ही पक्ष लिया। फिर भी वे सेनापति को उसके पद से हटाना चाहते थे। यह कार्य पूरा करने के लिए असम का मुख्य आयुक्त क्विंटन भेजा गया, परंतु सेनापति ने उसे पकड़कर मरवा दिया। तुरंत एक अंग्रेजी सेना मणिपुर भेजी गई। 1891 में हुए युद्ध में युवराज और सेनापति दोनों मारे गए। युवराज की जगह एक अवयस्क बच्चे को यहाँ का शासक बना दिया गया।

स्केल में नहीं

राज्य का क्षेत्रफल 22327 वर्ग किमी है। राज्य की जनसंख्या का घनत्व 82 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी है और साक्षरता दर लगभग 60% है। राज्य में 8 जिले हैं, जिनकी प्रमुख भाषा मणिपुरी है।
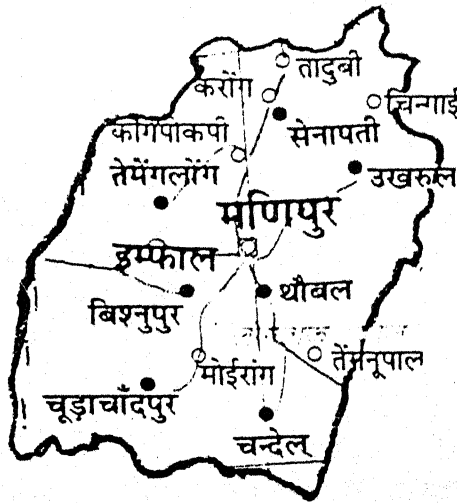
उत्सव

राज्य के प्रमुख उत्सव डोल जात्रा, लाई हाराओबा, हेइकरु हिटोंग्बा, रासलीला, चेइराओबा, निगोल चाक-कूबा, रथ जात्रा, कुट, लुई-न्गाई-नी, गांग-न्गाई, इद-उल-फितर, क्रिस्मस आदि हैं।

नृत्य

राज्य में राल, बसंत रास, कुनु रास, नित्य रास, गोपा रास, उधुकुल रास, पुंग चोलम्, लाइषू चोंगबा, खोंगजाम पर्ब, थाँगटा, थाबाल चोंगबी, कितलाम् आदि नृत्य किए जाते हैं। राल नृत्य में राज्य की कोइरंग जन-जाति के लोग हाथ में धनुष-बाण लेकर युद्ध का स्वांग करते हैं। लाई हाराओबा प्रदेश का सबसे पुराना नृत्य है और थांगजिन (शिव) भगवान को प्रसन्न करने के लिए नवयुवकों एवं नवयुवतियों द्वारा किया जाता है। प्रदेश के मैतेई पुरुष देवताओं को प्रसन्न करने के लिए पाओसा चाकोई नृत्य भी करते हैं।

480. इम्फाल

यह शहर मणिपुर की राजधानी है। यह 790 मी की ऊँचाई पर बसा हुआ है।

पर्यटन स्थल इम्फाल में मणिपुर की लोक कला एवं संस्कृति का प्रतीक गोविंद जी का मंदिर है। यह मंदिर वैष्णव संप्रदाय का है और मणिपुर का प्राचीनतम मंदिर है। यहाँ वीर टिकेंद्र जीत पार्क में एक शहीद मीनार है, जिसका निर्माण अंग्रेजों के विरुद्ध 1891 की लड़ाई में मारे गए शहीदों की

मणिपुरी नृत्य, मणिपुर

मणिपुर का एक अन्य नृत्य

स्मृति में किया गया था। इसी प्रकार यहाँ द्वितीय विश्व युद्ध में शहीद हुए व्यक्तियों की याद में अनेक समाधियाँ हैं। इम्फाल में एक राज्य संग्रहालय भी है। यहाँ का केईबल लमजाओ नैशनल पार्क बहुत प्रसिद्ध है। इस पार्क को देखने का उपयुक्त समय नवंबर से मार्च तक का होता है। इम्फाल से 46 किमी दूर लोकटक झील है, जो पूर्वोत्तर की सबसे बड़ी और सुंदर झील है। इसमें नौकायन की सुविधा भी है। इम्फाल का सबसे बड़ा व्यावसायिक केंद्र इमा बाजार (ख्वाईरामबंद बाजार) है। इम्फाल से 6 किमी दूर चिड़ियाघर, 7 किमी दूर खोंग्घामपाट फलोद्यान, 8 किमी दूर लांग्थाबल पहाड़ी, 27 किमी दूर बिष्णुपुर में बिष्णु मंदिर (राजा कियांबा के काल में 1467 में निर्मित), 29 किमी दूर काईना में गोविंदजी का मंदिर, 36 किमी दूर खोंगजाम, 40 किमी दूर फुबला, 45 किमी दूर मोइरांग का मंदिर, 59 किमी दूर न्यू चूड़ाचाँदपुर तथा 156 किमी दूर तमेंगलांग (जल-प्रपात, फलोद्यान, चरागाह, जीलैंड झील, बराक जल-प्रपात, थारोन गुफा आदि के लिए), 69 किमी दूर तेंगनोपल, 83 किमी दूर उखरूल तथा 110 किमी दूर मुरे अच्छे पर्यटन स्थल हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ इम्फाल से निकटतम रेलवे स्टेशन 215 किमी दूर डीमापुर है। यह वायु तथा सड़क मार्ग से देश के सभी स्थानों से जुड़ा हुआ है। यहाँ ठहरने के लिए खुमंग लमपक में यूथ होस्टल, थागल बाजार में मारवाड़ी ध
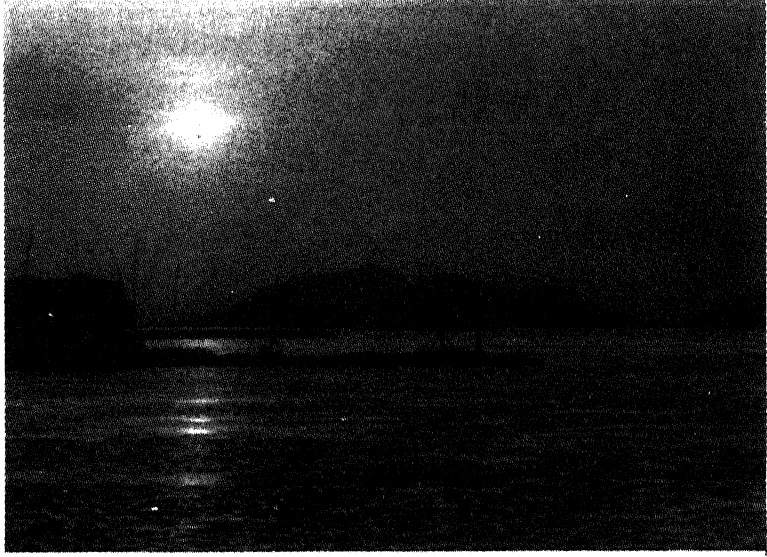
लोकटक झील

ार्मशाला, मुख्यमंत्री निवास के पीछे राजकीय अतिथि गृह तथा पर्यटन विभाग के होटल इम्फाल के अलावा हर तरह के अनेक होटल हैं। यहाँ गर्मियों में अधिकतम तापमान 32°से तथा सर्दियों में न्यूनतम तापमान 2°से होता है। यहाँ साल में कभी भी जाया जा सकता है। इम्फाल में राज्य पर्यटन विभाग का पर्यटन कार्यालय भी है। आईटीडीसी का पर्यटक सूचना केंद्र जेल रोड पर पुरानी लंबूलेन में है।

481. केईबल लमजाओ राष्ट्रीय पार्क इस पार्क की स्थापना 1954 में इम्फाल के पास लोकटक झील के पास की गई थी। यहाँ पर संगाय हरिण मिलते हैं, जो संसार में कही भी नहीं मिलते। इनकी संख्या मात्र पचास है। संगाय हरिणों के अतिरिक्त यहाँ बिल्लियाँ, भालू, जंगली सूअर, पाड़ा हरिण और नाना प्रकार की मछलियाँ हैं।

अन्य पर्यटन स्थल उपर्युक्त के अलावा राज्य में निम्नलिखित पर्यटन स्थल भी हैं :

सिंगड़ा बाँध, आईऐनए स्मारक (मोईरांग), सेंद्रा, वाईथाउ झील, भारत शाँति स्मारक (लोक पाचिंग), मोरेह, सिरोई पहाड़ियाँ, खांग्कोई गुफा, माओ, टेयोंगलांग।

❖❖❖

मध्य प्रदेश

विवरण

मध्य प्रदेश की उत्पत्ति नवंबर, 1956 में हुई। इंदौर की रानी अहिल्याबाई होलकर, गौड़ महारानी कमला देवी और रानी दुर्गावती यहाँ की प्रसिद्ध महिला शासिकाएँ थीं।

राज्य का क्षेत्रफल 443446 वर्ग किमी है, जो देश में सबसे अधिक है। राज्य की जनसंख्या का घनत्व 149 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी और साक्षरता दर

44.2% है। राज्य में 45 जिले हैं, जिनमें मुख्य रूप से हिंदी बोली जाती है।

उत्सव

मध्य प्रदेश में जन-जातियों के लोगों की संख्या लगभग 23% है। अतः यहाँ होली, दिवाली, दशहरा आदि अन्य पारंपरिक हिंदू त्योहारों के साथ-साथ जन-जातियों द्वारा कुछ अपने उत्सव भी मनाए जाते हैं। इनमें होली के अवसर पर पश्चिमी जन-जातियों के भागोड़िया समारोह का प्रमुख स्थान है।

नृत्य

प्रदेश में नीमरी काठी, पंथी, पंडवानी आदि नृत्य किए जाते हैं।

482. अवंतगढ़—ऐतिहासिक महत्त्व सिकंदर लोदी के समय में यह राजपूतों का एक मजबूत किला था। सिकंदर लोदी ने फरवरी, 1507 ई० में इसका घेरा डाला और राजपूत राजा को हराकर इस पर कब्जा कर लिया। उसने इसे पहले मुजाहिद खाँ और बाद में मलिक ताजुद्दीन कंबों के सुपुर्द कर दिया।

483. अवंति—ऐतिहासिक महत्त्व अवंति आधुनिक मध्य प्रदेश में नर्मदा नदी की उत्तरी दिशा का इलाका है। प्राचीन काल में यहाँ का राजा पालक मगध का प्रमुख शत्रु हुआ करता था। उसने मगध के सम्राट अजातशत्रु के पुत्र उदायीभद्र, जो यहाँ का राज्यपाल था, को मरवा दिया था। अजातशत्रु ने इसे एक लड़ाई में जीत लिया था। शिशुनाग के समय में अवंतिवर्धन यहाँ का राजा था। शिशुनाग ने उसे बुरी तरह परास्त करके अवंति को अपने राज्य में मिला लिया। बुद्ध के समय में चंडप्रद्योत अवंति का शासक था। वत्स के राजा उदयन से हारने के बाद उसने उसके साथ अपनी पुत्री वासवदत्ता का विवाह किया था। चंडप्रद्योत के शासन के बाद अवंति को मगध साम्राज्य में मिला लिया गया था। अवंति की राजधानी उज्जयिनी अथवा अवंतिपुरी में कभी सेन राजाओं का शासन भी रहा।

484. इंदौर यह स्थान होलकर राजाओं का गढ़ रहा है। 1723 में पेशवा बाजीराव ने मालवा के मुगल सूबेदार सैयद बहादुशाह को हराकर इसे मल्हार राव होलकर को दे दिया था। उसने यहाँ से 1764 तक शासन किया। उसके बाद माले राव (1764-65) तथा मल्हार राव होलकर के पुत्र खांडे राव, जो 1754 में ही स्वर्ग सिधार गया था, की पत्नी अहिल्या बाई ने 1795 तक शासन किया। अहिल्या बाई के बाद तुकोजी होलकर, जिसे अहिल्या बाई ने 1767 में अपना सेनापति बनाया था, ने 1797 में शासक बना। बाद में जसवंत राव (1798-

1811), मल्हार राव होलकर द्वितीय (1811-33), हरिराव होलकर (1834-43), तुकोजी राव होलकर द्वितीय (1843-86), शिवाजी राव होलकर (1886-1903), तुकोजी राव होलकर तृतीय (1903-26) तथा जसवंत राव द्वितीय (1926 से 1947) यहाँ के शासक हुए। यहाँ के छतरी बाग में मल्हार राव होलकर, अहिल्या बाई और उनके वंशजों के स्मारक हैं।

पर्यटन स्थल इंदौर में जैन काँच मंदिर बहुत प्रसिद्ध है। इसकी हर छोटी-छोटी जगह पर काँच और मणिये लगे हुए हैं। मंदिर में बड़े-बड़े झाड-फानूस टँगे हुए हैं। कुछ चित्रकारी भी की गई है। माणिक बाग में महारानी का निवास और लाल बाग में उसके अतिथियों का निवास स्थान है। शहर में नए और पुराने दोनों राजमहल देखे जा सकते हैं। शहर में एक संग्रहालय भी है, जिसमें ब्राह्मण और जैन धर्म से संबंधित चीजें रखी गई हैं।

485. इंद्रावती राष्ट्रीय उद्यान यह उद्यान मध्य प्रदेश में इंद्रावती नदी के दोनों ओर है। इसकी स्थापना 1978 में हुई थी। 1983 में इसे बाघ संरक्षण क्षेत्र घोषित किया गया। यहाँ काली बत्तखें, गौर मृग, चिंकारे, चौसिंगे, सांभर, जंगली भैंसे, लोमड़ी, नील गाय, चीते, बाघ, भेड़िये और तरह-तरह के पक्षी पाए जाते हैं। यहाँ भ्रमण का उपयुक्त समय जनवरी से अप्रैल तक का होता है। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन जगदलपुर (168 किमी) तथा हवाई अड्डा रायपुर (468 किमी) है।

486. उदयगिरि यह स्थान साँची से 11 किमी दूर है और अपनी बीस गुफाओं के लिए प्रसिद्ध है। इनमें से दो गुफाएँ जैन धर्म और 18 हिंदू धर्म से संबंधित हैं। गुफा संख्या पाँच में विष्णु के वराह अवतार की प्रतिमा है। इस प्रतिमा में वह पृथ्वी को उठाए हुए एक सर्प दैत्य से उसकी रक्षा कर रहा है। गोल छत वाली गुफा संख्या सात चंद्रगुप्त द्वितीय के आदेश से उसके अपने प्रयोग के लिए बनाई गई थी। गुफा संख्या 19 इन गुफाओं में सबसे बड़ी है। इसी में ही सबसे अधिक नक्काशियाँ भी हैं। पहाड़ी पर गुप्त काल का एक जीर्ण-शीर्ण मंदिर है। यहाँ चंद्रगुप्त द्वितीय का एक अभिलेख भी मिला है, जिससे उसके राज्य के विस्तार और शकों के साथ उसके युद्ध की जानकारी मिलती है। कुमारगुप्त ने भी यहाँ एक लेख स्थापित करवाया था, जिससे पता लगता है कि उसने अपने पिता से मिले विस्तृत राज्य को अक्षुण्ण रखा।

487. उदांती अभयारण्य यह अभयारण्य उड़ीसा और मध्य प्रदेश की

सीमा के पास स्थित है। यहाँ से नीलगाय, तेंदुए, जंगली बिल्ली और अनेक प्रकार के पक्षी देखने को मिलते हैं। यहाँ से निकटतम शहर रायपुर है। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय जनवरी से अप्रैल तक का होता है।

488. उज्जैन यह स्थान क्षिप्रा नदी के किनारे स्थित है।

उज्जैन को भारत की सांस्कृतिक काया का मणिपुर-चक्र और भारत की मोक्षदायिका सात प्राचीन पुरियों में से एक माना गया है। प्राचीन विश्व की याम्योत्तर (शून्य देशांतर) रेखा यहीं से गुजरती थी। पुराणों में उज्जयिनी, अवंतिका, अमरावती, प्रतिकल्पा, कुमुद्वती आदि नामों से इसकी महिमा गायी गई है। महाकवि कालिदास द्वारा वर्णित "श्री विशाला विशाला" एवं भाणों में उल्लिखित "सार्वभौम" नगरी यही रही है। इस नगरी से ऋषि सांदीपनि, महाकात्यायन, भाष, सिद्धसेन दिवाकर, भर्तृहरि, कालिदास-वराहमिहिर-अमर-सिंहादि नवरत्न, परमार्थ, शूद्रक, बाणभट्ट, मयूर, राजशेखर, पुष्पदंत, हरिषेण, शंकराचार्य, बल्लभाचार्य, जगदरूप आदि संस्कृतिवेत्ता महापुरुषों का घनीभूत संबंध रहा है। इस प्रकार उज्जयिनी धर्म और संस्कृति के विभिन्न आयामों से समृद्ध रही है।

ऐतिहासिक महत्त्व राजनैतिक दृष्टि से उज्जैन का एक लंबा इतिहास रहा है। उज्जैन के गढ़ क्षेत्र में हुए उत्खनन से आद्यैतिहासिक एवं प्रारंभिक लोहयुगीन सामग्री प्रभूत मात्रा में प्राप्त हुई है। पुराणों व महाभारत में उल्लेख आता है कि बृष्णि, बीर कृष्ण व बलराम यहाँ गुरू सांदीपनि के आश्रम में विद्याध्ययन हेतु आए थे। कृष्ण की एक पत्नी मित्रवृंदा उज्जैन की ही राजकुमारी थी। उसके दो भाई विंद एवं अनुविंद महाभारत युद्ध में कौरवों की ओर से युद्ध करते हुए वीरगति को प्राप्त हुए थे। बुद्ध के समय में चण्डप्रद्योत यहाँ का एक अत्यंत प्रतापी शासक हुआ। भारत के अन्य शासक उससे भय खाते थे। उसकी दुहिता वासवदत्ता एवं वत्स नरेश उदयन की प्रणय गाथा इतिहास-प्रसिद्ध हैं। प्रद्योत वंश के उपरांत उज्जैन मगध साम्राज्य का अंग बन गया। यह शहर प्राचीन अवंति राज्य(मध्य मालवा) के उत्तरी भाग की राजधानी था। मौर्य सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य यहाँ आया था। उसके बेटे बिंदुसार के राज्य में उसका पौत्र अशोक यहाँ का राज्यपाल रहा था। अशोक की एक भार्या वेदिसा देवी से उसे महेंद्र और संघमित्रा जैसी संतति मिली, जिसने कालांतर में श्रीलंका में बौद्ध धर्म का प्रचार किया था। 232 ई०पू० में अशोक का पौत्र संप्रति इसके पश्चिमी इलाकों का राजा बना और उसने उज्जैन को अपनी राजधानी बनाया। मौर्य साम्राज्य के पतन के बाद शक् राजाओं ने यहाँ पहली से चौथी शताब्दी तक शासन किया और उज्जैन शकों और सातवाहनों की राजनैतिक स्पर्द्धा का केंद्र बन गया। शकों के पहले आक्रमण को

उज्जैन के वीर विक्रमादित्य ने प्रथम शताब्दी में विफल कर दिया था। 106 और 130 ई० के मध्य सातवाहन राजा गौतमीपुत्र शात्कर्णी ने इसे अपने कब्जे में कर लिया था, किंतु 130 ई० में विदेशी पश्चिमी शकों ने चष्टन के नेतृत्व में उज्जैन हस्तगत कर लिया। बाद में कनिष्क ने इसे चष्टन से छीन लिया था। चष्टन और रूद्रदामा (130-50) शक् वंश के प्रतापी महाक्षत्रप थे। रूद्रदामा के पश्चात् उसका पुत्र दमघसद और जीवदामा क्षत्रप बने। 236 से 240 ई० के बीच आभीर राजा ईश्वर दत्त ने इस वंश से कुछ क्षेत्र छीन लिए थे। इस वंश के अंतिम राजा रूद्रसिंह तृतीय ने 390 ई० तक राज्य किया। ऐसा माना जाता है कि अपने साम्राज्य विस्तार के बाद चंद्रगुप्त द्वितीय (375-418) ने शक् क्षत्रप को हराकर "शकारि" (शक्-नाशक) की पदवी धारण की। उसकी इस विजय ने उस समय भारत में विदेशी शासन का अंत कर दिया और रोम के साथ समुद्री व्यापार का मार्ग खोल दिया। शकों और गुप्तों के काल में इस क्षेत्र का काफी आर्थिक विकास हुआ। पाँचवीं शताब्दी के अंत में हूणों के साथ कुछ गुर्जर लोग भी आए थे और वे प्रतिहार कहलाए। इनकी एक शाखा उज्जैन में राज्य करती थी। उसने नागभट्ट प्रथम के नेतृत्व में अरबों को परास्त किया था। उसका उत्तराधिकारी कुक्कुट था। उसके बाद देवराज तथा वत्सराज राजा बने। वत्सराज ने 744 में चालुक्य राजा विक्रमादित्य की मृत्यु के पश्चात् मालवा जीतकर उज्जयिनी में हिरण्यगर्भ दानोत्सव किया। प्रथम राष्ट्रकूट राजा दंतिदुर्ग (753-60) ने भी उज्जयिनी में हिरण्यगर्भ दानोत्सव किया। वत्सराज ने कन्नौज के राजा इंद्रायुद्ध को हराकर कुछ समय तक वहाँ भी अपना शासन स्थापित किया। उसने बंगाल के राजा धर्मपाल को भी हराया, परंतु 792 में वह राष्ट्रकूट राजा ध्रुव से हार गया। वत्सराज के बाद नागभट्ट द्वितीय भी 802 में राष्ट्रकूट सेना से हार गया। 810 ई० में उसने चक्रायुद्ध को कन्नौज से खदेड़ दिया। मुंगेर के युद्ध में उसने धर्मपाल को भी हराया। उसके बाद रामभद्र और मिहिरभोज (836-62) गद्दी पर बैठे। मिहिरभोज के समय में राष्ट्रकूट राजा कृष्ण द्वितीय उज्जैन तक पहुँच आया था, परंतु हार गया। मिहिरभोज के उत्तराधिकारियों में महेंद्रपाल प्रथम (885-910), भोज द्वितीय और महीपाल (912-42) थे। महीपाल के बाद के शासकों ने कन्नौज से राज्य किया।

963 ई० में राष्ट्रकूट राजा कृष्ण तृतीय ने परमार राजा सीयक को हराकर उज्जयिनी पर अधिकार कर लिया। 1000 से 1300 ई० तक मालवा परमार शक्ति का केंद्र रहा। काफी वर्षों तक उज्जैन उनकी राजधानी रही। उनके काल में सीयक द्वितीय, मुंजदेव, भोजराज, उदयादित्य तथा नारवर्मन राजाओं ने साहित्य एवं संस्कृति की अपूर्व सेवा की। बारहवीं शताब्दी में अजमेर के शासक

अजयराज ने उज्जैन पर आक्रमण किया और यहाँ के सेनापति को बंदी बना लिया। दिल्ली के दास वंश के शासक अल्तमश ने 1231 में और खिलजी वंश के शासक अलाउद्दीन खिलजी ने 1305 में आक्रमण कर उज्जैन पर कब्जा कर लिया। 1398 में तैमूर लंग के आक्रमण के बाद उपजी अराजकता के फलस्वरूप फिरोजशाह तुगलक के धार के जागीरदार दिलावर खाँ ने 1401 ई० में मांडू में अपने आपको दिल्ली सल्तनत से स्वतंत्र घोषित कर लिया। उसके पुत्र हुसंग शाह (1405-34) ने 1406 में अपनी राजधानी उज्जैन से मांडू बदल ली थी। इस प्रकार खिलजी तथा अफगान मालवा में स्वतंत्र राज्य करते रहे। मुगल सम्राट अकबर ने जब मालवा पर अधिकार किया, तो उसने उज्जैन को अपना प्रांतीय मुख्यालय बनाया। मुगल शासक अकबर, जहाँगीर, शाहजहाँ तथा औरंगजेब उज्जैन आए थे। औरंगजेब और दारा ने उज्जैन के निकट ही धरमत में 25 अप्रैल, 1658 को उत्तराधिकार का युद्ध लड़ा था, जिसमें औरंगजेब विजयी रहा। 1723 में बाजीराव ने मालवा पर आक्रमण करके मुगल सूबेदार सैयद बहादुरशाह को हराकर उज्जैन पर कब्जा कर लिया और यहाँ राणोजी सिंधिया को अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया। बाद में राणोजी ने यहाँ अपना स्वतंत्र शासन स्थापित कर लिया। 1761 में पानीपत के दूसरे युद्ध में उसकी मृत्यु हो गई। बाद में माधवराव सिंधिया यहाँ का प्रसिद्ध शासक हुआ। उसने दिल्ली के मुगल सम्राट पर भी अपना प्रभुत्व जमाया। 1794 में उसकी मृत्यु के बाद दौलतराव सिंधिया (1794-1827) शासक बना। 23 सितंबर, 1803 को लार्ड वेल्जली के भाई आर्थर वेल्जली ने सिंधिया और भौंसले की संयुक्त सेना को असाई के पास हरा दिया। उसने असीरगढ़ और बुरहानपुर पर भी कब्जा करने का प्रयत्न किया। नवंबर, 1803 में सिंधिया की फौजें लसवाड़ी नामक स्थान पर भी पराजित हुई, फलस्वरूप सिंधिया ने अंग्रेजों से संधि कर ली। उसने अपने यहाँ अंग्रेज रेजीडेंट रखना और भसीन की संधि मानना स्वीकार कर लिया। 1810 में दौलतराव सिंधिया ने अपनी राजधानी उज्जैन से ग्वालियर बदल ली।

व्यापार और कला शकों के काल में उज्जैन व्यापार का केंद्र था। यहाँ से मूल्यवान और अर्ध-मूल्यवान रत्नों का निर्यात होता था। यहाँ लोहे और पत्थर की किलेबंदी का काम व्यापक स्तर पर किया गया था। प्राचीन काल में उज्जैन दो व्यापारिक रास्तों के बीच पड़ता था – एक रास्ता भड़ौंच से कौशांबी तक जाता था और दूसरा पाटलीपुत्र से प्रतिष्ठान तक। सन् 200 ई० के बाद इगेट और कार्नेसिया रत्नों के निर्यात के कारण इसका महत्त्व ज्यादा बढ़ गया था। यहाँ कच्चा माल क्षिप्रा नदी के माध्यम से प्राप्त किया जाता था। अशोक ने इस शहर

का विवरण अपने एक शिलालेख में, कालिदास ने मेघदूत में, बाण भट्ट ने काव्य कादंबरी में और शूद्रक ने मृच्छकटिक में किया है। अल्तमश यहाँ से विक्रमादित्य की एक प्रसिद्ध मूर्ति दिल्ली ले गया था।

यहाँ हड़प्पा संस्कृति के बाद के अवशेष मिले हैं। इस संस्कृति के मिट्टी के बर्तन भूरे रंग के और चित्रित होते थे। मकान बनाने के लिए लोग कच्ची ईंटों तथा सरकंडों का प्रयोग करते थे। वे घोड़े और ताँबे से परिचित थे। सभ्यता के अंतिम दिनों में लोहे का प्रयोग भी होने लगा था। वे चावल के अतिरिक्त गाय तथा हरिण का माँस खाते थे।

धर्म और संस्कृति ह्यून सांग ने सातवीं शताब्दी में अपनी भारत यात्रा के दौरान इस स्थान की यात्रा भी की थी। यहाँ का महाकालेश्वर मंदिर प्रसिद्ध मंदिरों में से एक है। उपलब्ध अभिलेखों से ज्ञात होता है कि गौत्तम बुद्ध ने भी यहाँ कई बार धर्म प्रवचन किया था। यहाँ एक संस्कृत विश्वविद्यालय भी था और यहाँ की संस्कृत शिक्षा का प्रचार दूर-दूर तक था। उज्जैन प्राचीन काल से ही सभी धर्मों का केंद्र भी रहा है। आधुनिक काल में यह हिंदुओं के उन पवित्र स्थानों में से एक है, जहाँ बारह और छह वर्षों के पश्चात क्रमशः कुंभ और अर्धकुंभ मेले आयोजित किए जाते हैं। उज्जैन में कुंभ पर्व पर वृहस्पति सिंह राशि पर होता है, इस कारण इसे "सिंहस्थ" भी कहा जाता है। इस पर्व पर स्नान का सर्वाधिक महत्त्व है। इस कारण हजारों साधु-संत तथा लाखों यात्री इस अवसर पर क्षिप्रा स्नान हेतु उज्जैन में एकत्रित होते हैं।

पर्यटन स्थल उज्जैन में अनेक पर्यटन स्थल हैं, जिनमें निम्नलिखित प्रमुख हैं :

क्षिप्रा तट क्षिप्रा के मनोरम तट पर अनेक दर्शनीय व विशाल घाट हैं, जिनमें त्रिवेणी-संगम, गोतीर्थ, नरसिंह तीर्थ, पिशाचमोचन तीर्थ, हरिहर तीर्थ, केदार तीर्थ, प्रयाग तीर्थ, ओखर तीर्थ, गंगा तीर्थ, मंदाकिनी तीर्थ, सिद्ध तीर्थ आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। पुराणों में इसे अमृत-संभवा व ज्वरघ्नी माना गया है।

ज्योतिर्लिंग महाकालेश्वर उज्जैन सभी धर्मों एवं मत-संप्रदायों के समन्वय का केंद्र रहा है। असंख्य शिवलिंगों, एकादश रूद्र, अष्ट भैरव, द्वादश आदित्य, छह विनायक, चौबीस मातृका, मारूति-चतुष्टय, दस विष्णु, नवदुर्गा, नवग्रह आदि के धर्मस्थल इस पवित्र क्षेत्र में होने की चर्चा स्कंदपुराण के अवंतीखंड में आई है। प्राचीन काल में यहाँ जैन व बौद्ध धर्म तथा मध्य काल में इस्लाम के विभिन्न संप्रदायों का पर्याप्त प्रचार व प्रसार रहा है। फिर भी उज्जैन मूलतः एक शैव क्षेत्र

है। यहाँ चौरासी ईश्वर विशेष पूजित रहे हैं। इस क्षेत्र के अधिपति भगवान भूतभावन महाकालेश्वर माने गये हैं। यहाँ का ज्योतिर्लिंग महाकाल दक्षिणमूर्ति होने के भारत के अन्य ज्योतिर्लिंगों की तुलना में विशिष्ट महत्त्व रखता है। परमार काल में पुनः निर्मित विशालतम महाकाल मंदिर सहित उज्जैन के अनेक प्राचीन मंदिरों को सन् 1235 ई० दिल्ली के गुलामवंशी सुल्तान अल्तमश के धर्मांध निर्देश पर ध्वस्त कर दिया गया था। यद्यपि इन स्थानों की पूजा-अर्जना बाद में भी जारी रही, किंतु इनमें से अनेक का पुनः निर्माण मराठा काल में ही संभव हो सका। महाकालेश्वर, अनादि-कल्पेश्वर, वृद्ध-महाकाल, हरसिद्धि, कालिका, चिंतामण-गणेश, द्वारकाधीश (गोपाल), जनार्दन, अनंतनारायण, नवग्रह, तिलभांडेश्वर, कर्कराज आदि मंदिरों का वर्तमान स्वरूप राणोजी सिंधिया के मंत्री रामचंद्र शेणवी की देन है, जिसने उज्जैन के विगत सांस्कृतिक वैभव को बहुत कुछ लौटा दिया। महाकाल मंदिर तीन खंडों वाला एक विशाल धार्मिक निर्माण है और भारत के लाखों यात्रियों की असीम श्रद्धा का केंद्र है।

शैवधर्म-स्थल महाकाल मंदिर परिसर, मंगलनाथ, कालभैरव, विक्रांत भैरव, दत्त अखाड़ा आदि।

शाक्त धर्म-स्थल हरसिद्धि, चौंसठ योगिनी, गढ़-कालिका, नगरकोट की रानी आदि।

वैष्णव धर्म-स्थल गोपाल मंदिर, अनंतनारायण मंदिर, अंकपात, गोमती कुंड, राम-जनार्दन मंदिर, श्रीनाथ जी व गोवर्धन नाथ जी की हवेलियाँ, चतुर व्यूह आदि के मंदिर।

अन्य हिंदू धर्म-स्थल त्रिवेणी-संगम पर नवग्रह मंदिर, पाटीदारों का राम मंदिर, रामानुजकोट, सराफा का जनार्दन मंदिर, क्षिप्रा तट का क्षिप्रा मंदिर, रणजीत हनुमान मंदिर, चिंतामण-गणेश, मनकामनेश्वर-गणेश मंदिर, स्थिरमन (थलमन) गणेश मंदिर आदि।

जैन धर्म-स्थल अवंतिपार्श्वनाथ मंदिर, नमक मंडी स्थित जिनालय एवं उपाश्रय, जयसिंहपुरा का दिगंबर जैन मंदिर, आसामपुरा का जिनालय।

मुस्लिम धर्म-स्थल ख्वाजा शकेब की मस्जिद, छत्री चौक स्थित मस्जिद, जामा मस्जिद, बोहरों का रोजा।

ऐतिहासिक स्मारक वैश्या टेकरी का स्तूप-स्थल, भर्तृहरि-गुफा, पीर-मत्स्येन्द्र

की समाधि रूमी का मकबरा, बिना नींव की मस्जिद, कालियादेह महल व कुंड, वेधशाला, कोठी महल, बेगम का मकबरा तथा जयपुर के राजा जयसिंह द्वितीय द्वारा 1724 में बनवाया गया जंतर-मंतर।

अन्य विक्रम विश्वविद्यालय परिसर, श्री सिंथेटिक्स, कालिदास अकादमी, सिंधिया प्राच्य शोध संस्थान, विक्रम कीर्ति मंदिर, विक्रम विश्वविद्यालय में पुरातत्त्व संग्रहालय, डॉ. वि. श्री. वाकणकर स्मृति जिला पुरातत्त्व संग्रहालय, जयसिंहपुरा दिगंबर जैन संग्रहालय, भारतीय कला भवन।

489. एरण—ऐतिहासिक एवं पुरातात्विक महत्त्व यह स्थान मालवा क्षेत्र में है। यहाँ की गई खुदाई से पता चलता है कि यह स्थल ताम्र-पाषाण युग का केंद्र था। यहाँ समुद्रगुप्त द्वारा स्थापित शिलालेखों से सारे साम्राज्य एवं उसकी विजयों के बारे में महत्त्वपूर्ण जानकारी मिलने के साथ-साथ यह भी ज्ञात हुआ है कि उसके राज्य की सीमा यहाँ तक थी। बुद्धगुप्त ने यहाँ 484 ई० में 13 मी ऊँचा स्तंभ बनवाया था। इस स्तंभ के छज्जे पर सिंह की आकृति और उसके ऊपर विष्णु की मूर्ति है। 1510 ई० में यहाँ भानुगुप्त का राज्य था। 1510 ई० के उसके एक लेख से पता चलता है कि उसका एक सामंत गोपराज एरण के पास एक युद्ध में हूणों से लड़ता हुआ मारा गया था तथा उसकी पत्नी सती हुई थी। यह लेख इस प्रथा के प्रचलन की जानकारी का सबसे पुराना स्त्रोत है। भानुगुप्त के समय में एरण हूणों के हाथों में चला गया। दो अन्य लेखों से पता चलता है कि एरण का शासक मातृविष्णु गुप्त राजा बुद्धगुप्त को अपना अधिपति मानता था, जबकि उसके छोटे भाई धान्यविष्णु ने तोरमाण का आधिपत्य स्वीकार कर लिया था। धान्यविष्णु ने एरण में विष्णु के वराह अवतार मंदिर का निर्माण करवाया। एरण में तोरमाण का एक लेख भी मिला है, जिससे उसकी सफलताओं की जानकारी मिलती है। यहाँ रामगुप्त के काल के ताँबे के सिक्के भी मिले हैं। तीन अन्य लेखों से ज्ञात होता है कि हूणों ने बुद्धगुप्त के राज्य काल के पश्चात फिर आक्रमण करने प्रारंभ कर दिए थे। भानुगुप्त के उत्तराधिकारी नरसिंह बालादित्य ने उन्हें हराया।

490. ओंकारेश्वर नर्मदा नदी के किनारे पर बसा यह स्थान ॐ की आकृति जैसा है। यहाँ श्रद्धालुजन तीर्थ यात्रा के लिए आते हैं। यहाँ नर्मदा और कावेरी के संगम पर श्री ओंकार मानधाता के मंदिर में स्थापित ज्योतिर्लिंग भारत के द्वादश ज्योतिर्लिंगों में से एक है। इसके अतिरिक्त सिद्धनाथ मंदिर, चौबीस अवतार मंदिर समूह, 6 किमी दूर सप्त मातृका मंदिर तथा 9 किमी दूर काजल

रानी गुफा यहाँ के अन्य दर्शनीय स्थल हैं। सिद्धनाथ मंदिर की परिधि पर पत्थर पर गढ़ी हाथियों की श्रृंखला शिल्प कला का बड़ा अच्छा नमूना है।

उपलब्ध सुविधाएँ यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन ओंकारेश्वर रोड (12 किमी) और निकटतम हवाई अड्डा इंदौर (77 किमी) है। ठहरने के लिए यहाँ होलकर गेस्ट हाउस, वन तथा लोक निर्माण विभाग का रेस्ट हाउस और कुछ धर्मशालाएँ हैं। यहाँ भ्रमण का उपयुक्त समय जुलाई से मार्च तक का होता है।

491. ओरछा यह स्थान प्रदेश में बेतवा नदी के किनारे पर है। इसे सबसे पहले बुंदेला मुखिया राजा जुझार सिंह ने अपनी राजधानी बनाया था।

पुरातात्विक महत्त्व के पर्यटन स्थल 1635 में औरंगजेब ने ओरछा नरेश जुझार सिंह को हराकर इस पर अपना प्रभुत्व कायम किया था। औरछा बुंदेले राजपूतों का गढ़ था, जिन्होंने यहाँ सोलहवीं-सतरहवीं शताब्दी में दुर्ग तथा अनेक महल बनवाए। भवनों के निर्माण में हिंदू, जैन और मुगल तीनों शैलियों का प्रयोग किया गया है। जहाँगीर महल यहाँ का सबसे अच्छा महल है। इसका निर्माण वीरसिंहजु देव ने जहाँगीर के ओरछा आने की खुशी में सतरहवीं शताब्दी में करवाया था। इस महल के पास ही मधुकर शाह द्वारा बनवाया गया राजमहल है, जिसमें अनेक बरामदे हैं। ये बरामदे भूल-भुलैया से हैं। इन दोनों महलों के बीच उदित सिंह द्वारा 1685 के आस-पास शीश महल बनवाया गया था। पास में ही राजा इंद्रमणि ने अपनी पत्नी राय प्रवीण के लिए 1675 के आस-पास एक महल बनवाया था। राय प्रवीण कवयित्री भी थीं। ओरछा में लक्ष्मीनारायण नाम से एक सुंदर मंदिर भी है। विष्णु को समर्पित चतुर्भुज मंदिर है। इसका निर्माण वीर सिंह देव ने कराया था। यहाँ के रामराजा मंदिर की सबसे अधिक धार्मिक मान्यता है। ओरछा के अन्य दर्शनीय स्थानों में मधुकर शाह द्वारा मुगल शैली में बनवाया गया फूल बाग, हरदौल की बैठक, सुंदर महल, ओरछा शासकों के चौदह स्मारक, शहीद स्मारक, जुगल किशोर, जानकी मंदिर और हनुमान मंदिर हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ ओरछा से निकटतम रेलवे स्टेशन झाँसी (19 किमी) और निकटतम हवाई अड्डा ग्वालियर (120 किमी) है। यह झाँसी-खजुराहो मार्ग पर है। यहाँ ऐमपीटीडीसी के 'शीश महल' होटल में ठहरने और खाने-पीने की सुविधा है। पर्यटन संबंधी सूचना झाँसी रेलवे स्टेशन पर तथा ओरछा में 'शीशमहल' एवं विशेष क्षेत्र प्राधिकरण के कार्यालय से मिल सकती है।

492. कांगेर घाटी राष्ट्रीय उद्यान यह उद्यान प्रदेश के दक्षिण

में उड़ीसा की सीमा से लगता हुआ है। इसकी स्थापना 1982 में की गई थी। यहाँ चौसिंगे, तेंदुए और भालू अधिक संख्या में मिलते हैं। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन और हवाई अड्डा 30 किमी दूर जबलपुर है।

493. कान्हा राष्ट्रीय पार्क यह पार्क प्रदेश में विंध्याचल और सतपुड़ा पहाड़ियों के मध्य स्थित है। यह भारत के प्रमुख राष्ट्रीय पार्कों में से एक है। इसे राष्ट्रीय पार्क के रूप में 1955 में मान्यता दी गई थी। साल और बाँसों से भरा कान्हा का जंगल झूमते-लहराते घास के मैदानों और टेढ़ी-मेढ़ी बहने वाली नदियों की निसर्ग भूमि है। 940 वर्ग किलोमीटर में फैला यही वह भू-भाग है, जिसकी गाथा अंग्रेजी के महाकवि किपलिंग ने गायी है और बहुत मार्मिकता से अपनी 'जंगल बुक' में लिपिबद्ध की है। अभी भी कान्हा राष्ट्रीय उद्यान में वन्य प्राणियों की विविध प्राचीन जातियाँ निवास करती हैं। बाघ सुरक्षा की विशेष योजना 'प्रोजेक्ट टाइगर' कान्हा में ही शुरु की गयी थी, जिसके लिए 1974 में बाघ संरक्षित कान्हा वन का निर्माण किया गया था। यह उद्यान दुर्लभ प्राणी हार्ड ग्राउंड बारहसिंघा का शरण स्थल भी है। इनके अतिरिक्त यहाँ गौर और काले हरिण भी पाए जाते हैं। इस पार्क को देखने का सर्वोत्तम समय फरवरी से जून तक का होता है। उस समय इसे हाथी पर बैठकर देखा जा सकता है। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन 65 किमी दूर पांडला तथा निकटतम हवाई अड्डा रायपुर है। यहाँ ठहरने के लिए होटल किपलिंग कैंप, कृष्ण जंगल रिसोर्ट तथा कान्हा सफारी लॉज हैं।

494. कालिंजर कालिंजर मध्य प्रदेश के बुंदेलखंड क्षेत्र में है। यहाँ राष्ट्रकूट, प्रतिहार और चंदेल राजाओं का शासन रहा है।

ऐतिहासिक महत्त्व यहाँ के प्रारंभिक चंदेल शासक नन्नुक, वाक्पति, जयशक्ति, विजयशक्ति, राहिल और हर्ष थे। वे कन्नौज के प्रतिहार राजाओं के सामंत थे। हर्ष के उत्तराधिकारी यशोवर्मा (930-54) ने इसे राष्ट्रकूट शासक से छीनकर अपने राज्य में मिला लिया। उसके पुत्र के एक लेख में लिखा है कि उसने गौड़ों, कौशलों, मालवों, चेदियों, गुर्जरों और कश्मीरियों से लड़ाइयाँ लड़ीं। उसने महराजाधिराज का विरुद धारण किया और खजुराहो का विष्णु मंदिर बनवाया। उसके पुत्र धंग (954-1002) की दो राजधानियाँ थीं — खजुराहो और कालिंजर। धंग की मृत्यु के बाद गंडदेव (1002-19) और विद्याधर (1019-60) राजा बने। महमूद गजनी के 1018 के कन्नौज के आक्रमण के दौरान वहाँ के चंदेल राजा

राज्यपाल ने आत्मसमर्पण कर दिया था। महमूद लूट का माल लेकर और राज्यपाल को ही राजा बनाकर चला गया। राज्यपाल की इस कायरता से विद्याधर क्रोधित हो गया। उसे दंड देने के लिए विद्याधर ने कन्नौज पर आक्रमण कर दिया। राज्यपाल युद्ध में मारा गया। इससे गजनी का क्रोध भड़क उठा। उसने 1019 और 1022 में कालिंजर पर दो बार आक्रमण किए। विद्याधर दोनों ही समय राजधानी छोड़कर भाग गया। अंत में महमूद ने उससे संधि कर ली और महमूद लूट-पाट का माल लेकर गजनी लौट गया। महमूद के जाने के बाद विद्याधर ने परमार राजा भोज को हराया। विद्याधर के उत्तराधिकारी विजयपाल ने कलचूरी राजा गांगेयदेव को हराया। उसके बाद 1060 से 1100 ई० तक कीर्तिवर्मा ने शासन की बागडौर संभाली। उसके काल में कलचूरी राजा कर्ण ने उसके राज्य को छीन लिया था, परंतु कीर्तिवर्मा ने इसे वापस ले लिया। उसके एक उत्तराधिकारी मदनवर्मा (1128-65) ने भी कलचूरियों और मालवा के परमार राजा को हराया तथा बनारस के गहड़वाल राजा से मैत्री संबंध कायम किए। मदनवर्मा के बाद परमर्दी 1165 में कालिंजर का राजा बना। पृथ्वीराज चौहान ने उसे 1182 में सिरसागढ़ के स्थान पर हरा दिया। 1202 में मुहम्मद गौरी के सेनानायक कुतुबुद्दीन ऐबक ने कालिंजर के चंदेल राजा पर आक्रमण कर दिया। दोनों में घमासान युद्ध हुआ और अंत में परमर्दी संधि करने के लिए विवश हो गया। परंतु संधि से पहले ही उसकी मृत्यु हो गई। उसके मंत्री अजयदेव ने संधि का प्रस्ताव वापस ले लिया और युद्ध जारी रखा। तुर्कों ने कालिंजर के किले के पानी का स्त्रोत (झरना) मोड़ दिया। अंत में अजयदेव को संधि करनी पड़ी। कालिंजर, खजुराहो और माहोबा पर तुर्कों का अधिकार हो गया। परमर्दी के पुत्र त्रैलोक्यवर्मा (1205-41) ने 1205 में तुर्कों को हराकर अपना राज्य वापस ले लिया। उसने रीवा और कलचूरियों के राज्यों के कुछ भाग पर भी अधिकार कर लिया। इस वंश के राजा 1300 ई० तक राज्य करते रहे। 1304 में अलाउद्दीन खिलजी ने बुंदेलखंड के अधिकतर भाग पर कब्जा कर लिया। 1531 में कालिंजर पर हुमायूँ ने आक्रमण किया और इसके राजपूत राजा से पर्याप्त धन माल छीना। 1545 में शेरशाह ने भी कालिंजर के राजा कीरतसिंह पर आक्रमण करके इसके किले का घेरा डाल लिया था, परंतु इसे कीरतसिंह का सौभाग्य ही कहिए कि शेरशाह बारूद में आग लगने के कारण 22 मई, 1545 को मर गया। अगस्त, 1569 में यहाँ के राजा रामचंद्र ने अकबर के सेनानायक मजनून खाँ को कालिंजर सौंप दिया।

495. खजुराहो खजुराहो प्रदेश के बुंदेलखंड क्षेत्र में छतरपुर जिले
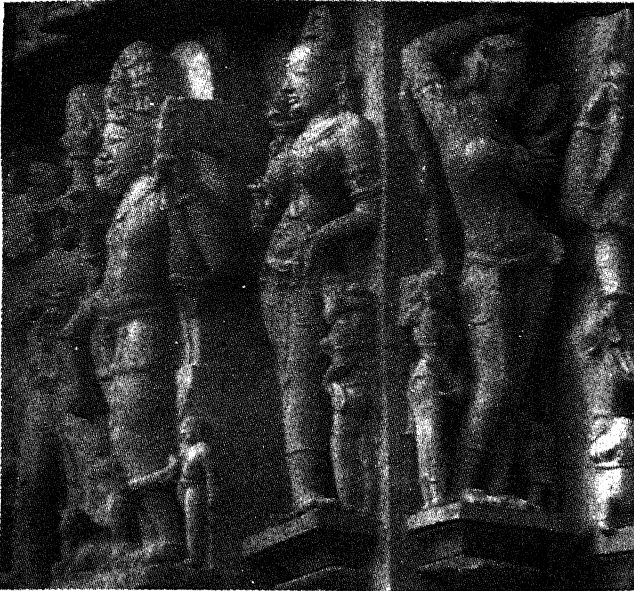
खजुराहो की मूर्ति कला

में एक छोटा सा गाँव है, जो चंदेल राजाओं की राजधानी रहा है।

ऐतिहासिक महत्त्व इस वंश का प्रथम शासक चंदात्रेय था। नौवीं शताब्दी में यहाँ नन्नुक नाम का शासक हुआ। उसने 831 के आस-पास स्वतंत्र राज्य स्थापित किया। उसके उत्तराधिकारी वाक्पति का राज्य विंध्याचल तक था। उसके उत्तराधिकारी जयशक्ति और विजयशक्ति थे। विजयशक्ति ने बंगाल के राजा देवपाल को दक्षिण विजय में सहायता दी थी। इस वंश के राजा हर्ष ने प्रतिहार राजा महीपाल की उसके शत्रु राष्ट्रकूट राजा इंद्र तृतीय के विरुद्ध सहायता की थी। उसकी त्रिपुरी के कलचूरी कोकल्ल से भी मित्रता थी।

चंदेल आरंभ में कन्नौज के प्रतिहार शासकों के अधीन थे। जब प्रतिहारों की शक्ति क्षीण होने लगी, तो चंदेलों ने अपनी शक्ति बढ़ा ली। दसवीं शताब्दी में हर्ष के पुत्र यशोवर्मन (930-54) ने राष्ट्रकूटों से कालिंजर छीन लिया और प्रतिहारों से अपने आपको बिल्कुल स्वतंत्र कर लिया। उसने गौड़, चेदि, मालवा कश्मीर और महाकौशल पर विजय प्राप्त की तथा प्रतिहार शासक से विष्णु की प्रतिमा बलपूर्वक प्राप्त करके उसे खजुराहो के मंदिर में स्थापित किया। यशोवर्मन

के बाद उसका पुत्र धंग (954-1002), गंड (1002-19), विद्याधर (1019-60), कीर्तिवर्मन (1060-1100), मदनवर्मा (1128-65) तथा सबसे अंत में परमर्दी अथवा परमल शासक बना। पृथ्वीराज चौहान ने उसे 1182 में परास्त कर दिया था। 1202 में कुतुबुद्दीन ऐबक ने उससे कालिंजर का दुर्ग और बाद में माहोबा छीन लिया। चंदेल शासक बुंदेलखंड के छोटे से प्रदेश पर सामंत के रूप में सोलहवीं शताब्दी तक शासन करते रहे।

पुरातात्विक एवं धार्मिक महत्त्व यह गाँव चंदेल राजाओं द्वारा 950 ई० से 1000 ई० तक नागर शैली में बनवाए गए 85 मंदिरों के लिए प्रसिद्ध है। इनमें से अब 21 ही शेष हैं। ये मंदिर यहाँ 8 किमी के क्षेत्र में तीन समूहों में हैं। इनमें से पश्चिमी समूह में सबसे अधिक और महत्त्वपूर्ण मंदिर हैं। यह समूह लाल गाँव -राजनगर क्रासिंग के पास है। इस समूह में 900 ई० में सबसे पहले बनाए गए चौंसठ योगिनी (काली) मंदिर और सबसे बड़े कंदर्य महादेव (शिव) मंदिर के अलावा देवी काली को समर्पित जगदंबा, सूर्य को समर्पित चित्रगुप्त, महादेव पार्वती, नंदी, विष्णु को समर्पित लक्ष्मण, शिव को समर्पित मतंगेश्वर, वराह, विश्वनाथ और लाल गाँव महादेव मंदिर प्रमुख हैं। ये मंदिर गाँव के मध्य स्थित शिवसागर झील के दक्षिण-पश्चिम में है। पूर्वी समूह के मंदिर भी खजुराहो गाँव के पास ही हैं। इनमें ब्रह्मा, वामन तथा जावरी तीन हिंदू मंदिर हैं और
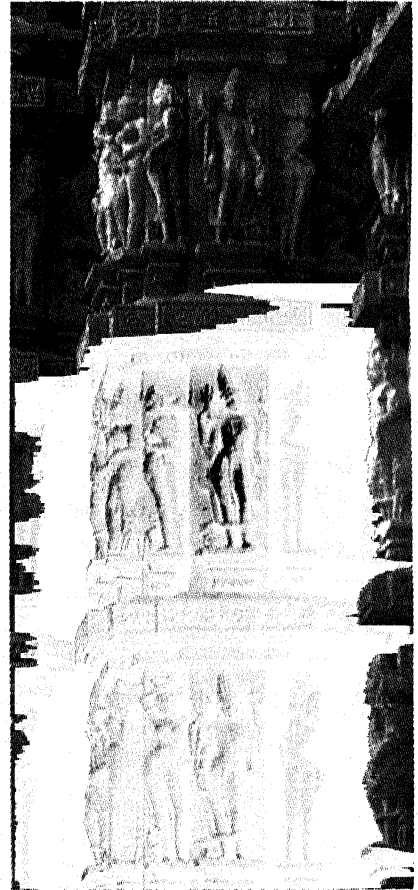
खजुराहो के एक मंदिर का स्तंभ
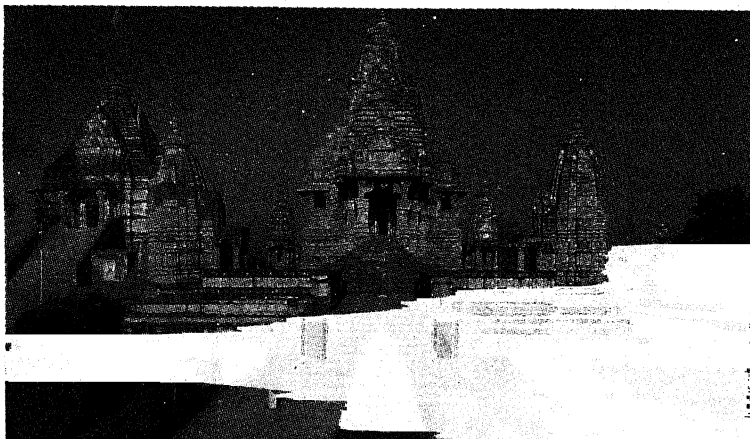
लक्षमण मंदिर, खजुराहो

घंटाई, आदिनाथ, शांतिनाथ व पारसनाथ चार जैन मंदिर हैं। दक्षिणी समूह में चतुर्भुज मंदिर तथा 1130 में सब से बाद में बना शिव को समर्पित दुलादेव मंदिर है। इन मंदिरों में से पारसनाथ मंदिर और कंदर्य महादेव के मंदिरों में नक्काशी का काम पर्याप्त मात्रा में हुआ है। ये सभी मंदिर ऊँचे-ऊँचे और बड़े-बड़े चबूतरों पर बनाए गए हैं। बहुत से मंदिरों के गर्भगृहों के चारों ओर परिक्रमा वीथि बनाई गई है। अधिकांश मंदिरों में काम कला के भित्ति चित्र बनाए गए हैं। बुंदेलखंड के राजा चाँद (सौंदर्य का प्रतीक) के उपासक थे। इसलिए वे चंदेल कहलाए और शायद इसी कारण उन्होंने मंदिरों पर काम कला के चित्र बनवाए। इन मंदिरों पर भगवान शंकर के विवाह के दृश्य होने के कारण यह भी माना जाता है कि ये मंदिर भगवान शंकर की पार्वती के साथ हुई शादी की खुशी में बनाए गए थे। कुछ का मानना है कि ये मंदिर बौद्ध धर्म द्वारा प्रतिपादित कठोर नैतिक अनुशासन के अति विद्रोहस्वरूप अथवा तांत्रिक उपासना पद्धति के प्रभाव से बनाए गए। जो भी हो, खजुराहो के ये स्मारक प्राचीन वास्तुकला, मूर्तिकला, धर्म और जीवन के सामंजस्य के भव्य नमूने हैं और उस समय की संपन्नता को दर्शाते हैं। शिल्पी ने निर्जीव पत्थरों को जीवंत बनाकर इस गाँव को भव्य मंदिरों का गाँव बना दिया है।

इस स्थल के बारे में पाया गया सबसे पुराना वर्णन 922 ई० का है। 999 ई० के एक लेख से पता चलता है कि खजुराहो का प्राचीन नाम खजूरवाहक अथवा खर्जुरवाटिका था। सातवीं शताब्दी में ह्यून सांग ने इस स्थान की यात्रा की थी। 1022 में कालिंजर पर धावा बोलने आए महमूद गजनी के साथ उसका

इतिहासकार अल बरूनी भी आया था। बरूनी ने भी इस स्थल का उल्लेख अपने साहित्य में किया है। अरब यात्री इब्न बतूता ने 1335 ई० में तथा अबू रहन ने भी इस स्थान की यात्रा की थी। सोलहवीं शताब्दी के आते-आते यह कस्बा इतिहासकारों की नजरों से ओझल हो गया। इसके बाद एक अंग्रेज इंजीनियर कैप्टन टी एस बर्ट ने ही 1838 में इसकी तरफ लोगों का ध्यान आकर्षित किया। छतरपुर के महाराजा प्रताप सिंह ने 1843 से 1847 तक इन मंदिरों की मरम्मत का कार्य वृहद् स्तर पर कराया। 1852 में जनरल कन्निंघम की यात्रा और उस द्वारा इसके वर्णन के बाद यह स्थल पुनः प्रकाश में आया। अब यह पूरे विश्व में विख्यात हो चुका है और इसे विश्व दाय (world heritage) का दर्जा दे दिया गया है। कन्निंघम को यहाँ बुद्ध की उत्कीर्णित प्रतिमा मिली थी, जिसमें लिखा है कि दसवीं शताब्दी के पूवार्द्ध में यहाँ एक मठ भी था। खजुराहो मंदिरों के निर्माण के 1000 वर्ष पूरे होने पर मध्य प्रदेश सरकार ने फरवरी, 1999 से जनवरी, 2000 तक इसका सहस्राब्दि वर्ष भी मनाया। इसके समारोह का उद्‌घाटन भारत के राष्ट्रपति श्री के. आर. नारायणन ने शिवसागर झील के किनारे पाँच फरवरी, 1999 को किया।

खजुराहो का एक शिल्प

खजुराहो के आस-पास भी अनेक दर्शनीय स्थान हैं। इनमें शिल्पग्राम, संग्रहालय, मध्य प्रदेश हस्तशिल्प संग्रहालय मृगनयनी, इंडियन आर्ट ऐंपोरियम तथा कालिंजर और अजयगढ़ के किले हैं। किलों में पाँचवीं से बारहवीं शताब्दी तक की पाषाण प्रतिमाएँ रखी गई हैं। खजुराहो से 25 किमी दूर राजा छत्रपाल द्वारा 150 वर्ष पूर्व बनवाया गया राजगढ़ पैलेस, बीस किमी दूर राने फाल तथा 30 किमी दूर पांडव फाल हैं। पास में ही पन्ना राष्ट्रीय उद्यान तथा डायमंड माइंज हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ खजुराहो देश के अन्य भागों से सड़क व वायु मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन 61 किमी दूर माहोबा है। दिल्ली की ओर से जाने वाले पर्यटकों को 172 किमी दूर झाँसी तथा कलकत्ता की तरफ से जाने वाले पर्यटकों को सतना स्टेशन पर उतरना होता है। हवाई मार्ग से दिल्ली से यहाँ तक का दो घंटे का तथा आगरा और वाराणसी से 50-50 मिनट का रास्ता है। खजुराहो के निकटवर्ती शहरों से यहाँ प्रतिदिन बसें भी आती रहती हैं। स्थानीय भ्रमण के लिए यहाँ ताँगे, टैक्सियाँ व रिक्शे आदि मिलते हैं।

ठहरने के लिए यहाँ चंदेल और खजुराहो अशोक होटलों के अलावा सर्किट हाउस, मध्य प्रदेश सरकार का टूरिस्ट बंगला, राहिल जनता तथा टेंपल होटल हैं। यहाँ भ्रमण के लिए अक्तूबर से मार्च तक का समय उपयुक्त रहता है। खजुराहो में भारत सरकार का पर्यटन सूचना केंद्र पश्चिमी समूह के मंदिरों के पास और हवाई अड्डे पर है। ऐमपीऐसटीडीसी का सूचना केंद्र चंदेल कल्चरल सेंटर में है। इंटरनेट पर खजुराहो का पता है—http://ww. orientexpressltd. अथवा com/Khajurahomillenium/Index.html अथवा http://www.airindia.com/ travel Khajuraho. html अथवा http: www.mptourism.com/km.httml.

496. खेर्ला—ऐतिहासिक महत्त्व यहाँ के राजा नरसिंह ने मांडू के सुल्तान की सहायता से बहमनी क्षेत्र पर माहूर तक आक्रमण किया, परंतु बहमनी शासक ताजुद्दीन फिरोज (1397-1422) ने खेर्ला के राजा का दमन कर दिया। हुशंग शाह ने बहमनी राजाओं के खेर्ला के जागीरदार नरसिंह को 1422 में मालवा के शासक के प्रति निष्ठा प्रकट करने के लिए विवश किया। 1428 में उसने खिराज लेने के लिए खेर्ला पर आक्रमण कर दिया। इस पर नरसिंह ने अपने बहमनी अधिपति से सहायता की माँग की। परंतु अहमद सहधर्मी मुस्लिम भाई के विरुद्ध हिंदू जागीरदार की सहायता न करने का विचार मन में लाकर एलिचपुर तक आकर वापस लौट गया। हुशंग शाह ने इसे उसकी कायरता समझकर उस पर आक्रमण कर दिया, परंतु हार गया। अब नरसिंह खेर्ला से चला और हुशंग शाह की पराजित सेना को मालवा ले आया। बाद में नरसिंह ने खेर्ला में अहमद का भव्य स्वागत किया। 1467 के आस-पास मालवा के शासक ने खेर्ला पर फिर अधिकार कर लिया था, परंतु 1467 में ही बहमनी शासक शमसुद्दीन मुहम्मद के सेनापति महमूद गावाँ ने जौनपुर, बंगाल और गुजरात के सुल्तानों से मिलकर मालवा पर आक्रमण कर दिया और यहाँ के शासक को खेर्ला के बदले बहमनियों को बरार देने के लिए विवश कर दिया।

497. ग्वालियर ग्वालियर का नामकरण ग्वालिप्पा नाम के एक संत पर हुआ था।

ऐतिहासिक महत्त्व यह शहर अपने किले के लिए जाना जाता है। यह किला भारत के सबसे पुराने किलों में से एक है। इसका वर्णन 525 ई० के एक लेख में भी मिलता है। 1192 में पृथ्वीराज चौहान को हराने के बाद मुहम्मद गौरी 1195 में भारत फिर आया था। उसने ग्वालियर के किले का घेरा डाला। ग्वालियर के राजा ने गौरी से संधि करने में ही अपनी भलाई समझी। परंतु बाद में उसके तुगरिल नामक सेनानायक ने उसे इतना परेशान किया कि वह किला छोड़कर चला गया। कुतुबुद्दीन ऐबक ने उस किले पर अधिकार कर लिया। बुंदेलखंड के चंदेल राजा धंग (954-1002) का राज्य ग्वालियर तक फैला हुआ था। यहाँ राजा भोज, जिसने 1018 से 1060 तक शासन किया था, के काल का एक लेख पाया गया है। 1231 ई० में अल्तमश ने यहाँ के राजा मंगलदेव को हराकर इसे अपने कब्जे में कर लिया। 1466 ई० में जौनपुर के हुसैनशाह ने यहाँ के राजा कीर्ति सिंह (रायकरन) पर आक्रमण किया था। 1479 में वह बहलोल के हाथों पराजित हो गया था। पंद्रहवीं शताब्दी में ग्वालियर तोमर राजाओं के अधीन था। यहाँ के एक तोमर राजा मान सिंह ने (1456-1516) यहाँ मान मंदिर
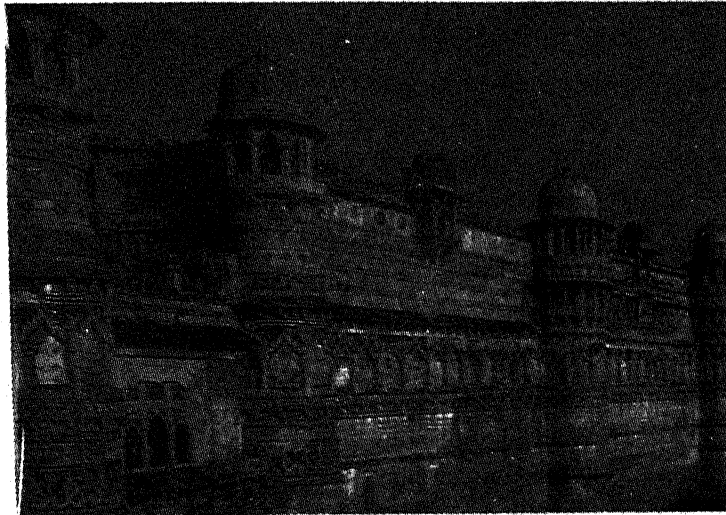
ग्वालियर का किला
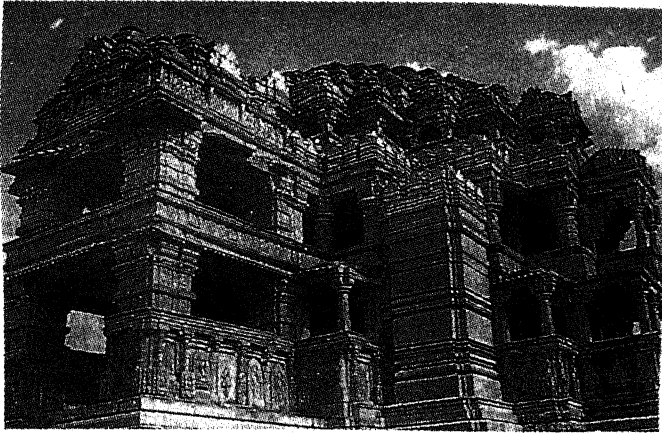
सास-बहू का मंदिर, ग्वालियर

बनवाया था। 1486 में बहलोल लोदी ने आक्रमण किया। सिकंदर लोदी ने राजा मान सिंह पर 1492 ई० में आक्रमण किया था, जिसके फलस्वरूप मान सिंह ने सिकंदर लोदी की अधीनता स्वीकार कर ली और उसे कर तथा भेंट दी। 1506 ई० में उसने ग्वालियर पर पुनः आक्रमण किया, परंतु इस बार वह नाकामयाब रहा। 1518 ई० में ग्वालियर पर विक्रमादित्य का शासन था। तब इब्राहिम लोदी का विद्रोही जलाल खाँ यहाँ भागकर आ गया था और उसने विक्रमादित्य के यहाँ शरण ले ली। इब्राहिम लोदी ने जलाल खाँ को पकड़ने और ग्वालियर को हथियाने के इरादे से 1518 ई० में कड़ा के सूबेदार आजम हुमायूँ खाँ को भेजा। जलाल खाँ पकड़ा गया और उसे हाँसी (हरियाणा) ले जाते समय रास्ते में मार दिया गया। ग्वालियर भी जीत लिया गया। बाबर के बेटे हुमायूँ ने इसे 1526 में जीत लिया था। जब बाबर ग्वालियर पहुँचा, तो हुमायूँ ने ग्वालियर के राजा से प्राप्त कोहिनूर हीरा बाबर को देना चाहा, परंतु बाबर ने उसे इनाम के रूप में हुमायूँ को ही लौटा दिया। शेरशाह ने ग्वालियर को 1542 ई० में अपने अधीन किया। 1558 ई० में अकबर के सेनानायकों हबीब अली सुल्तान और किया खाँ ने मोहम्मद आदिलशाह के दास सुहेल से ग्वालियर छीन लिया। 1560 ई० में अकबर ने राजा मानसिंह को हराकर इसे अपने अधीन कर लिया। 4 दिसंबर, 1661 ई० को औरंगजेब ने अपने भाई मुराद की हत्या ग्वालियर के किले में ही की थी। बाद में उसने दारा के पुत्र सुलेमान शिकोह की हत्या भी यहीं की थी। 1784 ई० में इसे मराठों ने अपने अधीन कर लिया। 1810 में दौलतराव सिंधिया ने अपनी राजधानी उज्जैन से ग्वालियर बदल ली थी। 1827 में उसकी

मृत्यु के बाद जानकोजी सिंधिया यहाँ का शासक हुआ, परंतु वह 1843 में बिना कोई पुत्र छोड़े मर गया। तब उसकी पत्नी ताराबाई ने जयाजीराव को गोद लेकर शासन करना आरंभ किया। बाद में ब्रिटिश सेना ने ताराबाई को महाराजपुर और पनियार में हराया। दोनों के मध्य एक संधि के बाद शांति स्थापित हुई। 1857 में यहाँ के नागरिकों ने तांत्या टोपे और रानी झाँसी के नेतृत्व में अंग्रेजों से जम कर लोहा लिया। जयाजीराव ने 1886 तक शासन किया। बाद में माधवराव द्वितीय ने 1886 से 1925 तक तथा जिवाजीराव ने 1925 से देश की स्वतंत्रता तक इस रियासत को संभाला।

पुरातात्विक महत्त्व ग्वालियर में तोरमाण का एक लेख मिला है, जिससे हूणों की सफलताओं पर प्रकाश पड़ता है। ग्वालियर के एक लेख से ज्ञात होता है कि उज्जैन प्रतिहार राजा वत्सराज ने आठवीं शताब्दी में भंडियों को पराजित करके उनका राज्य छीन लिया था तथा उसके उत्तराधिकारी नागभट्ट द्वितीय ने आंध्र, सैंधव, विदर्भ और कलिंग के राजाओं को हराया। पुरातात्विक दृष्टि से ग्वालियर का तीन किमी लंबा और 35 फुट ऊँचा किला भारत के महत्त्वपूर्ण एवं प्राचीनतम किलों में से एक है। बाबर ने इसे हिंद के किलों का मोती कहा है। इस किले में संत ग्वालिप्पा के मंदिर के अलावा विष्णु का चतुर्भुज मंदिर, जैन पाषाण मूर्तियाँ, राजा मान सिंह तोमर द्वारा मृगनयनी के लिए निर्मित गुजरी महल, ग्यारहवीं शताब्दी में बना सास-बहू का मंदिर, नौवीं शताब्दी में बना द्रविड़ शैली की छत वाला सौ फुट ऊँचा तेली का मंदिर तथा झाँसी की रानी का स्मारक दर्शनीय हैं। ग्वालियर के किले में दरबार हाल (जिसमें टनों भारी दो झाड़-फानूस लगे हैं), शीशमहल और भोज कक्ष बड़े सुंदर ढंग से बने हैं। भोज कक्ष में एक ऐसी मेज है, जिस पर छोटी-छोटी पटरियों पर एक चाँदी की रेलगाड़ी चलती है। इस रेलगाड़ी का प्रयोग भोजन परोसने के लिए किया जाता है। इनके अतिरिक्त ग्वालियर में सिंधिया वंश की छतरियाँ, संग्रहालय, चिड़ियाघर, जयविलास महल, कला दीर्घा, तानसेन का मकबरा, गुरुद्वारा दाता बंदी छोड़, तांत्या टोपे का स्मारक, सरोद घर, सूर्य मंदिर, कला वीथिका, राजा मानसिंह द्वारा 1517 में बनवाया गया मान मंदिर महल और सूरज कुंड भी दर्शनीय हैं। ग्वालियर से बाहर एक मुसलमान संत मुहम्मद गौस और अकबर के संगीतकार तानसेन के मकबरे हैं। तानसेन के मकबरे में हर वर्ष नवंबर-दिसंबर में एक संगीत समारोह होता है।

ग्वालियर के किले के पास लश्कर नामक शहर है, जिसकी स्थापना 1809 में हुई थी। यहाँ सिंधिया परिवार का जय विलास और मोती महल देखने लायक

हैं। जय विलास में पैंतीस कमरों का एक संग्रहालय भी है। पंद्रह किमी दूर तिगरा बाँध तथा पच्चीस किमी दूर टनकपुर है।

उपलब्ध सुविधाएँ ग्वालियर में ठहरने के लिए राजकीय अतिथि गृह, सर्किट हाउस, बिरला हाउस तथा छोटे-बड़े कई होटल हैं। ग्वालियर के किले में जाने के लिए टैक्सियाँ तथा जीपें मिलती हैं। यहाँ भ्रमण का उपयुक्त समय नवंबर से मार्च तक का होता है। ग्वालियर में पर्यटन सूचना केंद्र मोती महल और होटल तानसेन में तथा रेलवे स्टेशन पर हैं।

498. चित्रकूट चित्रकूट विंध्याचल पर्वतमाला पर स्थित है। इसके निकट ही मंदाकिनी नदी बहती है। यह स्थान वनवास के दौरान श्रीरामचंद्र का निवास स्थल रहने के कारण उन्हीं के काल से हिंदुओं का तीर्थ स्थल बना हुआ है। यहाँ के दर्शनीय स्थान कामदगिरि, मंदाकिनी, रामघाट, अनसुइया और अत्रि ऋषि का आश्रम, प्रमोद वन, जानकी कुंड, हनुमान धारा और गुप्त गोदावरी हैं। इस पर्वत में दो गुफाएँ हैं। पहली गुफा में जाने के लिए सैंकड़ों सीढ़ियाँ ऊपर चढ़कर नीचे उतरना होता है। गुफा में रोशनी का प्रबंध किया हुआ है। इसमें एक कुंड है, जिसे सीता कुंड कहते हैं। कुछ अन्य सीढ़ियाँ उतरकर दूसरी गुफा आती है, जो पहली गुफा से लंबी है। इस गुफा में पानी बहता रहता है। यहाँ एक शिवलिंग स्थापित है। इस गुफा में ही रामकुंड और लक्ष्मण कुंड हैं। 940 ई० के आस-पास राष्ट्रकूटों ने इसे अपने अधीन कर लिया था। अनहिलवाड़ा के चालुक्य राजा भीम प्रथम (1022-64) ने आबू पर्वत पर परमार शासक भोज को हराकर उससे चित्रकूट छीन लिया था। यहाँ ठहरने के लिए एक टूरिस्ट बंगला है।

499. चेदि चेदि राज्य खजुराहो के दक्षिण में हुआ करता था। इसका प्राचीन नाम डाहलमंडल है। इसे त्रिपुरी (जो जबलपुर के पश्चिम में दस किमी दूर है) भी कहा जाता है।

ऐतिहासिक महत्त्व अमोघवर्ष के संजन ताम्रलेख से यह ज्ञात होता है कि राष्ट्रकूट राजा गोविंद तृतीय ने इसे जीतकर लक्ष्मणराज को यहाँ का राज्यपाल बनाया था। लगभग 845 ई० में कोकल्ल प्रथम ने यहाँ कलचूरी वंश के राज्य की स्थापना की। उसने प्रतिहार राजा भोज प्रथम, सरयूपार (गोरखपुर) के कलचूरी राजा शंकरगण, मेवाड़ के गुहिल राजा हर्षराज, शाकंभरी के चौहान राजा गूवक द्वितीय तथा पूर्वी बंगाल के राजा को हराकर उनसे धन प्राप्त किया। उसने सिंध की अरबी सेना तथा राष्ट्रकूट राजा कृष्ण द्वितीय को पराजित किया और

कोंकण के राजा से अपनी अधीनता स्वीकार कराई। उसका पुत्र शंकरगण नौवीं शताब्दी के नवें दशक में शासक बना। उसने कौशल के सोमवंशी राजा से पाली छीन लिया था। परंतु उसे चालुक्यों से हारना पड़ा। उसके बाद उसके दो पुत्रों बालहर्ष और युवराज प्रथम ने शासन संभाला। युवराज प्रथम ने गौंड तथा कलिंग के राजाओं को हराया। उसने चंदेल राजा यशोवर्मन से भी युद्ध किया, परंतु उसके एक धेवते कृष्ण तृतीय (राष्ट्रकूट) ने उसे पराजित कर दिया। कुछ समय बाद उसने राष्ट्रकूटों से चेदि को मुक्त करा लिया और उनके अधीनस्थ लाट पर विजय की। उसके पुत्र तथा उत्तराधिकारी ने पूर्वी बंगाल पर आक्रमण किया तथा उड़ीसा के राजा से सोने तथा मणियों से मढ़ा हुआ कालिया नाग छीन लिया। उसने कौशल के राजा महाभाऊ गुप्त, गुजरात के चालुक्य राजा मूलराज प्रथम और जूनागढ़ के आभीर राजा ग्राहरियू को हराया। उसका छोटा भाई युवराज द्वितीय दसवीं शताब्दी के अंत में राजा बना। उसने त्रिपुरी शहर का पुनर्निर्माण कराया। उसके समय में चालुक्य नरेश तैलप द्वितीय तथा मालवा के परमार राजा मुंज ने चेदि पर आक्रमण किया। इसके बाद उसके मंत्रियों ने उसको हटाकर उसके पुत्र कोकल्ल द्वितीय को राजा बना दिया। कोकल्ल द्वितीय ने गुजरात के चालुक्य राजा मूलराज तथा दक्षिण के चालुक्य राजा तैलप द्वितीय, कुंतल के राजा और गौंड के राजा को हराया। उसके बाद उसके पुत्र गांगेय देव (1119-40) ने उत्कल, बनारस तथा भागलपुर के क्षेत्रों पर विजय प्राप्त की, परंतु वह चालुक्य राजा जयसिंह, परमार राजा भोज तथा बुंदेलखंड के चंदेल राजा विजयपाल से हार गया। उसके पुत्र और उत्तराधिकारी लक्ष्मीकर्ण (1042-72) ने इलाहाबाद तथा पश्चिमी बंगाल के कुछ भाग पर अधिकार कर लिया। उसने गुजरात के चालुक्य राजा भीम प्रथम की सहायता से परमार राजा भोज प्रथम के विरुद्ध आक्रमण किया। युद्ध के दिनों में भोज की मृत्यु हो जाने के कारण उन्हें सफलता तो मिल गई, लेकिन युद्ध से प्राप्त धन के बँटवारे को लेकर संघर्ष हो गया, जिसमें लक्ष्मीकर्ण की हार हुई। चालुक्य राजा सोमेश्वर ने भी उसे हराया। उसके काल में कलचूरी वंश का ह्रास होना आरंभ हो गया। उसके बाद यशोकर्ण, गयकर्ण, नरसिंह, जयसिंह, विजयसिंह आदि ने शासन किया। 1211 ई० में चंदेल शासक त्रैलोक्यवर्मा ने चेदि पर अधिकार कर लिया।

500. चंदेरी

यह मालवा क्षेत्र का एक भाग है।

ऐतिहासिक महत्त्व जलालुद्दीन खिलजी के काल में उसके भतीजे अलाउद्दीन खिलजी ने चंदेरी पर आक्रमण किया था। बाद में उसने अपने शासन काल के दौरान 1303 ई० में इस पर कब्जा कर लिया था। किसी समय राणा सांगा ने भी

चंदेरी पर विजय प्राप्त की थी। दिल्ली के लोदी सुल्तान सिकंदर लोदी (1489-1517) ने अपने शासन काल के दौरान चंदेरी पर कब्जा किया था। बाबर के समय में यहाँ का राजपूत राजा मेदिनी राव एक शक्तिशाली शासक था। वह अपनी शक्ति के बल पर मालवा में राजाओं को गद्दी पर बैठाता था। बाबर ने उसके समक्ष चंदेरी के बदले जागीर लेने का प्रस्ताव रखा, परन्तु वह नहीं माना। फलस्वरूप 1528 में बाबर ने चंदेरी का घेरा डाल लिया। मेदिनी राव अपने 5000 सैनिकों सहित इसकी रक्षा में लड़ता हुआ मारा गया। बाबर ने जनवरी, 1528 में किले पर अधिकार कर लिया। किले की महिलाएँ सती हो गईं।

501. जबलपुर जबलपुर मध्य प्रदेश का एक प्रमुख शहर है। बारहवीं शताब्दी के दौरान यह गौंड राजाओं की राजधानी थी। इसके बाद यह कलचूरी राजाओं और 1817 में ब्रिटिश हाथों में चला गया।

पर्यटन स्थल जबलपुर में देखने लायक कई स्थान हैं। गुप्त राजाओं ने यहाँ एक विष्णु मंदिर बनवाया था। राजा मदन सिंह ने यहाँ 1116 में एक दुमंजिला महल बनवाया था, जिसकी भव्यता, रमणीयता तथा वास्तुकला समकालीन कला का एक नमूना पेश करती है। देवगिरि के यादव राजा सिंघण (1200-47) ने यहाँ के चेदि राजा को हराया था। मराठों ने यहाँ पिंडारी ठगों से बचने के लिए कमानिया गेट का निर्माण कराया था। महारानी दुर्गावती की याद में यहाँ एक संग्रहालय है। शहर से दस किमी दूर नर्मदा नदी पर ग्वारी घाट, जिलहरी घाट तथा महात्मा गाँधी के स्मारक के रूप में 1939 में बना तिलवारा घाट है। 12 किमी दूर शैलवर्ण उद्यान तथा 14 किमी दूर पीसनहारी की मढ़िया है। 23 किमी दूर संगमरमर की चट्टानें हैं, जो रात को बहुत आकर्षक लगती हैं। भेड़ा घाट पर चौंसठ योगिनियों की मूर्तियाँ और एक भूल-भुलैया है। भेड़ा घाट से कुछ दूर धुआँधार जल-प्रपात है। 25 किमी दूर भूगर्भीय महत्त्व का क्षेत्र लम्हेटा घाट है।

उपलब्ध सुविधाएँ यह शहर देश के अन्य भागों से वायु, रेल तथा सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। स्थानीय यातायात के लिए यहाँ बसें, टैंपो तथा टैक्सियाँ मिलती हैं। जिलहरी घाट तथा भेड़ा घाट पर नौकायन की सुविधा है। यहाँ रुकने के लिए लोअर रैस्ट हाउस है। यहाँ भ्रमण का सबसे अच्छा मौसम अक्तूबर से मार्च तक का होता है।

502. त्रिपुरी कृपया चेदि देखें।

503. दतिया दतिया मध्य प्रदेश में झाँसी के उत्तर-पश्चिम में लगभग 30 किमी दूर है।

ऐतिहासिक महत्त्व दतिया में गोबिंद महल नाम से सतरहवीं शताब्दी का एक बड़ा राजपूत महल है। यह महल एक झील के किनारे स्थित है। इसका निर्माण ओरछा नरेश बीरसिंह देव ने करवाया था। उसकी राजधानी झाँसी थी। रानी झाँसी ने दतिया में ही युद्ध प्रशिक्षण लेना आरंभ किया था।

504. दशपुर कृपया मंदसौर देखें।

505. धरमत यहाँ एक तरफ औरंगजेब और मुराद तथा दूसरी तरफ शाह सुजा की तरफ से राजा जसवंत सिंह और कासिम खाँ के मध्य अप्रैल, 1658 ई० में उत्तराधिकार का युद्ध हुआ था, जिसमें औरंगजेब की विजय हुई। जसवंत सिंह बचकर जोधपुर चला गया।

506. धार यह शहर मालवा क्षेत्र में है। इसकी स्थापना परमार राजपूतों द्वारा की गई थी।

ऐतिहासिक महत्त्व धार में परमार वंश की नींव उपेंद्र कृष्णराज ने नौवीं शताब्दी के आरंभ में डाली। उसके बाद वैरी सिंह सियक प्रथम, वाक्पति प्रथम, वैरी सिंह द्वितीय और हर्ष सिंह सियक राजा बने। हर्ष सिंध सियक ने हूणों तथा 972 में राष्ट्रकूट राजा खोट्टिग द्वितीय को हराया। उसका पुत्र मुंज बहुत विख्यात था। मुंज ने श्रीवल्लभ की उपाधि धारण की। वह एक महान योद्धा था। उसने त्रिपुरी, गुजरात, कर्नाटक, चोल और केरल राज्यों को पराजित किया। कलिंग के चालुक्य राजा तैलप द्वितीय को उसने छह बार परास्त किया, परंतु सातवीं बार वह हार गया और मारा गया। वह विद्वानों को प्रोत्साहन देने वाला था। उसकी सभा में धनंजय, हलायुद्ध और पद्मगुप्त नामक विद्वान थे। उसके बाद उसका भाई सिंधुराज धार का राजा बना। उसने भी हूण राजा को हराया और बागड़ तथा लाट के राजा से अपना आधिपत्य स्वीकार कराया। उसने लगभग 1000 ई० तक राज्य किया। इसके बाद भोज यहाँ का राजा बना। उसने मांडू शहर का निर्माण कराया और अपनी राजधानी धार से मांडू बदल ली। भोज के काल में धार शिक्षा का एक मुख्य केंद्र था। लोगों का जीवन कृषि पर निर्भर था। 1305 में अलाउद्दीन ने इसे राय महलक देव से छीन लिया था। 1398 में तैमूर लंग के आक्रमण के पश्चात् फिरोजशाह तुगलक के धार के जागीरदार दिलावर खाँ ने 1401 में यहाँ अपना स्वतंत्र राज्य बना लिया था। मुहम्मद तुगलक ने यहाँ एक विशाल खानकाह बनवाई थी, जहाँ हर यात्री को भोजन परोसा जाता था। तुगलक काल में यहाँ लाल किले का निर्माण हुआ। सन् 1400 में यहाँ

कमाल मौला मस्जिद और 1405 में लाल मस्जिद का निर्माण हुआ। 1723 में पेशवा बाजीराव ने मालवा के मुगल सूबेदार सैयद बहादुर शाह को हराकर धार में उद्जी पवार को अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया। 1732 से देश की स्वतंत्रता तक धार पुनः परमार राजाओं के हाथ में रहा।

507. नरवर—ऐतिहासिक महत्त्व 1398 में तैमूर लंग के आक्रमण के बाद से नरवर का किला राजपूतों के नियंत्रण में था। फरवरी, 1507 में अवंतगढ़ पर अधिकार करने के बाद सिकंदर लोदी ने इस किले का भी घेरा डाला और एक वर्ष के घेरे के बाद इसे जीत लिया। उसने यहाँ उलेमा बसाए और मस्जिदें बनवाईं। नरवर से लौटने से पहली उसने इसे कछवाहा राजा राजसिंह के सुपुर्द कर दिया।

508. नावदा टोली यह स्थान नर्मदा घाटी में इंदौर के दक्षिण में 90 किमी दूर है।

पुरातात्विक महत्त्व यहाँ 1952-53 और 1957 से 1959 तक की गई खुदाइयों में हड़प्पा संस्कृति के बाद की नव पाषाण संस्कृति के मिट्टी के बर्तनों से मिलते-जुलते बर्तन पाए गए हैं। अधिकतर बर्तनों पर पीले रंग पर लाल सतह है, जिन पर काले रंग की चित्रकारी है। कुछ बर्तन काले और लाल रंग के तथा कुछ पर सफेद पट्टियाँ हैं। कुछ बर्तन लाल रंग के हैं, जिनकी किनारी बहुत पकी हुई है और इन पर काले रंग की चित्रकारी है। झोंपड़ियों में अनाज रखने के लिए बड़े-बड़े मटके तथा कुछ चूल्हे भी पाए गए हैं। यहाँ के निवासी गोल, वर्गाकार या आयताकार झोंपड़ियाँ बनाते थे, जिनकी दीवारें बाँस की टट्टियों पर मिट्टी ल्हेसकर बनाई जाती थी। छत बाँस के ऊपर मिट्टी डालकर बनाई जाती थी।

यहाँ के निवासी प्रारंभिक 200 वर्षों तक गेहूँ खाते थे। बाद में वे चावल, मूँग, मटर, मसूर और केसरी भी खाने लगे। यहाँ पर सोलहवीं शताब्दी ई०पू० का भारत का सबसे प्राचीन चावल मिला है। ये लोग अनाज को पत्थर की हँसिया से काटते थे और उसे गीला करके पत्थर की ओखली में ही पीसते थे। लोग भेड़, बकरी, सूअर, गाय और बैल का माँस खाते थे। यहाँ घोड़ों का कोई निशान नहीं मिला है। अधिकतर औजार पत्थर के छोटे-छोटे अश्म होते थे, जिनमें लकड़ी या हड्डी के दस्ते लगे होते थे। फिर भी कुल्हाड़ी, मछली पकड़ने के हुक, पिन और ताँबे के छल्ले भी मिले हैं। वे लोहे से अपरिचित थे। वे पत्थर की चिकनी कुल्हाड़ियों का प्रयोग करते थे। वे पकी मिट्टी या ताँबे की चूड़ियाँ, मोतियों की मालाएँ और अंगूठी पहनते थे। शवों को मिट्टी के बर्तन में रखकर दफनाते थे।

ऐसा माना जाता है कि नावदा टोली के आदि निवासी यहाँ ईरान से आकर बसे थे।

509. पचमढ़ी पचमढ़ी ऐसा मनोहारी स्थान है, जहाँ प्रकृति ने अपनी सुन्दर छटा असंख्य मोहक रूपों में अभिव्यक्त की है। यह भारत के हृदय प्रदेश की सर्वाधिक हरी-भरी मणि मंजूषा है। सतपुड़ा पर्वत श्रृंखलाओं की इस नयनाभिराम पहाड़ी सैरगाह में हर रोज प्रशान्त सौन्दर्य से भरी भोर होती है। पहाड़ियों से लिपटी हरित छायावलियों की शान्ति इसकी घाटियों में उतरती है और यहाँ चारों ओर बहते जल की मंद-मंद ध्वनि मन को प्रफुल्लित कर देती है। प्रशान्त वन, मैदानों की ओर जाते अश्व मार्ग, जामुन के उपवन, साल वृक्षों के सघन वन, बाँसों के सुन्दर झुरमट, महुआ और आँवले के फलदार वृक्ष, गूलर के वृक्षों की कतारें सब मिलकर पचमढ़ी को बहुरंगी और निराली शोभा प्रदान करते हैं।

पचमढ़ी की घाटी, उपत्यकाओं और गिरिकंदराओं की भूल-भुलैयों का निर्माण युगों पहले हवा और मौसम के थपेड़ों ने लाल बलुआ पत्थरों को तराशकर कर लिया, जिनकी रंग-पंक्तियों की छायाएँ यहाँ शोभित हैं। सूरज की धूप में यहाँ के जल-प्रपातों का रजत सौन्दर्य देखते ही बनता है। गहरे नीलवर्णी पोखर यहाँ आनंद के स्रोत हैं, जो सैलानियों और पर्यटकों को अपने पास आने का मौन निमंत्रण देते हैं। सभी ओर वन्य जीव प्रेमियों को पशु-पक्षियों की दुनिया के मनोहारी दृश्य नजर आते हैं। यहाँ के जंगल इन वन्य प्राणियों के स्वाभाविक बसेरे हैं। लंगूर, साँभर, गौर (इंडियन बाइसन) बार्किंग डियर, रीछ, जंगली कुत्ते और चीते इन जंगलों में सहज विचरण करते हैं।

पचमढ़ी में पुरातात्विक वस्तुओं का खजाना भरा पड़ा है। महादेव पहाड़ियों के शैलाश्रय और उनमें चित्रित शैल चित्रकारी की बहुलताा, देखने वालों को आश्चर्य से भरे देती है। इनमें ज्यादातर चित्रों का काल 500 से 800 ई० के बीच का माना गया है।

पर्यटन स्थल पचमढ़ी में छोटा महादेव, महादेव गुफा, पांडव गुफाएँ, जटाशंकर गुफा, बी फाल, डचेस फाल, प्रियदर्शिनी, लांजीगिरि, आइरीन सरोवर, सुंदर कुंड, धुआँधार, अस्ताचल, सरदार गुफा, हार्पर केव, लिटिल फाल, रजत प्रपात, धूपगढ़, चौरागढ़, रीझगढ़, अप्सरा विहार, डोरोथी डीप, हाँडी खो तथा राजगिरि दर्शनीय हैं। यहाँ की महादेव पहाड़ियों के अभयारण्य, जिसकी स्थापना 1977 में की गई थी, को हाल ही में चीता संरक्षण केंद्र घोषित किया गया है। इससे यह महाराष्ट्र के मेलघाट अभयारण्य से जुड़ जाएगा, जिससे ये दोनों मिलकर देश की सबसे बड़ी बाघ संरक्षण परियोजना बन जाएँगे।

पचमढ़ी से 50 किमी दूर तामिया पर्वत है और इस से 15 किमी दूर पातालकोट दर्शनीय है।

उपलब्ध सुविधाएँ पचमढ़ी से निकटतम रेलवे स्टेशन पिपरिया (47 किमी) और निकटतम हवाई अड्डा भोपाल (195 किमी) है। यहाँ ठहरने के लिए मध्यम व साधारण श्रेणी के कई होटल हैं। तामिया में भी एक सरकारी रेस्ट हाउस है। गर्मियों के मौसम को छोड़कर यहाँ पूरा साल भ्रमण के लिए उपयुक्त होता है। यहाँ एक तरणताल, घुड़सवारी और गोल्फ कोर्स की सुविधा है। यहाँ ठहरने के लिए ऐमपीटीडीसी का फोरेस्ट लॉज और टूरिस्ट होम तथा पीडब्ल्यूडी के होटल ब्लाक हैं। पचमढ़ी में ऐमपीऐसटीडीसी का कार्यालय अमलतास कंप्लेक्स में है।

510. पनपाठा अभयारण्य यह अभयारण्य बाँधवगढ़ राष्ट्रीय पार्क के पास प्रदेश के बीच में है। इसकी स्थापना 1983 में की गई थी। इस अभयारण्य में तेंदुए, गौर, बाघ, जंगली कुत्ते, चीतल, भालू, नीलगाय, सांभर और चिंकारे मिलते हैं। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय नवंबर से मई तक का होता है।

511. पन्ना राष्ट्रीय उद्यान यह उद्यान प्रदेश की सीमा से लगता हुआ केन नदी के दोनों ओर है। इसे राष्ट्रीय उद्यान का दर्जा 1981 में दिया गया था। यहाँ चिंकारे, चीतल, चीते, बाघ, भालू और भेड़िये अधिक दिखाई देते हैं। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन 90 किमी दूर सतना है और हवाई अड्डा खजुराहो में 57 किमी दूर है।

512. फौसिल राष्ट्रीय पार्क यह पार्क प्रदेश के मांडला जिले में शाहपुरा से 13 किमी दूर है। यह प्राचीन जीवाश्मों, विशेषकर सितु जीवाश्म, के लिए प्रसिद्ध है।

513. बयाना—ऐतिहासिक महत्त्व 1195 में मुहम्मद गौरी ने बयाना के शासक कुमारपाल को आत्म-समर्पण करने के लिए विवश किया था। तुगलक वंश के शासक महमूद के काल में शम्स खाँ ओहदी ने यहाँ अपने अलग शासन की स्थापना कर ली थी। यहाँ के सूबेदार सुल्तान शर्फ ने दिल्ली के सुल्तान सिकंदर लोदी की प्रभुसत्ता मानने से इन्कार कर दिया था। तब सिकंदर लोदी ने ग्वालियर के राजा मानसिंह के भतीजे के 1000 घुड़सवारों की सहायता से बयाना पर 1492 में आक्रमण किया था। शाहजहाँ के काल में यहाँ सबसे अच्छे नील का उत्पादन होता था।

514. बरनावा पाड़ा अभयारण्य यह अभयारण्य मध्य प्रदेश में उड़ीसा की सीमा के साथ है। इसकी स्थापना 1976 में हुई थी। यहाँ चीतल, तेंदुए, भालू और सांभर अधिक संख्या में हैं। निकटतम रेलवे स्टेशन 57 किमी दूर महासमुंद और निकटतम हवाई अड्डा 160 किमी दूर वाराणसी है।

515. बाँधवगढ़ राष्ट्रीय पार्क यह पार्क उमारिया से 35 किमी दूर पहाड़ियों में है। शहडोल जिले में विंध्य पर्वत माला की दूरस्थ पहाड़ियों में स्थित बाँधवगढ़ 448 वर्ग किलामीटर क्षेत्र में फैला हुआ है। समुद्र सतह से औसतन 800 मीटर ऊपर बाँधवगढ़ गिरि है, जिसे अनगिनत पहाड़ियाँ घेरे हुए हैं। सबसे ऊँची चट्टान पर लगभग दो हजार साल पुराना बाँधवगढ़ का किला है। इस उद्यान के चारों ओर अनगिनत गुफाएँ हैं। इस उद्यान का सबसे निचला बिन्दु-स्थल ताला है, जो समुद्र सतह से औसतन 440 मीटर ऊँचा है। इसे राष्ट्रीय पार्क के रूप में 1968 में मान्यता मिली। यह बाघों के लिए प्रसिद्ध है। बाघ के अतिरिक्त यहाँ चिंकारे, चीतल, जंगली कुत्ते, नीलगाय, सांभर तथा भालू देखने को मिलते हैं। यहाँ घूमने का सबसे अच्छा समय जनवरी से मई तक का होता है। निकटतम हवाई अड्डा रायपुर है।

516. बाग यह स्थान मांडू के पश्चिम में 50 किमी दूर है।

पुरातात्विक महत्व यह छठी-सातवीं शताब्दी में बनी नौ गुफाओं के लिए प्रसिद्ध है। इन गुफाओं की दीवारों पर बुद्ध के भित्तिचित्र हैं। इनमें से बहुत सी गुफाएँ जीर्ण-शीर्ण अवस्था में हैं। केवल चार गुफाएँ ही सही अवस्था में हैं। प्रत्येक गुफा में बरामदे के पीछे एक बड़ा हाल और उसके चारों तरफ बौद्ध भिक्षुओं के रहने के लिए कमरे थे। गुफा की दीवारों पर बने चित्र आदमकद से बड़े हैं। यहाँ एक चैत्य भी है, जहाँ बुद्ध की एक मूर्ति स्थापित है। गुफा नं० चार में सबसे अधिक चित्रकारी है। इसे रंग महल कहा जाता है। इसके प्रमुख चित्रों में एक रोती हुई महिला, नृत्य आयोजन, धर्म-विमर्श और जुलूस प्रमुख हैं। इस गुफा की चित्रकारियों में जीवन के विविध रंगों का चित्रण किया गया है। यहाँ ठहरने के लिए पीडब्ल्यूडी का डाक बंगला है।

517. बाघदरा अभयारण्य यह अभयारण्य प्रदेश में उत्तर प्रदेश की सीमा से लगता हुआ है। इसकी स्थापना 1978 में की गई थी। यहाँ चिंकारे, तेंदुए, भेड़िये आदि जानवर दिखाई देते हैं। यहाँ घूमने का सर्वोत्तम समय दिसंबर से फरवरी तक का होता है। यहाँ से निकटतम बड़ा शहर उत्तर प्रदेश में मिर्जापुर

(85 किमी) और निकटतम हवाई अड्डा (142 किमी) वाराणसी है।

518. बेसनगर कृपया विदिशा देखें।

519. बैरमगढ़ अभयारण्य यह अभयारण्य आंध्र प्रदेश और महाराष्ट्र की सीमाओं पर है। इसकी स्थापना 1984 में जंगली भैंसों के संरक्षण के लिए की गई थी। जंगली भैंसों के अतिरिक्त यहाँ चीतल, चीते, बाघ और नीलगाय भी देखने को मिलते हैं। यहाँ से जगदलपुर रेलवे स्टेशन 155 किमी और रायपुर हवाई अड्डा 486 किमी दूर है।

520. बोरी अभयारण्य यह मध्य प्रदेश के दक्षिण-पश्चिम में पचमढ़ी से 32 किमी दूर महादेव पहाड़ी पर है। इसकी स्थापना 1977 में हुई थी। यहाँ चीतल, तेंदुए और सांभर आदि अधिक मिलते हैं। यहाँ घूमने का समय अक्तूबर से मई तक का होता है। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन कारसी (75 किमी) और निकटतम हवाई अड्डा भोपाल (125 किमी) है।

521. भारहुत—पुरातात्विक महत्त्व भारहुत अशोक द्वारा स्थापित स्तूप के कारण जाना जाता है। इसकी खोज कन्निंघम ने 1873 ई० में की थी। आजकल यह जीर्ण-शीर्ण अवस्था में है। यह ईंट का बना हुआ है। इसका व्यास 60 फुट था। इसकी चारदीवारी पर यक्ष, यक्षिणी और जातक की कथाएँ खुदी हैं। यूँ ये उत्कीर्णन शिल्प की दृष्टि से कोई खास महत्त्व के नहीं है, फिर भी ये कथा तत्व की दृष्टि से सतत हैं और उस समय के समाज के जीवंत उदाहरण हैं। बुद्ध को यहाँ मानव रूप में नहीं दर्शाया गया है, बल्कि बौद्ध धर्म की हीनयान शाखा की परंपरा के अनुसार धर्म चक्र, पीठ अथवा पद चिह्नों के रूप में चित्रित किया गया है। एक चित्र में अजातशत्रु को बुद्ध को प्रणाम करते हुए दिखाया गया है। यहाँ समुद्र से व्यापार के प्रमाण भी पाए गए हैं।

522. भिलसा कृपया विदिशा देखें।

523. भोपाल भोपाल आधुनिक मध्य प्रदेश की राजधानी है। इसकी स्थापना राजा भोज ने ग्यारहवीं शताब्दी में की थी। लखनऊ की तरह यह भी नवाबों की राजधानी रहा है।

ऐतिहासिक महत्त्व मार्च, 1737 में बाजीराव प्रथम ने दिल्ली में तीन दिन रहकर मुगल सम्राट मुहम्मद शाह बंगश पर अपना दबदबा कायम किया था। इससे

डरकर बंगश ने हैदराबाद के निजाम से सहायता की माँग की थी। निजाम ने पेशवा के साथ अगस्त, 1737 में ही हुई संधि को भुलाकर बाजीराव पर आक्रमण कर दिया। दोनों की सेनाओं के मध्य भोपाल के निकट युद्ध हुआ, जिसमें निजाम की हार हुई। 1 जनवरी, 1738 को दोनों के मध्य दोराहा सराय की संधि हुई, जिसके तहत निजाम ने पेशवा को 50 लाख रु. हर्जाना देने के अलावा मालवा तथा यमुना और नर्मदा के बीच का इलाका देना स्वीकार किया।

पर्यटन स्थल राजा भोज ने यहाँ शहर के बीच में एक बड़ी झील का निर्माण कराया था। इसे भोपाल ताल कहा जाता है। यह झील भारत भवन के पास है। भोपाल में भारत की सबसे ऊँची मस्जिद ताज-उल मस्जिद है, जिसका निर्माण यहाँ की शाहजहाँ बेगम ने कराया था। कुदेसिया बेगम ने यहाँ 1837 में जामा मस्जिद और एक अन्य बेगम ने 1860 में मोती मस्जिद बनवाई थी। शहर में ऐश बाग, करहतजा बाग और नूर बाग दर्शनीय हैं। राजा भोज ने यहाँ एक किला बनवाया था, जिसे अट्ठारहवीं सदी में दोस्त मौहम्मद खान ने सुदृढ़ कराया था।

भोपाल के अन्य दर्शनीय स्थलों में भारत भवन, विधान सभा भवन, इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मानव संग्रहालय, राजभवन, वल्लभ भवन, सतपुड़ा भवन, राजकीय पुरातात्विक संग्रहालय, गाँधी भवन, वन विहार, चौक तथा मछली घर, टैगोर भवन, लक्ष्मीनारायण मंदिर और इसका संग्रहालय प्रमुख हैं।

भोपाल से 35 किमी दूर दक्षिण में भीम बैठका में 600 प्राचीन गुफाएँ हैं, जो भूल-भूलैया की तरह हैं। इन गुफाओं में नव-पाषाण युग की 2500 वर्ष पुरानी 500 से अधिक चित्रकारियाँ हैं। इन चित्रकारियों में मुख्य रूप से लाल और सफेद तथा गौणतः हरे और पीले रंगों का इस्तेमाल किया गया है। इन चित्रकारियों में उस युग के जीवन के विविध रंग दर्शाए गए हैं। यहाँ से 40 किमी दूर साँची है, जहाँ अशोक द्वारा बनवाया गया भारत का सबसे ऊँचा स्तूप है। इतनी ही दूर भोजपुर गाँव है, जहाँ राजा भोज ने एक झील बनवाई थी। यह झील एशिया की सबसे बड़ी झील थी, परंतु हुसंग शाह ने इसे नष्ट करवा दिया था। यहीं पर परमार शैली में बना एक शिव मंदिर है।

उपलब्ध सुविधाएँ भोपाल देश के अन्य भागों से वायु, रेल तथा सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। ठहरने के लिए यहाँ सस्ते और महँगे हर तरह के होटल हैं। भोपाल में पर्यटन विभाग का मुख्यालय चौथी मंजिल, गंगोत्तरी, टी. टी. नगर में तथा पर्यटक सूचना केंद्र 5, हमीदिया रोड पर है। कंडक्टिड टूर के लिए पर्यटक सूचना केंद्र से संपर्क करें।

524. मंदसौर मंदसौर मालवा क्षेत्र में शिवना नदी के किनारे है।

कालिदास के समय में इसका नाम दशपुर था। यहाँ नव-पाषाण युग के काले और लाल रंग के मिट्टी के बर्तन पाए गए हैं।

ऐतिहासिक महत्त्व 119 से 124 तक यह स्थान नासिक के शक् क्षत्रप नहपान के अधीन था। पाँचवीं शताब्दी में मंदसौर पर कुमारगुप्त (414-55 ई०) का शासन था। गुप्त काल के एक जागीरदार यशोधर्मन ने यहाँ 533 ई० में एक लेख स्थापित कराया था, जिसमें उसने हूणों के साथ अपने संघर्ष का वर्णन किया है।

इस लेख से पता लगता है कि यशोधर्मन ने उन क्षेत्रों को भी जीता, जिन्हें गुप्त राजा भी न जीत पाए थे और जिनमें हूणों का भी आदेश न चलता था। यशोधर्मन (525-35) का राज्य ब्रह्मपुत्र से पश्चिम में समुद्र तक और हिमालय से महेंद्रगिरि तक फैला हुआ था। इस लेख से यह भी पता चलता है कि हूण शासक मिहिरकुल ने भी उसका आधिपत्य स्वीकार किया था तथा उसकी शक्ति यशोधर्मन ने ही नष्ट की थी। लेख से यह भी ज्ञात होता है कि उसने अपने शत्रुओं को हराकर उनके यश को नष्ट किया। मंदसौर में गुजरात के सुल्तान बहादुरशाह और हुमायूँ के मध्य 1535 में एक युद्ध हुआ था, जिसमें बहादुरशाह की हार हुई। इस हार के बाद बहादुरशाह मांडू की ओर भाग गया।

पुरातात्विक एवं धार्मिक महत्त्व के पर्यटन स्थल कुमारगुप्त ने मंदसौर में सूर्यदेव मंदिर नाम से एक मंदिर बनवाया था। यशोधर्मन ने यहाँ 518 ई० में लगभग 46 क्विंटल वजन की 7 फुट ऊँची और 11 फुट गोल पशुपतिनाथ की अष्टमुखी मूर्ति का निर्माण कराया था। ये आठ मुख शिव के विभिन्न अवतारों भव, पशुपतिनाथ, महादेव, ईशान, रूद्र, शर्व, उग्र और अशनि के हैं। कालिदास ने इस मूर्ति का जिक्र अभिज्ञान शाकुंतलम्, मालविकाग्निमित्रम्, रघुवंश और कुमारसंभव में किया है।

व्यापार मंदसौर काले सोने अर्थात् अफीम की खेती के लिए जाना जाता है। कभी यह शहर अपनी सुंदरता के लिए प्रसिद्ध था। पाँचवीं शताब्दी के दौरान रेशमी कपड़े बुनने वाले कुछ लोग पश्चिमी तट से यहाँ आ बसे थे। मंदसौर प्रशस्ति में लिखा है कि दशपुर (मंदसौर) प्राचीन काल में व्यापार का एक केंद्र था।

525. महिष्मति कृपया महेश्वर देखें।

526. महेश्वर यह स्थान नर्मदा की घाटी में इंदौर से 91 किमी दूर है। यहाँ 1952-53 और 1957 से 1959 तक की गई खुदाइयों में हड़प्पा संस्कृति

के बाद की नव-पाषाण संस्कृति के अवशेष मिले हैं। उन दिनों इसका नाम महिष्मति हुआ करता था, जो राजा कीर्त वीर्यार्जुन की राजधानी था। अधिक विवरण के लिए कृपया नावदा टोली देखें।
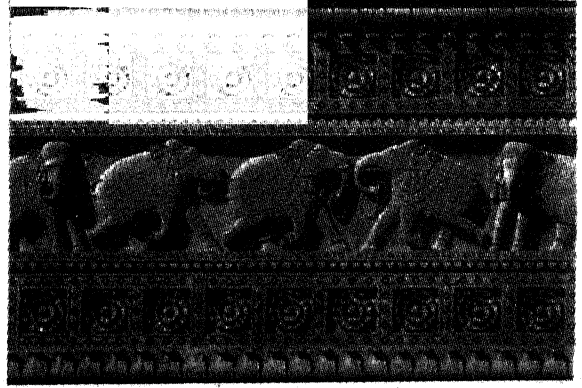
महेश्वर के सिद्धनाथ मंदिर पर नक्काशी

पर्यटन स्थल महेश्वर में राजवाड़ा, पेशवा घाट, फनसे घाट, अहिल्या घाट तथा कालेश्वर, राज-राजेश्वर, विट्ठलेश्वर और अहिलेश्वर मंदिर दर्शनीय हैं। राजवाड़ा के कक्षों में राजगद्दी, अहिल्याबाई की प्रतिमा, होलकर राजवंश के स्मृति-चिह्न तथा कलात्मक वस्तुएँ देखी जा सकती हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ महेश्वर से निकटतम रेलवे स्टेशन बड़वाह (39 किमी) तथा निकटतम हवाई अड्डा इंदौर (91 किमी) है। ठहरने के लिए यहाँ अहिल्या ट्रस्ट गेस्ट हाउस, लोक निर्माण विभाग का रेस्ट हाउस, धर्मशालाएँ, लॉज तथा होटल हैं। यहाँ भ्रमण का उपयुक्त समय जुलाई से मार्च तक का होता है।

527. मांडू यह शहर मालवा क्षेत्र में विंध्याचल पर्वत के छोर पर है। इसकी स्थापना परमार राजा भोज (1018-60) ने की थी। इसका प्राचीन नाम शादियाबाद (आनंद का शहर) है।

ऐतिहासिक महत्त्व राजा भोज ने इसे अपनी राजधानी बनाया था। वह परमारों में सबसे प्रसिद्ध शासक था। सबसे पहले उसने कलिंग के चालुक्य राजा को हराया। उसके बाद कलचूरी राजा गंगदेव को नीचा दिखाया। उसने कन्नौज पर प्रभुत्व स्थापित किया, तुर्कों से लोहा लिया और बिहार के कुछ भागों पर कब्जा किया। इससे उसकी शक्ति क्षीण हो गई और चंदेल राजा ने भोज को हरा दिया। वह 1060 में चालुक्य राजा भीम प्रथम और कलचूरी राजा कर्ण के साथ

युद्ध करता हुआ मारा गया। भोज विद्वान और विद्या प्रेमी था। भोज के उत्तराधिकारी जयसिंह प्रथम के समय में कलचूरी और चालुक्य राजाओं ने मालवा के अधिकतर भाग पर अधिकार कर लिया। उसने इन्हें दक्षिण के चालुक्य युवराज विक्रमादित्य की सहायता से निकाल दिया। उसने विक्रमादित्य की पूर्वी चालुक्यों के विरुद्ध सहायता भी की। इससे चिढ़कर कल्याण के चालुक्य राजा सोमेश्वर द्वितीय ने चेदिराज कर्ण की सहायता से मालवा पर आक्रमण किया। इसी युद्ध में जयसिंह की मृत्यु हो गई, परंतु भोज के भाई उदयादित्य (1080-86) ने सांभर के चौहानों की सहायता से सोमेश्वर को हराकर अपना राज्य वापस ले लिया। उदयादित्य के पुत्र लक्ष्मण देव ने कलचूरी राजा पशकर्ण को हराया और अंग, गौड़ तथा कलिंग पर आक्रमण किए। उसने पंजाब के सूबेदार महमूद से अपने राज्य की रक्षा की और उससे बदला लेने के लिए कांगड़ा पर आक्रमण किया। उसने विक्रमादित्य षष्ठ की सहायता से होयसल राज्य पर भी आक्रमण किया। उसके उत्तराधिकारी नरवर्मा (1094 ई०) ने नागपुर तक अधिकार कर लिया। उसने चंदेल राजा को परास्त किया और बाईस वर्ष तक चालुक्य राजा जयसिंह सिद्धराज से लड़ाई की। उसके उत्तराधिकारी यशोवर्मा (1133 ई०) के समय में चंदेलों ने भिलसा छीन लिया, चौहानों ने उज्जैन पर आक्रमण कर दिया और अंत में जयसिंह सिद्धराज ने 1135 ई० के आस-पास नल के चौहानों की सहायता से यशोवर्मा को हराकर बंदी बना लिया और मालवा को अपने राज्य में मिला लिया। 20 वर्ष तक मालवा चालुक्यों के कब्जे में रहा। इसके बाद विंध्यवर्मा ने चालुक्य राजा मूलराज द्वितीय को हराकर अपना राज्य वापस ले लिया। उसके समय में मालवा पुनः एक समृद्ध राज्य बन गया। 1193 में उसके उत्तराधिकारी सुमठवर्मा ने चालुक्यों के विरुद्ध युद्ध किया, गुजरात की राजधानी अणहिलपाटण पर आक्रमण किया और लाट पर अधिकार किया। उसे यादवों ने परास्त कर दिया। उसके उत्तराधिकारी अर्जुनवर्मा ने भी चालुक्यों को हराया। अर्जुनवर्मा को यादव राजा सिंघल ने हरा दिया। अर्जुनवर्मा के बाद देवपाल ने 1218 से 1232 तक शासन किया। सिंघल ने उसके काल में भी आक्रमण किया। इसी समय यादवों और परमारों ने मिलकर दक्षिणी गुजरात पर आक्रमण कर दिया और चालुक्यों ने दक्षिणी लाट पर कब्जा कर लिया। 1233 में अल्तमश ने भिलसा पर अधिकार कर लिया और उज्जैन को लूटा। इन शक्तियों से धीरे-धीरे मालवा का पतन हो गया।

मांडू कभी रानी रूपमती का गढ़ हुआ करता था। अलाउद्दीन खिलजी ने इसे 1305 ई० में राय महलक देव से छीन लिया था। 1398 में तैमूर लंग के आक्रमण के बाद उपजी अराजकता के फलस्वरूप फिरोजशाह तुगलक के धार

के जागीरदार दिलावर खाँ ने 1401 में अपने आपको स्वतंत्र घोषित कर लिया था। उसके पुत्र अल्प खाँ उर्फ हुशंगशाह (1405-34) ने 1406 में अपनी राजधानी उज्जैन से मांडू बदल ली थी। 1429 में बहमनी राज्य के शिहाबुद्दीन अहमद ने मांडू पर आक्रमण किया। हुशंगशाह के बाद उसके पुत्र गजनी खाँ उर्फ मुहम्मदशाह के काल में उसके मंत्री महमूद खिलजी ने इस पर 1435 ई० में कब्जा कर लिया। उसके शासन काल के दौरान महमूद गावाँ ने 1466 और 1467 में दो बार आक्रमण किए। दूसरे युद्ध में मालवा की सेना बुरी तरह पराजित हुई और उसे बरार से हाथ धोना पड़ा।

महमूद खिलजी एक बहादुर योद्धा था। उसने गुजरात के अहमदशाह प्रथम, दिल्ली के मुहम्मदशाह, बहमनी राजा मुहम्मदशाह तृतीय और मेवाड़ के राणा कुंभ से युद्ध किया। मेवाड़ के साथ युद्ध में संभवतः किसी की भी विजय न हुई हो, क्योंकि एक तरफ राणा कुंभ ने इस युद्ध में विजय के उपलक्ष्य में चित्तौड़ में विजय स्तंभ बनवाया, तो दूसरी तरफ महमूद खिलजी ने मांडू में एक सात मंजिला इमारत बनवाई। मिश्र के खलीफा ने उसे मान्यता दी और सुल्तान अबु सईद के यहाँ से उसके दरबार में राजदूत आया। उसके बाद ग्यासुद्दीन (1469-1500), उसका एक पुत्र अब्दुल कादिर नासिरुद्दीन (1500-10) और महमूद द्वितीय के नाम से सुजात खाँ अलाउद्दीन (1510-31) शासक हुए। महमूद द्वितीय ने मुस्लिम मंत्रियों के प्रभाव से मुक्ति पाने के लिए चंदेरी के शक्तिशाली राजपूत जागीरदार मेदिनी राव को अपना मंत्री नियुक्त किया। इससे चिढ़कर मुस्लिम मंत्रियों ने उसे गुजरात के सुल्तान मुजफ्फर शाह द्वितीय की सहायता से हरा दिया। परंतु मेदिनी राव ने मेवाड़ के राणा सांगा की सहायता से महमूद द्वितीय को ही हराकर उसे बंदी बना लिया, परंतु कुछ समय बाद उसे छोड़ दिया। महमूद द्वितीय ने राणा सांगा के उत्तराधिकारी राणा रत्नसेन के क्षेत्र पर हमला करके उससे युद्ध मोल ले लिया। महमूद द्वितीय ने गुजरात के शासक बहादुरशाह से भी शत्रुता ले ली, क्योंकि उसने बहादुरशाह के छोटे भाई और गद्दी के दूसरे विद्रोही दावेदार चाँद खाँ को अपने यहाँ शरण दे दी थी। इससे क्रोधित होकर बहादुरशाह ने 17 मार्च, 1531 को मांडू पर अधिकार करके गुजरात राज्य में मिला लिया। 1535 में हुमायूँ ने गुजरात पर आक्रमण करके बहादुरशाह को हरा दिया। बहादुरशाह को मांडू में शरण लेनी पड़ी। 1535 में ही मल्लू खाँ ने कादिरशाह के नाम से मालवा में स्वतंत्र राज्य स्थापित कर लिया। 1542 में उसे दिल्ली के अफगान शासक शेरशाह ने हरा दिया। 1561-62 में अकबर ने इसे बाज बहादुर से छीनने के लिए आदम खाँ को भेजा। आदम खाँ ने मालवा छीन लिया था, परंतु इस पर कब्जा पूरा होने से पहले उसे वापस बुला

लिया गया और उसकी जगह पीर मोहम्मद भेज दिया गया, जो एक कमजोर सेनापति था। इसका फायदा उठाकर बाज बहादुर, जो खानदेश की तरफ भाग गया था, ने मालवा पर आक्रमण करके इसे फिर जीत लिया। अब अकबर ने अब्दुल्ला खाँ को मालवा भेजा, जिसने मालवा जीत लिया।

पुरातात्विक महत्त्व यह शहर प्राकृतिक सौंदर्य के मामले में बेजोड़ था। यहाँ हिंदू और मुस्लिम मिश्रित शैली की बड़ी-बड़ी इमारतें बनाई गई थीं। इन इमारतों का कुरसी क्षेत्र विशाल था और इनमें चमकीली टाइलें भी लगी होती थीं। हुशंगशाह ने यहाँ दिल्ली गेट, जामा मस्जिद और अपना मक़बरा बनवाया। जामामस्जिद मांडू की सबसे बढ़िया इमारतों में से एक है। इसे महमूदशाह प्रथम ने 1454 ई० में पूरा कराया था। उसने यहाँ एक अशरफी महल भी बनवाया था, जो पहले तो एक मदरसा था, परंतु 1469 में उसे मकबरा बना दिया गया। इसमें 5000 व्यक्ति एक साथ नमाज पढ़ सकते हैं। मांडू के किले में महमूदशाह की मस्जिद, हिंडोला महल, नसीरूद्दीन द्वारा बनवाया गया बाज बहादुर महल, रूपमती के पति बाज बहादुर द्वारा बनवाया गया रानी रूपमती महल और जहाज महल भी अच्छी इमारतों में से हैं। इनके अतिरिक्त चंपा बावली, 1405 में बनी दिलावर खाँ की मस्जिद, नहर झरोखा, तवेली महल, सागर तालाब, हाथी महल, दरिया खाँ का मकबरा, चिस्ती खाँ महल, नीलकंठ महल और रेवा कुंड भी उल्लेखनीय हैं। मांडू का किला विंध्या पर्वत की श्रेणियों में बनवाया गया था। किले की सब इमारतें पत्थर की थीं तथा इनमें कहीं-कहीं संगमरमर का प्रयोग भी किया गया था। ग्यासुद्दीन द्वारा अपनी रानियों के लिए बनवाए गए जहाज महल को तो मांडू की शान कहा जाता है। इसका आकार 360 x 48 x 31 फुट है। इसके चारों ओर पानी भरा रहता था और यह एक जहाज की तरह दिखाई देता था। मांडू में अट्ठारहवीं शताब्दी का श्रीराम मंदिर तथा शांतिनाथ मंदिर, सुपार्श्व नाथ मंदिर, दिगंबर जैन मंदिर, शिव मंदिर और एक धर्मशाला भी है। ऐसा अनुमान है कि धर्मशाला के निर्माण में उस समय एक करोड़ रुपये का व्यय हुआ था।

सुविधाएँ यहाँ ठहरने के लिए आईटीडीसी का ट्रैवलर्ज लॉज, ऐमपीटीडीसी का टूरिस्ट बंगला और एऐसआई का रेस्ट हाउस है। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा इंदौर 99 किमी दूर है। मुंबई-दिल्ली रेलमार्ग पर सुविधाजनक रेलवे स्टेशन रतलाम (124 किमी) और इंदौर हैं। यहाँ भ्रमण का उपयुक्त समय जुलाई से मार्च तक का होता है।

528. माधव राष्ट्रीय उद्यान यह उद्यान शिवपुरी से 6 किमी दूर है। इसकी स्थापना 1968 में की गई थी। यहाँ चीतल, चीते, चिंकारे, चौसिंगे, नीलगाय, बाघ, भालू और सांभर देखने को मिलते हैं। झाँसी हवाई अड्डा यहाँ से 100 किमी दूर है।

529. रायसीन रायसीन भोपाल के पास है। राजा रायसिंह ने यहाँ 1200 ई० के आस-पास एक किला बनवाया था। पंद्रहवीं सदी में रायसीन सिलहदी के अधीन स्वतंत्र हो गया था। बहादुरशाह ने इस किले से प्रभावित होकर इस पर आक्रमण करके सिलहदी को मुस्लिम बनने के लिए विवश कर दिया था। परंतु उसकी पत्नी ने ऐसा करने की बजाय आत्महत्या करना बेहतर समझा। अपने शासन काल में 1543 ई० में शेरशाह ने भी इसका घेरा डाला था। उसने यहाँ के शासक पूरन मल को हराकर इस पर कब्जा कर लिया।

530. राष्ट्रीय चंबल अभयारण्य यह अभयारण्य मध्य प्रदेश, राजस्थान और उत्तर प्रदेश में फैला हुआ है। यह चंबल के वनों की सुरक्षा के लिए बनाया गया है। यहाँ तरह-तरह के पशु-पक्षी मिलते हैं। यहाँ भ्रमण के लिए नवंबर से मार्च तक का समय सबसे अच्छा रहता है। यहाँ से निकटतम बड़ा शहर मुरैना है।

531. रूपनाथ यह स्थान जबलपुर जिले में है।

पुरातात्विक महत्त्व अशोक ने यहाँ 258 से 257 ई०पू० में एक लघु स्तंभ लेख स्थापित कराया था, जिसमें उसके व्यक्तिगत जीवन पर प्रकाश डाला गया है।

532. विदिशा यह प्राचीन बेसनगर अथवा भिलसा है। यह साँची से 10 किमी दूर बेतवा और व्यास नदी के बीच स्थित है।

ऐतिहासिक महत्त्व विदिशा सुंग राजाओं के पश्चिमी क्षेत्र की राजधानी थी। पुष्यमित्र का पुत्र अग्निमित्र यहाँ का राज्यपाल रहा था। अनहिलवाडा के चालुक्य राजा जयसिंह सिद्धराज (1094-1143) ने चंदेल शासक मदनवर्मा से भिलसा छीन लिया था। अल्तमश ने भिलसा पर 1234 में अधिकार कर लिया। अलाउद्दीन खिलजी ने यहाँ दो बार आक्रमण करके लूट का काफी माल प्राप्त किया था। राणा सांगा ने भी भिलसा पर आक्रमण करके इसे जीत लिया था। औरंगजेब की मृत्यु के बाद दोस्त मोहम्मद खान ने यहाँ के राज्यपाल को मारकर इस पर अधिकार कर लिया था।

व्यापारिक महत्त्व मौर्यों के काल में विदिशा पाटलीपुत्र-प्रतिष्ठान महामार्ग पर स्थित था। यह एक वैभवशाली नगर था। यहाँ की तेज धार वाली ब्लेडें बहुत प्रसिद्ध थीं। अशोक ने विदिशा के एक व्यापारी की पुत्री से विवाह किया था। यहाँ हाथी दाँत का काम भारी मात्रा में होता था।

पुरातात्विक एवं धार्मिक महत्त्व बेसनगर में पाए गए एक गरुड़ स्तंभ लेख से पता चलता है कि यहाँ वैष्णव धर्म का प्रचलन रहा। यह स्तंभ लेख यूनानी दूत हीलियोडोरस ने वासुदेव श्रीकृष्ण की स्मृति में 90 ई०पू० में स्थापित क़राया था। इस ध्वज से ज्ञात होता है कि दूसरी शताब्दी ई०पू० में भागवत धर्म और ब्राह्मण धर्म में मेल-मिलाप पैदा हो गया था। यह लेख बताता है कि तक्षिला के यूनानी राजा एंटिआलकिडस ने दियस के पुत्र हीलियोडोरस को अपना दूत बनाकर काशीपुत्र भागभद्र त्राता की सभा में भेजा था। वह भागवत था। यहाँ रामगुप्त के काल के ताँबे के सिक्के मिले हैं।

विदिशा के आस-पास उदयगिरि की गुफाएँ (4 किमी), साँची (10 किमी) और भोपाल (50 किमी) दर्शनीय स्थल हैं।

ठहरने के लिए यहाँ पीडब्ल्यूडी का रेस्ट हाउस है। विदिशा से निकटतम रेलवे स्टेशन भोपाल 50 किमी की दूरी पर है।

533. शिवपुरी शिवपुरी झाँसी के पश्चिम में 45 किमी दूर है। लगभग 1400 फुट की ऊँचाई पर स्थित यह शहर कभी ग्वालियर के महाराजा की ग्रीष्मकालीन राजधानी हुआ करता था। महाराजा माधव राव ने यहाँ माधव विलास नामक एक सुंदर महल बनवाया था। इस महल का दरबार हाल बहुत आकर्षक है। यहीं पर मुगल गार्डन में महाराजा माधव राव सिंधिया तथा महारानी साख्य राजे की छतरियाँ हैं। शिवपुरी की अधिकांश इमारतें लाल रंग की हैं।

यहाँ से 21 किमी दूर सरवाया गाँव में एक हिंदू मंदिर, एक पुराना किला और एक बावली है। लगभग 90 किमी दूर नटवर नामक जगह पर जयपुर के महाराजा के एक जागीरदार का किला है। इस किले में एक महल और एक जैत खंभा है। इस खंभे पर एक लेख भी लिखा है। लगभग 30 किमी दूर पवाया नामक जगह है, जो तीसरी-चौथी शताब्दी के नाग राजाओं की राजधानी थी। प्राचीन काल में इसे पदमावती कहा जाता था। यहाँ की गई खुदाइयों में एक प्राचीन मंदिर का बड़ा चबूतरा, नाग काल के सिक्के, टेराकोटा की मूर्तियाँ और गुप्त काल की पाषाण कला के नमूने पाए गए हैं। ये वस्तुएँ ग्वालियर के पुरातात्विक संग्रहालय में रखी गई हैं।

शिवपुरी पिकनिक का भी एक अच्छा स्थल है। यहाँ साख्य सागर अथवा चाँद पथ नामक एक विशाल झील है, जहाँ नौकायन की सुविधा भी है। झील के किनारे एक पार्क भी है। ठहरने के लिए यहाँ सर्किट हाउस है। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा ग्वालियर (112 किमी) तथा निकटतम रेलवे स्टेशन झाँसी (101 किमी) है।

534. संजय राष्ट्रीय उद्यान यह उद्यान जावरा रेलवे स्टेशन से 20 किमी दूर दुबरी नदी के किनारे स्थित है। इसकी स्थापना 1975 में हुई थी। 1981 में इसे राष्ट्रीय पार्क का दर्जा दिया गया। यहाँ चीतल, तेंदुए, नीलगाय, बाघ और सांभर अधिक संख्या में मिलते हैं। यहाँ घूमने का सर्वोत्तम समय फरवरी से मई तक का होता है। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा 240 किमी दूर वाराणसी है।

535. सतपुड़ा राष्ट्रीय पार्क यह पार्क प्रदेश के दक्षिण में पचमढ़ी से एक किमी की दूरी पर है। इसकी स्थापना 1983 में की गई थी। यहाँ तेंदुए, बाघ, बिज्जू, भालू, भेड़िए और हरिण पाए जाते हैं। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन पिपरिया (54 किमी) और निकटतम हवाई अड्डा भोपाल (190 किमी) है।

536. साँची यह स्थान भोपाल से 50 किमी और विदिशा से दस किमी दूर है।

पुरातात्विक एवं धार्मिक महत्त्व साँची अपने पुरातात्विक एवं धार्मिक महत्त्व के लिए बहुत प्रसिद्ध है। 243-42 ई०पू० में अशोक ने यहाँ एक लघु स्तंभ लेख स्थापित कराया था, जिसमें उसने धर्म के प्रति अपने विश्वास का वर्णन किया है। उसने यहाँ आठ स्तूप भी बनवाए थे, जिनमें से अब केवल तीन शेष हैं। सबसे बड़े स्तूप को साँची स्तूप के नाम से जाना जाता है। यह उस द्वारा कहीं भी बनवाए गए बौद्ध स्तूपों में सबसे बड़ा स्तूप
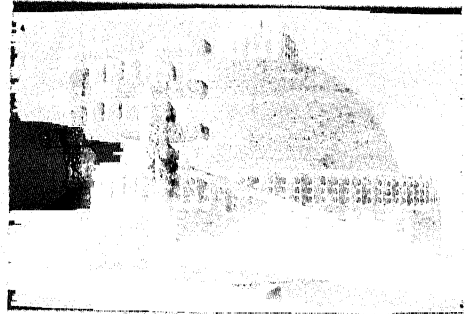
साँची स्तूप

था। इसका व्यास 120 फुट और ऊँचाई 77 फुट है। बौद्ध धर्म के पतन के बाद इस स्तूप को शताब्दियों तक भुला दिया गया। इसे 1818 में पुनः खोजा गया और 1912 में जॉन मार्शल द्वारा इसका पुनरुद्धार कराना

साँची स्तूप पर एक नक्काशी

आरंभ किया गया। शुंग राजाओं ने इस स्तूप में परिवर्धन किया और इसमें रेलिंग लगवाई। सातवाहन राजाओं ने इसके तोरण बनवाए। ये तोरण 15 फुट ऊँचे हैं तथा इन पर बुद्ध के जीवन तथा पशु-पक्षियों की चित्रकारियाँ की गई हैं। दक्षिणी तोरण पर बुद्ध का जन्म, पूर्वी पर उनका महाभिनिष्क्रमण, उत्तरी पर धर्मचक्रपरिवर्तन तथा पश्चिमी तोरण पर उनके सात अवतार और सारनाथ का प्रथम प्रवचन

साँची स्तूप के पूर्वी द्वार पर यक्षी की प्रतिमा

चित्रित हैं। बाद में स्तूप में जातक कथाओं के दृष्टांतों को भी मूर्ति-शिल्प के रूप में स्थापित करवाया गया। इस स्तूप के दक्षिणी द्वार पर गुप्त काल के एक ब्राह्मण मंदिर तथा एक शिला-स्तंभ के ध्वंसावशेष भी पाए गए हैं। शिला-स्तंभ विक्रमादित्य के काल का है और इसमें उसकी प्रशासन पद्धति के बारे में प्रकाश डाला गया है। अशोक के तीन स्तूपों तथा स्तंभ के अलावा साँची में चैत्य हाल, अशोक की पत्नी द्वारा बनवाया गया विहार, कुछ मंदिर, सतधारा, हीलियोडोरस स्तंभ, विदिशा संग्रहालय, रायसेन का किला और उदयगिरि की गुफाएँ दर्शनीय हैं। अशोक के पुत्र महेंद्र ने लंका के लिए साँची से ही प्रस्थान किया था। यहाँ एक संग्रहालय भी है, जिसकी स्थापना 1919 में की गई थी। यहाँ ठहरने के लिए आईटीडीसी का अशोक ट्रैवलर्ज लॉज तथा पीडब्ल्यूडी का सर्किट हाउस और रेस्ट हाउस है। साँची से निकटतम रेलवे स्टेशन विदिशा 10 किमी और हवाई अड्डा भोपाल 46 किमी दूर है।

537. सागर—ऐतिहासिक महत्त्व मुहम्मद तुगलक के काल में उसके विद्रोही सेनानायक जफर खाँ ने सागर पर अधिकार कर लिया था और अलाउद्दीन हसन बहमनशाह के काल में सागर में मुहम्मद बिन आजम ने विद्रोह कर दिया था। ग्यासुद्दीन तुगलक के काल में उसका चचेरा भाई बहाउद्दीन गुर्शप सागर का हाकिम था। परंतु मुहम्मद तुगलक के काल में गुर्शप ने विद्रोह कर दिया। जब गुर्शप ने अपनी स्वतंत्रता की घोषणा कर दी, तो तुगलक के आदेश से गुजरात के सूबेदार ख्वाजा-ए-जहाँ अहमद अय्याज ने उस पर आक्रमण कर दिया। गुर्शप भागकर पहले देवगिरि और फिर द्वारसमुद्र चला गया। सुल्तान ने जब मलिकजादा ख्वाजा-ए-जहान को उसे पकड़ने के लिए द्वारसमुद्र भेजा, तो द्वारसमुद्र के राजा ने गुर्शप को बंदी बनाकर मलिकजादा को सौंप दिया और अपनी जान बचाई। ताजुद्दीन फिरोज बहमनशाह के काल (1397-1422) में सागर के सामंत ने बहमनी सेना को अपने किले से बाहर निकाल दिया। बुंदेलखंड के राजा छत्रसाल ने मुगल सम्राट मुहम्मदशाह बंगश के विरुद्ध सहायता कराने के फलस्वरूप सागर को अप्रैल, 1729 में बाजीराव को दे दिया था।

538. सिहोर यह स्थान वल्लभी के पास है, जहाँ से वल्लभी राजाओं ने 470 ई० से 790 ई० तक गुजरात के काठियावाड़ क्षेत्र पर राज्य किया था। काठियावाड़ का नामकरण इस क्षेत्र में रहने वाली काठी जन-जाति के नाम पर हुआ था। यहाँ के वल्लभी राजा बहुत शिष्ट थे और बौद्ध धर्मावलंबी थे, जिस

कारण वे अरब आक्रमणकारियों का मुकाबला नहीं कर सके। 1722 में यहाँ के एक गोहिल (राजपूत) नवयुवक ने मराठों से इसकी रक्षा की थी। 1723 ई० में उसने राजस्व के एक वैकल्पिक स्रोत के रूप में भावनगर बंदरगाह का निर्माण किया, परंतु शीघ्र ही इसे भी उससे छीन लिया गया। यहाँ राजकोट रोड की पहाड़ियों पर उस काल के ध्वंसावशेष अब भी देखे जा सकते हैं। शहर के बाहर गौरी शंकर नामक एक झील है।

539. सोन घड़ियाल अभयारण्य यह अभयारण्य घड़ियालों और पानी में रहने वाले जीवों के लिए स्थापित किया गया है। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन सालनो 140 किमी और निकटतम हवाई अड्डा वाराणसी 228 किमी दूर है।
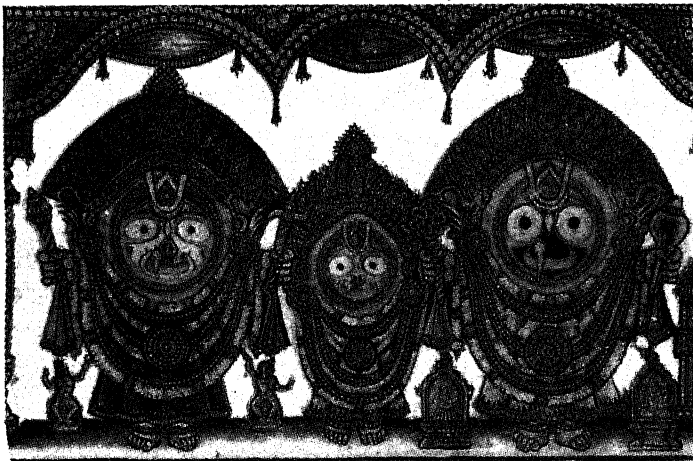
श्रीबलभद्र, सुभद्रा और श्रीजगन्नाथ, पुरी

❖❖❖

महाराष्ट्र

ऐतिहासिक विवरण

महाराष्ट्र के प्रथम ज्ञात शासक सातवाहन थे। वे ही इस राज्य के निर्माता थे और उन्होंने यहाँ साहित्यिक, पुरातात्विक तथा कलात्मक अवशेषों के रूप में अनेक तरह के प्रमाण छोड़े। उनके बाद वाकातकों के शासन काल में भी शिक्षा, कला और धर्म के क्षेत्र में पर्याप्त उन्नति हुई। अजंता की कुछ गुफाएँ और उनमें बने भित्तिचित्र कला के क्षेत्र में उनकी उच्च स्तरीय दक्षता को दर्शाते हैं। उनके बाद चालुक्यों, राष्ट्रकूटों, यादवों, शिलाहारों और बहमनी शासकों ने राज्य में शासन किया। महाराष्ट्र का सबसे शक्तिशाली शासक शिवाजी था। उसने राज्य में स्वराज और राष्ट्रवाद की भावना का सूत्रपात किया। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान बाल गंगाधर तिलक, राणाडे आदि नेताओं ने आंदोलन में बढ़-चढ़कर भाग लिया। सेवाग्राम यहाँ राष्ट्रवादी नेताओं का केंद्र था। 1 मई, 1960 तक महाराष्ट्र तत्कालीन बंबई राज्य का हिस्सा था। इस तिथि को इसे बंबई राज्य से अलग करके एक भिन्न राज्य बना दिया गया।

महाराष्ट्र का क्षेत्रफल 37713 वर्ग किमी है। राज्य की जनसंख्या का घनत्व 257 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी और साक्षरता दर लगभग 65% है। राज्य में 31 जिले हैं, जिनकी प्रमुख भाषा मराठी है। गणेशोत्सव और गुडी पड़वा प्रदेश के प्रमुख त्योहार हैं। राज्य में कोर्कू नृत्य प्रमुख है।

540. अंबरनाथ अंबरनाथ ठाणे-कल्याण मार्ग पर है। यहाँ ग्यारहवीं शताब्दी में बना एक सुंदर मंदिर है, जो दक्षिण भारत के अच्छे मंदिरों में से एक है। मंदिर छोटी-छोटी पहाड़ियों की घाटी में एक नदी के किनारे पर है। इसका निर्माण शिलाहार वंश के एक राजा की स्मृति में करवाया गया था। शिव को समर्पित इस मंदिर के बाहर और भीतर भित्तिचित्र बने हैं। इनमें हाथियों, नृतकियों, पार्वती, काली आदि के चित्र प्रमुख हैं।

541. अजंता यह स्थान महाराष्ट्र में औरंगाबाद के उत्तर-पश्चिम में लगभग 102 किमी की दूरी पर है। यह स्थान मुख्य रूप से बुद्ध तथा बोधिसत्वों
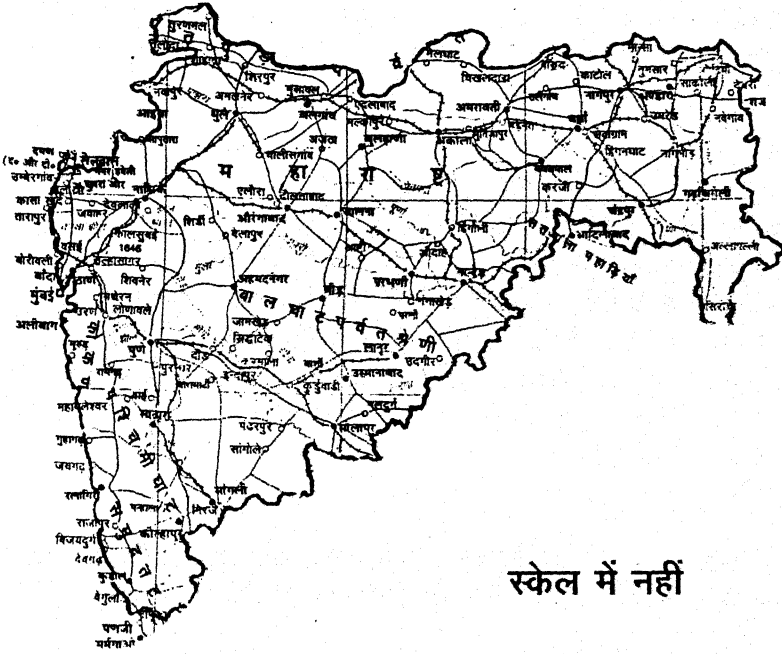
के जीवन पर आधारित चित्रकारियों से भरी 29 गुफाओं के लिए जाना जाता है। इन चित्रकारियों का विषय जातकों से लिया गया है। इन्हें 200 ई०पू० से लेकर 520 ई० के मध्य बनाया गया था। इनमें से तेरहवीं गुफा सबसे पुरानी है। ये गुफाएँ दो प्रकार की हैं—मठ गुफाएँ और विहार गुफाएँ। इनमें तात्कालिक समग्र भारतीय जीवन पर प्रकाश डाला गया है। ये गुफाएँ प्राचीन कला की बेजोड़ नमूना हैं। इनकी दीवारों पर जीवन की समस्त विभिन्नताएँ साकार हो उठी हैं। इन पर पशु-पक्षियों, क्रूरता, भय, त्याग, क्षमा, राजा, रंक, नर-नारी सभी का चित्रण है। गुफा नं० 1, 2, 16, 17 और 19 में सर्वश्रेष्ठ चित्रकारियाँ और गुफा नं 1, 4, 17, 19 और 26 में सर्वश्रेष्ठ प्रतिमाएँ हैं। गुफा नं० 1 में एक विहार और बुद्ध की एक मूर्ति है। दो अन्य प्रमुख चित्र पदमपाणि और व्रजपाणि के हैं। गुफा नं० 2 में बुद्ध की माता माया को सपना लेते हुए दिखाया गया है। गुफा नं० 4 अजंता की गुफाओं में सबसे बड़ी और सबसे पुरानी है। इसमें एक बहुत बड़ा चैत्य है। गुफा नं० 16 में बुद्ध की जन्म कथा चित्रित है। इसमें बुद्ध के चचेरे भाई नंद की पत्नी सुंदरी का स्वर्ग-प्रयाण दिखाया गया है। गुफा नं० 17 में सबसे अधिक चित्रकारियाँ है। इसमें एक चित्रकारी में राजकुमार सिंहल को लंका पर विजय

करते हुए तथा दूसरी में बुद्ध को यशोधरा व राहुल से भीख माँगते हुए दिखाया गया है। गुफा नं० 19 में बुद्ध की शिला प्रतिमा है तथा गुफा नं० 26 एक विहार है।

उपलब्ध सुविधाएँ अजंता देश के अन्य भागों से मुख्य रूप से सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन जलगाँव और निकटतम हवाई अड्डा औरंगाबाद है। औरंगाबाद से अजंता के लिए प्रतिदिन बसें जाती हैं और टैक्सियाँ तथा टूरिस्ट कारें भी मिलती हैं, जिनकी बुकिंग रेलवे स्टेशन तथा बड़े बस अड्डे से करवाई जा सकती है। आईटीडीसी तथा ऐमटीडीसी भी औरंगाबाद से इन स्थानों के लिए प्रतिदिन बसें चलाते हैं। अजंता में ठहरने के लिए फरदपुर रैस्ट हाउस है। इन गुफाओं में गाइड, फोटोग्राफी तथा निर्बल व्यक्तियों के लिए कुर्सियों की सुविधाएँ उपलब्ध हैं। पर्यटन संबंधी सूचना के लिए जलगाँव रेलवे स्टेशन पर आईटीडीसी के सूचना केंद्र से संपर्क किया जा सकता है।

542. अमझेरा पेशवा बाजीराव प्रथम के छोटे भाई चिमनाजी अप्पा ने मालवा में मुगल सम्राट के सूबेदार गिरिधर बहादुर और उसके चचेरे भाई दया बहादुर को अमझेरा में मारकर 29 नवंबर, 1728 ई० को मालवा जीता था।

543. असीरगढ़—ऐतिहासिक महत्त्व अहमदाबाद के सुल्तान अहमदशाह (1411-41) ने असीरगढ़ पर विजय प्राप्त की थी। अकबर ने इसे खानदेश के मीरन बहादुर से 6 जनवरी, 1601 ई० को छीन लिया था। 1 मई, 1700 ई० को असीरगढ़ के किले पर हैदराबाद के निजाम-उल-मुल्क ने कब्जा कर लिया था। बाद में बालाजी बाजी राव के भाई सदाशिव राव भाऊ ने निजाम-उल-मुल्क सलाबत जंग और उसके सहायक निजाम अली से इसे सन् 1759 ई० में हथिया लिया। उज्जैन के सिंधिया शासक ने जब लार्ड वेल्जली से 1803 में सुर्जी अर्जुनगाँव की संधि की, तो इस संधि के बाद उसके पास असीरगढ़ के अलावा दक्षिण में और कोई क्षेत्र न रहा। असीरगढ़ में कन्नौज के मौखरि राजा शर्ववर्मा की छठी शताब्दी की एक मुहर मिली है।

544. अहमदनगर इसकी स्थापना गुजरात के सुल्तान अहमदशाह ने 1426-27 ई० में की थी।

ऐतिहासिक महत्त्व 1481 तक यहाँ बहमनी सुल्तानों का शासन था। 1481 में बहमनी राज्य के प्रधानमंत्री, मुहम्मद गावाँ की हत्या के कुछ समय बाद ही सुल्तान निजामशाह ने यहाँ 1498 ई० में निजामशाही शासन की नींव डाली और

यहाँ का किला बनवाया। अहमदाबाद के सुल्तान महमूद बेगड़ा (1459-1511) ने अहमदनगर के निजामशाही सुल्तान को पराजित किया था। 1595 ई० में राजकुमार मुराद और अब्दुल रहीम ने निजामशाही अहमदनगर की रानी चाँद बीबी के कड़े मुकाबले के बाद उसे संधि के लिए विवश किया। परंतु रानी द्वारा संधि की शर्तें तोड़ी जाने के बाद इसे अगस्त, 1600 ई० में मुगल साम्राज्य में शामिल कर लिया गया। इसके बावजूद 1605 ई० में अकबर की मृत्यु के बाद आदिलखाँ अपने अबीशिनियाई मंत्री मलिक अंबर की असाधारण शूरता से यहाँ का स्वतंत्र शासक बन बैठा। उसे हटाने के लिए जहाँगीर ने 1608, 1610, 1611 और पुनः 1611 में क्रमश अब्दुर रहीम, राजकुमार परवेज, खानजहाँ लोदी और पुनः अब्दुर रहीम को भेजा, परंतु आदिलखाँ ने उन्हें पीछे धकेल दिया। 1617 ई० में राजकुमार खुर्रम ने अहमदनगर पर धावा बोलकर आदिलखाँ को परास्त कर दिया। आदिलखाँ ने सम्राट के समक्ष पेश होकर पंद्रह लाख रुपये के उपहार भेंट किए। इस विजय के बाद जहाँगीर ने राजकुमार खुर्रम को शाहजहाँ की पदवी दी और आदिलखाँ को फरजंद की, परंतु मलिक अंबर ने 1620 ई० में अहमदनगर को पुनः जीत लिया। 1633 ई० में मलिक अंबर के पुत्र फतेहखाँ ने मुगलों के उकसावे पर अहमदनगर के निजामशाही सुल्तान निजामउद्दीन की हत्या करके दस वर्षीय अवयस्क राजकुमार हुसैनशाह को गद्दी पर बैठा दिया और स्वयं सर्वेसर्वा बन गया। इससे शाहजी भोंसले और बीजापुर के आदिलशाह नाराज हो गए। वे मुगलों से उलझ पड़े। बाद में फतेहखाँ को कूटनीति से पकड़कर शाही दरबार में भेज दिया गया। उसे लाहौर में रहने की इजाजत दी गई। हुसैनशाह को ग्वालियर के किले में जीवन भर के लिए नजरबंद कर दिया गया। इस प्रकार निजामशाही राज्य का अंत हो गया। शाहजहाँ ने इसे 1637 ई० में अपने साम्राज्य में मिला लिया। औरंगजेब की मृत्यु 20 फरवरी, 1707 ई० को यहीं हुई थी। यहाँ उसका मकबरा भी है। पेशवा बालाजी बाजीराव के चचेरे भाई ने 1759 ई० में इसे हैदराबाद के निजाम-उल-मुल्क सलाबतजंग से छीन लिया। 1803 की सुर्जी अर्जुनगाँव की सहायक संधि के अनुसार उज्जैन के सिंधिया शासक ने इसे वेल्जली को सौंप दिया था और अंग्रेजों ने इसे अपने राज्य में मिला लिया था।

545. एलिचपुर बरार जिले में स्थित यह वह स्थान है, जहाँ दंतिदुर्ग नामक सामंत ने अपने चालुक्य अधिपति कीर्तिवर्मा को हराकर 753 ई० में राष्ट्रकूट वंश के शासन की स्थापना की। बाद में राष्ट्रकूटों ने अपनी राजधानी मान्यखेट बदल ली। अधिक विवरण के लिए कृपया आंध्र प्रदेश में मान्यखेट देखें। यहाँ गुप्त राजा कुमारगुप्त प्रथम के तेरह सिक्के पाए गए हैं।

546. एलोरा यह स्थान महाराष्ट्र में औरंगाबाद के पश्चिम में 28 किमी दूर है और अपने गुफा मंदिरों के लिए प्रसिद्ध है।

ऐतिहासिक महत्त्व एलोरा की गुफाएँ चारानानदरी पहाड़ियों को काट-काटकर बनाई गई हैं। इनका विकास वातापी के चालुक्य और राष्ट्रकूट राजाओं के संरक्षण में छठी से तेरहवीं शताब्दी तक चलता रहा। राष्ट्रकूट राजाओं दंतिदुर्ग, कृष्ण राज द्वितीय और अमोघवर्ष ने इनमें अधिक रुचि ली। एलोरा की मूर्तिकला अपने ढंग की निराली है। इन मंदिर गुफाओं में तीस से अधिक मंदिर हैं। ये मंदिर बारादरी की भाँति दो-तीन मंजिलों में कटे हुए हैं। ये गुफा मंदिर ब्राह्मण, जैन तथा बौद्ध धर्म से संबंधित हैं। गुफा नं० एक से बारह तक बौद्ध धर्म, 13 से 29 तक हिंदू धर्म तथा 30 से 34 तक जैन धर्म से संबंधित हैं। बौद्ध धर्म की गुफाओं में बुद्ध तथा बोधिसत्वों के जीवन के बारे में भित्तिचित्र बनाए गए हैं। गुफा नं० 5 सबसे बड़ी (117 फुट x 56 फुट) है। गुफा नं० 10 में बुद्ध की प्रतिमाओं के साथ-साथ विश्वकर्मा की प्रतिमा भी है। गुफा नं० 11 दुमंजिली और 12 तिमंजिली है। हिंदू धर्म की गुफाओं में रावण की खाई (गुफा नं० 14), कैलाशनाथ मंदिर (गुफा नं० 16), रामेश्वर मंदिर (गुफा नं० 21) तथा सीतानाहन (गुफा नं० 29) अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। गुफाओं में कैलाशनाथ का शिव मंदिर राष्ट्रकूट राजा कृष्णदेव राय ने आठवीं शताब्दी में बनवाया था। इस मंदिर में शिव की एक भव्य प्रतिमा विराज रही है। कलाकारों की कलाकारी से दूर बहती एक नदी की धारा को पहाड़ों के अंदर ही अंदर इस प्रकार मोड़ लाया गया है कि यह एक हजार वर्षों से मंदिर में स्थापित शिवलिंग पर लगातार टपक रही है। गुफाओं में दशावतार मंदिर संगतराशी का बहुत सुंदर नमूना है। इसमें विष्णु के दस अवतारों की प्रतिमाएँ हैं। जैन धर्म की गुफाओं में गुफा नं० 32 में इंद्र सभा, 33 में जगन्नाथ सभा और 35 के ऊपरी भाग के पास जैनियों के 23वें तीर्थंकार भगवान पार्श्वनाथ की पदमासन अवस्था में एक विशालकाय मूर्ति है। एलोरा की गुफाएँ और इनमें बने मंदिरों का धाम इतना लंबा चौड़ा है कि ताजमहल जैसी इमारत तो इसके अहाते में आ जाए।

एलोरा की गुफाओं से मात्र डेढ़ किमी दूर घृणेश्वर मंदिर है, जहाँ भगवान शिव के बारह ज्योतिर्लिंगों में से एक स्थापित है। इस मंदिर का निर्माण कृष्णदेव राय ने दसवीं शताब्दी में और पुनर्निर्माण इंदौर की महारानी अहिल्याबाई होलकर ने 18वीं शताब्दी में करवाया था।

एलोरा के दशावतार गुहालेख से पता चलता है कि प्रथम राष्ट्रकूट राजा दंतिदुर्ग (753-60) ने काँची, कलिंग, कौशल, श्रीशैल, मालवा, लाट तथा टोंक पर

विजय प्राप्त की थी।

एलोरा घूमने का उपयुक्त समय अक्तूबर से मार्च तक का होता है। एलोरा देखकर रात को वापस औरंगाबाद भी ठहरा जा सकता है।

547. ऐलीफेंटा ऐलीफेंटा मुंबई के निकट अरब सागर में एक छोटा सा टापू है। यद्यपि इस टापू पर अभी भी लोग ज्यादा संख्या में नहीं रहते और यह मुख्य रूप से पर्वतीय तथा निर्जन वन क्षेत्र ही है, फिर भी इस टापू पर मानव जाति के छठी शताब्दी ई० में ही पहुँच जाने के अकाट्य प्रमाण मिल गए थे। पहाड़ी में उस काल की कुछ गुफाएँ पाई गई हैं, जो देवी-देवताओं की शिला प्रतिमाओं से भरी हुई हैं। यह तो निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि कला के क्षेत्र में इस अकूत संपदा का निर्माण किसने करवाया, परंतु यह निश्चित है कि इन गुफाओं का शिल्प कौशल एक लंबी परंपरा का परिणाम है, जो देश में इन के निर्माण से 1000 वर्ष पहले से चली आ रही थी। यह क्षेत्र गुप्त काल के शिल्पियों का हस्त कौशल और कालीदास जैसे सांस्कृतिक कवि की चेतनता को हृदयंगम कर चुका था। निश्चय ही इन दोनों के मेल से ऐलीफेंटा गुफाओं का जन्म हुआ। जो भी हो, यह निर्विवाद है कि शाही संरक्षण के बिना इनका निर्माण नहीं हो सकता था और तत्कालीन हिंदू राजाओं ने इस नवसृर्जन को पूरा प्रोत्साहन दिया। इन गुफाओं में शिव और उनसे संबंधित प्रतिमाएँ अधिक होने से लगता है कि इनका निर्माण उस समय हुआ होगा, जब इस क्षेत्र में शैव धर्म का प्रचार जोरों पर था और जब इसे राजशाही सर्मथन भी मिल रहा होगा।

इन प्रतिमाओं से दैवी शक्ति, प्रेम, आध्यात्मिक शांति जैसे भाव स्पष्ट दिखाई देते हैं। मुख्य गुफा के बाहरी हिस्से में स्तंभों पर टिका 30 फुट चौड़ा एक बरामदा है, जिसमें हाथी की प्रतिमाएँ हैं। गुफा की दीवारों से उभरे स्तंभ दीवारों के पास खड़े द्वारपाल के रूप में बनाए गए हैं। इन गुफाओं में त्रिमूर्ति, नटराज, अर्धनारीश्वर, शिव-पार्वती, शिव की जटाओं से बहती हुई गंगा तथा शिव का योगीश्वर रूप दिखाया गया है। एक प्रतिमा में शिव को अंधका दैत्य को मारते हुए उग्र रूप में दिखाया गया है। अन्य प्रतिमाओं में शिव-पार्वती के विवाह की प्रतिमा, कैलाश पर्वत को उठाने का प्रयास करते हुए रावण की प्रतिमा तथा अन्य देवी-देवताओं की छोटी-छोटी प्रतिमाएँ हैं।

इस प्रकार शिव के विभिन्न रूपों को अपने में समेटी ये गुफाएँ उन दिनों के लोगों की हिंदू धर्म के महादेव शिव के प्रति आस्था को सुदृढ़ रूप में प्रकट करती हैं। यह स्थान हिंदुओं के लिए ही नहीं, बल्कि कला के क्षेत्र में देश-विदेश के हर धर्म के लोगों के लिए आकर्षक और रोमांचक है और इस स्थान का

पर्यटन अपने आप में एक नई अनुभूति छोड़ता है।

सोलहवीं शताब्दी में पुर्तगालियों ने इनमें से बहुत सी प्रतिमाओं को नष्ट कर दिया था, परंतु ये आज भी उस काल के लोगों के हस्त कौशल, भाव प्रवणता, विषय की गहरी जानकारी और धर्म के प्रति आस्था तथा लगन को पूरी तरह प्रकट करने में सक्षम हैं।

ऐलीफेंटा गुफा जाने के लिए मुंबई में गेटवे ऑफ इंडिया से छोटी-छोटी नावें मिलती हैं, जो वहाँ एक घंटे में पहुँचा देती हैं। इन्हें देखकर तीन बजे तक मुंबई वापस भी आया जा सकता है। पहाड़ी पर गुफाओं के पास ही ऐमटीडीसी का टूरिस्ट लॉज है। गुफा के पास खाने-पीने की अच्छी व्यवस्था है और कलात्मक वस्तुओं की दुकानें हैं। पोलैराइड कैमरे से फोटो खींचने वाले अनेक फोटोग्राफर तथा गाइड भी मिल जाते हैं। यहाँ वर्ष भर 18°से से 33°से के मध्य तापमान रहने के कारण वर्ष भर सामान्य मौसम रहता है और यहाँ कभी भी जाया जा सकता है। महाराष्ट्र पर्यटन विभाग यहाँ फरवरी में रात्रिकालीन शास्त्रीय संगीत, गीत तथा नृत्य महोत्सव आयोजित करता है। मुंबई में भारत सरकार के पर्यटन कार्यालय, 123 महर्षि कर्वे रोड, चर्च गेट, वी टी स्टेशन, छत्रपति शिवाजी एवं सांताक्रुज हवाई अड्डों पर हैं। महाराष्ट्र राज्य का पर्यटक सूचना केंद्र ऐल आई सी बिल्डिंग के सामने मैडम भीकाजी कामा रोड पर तथा ऐमटीडीसी का कार्यालय एक्सप्रैस टावर, नौवी मंजिल, नरीमन प्वाइंट एवं दादर (पश्चिम) में प्रीतम होटल के सामने है।

548. औरंगाबाद—ऐतिहासिक महत्त्व इस शहर की स्थापना मुर्तजा निजामशाह द्वितीय के प्रधानमंत्री मलिक अंबर ने 1610 ई० में की थी। उस समय इसका नाम खड़की था। अपने दक्षिण प्रवास के दौरान औरंगजेब ने यहाँ काफी दिन बिताए थे। इसका औरंगाबाद नाम उसी ने रखा था। उसका पार्थिव शरीर अहमदनगर से यहाँ ले आया गया था। आजकल शिवाजी के पुत्र संभाजी के नाम पर इसे संभाजी नगर भी कहा जाता है। प्राचीन समय में यह पैठन, देवगिरी और दौलताबाद का प्रवेश द्वार होता था। उस समय इसके चारों ओर एक दीवार थी, जिसके 52 द्वार थे। बालाजी बाजीराव के चचेरे भाई सदाशिव राव भाऊ ने हैदराबाद के निजाम-उल-मुल्क सलाबतजंग तथा उसके सहायक निजाम अली से 1760 ई० में औरंगाबाद के कुछ हिस्से छीन लिए थे, जिनसे उसे हर साल 70 लाख रुपये की आमदनी होती थी।

दर्शनीय स्थल यह शहर अजंता और एलोरा गुफाओं का प्रवेश द्वार है। ये गुफाएँ देखने के लिए पहले यहीं आना होता है। यहाँ बीबी का मकबरा, किला

अरक, जामा मस्जिद, पन चक्की, मराठवाड़ा विश्वविद्यालय का ऐतिहासिक संग्रहालय, चिड़ियाघर, घृणेश्वर महल तथा नौकुंडा महल दर्शनीय स्थल हैं। बीबी का मकबरा औरंगजेब की पत्नी रविया-उद्-दुरानी उर्फ दिलरज्म बानो की मजार पर बना हुआ है। यह आगरा के ताजमहल की नकल पर बना है, जिसे मिनी ताज भी कहा जाता है। इस मकबरे का निर्माण औरंगजेब के पुत्र आजमशाह ने 1757 से 1761 ई० के मध्य करवाया था। मकबरे के पिछले हिस्से में बौद्ध धर्मावलंबियों द्वारा छठी से आठवीं शताब्दी के मध्य बनाई गई बारह गुफाएँ हैं। पन चक्की का निर्माण एक रूसी बाबा शाह मुसाफिर ने 1744 ई० में कराया था। यह एक मकबरा है। औरंगाबाद के दक्षिणी किनारे पर एक प्राचीन शिव मंदिर है, जिसका निर्माण अहिल्याबाई होल्कर ने 1711 ई० में कराया था। इसे खंडोबा मंदिर के नाम से जाना जाता है।

औरंगाबाद के आस-पास के दर्शनीय स्थलों में पश्चिम में 16 किमी दूर देवगिरि का किला बहुत प्रसिद्ध है, जिसका निर्माण प्रथम यादव नरेश भिल्लम ने करवाया था। पंद्रहवीं शताब्दी में इसे अलाउद्दीन खिलजी ने अपने कब्जे में कर लिया था। मुहम्मद तुगलक ने इसे अपने काल में अपनी राजधानी बना लिया तथा इसका नाम दौलताबाद रखा। दौलताबाद से केवल दस किमी दूर खुलताबाद में औरंगजेब की कब्र है। खुलताबाद में 'भद्र मारूति' नामक हनुमान मंदिर भी है, जहाँ हनुमान की प्रतिमा लेटी हुई अवस्था में है। औरंगाबाद की पहाड़ियों में सातवीं शताब्दी में बनाई गई कुछ गुफाएँ भी पाई गई हैं, ये गुफाएँ बौद्ध धर्म की महायान शाखा से संबंधित हैं और इनमें चैत्य अथवा विहार बनाए गए हैं। गुफा नं० 1, 2 और 3 में बुद्ध की मूर्तियाँ हैं। गुफा नं० 7 में बोधिसत्व पद्मपाणि की मूर्ति है।

उपलब्ध सुविधाएँ औरंगाबाद देश के अन्य शहरों से रेल, सड़क व वायु मार्ग से जुड़ा हुआ है। टूरिस्ट होम, यूथ होस्टल, रेलवे विश्राम गृह तथा म्युनिसिपल गेस्ट हाउस के अतिरिक्त यहाँ कई धर्मशालाएँ और होटल हैं, जहाँ सस्ती दरों पर ठहरा जा सकता है। यहाँ का तापमान गर्मियों में अधिकतम 40° से और सर्दियों में न्यूनतम 4° से रहता है। यहाँ आईटीडीसी का पर्यटक सूचना केंद्र स्टेशन पर कृष्णा विलास में है।

549. कन्हेरी यह स्थान मुंबई के निकट बोरीवली से आठ किमी दूर है। यहाँ 100 ई०पू० से 50 ई० तक बनाई गई 109 गुफाएँ हैं तथा इनमें बौद्ध धर्म के लेख पाए गए हैं। ये गुफाएँ प्रारंभिक बौद्ध काल की हैं। गुफा नं० 3 के चैत्य हाल में बुद्ध की एक प्रतिमा पाँचवीं शताब्दी की है। इस गुफा के बरामदे

में बुद्ध की 23 फुट ऊँची दो प्रतिमाएँ हैं। गुफा नं० 10 का प्रयोग सभाओं के लिए किया जाता था। कन्हेरी के दरीगृह लेख से ज्ञात होता है कि एक सातवाहन राजा वासिष्ठिपुत्र शिवश्री शातकर्णी (159-66) ने रूद्र की पुत्री का विवाह महाक्षत्रप से किया था। यहाँ उसके उत्तराधिकारी यज्ञश्री शातकर्णी का लेख भी पाया गया है। नासिक की गुफाओं में बुद्ध की मूर्तियाँ नहीं पाई गई हैं, बल्कि उसके धर्म के प्रतीक पाए गए हैं। कन्हेरी में महाराष्ट्र के चूटुकुल राजाओं के लेख भी मिले हैं।

कन्हेरी में ठहरने के लिए पास ही के कृष्णगिरि उपवन में एक टूरिस्ट बंगला है।

550. कल्याण यह भडौंच के निकट है और सातवाहन राजा सातकर्णी प्रथम के काल के दौरान एक प्रसिद्ध बंदरगाह थी। आबाजी सुंदर ने इसे शिवाजी के लिए जीता था।

551. कल्याणी कल्याणी महाराष्ट्र में नर्मदा नदी के दक्षिण में है।

ऐतिहासिक महत्त्व चालुक्य शासक तैलप द्वितीय ने 973 ई० में मान्यखेट के अंतिम राष्ट्रकूट राजा कर्क्क द्वितीय को हराकर कल्याणी में स्वतंत्र शासन स्थापित कर लिया। उसने 997 ई० तक राज्य किया। उसने पश्चिमी चालुक्यों के राज्य के अधिकतर भाग और पाँचाल पर अधिकार कर लिया। उसने चेदि, उड़ीसा, नेपाल, कुंतल, 980 ई० से पूर्व चोल राजा उत्तम और परमार राजा मुंज को हराया। मुंज की युद्ध में मृत्यु हो गई। उसने लाट को जीतकर अपने सेनापति बारप्प को वहाँ का राज्यपाल नियुक्त किया। उसने महाराजाधिराज, परमेश्वर और चक्रवर्ती विरुद धारण किए। 997 में सत्याश्रय उत्तराधिकारी हुआ। उसे कलचूरी राजा कोक्कल द्वितीय और परमार राजा सिंधुराज ने हराया। सिंधुराज ने उससे वे प्रदेश वापस ले लिए, जो तैलप ने मुंज से छीने थे। उसने चोल शासक राजराजा के आक्रमण का सामना किया और उसे हराकर उससे कुर्नूल और गुंटूर जिले छीन लिए। उसने कोंकण के शिलाहार राजा को भी हराया। उसके बाद विक्रमादित्य पंचम् (1008-15) तथा जयसिंह द्वितीय (1015-42) राजा बने। जयसिंह द्वितीय ने कलचूरी राजा गांगेयदेव, परमार, भोज और राजेंद्र चोल के संगठन से अपने राज्य की रक्षा की। उसके उत्तराधिकारी सोमेश्वर प्रथम (1042-68) के काल में राजाधिराज चोल ने चालुक्य सेना को हराकर कल्याणी को लूटा, परंतु सोमेश्वर प्रथम ने 1050 ई० तक उसे अपने राज्य से बाहर कर दिया। उसने वेंगी के राजराजा को अपना आधिपत्य स्वीकार

करने के लिए विवश किया। तब राजाधिराज ने उस पर 1054 ई० में कोप्पम् नामक स्थान पर उससे युद्ध किया, परंतु मारा गया। सोमेश्वर ने इस विजय के उपलक्ष्य में कोल्हापुर में एक विजय स्तंभ बनवाया। 1063 ई० में वह चोल शासक से हार गया। उसने कोंकण प्रदेश को जीता तथा गुजरात, मालवा, कलचूरी के राजा कर्ण, दक्षिण कौशल और केरल पर आक्रमण किया तथा यादवों के विद्रोह को दबाया। उसके बाद 1068 में सोमेश्वर द्वितीय राजा बना। चोल राजा वीर राजेंद्र उसके छोटे भाई विक्रमादित्य (जो उसका दामाद था) को राजा बनाना चाहता था, परंतु सोमेश्वर द्वितीय ने उसे हरा दिया। उसने मालवा पर भी अधिकार किया, परंतु 1076 में विक्रमादित्य षष्ठ ने उसे हराकर बंदी बना लिया और स्वयं राजा बन गया। विक्रमादित्य षष्ठ ने द्वारसमुद्र के होयसल, सेयुण के यादव, कोंकण के शिलाहार और गोआ के कदंब शासकों को हराया। 1085 ई० के आस-पास उसने काँची पर भी अधिकार किया। उसने चोल राजा कुलोतुंग प्रथम और होयसल राजा विष्णुवर्धन को हराया। उसने त्रिभुवनमल्ल का विरुद धारण किया। उसके बाद 1126 में सोमेश्वर तृतीय गद्दी पर बैठा। उसने आंध्र, तमिल, मगध और नेपाल के राजाओं को हराया। उसके बाद 1138 में पेरम जगदेवमल्ल द्वितीय राजा बना। उसने चोल राजा कुलोतुंग द्वितीय और कलिंग के अनंतवर्मन चौड़ गंग को हराया। 1151 में तैलप तृतीय राजा बना। चालुक्य राजा कुमारपाल और चोल राजा कुलोतुंग द्वितीय ने उस पर आक्रमण किया, परंतु उसने उन्हें खदेड़ दिया। उसे काकतीय शासक प्रोल ने हरा दिया, जिससे उसकी शक्ति क्षीण हो गई। उसके मंत्री विज्जल ने इस स्थिति का लाभ उठाकर 1156 में उसे भगा दिया और कल्याणी में कलचूरी वंश के शासन की स्थापना की। परंतु विज्जल के बाद कलचूरी शासकों की शक्ति कमजोर पड़ गई और चालुक्य वंश के गंडनायक ब्रह्म ने कल्याणी पर फिर अधिकार कर लिया, परंतु देवगिरि के यादवों और होयसल वंश के वीर बल्लाल प्रथम के आक्रमणों के सामने चालुक्य राजा टिक न सके। 1163 से 1183 तक जगदेवमल्ल तृतीय ने शासन किया। बाद में चोल राजाओं ने कल्याणी पर आक्रमण किया। यहाँ का राजा सोमेश्वर चतुर्थ (1189-1200) कल्याणी छोड़कर गोआ की तरफ भाग गया। औरंगजेब ने मीर जुमला की सहायता से कल्याणी पर 1657 में कब्जा किया।

व्यापारिक महत्त्व समुद्री किनारे पर होने के कारण सातवाहनों के शासन के समय कल्याणी सबसे बड़ी निर्यात बंदरगाह थी। कन्हेरी और जुनार लेखों में इसका एक प्रमुख व्यापारिक केंद्र के रूप में उल्लेख है।

552. कार्ले यह स्थान लोनावला से छह किमी दूर है। यहाँ सुंग राजाओं के काल में पहली शताब्दी ई० में बनाई गई गुफाएँ पाई गई हैं। यहाँ की एक गुफा में 15 मी x 50 मी x 15 मी आकार का एक बहुत बड़ा चैत्य (बिना खंभों का हाल) पाया गया है, जो आँध्र प्रदेश की शैल वास्तुकला का सर्वाधिक प्रभावी नमूना है। इसके द्वार पर झरने हैं। गुफा का मुख्य द्वार 46 फुट ऊँचा है, जो दाईं-बाईं दिशा में सागवान के चौड़े-चौड़े तख्तों के लंबे-चौड़े पल्लों से ढका हुआ है। इसके बाहर अशोक का सिंह स्तंभ और हाथियों के शिलाचित्र बने हैं। दीवार के भीतरी ओर नृतक-नृतकियों के भित्तिचित्र हैं। गुफा के 37 स्तंभों पर नर-नारियों और पशुओं के भित्तिचित्र हैं। पेशवाओं ने इनके प्रवेश द्वार पर एक मंदिर बनवाया था। यहाँ कुछ हिंदू मंदिर भी हैं। आंध्र प्रदेश के प्रथम सातवाहन राजा पुल्लुमवी (130-58) ने यहाँ एक लेख स्थापित करवाया था, जिससे यह सिद्ध होता है कि उसने 24 वर्ष से कम राज्य नहीं किया। यहाँ के एक लेख से ज्ञात होता है कि उषवदात ने देवताओं, ब्राह्मणों और तपस्वियों के लिए 16 गाँव दान में दिए थे।

553. कोयना अभयारण्य यह प्रदेश के मुख्य अभयारण्यों में से एक है और राज्य के दक्षिण-पश्चिम में समुद्री घाट के साथ-साथ है। यहाँ 150 वर्ग किमी क्षेत्र में सदाबहार वन हैं, जहाँ नीलगाय, गौर, तेंदुए तथा बाघ घूमते हुए देखे जा सकते हैं।

554. कोल्हापुर यह महाराष्ट्र के दक्षिण में सतारा के पास है।

ऐतिहासिक महत्त्व ग्यारहवीं शताब्दी में चोल राजा राजेंद्र (1014-44) ने कल्याणी के चालुक्य राजा सोमेश्वर प्रथम को हराकर कोल्हापुर में एक विजय स्तंभ बनवाया था। कल्याणी के चालुक्य राजा सिंघण (1200-47) ने कोल्हापुर के शिलाहार भोज पर अपना दबदबा बनाया था। नवंबर, 1707 में साहू से युद्ध में हारने के बाद ताराबाई कोल्हापुर आ गई थी। यहाँ नवंबर, 1707 से दक्षिणी मराठा शासक शिवाजी द्वितीय और 1707 से 1760 तक संभाजी द्वितीय की गद्दी थी। गोपाल कृष्ण गोखले 1866 में यहीं पैदा हुए थे। राजाराम प्रथम मार्च, 1707 में यहीं स्वर्ग सिधारे थे। उसका यहाँ आर्नो नदी के किनारे कैसीन पार्क में दाह संस्कार किया गया था, जहाँ उनका समाधि स्थल आज भी देखा जा सकता है। कोल्हापुर के एक राजा ने इटली के फ्लोरेंस नगर को एक सुंदर छतरी भेंट की थी।

555. खंडाला यह एक पहाड़ी स्थान है, जो मुंबई-पुणे रेल मार्ग पर मुंबई से 110 किमी दूर भोर घाट पर है। यह एक शांत स्थान है, जो अपने प्राकृतिक सौंदर्य एवं फिल्म शूटिंग के लिए जाना जाता है। यह लोनावला से केवल पाँच किमी दूर है। अतः इन दोनों का कार्यक्रम एक साथ बनाया जा सकता है।

दर्शनीय स्थल खंडाला, लोनावला और इसके आस-पास के दर्शनीय स्थलों और वहाँ पहुँचने के साधनों के लिए कृपया लोनावला देखें।

ठहरने की सुविधाएँ खंडाला में ठहरने के लिए महाराष्ट्र सरकार का टूरिस्ट रिसोर्ट, अनेक ट्रस्टों के विश्राम-गृह तथा होटल हैं।

556. खेलना उड़ीसा से वापस लौटती हुई बहमनी सेना ने 1470 ई० में खेलना के उन सरदारों का दमन किया था, जो व्यापारिक जहाजों को लूटते थे। खेलना शिवाजी द्वारा विजित किलों में से एक था। 1702 में इस पर औरंगजेब ने कब्जा कर लिया था।

557. ग्रेट इंडियन बस्टर्ड अभयारण्य यह एक पक्षी विहार है, जिसकी स्थापना बस्टर्ड चिड़ियों के संरक्षण के लिए की गई है। सोलापुर जिले में स्थित इस विहार में दुर्लभ सोहन चिड़िया भी पाई जाती है। विहार में भालू, तेंदुए, बाघ और चौसिंगे हरिण भी मिलते हैं।

558. चपराला अभयारण्य यह अभयारण्य प्रदेश के पश्चिम में समुद्री तट पर स्थित है, जिस कारण यहाँ तरह-तरह के समुद्री पक्षी दिखाई देते हैं। यहाँ सांभर, नीलगाय, जंगली सूअर, तेंदुए आदि भी देखने को मिलते हैं।

559. जावली शिवाजी ने जावली के मुरे सरदार चंदर राव को मरवाकर यहाँ के किले पर 1656 में कब्जा किया था। इस विजय से उसे दक्षिण में अपना अभियान चलाने के लिए काफी धन तथा कुछ चुनिंदा बहादुर सिपाही भी मिले।

560. ठाणे यह शहर महाराष्ट्र में है। इसे बाजीराव प्रथम के भाई चिमनाजी अप्पा द्वारा पुर्तगालियों से 1737-39 में मुक्त कराया गया था।

561. डाभोल इसका प्राचीन नाम परीपट्टम है। प्रथम शताब्दी ई० में यह एक बंदरगाह थी। अलाउद्दीन बहमनशाह (1347-58) ने अपने शासन के

अंतिम दिनों में डाभोल पर अधिकार किया था। परंतु बहमनी सुल्तान मुजाहिद की हत्या के बाद विजयनगर के शासक हरिहर द्वितीय ने डाभोल से बहमनी सेना को निष्कासित कर दिया। यहाँ अमरीकी कंपनी एनरॉन द्वारा एक बिजली घर लगाया गया है, जो किसी विदेशी कंपनी द्वारा देश में लगाया गया पहला बिजली घर है।

562. तड़ोबा राष्ट्रीय उद्यान यह पार्क प्रदेश के उत्तर-पूर्व में चंद्रपुर के पास है। इसे राष्ट्रीय उद्यान का दर्जा 1955 में दिया गया। इस पार्क में कुछ पहाड़ियाँ हैं, जिनके बीच एक झील भी है। यहाँ जंगली सूअर, सांभर, बाघ, नीलगाय, चीता, गौर, तेंदुए, चीतल आदि जानवर देखने को मिलते हैं। यहाँ भ्रमण का उपयुक्त समय नवंबर से मई तक का होता है। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन चंद्रपुर 45 किमी की दूरी पर और हवाई अड्डा नागपुर 158 किमी की दूरी पर है।

563. तोरण शिवाजी ने मराठा साम्राज्य के निर्माण का कार्य आरंभ करने के बाद सबसे पहले बीजापुर के अधीनस्थ तोरण के किले पर ही 1646 ई० में हाथ साफ किया था। औरंगजेब ने इसे 1704 में छीन लिया था।

564. देवगाँव बरार के भौंसले ने लार्ड वैल्जली की सहायक संधि की शर्तें देवगाँव में ही 1803 ई० में स्वीकार की थीं और उसे कटक सौंप दिया था।

565. देवगिरि यह स्थान औरंगाबाद के निकट है। आजकल इसे दौलताबाद कहा जाता है।

ऐतिहासिक महत्त्व मध्य काल में यहाँ यादवों का राज्य था। इस वंश का प्रथम विख्यात राजा भिल्लम था। उसने कलचूरी और पश्चिमी चालुक्य राजाओं को हराकर चालुक्यों के अधिकांश भाग पर अधिकार कर लिया। उसने श्रीवर्धन के राजा अंसल, चोल राजा कुलोतुंग, मालवा के विंध्यवर्मा और गुजरात के भीम द्वितीय को हराया। उसने होयसल राजा बल्लाल द्वितीय को भी हराया, परंतु चार वर्ष बाद बल्लाल ने उसे 1188 में हराकर उसके कृष्णा नदी के दक्षिणी प्रदेश को छीन लिया। नड्डुल के चौहानों ने भी भिल्लम को हराया। उसने 1185 से 1193 तक राज्य किया। उसके उत्तराधिकारी जैतुगी (1193-1200) ने काकतीय, गंग, चोलों, परमारों और चालुक्यों को हराया। सिंघण (1200-47) इस वंश का सबसे प्रसिद्ध राजा था। उसने पश्चिमी चालुक्यों के पूरे राज्य और लाट पर अधिकार

किया। उसने कोल्हापुर के शिलाहार भोज पर अपना दबदबा कायम किया और मालवा के मुस्लिम शासक और छतीसगढ़ तथा जबलपुर के चेदि शासक को हराया। उसने होयसल राजा को हराकर कृष्णा नदी के दक्षिण के प्रदेश वापस ले लिए, जो बल्लाल ने भिल्लम को हराकर जीत लिए थे। इस विजय के उपलक्ष्य में उसने कावेरी तट पर एक विजय स्तंभ बनवाया। उसके बाद कृष्ण (1247-60), महादेव (1260-71) और रामचंद्र (1271-1307) ने राज्य किया। महादेव ने होयसलों से कुछ क्षेत्र और ले लिए तथा कोंकण को अपने प्रदेश में मिला लिया। रामचंद्र के काल में 1294 में अलाउद्दीन ने देवगिरि पर आक्रमण करके उसे कर देने को विवश किया। 1304 में उसने कर देना बंद कर दिया और अलाउद्दीन के शत्रु अनहिलवाड़ा के राय कर्णदेव तथा उसकी पुत्री देवल देवी को शरण दे दी। अतः 1307 में अलाउद्दीन के सेनानायक मलिक काफूर ने उस पर आक्रमण कर दिया। यूँ देवगिरि का किला दक्षिण के किलों में सबसे मजबूत किला था, परंतु अलाउद्दीन ने इसे किसी प्रकार जीत लिया। यह किसी मुस्लिम द्वारा यह इस किले की पहली जीत थी। फरिश्ता के अनुसार उसने यहाँ से 600 मन सोना, सात मन मोती, दो मन लाल, नीलमणि, हीरे, एक हजार मन चाँदी और हजारों हाथी-घोड़े प्राप्त किए। बॉसी ने लिखा है कि दक्षिण से लाई गई लूट की सामग्री इतनी ज्यादा थी कि यह 1351 ई० तक फिरोजशाह तुगलक के लिए भी बची रही। तत्कालीन लेखक अमीर खुसरो ने भी इस लूट का वर्णन किया है। इनके अतिरिक्त राजा रामचंद्र को सुल्तान को नियमित रूप से कर देने के लिए भी विवश होना पड़ा। परंतु कुछ समय बाद उसने कर देना फिर बंद कर दिया। 1308 ई० में मलिक काफूर ने देवगिरि पर पुनः आक्रमण करके यादव नरेश को संधि करने के लिए विवश कर दिया। इस विजय से अलाउद्दीन का दक्षिण के अन्य हिंदू राजाओं पर विजय का मार्ग प्रशस्त हो गया। 1312 ई० में राजा रामचंद्र देव के पुत्र शंकर देव अथवा सिंहल देव ने सुल्तान के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। मलिक काफूर ने देवगिरि पर पुनः आक्रमण करके उसे परास्त करने के बाद उसे मार दिया और 1314 ई० में दिल्ली वापस बुलाए जाने तक इसे अपनी राजधानी बनाए रखा। उसके जाने के बाद रामचंद्र देव के दामाद हरपाल देव ने शासन की बागडौर संभाली। अलाउद्दीन खिलजी की मृत्यु के बाद हरपाल देव ने भी कर देना बंद कर दिया। तब सुल्तान मुबारक शाह ने देवगिरि पर आक्रमण करके हरपाल देव का वध कर दिया। इस प्रकार देवगिरि पर प्रभुत्व को लेकर देवगिरि और दिल्ली के मध्य काफी लंबे समय तक संघर्ष चलता रहा।

मुहम्मद तुगलक ने 1327 से 1330 ई० के बीच अपनी राजधानी दिल्ली

से देवगिरि और पुनः देवगिरि से दिल्ली बदल ली। उसने देवगिरि का नाम दौलताबाद रखा। मुहम्मद तुगलक ने अपने चचेरे भाई बहाउद्दीन गुर्शप (जो सागर का सूबेदार था और विद्रोह करके यहाँ आ गया था) को पकड़ने के लिए गुजरात के सूबेदार ख्वाजा-ए-जहाँ अहमद अयाज को भेजा, जिसने देवगिरि पर कब्जा कर लिया, परंतु गुर्शप ने भागकर कंपिली के हिंदू राजा के यहाँ शरण ले ली। तुगलक के काल में दक्षिण के अन्य स्थानों की तरह देवगिरि में भी विद्रोह हो गया। वहाँ का हाकिम कुतलुग खाँ एक सहिष्णु और उदार व्यक्ति था। उसकी इस प्रवृति का लाभ उठाकर सत्ताधिकारियों ने सरकारी खजाने में कर जमा करना बंद कर दिया। परिणामस्वरूप राजकोष रिक्त हो गया। बाद में कुतलुग खाँ का भाई आलम-उल-मुल्क हाकिम बना। इन दिनों तुगलक गुजरात के विद्रोह के दमन में व्यस्त था। उसने दक्षिण के सत्ताधिकारियों को सहायता के लिए गुजरात आने का आदेश दिया, परंतु इन सत्ताधिकारियों ने समझा कि वह उन्हें गुजरात में बुलाकर मालवा के विद्रोहियों की भाँति मृत्युदंड देना चाहता है। इसलिए उन्होंने अपने विद्रोह को प्रखर रूप दे दिया और देवगिरि के उस समय के हाकिम निजामुद्दीन को बंदी बनाकर राजकोष लूट लिया और दुर्ग पर अधिकार कर लिया। उन्होंने इस क्षेत्र को अनेक स्वतंत्र राज्यों में बाँट लिया। सुल्तान यह समाचार सुनकर देवगिरि गया और उसने तीन माह के घेरे के बाद दुर्ग तथा देवगिरि पर अधिकार कर लिया। परंतु अभी यह विद्रोह पूरी तरह कुचला भी नहीं गया था कि वह देवगिरि छोड़कर गुजरात में तगी के विद्रोह को दबाने के लिए चला गया। उसकी अनुपस्थिति में सत्ताधिकारी नेता हसन गंगू ने 1346 में देवगिरि पर अधिकार कर लिया और वह अलाउद्दीन हसन बहमनशाह के नाम से देवगिरि (दौलताबाद) की गद्दी पर बैठ गया। उसने यहाँ बहमनी साम्राज्य की नींव डाली। तुगलक को तगी के विद्रोह से फुर्सत नहीं मिली और वह देवगिरि पर पुनः अधिकार करने का मौका न पा सका। बहमनशाह ने अपनी राजधानी आधुनिक कर्नाटक में गुलबर्ग बदल ली। मराठा पेशवा बालाजी बाजीराव के चचेरे भाई सदाशिव राव भाऊ ने देवगिरि हैदराबाद के निजाम-उल-मुल्क से 1759 ई० में छीनी थी।

व्यापार देवगिरि के लोग हीरे-जवाहरातों का व्यापार किया करते थे। यहाँ अनार, अंगूर और सूती कपड़ों का उत्पादन भारी मात्रा में होता था।

566. दौलताबाद कृपया देवगिरि देखें।

567. नंदिवर्धन यह स्थान नागपुर जिले में है। वाकातक राजा

प्रवरसेन (280-340) के पुत्र गौतमीपुत्र ने इसे अपनी राजधानी बनाया था। गौतमीपुत्र की मृत्यु उसके पिता के जीवन काल में ही हो गई थी। उसके बाद रूद्रसेन प्रथम (340-65), पृथ्वीसेन प्रथम (365-90) और रूद्रसेन द्वितीय (390-95) ने शासन किया। रूद्रसेन द्वितीय के बाद प्रभावती गुप्ता ने अपने पुत्रों की अभिभाविका के रूप में पाँच वर्ष तक शासन किया। यहाँ से शासन करने वाला इस कुल का अंतिम राजा प्रवरसेन द्वितीय (410-43) था। उसने प्रवरपुर नामक नई राजधानी बसाई। प्रवरपुर से उसके बाद नरेंद्रसेन (445-65) और पृथ्वीसेन द्वितीय ने शासन किया। पृथ्वीसेन द्वितीय की मृत्यु के पश्चात वाकातक वंश की ही वत्सगुलम शाखा के राजा हरिसेन ने नंदिवर्धन पर अधिकार कर लिया।

568. नबेगाँव राष्ट्रीय उद्यान यह उद्यान प्रदेश के उत्तर-पूर्व में निशानी पहाड़ियों में है। इसकी स्थापना 1975 में की गई थी। इसमें नबेगाँव और इतियादेह नामक झीलें हैं। अंबाझर पहाड़ी चोटी इस उद्यान का एक अंग है। इस पार्क में जंगली सूअर, गौर, चार सींग वाले हरिण, तेंदुए, सांभर, चीतेदार हरिण और नीलगाय दिखाई देते हैं। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय अक्तूबर से मई तक का होता है।

569. नांदेड़ शिवाजी ने यहाँ के किले पर 1670 ई० में कब्जा किया था। यहीं सात अक्तूबर, 1708 को एक पठान ने गुरु गोबिंद सिंह को चाकू घोंपा था।

570. नागपुर—ऐतिहासिक महत्त्व भौंसले परिवार के राघोजी प्रथम ने यहाँ से 1738 से 1755 तक शासन किया था। उसके बाद शासन की बागडौर महादजी, जानोजी तथा कुछ अन्य शासकों के हाथों से होती हुई 1788 में जानोजी के दत्तक पुत्र राघोजी द्वितीय (1788-1816) के हाथ में आई। इस शहर पर 1765 में पूना के पेशवा और हैदराबाद के निजाम ने आक्रमण किया था। लार्ड वेल्जली ने जब उज्जैन के सिंधिया और बरार के होलकर की इच्छा के विरुद्ध बाजीराव द्वितीय को 1803 में पूना में पेशवा की गद्दी पर बैठा दिया, तो अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध की तैयारियाँ हो गईं। नागपुर के भौंसले ने भी सिंधि ाया का साथ दिया। परंतु वेल्जली के भाई आर्थर वेल्जली ने सिंधिया और भौंसले की संयुक्त सेना को 23 सितंबर, 1803 को असाई के पास हरा दिया। भौंसले शासक नवंबर, 1803 में अरगाँव में भी पराजित हुआ। अंग्रेजों ने उसके ग्वालगढ़ किले पर अधिकार कर लिया। भौंसले ने उनसे देवगाँव की संधि करके उन्हें

कटक प्रांत और अपने अधीनस्थ बरार का भाग दे दिया, जिससे अंग्रेजों के अधीनस्थ बंगाल तथा मद्रास के प्रांत एक-दूसरे से मिल गए। भौंसले ने भसीन की संधि को भी मान लिया और अपने दरबार में एक अंग्रेज रेजीडेंट रखना भी स्वीकार किया। अंग्रेजों ने यहाँ के मराठा सरदार अप्पा साहिब भोंसले को सीताबाल्डी में हरा दिया था। बाद में अप्पा साहिब ने विद्रोह कर दिया। अंग्रेजों ने उसे फिर हरा दिया। उसने महाराजा रणजीत सिंह के यहाँ शरण ली। 1818 ई० में लार्ड हेस्टिंग्ज ने नागपुर पर कब्जा करके इसे भोंसले परिवार के शिशु उत्तराधिकारी रघुजी तृतीय को सौंप दिया। अंग्रेज रेजीडेंट सर रिचार्ड जेकिंज को अपना प्रतिनिधि बना दिया। रघुजी तृतीय 1853 ई० में गद्दी का कोई उत्तराधिकारी छोड़े बिना स्वर्ग सिधार गए। उसकी विधवा रानी ने यशवंत राव को गोद लिया, परंतु डलहौजी ने उसे मान्यता देने से इंकार कर दिया और विलय की नीति का सहारा लेकर 1854 में नागपुर रियासत को अंग्रेजी शासन में मिला लिया। उन्होंने शहर के बीच स्थित किले की मरम्मत कराकर नागपुर को मध्य भारत की राजधानी बनाया।

नागपुर से लगभग 75 किमी दूर गाँधी जी द्वारा स्थापित सेवाग्राम है। लगभग 40 किमी दूर रामटेक पहाड़ी है, जिस पर 600 वर्ष पुराना एक मंदिर है। नागपुर में एक संग्रहालय है, जिसकी स्थापना 1863 में की गई थी।

571. नासिक यह स्थान महाराष्ट्र में गोदावरी नदी पर है। ऐसा माना जाता है कि लक्ष्मण ने सूर्पणखाँ की नाक (नासिका) यहीं काटी थी। उस घटना के बाद ही इस जगह का नाम नासिक पड़ा। इससे इस बात को बल मिलता है कि नासिक भारत के प्राचीनतम शहरों में से एक है। दूसरी शताब्दी ई० में यहाँ भूमक और नहपान (119-24) शक् क्षत्रपों का राज्य था। वर्तमान सदी में नासिक का नाम तब समाचारों की सुर्खियों में आया, जब अंग्रेजों ने वी डी सावरकर को नासिक षड्यंत्र कांड में फँसाकर 1911 में पचास वर्ष की जेल की सजा दे दी, परंतु 1937 में कांग्रेस की मिनिस्ट्री आने के बाद उन्हें रिहा कर दिया गया।

धर्म और कला सातवाहन शासकों के काल में यहाँ बुद्ध धर्म को बड़ा अवलंब मिला। सातवाहनों के बाद यहाँ शक् क्षत्रपों ने शासन किया। इस वंश का पहला शासक भूमिक और सबसे प्रसिद्ध शासक नहपान था। नासिक उन चार महातीर्थों में से एक है, जहाँ 12 और 6 वर्षों के पश्चात् क्रमशः कुंभ और अर्ध-कुंभ मेले लगते हैं। इस मेले के आयोजन के पीछे एक पौराणिक कथा प्रचलित है। सुर तथा असुर एक-दूसरे पर विजय प्राप्त करने के लिए युद्धरत थे। दोनों को ज्ञात

हुआ कि सागर की गहराई में एक अमृत कलश (कुंभ) छिपा है, जिसका अमृत पीने वाला अमर हो जाएगा। इसे उनमें से कोई भी अकेला प्राप्त नहीं कर सकता था। इसे प्राप्त करने के लिए दोनों ने मिल-जुलकर प्रयास किया। इसके लिए उन्होंने सुमेरू पर्वत का मथानी और शेषनाग का रस्सी के रूप में प्रयोग करके सागर-मंथन किया। इससे अमृत कलश ऊपर आ गया। सुर-असुर दोनों उसे प्राप्त करने के लिए दौड़े। यह कलश विष्णु के हाथ में आ गया। इससे पहले इसे प्राप्त करने के लिए सुर-असुरों में बारह दिनों तक संघर्ष चला था। इस संघर्ष के दौरान इस अमृत कलश (कुंभ) में से एक-एक बूँद अमृत नासिक, उज्जैन, हरिद्वार और प्रयाग में गिर गई। पृथ्वी के एक वर्ष को स्वर्ग के एक दिन के बराबर मानते हुए इन सभी स्थानों पर बारह वर्ष में एक बार कुंभ मेला लगता है। यह मेला इन चार स्थानों पर एक के बाद एक तीन-तीन साल बाद लगता है। सागर-मंथन के दौरान शेषनाग के मुख से जो विष निकला था, उसका पान शिवजी ने किया था। इस विष को पीकर उनका शरीर नीला हो गया था। उनकी स्मृति में यहाँ नीलकंठेश्वर मंदिर है।

पुरातात्विक महत्त्व नासिक में की गई खुदाइयों में 800 ई०पू० से 400 ई०पू० के उत्तर वैदिक काल के काली पालिश के मिट्टी के बर्तन पाए गए हैं। यहाँ पाई गई ताम्र-पाषाण युग की कीमती वस्तुओं से पता चलता है कि यह शहर ताम्र-पाषाण युग का भी स्थल था। यह दूसरी शताब्दी ई० की हीनयान शाखा (जिसे मंडेना भी कहा जाता है) की 23 बौद्ध गुफाओं के लिए भी जाना जाता है। ये गुफाएँ शहर के आठ किमी दक्षिण-पश्चिम में त्रयंबक पहाड़ियों में हैं। इन्हें पांडव लेना कहा जाता है। प्रत्येक गुफा में तीन हाल और एक प्रार्थनालय है। इनमें गुफा नं० 3, 8 और 15 सबसे अधिक आकर्षक हैं। गुफा नं० 3 में एक स्तूप और बौद्ध धर्म का प्रतीक चक्र है। गुफा नं० 8 और 15 में बुद्ध की प्रतिमाएँ हैं। हीनयान शाखा में मूर्ति-पूजा की अनुमति न होने के कारण बुद्ध के प्रतीक के रूप में केवल आसन और पद-चिह्न का प्रयोग किया जाता था। बुद्ध की प्रतिमाएँ यहाँ बाद में स्थापित की गई हैं। नासिक के एक लेख में इस बात का उल्लेख है कि धर्मनंदी ने उस गुफा में रहने वाले भिक्षुओं के वस्त्रों के लिए अपना खेत दान में दिया था। एक दूसरे लेख में उल्लेख है कि उसकी एक गुफा का निर्माण दूसरे सातवाहन राजा कृष्ण (37-27 ई०पू०) के समय में एक श्रमण महामात्र ने कराया था। यहाँ तीन विहार पाए गए हैं, जिनमें प्रथम एवं दूसरी शताब्दी ई० के नहपान, गौतमीपुत्र शातकर्णी, पुल्लुमवी और यज्ञश्री शातकर्णी के लेख हैं। यहीं स्थापित गौतमी बलश्री के लेख से ज्ञात होता है कि उसके पुत्र ने क्षत्रियों का

मान-मर्दन किया और वर्ण धर्म फिर से स्थापित किया। नासिक में वासिष्ठिपुत्र श्री पुल्लुमवी (130-58) और यज्ञश्री शातकर्णी के लेख भी मिले हैं।

पर्यटन स्थल नासिक में 23 बौद्ध गुफाओं के अतिरिक्त चौदहवीं शताब्दी में बना शिव का कपालेश्वर मंदिर, 200 वर्ष पुराना सुंदर नारायण मंदिर, नारू शंकर मंदिर, कुछ अन्य मंदिर तथा गोदावरी नदी के बीच गाँधी स्मारक भी दर्शनीय हैं। ऐसा माना जाता है कि यहाँ की एक गुफा में वनवास के दौरान सीता जी सोई थीं। इस गुफा को देखने के लिए रेंगकर जाना होता है।

नासिक के आस-पास के दर्शनीय स्थानों में त्रयंबक और अंजनेरी हिल रिसोर्ट्स हैं, जहाँ की जलवायु बहुत सुहावनी है। सिनार में चालुक्यों द्वारा ग्यारहवीं शताब्दी में बनवाया गया ऐश्वारा मंदिर और बारहवीं शताब्दी का गोंडेश्वर मंदिर है।

नासिक देश के अन्य भागों से रेल तथा सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ भ्रमण के लिए अक्तूबर से अप्रैल तक का समय ठीक रहता है।

572. पंडरपुर यह हिंदुओं का एक तीर्थ स्थान है। ऐसा माना जाता है कि संत नामदेव का जन्म 1270 ई० में यहीं हुआ था। सतरहवीं शताब्दी के दौरान यह धार्मिक पुनर्जागरण का भी केंद्र था। उन दिनों यहाँ बहुत से संतों ने प्रवचन दिए। बिठोवा (कृष्ण) पूजा और ज्ञानदेव, तुकाराम, रामदास, वमन पंडित एवं एकनाथ को सुनने के लिए यहाँ हजारों श्रद्धालु इकट्ठे हुआ करते थे। इसी धार्मिक चेतना के कारण मराठा लोगों में एकता-भाव आ गया।

573. पनहाला शिवाजी ने अफजल खाँ का वध करने के बाद बीजापुर के शासक से पनहाला का किला छीन लिया था। 1689 में इस पर औरंगजेब ने और 1701 ई० में औरंगजेब ने ही फिर कब्जा कर लिया। यहाँ ठहरने के लिए ऐमटीडीसी का होलीडे कैंप है।

574. पालखेड 1728 ई० में बाजीराव प्रथम ने मोहम्मद शाह बंगश के दक्षिणी प्रांत के वायसराय निजाम-उल-मुल्क को यहीं हराया था। उसे मूँगी शिवगाँव की संधि पर हस्ताक्षर करने पड़े, जिसके द्वारा उसे मराठों का चौथ और सरदेशमुखी का अधिकार बहाल करना पड़ा, जो उन्हें 1719 की संधि से मिला था। उसे साहू को मराठा राज्य का छत्रपति भी स्वीकार करना पड़ा।

575. पुणे कृपया पूना देखें।

576. पुरंदर यह स्थान पुणे के 35 किमी दक्षिण-पूर्व में है।

ऐतिहासिक महत्त्व पुरंदर शिवाजी और मुगलों के मध्य विवाद का एक बड़ा कारण रहा है। 1648-49 ई० में इसे शिवाजी ने और 1665 ई० में औरंगजेब के लिए राजा जय सिंह ने अपने कब्जे में कर लिया था। 1665 ई० के युद्ध के पश्चात् जून, 1665 में शिवाजी और राजा जय सिंह के मध्य यहाँ एक संधि हुई, जिसकी अन्य शर्तों के अतिरिक्त शिवाजी को अपना पुत्र संभाजी औरंगजेब के दरबार में भेजना पड़ा और अपने लिए 12 किले रखकर 23 किले औरंगजेब को सौंपने पड़े। शीघ्र ही शिवाजी ने 1670 ई० में इसे पुनः जीत लिया। नाना फड़नवीस और हेस्टिंग्ज के दूत के मध्य भी 1776 ई० में यहाँ एक संधि हुई थी, जिसके तहत लार्ड हेस्टिंग्ज ने 7 मार्च, 1775 को राघोबा के साथ हुई अपनी सूरत की संधि को भंग कर दिया था। सूरत की संधि के अनुसार अंग्रेजों ने राघोबा को पूना की पेशवाई दिलाने के बदले उससे भसीन और सालसेट के इलाके लेने स्वीकार किए थे। परंतु अंग्रेजों ने पुरंदर की संधि का सम्मान नहीं किया और रघुनाथराव (राघोबा) के साथ कर्नल कोकबर्न के नेतृत्व में सेना भेज दी। मराठों के साथ तालेगाँव में हुए युद्ध में अंग्रेजों की हार हुई।

577. पुरिका यह स्थान बरार के पास है।

ऐतिहासिक महत्त्व यह वाकातक शासकों की प्रारंभिक राजधानी थी। मध्य प्रदेश के सातवाहनों और शकों के पतन के बाद विंध्यशक्ति ने यहाँ तीसरी शताब्दी ई० में वाकातक शासन की नींव डाली। उसके पुत्र प्रवरसेन प्रथम (280-340) ने चारों दिशाओं में विजय प्राप्त की। 'सम्राट' विरुद धारण करने वाला वह इस वंश का एकमात्र शासक था। उसके पुत्र सर्वसेन ने दक्षिणी बरार और हैदराबाद के पश्चिमी भाग पर शासन किया। पश्चिम में शक् क्षत्रपों द्वारा 304 से 345 ई० तक महाक्षत्रप विरुद धारण करने और 332 से 348 ई० तक अपने नाम के सिक्के निकालने बंद कर दिए जाने से इस बात को बल मिलता है कि उन दिनों उन पर वाकातकों का आधिपत्य था। प्रवरसेन प्रथम ने अपनी विजयों के उपलक्ष्य में चार अश्वमेध और एक वाजपेय यज्ञ किए। प्रवरसेन के बाद रूद्रसेन प्रथम (340-65) राजा बना। उसके काल में उसके चाचाओं ने अपनी स्वतंत्रता की घोषणा कर दी, परन्तु उसने उन्हें मध्य भारत में स्थित पदमावती के भारशिव वंश के शासक और अपने नाना भावनाग की सहायता से हरा दिया। परंतु सर्वसेन के इन वंशजों ने बासिम में अपना स्वतंत्र शासन जारी रखा। 365 से 390 तक रूद्रसेन के पुत्र पृथ्वीसेन प्रथम ने राज्य किया। उसने सर्वसेन वंश

की कुंतल अर्थात् दक्षिणी महाराष्ट्र विजय में सहायता की। उसने अपने पुत्र रूद्रसेन द्वितीय का विवाह चंद्रगुप्त द्वितीय की पुत्री प्रभावती गुप्त के साथ किया। परंतु रूद्रसेन द्वितीय पाँच वर्ष के शासन के बाद अपने दो पुत्रों को छोड़कर चल बसा। प्रभावती गुप्त ने अपने बड़े पुत्र दिवाकरसेन और बाद में छोटे पुत्र दामोदरसेन, जो बाद में प्रवरसेन द्वितीय कहलाया, की अभिभाविका के रूप में 410 तक शासन किया। उसके बाद प्रवरसेन द्वितीय ने 445 तक शासन किया। अपने शासन के उत्तरार्द्ध में उसने प्रवरपुर शहर बसाकर उसे अपनी नई राजधानी बना लिया।

578. पूना यह शहर मूठा और मूला नदियों के बीच है। आजकल इसे पुणे कहा जाता है।

ऐतिहासिक महत्त्व 119 से 124 ई० तक यहाँ शक् क्षत्रप नहपान का शासन था। आंध्र प्रदेश के सातवाहन राजा गौतमीपुत्र शातकर्णी (106-30 ई०) ने उसे हराकर पूना को अपने कब्जे में कर लिया था। यहाँ शिवाजी के पिता शाहजी भोंसले की जागीर थी। शिवाजी को यहाँ की जागीर 1641 ई० में मिली। 15 अप्रैल, 1663 ई० को उसने यहाँ औरंगजेब के मामा शाइस्ता खाँ पर आक्रमण किया। शाइस्ता खाँ यहाँ उसी महल में ठहरा हुआ था, जिसमें शिवाजी ने अपना बचपन बिताया था। शिवाजी पूना के उत्तर में शिवनेरी में पैदा हुए थे। रात को हुए इस धावे से मची हड़बड़ी में शाइस्ता खाँ का पुत्र फतेह खाँ मारा गया। उसे अपना अंगूठा भी गँवाना पड़ा। नवम्बर, 1707 में ताराबाई और साहू में खेड नामक जगह पर संघर्ष हुआ, जिसमें साहू की विजय हुई। ताराबाई कोल्हापुर भाग गई। साहू ने सतारा पर कब्जा करके इसे अपनी राजधानी बना लिया। परंतु मुगल दरबार में 1689 से 1707 तक रहने के कारण साहू विलासप्रिय हो गया था। उसे प्रशासन और युद्ध का भी कोई ज्ञान न था। इसलिए राज्य का सारा काम पेशवाओं के हाथों में चला गया। इससे राज्य शक्ति भी पेशवा के हाथ में केंद्रित हो गई। धीरे-धीरे पेशवा का पद पुश्तैनी बन गया। सन् 1748 में साहू की मृत्यु हो गई थी। पूना में साहू का पहला पेशवा विश्वनाथ का पुत्र बालाजी विश्वनाथ (1714-20) था। उसके बाद बाजीराव प्रथम (1720-40) और बालाजी बाजीराव (1740-61) उसके पेशवा हुए। पेशवा बालाजी बाजीराव ने उससे एक ऐसी लिखित आज्ञा प्राप्त कर ली थी, जिसके द्वारा उसे ताराबाई के पोते और उसके वंशजों के नाम से शासन करने का अधिकार मिल गया था। अब साहू के वंशज वास्तविक शासक न रहे, बल्कि शासन चलाने के लिए केवल उनके नाम का प्रयोग किया जाता था। पेशवा वास्तविक शासक हो गया और पूना मराठा

संघ की राजनैतिक गतिविधियों का केंद्र बन गया। बालाजी बाजीराव के बाद माधवराव प्रथम पूना का पेशवा बना। उसी दौरान माधवराव प्रथम का चाचा रघुनाथराव भी पेशवाई का सशक्त दावेदार था। माधवराव प्रथम (1761-62) ने 1768 में उसे उसके पूना के महल में कैद करके और जनार्दन नामक ब्राह्मण, जो नाना फड़नवीस के नाम से प्रसिद्ध हुआ, को अपना मंत्री बनाकर उसे रघुनाथराव पर निगरानी रखने का काम सौंपा। 1769 में उसने चंबल पारकर राजपूतों और जाटों से चौथ वसूल की। उसने दोआब में लूट-पाट मचाई और दिल्ली पर अपना प्रभुत्व जमाकर 1772 में शाह आलम को दिल्ली की गद्दी वापस दिलाई। 1772 में माधवराव की मृत्यु हो गई। माधवराव के बाद उसका छोटा भाई नारायणराव पूना में पेशवा की गद्दी पर बैठा। उस समय वह 17 वर्ष का था, परंतु उसके चाचा रघुनाथराव ने उसे गार्दियों की सहायता से 30 अगस्त, 1773 को मरवा दिया और स्वयं पेशवा बन बैठा। इससे अन्य मराठा सरदार क्रोधित हो गए। पूना के मराठा न्यायाधीश राम शास्त्री ने जब अपनी ओर से मामले की छानबीन की, तो उसने रघुनाथराव को ही पूरी तरह दोषी पाया। साथ ही नाना फड़नवीस ने 12 बड़भाइयों की एक परिषद बनाई। परिषद में उसके अलावा हरिपंत फाड़के, सखाराम बापू, त्रियंबक राव पेठे, मोरोबा फड़नीश, बापूजी नायक, मालोजी घोरपड़े, बलवंतराव प्रतिनिधि, रास्टे, पटवर्धन, महादजी सिंधिया और तुकोजी होल्कर शामिल थे। परिषद ने रघुनाथराव को हटाकर नारायणराव की पत्नी गंगाबाई से पैदा हुए 40 दिन के शिशु सवाई माधवराव (माधवराव द्वितीय) को पेशवा बनाया। रघुनाथराव पूना से भाग गया। उसने ईस्ट इंडिया कंपनी की सहायता लेने के लिए उससे 7 मार्च, 1775 को सूरत की संधि की, जिसके तहत उसने पेशवाई दिलाने के बदले अंग्रेजों को सालसेट और भसीन देना स्वीकार कर लिया। परंतु फड़नवीस (आय-व्यय नियंत्रक) ने 1 मार्च, 1776 को पुरंदर की संधि करके सूरत की संधि को भंग करवा दिया। परंतु अंग्रेजों ने पुरंदर की संधि का सम्मान न करके राघोबा के साथ कर्नल कोकबर्न के नेतृत्व में सेना भेज दी, जिसे मराठों ने तालेगाँव में 9 जनवरी, 1779 को करारी हार दी। युद्ध वाडगाँव की संधि के साथ समाप्त हुआ, जिसके तहत अंग्रेजों ने 1773 के बाद जीते सभी मराठा प्रदेश मराठों को देने स्वीकार कर लिए। हेस्टिंग्ज ने इस संधि को भी भंग कर दिया और अंत में सालबाई की संधि हुई, जिसके द्वारा उसने माधवराव द्वितीय की पेशवाई मानना और राघोबा को कोई सहायता न देना स्वीकार किया। इस प्रकार सालबाई की संधि तक नाना इतना प्रभावशाली हो गया था कि उसके सामने महादजी सिंधिया को छोड़कर अन्य बड़भाइयों का प्रभाव फीका पड़ गया। धीरे-धीरे उसने सभी से मुक्ति पा ली। मुगल शासन पर

नियंत्रण रखने के लिए 1784 में महादजी सिंधिया भी दिल्ली चला गया। वहाँ से वह 1792 में वापस आया और 1794 में उसकी मृत्यु हो गई। इस प्रकार फड़नवीस ने तीस वर्षों तक पूना की राजनीति में निर्बाध रूप से हिस्सेदारी निभाई।

नाना फड़नवीस ने मैसूर के सुल्तान हैदर अली को खिराज की दो लाख रु. बकाया राशि और बादामी, नारगुंड और कित्तूर देने को विवश किया। तीसरे आंगल-मैसूर युद्ध में अंग्रेजों की तरफ से भाग लेने के फलस्वरूप उसे श्रीरंगापटना की 1792 की संधि के तहत तुंगभद्रा तक का इलाका मिला। उसने हैदराबाद के निजाम को मार्च, 1795 में खारदा के युद्ध में हराकर उससे तीन करोड़ रु. हर्जाना, चौथ और सरदेशमुखी वसूल करने का अधिकार तथा ताप्ती से परिंदा तक का क्षेत्र हासिल कर लिया। इस प्रकार फड़नवीश के समय में मराठा राज्य एक शक्तिशाली राज्य के रूप में जाना जाता था। वास्तव में उसने कभी माधवराव द्वितीय को भी अपनी शक्तियों का प्रयोग नहीं करने दिया और उसे हमेशा दबाकर रखा। फड़नवीस की अनुमति के बिना कोई व्यक्ति उससे मिल नहीं सकता था। ऐसे जीवन से तंग आ कर जब उसने एक बार भागने का प्रयास किया, तो उसे नाना ने देख लिया और उसे रोककर काफी डाँट पिलाई। पेशवा ने तंग आ कर 25 अक्तूबर, 1795 को आत्महत्या कर ली।

माधवराव द्वितीय की मृत्यु के बाद पहले रघुनाथराव का छोटा लड़का चिमनाजी अप्पा और बाद में बड़ा लड़का बाजीराव द्वितीय पेशवा बना। बाजीराव और नानाजी दोनों एक-दूसरे के शत्रु थे। बाजीराव ने 31 दिसंबर, 1797 को नानाजी को कैद भी कर लिया था, परंतु 14 नवंबर, 1798 को उसे छोड़कर उसका पद वापस कर दिया। 13 मार्च, 1800 को नाना की मृत्यु हो गई। उसकी मृत्यु के बाद सिंधिया और बाद में होलकर ने पेशवा बाजीराव द्वितीय को अपने नियंत्रण में रखने की कोशिश की। होलकर अधिक शक्तिशाली होने के कारण उसने सिंधिया और पेशवा की संयुक्त सेना को अक्तूबर, 1802 में पूना के पास हरा दिया। पेशवा भसीन चला गया और होलकर पूना में जम गया। भसीन जाकर उसने 31 दिसंबर, 1802 को अंग्रेजों के साथ एक संधि की। उसने पूना में अंग्रेज रेजीडेंट तथा अंग्रेजी फौज रखना और उसका खर्चा देना स्वीकार कर लिया। इसके अतिरिक्त उसने अपनी विदेश नीति भी अंग्रेजों के हाथों में सौंप दी तथा निजाम और गायकवाड़ के साथ अपने झगड़ों में अंग्रेजों को पंच मानना स्वीकार कर लिया। बदले में मई, 1803 में अंग्रेजी फौज के संरक्षण में उसे पूना ले जाकर पेशवाई वापस दिलाई गई। पूना में जमा हुआ होल्कर वापस चला गया।

इसके बाद पेशवाओं पर अंग्रेजों का दबदबा बढ़ गया। पूना में अंग्रेज रेजीडेंट की नियुक्ति हो गई और पेशवा एक नाम-मात्र का मुखिया होकर रह गया। जुलाई, 1815 में पेशवा के एक मंत्री त्रियंबक ने पूना में अंग्रेजों के दूत गंगाधर शास्त्री को मरवा दिया। वह दूत गायकवाड़ और पेशवा के मध्य मतभेद दूर करने के लिए आया था। पूना के ब्रिटिश रेजीडेंट माउंट स्टुअर्ट एलफिंस्टोन ने पेशवा को निर्देश दिया कि वह त्रियंबक को अंग्रेजों को सौंप दे। त्रियंबक को अंग्रेजों को सौंप दिया गया, परंतु त्रियंबक जेल से बच निकला। इसमें पेशवा का हाथ होने का अनुमान लगाया गया। फलस्वरूप अंग्रेजों ने उससे एक और संधि की, जिसके तहत उन्होंने उससे पेशवाई का अधिकार छीन लिया। अब पेशवा ने विद्रोह कर दिया। पूना की रेजीडेंसी जला दी गई। एलफिंस्टोन ने उसे 1817 में कर्की और उसके बाद कोरेगाँव तथा अष्टी में हराकर पूना को अपने कब्जे में कर लिया। पेशवा को 80000 पौंड सालाना पेंशन दी गई। पेशवा की पदवी समाप्त कर दी गई और उसका क्षेत्र बंबई प्रेजीडेंसी में शामिल कर लिया गया। पेशवा को बिठूर में रहने की आज्ञा मिली।

1876 में पूना में भयंकर अकाल पड़ा और प्लेग फैला। 1916 में बाल गंगाधर तिलक ने यहाँ होम रूल लीग की स्थापना की। 16 अगस्त 1932 ई० को मैकडोनाल्ड की सांप्रदायिक नीति के बाद यहाँ 26 सितंबर, 1932 को महात्मा गाँधी और भीमराव अंबेडकर के मध्य एक समझौता हुआ, जिसके तहत विधान सभाओं में दलितों के लिए सीटें आरक्षित की गईं। महात्मा गाँधी को यहीं कर्की के आगा खाँ महल में 9 अगस्त, 1942 से 6 मई 1944 तक बंदी बनाया गया था। कस्तूरबा गाँधी भी इसी महल में बंदी थीं। वे नजरबंदी के दौरान इसी महल में स्वर्ग लोक सिधारीं।

पर्यटन स्थल पूना में देखने के लिए कई पर्यटन स्थल हैं। इनमें आगा खाँ पैलेस, फिल्म नगरी, पंचलेश्वर मंदिर और इसके पास शिवाजी की प्रतिमा (जो शिवाजी के वंशज कोल्हापुर के महाराजा द्वारा बनवाई गई थी,) पार्वती मंदिर आदि हैं। गणेशखिंड में पुराने सरकारी कार्यालय में पूना विश्वविद्यालय (1948 से) है। शनिवारवाड़ा में पेशवा महल का गार्ड हाउस है।

पूना से 17 किमी दूर खड़कवासला में राष्ट्रीय रक्षा अकादमी और 24 किमी दूर सिंहगढ़ का किला है। इसका नामकरण सिंह के-से दिल वाले ताना जी के नाम पर हुआ था, जो इस पर शिवाजी के लिए 1670 में कब्जा करते हुए मारा गया था। सिंहगढ़ का किला 2000 फुट की सीधी चढ़ाई पर था। तानाजी और उसके 300 साथी 1000 फुट पैदल और एक हजार फुट रस्सियों

के सहारे चढ़ कर अंधेरी रात के समय किले में पहुँचे थे। हालाँकि तानाजी मारा गया, परंतु किले पर कब्जा कर लिया गया। किले में तानाजी और राजाराम के समाधि स्थल हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ यह शहर देश के अन्य भागों से वायु, रेल व सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ ठहरने के लिए अनेक होटल हैं। ऐमटीडीसी बस स्टैंड के पास से पुणे दर्शन के लिए प्रतिदिन बसें चलाता है।

579. पैठन औरंगाबाद जिले में गोदावरी नदी के किनारे स्थित इस स्थान का आधुनिक नाम प्रतिष्ठान है। यह प्राचीन विदर्भ का दक्षिणी भाग और सातवाहन राजाओं की राजधानी थी। इस वंश के एक राजा सिमुक ने 60 ई०पू० में कण्व वंश के अंतिम शासक सुसारामन की हत्या करके मगध साम्राज्य का अंत कर दिया और पैठन में सातवाहन शासन की स्थापना की। सिमुक एक दुष्ट शासक था, जिस कारण प्रजा ने उसे 37 ई०पू० में गद्दी से उतारकर उसके भाई कृष्ण को गद्दी पर बैठा दिया। कृष्ण के पश्चात् श्री शातकर्णी (27-17 ई०पू०) और उसके बाद उसकी पत्नी नागनिका ने अपने पुत्रों शक्तिश्री और वेदिश्री की तरफ से शासन किया। इनके बाद शातकर्णी प्रथम, गौतमीपुत्र शातकर्णी (106-30), वासिष्ठिपुत्र श्री पुल्लुमवी (130-58), वसिष्ठिपुत्र शिवश्री शातकर्णी (159-66) और यज्ञश्री शातकर्णी (166-90 ई०) ने शासन किया। पैठन मौर्य काल में और उसके बाद व्यापार का एक केंद्र था। यहाँ से श्रावस्ती तक एक महामार्ग जाता था। सौदागर अपना सामान बैलगाड़ियों से भड़ौंच ले जाते थे, जहाँ से वह नावों द्वारा विदेशों को जाता था।

580. प्रतापगढ़ यह शिवाजी द्वारा विजित किलों में से एक था। औरंगजेब ने इस पर 1689 में कब्जा किया था, परंतु मराठों ने इसे अगले ही साल फिर जीत लिया। प्रतापगढ़ के किले में अफजल खाँ का मकबरा, एक मंदिर और शिवाजी की प्रतिमा है।

581. प्रतिष्ठान कृपया पैठन देखें।

582. प्रवरपुर—ऐतिहासिक महत्त्व इस शहर की स्थापना वाकातक शासक प्रवरसेन द्वितीय (410-45) ने की थी। उसने इसे अपनी राजधानी भी बनाया। उसके बाद उसके पुत्र नरेंद्रसेन ने यहाँ से 465 ई० तक राज्य किया। उसके काल में बस्तर राज्य के नल राजा भावदत्तवर्मा ने प्रवरपुर पर आक्रमण किया था, परंतु हार गया था। कुछ समय तक मालवा, मेकला और

कौशल भी उसके अधीन रहे। उसका पुत्र पृथ्वीसेन द्वितीय प्रवरपुर से शासन करने वाला इस वंश का अंतिम ज्ञात राजा था। उसने अपने शत्रुओं को दो बार हराया। वे संभवतः नल थे।

583. पार्ली यह शिवाजी द्वारा विजित किलों में से एक है। सन् 1700 में इस पर औरंगजेब ने कब्जा कर लिया था।

584. फाँसद पक्षी विहार यह विहार समुद्र के किनारे के साथ-साथ फैला हुआ है, जिस कारण यहाँ समुद्री जीव-जंतु यथा मगरमच्छ, मछलियाँ तथा तरह-तरह के जल पक्षी देखने को मिलते हैं।

585. बंबई कृपया मुंबई देखें।

586. बरार इसका प्राचीन नाम विदर्भ था।

ऐतिहासिक महत्त्व 106 से 130 ई० तक यहाँ सातवाहन राजा गौतमीपुत्र शातकर्णी का राज्य था। खानदेश के नासिर खान ने 1443 से पूर्व बरार पर आक्रमण किया था, परंतु उसे बहमनी शासक के दौलताबाद के सूबेदार मलिक-उल-तुज्जर खलाफ हसन ने हरा दिया।

बरार में कभी अहमदशाही वंश का शासन भी हुआ करता था। महमूद गावाँ ने 1467 ई० में मालवा पर आक्रमण करके बरार को अपने अधीन कर लिया था। इमदाद-उल-मुल्क ने यहाँ बहमनी वंश के पतन पर इमदादशाही वंश की स्थापना की। 1466-67 में मालवा के साथ सुल्तान महमूद खिलजी के हुए समझौते के अनुसार बरार बहममियों को दे दिया गया। 1474 में इसे अहमदनगर राज्य में मिला लिया गया। अहमदनगर की रानी चाँद बीबी और अकबर के सेनानायकों मुराद एवं अब्दुर्रहीम के मध्य हुए समझौते के अनुसार बरार 1595 में मुगलों को दे दिया गया। अगस्त, 1600 में अकबर ने हैदराबाद, बीजापुर, गोलकुंडा और खानदेश की सम्मिलित सेना को हराकर बरार पर संपूर्ण प्रभुत्व स्थापित कर लिया। औरंगजेब जब शिवाजी की गतिविधियों पर काबू न पा सका, तो 1669 ई० के आस-पास उसने शिवाजी को बरार में जागीर दे दी और उसके पुत्र संभाजी को पाँच हजारी मनसबदार बना दिया। शिवाजी के पुत्र राजाराम ने बरार से चौथ और सरदेशमुखी वसूल किए। 1707 में राजाराम की पत्नी ताराबाई ने अपने पुत्र शिवाजी द्वितीय की संरक्षिका के रूप में बरार पर आक्रमण किया। मराठा पेशवा बाजीराव प्रथम ने बरार को 1732 ई० में जीता।

1740 से 1744 तक यहाँ पेशवा ने अर्काट के नवाब दोस्त अली के दामाद चंदा साहिब को कैद करके रखा था। 1803 में एक पठान सरदार आमीर खान ने 40000 घुड़सवारों और 20000 पिंडारियों के साथ बरार पर आक्रमण कर दिया। तब लार्ड मिंटो ने यहाँ के राजा की सहायता करके उसे हराकर भगा दिया। जनरल लेक ने जसवंत राव होलकर की सेना को 1805 के आस-पास फर्रुखाबाद के पास हराया। 1818 के अंत तक पिंडारियों को भी नष्ट कर दिया गया। आमीर खाँ को टोंक का राज्य दे दिया गया। 1853 में अंग्रेजों ने बरार को अपने साम्राज्य में मिला लिया।

587. बासिम—ऐतिहासिक महत्त्व बरार के पास पुरिका में वाकातक वंश के शासक विंध्यशक्ति के पुत्र प्रवरसेन प्रथम (280-340) ने अपने पुत्र सर्वसेन को यहाँ का शासक नियुक्त किया था, परंतु उसने यहाँ अपना स्वतंत्र शासन स्थापित कर लिया। उसके राज्य में दक्षिणी बरार और हैदराबाद का उत्तर-पश्चिमी इलाका शामिल था। उसके बाद उसका पुत्र विंध्यसेन यहाँ का शासक बना। उसने पुरिका के वाकातक राजा पृथ्वीसेन प्रथम की सहायता से दक्षिणी महाराष्ट्र पर विजय प्राप्त की। उसके बाद उसके पुत्र प्रवरसेन द्वितीय ने 15 वर्ष तक राज्य किया। उसकी मृत्यु के समय उसका पुत्र देवसेन 8 वर्ष का था। देवसेन ने 460 से 480 तक और उसके बाद उसके पुत्र हरिसेन ने 515 ई० तक राज्य किया। वह बासिम से शासन करने वाला इस वंश का सबसे शक्तिशाली शासक था। उसने वाकातक वंश की प्रवरपुर की मुख्य धारा के अंतिम शासक पृथ्वीसेन द्वितीय के बाद वहाँ के शासन का भार भी संभाल लिया। उसके अजंता लेख से ज्ञात होता है कि उसका शासन गुजरात, मालवा, दक्षिणी कौशल और कुंतल तक फैला हुआ था और प्रवरसेन प्रथम के शासन से भी अधिक विस्तृत था। उसके बाद 550 ई० तक यहाँ इस वंश का शासन छिन्न-भिन्न हो गया। इस दौरान सोमवंशी राजाओं ने छत्तीसगढ़, कदम्बों ने दक्षिणी महाराष्ट्र, कलचूरियों ने उत्तरी महाराष्ट्र और यशोधर्मा ने मालवा एवं मध्य प्रदेश के उत्तरी भाग पर कब्जा कर लिया। अंत में 550 ई० में बादामी के चालुक्यों ने उनके शासन को पूरी तरह उखाड़ फेंका।

588. बिल्वपत्तन यह स्थान कोंकण क्षेत्र में हुआ करता था।

ऐतिहासिक महत्त्व बिल्वपत्तन 808 ई० से 1100 ई० तक दक्षिणी कोंकण के शिलाहारों की राजधानी थी। ये शिलाहार सामंत पहले राष्ट्रकूटों को अपना अधिपति मानते थे और बाद में चालुक्यों को। बाद में चालुक्यों के अंतिम दिनों

में वे कुछ स्वतंत्र हो गए थे, परंतु देवगिरि के यादव राजा सिंघण (1200-47) ने उनके राज्य को अपने राज्य में मिला लिया।

589. बीडसा यह स्थान लोनावला स्टेशन के पास मालावली स्टेशन से 6 किमी दूर है।

पुरातात्विक महत्त्व यहाँ पर बौद्ध धर्म की गुफाएँ पाई गई हैं। इन गुफाओं का चैत्य कार्ले के चैत्य से मिलता-जुलता है, परंतु उससे छोटा है। यह पच्चीस-पच्चीस फुट ऊँचे चार स्तंभों पर टिका है, जिन पर सुंदर नक्काशी की गई है। इसमें 26 अन्य स्तंभ हैं।

590. बुरहानपुर यह स्थान महाराष्ट्र में अहमदनगर के पास है।

ऐतिहासिक महत्त्व बुरहानपुर चौदहवीं शताब्दी में दिल्ली सल्तनत के पतन के बाद स्वतंत्र हुए खानदेश राज्य की राजधानी थी। 1457 ई० से 1503 ई० तक आदिल खाँ फरूखी के शासन के दौरान बुरहानपुर भारत के सबसे अधिक आकर्षक शहरों में से एक था। 1601 ई० में अकबर ने इसे खानदेश के मीरन बहादुर से छीनकर मुगल साम्रांज्य में मिला लिया। मुमताज महल 7 जून, 1631 ई० को यहीं पर अल्लाह को प्यारी हुई थी। राजा जयसिंह और औरंगजेब ने भी क्रमशः 1667 और 1707 ई० में यहीं अंतिम सांस ली थी। हैदराबाद के निजाम-उल-मुल्क ने 1720 ई० में इसे अपने कब्जे में किया था। बालाजी बाजीराव के चचेरे भाई सदाशिव राव भाऊ ने हैदराबाद के निजाम-उल-मुल्क से बुरहानपुर का किला 1759 ई० में छीन लिया।

591. बोरीवली राष्ट्रीय उद्यान यह उद्यान मुंबई के समीप है। यहाँ एशिया का सबसे बड़ा पार्क भी है। कन्हेरी की गुफाएँ और दो झीलें इसी उद्यान के अंतर्गत आती हैं। यहाँ तरह-तरह के पशु-पक्षी दिखाई देते रहते हैं, जिस कारण यहाँ आने-जाने वालों का सदैव ताँता लगा रहता है। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन बोरीवली (3 किमी) और निकटतम हवाई अड्डा सांताक्रुज़ (15 किमी) है।

592. भाजा भाजा एक पहाड़ी स्थान है, जो लोनावला के पास मालावली स्टेशन से दो किमी दूर है। इस पहाड़ी में दूसरी शताब्दी ई०पू० की 18 गुफाएँ पाई गई हैं। संभवतः इनका निर्माण ननों के लिए किया गया था। मुख्य गुफा (सं० 12) कार्ले की गुफा जैसी ही है। एक गुफा में कुछ स्तूप हैं। कुछ

गुफाएँ दुमंजिली हैं। दक्षिण की तरफ की आखिरी गुफा में नृतक-नृतकी और हाथी और रथ पर बैठे राजकुमार के भितिचित्र बने हुए हैं। गुफाओं के पश्चिम में लोहगढ़ का किला और इनके पीछे विष्णुपुर का किला है।

593. मंडपेश्वर यह स्थान मुंबई के चर्चगेट स्टेशन से 24 किमी और बोरीवली स्टेशन से दो किमी दूर है। यहाँ की पहाड़ियों में ब्राह्मण धर्म की तीन गुफाएँ पाई गई हैं, जिनका निर्माण आठवीं शताब्दी के दौरान किया गया था। इनमें से तीसरी गुफा को पुर्तगालियों ने सोलहवीं शताब्दी में रोमन कैथोलिक चर्च में बदल दिया था।

594. महाबलेश्वर महाबलेश्वर महाराष्ट्र में सहयाद्रि पर्वत श्रृंखला में समुद्र तल से 1372 मी की ऊँचाई पर स्थित है। ऐसा माना जाता है कि इसकी खोज सबसे पहले जान मेल्कन ने 1828 में की थी। यहाँ अनेक सुंदर-सुंदर झरने तथा झील होने के कारण यह महाराष्ट्र का सबसे अच्छा हिल पर्यटन स्थल है। अपनी इसी सुंदरता के कारण यह कभी मुंबई प्रेजीडेंसी की ग्रीष्मकालीन राजधानी हुआ करता था।

पर्यटन स्थल महाबलेश्वर में तीस से अधिक प्वाइंट दर्शनीय हैं। इनमें केट्स, विल्सन, मुंबई, सनसेट तथा लोडविक प्वाइंट अधिक आकर्षक हैं। यहाँ की वेण्णा झील बहुत सुंदर है।

पुरातात्विक महत्त्व महाबलेश्वर में प्राचीन महाबलेश्वर का मंदिर है। ऐसा माना जाता है कि यह स्थान कृष्णा तथा चार अन्य नदियों का उद्गम स्थल रहा है। यहाँ से 24 किमी दूर प्रतापगढ़ का किला है, जहाँ शिवाजी ने अफजल खाँ को मारा था। यहाँ से इतनी ही दूर मलगढ़ का पुराना किला है।

कैसे जाएँ महाबलेश्वर से निकटतम रेलवे स्टेशन तथा हवाई अड्डा पूना (20 किमी) है। महाबलेश्वर जाने के लिए यहाँ से बसें, टैक्सियाँ इत्यादि उपलब्ध रहती हैं। यहाँ जपूना विश्वविद्यालयाने का सर्वोत्तम समय अक्तूबर से जून तक का होता है।

ठहरने की सुविधाएँ यहाँ ठहरने के लिए ऐमटीडीसी का कॉटेज तथा कुछ होटल हैं।

595. माथेरान 'आगे जंगल है' अर्थात् माथेरन मुंबई-पुणे रोड पर मुंबई से 108 किमी दूर है। एक पहाड़ी पर स्थित इस शहर का विकास 1850

में उस समय होना आरंभ हुआ, जब ठाणे का एक कलेक्टर हग मैलेट यहाँ आया। उसने इस स्थान को शांत और रहने के लायक पाया। तब से ही यहाँ आवास गृह बनने शुरू हो गए। माथेरन जाने के लिए पहले छत्रपति शिवाजी रेलवे टर्मिनस से रेल से नेरल जाना होता है। वहाँ से खिलौना गाड़ी अथवा टैक्सी से माथेरान जाया जा सकता है। नेरल से खिलौना गाड़ी से जाते समय पर्यटक को वही रोमांच होता है, जो ऐनजेपी से दार्जिलिंग जाते समय होता है। यह गाड़ी सुरंगों, अंधे मोड़ों, जंगलों आदि से होकर धीमी गति से चलती है। रास्ते में बच्चे और बंदर इसमें चढ़ते-उतरते रहते हैं। यदि यह जानना हो कि खिलौना गाड़ी से सैर करने पर क्या आनंद आता है, तो कृपया पश्चिमी बंगाल में 'दार्जिलिंग' पढ़िए। यहाँ के पर्यटन स्थलों में हार्ट प्वाइंट, चार्लोट लेक प्वाइंट, हनीमून प्वाइंट, लूइसा प्वाइंट, ईको प्वाइंट, पैनोरामा प्वाइंट, सनसेट प्वाइंट, पेमास्टर पार्क, कैथेड्रॉल रॉक, पालीमास्टर वाक, ड्यूक्स नोज तथा राम बाग प्रमुख हैं। 1857 के स्वतंत्रता संग्राम के हीरो नाना पेशवा की जन्म स्थली यही है। कभी टॉलेमी ने भी इस स्थान की यात्रा की थी। शिवाजी यहाँ अपने उस अप्रिय साथी को गिरफ्तार करने आया था, जिसे यहाँ के पास में ही पश्चिम में पड़ने वाले किले की जिम्मेदारी सौंपी गई थी और जिसने यहाँ शिव मंदिर में पूजा करनी छोड़ दी थी। पहाड़ी पर शिवाजी के काल के संत पिसारनाथ का समाधि स्थल है।

ठहरने की सुविधाएँ माथेरान में ठहरने के लिए ऐमटीडीसी के बंगले तथा हालीडे रिसोर्ट हैं। इनका आरक्षण मुंबई से कराया जा सकता है। यहाँ मध्यम तथा निम्न श्रेणी के कई होटल और एक गुजराती धर्मशाला है।

596. माहिम यह शहर मालाबार तट पर है। 1737-39 ई० में बाजीराव प्रथम के भाई चिमनाजी अप्पा ने इसे पुर्तगालियों से छीन लिया था।

597. मुंबई 1995 तक इसका नाम बंबई था। यह भारत की वाणिज्यिक राजधानी है। यहाँ मुंबा देवी का एक भव्य मंदिर होने के कारण इसका नाम मुंबई रखा गया।

ऐतिहासिक महत्त्व 1534 ई० तक मुंबई मुस्लिम शासकों के अधिकार में थी, जब उन्होंने इसे पुर्तगालियों को सौंप दिया। बाद में पुर्तगाल की बरगंजा राजकुमारी कैथरीन से विवाह करने पर इसे पुर्तगालियों ने 27 मार्च, 1661 को चार्लेज द्वितीय को दहेज में दे दिया। चार्लेज द्वितीय ने इसे 1668 ई० में ईस्ट

इंडिया कंपनी को सौंप दिया तथा 1858 ई० में यह शहर कंपनी से ब्रिटिश राज्य के अधिकार में आ गया। 1853 ई० में यहाँ से ठाणे तक भारत की पहली रेलगाड़ी चलाई गई।

राजनैतिक महत्त्व सर ए ओ ह्यूम ने यहाँ 28 दिसंबर, 1885 ई० को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना की। इसका प्रथम अधिवेशन वोमेश चंद्र बनर्जी की अध्यक्षता में 28-30 दिसंबर 1885 को यहीं हुआ था। 1896 में मुंबई में ताऊन (बुबोनिक प्लेग) फैल गया था, जिस कारण बाल गंगाधर तिलक के नेतृत्व में आंदोलनकारियों ने सरकार की काफी भर्त्सना की थी। 1911 में अंग्रेजों ने अपनी राजधानी कलकत्ता से दिल्ली बदली थी। इस अवसर पर इंग्लैंड के शासक जार्ज पंचम तथा उनकी महारानी विक्टोरिया के भारत आगमन पर अंग्रेजों ने यहाँ गेटवे ऑफ इंडिया बनाया था। वे भारत समुद्री रास्ते से ही आए थे, क्योंकि उस समय हवाई जहाज नहीं होते थे। इस गेट का शिलान्यास मुंबई के गवर्नर लार्ड सिडनम ने 31 मार्च, 1913 को तथा उद्घाटन भारत के वायसराय लार्ड रीडिंग ने 12 दिसंबर, 1924 को किया। 17 नवंबर, 1921 को वेल्ज के राजकुमार के आगमन का यहाँ सख्ती से विरोध किया गया था। भारत की राजनैतिक स्थिति का जायजा लेने के लिए स्थापित साइमन आयोग यहाँ 7 फरवरी, 1921 को पहुँचा। 'भारत छोड़ो आंदोलन' का प्रस्ताव भी 7-8 अगस्त, 1942 को हुए कांग्रेस के अधिवेशन में यहीं पारित हुआ।

सामाजिक गतिविधियाँ मुंबई स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान शुरू से ही सामाजिक गतिविधियों का केंद्र रही है। 1857 में यहाँ एक विश्वविद्यालय की स्थापना हुई। आत्माराम पांडुरंग ने यहाँ के निकट पंडरपुर में 1867 ई० में प्रार्थना समाज की स्थापना की। स्वामी दयानंद सरस्वती ने यहाँ 1875 ई० में आर्य समाज की स्थापना की। स्वामी विवेकानंद ने बंबई में वेल्लोर में 1886 ई० में रामकृष्ण मिशन की नींव रखी।

प्रिंस ऑफ वेल्ज़ म्यूजम, मुंबई

पर्यटन स्थल दर्शनीय स्थलों की दृष्टि से मुंबई में बहुत कुछ देखने लायक है। समुद्र-तट ने इसकी दर्शनीयता को और अधिक बढ़ा दिया है। मुंबई अपने गेटवे ऑफ इंडिया के लिए बहुत प्रसिद्ध है।

गेटवे ऑफ इंडिया के अतिरिक्त यहाँ प्रिंस आफ वेल्स म्यूजम, जहाँगीर निकलसन गैलरी, जहाँगीर आर्ट गैलरी, पंडोल आर्ट गैलरी, चर्च गेट तथा शिवाजी टर्मिनस के पास हुतात्मा चौक पर फ्लोरा फाउंटेन तथा यहीं पर उच्च न्यायालय की इमारत, राजाबाई टावर, टाउन हाल, एशियाटिक लाइब्रेरी, नरीमन प्वाइंट, तारपोरवाला मछलीघर, चौपाटी और जुहू बीच, हैंगिंग गार्डन, कमला नेहरू पार्क, नेहरू प्लेनैटैरियम, जीजामाता उद्यान, रानीबाग चिड़ियाघर, माउंट मेरी चर्च, हरे रामा हरे कृष्णा मंदिर, लवर्स प्वाइंट, यूनिवर्सिटी हाल, फैंटेसी लैंड, एस्सेल वर्ल्ड, महालक्ष्मी रेस कोर्स, संजय गाँधी नैशनल पार्क तथा अन्य अनेक स्थान देखने लायक हैं। बोरीवली स्टेशन के पास कृष्णगिरि उपवन है। इस उपवन में बच्चों के लिए एक छोटी सी रेलगाड़ी और शेर सफारी पार्क है।

मुंबई के आस-पास भी कई स्थान पर्यटक रुचि के हैं। यहाँ नैशनल पार्क से लगभग चार किमी दूर कन्हेरी की 109 गुफाएँ हैं, जिनका निर्माण दूसरी शताब्दी के मध्य में बौद्ध भिक्षुओं द्वारा कराया गया था। गेटवे आफ इंडिया से लगभग ग्यारह किमी दूर समुद्री टापू पर ऐलीफेंटा की गुफाएँ हैं। इनका निर्माण छठी शताब्दी में कराया गया था। यहाँ ब्रह्मा, विष्णु, महेश, नटराज, शिव-पार्वती आदि की अनेक मूर्तियाँ हैं। ये गुफाएँ तथा मूर्तियाँ पहाड़ों को काट-काटकर बनाई गई हैं। मुंबई से बीस किमी दूर विहार लेक तथा पवई लेक नामक पिकनिक स्थल हैं। शहर के उत्तरी भाग में मार्व बीच, मनौरी तथा गौरई बीच हैं। लगभग 77 किमी दूर गोआ का एहसास दिलाने वाला बास्सीयेन बीच है। लगभग 40 किमी दूर अकलौली, बृजेश्वरी तथा गणेशपुरी में गर्म पानी के चश्मे हैं। यहाँ नहाने से चर्म रोग ठीक हो जाते हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ मुंबई देश के सभी नगरों से वायु, रेल तथा सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यह एक अंतर्राष्ट्रीय शहर होने तथा समुद्री तट पर होने के कारण देश-विदेश के कुछ शहरों से वायु तथा जलमार्ग से भी जुड़ा हुआ है। मुंबई में ठहरने के लिए होटलों की भरमार है, परंतु ये होटल काफी महंगे हैं। यहाँ वर्ष भर 18°से और 33°से के मध्य तापमान रहने के कारण वर्ष भर सामान्य मौसम रहता है। स्थानीय भ्रमण के लिए यहाँ लोकल ट्रेनें, बसें, टैक्सियाँ तथा आटो उपलब्ध हैं।

मुंबई के दर्शनीय स्थानों का भ्रमण कराने के लिए महाराष्ट्र पर्यटन

विकास केंद्र टूर आयोजित करता है। दादर (पूर्व) स्टेशन से महाराष्ट्र परिवहन निगम भी टूरिस्ट बसें चलाता है। महाराष्ट्र पर्यटन विभाग "मुंबई रात में" पर्यटन बसें भी चलाता है। गेटवे आफ इंडिया से अनेक प्राइवेट टूरिस्ट बसें भी मुंबई दर्शन के लिए प्रतिदिन चलती हैं। वहीं से ऐलीफेंटा गुफाओं के लिए महाराष्ट्र पर्यटन विभाग की तथा प्राइवेट नावें मिल जाती हैं। गाइड भी मिल जाते हैं। मोटर लाँच द्वारा समुद्री सैर भी कराई जाती है। विभाग यहाँ फरवरी में रात्रिकालीन शास्त्रीय संगीत, गीत तथा नृत्य महोत्सव आयोजित करता है।

मुंबई में भारत सरकार का पर्यटन कार्यालय 123, महर्षि कर्वे रोड, चर्च गेट; वी टी स्टेशन तथा छत्रपति शिवाजी एवं सांताक्रुज हवाई अड्डों पर है। महाराष्ट्र राज्य के पर्यटक सूचना केंद्र ऐल आई सी बिल्डिंग के सामने मैडम भीकाजी कामा रोड पर तथा ऐमटीडीसी का कार्यालय एक्सप्रैस टावर, नौंवी मंजिल, नरीमन प्वाइंट एवं दादर (पश्चिम) में प्रीतम होटल के सामने हैं।

598. मूँगी शिवगाँव कृपया पालखेड देखें।

599. मेलघाट अभयारण्य यह अभयारण्य प्रदेश का एक महत्त्वपूर्ण अभयारण्य है और मध्य प्रदेश की सीमा के साथ स्थित है। 1973 से यह पार्क बाघ संरक्षण केंद्र के रूप में जाना जाता है। अभयारण्य के उत्तर में ताप्ती नदी बहती है। यहाँ सांभर, नीलगाय, चिंकारा, जंगली सूअर, जंगली कुत्ता, चीता, गौर, चीतल, बाघ आदि देखने को मिलते हैं।

600. यावला अभयारण्य यह अभयारण्य मध्य प्रदेश की सीमा के साथ-साथ है और जलगाँव जिले का मुख्य अभयारण्य है। यहाँ चीता, चीतल, जंगली सूअर, सांभर और नीलगाय मिलते हैं। यहाँ घूमने के लिए नवंबर से मई तक का समय अच्छा रहता है।

601. रायगढ—ऐतिहासिक महत्त्व रायगढ़ में चौदहवीं शताब्दी का एक किला है। शिवाजी ने इस पर 1656 में कब्जा करने के बाद इसे लगभग दुबारा बनवाया था। उसने इसे अपनी राजधानी भी बनाया। 1674 ई० में उसका राज्याभिषेक यहीं हुआ था। यहाँ "छत्रपति" की पदवी धारण की। उसकी मृत्यु भी 1680 में यहीं हुई। शिवाजी के बाद उसका पुत्र संभाजी रायगढ़ की गद्दी पर बैठा। वह बहुत ऐशपसंद और एक कमजोर शासक था। औरंगजेब के सेनापति मुकर्रब खाँ ने जब उस पर आक्रमण किया, तो वह संगमेश्वर भाग गया। मुकर्रब खाँ ने उसे पकड़कर औरंगजेब के पास भेज दिया, जहाँ मार्च, 1689 में उसे मृत्यु

दंड दे दिया गया। उधर इतिकाद खाँ ने रायगढ़ पर कब्जा करके संभाजी के पुत्र साहू को पकड़ लिया। शिवाजी की दूसरी पत्नी का पुत्र राजाराम योगी के वेश में रायगढ़ से बच निकला और उसने कर्नाटक में जिंजी के किले में शरण ली। साहू मुगलों की कैद से 1707 में ही मुक्त हो पाया। राजाराम और उसकी पत्नी ताराबाई के नेतृत्व में मराठों ने 1701 ई० में इसे पुनः प्राप्त कर लिया।

इस किले में शिवाजी की गद्दी और उनका समाधि स्थल अब भी देखे जा सकते हैं। रायगढ़ में कुछ मनुष्य एक बेड़े पर लाठियों से आक्रमण करते हुए दिखाए गए हैं। यह दिग्दर्शन नव पाषाण युग का है।

602. लोनावला यह एक पहाड़ी स्थान है, जो मुंबई-पुणे रेल मार्ग पर मुंबई से 110 किमी और पूना से 70 किमी दूर भोर घाट पर है। यह खंड़ाला से केवल पाँच किमी दूर है। अतः इन दोनों स्थानों का कार्यक्रम एक साथ बनाया जा सकता है।

पर्यटन स्थल यहाँ भ्रमण के लिए टाइगर्स लीप प्वाइंट, लवर्स प्वांइट, बलबन बाँध तथा लोनावला झील मुख्य हैं।

पुरातात्विक महत्त्व लोनावला से केवल 10 किमी दूर कार्ले की चैत्य गुफाएँ हैं, जो 80 ई०पू० में बनाई गई थीं। इन गुफाओं में बौद्ध दर्शन का प्रभाव परिलक्षित होता है। लोनावला से तीन किमी दूर भाजा गुफाएँ हैं, जो 200 ई०पू० में बनाई गई थीं। कुल मिलाकर ये 18 गुफाएँ हैं, जो अलग-अलग शैलियों में बनाई गई हैं। दक्षिण की ओर 14 स्तूप बने हैं, जिनमें से पाँच अंदर की ओर तथा 9 बाहर की ओर हैं। लोनावला के दक्षिण-पूर्व में पाँच किमी दूर बीडसा में प्रथम शताब्दी की गुफाएँ भी देखी जा सकती हैं, जिनके लिए खंडाला तथा लोनावला से टैक्सियाँ व आटो रिक्शे मिल जाते हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ लोनावला-खंडाला पहुँचने के लिए मुंबई एवं पुणे से रेल सेवाओं के अतिरिक्त ऐमटीडीसी की बसें थोड़ी-थोड़ी देर में मिलती रहती हैं। इनके अतिरिक्त टैक्सियाँ भी उपलब्ध रहती हैं। मुंबई में बसें दादर से मिलती हैं। लोनावला में ठहरने के लिए कई होटल हैं। यहाँ साल में किसी भी समय जाया जा सकता है।

603. वत्सगुल्म यह स्थान अकोला जिले में है।

ऐतिहासिक महत्त्व वाकातक वंश के राजा प्रवरसेन प्रथम (280-340) के पुत्र

सर्वसेन ने यहाँ अपने वंश के एक अलग राज्य की नींव डाली और वत्सगुल्म को अपनी राजधानी बनाया। उसके बाद विंध्यसेन, प्रवरसेन द्वितीय, देवसेन तथा हरिसेन (400-515) ने शासन किया। उसके बाद इस वंश का पतन होना आरंभ हो गया। सोमवंशियों ने उनके छत्तीसगढ़ क्षेत्र पर, कदम्बों ने दक्षिणी महाराष्ट्र पर, कलचूरियों ने उत्तरी महाराष्ट्र पर और यशोधर्मा ने मालवा पर अधिकार कर लिया। 550 ई० के आस-पास बादामी के चालुक्यों ने वाकातक वंश को पूर्णतः समाप्त कर दिया।

604. वैगींगेरा—ऐतिहासिक महत्त्व यह बराद क्षेत्र की राजधानी थी। यह शिवाजी द्वारा विजित किलों में से एक था। 1705 में जब औरंगजेब ने इस किले पर आक्रमण किया, तो इसका मुखिया पिदिया नायक इसके सारे निवासियों, औरतों और बच्चों को यहाँ से ले जाते समय इसकी सारी चीजों को आग लगा गया। इस प्रकार इसे जीतने के बावजूद औरंगजेब ने यहाँ कुछ नहीं पाया। यह उसकी अंतिम सैनिक विजय थी।

605. संगमेश्वर—ऐतिहासिक महत्त्व यह स्थान पश्चिमी तट पर है। महमूद गावाँ ने संगमेश्वर के उन सरदारों का दमन किया था, जो व्यापारिक जहाजों को लूटते थे। 1471 में उसने संगमेश्वर को अपनी अधीनता स्वीकार करने के लिए विवश किया। यहाँ के राजा ने अपनी पुत्री का विवाह बहमनी शासक अलाउद्दीन द्वितीय के साथ किया था, परंतु अलाउद्दीन की मुस्लिम पत्नी मल्लिका-ए-जहाँ ने इस विवाह को पसंद नही किया। उसके अनुरोध पर उसके पिता नासीर खाँ, जो उस समय खानदेश का शासक था, ने बरार पर आक्रमण कर दिया, परंतु उसे दौलताबाद के सूबेदार मलिक-उल-तुज्जर खलाफ हसन ने हरा दिया। सन् 1689 में जब औरंगजेब की सेना ने रायगढ़ पर धावा बोला, तो वहाँ का ऐशपसंद शासक संभाजी (शिवाजी का पुत्र) भागकर संगमेश्वर आ गया था, परंतु मुकर्रब खाँ उसे संगमेश्वर से पकड़कर औरंगजेब के पास ले गया, जहाँ उसे मृत्युदंड दे दिया गया।

606. सतारा—ऐतिहासिक महत्त्व यह शहर मराठा शक्ति का प्रमुख केंद्र रहा है। यहाँ महाराष्ट्र के उत्तरी भाग के मराठा शासक की गद्दी थी। अन्य मराठा शासकों के अतिरिक्त यह 1700 से नवंबर, 1707 तक शिवाजी द्वितीय के अधीन रहा। 1698 ई० में औरंगजेब की सेना द्वारा जिंजी के किले का घेरा डालने के बाद राजाराम ने सतारा में ही शरण ली थी। औरंगजेब ने 1699 ई० तक सतारा का घेरा डाले रखा, परंतु वह यहाँ से सिंहगढ़ चला गया।

औरंगजेब इस पर कब्जा मार्च, 1707 में राजाराम की मृत्यु के बाद अप्रैल, 1707 में ही कर सका था। राजाराम की वीरांगना पत्नी ताराबाई ने कुछ ही दिनों बाद इसे मुगलों से मुक्त करा लिया। इसी दौरान औरंगजेब ने साहू को छोड़ दिया तथा नवंबर, 1707 में ताराबाई और साहू में खेड नामक जगह पर संघर्ष हुआ, जिसमें साहू की विजय हुई। ताराबाई कोल्हापुर भाग गई। साहू ने सतारा पर कब्जा करके इसे अपनी राजधानी बना लिया। परंतु मुगल दरबार में 1689 से 1707 तक रहने के कारण साहू विलासप्रिय हो गया था। उसे प्रशासन और युद्ध का भी कोई ज्ञान न था। इसलिए राज्य का सारा काम पेशवाओं के हाथों में चला गया। इससे राज्य शक्ति भी पेशवा के हाथ में केंद्रित हो गई। धीरे-धीरे पेशवा का पद पुश्तैनी बन गया, जिसमें कोंकण के ब्राह्मण विश्वनाथ का पुत्र बालाजी, जो बालाजी विश्वनाथ कहलाया और जो साहू का पेशवा था, ने मुख्य भूमिका निभाई। बालाजी विश्वनाथ ने दिल्ली के सैयद भाइयों से 1717 में दक्षिण से चौथ और सरदेशमुखी वसूल करने का अधिकार ले लिया। उसने कृषि राजस्व पर भी अकबर तथा शाहजहाँ की तरह नियंत्रण रखा। अयोग्य होने के कारण धीरे-धीरे साहू कमजोर हो गया। बालाजी विश्वनाथ राजा की तरह शक्तिशाली हो गया। 1720 में बालाजी विश्वनाथ की मृत्यु हो गई। उसके बाद उसका बेटा बाजीराव प्रथम (1720-40) पेशवा बना। वह भी एक शक्तिशाली पेशवा था। उसने 1724 में मालवा को जीत लिया और 1728 में निजाम से चौथ की बकाया राशि वसूल की। 1731 में उसने गुजरात से चौथ और सरदेशमुखी वसूल की, 1732 में मालवा को अपने राज्य में मिलाया और बुंदेलखंड तथा बरार पर अधिकार किया। 1737 में उसने एक बड़ी सेना लेकर दिल्ली पर अधिकार कर लिया। वह वहाँ तीन दिन तक रहा, जिसके बाद वह रेवाड़ी की ओर चला गया। मुगल बादशाह ने भयभीत होकर हैदराबाद के निजाम से सहायता माँगी, परंतु बाजीराव प्रथम ने 1738 में निजाम को भी भोपाल के निकट हरा दिया। निजाम ने संधि करके उसे मालवा तथा नर्मदा और चंबल के बीच के क्षेत्र सौंप दिए। इसके अतिरिक्त दिल्ली के सम्राट ने भी उसे 50 लाख रु. हर्जाना दिया। 1739 में बाजीराव ने पुर्तगालियों से भसीन छीन लिया। अपने जीवन के अंतिम भाग में उसने गायकवाड़, शिंदे, भोंसले, होलकर आदि मराठा सरदारों को मुगल प्रांत बाँट दिए। आगे चलकर ये सरदार बहुत शक्तिशाली हो गए और इन्होंने अपने-अपने स्वतंत्र राज्यों की स्थापना कर ली। अवसर मिलने पर ये पेशवा की शक्तियों में भी दखलंदाजी करते थे। 1740 में बाजीराव प्रथम की मृत्यु के बाद उसका बेटा बालाजी बाजीराव (1740-61) पेशवा बना। बालाजी बाजीराव के समय मराठा राज्य अपनी शक्ति के शिखर पर था। उसके सेनानायक राघोजी

भौंसले तथा भास्कर पंडित ने उड़ीसा में लूट-पाट की और बंगाल के सूबेदार अलीवर्दी खाँ की राजधानी मुर्शिदाबाद पर आक्रमण करके बंगाल के पश्चिमी क्षेत्र पर कब्जा कर लिया। अंत में पेशवा को 12 लाख रु. वार्षिक चौथ देनी स्वीकार करने पर अलीवर्दी खाँ को अपना राज्य वापस मिला। उसने अर्काट के नवाब दोस्त अली के दामाद चंदा साहिब को भी 1744 से 1747 तक सतारा में कैद करके रखा। 1748 में साहू की मृत्यु हो गई। बालाजी बाजीराव ने उससे एक लिखित आज्ञा प्राप्त कर ली थी, जिसके द्वारा उसे ताराबाई के पोते तथा उसके वंशजों के नाम से मराठा साम्राज्य का शासन करने का अधिकार मिल गया। अब पेशवा, जिसकी गद्दी पूना में थी, ही महाराष्ट्र का असली शासक हो गया और पूना मराठा संघ का केंद्र बन गया, हालाँकि मराठा महाराजा की गद्दी सतारा में ही थी। मराठा संघ में पहले बताए गए होलकर आदि कई सरदार थे। पेशवा उनका नेता माना गया। साहू के बाद रामराजा सतारा की गद्दी पर बैठा। ताराबाई ने उसे नवंबर, 1750 में पकड़कर 1763 में अपनी मृत्यु तक बंदी बनाए रखा। उसके बाद उसका दत्तक पुत्र साहू द्वितीय (1777-1808), साहू द्वितीय का पुत्र प्रताप सिंह (1808-39) तथा प्रताप सिंह का पुत्र शाहजी अप्पा साहिब (1839-48) गद्दी पर बैठे। कहने को ये सभी शासक अपने को छत्रपति कहते थे, परंतु इनकी शक्ति पेशवाओं ने छीन ली थी। उदाहरणार्थ बालाजी विश्वनाथ ने साहू को, बालाजी बाजीराव ने रामराजा को, नाना फड़नवीस ने साहू द्वितीय को तथा बाजीराव ने प्रतापसिंह को अपने नियंत्रण में रखा था। प्रतापसिंह को तो अपने ही पेशवा से रक्षा के लिए लार्ड हेस्टिंग्ज से सहायता लेनी पड़ी थी और उसकी सहायता के बाद ही वह 1818 में आधुनिक सतारा जितने क्षेत्र का राजा पुनः बन पाया था। जब उसने अंग्रेजों का कहना मानना बंद कर दिया, तो उन्होंने उसे 1839 में गद्दी से उतारकर उसके भाई शाहजी अप्पा साहिब को गद्दी पर बैठा दिया। अप्पा साहिब के निःसंतान मर जाने के बाद डलहौजी ने विलय की नीति लागू करके सतारा को 5 अप्रैल, 1848 को ब्रिटिश शासन में मिला लिया।

607. सालबाई सालबाई 1782 ई० में प्रथम मराठा युद्ध की समाप्ति के बाद रघुनाथ राव और अंग्रेजों के मध्य हुई संधि के कारण जाना जाता है, जिसके अनुसार रघुनाथराव को पेशवाई का दावा छोड़ना पड़ा और हैदर अली की सहायता करने से अपना हाथ खींचना पड़ा। अंग्रेजों ने माधवराव द्वितीय को पेशवा के रूप में मान्यता दे दी। रघुनाथराव को पेंशन दे दी गई।

608. सालसेट यह स्थान समुद्री तट पर है। बाजीराव प्रथम के भाई

चिमनाजी अप्पा ने इसे पुर्तगालियों से 1737-39 ई० में छीन लिया था। अंग्रेजों ने इसे 1774 और पुनः 1782 में जीता।

609. सिंहगढ़ यह शिवाजी द्वारा विजित किलों में से एक था। यह बहुत मजबूत किला था। 1689 में रायगढ़ पर औरंगजेब का कब्जा होने के बाद राजाराम रायगढ़ से जिंजी, वहाँ से 1698 में सतारा और सतारा से 1699 में सिंहगढ़ आ गया था।

610. सोपड़ा प्राचीन काल में यह एक बंदरगाह थी। 119 से 124 तक यह शहर मिन्नगर के शक् क्षत्रप नहपान के अधीन था। यहाँ अशोक का एक लेख भी पाया गया है।

ललित महल, मैसूर

***

मिजोरम

ऐतिहासिक विवरण

मिजोरम का क्षेत्र 1891 में अंग्रेजों के कब्जे में आया। परंतु उसके बाद भी 1898 तक लुसाई पहाड़ियाँ असम के अधीन और दक्षिणी क्षेत्र बंगाल के अधीन रहा। 1898 में इन्हें मिलाकर लुशाई हिल्ज नाम से एक जिला बना दिया गया। देश की स्वतंत्रता के बाद 1972 में यह क्षेत्र मिजोरम नाम से संघ शासित क्षेत्र और फरवरी, 1987 में पूर्ण राज्य बन गया।

'मिजो' से तात्पर्य पहाड़ियों पर रहने वाले लोग हैं। चूँकि यहाँ पहाड़ियाँ ही पहाड़ियाँ हैं (जिनकी ऊँचाई 2210 मी तक है), अतः इस क्षेत्र को मिजोरम कहा गया। मिजोरम का क्षेत्रफल 21081 वर्ग किमी है। इसकी जनसंख्या का घनत्व 33 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी है। क्षेत्र में इसाई प्रचारकों का प्रचार जोरों से होने के कारण यहाँ की अधिकांश जनता इसाई बन गई। साथ ही यहाँ शिक्षा का प्रसार भी हुआ। राज्य की साक्षरता दर 88% है। राज्य में तीन जिले हैं, जिनमें मिजो और अंग्रेजी भाषाएँ बोली जाती हैं। यहाँ के अधिकांश लोग मंगोलियाई मूल के हैं।

स्केल में नहीं

मिजोरम में बाँस और बेंत काफी मात्रा में होते हैं, जिनसे लोग टोकरियाँ, मेज, कुर्सियाँ,
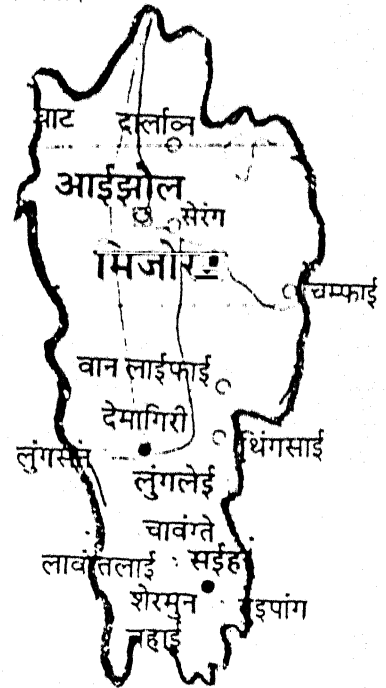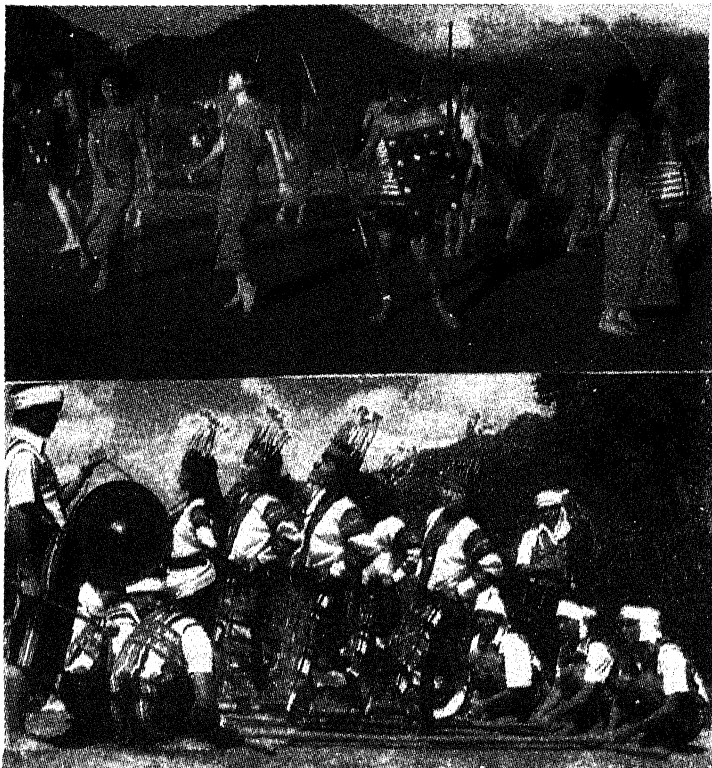
सरलाम्खाई नृत्य (ऊपर) और चेराव (बाँस) नृत्य (नीचे)

सोफे, दुमंजिले घर, छाते, टोपियाँ, हुक्के, अलमारी, चारपाई, चारदीवारी आदि अनेक वस्तुएँ बनाते हैं। औरतें दार-थी (काँच के मोतियों की मालाएँ), दिथस (अंबर के मोतियों की मालाएँ) और थी-केन (छोटे मोतियों की मालाएँ) बहुत पहनती हैं।

उत्सव

मिजो लोगों का मुख्य धंधा कृषि है। इसलिए उनके अधिकांश उत्सव झुम खेती से संबंधित होते हैं। मिजो में कुत का अर्थ उत्सव होता है। यहाँ तीन मुख्य कुत मनाए जाते हैं – चापचार कुत, मिम कुत और पावल कुत। इन उत्सवों के अवसर पर यहाँ की औरतें बाँस का बना एक छल्लानुमा ताज पहनती हैं, जिस पर तोते के पंखों और रंग-बिरंगे भुनगों की सजावट की जाती है। साजों में यहाँ टिंग-टिंग (एक विशेष तरह का इकतारा), बेजबंग, रिउदेम, गिटार आदि बजाए

जाते हैं।

नृत्य

चेराव (बाँस नृत्य) प्रदेश का प्रमुख नृत्य है। इसके अतिरिक्त खुल्लाम्, चीह लाम और सरलाम्खाई नृत्य भी किए जाते हैं।

पर्यटन संबंधी औपचारिकाएँ

मिजोरम जाने के लिए भारतीय पर्यटकों को निम्नलिखित जगहों पर स्थित मिजोरम हाउस से इनर लाइन परमिट लेना होता है :

1) सर्कुलर रोड, चाणक्यपुरी, नई दिल्ली-21
2) 24, पुराना बैलीगंज रोड, कलकत्ता-19
3) क्रिश्चियन बस्ती, जी. ऐस. रोड, गुवाहाटी
4) त्रिपुरा कैशल रोड, शिलांगज-3
5) सोनाई रोड, सिलचर-5

विदेशी पर्यटकों के चार अथवा इससे अधिक सदस्यों के ग्रुप को प्रतिबंधित क्षेत्र परमिट रेजीडेंट कमिश्नर, मिजोरम हाउस, सर्कुलर रोड, चाणक्यपुरी, नई दिल्ली से और इससे कम व्यक्तियों के समूह को गृह मंत्रालय, नई दिल्ली से लेना होता है।

611. आईजोल आईजोल 4000 फुट की ऊँचाई पर स्थित है। इसके पूर्व में तुईरियल नदी की घाटी और पश्चिम में त्लोंग नदी है। इस क्षेत्र की जलवायु अत्यंत स्वास्थ्यवर्धक है।

पर्यटन स्थल आईजोल में दर्शनीय स्थल मैकडोनल पहाड़ी पर संग्रहालय, बीठलहिम वेंग्थलाँग में छोटा वानस्पतिक उद्यान, आईजोल के संपूर्ण दृश्य के लिए दुर्तलांग पहाड़ियाँ, जरकौत में खादी एवं ग्रामोद्योग ऐंपोरियम और जोनुनसांग हथकरघा शोरूम तथा ट्रेजरी स्क्वेयर में ऐमएऐचसीओ का शोरूम है।

आईजोल से 15 किमी दूर बंग पिकनिक स्थल, 85 किमी दूर तामडिल झील, 137 किमी दूर वांतोंग झरने, 192 किमी दूर बर्मा की सीमा पर चंपाई तथा 235 किमी दूर लुंगलेई हिल स्टेशन है।

उपलब्ध सुविधाएँ आईजोल गुवाहाटी व कलकत्ता से वायुदूत सेवा से जुड़ा हुआ है। गुवाहाटी से यहाँ के लिए बसें भी मिलती हैं। ठहरने के लिए यहाँ चालतांग में टूरिस्ट लॉज, लुआंगमुआल में टूरिस्ट होम, स्टेट गेस्ट हाउस तथा कई होटल हैं। यहाँ का तापमान गर्मियों में 30° से और 20° से के मध्य तथा
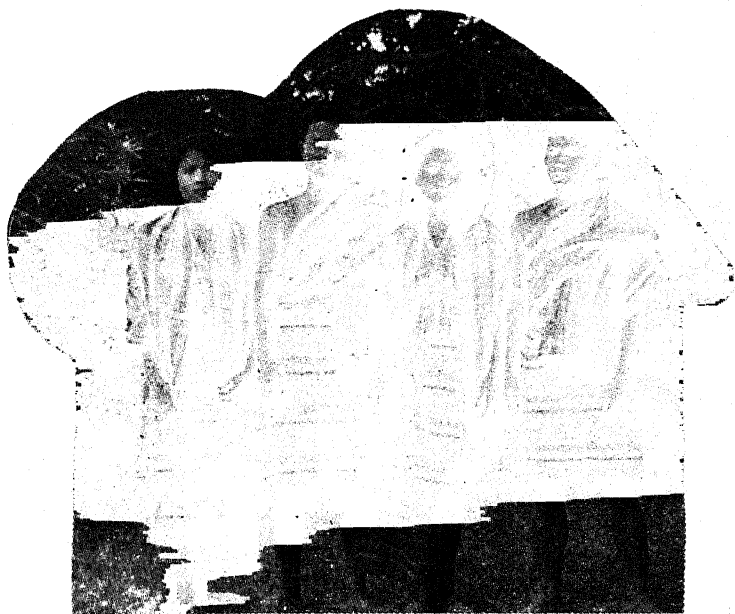
पारंपरिक वेशभूषा में मिजोवासी

सर्दियों में 21°से तथा 11°से के मध्य रहता है। सितंबर से मार्च तक भारी वर्षा होने के कारण अक्तूबर से अप्रैल तक का ही समय यहाँ भ्रमण के लिए उपयुक्त रहता है।

राज्य के पर्यटन कार्यालय ने जोटलांग, लुंगलेई, ह्नाहथियाल में पर्यटक विश्राम गृह और जोबॉक के निकट एल्पाइन पिकनिक हट बनाई है।

612. डारपा राष्ट्रीय पार्क यह पार्क मिजो पहाड़ियों के मध्य बांग्ला देश और त्रिपुरा की सीमा के बीच स्थित है। इसकी स्थापना 1976 में की गई थी। यह मिजोरम का एकमात्र राष्ट्रीय पार्क है। यहाँ पर हाथी, बाघ, गिब्बन, तेंदुए, हुलाक, उड़ने वाली गिलहरी, कलंगीवाला लंगूर आदि पशु और धनेश पक्षी के अलावा और भी कई प्रकार के पक्षी देखने को मिलते हैं। यहाँ से निकटतम शहर फेलगी दस किमी की दूरी पर है। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन सिलचर (290 किमी) और निकटतम हवाई अड्डा आईजोल (90 किमी) है।

***

मेघालय

विवरण

मेघालय की उत्पत्ति प्रारम्भ में असम राज्य से 2 अप्रैल, 1970 को एक स्वायत शासी क्षेत्र के रूप में हुई थी। 21 जनवरी, 1972 को इसे एक स्वतंत्र राज्य बना दिया गया।

मेघालय का क्षेत्रफल 22429 वर्ग किमी है। राज्य की जनसंख्या का घनत्व 790 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी और इसकी साक्षरता दर लगभग 49% है। राज्य में सात जिले हैं, जिनमें खासी, गारो और अंग्रेजी भाषाएँ बोली जाती हैं।

मेघालय प्रकृति की विविधताओं का राज्य है। मेघालय में सुंदर घाटियाँ, आकर्षक झरने तथा हरियाले जंगल, सभी कुछ हैं। राज्य में रबड़, कोयला, चूना पत्थर, सीलमनाइट पत्थर, यूरेनियम, अनानास, संतरा, केला, काजू, सुपारी, नारियल आदि का उत्पादन होता है। राज्य के प्राकृतिक वातावरण को देखकर इसे पूर्व का स्काटलैंड कहा जाता है। राज्य में समाज अधिकांशतः मातृ-प्रधान है। लोग अपने अतिथि का सत्कार पान से करते हैं।

उत्सव एवं नृत्य

राज्य में मुख्य रूप से खासी, गारो और जयंतिया जन-जाति के लोग रहते हैं। खासी जन-जाति का मुख्य त्योहार "का पांबलांग नोंगक्रेम" है, जो शिलांग से
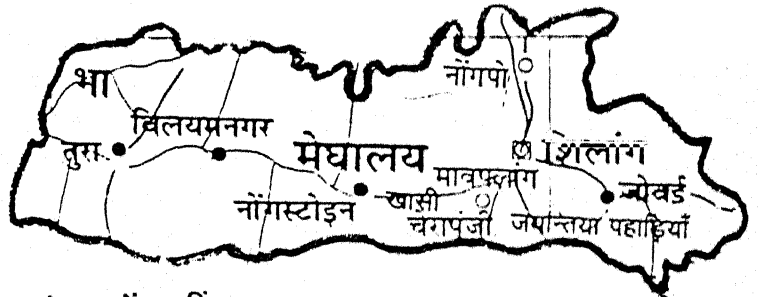
स्केल में नहीं

11 किमी दूर स्मिट गाँव में मनाया जाता है। शाद सुखमिनसीम इस जन-जाति का एक अन्य त्योहर है, जिसके दौरान पुरुष तथा महिलाएँ साज के साथ रंग-बिरंगा नृत्य करते हैं। जयंतिया जन-जाति का प्रमुख त्योहार बेहडींगखाम है, जो जोवाई में मनाया जाता है। यह भी एक रंग-बिरंगा त्योहार है। इसमें भी पुरुष रंग-बिरंगा नृत्य करते हैं। गारो जन-जाति का मुख्य त्योहार वांग्ला है, जो सूर्यदेव को समर्पित है। यह त्योहार रुगुला नामक समारोह में खुले में मनाया जाता है। मेघालय की जयंतिया जन-जाति के लोग ओहो नृत्य करते हैं। इसके अतिरिक्त स्मिट गाँव में खासी जन-जाति के लोग पतझड़ ऋतु में नोंगक्रेम नृत्य करते हैं। गारो जन-जाति के लोग वांग्ला नृत्य करते हैं।

मेघालय के नृतक

613. चेरापुँजी चेरापुँजी शिलांग से लगभग 56 किमी दूर छोटा सा गाँव है। 1864 तक यह अंग्रेजों की राजधानी रही। दर्शनीय स्थलों की दृष्टि से यहाँ कुछ विशेष नहीं है, परंतु यह स्थान विश्व में सबसे: अधिक वर्षा (लगभग 500 ईंच प्रति वर्ष) के कारण प्रसिद्ध है। इस स्थान को देखने के लिए शिलांग से ऐमटीडीसी की बसें प्रतिदिन जाती हैं। रास्ते में एक बड़ा झरना, एक अन्य लंबा-चौड़ा झरना तथा पहाड़ियों के कटाव से प्राकृतिक रूप से बना सैंकड़ों फुट ऊँचा शिवलिंग दर्शनीय है।

यहाँ घूमने का उपयुक्त समय अक्तूबर-नवंबर तथा मार्च-अप्रैल का होता है। उस समय यहाँ वर्षा, सर्दी, गर्मी सभी कम होती हैं। चेरापुँजी घूमकर उसी दिन शिलांग वापस लौटा जा सकता है। फिर भी यहाँ ठहरने के लिए एक डाक बंगला है, जिसकी बुकिंग उपायुक्त, जिला खासी हिल, शिलांग द्वारा की जाती है।

614. नौकरेक रिज राष्ट्रीय पार्क यह पार्क गारो पहाड़ के अंचल में स्थित है। इस क्षेत्र को बाफे स्फेयर रिजर्व वन के रूप में सुरक्षित किया गया

है। यहाँ पर सुनहरी बिल्ली, तेंदुआ, बाघ, लाल भालू, सेरॉंव और नाना प्रकार के पक्षी मिलते हैं। यहाँ से निकटतम शहर शिलांग है।

मेघालय की गारो जन-जाति का वांग्ला नृत्य

615.नौगरवेल्लेम जीव विहार इस विहार की स्थापना 1981 में मेघालय के पूर्वी भाग में और शिलांग के उत्तर में की गई। यहाँ पर रंग-बिरंगे चीते, कलंगीवाला लंगूर, काले सेरॉंव, सुनहरी बिल्ली और अनेक प्रकार के पक्षी देखने को मिलते हैं। यहाँ से निकटतम शहर गुवाहाटी मात्र 65 किमी की दूरी पर है।

616. बालफाक्रम राष्ट्रीय पार्क यह पार्क मेघालय के दक्षिण में बांग्ला देश की सीमा के पास स्थित है। यहाँ पर जंगली भैंसे, गिब्बन, तेंदुए, हाथी, लारिस, भालू, कलंगीवाला लंगूर, अजगर तथा साँप मिलते हैं। अक्तूबर से अप्रैल के महीने यहाँ घूमने के लिए सुहावने रहते हैं।

617. शिलांग सन् 1864 में अंग्रेजों ने अपनी राजधानी चेरापुँजी से शिलांग बदल ली थी। 1874 में शिलांग को असम की राजधानी भी बना दिया गया था। अब शिलांग आधुनिक मेघालय की राजधानी है। यह शहर खासी की पहाड़ियों में 5000 फुट की ऊँचाई पर होने के कारण कुछ ठंडा रहता है, फिर भी यहाँ की जलवायु बहुत सुहावनी रहती है। शहर के आस-पास के इलाकों में अनानास, केले, नारियल और बाँस के पेड़ों की अधिकता है। यहाँ के पहाड़ों में सीढ़ीदार खेती होती है। विश्व में सबसे अधिक वर्षा वाला स्थान चेरापुँजी यहाँ से निकट होने के कारण यहाँ भी वर्षा काफी मात्रा में होती है।

पर्यटन स्थल शिलांग के दर्शनीय स्थलों में शिलांग पीक सर्वाधिक प्रमुख है। इस पीक से पूरे शहर का दृश्य देखा जा सकता है। अन्य स्थानों में लेडी हैदरी पार्क, राजकीय संग्रहालय, वाड्‌र्ज लेक, बौद्ध मठ, आर्किड लेक रिसोर्ट्स, उमीयम

लेक, चिड़ियाघर, गोल्फ कोर्स तथा बीशप, ब्रीडन स्वीट, ऐलीफेंटा, शिलांग एवं क्रिनोलिन फाल्स दर्शनीय हैं।

शिलांग के आस-पास के दर्शनीय स्थलों में माइरांग (40 किमी), चेरापुँजी (56 किमी), मासिनराम् प्राकृतिक शिवलिंग (56 किमी), थाडियासकीन झील (56 किमी), जाक्रेम (64 किमी), जयंतिया पहाड़ियाँ (64 किमी), नार्तियांग के अवशेष (65 किमी) और दावकी सीमा नगर (96 किमी) और जल-प्रपात तथा सिंदाई प्रमुख हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ यह शहर पहाड़ियों पर ऊँची-नीची जगह पर बसा हुआ है, जिस कारण यहाँ स्थानीय भ्रमण का मुख्य साधन केवल टैक्सियाँ हैं। ये टैक्सियाँ कई-कई सवारियाँ बैठाती हैं और काफी सस्ती हैं। इनके ड्राइवर भी आम तौर पर काफी ईमानदार होते हैं। शहर से निकटतम रेलवे स्टेशन तथा हवाई अड्डा गुवाहाटी में हैं, जो क्रमशः 104 किमी और 124 किमी हैं। गुवाहाटी रेलवे स्टेशन से यहाँ बस द्वारा साढ़े तीन घंटे में पहुँचा जा सकता है। यहाँ रेलवे की आउट एजेंसी भी है।

यहाँ सर्दियों में काफी सर्दी पड़ती है। गर्मियों में अधिकतम तापमान 23°से तथा न्यूनतम तापमान 15°से होता है। पुलिस बाजार में भारत तथा मेघालय सरकार के पर्यटन सूचना केंद्र और मेघालय संघ शासित क्षेत्र का पर्यटन कार्यालय है। ऐमटीडीसी का कार्यालय पोलो रोड पर है। ठहरने के लिए यहाँ अनेक होटल हैं।

618. सिजू जीव विहार यह विहार 1979 में स्थापित किया गया था। यह मेघालय के दक्षिण में बांग्ला देश की सीमा के पास स्थित है। यहाँ पर जंगली भैंसे, बाघ, तेंदुए, सेराँव, गिब्बन, गोह, कलंगीवाला लंगूर, हाथी और लारेस अधिक संख्या में हैं।

●●●

राजस्थान

ऐतिहासिक महत्त्व

राजस्थान का इतिहास लगभग 5000 वर्ष पुराना है। यह सिंधु घाटी सभ्यता के साथ-साथ अहाड़ संस्कृति का केंद्र भी रहा है। सातवीं शताब्दी से बारहवीं शताब्दी तक यहाँ चौहानों और उसके बाद अन्य राजपूतों, मुगलों आदि का शासन रहा। 1818 में यहाँ की मारवाड़, जयपुर, बूँदी, कोटा, भरतपुर, अलवर आदि रियासतों ने वेल्जली की सहायक संधि को स्वीकार कर लिया। 1948 में यहाँ के कुछ राज्यों को मिलाकर मत्स्य संघ बनाया गया। 1949 तक इस संघ में बीकानेर, जयपुर, जोधपुर, जैसलमेर आदि बड़ी-बड़ी रियासतें भी मिल गईं। 1958 में इसमें अजमेर, आबू रोड तालुका और सुनेलतापा के मिल जाने के बाद वर्तमान राजस्थान राज्य की उत्पत्ति हुई।

राजस्थान का क्षेत्रफल 342239 वर्ग किमी है। राज्य की जनसंख्या का घनत्व 149 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी और साक्षरता दर 38.5% है। राज्य में 31 जिले हैं, जिनमें राजस्थानी तथा हिंदी भाषाएँ बोली जाती हैं।

उत्सव

राजस्थान में संक्रांति, होली, दीवाली, विजय दशमी, मुहर्रम, क्रिस्मस आदि त्योहारों के अलावा अनेक मेले भी लगते हैं। इनमें तीज, गणगौर (जयपुर) के

राजस्थान का एक लोक नृत्य

मेले, अजमेर शरीफ और गालियाकोट के उर्स, बिनेश्वर (डूंगरपुर) का कुंभ मेला, सवाई माधोपुर में श्री महावीर जी मंदिर का महावीर मेला, रामदेवरा (जैसलमेर), जंभेश्वर जी मेला (मुकाम-बीकानेर), कार्तिक पूर्णिमा, पुष्कर का पशु मेला तथा सिकार का श्यामजी मेला प्रमुख हैं।

राजस्थान का एक नृत्य

नृत्य

राजस्थान में भवाई, छड़ी, गणगौर घूमर, गुगा आदि कई नृत्य प्रचलित हैं। छड़ी नृत्य में औरतें गेरुए वस्त्र पहनकर तथा सिर पर टोकणी रखकर नृत्य करती हैं। स्त्री और पुरुष गरासिया नृत्य करते हैं। गणगौर नृत्य के बारे में यह कथा प्रचलित है। गणगौर उदयपुर के राणा वीरमदास की सुंदर कन्या थी। उससे अनेक राजा ब्याह करना चाहते थे, जबकि राणा उसका विवाह बूँदी नरेश ईसर सिंह से करना चाहते थे। अंत में एक रात ईसर उसे भगाकर ले गया। पता लगने पर अन्य राजाओं ने उसका पीछा किया, परंतु रास्ते में गणगौर और ईसर की चंबल नदी में डूब जाने से मृत्यु हो गई। तभी से राजस्थान की महिलाएँ गणगौर को सती मानकर गणगौर नृत्य करती चली आ रही हैं। इस नृत्य के लिए होली के अगले दिन होली की राख से गणगौर तथा ईसर की मूर्तियाँ बनाई जाती हैं। लड़कियाँ सुबह तथा शाम दोनों समय नृत्य करती है। नृत्य में गाँव की सबसे नई बहू को गणगौर तथा किसी लड़की को उसका पति ईसर बनाया जाता है। वे अपने सिरों पर क्रमशः गणगौर तथा ईसर की मूर्तियाँ रखकर गाँव के सात चक्कर काटती हैं। नृत्य के गीतों में नववधुओं के लिए अमर सुहाग की कामना की जाती है।

619. अजमेर—ऐतिहासिक महत्त्व सातवीं शताब्दी में यहाँ प्रतिहारों का शासन था। यहाँ के निकट स्थित शाकंभरी (सांभर) के चौहान उनके सामंत थे। सातवीं शताब्दी में यहाँ चौहान सामंत वासुदेव ने चौहान शासन की नींव डाली। उसके बाद पूर्णतल्ल, जयराज, विग्रहराज प्रथम, चंद्रराज तथा गोपराज प्रतिहारों के सामंत शासक हुए। आठवीं शताब्दी के अंत में इस वंश के

श्री पद्मनाभस्वामी का मन्दिर
तिरुवनन्तपुरम
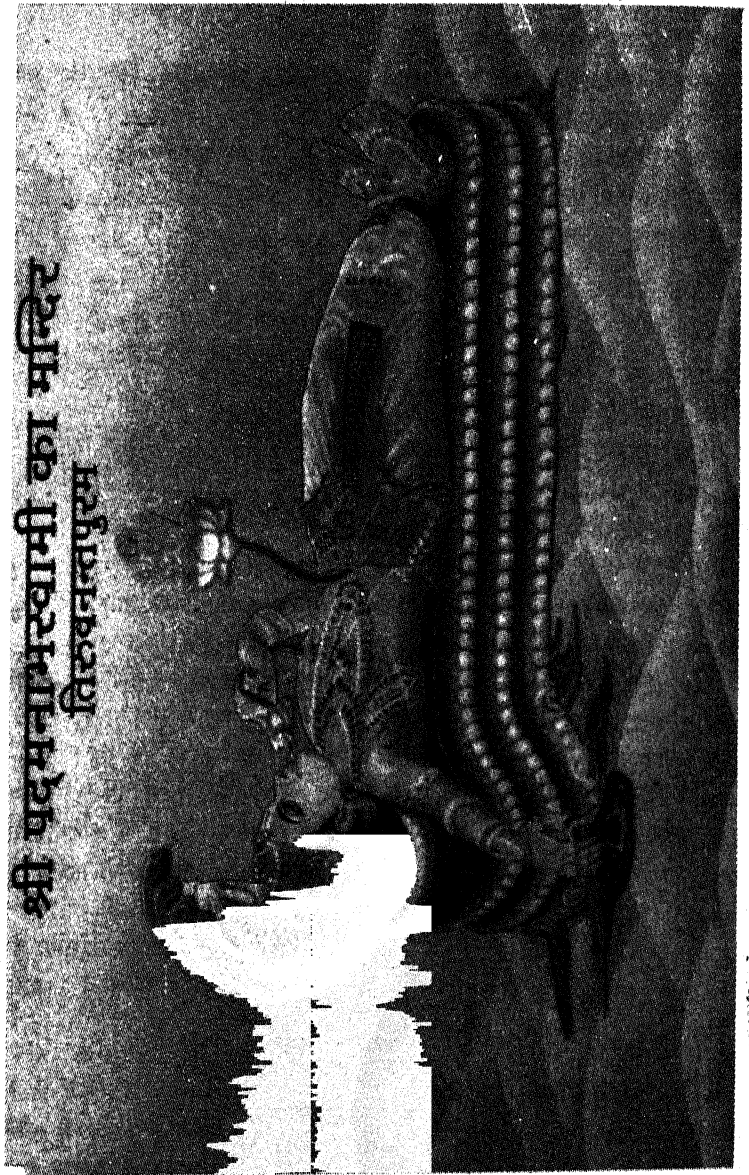
राजा दुर्लभराज ने अपने अधिपति प्रतिहार राजा वत्सराज के साथ गौर पर आक्रमण किया था। उसके पुत्र गोबिंदराज ने नागभट्ट द्वितीय के सामंत के रूप में सिंध के सूबेदार बशर के आक्रमण को रोका था। उसके बाद चंद्रराज द्वितीय तथा गुवक (गोबिंद राज) द्वितीय सामंत हुए। चेदि के कलचूरी राजा कोकल्ल (845ई०) ने गूवक द्वितीय को हराया था। दसवीं शताब्दी के प्रारंभ में प्रतिहारों की शक्ति क्षीण हो जाने पर चौहान सामंत वाक्पतिराज प्रथम स्वतंत्र हो गया। 956 में उसके पुत्र सिंहराज के समय में चौहान बिल्कुल स्वतंत्र थे। सिंहराज ने महाराजाधिराज विरुद धारण किया। 973 में विग्रहराज द्वितीय गद्दी पर बैठा। उसके काल में चालुक्य राजा मूलराज ने उससे शाकंभरी छीनकर उसे अपने राज्य में मिला लिया था। परंतु विग्रहराज द्वितीय ने उसे शीघ्र ही वापस ले लिया। उसने लाट पर भी आक्रमण किया। उसके बाद दुर्लभराज द्वितीय,

गोविंदराज तृतीय, पृथ्वीराज प्रथम और अजयराज शासक हुए। अजयराज का उत्तराधिकारी अर्णोराज, जो 1133 में गद्दी पर बैठा, इस वंश का एक प्रसिद्ध राजा था। उसने महमूद गजनी की सेना को भी अजमेर के निकट पराजित कर दिया था। उसने बुंदेलखंड और दिल्ली के अतिरिक्त पंजाब के भी कुछ हिस्से जीत लिए थे। गुजरात के शासक जयसिंह सिद्धराज ने उससे अपनी पुत्री का विवाह किया था। लेकिन गुजरात के ही एक शासक कुमारपाल ने उसे 1143 में हरा दिया था। बाद में अर्णोराज के पुत्र जगदेव ने ही 1153 में उसकी हत्या कर दी, परंतु उसके छोटे भाई विग्रहराज चतुर्थ बीसलदेव ने उसे उसी वर्ष गद्दी से उतार दिया। उसने गुजरात के शासक कुमारपाल को हराकर अपने पिता का बदला लिया। उसने दिल्ली और हाँसी पर भी अधिकार कर लिया। उसने तुर्कों को भी आगे बढ़ने से रोका। उसके साम्राज्य में पंजाब, राजपूताना तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश के अधिकांश भाग शामिल थे। इसके अतिरिक्त मालवा तथा राजपूताना के अनेक शासकों ने उसका आधिपत्य स्वीकार किया। उसके बाद गांगेय, पृथ्वीराज द्वितीय, सोमेश्वर तथा सोमेश्वर का पुत्र पृथ्वीराज तृतीय (1178-92) यहाँ के शासक हुए। पृथ्वीराज तृतीय इतिहास प्रसद्धि शासक हुआ। उसने 1182 में रेवाड़ी, भिवानी तथा अलवर के कुछ क्षेत्रों से भाड़ानकों को हराकर इन्हें अपने कब्जे में कर लिया। उसने बुंदेलखंड के चंदेल शासक परमार्दी देव को हराया। 1186 में उसने गुजरात के भीम द्वितीय के साथ एक अनिर्णीत युद्ध लड़ा। 1191 में मुहम्मद गौरी उनकी सीमा चौकी भटिंडा पर कब्जा करके वहाँ जियाउद्दीन तुलाकी के नेतृत्व में कुछ सैनिक छोड़कर वापस जाने वाला ही था कि पृथ्वीराज भटिंडा आ पहुँचा। उसने उसे भटिंडा के पास तराई में हराकर उससे अपने जीते हुए प्रदेश वापस ले लिए। पृथ्वीराज ने कन्नौज के गहड़वाल राजा जयचंद की पुत्री संयोगिता का उसके स्वयंवर से अपहरण करके उससे विवाह किया। 1192 में पृथ्वीराज चौहान तथा मुहम्मद गौरी में भटिंडा के पास तराईं में ही फिर युद्ध हुआ, जिसमें पृथ्वीराज की हार हुई। उसे पकड़ लिया गया और मार दिया गया। तराईं की दूसरी लड़ाई के बाद मुहम्मद गौरी ने इसे उसके पुत्र गोबिंद को इस शर्त पर वापस दे दिया था कि वह उसे नियमित रूप से कर देता रहेगा। लेकिन बाद में पृथ्वीराज के भाई हरिराज ने उसे गद्दी से उतार दिया। तुर्कों ने एक बार फिर आक्रमण करके यहाँ चौहान वंश के शासन को समाप्त कर दिया। मुहम्मद गौरी ने अजमेर के विग्रहराज के संस्कृत महाविद्यालय को तोड़कर उसकी जगह एक मस्जिद बनवा दी। इस मस्जिद का नाम उसने अढ़ाई दिन का झोंपड़ा रखा। 1196 में राजपूतों ने गुजरात के चालुक्य राजा भीम की सहायता से अजमेर को वापस लेने का इरादा किया। ऐबक सेना लेकर अजमेर होता हुआ

आगे बढ़ा। परंतु राजपूतों ने उसका इतनी वीरता से सामना किया कि उसे वापस अजमेर में शरण लेनी पड़ी। अजमेर एक-दूसरे के खून के प्यासे राजपूतों के मध्य झगड़े का भी प्रमुख कारण रहा है। यह प्रसिद्ध सूफी संत मुईनुद्दीन चिस्ती का निवास स्थान और दरगाह थी। अकबर ने राजस्थान पर यहीं से नियंत्रण किया। चित्तौड़ पर विजय के बाद अकबर ने 1568 ई० में मुइनुद्दीन चिस्ती की दरगाह की धार्मिक यात्रा की। इंग्लैंड के राजा जेम्ज प्रथम के राजदूत सर थोमस रो ने 1626 में सम्राट जहाँगीर से अजमेर में ही मुलाकात की थी।

पुरातात्विक महत्त्व अकबर ने यहाँ जहाँगीर का किला बनवाया था। यहाँ की आनासागर झील बहुत प्रसिद्ध है। इसका निर्माण राजपूत राजा आनाजी ने बारहवीं शताब्दी में दो पहाड़ियों के मध्य करवाया था। शाहजहाँ ने आनासागर झील पर 1240 फुट लंबा घाट बनवाया था। इस घाट पर एक हमाम के अतिरिक्त सफेद संगमरमर से बनी पाँच बारादरियाँ भी थीं। उसने चिस्ती की दरगाह के गुंबद को भी संगमरमर से मढवाया।

पर्यटन स्थल हजरत ख्वाजा मुईनुद्दीन चिस्ती की दरगाह, आनासागर झील, अढ़ाई दिन का झोंपड़ा, सोनी जी की नसियाँ (1865 में निर्मित), 12 किमी दूर फाय सागर, राजकीय संग्रहालय (1908 में स्थापित), दाहरसेन स्मारक, पृथ्वीराज चौहान स्मारक, तारागढ़ दुर्ग (चौहान राजा अजयपाल द्वारा सातवीं शताब्दी में निर्मित), लवकुश उद्यान, मेयो कालेज, पुष्कर दादाबाड़ी, साईंधाम तथा ज्ञानोदय तीर्थ क्षेत्र इस शहर के अन्य पर्यटन स्थल हैं। अजमेर की सात यात्राएँ मक्का की एक यात्रा के बराबर मानी जाती है।

उपलब्ध सुविधाएँ यह शहर देश के अन्य भागों से रेल व सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा 138 किमी दूर जयपुर में है। पर्यटकों के ठहरने के लिए यहाँ अनेक धर्मशालाएँ और होटल हैं। गर्मियों में यहाँ का अधिकतम तापमान 45°से और सर्दियों में न्यूनतम तापमान 6°से होता है। गर्मियों को छोड़कर यहाँ किसी भी समय भ्रमण के लिए जाया जा सकता है। यहाँ पर्यटन कार्यालय सावित्रि गर्ल्ज कालेज रोड पर खादिम होटल में और रेलवे स्टेशन पर है।

620. अलवर—ऐतिहासिक महत्त्व महाभारत काल में यह मत्स्य प्रदेश की राजधानी थी। 1182 में पृथ्वीराज चौहान ने अलवर के कुछ क्षेत्रों से भाड़ानकों को हराकर उनपर अपना कब्जा कर लिया था। आधुनिक अलवर की स्थापना 1771 ई० में राम प्रताप सिंह जी ने की थी। मुगलों के उदय से पूर्व

स्थापित बाला किला यहाँ पाँच किमी के घेरे में फैला हुआ है और शहर से लगभग 300 मी ऊँचा है। अलवर देश के अन्य भागों से रेल और सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है।

पर्यटन स्थल यहाँ विनय विलास महल संग्रहालय, पुरजन विहार, महाराजा बख्तावर सिंह जी का महल, यशवंत निवास, विजय मंदिर, बूँदी शैली की सूक्ष्म चित्रकारियों का संग्रहालय गुणीजनखाना, सिलिसेढ़ झील तथा सरिस्का चीता अभयारण्य (37 किमी) दर्शनीय हैं। यहाँ पर्यटन कार्यालय पुरजन विहार बाग के सामने नेहरू बाल विहार में है।

621. अहाड़ अहाड़ उदयपुर के तीन किमी पूर्व में है।

पुरातात्विक महत्त्व यह स्थल नव-पाषाण युग का एक केंद्र था। यहाँ की गई खुदाई में उस काल के काले और लाल रंग के मिट्टी के बर्तन पाए गए हैं। इन पर सफेद चित्रकारी है। यह अहाड़ या बनास संस्कृति कहलाती है। इस सभ्यता के मकान कच्ची मिट्टी या पत्थर के बनाए जाते थे। छत बाँस के ऊपर मिट्टी डालकर बनाई जाती थी। खुदाई में कुछ चूल्हे भी मिले हैं। यह सभ्यता 1700 ई०पू० से 1300 ई०पू० तक पनपी। अहाड़ संस्कृति के विनाश के बाद यहाँ हड़प्पा संस्कृति का विकास हुआ। अहाड़ में मेवाड़ के प्रारंभिक शासकों के स्मारक भी हैं।

622. आबू—ऐतिहासिक महत्त्व आबू आरंभ से ही राजस्थान का एक ऐतिहासिक एवं धार्मिक स्थान रहा है। 1178 में जब शाहबुद्दीन गौरी ने अनहिलवाड़ा पर आक्रमण किया, तब चालुक्य राजा अजयपाल की विधवा पत्नी उनके अल्पवयस्क पुत्र मूलराज द्वितीय की अभिभाविका के रूप में शासन कर रही थी। उसने गौरी को आबू पर्वत के निकट हराया। अनहिलवाड़ा के चालुक्य राजा भीम प्रथम (1022-64) ने परमार शासक से आबू पर्वत छीन लिया था।

धार्मिक महत्त्व यह ग्यारहवीं शताब्दी ई० के दौरान चालुक्य राजाओं के संरक्षण में बने दिलवाड़ा जैन मंदिरों के लिए प्रसिद्ध है। आबू पर्वत 5653 फुट ऊँचा है। इस पर्वत पर नाना प्रकार के वृक्ष, वन्य पुष्प, घाटियाँ तथा झरने देशी-विदशी पर्यटकों को आकर्षित करते रहते हैं। यहाँ जैनियों के संगमरमर के मंदिर धातु और प्रस्तर शिल्प के उपहार हैं। साथ ही हिंदुओं के मंदिर भी कला के बेजोड़ नमूने हैं। यहाँ की जलवायु स्वास्थ्यवर्द्धक है। बाँस, खजूर, गुड़बेल, चीड़, कचनार, आम, आडू, करौंदा, जामुन, अंगूर, फालसा के पेड़ तथा जंगली सेवती,

गुलाब, जुही, जई और चमेली के फूल इस स्थान की शोभा बढ़ाते रहते हैं।

पर्यटन स्थल यहाँ की नक्की झील काफी प्रसिद्ध है। इस झील में नौकायन की सुविधा है। इसी झील के ऊपर चंपा, हाथी तथा रामझरोखा नामक गुफाएँ और एक किनारे पर हनुमान मंदिर है। इस स्थान पर कई चट्टानें भी कौतुहल का केंद्र हैं। ये चट्टानें टाड रॉक, ननरॉक, एलीफेंट रॉक, नंदी रॉक, नेकेड रॉक, बुलडाग रॉक, कैमल रॉक तथा लवर्स रॉक हैं। यहाँ सनसेट प्वाइंट से सूर्यास्त का दृश्य मनोरम लगता है।

इन स्थलों के अतिरिक्त आबू में काफी संख्या में जैन तथा हिंदू मंदिर हैं। ये मंदिर स्थापत्य कला की दृष्टि से उत्तम हैं। इन मंदिरों में रघुनाथ मंदिर, दुलेश्वर देव आंगन, करोड़ी धज का सूर्य मंदिर, अबुर्दा देवी, लख चौरासी, व्यास तीर्थ, नाग तीर्थ, गौतम आश्रम तथा अचलगढ़ में अचलेश्वर महादेव, आदिनाथ मंदिर, मंदाकिनी कुंड, भर्तृहरि गुफा, रेवती कुंड, भृगु आश्रम, शांतिनाथ मंदिर तथा दिलवाड़ा मंदिर दर्शनीय हैं। अनेक मंदिरों का समूह दिलवाड़ा मंदिर समूह सबसे अधिक प्रसिद्ध है। इनमें विमल व शाही और तेजपाल मंदिर ज्यादा सुंदर हैं। इन स्थानों के अलावा प्राकृतिक सुष्मा के लिए अनादरा प्वाइंट, क्रेग प्वाइंट, पालनपुर प्वाइंट, बेलेज वाक तथा ट्रैवल ताल भी जाना चाहिए। आबू रोड से तीन किमी दूर चंद्रावती का पुराना नगर तथा 23 किमी दूर अंबाजी का प्राचीन ऐतिहासिक मंदिर है। यहाँ एक जीव विहार भी है, जिसकी स्थापना 1980 में की गई थी। इस विहार में चीतल, गुलदार, गीदड़, सांभर, चिंकारे जंगली सूअर आदि हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ आबू रेलवे स्टेशन यहाँ से 28 किमी और उदयपुर हवाई अड्डा 185 किमी की दूरी पर स्थित है। माउंट आबू सरकारी बसों या टैक्सियों द्वारा जाया जा सकता है। ऊपर बताए गए पर्यटन स्थलों के अतिरिक्त इस रास्ते में राजवारा पुल, बनास नदी, टावर आफ साइलेंस, ज्वालादेवी की गुफा, शांति आश्रम, छीपा बेरी पीर तथा सात घूम भी मन को विभोर करने वाले हैं। ठहरने के लिए यहाँ वन विभाग का डाक बंगला, बस स्टैंड पर रिटायरिंग रूम, बीकानेर पैलेस, सर्किट हाउस तथा कई धर्मशालाएँ व अनेक होटल हैं। यहाँ का तापमान गर्मियों में 50°से तक ऊपर तथा सर्दियों में 5°से तक नीचे चला जाता है। पर्यटन कार्यालय बस स्टैंड के सामने है।

623. आमेर यह स्थान जयपुर से 10 किमी दूर है। यह राजपूतों की राजनैतिक गतिविधियों का केंद्र था। 1562 ई० में यहाँ के राजा बिहारी मल

ने अकबर के सामने उस समय आत्म-समर्पण कर दिया था, जब अकबर अजमेर वापस जा रहा था। उसने उसके साथ अपनी पुत्री का विवाह भी किया था। जय सिंह द्वितीय ने अकबर के विरुद्ध विद्रोह यहीं किया था। यह शहर सतरहवीं शताब्दी के एक किले के लिए प्रसिद्ध है। इस किले में विजय हाल और दर्पण कक्ष अधिक अच्छे हैं। यह किला वास्तव में देखने लायक है। किले के पीछे काली का एक मंदिर है। 1727 में राजधानी जयपुर के रूप में स्थानांतरित होने से पहले आमेर ही यहाँ के कछवाहा राजपूतों की राजधानी थी। यहाँ पर्यटन कार्यालय ऐलीफैंट स्टैंड के पास है।

624. उदयपुर—ऐतिहासिक महत्त्व यह राजस्थान का प्रमुख शहर है। इसकी स्थापना महाराजा उदयसिंह द्वारा 1559 ई० में की गई थी। कभी यह मेवाड़ के सिसोदिया राजपूतों का गढ़ था। मीरा बाई का विवाह यहीं के राणा सांगा के बड़े पुत्र भोजराज के साथ हुआ था। औरंगजेब ने मेवाड़ पर 1679 ई० से 1681 ई० तक बार-बार आक्रमण किए, जिस कारण यहाँ का राजा राजसिंह पहाड़ियों में भाग गया। औरंगजेब ने उदयपुर पर कब्जा करके यहाँ के 173 मंदिर नष्ट कर दिए, परंतु मुगलों की विकट स्थित का लाभ उठाकर राजपूतों ने अपना राज्य विस्तार जारी रखा। अंत में 14 जून, 1681 को उदयपुर की संधि हुई, जिसके अनुसार जयसिंह को मेवाड़ के राणा के रूप में मान्यता दे दी गई तथा कुछ अन्य शर्तों पर भी फैसला हुआ, जो मुगलों के पक्ष में थीं। लार्ड डलहौजी ने विलय की नीति लागू करके 1852 में उदयपुर को अंग्रेजी शासन में मिला लिया।

पर्यटन स्थल उदयपुर 'राजस्थान का कश्मीर' तथा 'झीलों की नगरी' के रूप में जाना जाता है। गौरवशाली अतीत को अपने में समेटे हुए यह शहर कला, चित्रकारी, हस्तशिल्प व लोक संस्कृति का केंद्र है। यहाँ फतहसागर झील, प्रताप सागर, मोती महल, रॉक गार्डन, सहेलियों की बाड़ी, राजमहल, राजकीय पुरातात्विक संग्रहालय, महाराणा जगत सिंह द्वारा 1622 और 1651 में निर्मित क्रमशः जग मंदिर तथा जगदीश मंदिर, महाराणा प्रताप मेमोरियल, महाराणा जगत सिंह द्वितीय द्वारा 1746 में निर्मित लेक पैलेस या जगनिवास, महाराणा सज्जन सिंह द्वारा 1833 में निर्मित सज्जनगढ़ महल तथा गुलाब बाग, पिछौला झील, दूध तलाई पार्क, दीनदयाल उपाध्याय पार्क का म्यूजिकल फव्वारा, शिल्पग्राम, मारबल वाटर पार्क तथा भारतीय लोक कला संग्रहालय आदि अनेक स्थल दर्शनीय हैं।

उदयपुर से तीन किमी दूर पूर्व में अहाड़ में मेवाड़ के प्रारंभिक शासकों के स्मारक, दस किमी दूर उदय झील, 22 किमी उत्तर में ऋषभदेव में एकलिंगजी

का मंदिर तथा पास ही नागदा में ग्यारहवीं शताब्दी के दो मंदिर, पचास किमी दूर जय समंद झील, (66 किमी) दूर राजसमंद झील, नाथद्वारा में कृष्ण मंदिर और हल्दी घाटी दर्शनीय हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ उदयपुर देश के अन्य शहरों से वायु, रेल तथा सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ की फतहसागर झील पर स्टीमर बोट तथा पेडल बोट सेवा, जगनिवास पर मोटर बोट व नाव, मारबल वाटर पार्क में तैरने के लिए हवा भरी ट्यूब तथा पिछौला झील में नौकायन सुविधा है। यहाँ गर्मियों में अधिकतम तापमान 40°से तथा सर्दियों में न्यूनतम तापमान 4°से रहता है। यहाँ पर्यटक सूचना केंद्र होटल कजरी में और रेलवे स्टेशन तथा हवाई अड्डे पर हैं।

625. कालीबंगन यह स्थल राजस्थान के गंगानगर जिले में घग्घर नदी (प्राचीन सरस्वती नदी) के बाएँ किनारे पर हड़प्पा के दक्षिण और पूर्व में 120 मील की दूरी पर है।

पुरातात्विक महत्त्व यह स्थल हड़प्पा-पूर्व और हड़प्पा-कालीन सभ्यताओं का स्थल था। यहाँ की गई खुदाइयों में दो टीले पाए गए हैं। पूर्वी टीले पर रहने वाले लोग मिट्टी के लाल रंग के हल्के बर्तनों का इस्तेमाल करते थे। इन बर्तनों पर काले रंग के ज्यामितीय आकृति के चित्र बने होते थे। इस टीले पर पत्थर की फन्नियाँ, कुछ कीमती नग, सेलखड़ी पत्थर के मोती, खोल और पकी मिट्टी की चूड़ियाँ पाई गई हैं। घर कच्ची ईट के बने होते थे। पुरातत्वविदों ने इसे हड़प्पा-पूर्व की सभ्यता माना है। पश्चिमी टीला पूर्वी टीले से 200 वर्ष बाद का माना जाता है। यहाँ पाई गई चीजें हड़प्पा की चीजों से मिलती-जुलती हैं। इस टीले पर ईंट और गारे से बने चबूतरे पर पंक्ति में बने कुछ चूल्हे, पास ही में एक कुआँ और हमाम पाए गए हैं। परंतु यहाँ मातृदेवी और पशुपति की मुहरें नहीं पाई गई। यहाँ पाई गई सभ्यता की पाँच सतहों में से कुछ हड़प्पा-पूर्व काल की और कुछ हड़प्पा काल की हैं।

कालीबंगन में पाए गए मिट्टी के कुछ बर्तनों से यह स्पष्ट रूप से सिद्ध होता है कि सिंधु लिपि दाईं से बाईं तरफ लिखी जाती थी। 1960 में की गई खुदाइयों से पाए गए अवशेषों से सिद्ध होता है कि यह एक योजनाबद्ध शहर था, जिसमें सड़कों, जल-निकास और चबूतरों की अच्छी व्यवस्था थी। यहाँ पर गैंडे, हाथी, बैल तथा हरिण की मुहरें और दो हमाम पाए गए हैं। सिंधु घाटी सभ्यता के दौरान यह स्थान तीन राजधानियों में से एक था। इसकी नगर योजना हड़प्पा और मोहनजोदाड़ो से मिलती-जुलती थी।

626. कुंभलगढ़ यह शहर उदयपुर के उत्तर-पश्चिम में 90 किमी दूर है। यह मेवाड़ के राणा कुंभ की राजधानी था। बाद में इसे मुगलों ने अपने साम्राज्य में मिला लिया था। यहाँ मेवाड़ का सबसे बड़ा और सुदृढ़ दुर्ग है, जिसका निर्माण महाराणा कुंभ ने करवाया था। यह किला कई छोटी-छोटी पहाड़ियों से घिरा हुआ है, जिससे यह दूर से दिखाई नहीं देता। ऐसा माना जाता है कि पन्ना धाय ने शिशु उदय सिंह को कुंभलगढ़ किले के नींबू पोल के कक्षों में ही बनवीर से बचाया था। कुंभलगढ़ में मौर्य काल के जैन मंदिरों के अवशेष, महादेव कुंड, शाही छतरियाँ, काली मंदिर, बादल महल, कुंभलगढ़ वन्य-जीव विहार, रणकपुर मंदिर, देवगढ़ और भुज देखने लायक हैं।

627. केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान कृपया भरतपुर देखें।

628. कोटा यह शहर चंबल नदी के पूर्वी किनारे पर है। कोटा स्वतंत्र रियासत की स्थापना शाहजहाँ द्वारा 1631 में राव माधोसिंह के इसका शासक नियुक्त करने के साथ हुई थी। यहाँ के दर्शनीय स्थलों में महाराव माधोसिंह संग्रहालय, देवताजी की हवेली, चंबल बाग, जग मंदिर, अलानिया की शैल चित्रकला, बडोली, सीताबाड़ी, शाहबाद किला और गिरजाघर प्रमुख हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ कोटा देश के अन्य भागों से वायु, रेल तथा सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। ठहरने के लिए यहाँ छोटे-बड़े अनेक होटल हैं।

629. गिलंद यह स्थान उदयपुर से 75 किमी दूर है।

पुरातात्विक महत्त्व यहाँ दो टीलों में राजस्थान की अहाड़ या बनास संस्कृति के अवशेष मिले हैं। पश्चिमी टीले के लोग इसे ताम्र-पाषाण युग में छोड़कर चले गए। पूर्वी टीले के लोग यहाँ ऐतिहासिक युग में भी रहते रहे। यहाँ अधिकतर मकान कच्ची ईंट के होते थे। पकी ईंट की एक दीवार और मिट्‌टी के अनेक बर्तन भी पाए गए हैं।

630. घाना पक्षी विहार कृपया भरतपुर देखें।

631. चित्तौड़—ऐतिहासिक महत्त्व यह शहर प्राचीन काल से ही राजपूतों की राजनैतिक गतिविधियों का केंद्र रहा है। प्रतिहार शासकों की शक्ति क्षीण हो जाने पर गुहिल या सिसोदिया राजपूतों ने यहाँ एक स्वतंत्र राज्य की नींव डाल ली। वे पहले प्रतिहार राजाओं को अपना अधिपति मानते थे। चारण

परंपरा के अनुसार इस वंश का संस्थापक बप्पा रावल था। उसने अरबों से लोहा लिया और 725 ई० में चित्तौड़ के म्लेच्छ शासकों को पराजित करके यहाँ सिसोदिया वंश के शासन की नींव डाली। उसने चित्तौड़ को अपनी राजधानी बनाया। चेदि के कलचूरी राजा कोकल्ल प्रथम (845 ई०) ने यहाँ के गुहिल राजा हर्षराज को हराया था। आटपुर के 977 ई० के लेख से इस वंश के 20 राजाओं का पता लगता है, जिनमें सबसे पहला राजा गृहदत्त और सबसे अंतिम शक्ति कुमार था। 1151 में चालुक्य राजा कुमारपाल ने गुहिल राजा से चित्तौड़ छीन लिया और 1179 से कुछ पूर्व नड्डुल के चौहान कीर्तिपाल ने महारावल सामंत सिंह को हराकर मेवाड़ पर अधिकार कर लिया। परंतु सामंतसिंह के छोटे भाई कुमारसिंह ने उन्हें चालुक्यों की सहायता से हराकर 1182 में मेवाड़ पर फिर अधिकार कर लिया। विग्रहराज चतुर्थ ने चालुक्य राजा कुमारपाल के राज्य को लूटा और चित्तौड़ पर अधिकार कर लिया। जैत्र सिंह इस वंश का प्रसिद्ध शासक था। उसके राज्यकाल में अल्तमश ने मेवाड़ पर आक्रमण किया था। परंतु जब उसने सुना कि गुजरात का सरदार वीरध्वल जैत्रसिंह की सहायता के लिए आ रहा है, तो वह वापस चला गया। उसके पोते समरसिंह (1273-1301) ने बघेला सरदार सारंगदेव की सहायता करके मुसलमानों को हराया। अलाउद्दीन ने रानी पद्मावती को प्राप्त करने के लिए चित्तौड़ पर 1303 ई० में आक्रमण किया था। इसके राणा रत्नसेन और उसके दो सेनापति गोरा और बादल बड़ी बहादुरी से लड़े, परंतु वे अलाउद्दीन की विशाल सेना के समक्ष ठहर नहीं सके और युद्ध में वीरगति को प्राप्त हुए। अलाउद्दीन ने 26 अगस्त, 1303 को चित्तौड़ पर कब्जा कर लिया। रत्नसेन की मृत्यु के बाद रानी पद्मावती हजारों औरतों के साथ सती हो गई और ऐसा कहा जाता है कि अलाउद्दीन को उसकी राख के अलावा कुछ नहीं मिला। अलाउद्दीन ने चित्तौड़ अपने पुत्र खिज्र खाँ को सौंप दिया और इसका नाम खिज्राबाद रखा। परंतु राजपूतों के दबाव के कारण खिज्र खाँ ने इसे 1311 में छोड़ दिया। तब सुल्तान ने इसे जालौर के मुखिया मालदेव को दे दिया। 1327 ई० में राणा हम्मीर ने इसे पुनः अपने कब्जे में कर लिया।

मालवा के एक शासक महमूद लालजी ने मेवाड़ पर आक्रमण करके यहाँ के अनेक मंदिर तोड़ दिए थे। परंतु 1438 में राणा कुंभा के यहाँ का शासक बनने के बाद मेवाड़ एक शक्तिशाली राज्य बन गया था। दिल्ली के सुल्तान महमूद खिलजी द्वितीय ने अपने प्रधान मंत्री मेदिनी राव को मालवा से निकाल दिया था, क्योंकि वह बहुत शक्तिशाली हो गया था। राणा कुंभा ने मेदिनी राव का पक्ष लेकर 1440 में शासक महमूद खिलजी पर विजय प्राप्त की और इस विजय के स्मारक के रूप में चित्तौड़ में विजय स्तंभ बनवाया। 1468 में उसके पुत्र ऊदा ने

उसकी हत्या करके उसके बाद पाँच वर्ष तक शासन किया। बाद में उसके भाई रायमल ने उसे खदेड़ दिया। कुछ दिनों बाद बहलोल लोदी ने रायमल को हराकर उसे अपने नाम का खुतबा पढ़ने और अपने नाम के सिक्के निकालने को विवश किया। परंतु कुछ समय बाद ही रायमल ने इस संधि का पालन करना बंद कर दिया। बहलोल लोदी अपनी आंतरिक समस्याओं के कारण संधि को दुबारा लागू नहीं करा सका। 1508 में रायमल का पुत्र राणा सांगा गद्दी पर बैठा। उसने चंदेरी के राजपूत राजा मेदिनी राव के साथ मिलकर मालवा के शासक को पराजित किया और बाद में उसे छोड़ दिया। उसने सिकंदर लोदी के अधीनस्थ छटासू पर कब्जा कर लिया और उसे अपने जागीरदार पूरनमल की जागीर में शामिल कर दिया। बाद में उसने धौलपुर के निकट बारी ग्राम में इब्राहिम लोदी को हराया। उसने गभीरी नदी तक का क्षेत्र अपने कब्जे में कर लिया और मालवा मेदिनी राव को सौंप दिया। 1534 में गुजरात के सुल्तान बहादुरशाह ने चित्तौड़ पर आक्रमण किया। 1567 से 1615 ई० के बीच चित्तौड़ एक तरफ अकबर और बाद में जहाँगीर तथा दूसरी तरफ राणा उदयसिंह, महाराणा प्रताप और राणा अमर सिंह के मध्य झगड़े का मुख्य कारण बना रहा। 1567 ई० में अकबर ने राणा उदय सिंह से चित्तौड़ छीन लिया। राणा पहाड़ियों में जा छिपा, परंतु उसका सेनापति जयमल लड़ता हुआ मारा गया। 1572 में महाराणा प्रताप मेवाड़ का शासक बना। महाराणा प्रताप ने अकबर से 1576 ई० में हल्दी घाटी की लड़ाई लड़ी, परंतु हार गया। चित्तौड़ पर अकबर का अधिकार हो गया। 1597 में महाराजा प्रताप की मृत्यु हो गई। 1605 ई० में अकबर की मृत्यु के बाद राणा अमर सिंह चित्तौड़ का स्वतंत्र शासक बन गया। जहाँगीर ने 1605 में राजकुमार परवेज और महाबत खाँ को मेवाड़ वापस देने के लिए भेजा, परंतु वे सफल न रहे। 1614 ई० में राजकुमार खुर्रम ने चित्तौड़ पर आक्रमण करके राणा को हराया। उसे खुर्रम के साथ संध्रि करनी पड़ी, जिसकी अन्य शर्तों के अलावा उसने चित्तौड़ के किले की मरम्मत न कराना और सम्राट की सेवा में अपने पुत्र को आगरा भेजना स्वीकार किया। औरंगजेब ने नवंबर 1679-81 के बीच मेवाड़ पर आक्रमण किया। तब राणा राजसिंह पहाड़ियों में भाग गया। औरंगजेब ने चित्तौड़ पर कब्जा करके अपने पुत्र राजकुमार अकबर को यहाँ का प्रभारी नियुक्त कर दिया। चित्तौड़ में नव-पाषाण युग के काले और लाल रंग के मिट्टी के बर्तन भी पाए गए हैं।

पर्यटन स्थल चित्तौड़ में कई दर्शनीय स्थल हैं। सर्वप्रथम चित्तौड़ का दुर्ग ही अपने आप में संसार का एक विलक्षण गढ़ है। दुर्ग की लंबाई पाँच किमी और

चौड़ाई 800 मी है। दुर्ग के प्रथम द्वार पर रावल बाघ सिंह का स्मारक है। दुर्ग के भैरों पोल के पास वीर जयमल और काला की छतरियाँ तथा राम पोल के पास वीर फत्ता की छतरी है। पादल पोल और हनुमान पोल नाम से दुर्ग के दो अन्य पोल हैं। चित्तौड़ के दुर्ग का निर्माण सातवीं शताब्दी में मौर्य शासकों द्वारा कराया गया था। शहर में पुरातत्व संग्रहालय, कुंभा श्याम मंदिर, महासती स्मारक, जयमल और फत्ता के महल, मोहर मगरी, तुलजा भवानी मंदिर, नौलखा भंडार, सिंगार चावड़ी, सात-बीस देवड़ी, महाराणा कुंभा का महल, मीरा मंदिर, जैन तीर्थंकार भगवान श्री आदिनाथ ऋषभदेव को समर्पित और बारहवीं शताब्दी में बना 22 मी ऊँचा कीर्ति स्तंभ, समिद्धेश्वर महादेव मंदिर, गोमुख कुंड तथा पद्मिनी महल दर्शनीय हैं।

चित्तौड़ के आस-पास के दर्शनीय स्थानों में ख्वाजा बाग (20 किमी), पुरातात्विक स्थल नागरी (20 किमी), बासी गाँव (25 किमी) तथा बासी वन्य जीव विहार, राधाकृष्ण मंदिर (30 किमी) तथा साँवलियाजी के मंदिर (40 किमी), महाराणा प्रताप के सबसे छोटे भाई शक्ति सिंह द्वारा बनवाया गया बिजयपुर दुर्ग (40 किमी), मातृ कुंडिया मंदिर (50 किमी), भैंसरोड़गढ़ वन्य जीव विहार (90 किमी), मीनाल के मंदिर (90 किमी), सोलहवीं शताब्दी में बना देवगढ़ का किला (125 किमी), बरोली के मंदिरों के खंडहर (130 किमी), सीतामाता पक्षी विहार गोमतेश्वर (130 किमी) तथा जोगनिया माता मंदिर का विशेष उल्लेख किया जा सकता है।

उपलब्ध सुविधाएँ यह शहर देश के अन्य भागों से रेल तथा सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा 92 किमी दूर उदयपुर में है। स्थानीय भ्रमण के लिए यहाँ टैक्सियाँ, आटो तथा रिक्शे मिल जाते हैं। गर्मियों में यहाँ अधिक गर्मी तथा सर्दियों में अधिक सर्दी पड़ती है। इसलिए यहाँ भ्रमण का समय सितंबर से नवंबर और मार्च से अप्रैल तक का उपयुक्त होता है। यहाँ पर्यटन सूचना केंद्र रेलवे स्टेशन के बाहर तथा जनता आवास गृह में है। यहाँ ठहरने के लिए अनेक धर्मशालाएँ तथा होटल हैं।

632. जयपुर

यह शहर दिल्ली से 250 किमी दूर है।

ऐतिहासिक महत्त्व आठवीं शताब्दी में यहाँ सिसौदिया राजपूतों का शासन होता था। उनकी राजधानी आघाट थी। यहाँ के सिसौदिया राजपूत पहले प्रतिहार राजाओं के अधीन थे। 977 ई० में गुहिल (सिसौदिया) राजा भर्तृपट्ट ने महाराजाधिराज का विरुद धारण करके अपने आपको स्वतंत्र घोषित कर लिया।

उसके उत्तराधिकारी अल्लट ने प्रतिहार राजा देवपाल को मारकर अपनी शक्ति बढ़ाई। बाद में परमार राजा मुंज ने आघाट को नष्ट करके गुहिलों के राज्य को निर्बल बना दिया।

वर्तमान जयपुर की नींव महाराजा सवाई जयसिंह द्वितीय ने अपनी राजधानी आमेर से यहाँ स्थानांतरित करने के लिए 1727 में डाली। यह राजा जयसिंह द्वारा बनाए गए जंतर-मंतर के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ राजा प्रताप सिंह द्वारा बनवाए गए अंबर महल और हवामहल राजस्थानी वास्तुकला के कुछ अन्य नमूने हैं। आजकल जयपुर आधुनिक राजस्थान की राजधानी है और पिंक सिटी के रूप में जाना जाता है। इस पर पहली बार गुलाबी रंग 1883 में इंग्लैंड की महारानी विक्टोरिया के पति प्रिंस एल्बर्ट की भारत यात्रा के अवसर पर किया गया था।

पर्यटन स्थल जयपुर से लगभग दस किमी दूर आमेर का किला जयपुर का प्रमुख दर्शनीय स्थान है। इसके अतिरिक्त यहाँ नाहरगढ़ का किला, गैटोर, सिटी पैलेस, कनक, मुबारक महल, जय निवास गार्डन, वृंदावन, जंतर-मंतर, हवा महल, सिसौदिया रानी का महल, सरगासुली, राजमंदिर सिनेमा तथा एलबर्ट हाल अच्छे दर्शनीय स्थल हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ जयपुर देश के अन्य शहरों से वायु, रेल व सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ ठहरने के लिए कई धर्मशालाएँ व होटल हैं। गर्मियों को छोड़कर यहाँ कभी भी जाया जा सकता है। रेलवे स्टेशन पर राजस्थान पर्यटन विभाग का सूचना कार्यालय तथा स्टेशन के पास ही टूरिस्ट बंगला है।
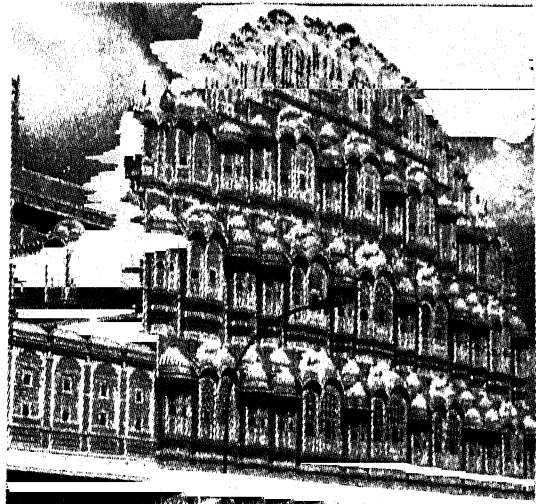
हवा महल, जयपुर
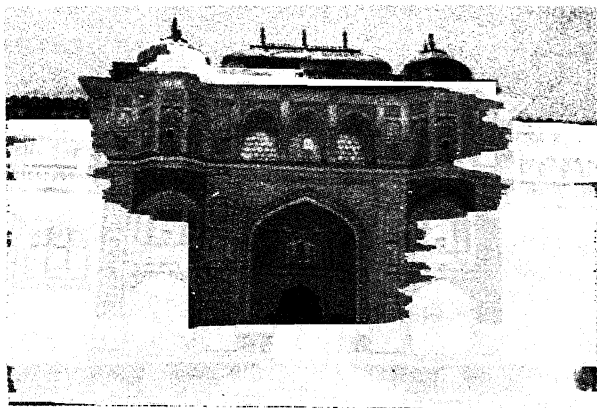
अंबर महल, जयपुर

आईटीडीसी का पर्यटक सूचना केंद्र खासा कोठी में है।

633. जालौर प्राचीन काल में जालौर संस्कृति का एक केंद्र थी। मध्य काल में यह जबलीपुरा के नाम से जाना जाता था। उस समय यहाँ शैववाद और जैन धर्म का बोलबाला था। अलाउद्दीन के समय में यहाँ का मुखिया मालदेव था। जब अलाउद्दीन का बेटा खिज्र खाँ चित्तौड़ को नहीं संभाल सका, तो अलाउद्दीन ने उसे 1311 में मालदेव को दे दिया। उदयसिंह जालौर का सबसे महान चौहान शासक था। 1707 में यह जोधपुर रियासत का अंग बन गया। यहाँ आठवीं शताब्दी तक के जैन मंदिर काफी संख्या में हैं। इनमें आदिनाथ, महावीर, पार्श्वनाथ और शांतिनाथ को समर्पित मंदिर प्रमुख हैं। जालौर के अन्य दर्शनीय स्थल जालौर का किला, मलिक शाह का मकबरा, सांचोर, भीनमल और शिवाणा हैं।

634. जैसलमेर जैसलमेर की स्थापना भाटी वंश के राजा जैसल ने 1156 में की थी। यह राजस्थान के सुदूर पश्चिम में पाकिस्तान की सीमा से लगता हुआ शहर है। इस शहर के चारों ओर दूर-दूर तक रेगिस्तान होने के कारण यह रेत के समुद्र में डूबा हुआ लगता है। यहाँ हवेलियों की बहुतायत के कारण इसे हवेलियों का नगर कहा जा सकता है।

पर्यटन स्थल इस शहर के मध्य लगभग 250 फुट ऊँची त्रिकुटा पहाड़ी है। राव जैसल ने 1156 ई० में यहाँ सुनार किले का निर्माण करवाया। किले के अंदर

जैसलमेर का किला

राजमहल एवं जैन मंदिर प्रमुख हैं। जैन मंदिरों की शिल्पकला एवं मूर्तिकला बहुत अनूठी हैं। इन मंदिरों में पार्श्वनाथ का मंदिर सबसे प्राचीन एवं प्रमुख है। जैसलमेर के प्रवेश द्वार पर गढ़सीसर सरोवर पर्यटकों का स्वागत करता हुआ प्रतीत होता है। इस सरोवर का निर्माण महारावल गढ़सी सिंह ने 1367 ई० में करवाया था। इस सरोवर के किनारे स्थित मंदिरों, छतरियों, घाटों, महलों की स्थापत्य कला दर्शनीय है। 1800 से 1860 के मध्य जैसलमेर में सेठ गुमानमल के पाँच बेटों ने यहाँ पाँच हवेलियाँ बनवाई थीं, जिन्हें पटुओं की हवेलियाँ कहा जाता है। इन हवेलियों की जालियों, झरोखों पर चित्रकारी तथा लकड़ी का काम बहुत आकर्षक ढंग से किया गया है। इन हवेलियों की तरह ही दीवान नथमल ने भी 1885 में एक हवेली बनवाई थी। इसी प्रकार दीवान शामिल सिंह द्वारा 1825 में बनवाई गई हवेली भी शिल्प की दृष्टि से उत्कृष्ट हवेलियों में मानी जाती है। गढ़सीसर सरोवर पर लेखक नंदकिशोर शर्मा ने 1984 में लोक सांस्कृतिक संग्रहालय स्थापित किया था।

जैसलमेर के आस-पास के दर्शनीय स्थानों में शहर से 5 किमी दूर महारावल अमरसिंह द्वारा 1784 में स्थापित अमर सागर, सात किमी दूर रामगढ़ मार्ग पर बड़ा बाग, 17 किमी दूर आकल ग्राम में काष्ठ जीवाश्म उद्यान, उत्तर-पश्चिम में 17 किमी दूर लोद्रवा तथा दक्षिण-पश्चिम में 45 किमी दूर राष्ट्रीय मरु उद्यान दर्शनीय हैं। इस उद्यान में राजस्थान में पाए जाने वाले पशु-पक्षी देखे जा सकते हैं। राजस्थान में जहाँ पेड़ पौधे, जन-जीवन आदि कुछ भी नहीं हैं, वह स्थान भी देखने लायक है और वह स्थान है इसके दूर-दूर तक फैले अलग-अलग आकृतियों के रेत के टीले, उन पर बनती-बिगड़ती लहरें और रेत के इस समुद्र में डूबते हुए सूरज का दृश्य, जिन्हें देखने के लिए जैसलमेर से 42 किमी दूर समगाँव तक जाना पड़ता है।

उपलब्ध सुविधाएँ जैसलमेर देश के अन्य शहरों से रेल तथा सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। निकटतम हवाई अड्डा जौधपुर (285 किमी) है। जैसलमेर में आरटीडीसी होटल मूमल से नगर दर्शन के लिए बसें चलाता है। यहाँ का पर्यटक सूचना केंद्र गढ़सीसर सरोवर के पास तथा रेलवे स्टेशन पर है।
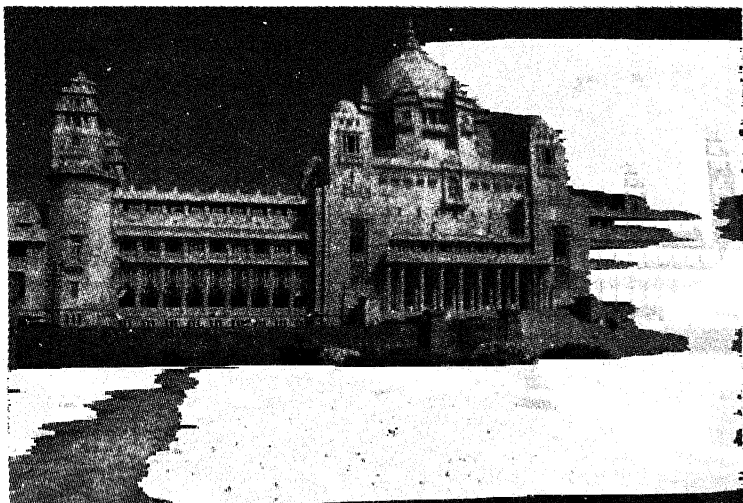
उम्मेद भवन, जोधपुर

635. जोधपुर इस शहर की स्थापना रावल जसवंत सिंह राठौड़, जिसने अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध लड़ा था, के प्रपौत्र जोधा द्वारा 1465 ई० में की गई थी। यह मारवाड़ रियासत की राजधानी भी थी और मारवाड़ के उत्थान के साथ इसका उत्थान भी हुआ। सोलहवीं शताब्दी में राजा मालदेव ने इस शहर की चारदीवारी करवाई। शेरशाह ने मारवाड़ पर 1544 ई० में आक्रमण करके इसे मालदेव राठौड़ से छीन लिया, परंतु उसने इसे अपने राज्य में नहीं मिलाया। शेरशाह और मालदेव के बीच इतना घमासान युद्ध हुआ था कि शेरशाह को यह कहना पड़ा — "मैने तो मुट्ठी भर बाजरे के लिए हिंदुस्तान का साम्राज्य ही खो दिया होता।" शेरशाह की मृत्यु के बाद मालदेव ने जुलाई, 1555 ई० में मारवाड़ पर फिर कब्जा कर लिया। आगरा में अकबर के सम्राट बनने के बाद मालदेव ने अपने पुत्र चंद्र सिंह को उसके दरबार में निष्ठा प्रकट करने के लिए भेजा। मीरा बाई का जन्म यहीं के मेड़ता जिले के चौकड़ी गाँव में जोधपुर के राठौड़ वंशीय शासक रतनसिंह के यहाँ 1573 ई० में हुआ था। खान-ए-जहाँ बहादुर के नेतृत्व में औरंगजेब की सेना ने मारवाड़ पर आक्रमण किया था। 1678 ई० में जसवंत सिंह की मृत्यु के बाद उसने इस पर कब्जा कर लिया। औरंगजेब ने राजकुमार अकबर के अधीन 1679 में भी एक सेना भेजी थी। अल्प वयस्क अजीत सिंह को मारवाड़ के अगले राणा के रूप में मान्यता देने के मामले पर जोधपुर के सेनानायकों और मुगलों के बीच 1709 ई० तक झगड़े होते रहे। 1709 ई० में

औरंगजेब के उत्तराधिकारी बहादुरशाह प्रथम ने राजपूतों की यह माँग मान ली और अजीत सिंह मारवाड़ का अगला राणा बना। इस सफलता के उपलक्ष्य में यहाँ एक विजय द्वार बनवाया गया। उसने जोधपुर को अपनी राजधानी बनाया। मध्य काल में यहाँ अमरूद बहुत मात्रा में होते थे।

पर्यटन स्थल जोधपुर के दर्शनीय स्थलों में महामंदिर, ओसियाँ, धावा, डोली, 1928 से 1942 तक निर्मित उम्मेद भवन पैलेस (महाराजा उम्मेद सिंह द्वारा निर्मित), महरानगढ़ किला (राव जोधा द्वारा निर्मित), सरदार मानसिंह द्वारा 1906 में निर्मित जसवंत थड़ा (जोधपुर नरेश जसवंत सिंह द्वितीय की समाधि), बालसमंद झील (7 किमी दूर), मंडोर उद्यान (9 किमी दूर), कायलाना झील (11 किमी दूर), नेहरू पार्क तथा 65 किमी दूर औसियाँ शामिल हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ जोधपुर देश के अन्य शहरों से वायु, रेल व सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ ठहरने के लिए अनेक धर्मशालाएँ तथा छोटे-बड़े होटल हैं। जोधपुर भ्रमण का उपयुक्त समय अक्तूबर से मार्च तक का होता है। गर्मियों में यहाँ का अधिकतम तापमान 42°से तथा सर्दियों में न्यूनतम तापमान 15°से होता है। नगर भ्रमण के लिए आरटीडीसी प्रतिदिन सुबह और दुपहर दो दूर होटल घूमर, हाई कोर्ट रोड से संचालित करता है, जहाँ इसका पर्यटन स्वागत केंद्र भी है। यहाँ दूसरा पर्यटक सूचना केंद्र रेलवे स्टेशन पर है।

636. टोंक—ऐतिहासिक महत्त्व समनगढ़ ताम्रपत्रों (754 ई०) तथा एलोरा के दशावतार गुहालेख से पता चलता है कि राष्ट्रकूटों ने टोंक पर विजय प्राप्त की थी। अंग्रेजों ने पिंडारियों का दमन करके उनके नेता आमीर खाँ को 1818 में टोंक का राज्य दे दिया था।

637. डीग डीग मथुरा के 40 किमी पश्चिम में है। यह शहर अपने महलों के लिए जाना जाता है। जाट नेता सूरजमल ने भी यहाँ अट्ठारहवीं शताब्दी के आरंभ में एक बहुत सुंदर महल सूरज भवन बनवाया था। सबसे बड़ा महल गोपाल भवन है, जिसमें संगमरमर का एक कौतुक है, जिसे महाराजा जवाहर सिंह अवध से लाए थे। नंद भवन और माछी भवन यहाँ के अन्य सुंदर भवनों में से हैं। डीग में रूप सागर झील के पास एक किला है, जिसे हथियाने से पहले अंग्रेजों व यहाँ के शासक के मध्य भयंकर युद्ध हुआ था। भरतपुर के राजा और बरार के होल्कर ने जब 1803 में दिल्ली पर कब्जा करने की कोशिश की थी, तो अंग्रेजों ने उन्हें डीग की लड़ाई में हरा दिया था।

638. डूँगरपुर यह शहर प्रदेश के दक्षिण में है। इसकी स्थापना रावल वीरसिंह ने 1282 में की थी। पंद्रहवीं शताब्दी के आरंभ में अहमदाबाद के शासक अहमदशाह ने यहाँ के शासक को मात दे दी थी। उदय विलास महल, जूना महल, गायब सागर झील, बिनेश्वर और गलियाकोट यहाँ के मुख्य दर्शनीय स्थल हैं।

639. दिलवाड़ा कृपया माउंट आबू देखें।

640. धौलपुर यह चंबल नदी पर है। इसे तारतपुर भी कहा जाता था।

ऐतिहासिक महत्त्व इब्राहिम लोदी ने मेवाड़ के राणा सांगा के साथ धौलपुर के निकट बारी ग्राम में एक युद्ध किया था, जिसमें उसकी हार हुई थी। बाद में 1486-87 में ग्वालियर पर आक्रमण के तुरंत बाद बहलोल लोदी ने धौलपुर पर आक्रमण करके वहाँ से 100 मन सोना प्राप्त किया और धौलपुर के राजा को भेंट तथा कर देने के लिए विवश किया। फिर भी धौलपुर ने अपना स्वतंत्र रुख कायम रखा। सिकंदर लोदी के समय में धौलपुर ग्वालियर के राजा विनायक देव के अधीन था। सिकंदर ने धौलपुर पर कब्जा करने के लिए आलम खाँ मेवाती, खानखाना नूहानी और ख्वास खान को भेजा। विनायक देव ने उन्हें भारी संघर्ष के बाद पीछे ढकेल दिया। उस समय सिकंदर लोदी संभल में पड़ाव डाले हुए था। उसने 22 फरवरी, 1504 को धौलपुर पर स्वयं आक्रमण किया। अब विनायक देव किला छोड़कर भाग गया। सिकंदर ने धौलपुर के किले पर कब्जा करके भारी लूट-पाट की और मंदिर गिराकर उनकी जगह मस्जिदें बनवाईं। बाद में उसने धौलपुर की रियासत विनायक देव को लौटा दी। परंतु कुछ दिनों बाद 1504 ई० में ही सिकंदर लोदी ने धौलपुर को अपना सदर मुकाम बनाकर ग्वालियर के खिलाफ अभियान छेड़ दिया। इस अभियान के दौरान उसने विनायक देव को हराकर उसकी जगह कमरुद्दीन को शासक बना दिया। 1506 में वह फिर लौटा और डेढ़ महीने तक धौलपुर में ठहरा। 1546 में पानीपत के प्रथम युद्ध के तुरंत बाद बाबर ने धौलपुर भी जीत लिया था।

641. नाहरगढ़ जीव विहार यह विहार जयपुर के पास है। यहाँ पर गुलदार, सांभर, नीलगाय, चिंकारे, गीदड़ आदि जीव मिलते हैं। यहाँ से निकटतम शहर जयपुर है।

642. पुष्कर यह नगर अजमेर के उत्तर-पश्चिम में 11 किमी दूर है। 119 से 124 तक यहाँ नासिक के शक् क्षत्रप नहपान का शासन था। यहाँ सैकड़ों मंदिर हैं, जिनमें वराह मंदिर, ब्रह्म मंदिर, रामाबैकुंठ मंदिर आदि प्रसिद्ध हैं।

पर्यटन स्थल पुष्कर मुख्य रूप से अपनी झील एवं मेले के लिए प्रसिद्ध है। पुष्कर की झील पौराणिक महत्त्व की है। इसकी उत्पत्ति यहाँ ब्रह्मा के हाथ से कमल का फूल गिर जाने के कारण हुई मानी जाती है। ब्रह्मा ने तब यहाँ एक यज्ञ किया था। झील के चारों ओर अनेक मंदिर एवं 52 घाट हैं। घाटों का निर्माण मंडोर के नरेश नाहरराव परिहार ने दसवीं शताब्दी में करवाया था। पुष्कर में प्रति वर्ष कार्तिक मास की शुक्ला एकादशी से पूर्णिमा तक पाँच दिन तक एक बड़ा मेला लगता है। इस मेले से पहले यहाँ एक बहुत बड़ा पशु मेला लगता है। धार्मिक मेले के दौरान यहाँ ग्रामीण संस्कृति की झलक देखते ही बनती है। इसे देखने के लिए पर्यटक देश-विदेश से आते हैं। यहाँ ऊँट की सवारी भी कराई जाती है। यहाँ ब्रह्म मंदिर, सावित्रि मंदिर, मान महल और स्नान घाट दर्शनीय हैं।

ठहरने की सुविधाएँ ठहरने के लिए पुष्कर में जाट धर्मशाला, माहेश्वरी धर्मशाला, जैन धर्मशाला तथा कुछ छोटे-मोटे होटल हैं। पर्यटन सूचना के लिए टूरिस्ट स्वागत केंद्र, आरटीडीसी का होटल खादिम कंप्लेक्स, अजमेर तथा राजस्थान टूरिस्ट कार्यालय, होटल सरोवर, पुष्कर से संपर्क स्थापित किया जा सकता है।

643. बाँसवाड़ा बाँसवाड़ा रियासत की स्थापना महारावल जगमाल सिंह ने की थी। भील इस क्षेत्र की कुल आबादी का 39% हैं।

पर्यटन स्थल बाँसवाड़ा में मुख्य पर्यटन स्थल श्री राज मंदिर, आनंद सागर झील, दियालाब टैंक, अब्दुल्ला पीर, कागड़ी, मदरेश्वर मंदिर, द्वारकाधीश मंदिर, लक्ष्मीनारायण मंदिर तथा वनेश्वर महादेव मंदिर हैं। आस-पास के दर्शनीय स्थलों में तलवाड़ा के मंदिर (15 किमी), चिंच का ब्रह्म मंदिर (18 किमी), माही बाँध (18 किमी), त्रिपुरा सुंदरी मंदिर (19 किमी), पाराहेड़ा का मंडलेश्वर मंदिर (22 किमी), कालिंजाड़ा का जैन मंदिर (30 किमी), अंधेश्वर जैन मंदिर (40 किमी) तथा आर्थुना के जैन मंदिर (55 किमी) प्रमुख हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ बाँसवाड़ा से निकटतम रेलवे स्टेशन रतलाम (80 किमी) और निकटतम हवाई अड्डा उदयपुर (160 किमी) है। ठहरने के लिए यहाँ

सरकारी तथा गैर सरकारी अनेक रेस्ट हाउस और होटल हैं। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय सितंबर से मार्च तक होता है।

644. बाड़मेर यह शहर प्रदेश के दक्षिण-पश्चिम में है। इसकी स्थापना बहाड़ राव (बर राव) ने तेरहवीं शताब्दी में की थी। बाड़मेर में जूना बाड़मेर, किराडू, खेड, जासोल, महावीर पार्क और नीमरी दर्शनीय स्थल हैं।

645. बीकानेर यह शहर राजस्थान में है। इसकी स्थापना जोधपुर के राव जोधा के पुत्र राव बीकाजी ने 1488 में की थी। यहाँ के राजा कल्याण मल ने अपनी पुत्री का विवाह अकबर से किया था।

पुरातात्विक महत्त्व यहाँ की गई खुदाइयों से पता चलता है कि यह शहर सिंधु घाटी सभ्यता का एक स्थल था, परंतु यहाँ पाए गए मिट्टी के बर्तन हड़प्पा के बर्तनों से अलग तरह के थे।

पर्यटन स्थल सोलहवीं शताब्दी में यहाँ एक किला बनवाया गया था, जिसमें कई मंदिर और मस्जिदें है। बीकानेर में कई जैन मंदिर भी दर्शनीय हैं। शहर से आठ किमी दूर यहाँ के राजा की छतरी है। बीकानेर में तथा इसके आस-पास के दर्शनीय स्थलों में जूनागढ़ का किला, लालगढ़ महल, ऊँट फार्म, भंडेश्वर जैन मंदिर, गंगा संग्रहालय, देवी कुंड, कर्णी माता मंदिर, गजनेर वन्य जीव विहार, कलायत तथा कालीबंगन प्रसिद्ध हैं। बीकानेर से निकटतम हवाई अड्डा जोधपुर (256 किमी) है। ठहरने के लिए यहाँ अनेक होटल हैं। यहाँ पर्यटन कार्यालय होटल धोला मरु में है।

646. बूँदी—ऐतिहासिक महत्त्व यह प्रदेश के पूर्वी क्षेत्र में है। यहाँ 15वीं शताब्दी में राव बरसिंह का शासन था। उसने यहाँ 1411 में 1426 फुट की ऊँचाई पर तारागढ़ दुर्ग का निर्माण कराया था। महाराव शत्रुशल्य सिंह ने इसमें छत्र महल और महाराव रामसिंह ने मंगल बुर्ज बनवाकर इसे ठोस रूप प्रदान किया। दुर्ग में भीम बुर्ज, छत्र महल, फूल महल, बादल महल, रत्न महल, अनिरुद्ध महल, रत्न गुम्बद, दीवान-ए-आम, दरी खाना और चित्रशाला आकर्षक हैं। दुर्ग के भीतर सात कलात्मक विशाल जलकुंड हैं, जिन्हें टाँका कहा जाता है। विख्यात अंग्रेज पत्रकार रुडयार्ड किपलिंग ने 1886 में इस दुर्ग के बारे में कहा था कि यह एक ऐसा महल है, जिसे देवताओं ने अपने निवास के लिए बनाया होगा, मनुष्यों ने नहीं। पंद्रहवीं शताब्दी के आरंभ में अहमदाबाद के शासक अहमदशाह ने यहाँ के राजा को मात दी थी। मराठा सेनापतियों होलकर और सिंधिया ने यहाँ 1730

के बाद मुगल सम्राट मुहम्मदशाह बंगश के सेनानायक मीर बख्शी खाँ दुरान को हराया था। बूँदी के राजा ने अकबर के साथ एक संधि की थी, जिसकी निम्नलिखित शर्तें थीं :

1) बूँदी के राजपूतों को अकबर के यहाँ अपनी बेटियों की शादी न करने की छूट मिले,
2) उन्हें जजिया न देना पड़े,
3) बूँदी के मुखियाओं को अटक पार जाने के लिए विवश न किया जाए,
4) बूँदी के मातहतों को नौरोज के दिन महल के मीना बाजार में दुकान लगाने के लिए अपनी महिला रिश्तेदार भेजने के लिए विवश न किया जाए,
5) उन्हें दीवाने आम में सशस्त्र प्रवेश करने की इजाजत दी जाए,
6) उनके धार्मिक स्थानों का सम्मान किया जाए,
7) उन्हें किसी हिंदु सेनानायक के विरुद्ध लड़ने के लिए न कहा जाए,
8) उनके घोड़ों पर शाही दाग न लगाया जाए,
9) उन्हें राजधानी में लाल दरवाजा तक नक्कारा बजाने की इजाजत दी जाए,
10) उन्हें सिजदा करने के लिए न कहा जाए, तथा
11) बूँदी हाड़ा राजाओं की उसी तरह बनी रहे, जिस प्रकार सम्राट के लिए दिल्ली है तथा दिल्ली द्वारा बूँदी पर कोई आक्रमण न किया जाए।

पर्यटन स्थल बूँदी के पर्यटन स्थलों में पहले वर्णित महलों, बुर्जों आदि के अलावा गढ़ महल, नौबत खाना, हाथी पोल, हजारी पोल, नवल सागर, रानीजी की बावड़ी, सुख महल, जैत सागर झील, शिकार बुर्ज, शार बाग तथा 84 स्तंभों वाला स्मारक शामिल हैं।

बूँदी से 5 किमी दूर बाण गंगा पर केदारेश्वर धाम, 20 किमी दूर रामेश्वर का शिव मंदिर, 45 किमी दूर केशोरायपाटण में महाराजा शत्रुशल्य द्वारा 1601 में बनवाया गया केशवरायजी महाराज का मंदिर तथा तीर्थंकार मंदिर और मृत्युंजय महादेव मंदिर, 45 किमी दूर रामगढ़ में पक्षी विहार, 50 किमी दूर बिजोलिया का किला, 53 किमी दूर अजीत सिंह द्वारा बनवाया गया तलवास का किला, 65 किमी दूर डूगड़ी में सोलंकी राजाओं द्वारा दसवीं शताब्दी में बनवाई गई कनक सागर झील, 70 किमी दूर मीनाल के शिव मंदिर तथा 77 किमी दूर इंद्रगढ़ में इंद्रशल्य सिंह राव द्वारा बनवाया गया किला है।

उपलब्ध सुविधाएँ बूँदी देश के अन्य भागों से रेल तथा सड़क मार्ग से जुड़ा

हुआ है। निकटतम हवाई अड्डा 210 किमी दूर जयपुर है। ठहरने के लिए यहाँ आरटीडीसी के होटल तथा अन्य होटल हैं। यहाँ पर्यटन कार्यालय सर्किट हाउस में है।

647. बैरठ—पुरातात्विक महत्त्व बैरठ 258-57 ई०पू० में अशोक द्वारा स्थापित कराए गए लघु शिलालेख के लिए प्रसिद्ध है। इस शिलालेख में उसने बुद्ध धर्म के प्रति अपनी आस्था प्रकट की है। उसने 258 अथवा 257 ई०पू० में यहाँ भब्रू नामक जगह पर भी एक लेख स्थापित कराया था, जिसमें उसने भिक्षुओं के लिए कुछ सिद्धांत निर्धारित किए थे।

648. भब्रू यह स्थान बैरठ के निकट है। सम्राट अशोक ने यहाँ 257 ई०पू० में एक शिलालेख स्थापित करवाया था, जो बौद्ध धर्म के इतिहास संबंधी बातों की जानकारी देता है।

649. भरतपुर—निर्माण भरतपुर राजस्थान का एक प्रमुख शहर है। इसकी स्थापना सूरजमल ने 1783 में की थी। उसने यहाँ एक बहुत मजबूत और अभेद्य किला बनवाया था। इस किले को तोड़ना बहुत मुश्किल था। यह किला मिट्टी के दो चौड़े-चौड़े बाँधों से घिरा हुआ था और प्रत्येक बाँध पानी की 150 फुट चौड़ी तथा 50 फुट गहरी खाई से घिरा हुआ था। किले के साथ-साथ भी ऐसी ही खाई थी। उन दिनों की तोपों के गोले इन बाँधों की मिट्टी में धँस कर रह जाते थे, जिससे किले को कोई नुकसान नहीं पहुँचता था। किले का बाहरी बाँध अब पूरी तरह नष्ट हो चुका है। इसकी परिधि 11 किमी थी। किले के मध्य में एक स्तंभ था, जो मुगल राजधानी पर बार-बार के सफल अभियानों की स्मृति में बनवाया गया था।

ऐतिहासिक महत्त्व पानीपत की तीसरी लड़ाई में बचने पर होलकर ने भरतपुर के राजा सूरजमल के यहाँ शरण ली थी। बरार के होलकर और भरतपुर के राजा ने मिलकर 1803 के बाद अंग्रेजों के अधीनस्थ दिल्ली पर आक्रमण किया था, परंतु वे डीग की लड़ाई में हार गए। तब मि० लेक ने भरतपुर पर कब्जा करने के लिए चार बार कोशिश की, परंतु वह हर बार हार गया। उसे एक संधि करनी पड़ी। यहाँ के राजा की मृत्यु के बाद ब्रिटिश सरकार ने उसके एक अवयस्क की उत्तराधिकार की माँग स्वीकार कर ली, परंतु तभी उत्तराधिकार का दावा करने वाले एक अन्य अवयस्क दुर्जनमल ने गद्दी पर जबरदस्ती अधिकार कर लिया और उसने अपना अधिकार जताने के लिए युद्ध की भी तैयारी की। तब लार्ड

कोबरे गिअर ने 1826 में भरतपुर पर कब्जा कर लिया। दुर्जनमल को किले से बाहर कर दिया गया। परंतु किले का खजाना लूटकर अंग्रेज अफसरों ने निंदनीय कार्य किया।

पर्यटन स्थल यहाँ एक संग्रहालय है, जिसमें इस क्षेत्र की दुर्लभ चीजें रखी गई हैं। भरतपुर में यहाँ के राजा का महल भी दर्शनीय है।

भरतपुर में जाना-माना केवलादेव घाना पक्षी विहार भी है, जो शहर से दो किमी दूर है। इसकी स्थापना विश्व के तरह-तरह के पक्षियों के संरक्षण के लिए 1983 में की गई थी। यह एशिया का सबसे बड़ा पक्षी विहार है। कभी यह स्थान भरतपुर के राजघराने का शिकार स्थल हुआ करता था। यहाँ लगभग 1200 प्रकार के पक्षी देखने को मिलते हैं। विहार में पक्षियों के पालन-पोषण और उनकी वृद्धि के लिए पानी, मछली तथा दलदली जमीन, फिशिंग के लिए नहर आदि का निर्माण किया गया है। झीलों में मछली, कछुए, सेवाल, सरकंडे आदि भरकर पक्षियों के लिए प्राकृतिक वातावरण तैयार किया गया है। देश का यही एक ऐसा पक्षी विहार है, जिसमें साइबेरियाई क्रेन आती है। विहार में मुनिया, नथैचेज गिलहरियाँ, सीबिया, जलमखानी, ग्रेलेग इग्रेटस, चील, बगुले, स्टार्क, जलमोर, जल कौवे, हथसिल, गिज मछलियाँ, बत्तखें, थिसिल तथा चित्तिदार बाज के अलावा अजगर, नीलगाय, चीतल, साँप, सांभर, सियार, हुकना, कृष्णसार आदि भी देखे जा सकते हैं। इस विहार में गुलाबी पत्थर से बना एक गंगा मंदिर भी है। इस पक्षी विहार में कोई गाड़ी नहीं जाने दी जाती। इस प्रकार इसे पैदल या रिक्शा में बैठकर ही देखा जा सकता है।

उपलब्ध सुविधाएँ भरतपुर देश के अन्य भागों से रेल तथा सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डा आगरा (55 किमी) है। पक्षी विहार देखने के लिए साईकिलें किराए पर मिलती हैं। यहाँ ठहरने के लिए आरटीडीसी भरतपुर लॉज, फोरेस्ट गेस्ट हाउस तथा पक्षी विहार के बाहर सारस लॉज नामक गेस्ट हाउस है। पर्यटन कार्यालय आगरा रोड पर होटल सारस में है। यहाँ घूमने के लिए गर्मी के मौसम को छोड़कर साल में कभी भी जाया जा सकता है।

650. भीलवाड़ा—पुरातात्विक महत्त्व यहाँ राजस्थान की अहाड़ अथवा बनास संस्कृति के मिट्टी के बर्तन पाए गए हैं।

651. रणकपुर यह शहर हल्दी घाटी के उत्तर-पश्चिम में है। यह जैनियों का एक पवित्र स्थल है। यहाँ एक चारदीवारी के भीतर जैन मंदिरों का

एक समूह है, जिनका निर्माण राणा कुंभ के शासन काल (1438-68) के दौरान हुआ था। इन मंदिरों के बीच स्थित चौमुख मंदिर तीर्थंकार आदिनाथ को समर्पित है, जिसमें उसकी चौमुखी प्रतिमा स्थापित है। यह मंदिर 48000 वर्गफुट क्षेत्र में फैला हुआ है। इसमें 29 हाल और 1444 खंभे हैं। प्रत्येक खंभे पर अलग-अलग तरह की नक्काशी का काम किया गया है। इसके सामने पार्श्वनाथ और नेमिनाथ के मंदिर हैं, जिनके खंभों पर खजुराहो के मंदिरों की-सी नक्काशी की गई है। रणकपुर के अन्य दर्शनीय स्थल सूर्य मंदिर, सादरी, देसुरी, घाणेराव, मुच्छल महावीर जी, फाल्ना और परशुराम महादेव हैं।

652. रणथंबोर—ऐतिहासिक महत्त्व 1192 ई० में पृथ्वीराज चौहान के मुहम्मद गौरी के हाथों पराजित हो जाने के बाद गौरी ने अजमेर को उसके पुत्र गोबिंद को दे दिया था। परंतु पृथ्वीराज के भाई हरिराज ने उसे गद्दी से उतार दिया। तब वह रणथंबोर चला आया और उसने यहाँ एक नए शक्तिशाली चौहान राज्य की स्थापना की। इस राज्य में अजमेर शामिल नहीं था। 1226 ई० में इसे अल्तमश ने जीत लिया था। उसकी मृत्यु के बाद इस पर वागभट्ट ने अधिकार करके यहाँ से 12 वर्ष तक राज्य किया। रणथंबोर राजस्थान का सबसे मजबूत किला था। इसे जलालुद्दीन खिलजी भी नहीं जीत सका था। अलाउद्दीन ने इसे जीतने के लिए नुसरत खाँ और उलुग खाँ को भेजा। यहाँ का शासक हम्मीर देव अत्यंत पराक्रमी था। युद्ध में सेनानायक नुसरत खाँ मारा गया। दूसरी बार अलाउद्दीन खिलजी ने सेना की कमान स्वयं संभाली, परंतु ग्यारह महीनों तक घेरा डाले रहने के बावजूद वह इस पर कब्जा नहीं कर सका। बाद में रणथंबोर के शासक के सेनापति ने उसके साथ दगा कर दिया, जिसके बाद 1301 ई० में अलाउद्दीन खिलजी ने इसे जीत लिया। युद्ध में सुल्तान के साथ गए फारसी कवि अमीर खुसरो ने इस किले का सिलसिलेवार वर्णन करने के साथ-साथ राजपूतों द्वारा दिखाई गई बहादुरी तथा रानियों और राजकुमारियों के जौहर का वर्णन भी किया है। अपने समय में राणा कुंभ (1438-68) ने भी इस पर विजय प्राप्त की थी। बाद में राणा सांगा ने रणथंबोर पर चढ़ाई करके इसे जीता। परंतु मार्च, 1569 में यहाँ के राजा राय सुरजन हारा तथा अकबर के मध्य हुई लड़ाई में हारा हार गया और उसे अकबर को किला सौंपने के साथ-साथ उसकी सेवा में अपने दो पत्रों दुध और भोज को भी भेजना पड़ा। बाद में राय ने भी शाही सेना में नौकरी कर ली। औरंगजेब की मृत्यु के बाद रणथंबोर पर जयपुर के राजा का अधिकार हो गया।

पर्यटन स्थल रणथंबोर का किला रणथंबोर के दर्शनीय स्थानों में सबसे प्रमुख है। किले के बाहर पदम तालाब तथा जोगी महल हैं। किले के अंदर हम्मीर महल एक आकर्षक इमारत है। रणथंबोर किले में एक विशाल वट वृक्ष, गणेश मंदिर, तोरण द्वार, महादेव छतरी, समेतों की हवेली, 32 खंभों की छतरी, एक मस्जिद तथा एक जल-प्रपात है। रणथंबोर से 14 किमी दूर सवाई माधोपुर है। इनके अतिरिक्त पास ही करौली में भंवर विलास महल दर्शनीय है।

यहाँ पास में ही एक राष्ट्रीय उद्यान भी है, जिसकी स्थापना 1955 में की गई थी। यहाँ पर सांभर, चीतल, नीलगाय, जंगली सूअर, चिंकारे, भालू, अजगर, गेहुँए साँप, बाघ, तेंदुए, कछुए और मगरमच्छ मिलते हैं। रणथंबोर में एक झील है, जिसमें मोर, कबूतर, तोता, गरुड़, कूकने वाली चैती, बटेर, जलमुर्गी, जलगोह, बाल तीतर विचरण करते रहते हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन सवाई माधोपुर मात्र 14 किमी की दूरी पर है और निकटतम हवाई अड्डे कोटा (125 किमी) और जयपुर (132 किमी) हैं। अक्तूबर से अप्रैल तक का समय यहाँ घूमने के लिए अच्छा रहता है। ठहरने के लिए यहाँ तथा 14 किमी दूर सवाई माधोपुर में अनेक होटल हैं।

653. राष्ट्रीय मरु उद्यान जैसलमेर से 32 किमी दूर इस राष्ट्रीय उद्यान की स्थापना 1980 में की गई थी। यहाँ पर लोमड़ी, बिल्ली, चिंकारे आदि जीव मिलते हैं। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय अक्तूबर से मार्च तक का होता है।

654. लाट—ऐतिहासिक महत्त्व एलोरा के दशावतार गुहा लेख से पता चलता है कि प्रथम राष्ट्रकूट राजा दंतिदुर्ग (753-60) ने लाट पर विजय प्राप्त की थी। अनहिलवाड़ा के चालुक्य वंश के राजा मूलराज (942-86) ने लाट को जीतकर इसे अपने राज्य में मिला लिया था। 1193 के बाद मांडू के परमार राजा सुमटवर्मा ने इस पर अधिकार कर लिया। कल्याणी के चालुक्य राजा तैलप द्वितीय (973-97) ने लाट को जीतकर अपने सेनापति बारप्प को वहाँ का राज्यपाल बनाया था। देवगिरि के यादव वंश के राजा सिंघण (1200-47) ने भी लाट पर अधिकार किया था। दक्षिण कौशल के सोमवंशी राजा महाशिवगुप्त तृतीय ने ग्यारहवीं शताब्दी के अंत में लाट के राजा को हराया। चेदि के कलचूरी राजा युवराज प्रथम (920 से 950 के मध्य) ने लाट को जीतकर राजशेखर रचित् विद्धशालभंजिका नामक नाटिका का प्रदर्शन कराया। इसी वंश के लक्ष्मणराज ने भी राष्ट्रकूट शासकों के अधीनवर्ती लाट पर विजय प्राप्त की।

655. सरिस्का राष्ट्रीय उद्यान यह अलवर से 37 किमी दूर अरावली की पहाड़ियों में है। इस उद्यान को 1958 में वन जीव विहार के रूप में स्थापित किया गया था और 1979 में इसे राष्ट्रीय पार्क का दर्जा दिया गया। यहाँ पर शेर, गुलदार, चिंकारे, लकड़बग्घे, जंगली बिल्ली, सांभर, गंध मार्जार, नीलगाय, चौसिंगे, तीतर, बटेर, गिलहरी, नेवले, अजगर आदि जीव देखने को मिलते हैं।

यहाँ ठहरने के लिए सरकारी तथा गैर-सरकारी होटल हैं। अभयारण्य देखने के लिए सरकारी जीप किराये पर मिलती है।

656. सवाई माधोपुर सवाई माधोपुर रणथंबोर से 14 किमी दूर है। इसकी स्थापना जयपुर के महाराजा सवाई माधोसिंह प्रथम ने शेरपुर की किलेबंदी करके 1765 में की थी और शेरपुर का नाम बदलकर सवाई माधोपुर रखा था।

पर्यटन स्थल सवाई माधोपुर के पूर्वी भाग में करौली है, जिसमें सिटी पैलेस, प्राचीन इमारतें, मंदिर और दरबार हाल दर्शनीय हैं। सवाई माधोपुर का मुख्य आकर्षण रणथंबोर है, जिसके विवरण के लिए रणथंबोर देखें। रणथंबोर के रास्ते में अमरेश्वर महादेव मंदिर, करौली से 23 किमी दूर कैला देवी मंदिर, सवाई माधोपुर से 25 किमी दूर चौथ माता मंदिर, इतनी ही दूर खंदार किला, 40 किमी दूर सिवाड़ में दशमेश्वर महादेव मंदिर, 60 किमी दूर बनास और चंबल नदियों के संगम पर भगवान शिव का मंदिर, गंभीरी नदी पर महावीरजी मंदिर तथा ऋषभदेव को समर्पित चमत्कार मंदिर सवाई माधोपुर के आस-पास के मुख्य दर्शनीय स्थल हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ सवाई माधोपुर देश के अन्य भागों से रेल और सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ से निकटतम हवाई अड्डे कोटा 125 किमी और जयपुर 132 किमी दूर है। आरटीडीसी यहाँ के वन कार्यालय से पर्यटन स्थलों के दो टूर प्रतिदिन संचालित करता है। पर्यटन कार्यालय के माध्यम से प्रशिक्षित गाइड भी उपलब्ध रहते हैं। पर्यटन कार्यालय प्रोजेक्ट टाइगर कार्यालय में है। ठहरने के लिए सवाई माधोपुर में अनेक होटल हैं।

657. सूरतगढ़ यह सिंधु घाटी सभ्यता का एक केंद्र था।

658. हनुमानगढ़ यह शहर मोहनजोदाड़ो से 400 मील दूर है और सिंधु घाटी सभ्यता का एक स्थल था।

659. हल्दी घाटी—ऐतिहासिक महत्त्व हल्दी घाटी में 1576 ई० में मेवाड़ के महाराणा प्रताप और अकबर की ओर से मान सिंह के मध्य एक ऐतिहासिक युद्ध हुआ था, जिसमें महाराणा प्रताप की हार हुई थी। इस पराजय के बाद महाराणा प्रताप अरावली पहाड़ियों में चले गए, फिर भी उसने मुगलों के विरुद्ध अपनी लड़ाई 1597 में अपनी मृत्यु तक जारी रखी।
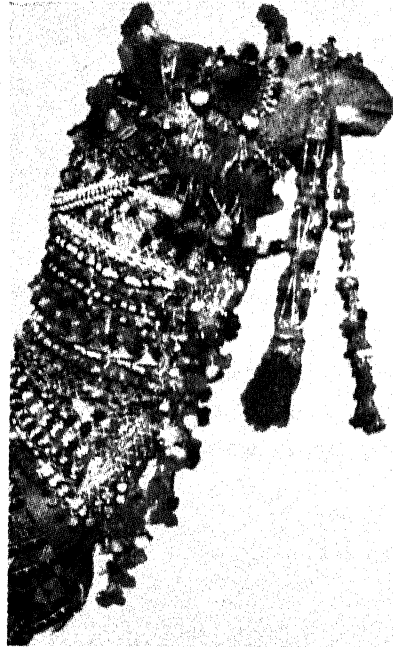
पुष्कर के मेले में सजा एक ऊँट

❖❖❖

राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली

ऐतिहासिक विवरण

राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली का ऐतिहासिक विवरण "दिल्ली" शहर के अंतर्गत विस्तृत रूप से दिया गया है। दिल्ली के दक्षिण में स्थित नई दिल्ली स्वतंत्रता के बाद देश की राजधानी बनी। 1956 में दिल्ली को संघ शासित क्षेत्र बनाया गया तथा 1991 में संविधान के 69वें संशोधन द्वारा यहाँ विधान सभा की व्यवस्था करके इसका नाम राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली रख दिया गया।

दिल्ली का क्षेत्रफल 1483 वर्ग किमी है। क्षेत्र की जनसंख्या का घनत्व 6352 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी है, जो देश में सबसे अधिक है। देश की जनसंख्या के औसत घनत्व 267 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी की तुलना में यह उससे 24 गुणा अधिक है। क्षेत्र की साक्षरता दर 75% है।

उत्सव

दिल्ली में भारत के सभी जगहों के लोग रहने के कारण यहाँ देश के लगभग सभी प्रमुख त्योहार धूम-धाम से मनाए जाते हैं। फिर भी फूलवालों की सैर, अंतर्राष्ट्रीय पतंगबाजी, उद्यान पर्यटन तथा आम उत्सव यहाँ के विशिष्ट त्योहार हैं।

फूलवालों की सैर हर वर्ष अक्तूबर मास में आयोजित की जाती है। इसमें भिन्न-भिन्न राज्यों से भिन्न-भिन्न धर्मों के लोग भाग लेते हैं। यह उत्सव सांप्रदायिक एकता का प्रतीक है और दिल्ली में मुगल बादशाह अकबर द्वितीय (1806-37) के शासन काल के दौरान 1812 से ही मनाया जाता रहा है। उत्सव के दौरान कुछ विशिष्ट व्यक्तियों को विशिष्ट पंखे भेंट किए जाते हैं। मेले के दौरान महरौली में ख्वाजा बख्तियार काकी की दरगाह पर फूलों की चादर चढ़ाई जाती है। दूसरे दिन योगमाया जी के मंदिर में भी फूलों की चादर भेंट की जाती है। मेले के दौरान ऐसे सांस्कृतिक कार्यक्रम होते हैं, जिनसे सांप्रदायिक सदभाव बढ़े। मेले का आयोजन अंजुमन शेर-ए-गुल फरोशां द्वारा किया जाता है। अंग्रेजों ने इसे अपने लिए घातक समझते हुए इसे 1942 में भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान बंद कर दिया था। इसकी महत्ता को आँकते हुए जवाहर लाल नेहरू के

प्रयत्नों से 1962 में यह फिर आरंभ किया गया। इस मेले के शुरुआत की कहानी इस प्रकार है। एक बार अकबर द्वितीय के पुत्र मिर्जा जहाँगीर ने लाल किले में सर आर्चीबाल्ड सेटोन पर गोली चला दी। अंग्रेजों ने उसे सजा के रूप में इलाहाबाद भेज दिया। इस पर अकबर शाह की बेगम मुमताज महल ने मन्नत मानी कि वह पुत्र की वापसी पर महरौली में ख्वाजा बख्तियार काकी की दरगाह पर फूलों की चादर चढ़ाएगी। पुत्र की वापसी पर बेगम ने अपनी मन्नत पूरी की। यह जश्न सात-आठ दिनों तक चलता रहा। जश्न में हिन्दू-मुसलमान सभी ने बढ़-चढ़कर भाग लिया। हिन्दुओं ने ख्वाजा बख्तियार काकी की दरगाह पर और मुसलमानों ने पास ही के योगमाया मंदिर में फूलों की चादरें चढ़ाईं। तभी से यह त्योहार हर वर्ष पूरे जोश-खरोश से मनाया जाता है। आजकल यह सैर उप राज्यपाल के आवास से आरंभ होकर महरौली में ख्वाजा बख्तियार काकी की दरगाह पर आठ दिन बाद पहुँचती है। सैर में लाखों लोग भाग लेते हैं। सैर में भाग लेने के लिए भिन्न-भिन्न राज्यों से सांस्कृतिक टोलियाँ और फूलों के पंखे भेजे जाते हैं, जिस कारण यह सैर अब एक सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक समारोह बन गई है। अक्तूबर मास में ही पैगम्बर मोहम्मद के पोते इमाम हुसैन की याद में मुहर्रम के दिन ताजिया जुलूस निकाला जाता है। इमाम हुसैन इराक में कर्बला नामक स्थान पर अत्याचारी ताकतों के विरुद्ध लड़ता हुआ मारा गया था। मुस्लिम संत हजरत निजामुद्दीन औलिया की दरगाह पर प्रति वर्ष उर्स मनाया जाता है। लोगों का विश्वास है कि इस दरगाह के पवित्र तालाब का पानी पीने से व्याधियाँ दूर होती हैं। इसाई धर्मावलंबी महरौली में ईस्टर मेला पर्व मनाते हैं। इस पर्व के दौरान वे महरौली में जुलूस निकालते हैं और उसके बाद महरौली के सेंट जोन चर्च में प्रार्थना करते हैं।

नृत्य

दिल्ली में पूरे भारत के लोग रहने के कारण देश के सभी शास्त्रीय नृत्यों के अलावा बहुत से लोक नृत्य भी होते रहते हैं।

660. इंद्रप्रस्थ यह स्थान आधुनिक दिल्ली में यमुना नदी के पश्चिमी किनारे पर दिल्ली गेट के आस-पास का इलाका है। ऐसा माना जाता है कि यह स्थल धृतराष्ट्र द्वारा युधिष्ठिर को दिए जाने के बाद युधिष्ठिर के आदेश से मय दानव ने इस शहर का निर्माण खांडव वन को काटकर किया था। युधिष्ठिर ने इसे अपनी राजधानी बनाकर यहीं से राज्य किया था। इंद्रप्रस्थ इलाका आजकल के इंदरपत गाँव के आस-पास का क्षेत्र हुआ करता था। इसके राजधानी के रूप में विकसित होने का यह पहला अवसर था। इसके बाद पांडवों के वंशज

हस्तिनापुर चले गए, जहाँ से अर्जुन के पोते परीक्षित ने भी राज्य किया। फिर वे कौशांबी चले गए और इंद्रप्रस्थ इंदरपत गाँव बन गया। प्राचीन काल में यह व्यापार का एक प्रमुख केंद्र था।

661. दिल्ली प्राचीन काल में यह शहर केवल यमुना नदी के पश्चिमी किनारे पर स्थित था। आजकल इस नदी के पूर्वी किनारे पर भी भारी मात्रा में आबादी हो गई है। पूर्वी किनारे के इसके इलाके को यमुना पार का इलाका कहा जाता है।

राजधानी के रूप में दिल्ली प्राचीन काल से ही राज्य शक्ति का केंद्र रही है। इसका ऐतिहासिक महत्त्व युगों-युगों से समान रूप से बना रहा है। यह एक बहुत प्राचीन नगर है। महाभारत काल में दिल्ली पांडवों की राजधानी थी। उस समय इसे इंद्रप्रस्थ कहा जाता था।

हजारों वर्ष बाद राजस्थान के तोमर राजपूतों ने इसे लालकोट नामक स्थान पर 993 ई० में पुनः विकसित कर दिया। तब इसे अनंगपाल ने बसाया था और उसने ही इसे दिल्ली नाम दिया था। तब कुतुब मीनार के पास खड़ा चंद्रगुप्त का लोह स्तंभ उसके महल के आँगन में हुआ करता था। अनंगपाल के बाद कन्नौज के गहड़वाल शासकों ने इस पर अधिकार जमाया और इसके बाद अजमेर के चौहान राजा अर्णोराज तथा बाद में विग्रहराज बीसलदेव चतुर्थ (1150-64 ई०) ने इसे 1164 ई० में कन्नौज के राजा से छीन लिया। बीसलदेव के बाद पृथ्वीराज तृतीय (पृथ्वीराज चौहान) द्वारा 1177 से 1192 तक दिल्ली पर अधिकार जमाने का वर्णन मिलता है। पृथ्वीराज को राय पिथौरा के नाम से भी जाना जाता है। उसने यहाँ किला राय पिथौरा बनवाया।

मुहम्मद गौरी ने 1192 में पृथ्वीराज पर विजय के पश्चात् दिल्ली का सूबेदार कुतुबुद्दीन ऐबक और अजमेर का सूबेदार पृथ्वीराज चौहान के पुत्र गोविंद को बनाया। ऐबक ने दिल्ली के तोमर राजा को निकालकर इसे अपने राज्य का केंद्र बनाया। 1206 में मुहम्मद गौरी की मृत्यु के बाद कुतुबुद्दीन ऐबक लाहौर में स्वतंत्र शासक बन बैठा। उसने 1210 तक लाहौर से ही दिल्ली पर राज्य किया। 1211 से 1236 तक उसके दामाद शमसुद्दीन अल्तमश ने दिल्ली पर राज्य किया। उसने अपनी राजधानी लाहौर से दिल्ली बदल ली। उसके बाद एक वर्ष तक रुकनुद्दीन शासक बना। 1236 में दिल्ली की गद्दी पर बैठने वाली प्रथम और एकमात्र मुस्लिम महिला रजिया बेगम ने भी इसे 1240 ई० तक अपनी राजधानी बनाया। बाद के शासकों में बहरामशाह (1240-42) और मसूद (1242-46) ने दिल्ली पर राज्य किया। 1246 से 1266 तक दिल्ली की बागडोर

नासिरुद्दीन के हाथों में रही। बाद में बलबन (1266-86) तथा उसका पौत्र केकुबाद दिल्ली के सुलतान रहे।

केकुबाद के बाद 1290 ई० में गुलाम वंश का अंत हो गया और जलालुद्दीन खिलजी ने 1290 में दिल्ली की बागडौर संभाली। अलाउद्दीन खिलजी ने सीरी फोर्ट बनाकर उसे 1296 से 1316 ई० तक अपनी राजधानी बनाया। उसने यहाँ एक बहुत बड़ा जलाशय बनवाया था, जिसे होज खास कहा जाता था। अलाउद्दीन खिलजी के बाद शाहबुद्दीन खिलजी, मुबारक और खुसरो ने 1320 तक दिल्ली का शासन संभाला। खुसरो के एक सरदार गाजी मलिक ने बगावत कर दी। खुसरो मारा गया और खिलजी वंश का अंत हो गया।

1320 में गाजी मलिक ग्यासुद्दीन तुगलक के नाम से दिल्ली का सुल्तान बना और उसने यहाँ तुगलक वंश के शासन की नींव डाली। 1325 में मुहम्मद-बिन-तुगलक यहाँ का सुल्तान बना। उसने 1327 से 1330 तक अपनी राजधानी दिल्ली से देवगिरि तथा पुनः 1330 से 1351 तक देवगिरि से दिल्ली बदल ली। इस दौरान मंगोल लूटपाट मचाते हुए तरमाँशीरी खाँ के नेतृत्व में 1328 में दिल्ली तक आ पहुँचे। मुहम्मद तुगलक ने उन्हें बहुत सा धन देकर वापस भेजा। उसने यहाँ जहाँपनाह शहर बसाया, जो किला राय पिथौरा तथा सीरी फोर्ट के रूप में है। 1351 में फिरोजशाह तुगलक सुल्तान बना। उसने 1354 में फिरोजाबाद (जिसे आजकल
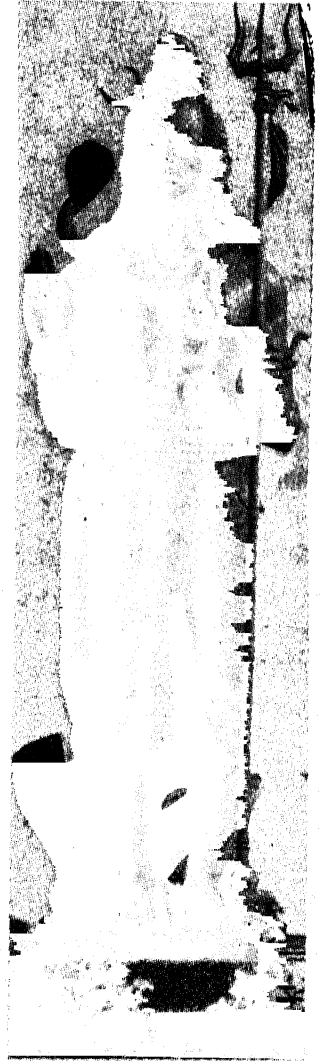
मंगल महादेव, बिरला कानन, दिल्ली

फिरोजशाह कोटला कहते हैं) बसाकर 1388 तक यहीं से राज्य किया। फिरोजशाह तुगलक की मृत्यु के बाद उसका पोता ग्यासुद्दीन (1388-92), उसका दूसरा पोता अबू बकर (आठ महीनों तक) तथा नासिरुद्दीन के नाम से मुहम्मद, हुमायूँ (छह महीनों के लिए) और महमूद शासक बने। महमूद के शासन काल में तैमूर लंग ने 1398 ई० में दिल्ली पर आक्रमण करके यहाँ के शासन को छिन्न-भिन्न कर दिया। महमूद और मल्लू इकबाल ने उससे 17 दिसंबर, 1398 को जमकर लोहा लिया, परंतु वे हार गए। महमूद शाह गुजरात भाग गया। तैमूरलंग दिल्ली में 15 दिनों तक रहा। उसके जाने के बाद 1399 में नुसरत शाह ने दिल्ली पर कब्जा करने की कोशिश की, परंतु महमूद शाह के सेनानायक मल्लू इकबाल ने उसे हरा दिया। 1401 में मल्लू इकबाल ने महमूद शाह को दिल्ली वापस आने का निमंत्रण दिया। महमूद शाह उस समय गुजरात के बाद धार में शरण लिए हुए था। महमूद दिल्ली वापस आ गया। फरवरी, 1412 में उसका कैथल में स्वर्गवास हो गया।

महमूदशाह की मृत्यु के बाद दौलत खाँ लोदी दिल्ली का शासक बना, परंतु 1414 में खिज्र खाँ ने उसे हराकर हिसार में कैद कर लिया। खिज्र खाँ के बाद उसका बेटा मुबारक शाह तथा पोता मुहम्मद दिल्ली के शासक बने। लाहौर और सरहिंद के राज्यपाल बहलोल लोदी ने मुहम्मद के काल में दिल्ली पर कब्जा करने की कोशिश क़ी, परंतु वह सफल न हो सका। मुहम्मद के बाद उसका बेटा 1445 में अलाउद्दीन आजम शाह के नाम से शासक बना। वह कमजोर राजा होने के कारण 1451 में बहलोल लोदी के काल में जौनपुर के शासक महमूद शाह शर्की ने दिल्ली पर कब्जा करने की कोशिश की, परंतु वह सफल न हो सका। 1489 में सिकंदर लोदी और 1517 में इब्राहिम लोदी ने दिल्ली का शासन संभाला। इब्राहिम लोदी की उसके लाहौर के सूबेदार दौलत खाँ लोदी से अनबन हो गई। दौलत खाँ लोदी ने बाबर को दिल्ली पर आक्रमण करने के लिए आमंत्रित किया।

बाबर ने इब्राहिम लोदी को 21 अप्रैल, 1526 को पानीपत की पहली लड़ाई में हराकर दिल्ली पर अधिकार कर लिया। 27 अप्रैल, 1526 ई० को बाबर ने दिल्ली में अपने नाम का खुतबा पढ़वाया, परंतु 1527 तक उसने अपनी राजधानी लाहौर ही बनाए रखी और 1527 में आगरा बदल ली।

1540 ई० में शेरशाह सूरी ने बाबर के पुत्र हुमायूँ से दिल्ली छीन ली। उसने यहाँ बाबर द्वारा शुरू करवाए गए "पुराना किला" को पूरा कराकर उसे 1545 ई० तक और बाद में उसके छोटे पुत्र जलाल उर्फ इस्लामशाह (1545-53), बड़े पुत्र फिरोज (1553, केवल तीन दिन) और मुबारिज खाँ उर्फ मुहम्मद आदिल

(1553-55) ने अपनी राजधानी बनाया। मुहम्मद आदिल ने एक हिंदू व्यक्ति हेमू को अपना मुख्य मंत्री बना लिया था, जिससे चिढ़कर शेरशाह सूरी के दो भतीजों इब्राहिम सूर और सिकंदर सूर ने विद्रोह कर दिया। इब्राहिम ने आगरा और दिल्ली तथा सिकंदर ने पंजाब पर कब्जा कर लिया। आदिल चुनार चला गया।

1555 में हुमायूँ ने सिकंदर सूर को हराकर पहले लाहौर और फिर दिल्ली पर कब्जा कर लिया। परंतु हेमू को यह सब अच्छा नहीं लगा। इसी दौरान 1556 में हुमायूँ की मृत्यु हो गई और उसका पुत्र अकबर 14 वर्ष की उम्र में दिल्ली का सम्राट बन गया। हेमू ने एक बड़ी सेना एकत्रित की और दिल्ली पर आक्रमण करके मुगल सूबेदार टार्डी बेग को दिल्ली से भगाकर इस पर कब्जा कर लिया। शीघ्र ही अकबर के सेनापति बैरम खाँ ने हेमू को 1556 में पानीपत की दूसरी लड़ाई में हराने के बाद दिल्ली पर पुनः मुगल शासन स्थापित कर दिया, परंतु अकबर ने भी बाबर और हुमायूँ की तरह अपनी राजधानी आगरा ही बनाई। इसके बाद दिल्ली को राजधानी बनने का गौरव 1584 ई० में ही मिला, जब अकबर ने अपनी राजधानी फतेहपुर सीकरी से दिल्ली बदल ली थी। उसने 1605 ई० तक वहीं से राज्य किया। इसके बाद 1605 से 1639 तक मुगल शासकों (जहाँगीर और शाहजहाँ) ने राजधानी दिल्ली से आगरा बदल ली। 1639 में शाहजहाँ ने दिल्ली में शाहजहाँनाबाद बनाकर उसे अपनी राजधानी बनाया। आजकल इस इलाके को पुरानी दिल्ली कहते हैं, जो कश्मीरी गेट, लाहौरी गेट, अजमेरी गेट, दिल्ली गेट और लाल किले के मध्य का क्षेत्र है। 1658 में औरंगजेब दिल्ली का शासक बना। उसने 1707 तक दिल्ली से राज्य किया।

उसके बाद दिल्ली पर बहादुरशाह (1707-12), जहाँदारशाह (1712-13) और फरुखसियार (1713-19) ने शासन किया। 1719 में मराठा पेशवा बालाजी विश्वनाथ ने सैयद भाइयों में से एक हुसैन अली के साथ एक संधि की, जिसका मुगल सम्राट मुहम्मद शाह ने समर्थन किया। संधि के अनुसार बालाजी को दक्खन से चौथ (कुल आय का चौथा हिस्सा) तथा सरदेशमुखी (कुल उपज का दसवाँ हिस्सा) वसूलने का अधिकार प्राप्त हो जाने के साथ-साथ मुगलों से मराठा शाही परिवार को मुक्त कराने में भी सफलता मिल गई। बदले में उसे दक्खन में शांति बनाए रखने, शाही सेवा के लिए 15000 घुड़सवार रखने और 10 लाख रु. वार्षिक खिराज देने की जिम्मेदारी सौंपी गई। 1719 में बालाजी विश्वनाथ 16000 सैनिकों के साथ हुसैन अली के साथ दिल्ली आया। सैयद भाइयों ने बालाजी की सहायता से फरुखसियार को मरवाकर रफी-उद्-दाराजात (1719), रफी-उद्-दौला (शाहजहाँ द्वितीय के नाम से, 1719) और मुहम्मदशाह बंगश (1719-48) को एक-एक करके दिल्ली का सम्राट बनाया। बाद में 27 मार्च,

1727 को मराठा पेशवा बाजीराव प्रथम ने दिल्ली के सम्राट मुहम्मदशाह बंगश पर आक्रमण करके दिल्ली को अपने कब्जे में कर लिया था। परंतु उसने न तो इसे अपने राज्य मे मिलाया और न ही यहाँ लूट-पाट की, क्योंकि उस समय दिल्ली में कोई हिंदू त्यौहार (संभवतः होली) मनाया जा रहा था वैसे भी वह केवल मुगल सम्राट पर अपना दबदबा कायम रखना चाहता था। दिल्ली में तीन दिन रहने के बाद वह रेवाड़ी की ओर चला गया। 1739 में नादिरशाह ने दिल्ली पर आक्रमण किया। उसने मुहम्मदशाह बंगश को बंदी बनाकर उस वर्ष दिल्ली में मार्च-अप्रैल में 57 दिनों तक भारी लूट-पाट की। वह अपने साथ 70 करोड़ रु. का माल ले गया, जिसमें कोहिनूर हीरा तथा शाहजहाँ द्वारा उस समय एक करोड़ रु. की लागत से बनवाया गया तख्ते ताउस भी शामिल थे। 1748 में मुहम्मदशाह की मृत्यु हो गई। उसकी मृत्यु के बाद अहमदशाह (1748-54) सम्राट बना। वह एक अयोग्य शासक था। उसने ईरानी दल के नेता सफदरजंग (शिया) को उसके पद से हटाकर तूरानी दल के भूतपूर्व वजीर के पुत्र इंतिजामुद्दौला को वजीर और हैदराबाद के आसफ निजाम-उल-मुल्क के पोते इमाद-उल-मुल्क को मीर बख्शी बना दिया। सफदरजंग ने एक हिजड़े को कामबख्श का बेटा कहकर उसे बादशाह घोषित कर दिया। फलस्वरूप एक ओर अहमदशाह और मराठों तथा दूसरी ओर सफदरजंग तथा उसके जाट मित्रों के मध्य युद्ध हुआ, जिसमें सफदरजंग हार गया। वह हारकर अवध चला गया, जहाँ उसने एक स्वतंत्र शासन की स्थापना की।

मोती मस्जिद, दिल्ली

कुछ ही दिनों बाद अहमदशाह और इमाद-उल-मुल्क में मतभेद हो गया। उसने मराठों की सहायता से अहमदशाह को हराकर अपने लिए वजारत हासिल कर ली। 1754 में बादशाह को गद्दी से उतारकर उसकी आँखें फोड़ दी गईं। जहाँदारशाह का पुत्र मुहम्मद अजीजुद्दौला, आलमगीर द्वितीय के नाम से बादशाह बना। उसके काल में अहमदशाह अब्दाली ने 1757 में दिल्ली पर

आक्रमण करके यहाँ नजीबुद्दौला को अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया। परंतु रघुनाथराव, मल्हारराव होलकर और सिंधिया की सम्मिलित सेना ने नजीबुद्दौला को हराकर उसे दिल्ली से भगा दिया और उसकी जगह इमाद-उल-मुल्क को वजीर बना दिया। आलमगीर द्वितीय ने अपना अधिकांश समय जेल में ही बिताया था। उसे प्रशासन का कोई अनुभव न था। इसलिए वह अपने वजीर इमाद-उल-मुल्क के हाथों में कठपुतली बना रहा। इमाद-उल-मुल्क बहुत अत्याचारी था। उसने सारा पैसा अपने नियंत्रण में कर लिया और राजकुमार अली गौहर को तंग किया। अंत में उसने 1759 ई० में सम्राट की हत्या करवाकर काम बख्श के पोते मुही-उल-मिलात को शाहजहाँ तृतीय के नाम से सम्राट घोषित कर दिया। उस समय अली गौहर बिहार में था। उसने भी वहीं अपने आपको शाह आलम द्वितीय के नाम से दिल्ली का सम्राट घोषित कर लिया। परंतु दिल्ली की राजनैतिक स्थिति को देखते हुए वह 1759 के बाद दिल्ली नहीं आया। सदाशिव राव भाऊ ने 3 अगस्त, 1760 को दिल्ली पर पुनः कब्जा कर लिया। 29 अक्तूबर, 1760 को वह अब्दाली से लड़ने के लिए पानीपत की ओर रवाना हो गया। 14 जनवरी, 1761 को पानीपत की तीसरी लड़ाई में विजय के बाद अहमदशाह अब्दाली का दिल्ली पर कब्जा हो गया। वह शाह आलम को बादशाह, अवध के नवाब शुजाउद्दौला को उसका वजीर तथा नजीमुद्दौला को प्रधान सेनापति बनाकर चला गया। परंतु शाह आलम दिल्ली नहीं आया। वह पूर्व में ही रहने लगा। इस दौरान अंग्रेजों ने उसे 22 अक्तूबर, 1764 को बक्सर के युद्ध में हरा दिया था। उसने युद्ध में हारने के बाद अंग्रेजों को बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दीवानी प्रदान की। बदले में अंग्रेजों ने उसे इलाहाबाद और कड़ा के जिले तथा 26 लाख रु. वार्षिक पेंशन दी। इस प्रकार वह 1771 तक अंग्रेजों की शरण में रहा। 1771 में सिंधिया के बुलावे पर शाह आलम दिल्ली आ गया। सिंधिया ने उसे दिल्ली का बादशाह बना दिया। बदले में मुगल सम्राट ने उसे 40 लाख रु. नकद तथा इलाहाबाद और कड़ा के उपजाऊ इलाके देने के साथ-साथ वजीर के नीचे के पदों पर मराठों की सम्मति लेने की सहमति दी। इस प्रकार पानीपत के तीसरे युद्ध में खोए दिल्ली पर अपने वर्चस्व को मराठों ने पुनः लौटा लिया। शाह आलम दिल्ली तो आ गया, परंतु उसका शासन दिल्ली और आगरा जिलों तक ही सीमित था। न ही उसके पास कोई अधिकार था। उसके एक सहायक शुजाउद्दौला की मृत्यु सन् 1775 में तथा दूसरे सहायक नजफ खाँ की मृत्यु 1782 में हो गई। 1783 में उसने महादजी सिंधिया को दिल्ली आकर इसका शासन-भार संभालने का निमंत्रण दिया। फलस्वरूप महादजी दिल्ली की ओर चल पड़ा। सम्राट ने उसका 14 नवंबर, 1784 को फतेहपुर सीकरी के निकट स्वागत किया। सम्राट

ने उसे वकील-ए-मुतलक ओहदा देने के साथ-साथ उसकी सेना के रख-रखाव के लिए आगरा और दिल्ली के क्षेत्र दे दिए। सम्राट के अधिकार में उस समय ये ही क्षेत्र थे। सम्राट ने बदले में 65 हजार रु. मासिक पेंशन लेनी स्वीकार की। वकील-ए-मुतल्क के रूप में महादजी शाही सेनाओं का सर्वोच्च सेनापति बन गया। इस व्यवस्था से शाह आलम के जागीरदार नाराज हो गए। उन्होंने पठान सरदार गुलाम कादिर से मिलकर दिल्ली पर चढ़ाई कर दी तथा 1788 ई० में शाह आलम को गद्दी से उतारकर उसकी आँखें फोड़ दीं। तब शाह आलम ने महादजी सिंधिया से सहायता की माँग की। जवाब में महादजी सिंधिया ने गुलाम कादिर पर चढ़ाई की और उसे दिल्ली से भगा दिया। महादजी दिल्ली से 12 मार्च, 1792 को पूना वापस चला गया, जहाँ 1794 में उसकी मृत्यु हो गई। 1803 में जब लार्ड वेल्जली ने उज्जैन के सिंधिया और बरार के होल्कर शासकों की इच्छा के विरुद्ध बाजीराव द्वितीय को पूना में पेशवा की गद्दी पर बैठा दिया, तो उनमें युद्ध आरंभ हो गया। नागपुर के भौंसले ने भी सिंधिया का समर्थन किया। अंग्रेजों ने सिंधिया और भौंसले दोनों को कई स्थानों पर हरा दिया। तब दोनों ने उनसे संधि की। सिंधिया ने सुर्जी अर्जुनगाँव की संधि के अनुसार अंग्रेजों को दिल्ली और आगरा के वे प्रदेश दे दिए, जो शाह आलम ने 1784 में महादजी सिंधिया को दिए थे। फलस्वरूप 1803 में लार्ड लेक के नेतृत्व में दिल्ली पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया। लार्ड लेक ने मुगल सम्राट की रक्षा के भार के अतिरिक्त उसे महादजी सिंधिया द्वारा दी जा रही 65000 रु. मासिक पेंशन की जगह केवल 90000 रु. वार्षिक पेंशन देने की जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली। 1803 के बाद बरार के भौंसले और भरतपुर के राजा ने मिलकर दिल्ली पर आक्रमण किया था, परंतु वे अंग्रेजों से हार गए। 1806 में शाह आलम की मृत्यु हो गई। उसके बाद अंग्रेजों ने उसके पुत्र अकबर द्वितीय (1806-37) और उसके बाद बहादुरशाह द्वितीय (1837-57) को गद्दी पर बैठाया। ये दोनों शासक ब्रिटिश सरकार के पेंशनधारी होने के कारण नाममात्र के ही राजा था। इनका साम्राज्य लाल किले के अन्दर-अन्दर ही था।

प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के दौरान भारतीय सैनिकों की तीन टुकड़ियाँ 11 मई, 1857 को मेरठ से दिल्ली पहुँच गई और उन्होंने दिल्ली पर कब्जा करके बहादुरशाह द्वितीय को भारत का सम्राट घोषित कर दिया। परंतु अंग्रेजों ने 21 सितंबर, 1857 को ही दिल्ली पर फिर कब्जा कर लिया। बहादुरशाह के पुत्र को हडसन ने मार दिया। बहादुरशाह, बेगम जीनत महल तथा जवान बख्त को पकड़कर भेज दिया गया, जहाँ 1862 में बहादुरशाह की मृत्यु हो गई। 1876 में रानी विक्टोरिया ने केसर-ए-हिंद (भारत की साम्राज्ञी) की पदवी धारण की थी।

इस अवसर पर लार्ड लिटन ने दिल्ली में एक बड़ा दरबार किया। तब सभी भारतीय रियासतों के शासकों से महारानी के प्रति सत्यनिष्ठा की शपथ दिलाई गई थी।

1911 में अंग्रेजों ने कलकत्ता के बदले दिल्ली के दक्षिण में नई दिल्ली को अपनी राजधानी बनाया। 1911 में लार्ड हार्डिंग के काल में यहाँ इंग्लैंड के राजा की ताजपोशी हुई। प्रथम असहयोग आंदोलन के दौरान यहाँ जामिया मिलिया विश्वविद्यालय की स्थापना हुई। 1924 में यहाँ केंद्रीय सभा में एक प्रस्ताव पारित किया गया, जिसमें भारत के संविधान निर्माण का मामला भी शामिल था। 1911 के बाद 1947 तक दिल्ली अंग्रेजों की राजधानी रही।

केबिनेट मिशन दिल्ली में 24 मार्च, 1946 को पहुँचा। इसने देश की विभिन्न राजनैतिक पार्टियों से मंत्रणा की। परंतु देश की दो प्रमुख राजनैतिक पार्टियों कांग्रेस और मुस्लिम लीग में कोई सहमति न हो सकने के कारण मिशन ने 16 मई, 1946 को अपनी ही योजना घोषित कर दी। उसने पाकिस्तान की माँग को ठुकरा दिया। मिशन ने एक कमजोर भारतीय संघ की योजना बनाई थी। इसने संविधान सभा का गठन करने और सभी भारतीय राज्यों के प्रतिनिधियों की अंतरिम सरकार बनाने का प्रस्ताव रखा। संयोगवश मिशन के प्रस्ताव कांग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों ने स्वीकार कर लिए। फलस्वरूप संविधान सभा के लिए चुनाव हुए, जिनमें कांग्रेस और इस के सहयोगियों को 296 में से 211 सीटें मिल गईं। जिन्ना ने इसका घोर विरोध किया। 2 सितंबर, 1946 को जवाहर लाल नेहरू के नेतृत्व में एक अंतरिम सरकार बनी, जिसमें पटेल, राजेंद्र प्रसाद, सी आर, जॉन, मथाई, बलदेव सिंह, सर शेफत अहमद खाँ, जगजीवन राम, सैयद अली जहीर, भाभा, आसफ अली, शरत् चंद्र बोस आदि शामिल थे। आरंभ में मुस्लिम लीग ने अंतरिम सरकार का विरोध किया, परंतु बाद में जब कांग्रेस के तीन प्रतिनिधियों – शरत् चंद्र बोस, सैयद अली जहीर और शेफत अहमद खाँ ने अपनी सीटें मुस्लिम लीग के लिए खाली कर दीं, तो 26 अक्तूबर, 1946 को मुस्लिम लीग भी सरकार में शामिल हो गई। इसके बावजूद मुस्लिम लीग ने जवाहर लाल नेहरू को अंतरिम सरकार का मुखिया नहीं माना और इसके प्रतिनिधि कांग्रेस के प्रतिनिधियों से कभी एकमत नहीं हुए। 1947 को स्वतंत्रता के समय सत्ता-हस्तांतरण दिल्ली स्थित संसद भवन में ही हुआ था। उस समय महात्मा गाँधी पश्चिमी बंगाल में हिंदुओं और मुसलमानों के मध्य शांति स्थापित करने में लगे हुए थे। 30 जनवरी, 1948 को दिल्ली स्थित बिड़ला मंदिर में उनकी हत्या कर दी गई।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद लार्ड माउंटबेटन भारत के पहले गनर्वर जनरल

और जवाहर लाल नेहरू पहले प्रधान मंत्री बने। फील्ड मार्शल करियप्पा तीनों सेनाओं के सर्वोच्च सेनापति बने। बाद में सी. राजगोपालाचारी भारत के पहले भारतीय गवर्नर जनरल बने।

26 जनवरी, 1950 को भारत का अपना संविधान लागू हुआ और भारत एक समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष गणतंत्र देश बना। डॉ. राजेंद्र प्रसाद भारत के पहले राष्ट्रपति बने। उसके बाद नई दिल्ली आज तक स्वतंत्र भारत की राजधानी बनी हुई है। इस प्रकार दिल्ली को प्राचीन काल से ही राजधानी बनने का गौरव मिलने के कारण यह लगातार राजनीतिक गतिविधियों का केंद्र और कारण बनी रही।

वास्तुकला दिल्ली की वास्तुकला का इतिहास भी इसकी राजधानी बनने जितना ही पुराना है। यहाँ दर्शनीय स्मारकों में सबसे पहले कुतुबुद्दीन ऐबक (1206-10) ने 1197 में कुवत-उल-इस्लाम मस्जिद बनवाई। उसने अपने काल में कुतुब मीनार भी बनवानी आरंभ की, जिसे 1232 में अल्तमश ने पूरा कराया।

गुलाम वंश के दौरान ही दिल्ली में रजिया और बलबन के मकबरे बने। अलाउद्दीन ने यहाँ अलाई दरवाजा, सीरी का किला और हजार सैतून महल बनवाए और ग्यासुद्दीन तुगलक ने तुगलकाबाद का किला तथा तुगलकाबाद नगर बनवाए। फिरोजशाह तुगलक ने यहाँ यमुना नदी के किनारे कुश-ए-फिरोजशाह (आधुनिक फिरोजशाह कोटला) किला बनवाया। इस किले में उसने 1354 ई० में एक जामा मस्जिद बनवाई। वह यहाँ 1356 ई० में अंबाला में टोपड़ा नामक जगह पर अशोक द्वारा स्थापित स्तंभ लेख भी लाया। उसने उसे किले के अंदर पिरामिड के आकार की एक इमारत पर स्थापित कराया। फिरोजशाह तुगलक ने अपने कार्यों, विशेषकर सार्वजनिक कार्यों, का विवरण मस्जिद के अंदर बनी एक अष्टभुजाकार इमारत में खुदवाया। सम्राट आलमगीर द्वितीय का वध 1761 ई० में इसी मस्जिद में अथवा इसके आस-पास किया गया था। इस किले की बहुत सी सामग्री शाहजहाँ ने 1638 से 1648 के मध्य शाहजहाँनाबाद बनाने में प्रयोग कर ली थी। सैयद और लोदी काल में यहाँ लोदी गार्डन में मुहम्मदशाह का मकबरा, बड़ा गुंबद और सिकंदर लोदी का मकबरा बनाया गया। हुमायूँ ने यहाँ 1530 ई० में पुराना किला बनवाना शुरू किया, परंतु 1540 ई० में शेरशाह सूरी ने दिल्ली को हुमायूँ से छीन लिया और इस किले का निर्माण 1541 में पूरा कराकर उसमें किला-ए-कुहन मस्जिद तथा दीन-ए-पनाह महल बनवाए। यहाँ अब हर शाम ध्वनि एवं प्रकाश कार्यक्रम होता है। पुराने किले की शेर मंजिल की सीढ़ियों से गिरकर ही 1556 ई० में हुमायूँ की मृत्यु हुई थी। अकबर ने यहाँ

हुमायूँ का मकबरा बनवाया। शाहजहाँ ने यहाँ 1639 ई० में शाहजहाँनाबाद और उसमें लाल किला, जामा मस्जिद और तख्ते ताउस बनवाए। लाल किले का निर्माण 1648 ई० में और जामा मस्जिद का निर्माण उस्ताद खलील की निगरानी
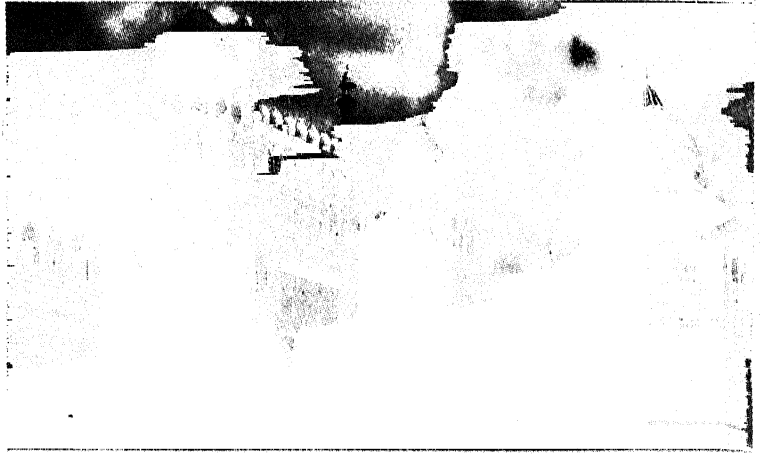
लाल किला, दिल्ली

में 1656 ई० में पूरा हुआ। लाल किला सुंदर आंतरिक साज-सज्जा तथा नक्काशी के लिए भी प्रसिद्ध है। इसमें दीवाने आम, दीवाने खास, मोती मस्जिद, रंग महल, मुमताज महल और शाही हमाम विशेष रूप से दर्शनीय हैं। यहाँ हर शाम "ध्वनि एवं प्रकाश" कार्यक्रम होता है। स्वतंत्रता दिवस को इसी किले की प्राचीर से भारत के प्रधान मंत्री तिरंगा झंडा फहराते हैं। लोदी का मकबरा, सफदरजंग का मकबरा और उसके सामने निजामुद्दीन औलिया का मकबरा और मालचा महल तथा तुगलकाबाद मध्य काल की वास्तुकला के यहाँ के कुछ और नमूने हैं। जय़पुर के राजा जयसिंह द्वितीय ने नक्षत्र मंडल व तारों की स्थिति जानने के लिए यहाँ 1724 ई० में जंतर-मंतर का निर्माण करवाया। उसने इसी प्रकार के जंतर-मंतर जयपुर, बनारस, उज्जैन व मथुरा में भी बनवाए। सफदरजंग का मकबरा अवध के दूसरे नवाब सफदरजंग की स्मृति में उसके पुत्र ने 1753-54 में बनवाया था। यह मुगल शासकों द्वारा दिल्ली में बनवाई गई अंतिम इमारत थी। दिल्ली को अपने 42 मी ऊँचे इंडिया गेट पर भी गर्व है, जो प्रथम विश्व युद्ध में मारे गए 90000 भारतीयों की याद में 1921 ई० में बनवाया
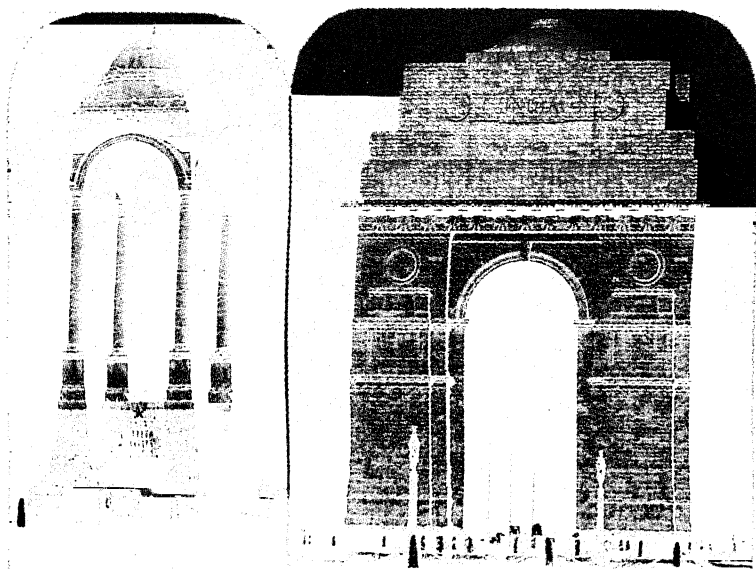
इंडिया गेट और इसकी छतरी, दिल्ली

गया था। इनमें से लगभग 36000 सैनिकों के नाम इस ऊँचे स्मारक पर खुदे हैं। यहाँ हमेशा जलने वाली अमर जवान ज्योति प्रथम बार श्रीमती इंदिरा गाँधी द्वारा 1971 में जलाई गई थी। संसद भवन के पास ही राष्ट्रपति भवन, नार्थ ब्लॉक तथा साउथ ब्लॉक परिसर की छटा देखते ही बनती है। अंग्रेजों ने इस परिसर को रायसीना पहाड़ी पर 1931 में पूरा किया था। इसका नक्शा अंग्रेज वास्तुविद् लुटयिन ने बनाया था। राष्ट्रपति भवन वायसरायगल लॉज के रूप में बनवाया गया था। यहीं पास में बोट क्लब पर तथा चिड़ियाघर के पास पुराने किले के बाहर नौकायन की सुविधा है।

व्यापार व्यापार की दृष्टि से भी दिल्ली एक मुख्य केंद्र रहा है। यह अन्य शहरों से सड़क मार्ग से अच्छी तरह जुड़ा हुआ था। चौदहवीं शताब्दी में यह पूर्वी मुस्लिम साम्राज्य का सबसे बड़ा शहर था। पुस्तकों, रेशम और विदेशी घोड़ों के व्यापार का यह एक मुख्य केंद्र था। आधुनिक काल में प्रगति मैदान, चाँदनी चौक, सदर बाजार, करोल बाग, लाजपत नगर तथा पहाड़गंज यहाँ के प्रमुख व्यापारिक केंद्र हैं। प्रगति मैदान में तरह-तरह की चीजों के राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय मेले

साल भर लगते रहते हैं, जिनमें 14 से 27 नवंबर तक लगने वाला भारत अंतर्राष्ट्रीय व्यापार मेला सबसे प्रमुख है।

पर्यटन स्थल दिल्ली में दर्शनीय स्थलों की भरमार है। देश की राजधानी होने के कारण यहाँ देश-विदेश के लोगों के दर्शन हो जाते हैं। यहाँ ऐतिहासिक, पुरातात्विक, धार्मिक, राजनैतिक तथा अन्य हर प्रकार के दर्शनीय स्थल हैं। कनॉट प्लेस यहाँ का हृदय-स्थल है, जो व्यावसायिक गतिविधियों के साथ-साथ शैलानियों का केंद्र भी है। इसका नक्शा अंग्रेज वास्तुकार राबर्ट टार रस्सेल ने बनाया था और इसका नामकरण ड्यूक आफ कनॉट के नाम पर हुआ था। यहाँ के दर्शनीय स्थलों को निम्नलिखित भागों में बाँटा जा सकता है :

पुरातात्विक स्थल पुरातात्विक दृष्टि से दिल्ली में लाल किला सबसे प्रमुख है। इसी के सामने जामा मस्जिद है। दिल्ली के पुराने किले में हड़प्पा संस्कृति के बाद की संस्कृति के अवशेष मिले हैं। इस संस्कृति के मिट्टी के बर्तन भूरे रंग के और चित्रित होते थे। मकान बनाने के लिए लोग कच्ची ईंट तथा सरकंडों का प्रयोग करते थे। वे घोड़े और ताँबे से परिचित थे। सभ्यता के अंतिम दिनों में लोहे का प्रयोग भी होने लगा था। वे चावल के अतिरिक्त गाय तथा हरिण का माँस भी खाते थे। दिल्ली के अन्य पुरातात्विक स्थलों में वे सभी स्थल आते हैं, जिनका वर्णन 'वास्तुकला' उपशीर्ष के अंतर्गत पहले किया जा चुका है।

धार्मिक स्थल धार्मिक महत्त्व के दर्शनीय स्थलों के हिसाब से भी दिल्ली किसी प्रकार पीछे नहीं है। इनमें ऊपर बताए गए जामा मस्जिद, सफदरजंग का मकबरा, लोदी का मकबरा, निजामुद्दीन औलिया का मकबरा आदि तो हैं ही, मुगल काल के बाद बने अनेक धार्मिक स्थल भी हैं, जहाँ जनता भारी संख्या में उमड़ती है। इनमें सबसे पुराने स्थलों में गुरुद्वारा शीश गंज और बिड़ला मंदिर हैं। गुरुद्वारा शीश गंज चाँदनी चौक में है। औरंगजेब ने गुरु तेग बहादुर को यहीं फाँसी दी थी। दिल्ली के अन्य प्रमुख गुरुद्वारों में गुरुद्वारा रकाब गंज, गुरुद्वारा मोती बाग तथा गुरुद्वारा मजनूँ का टीला के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। मंदिरों तथा गिरजाघरों में यहाँ बिड़ला घराना द्वारा 1938 में उड़ीसा शैली में निर्मित बिड़ला मंदिर बहाई समाज द्वारा कालका पहाड़ी पर 1987 में निर्मित लोटस टेंपल, राधास्वामी मत के अनुयायियों द्वारा छतरपुर में निर्मित राधास्वामी सत्संग स्थल, जैन मंदिर, दादाबाड़ी, योगमाया मंदिर, सिरडी साईं बाबा का मंदिर, अहिंसा स्थल तथा श्री आद्या कात्यायनी शक्तिपीठ मंदिर ट्रस्ट द्वारा निर्मित छतरपुर मंदिर (दुर्गामंदिर, शिव शक्ति मंदिर और राम दरबार); कालका

मंदिर, चाँदनी चौक में दिगंबर जैन मंदिर व गौरीशंकर मंदिर, कनॉट प्लेस में हनुमान मंदिर, राष्ट्रपति भवन के पास तथा आर के पुरम व संसद मार्ग के गिरजाघर, कुतुब मीनार के पास बलबन का मकबरा, दिगंबर जैन मंदिर, निजामुद्दीन रेलवे स्टेशन के पास हुमायूँ का मकबरा (जिसका निर्माण उसकी रानी हाजी बेगम ने करवाया था), संसद मार्ग पर फ्री चर्च, कश्मीरी गेट पर सेंट जेम्स चर्च, दिल्ली-गुड़गाँव मार्ग पर बिड़ला घराना द्वारा हाल ही में निर्मित मंगल महादेव की 108 फुट ऊँची मूर्ति तथा करोल बाग में हनुमान की विशालकाय मूर्ति प्रमुख हैं।

उद्यान दिल्ली उद्यानों और हरियाली का शहर भी है। प्राचीन काल में सरायों, बाजारों, झीलों और बागों के मामले में इसकी तुलना मिश्र से की जाती थी। आजकल भी यहाँ ऐसे अनेक उद्यान और झीलें हैं, जहाँ पर्यटकों की भीड़ लगी रहती है। इनमें लोदी शासकों द्वारा पंद्रहवीं शताब्दी में बनवाया गया लोदी गार्डन, भीकाजी कामा प्लेस के सामने ऐनडीऐमसी का म्यूजिकल फाउंटेन पार्क, बस स्टैंड के पास म्यूजिकल फाउंटेनयुक्त कुदासिया पार्क, मोरी गेट के पास डीडीए पार्क, अशोक होटल के पास नेहरू गार्डन, बुद्धा गार्डन, सफदरजंग एन्क्लेव डियर पार्क, रेस कोर्स, गोल्फ क्लब, इंडिया गेट लॉन, जामा मस्जिद के पास नेताजी सुभाष पार्क, राष्ट्रपति भवन परिसर स्थित मुगल गार्डन, चाणक्य पुरी में रोज गार्डन, कुतुब मीनार के पीछे डीडीए पार्क, राजघाट (महात्मा गाँधी का समाधि-स्थल), शांति वन (जवाहर लाल नेहरू का समाधि स्थल), विजय घाट (लाल बहादुर शास्त्री का समाधि-स्थल), शक्ति स्थल (इंदिरा गाँधी का समाधि स्थल), किसान घाट (चौ. चरण सिंह का समाधि स्थल), समता स्थल (चौ. जगजीवन राम का समाधि स्थल), वीर भूमि (राजीव गाँधी का समाधि स्थल), एकता स्थल (ज्ञानी जैल सिंह का समाधि स्थल), तालकटोरा गार्डन, धोला कुआँ झील एवं उपवन, जहाँगीरपुरी के सामने बाहरी रिंग रोड पर भलेश्वा झील, फिरोजशाह कोटला गार्डन, मानक भवन के पास सीएजी गार्डन तथा बिरला कानन (दिल्ली-गुड़गाँव मार्ग पर) प्रमुख हैं। लोदी गार्डन में हर रविवार दिल्ली के कलाकार इकट्ठे होकर अपना कौशल दिखाते हैं। इस गतिविधि को सृजन नाम दिया गया है। राष्ट्रपति भवन के मुगल गार्डन को देखने की अनुमति केवल 15 फरवरी से 15 मार्च तक ही दी जाती है। राष्ट्रपति भवन से इंडिया गेट तक बने राजपथ पर हर वर्ष 26 जनवरी को गणतंत्र दिवस मनाया जाता है, जिसके समारोह के दौरान देश में हुई प्रगति की झाँकियाँ निकलती हैं। इन उद्यानों के अलावा पूरीं दिल्ली एक उद्यान है। शहर के चौराहों, सरकारी व गैर-सरकारी

इमारतों, होटलों व सड़कों के दोनों ओर अच्छी प्रकार सजे हुए लॉन ही लॉन नजर आते हैं। इन लॉनों और उद्यानों के कारण दिल्ली शहर अन्य शहरों से अलग नजर आता है। यह शहर पेड़-पौधों से भरा होने के कारण किसी ऊँची इमारत से देखने पर पेड़ों से ढका हुआ लगता है।

संग्रहालय दिल्ली नाना प्रकार के संग्रहालयों का घर भी है। इनमें जनपथ पर स्थित राष्ट्रीय संग्रहालय प्रमुख है। इस संग्रहालय में विभिन्न सभ्यताओं की खुदाइयों में मिले अवशेषों तथा विभिन्न कालों की प्रस्तर शिल्प कला आदि को संजोया गया है। इसके अतिरिक्त लाल किला में पुरातात्विक एवं युद्ध स्मारक संग्रहालय, थापर हाउस में हस्त शिल्प संग्रहालय, बाबा खड़क सिंह मार्ग पर भिन्न-भिन्न राज्यों के एम्पोरियम, बाराखंबा रोड पर राष्ट्रीय प्राकृतिक इतिहास संग्रहालय, इंडिया गेट के पास आधुनिक कला दीर्घा, कनॉट प्लेस में जवाहर व्यापार भवन में हस्त-शिल्प संग्रहालय एवं विक्रय केंद्र, चाणक्य पुरी में राष्ट्रीय रेल संग्रहालय, तीन मूर्ति भवन में जवाहर लाल नेहरू संग्रहालय, दिल्ली गेट पर महात्मा गाँधी संग्रहालय, बहादुर शाह जफर मार्ग पर अंतर्राष्ट्रीय गुड़िया संग्रहालय (गुड़ियाघर) तथा जनपथ पर राष्ट्रीय अभिलेख संग्रहालय हैं। तीन मूर्ति भवन पहले भारत के प्रधान सेनापति जन. करियप्पा तथा बाद में प्रथम प्रधान मंत्री जवाहर लाल नेहरू का आवास था। इस भवन के सामने चौराहे पर तीन मूर्तियाँ हैं, जो सुभाष चंद्र बोस द्वारा बनाई गई आजाद हिंद फौज के तीन कमांडरों – शाह नवाज, ढिल्लों तथा सहगल के सम्मान में स्थापित की गई हैं। राष्ट्रीय अभिलेख संग्रहालय में पुराने महत्त्वपूर्ण दस्तावेज रखे गए हैं। इनमें लार्ड डलहौजी को पटियाला के महाराजा दलीप सिंह द्वारा कोहिनूर हीरा दिए जाने के बारे में 28 मार्च, 1849 को हुआ समझौता तथा सुल्तान फिरोजशाह तुगलक द्वारा अपने जागीरदार आलाखान को निशुल्क भूमि देने के लिए 19 अक्तूबर 1352 को दीवानी लिपि (फारसी लिपि का एक रूप) में बाँस तथा लकड़ी पर जारी किया गया परवाना प्रमुख हैं। यह परवाना भारत में उपलब्ध प्राचीनतम दस्तावेज है। इसकी काली स्याही की चमक अब तक बरकरार है। अन्य दस्तावेजों में हुमायूँ द्वारा 15 दिसंबर, 1539 को जारी किया गया फरमान, सम्राट अकबर द्वारा मथुरा के आस-पास के 35 मंदिरों के लिए दी गई भूमि हेतु 27 अगस्त, 1598 को खर्त-ए-दीवानी लिपि में जारी किया गया फरमान, गिलगिट पांडुलिपि (जो प्राचीनतम पांडुलिपि है और अपने में गुप्त लिपि में लिखी गई साधनाविधि कांड विनयपिटक संजोए हुए है), मालवा में चंदेरी का कानूनगो नियुक्त करने के लिए महारानी नूरजहाँ द्वारा 1625 ई० में जारी किया गया हुक्म

(जो सम्राट द्वारा जारी होने वाले आदेश 'फरमान' तथा राजकुमार द्वारा जारी होने वाले आदेश 'निशान' के बीच की हैसियत रखता था तथा जिससे यह पता चलता है कि वे प्रशासन में सक्रिय रुचि लेती थीं), मक्का तथा मदीना की मस्जिद के रख-रखाव के बारे में तुर्की के सुल्तान मोहम्मद द्वारा जारी किया गया फरमान तथा अकबर के आदेश से 1582 में संपन्न महाभारत का पारसी अनुवाद 'रज्मनामा' शामिल है। दिल्ली में पालम हवाई अड्डे के पास वायु सेना संग्रहालय; प्रगति मैदान में शिल्प संग्रहालय; 30 जनवरी मार्ग पर गाँधी स्मृति संग्रहालय; माता सुंदरी रोड पर एवान-ए-गालिब भवन और गालिब अकेडमी; हजरत निजामुद्दीन (पश्चिम) में गालिब संग्रहालय; 1, सफदरजंग रोड पर इंदिरा गाँधी स्मारक; संसद मार्ग पर डाक भवन में डाक टिकट संग्रहालय; सीजीओ कंप्लेक्स में सीबीआई मुख्यालय में राष्ट्रीय पुलिस संग्रहालय; प्रगति मैदान में गेट नं० 1 के पास राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय; आनंदग्राम, अर्जुनगढ़, महरौली में संस्कृत केंद्र, टेराकोटा और धातु संग्रहालय; फिरोजशाह रोड पर रबींद्र भवन में संगीत उपकरण दीर्घा और 5, दीनदयाल उपाध्याय मार्ग पर श्रीनिवास मल्लाह थियेटर क्राफ्ट्स म्यूजम भी हैं।

विद्यार्थियों एवं बच्चों के लिए विशेष रूप से मनोरंजक स्थल दिल्ली में विद्यार्थियों एवं बच्चों के लिए मनोरंजक स्थल भी जगह-जगह हैं। ऐसे स्थलों में गुड़ियाघर के अलावा कोटला मार्ग पर राष्ट्रीय बाल भवन, प्रगति मैदान में अप्पू घर, चिड़ियाघर, किदवई नगर में दिल्ली हाट, तीन मूर्ति भवन में नेहरू तारामंडल,
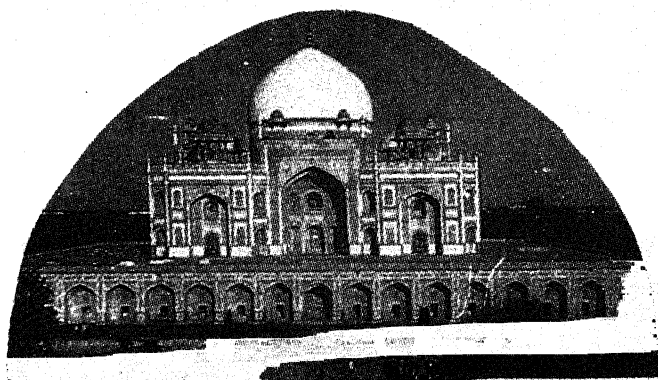
हुमायूँ का मकबरा, दिल्ली

विलिंग्डन क्रीसेंट पर ग्यारह मूर्ति, पीतमपुरा टीवी टावर, इंडिया गेट लॉन में चिल्ड्रंज पार्क, टीकरी कलां में आजाद हिन्द ग्राम तथा संभालका गाँव में फन एंड फूड विलेज प्रमुख हैं। साकेत से लगभग दो किमी दूर मैजिक प्लेनेट में बोलिंग, बुल राइडिंग, स्नूकर, बिलियार्ड्ज तथा लेजर वार खेलों की सुविधाएँ उपलब्ध हैं।

लोटस टैंपल, दिल्ली

रंगमंच दिल्ली रंगमंच का भी जाना-माना शहर है। यहाँ मंडी हाउस के आस-पास के स्थल अपनी सांस्कृतिक गतिविधियों के लिए जाने जाते हैं। मंडी हाउस में दूरदर्शन का और संसद मार्ग पर आकाशवाणी भवन में आकाशवाणी का मुख्यालय है। मंडी हाउस के पास राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, राष्ट्रीय सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केंद्र, रवींद्र भवन में साहित्य अकादमी, ललित कला अकादमी तथा संगीत नाटक अकादमी के कार्यालय हैं। इन्हीं के पास श्रीराम कला केंद्र, कमानी सभागार, मैक्समुलर भवन, फिक्की आडिटोरियम, हिमाचल भवन का सभागार और अन्य सभागार हैं। इसी प्रकार महादेव रोड पर मावलंकार हाल तथा बहादुरशाह जफर मार्ग पर महात्मा गाँधी मेमोरियल हाल हैं। आईटीओ पर आजाद भवन में भारत सांस्कृतिक संबंध परिषद (आईसीसीआर) का कार्यालय है। धोला कुआँ से करोल बाग तक जाने वाले रिज रोड पर रवीन्द्र रंगशाला है, जहाँ 26 जनवरी की झाँकियाँ तैयार होती हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ दिल्ली में शैलानियों के लिए सस्ती एवं महंगी हर तरह की सुविधाएँ हैं। ठहरने के लिए यहाँ अंतर्राष्ट्रीय स्तर के होटलों से लेकर छोटे होटलों तक असंख्य होटल हैं। नई दिल्ली रेलवे स्टेशन के पास पहाड़गंज होटलों के लिए ही ज़ाना जाता है। दिल्ली के बड़े होटलों में अशोक होटल, कनिष्क होटल, अशोक यात्री निवास, अकबर होटल,
रणजीत होटल, मौर्य शेराटन, लोधी

होटल, ताज इंटरकांटिनेंटल, होटल ऑबराय, हयात रीजेंसी, रेडीसन होटल तथा सेंटार होटल प्रसिद्ध हैं। ठहरने की सस्ती जगहों में नई दिल्ली स्टेशन के पास रेल यात्री निवास, रेल निवास, रेलवे स्टेशनों पर रिटायरिंग रूम तथा धर्मशालाएँ तथा छात्रों के लिए जयसिंह रोड पर वाइऐमसीए का छात्रावास, अशोक रोड पर वाइऐमसीए "कोंस्टैंटीना" और तीन मूर्ति भवन के पास विश्व युवक केंद्र उल्लेखनीय हैं। स्थानीय भ्रमण के लिए यहाँ सरकारी बसें, टैक्सियाँ, आटो रिक्शे, ताँगे, साइकिल रिक्शे तथा रेलगाड़ी उपलब्ध हैं। गर्मियों में यहाँ का अधिकतम तापमान 47°से तथा सर्दियों में न्यूनतम तापमान 6°से तक होता है।

दिल्ली दर्शन टूर डीटीटीडीसी दिल्ली भ्रमण के लिए प्रतिदिन टूर आयोजित करता है। इसकी बुकिंग किदवई नगर में दिल्ली हाट से तथा बाबा खड़क सिंह मार्ग पर काफी होम स्थित केंद्रीय आरक्षण कार्यालय से कराई जा सकती है। ये टूर इन दोनों जगहों से आरंभ होते हैं और जनपथ स्थित जवाहर व्यापार भवन (जहाँ सेंट्रल कॉटेज इंडस्ट्रीज एंपोरियम भी है) पर समाप्त होते हैं। डीटीटीडीसी बाबा खड़क सिंह मार्ग स्थित काफी होम से "दिल्ली की शाम" टूर भी आयोजित करता है, जो सायं 1745 बजे से रात 2200 बजे तक होता है। इसी प्रकार यह निगम नैनीताल-रानीखेत, वैष्णो देवी, हरिद्वार-ऋषिकेश-मसूरी, जयपुर-उदयपुर, द्वारका-सोमनाथ, अजमेर-पुष्कर-उदयपुर-माउंट आबू-जोधपुर-जैसलमेर-

कुतुब मीनार, महरौली
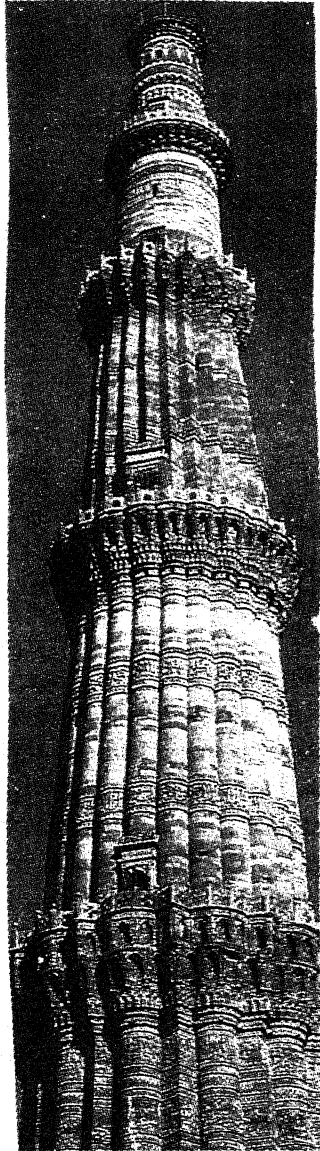
बीकानेर-जयपुर-दिल्ली, आगरा, हरिद्वार-ऋषिकेश, आगरा-फतेहपुर सीकरी-जयपुर, ग्वालियर-शिवपुरी तथा कार्बेट नैशनल पार्क-नैनीताल के टूर भी संचालित करता है। डीटीसी भी कनाट प्लेस में सिंधिया हाउस से दिल्ली दर्शन के लिए प्रतिदिन बसें चलाता है।

पर्यटक सूचना केंद्र दिल्ली में डीटीटीडीसी के पर्यटक सूचना केंद्र नई तथा पुरानी दिल्ली रेलवे स्टेशनों पर, आर के पुरम् के सैक्टर 13 के कॉफी होम में, टीकरी कलाँ में आजाद हिंद ग्राम के टूरिस्ट कंप्लेक्स में, पश्चिमी किदवई नगर में ट्रांसपोर्ट आफिस में, कश्मीरी गेट स्थित बस अड्डे पर, पालम हवाई अड्डे, इंदिरा गाँधी अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे के टर्मिनल 1 व 2 पर, किदवई नगर स्थित दिल्ली हाट पर, दिल्ली हाट के पास ही आईऐनए मार्किट के सामने परिवहन कार्यालय में, डिफेंस कालोनी में 18-A, डीडीए ऐससीओ स्थित मुख्य कार्यालय में तथा कनॉट प्लेस के मिडिल सर्किल में एन-36 पर स्थित बोंबे लाइफ बिल्डिंग में हैं। एक सूचना कार्यालय दिल्ली के पास नोएडा में C-117, सेक्टर 18 में भी है। आईटीडीसी के पर्यटक सूचना केंद्र 88, जनपथ और अंतःदेशीय तथा अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डों पर हैं।

662. महरौली यह स्थान आधुनिक दिल्ली के दक्षिण में है। 322 ई०पू० में अभिषित भारत के सम्राट चंद्रगुप्त द्वितीय ने यहाँ एक लोह स्तंभ तथा उस पर एक लेख स्थापित करवाया था। लेख में उसके उत्तर-पश्चिम में वाह्लीक (बैक्ट्रिया) तक और पूर्व में बंगाल तक के सैनिक अभियानों का पता लगता है। कुतुब-उद्-दीन ऐबक (1206-10) ने यहाँ 72.5 मी ऊँची कुतुब मीनार बनवानी आरंभ की थी, जिसे बाद में अल्तमश द्वारा पूरा कराया गया। इस मीनार का व्यास आधार पर 14.32 मी तथा चोटी पर 2.75 मी है। अलाउद्दीन ने भी कुतुब मीनार के पश्चिम में कुतुब मीनार से भी ऊँची मीनार बनवाने की योजना बनाई थी, परंतु वह उसे 87 फुट ही बनवा पाया था कि उसकी मृत्यु हो गई।

लौह स्तंभ, महरौली

663. सीरी कृपया दिल्ली देखें।

लक्षद्वीप समूह

ऐतिहासिक विवरण

इस द्वीप समूह के इतिहास के बारे में अधिक विवरण प्राप्त नहीं होता, फिर भी इतना अवश्य ज्ञात है कि यहाँ लोग सबसे पहले अमिनि, कलपेनी, एन्ड्रोट, कवरत्ती और अगत्ती द्वीपों में रहने लगे थे। पुरातात्विक प्रमाणों से ज्ञात होता है कि छठी शताब्दी में यहाँ बौद्ध धर्मावलंबी रहते थे। बाद में आठवीं शताब्दी के आस-पास यहाँ अरब के मुस्लिम आकर रहने लगे तथा कुछ बौद्ध भी मुस्लिम बन गए। यहाँ ऐसा विश्वास है कि अरब संत उबेदुल्ला ने द्वीप समूह में हिजरी संवत् के 41वें वर्ष (सातवीं शताब्दी) में मुस्लिम धर्म की स्थापना की। यहाँ के लोग सोलहवीं शताब्दी तक स्वतंत्र रहे। सोलहवीं शताब्दी में जब पुर्तगालियों ने द्वीप समूह पर कब्जा करने की कोशिश की, तो यहाँ के लोगों ने चिरक्कल के राजा से सहायता की मांग की। इस प्रक्रिया में द्वीप समूह में चिरक्कल के राजा का प्रभाव जम गया। उसने इस क्षेत्र को कन्नानौर की मोपला जाति के मुखिया अली राजा को जागीर में दे दिया। बाद में अली राजा ने यहाँ अपना स्वतंत्र शासन स्थापित कर लिया। पैरपिल्ल मारीश इरायथाली ने लक्षद्वीप का वर्णन किया है। अल बरूनी और इब्न बतुता यहाँ 1030 ई० में आए थे। वास्कोडिगामा ने इस द्वीप की यात्रा 1499 में की थी। उसने यहाँ एक किला बनाया था। 1545 में इसे पुर्तगालियों ने अपने कब्जे में कर लिया था। 1787 में टीपू सुल्तान ने यहाँ के उत्तरी द्वीपों पर कब्जा कर लिया। उसके बाद ये क्षेत्र ईस्ट इंडिया कम्पनी के हाथ में आ गए। फिर भी अंग्रेजों द्वारा इस द्वीप समूह को अपने साम्राज्य में मिलाए जाने तक इसका वास्तविक शासन कन्नानौर के राजा के हाथ में ही रहा। 1956 में संघ सरकार ने इन द्वीपों का प्रशासन यहाँ के प्रशासक के माध्यम से अपने हाथ में ले लिया और इनका नाम लकादीव, मीनिकाय तथा अमीनदीव द्वीप समूह रखा। 1973 में इस संघ शासित क्षेत्र का नाम बदलकर लक्षद्वीप समूह रख दिया गया।

द्वीप समूह में कुल 36 द्वीप हैं, जिनमें से केवल ग्यारह में लोग रहते हैं। इनकी एक-दूसरे से अधिकतम दूरी लगभग 20 किमी है। द्वीप समूह 8^0 और 12^0 3' उत्तरी अक्षांश तथा 71^0 और 74^0 पूर्वी रेखांश के मध्य स्थित है। यहाँ की मुख्य

खेती नारियल है। मत्स्यन यहाँ का एक अन्य प्रमुख रोजगार है।

द्वीप समूह का कुल क्षेत्रफल 32 वर्ग किमी है, जो देश में किसी संघ शासित क्षेत्र का सबसे कम क्षेत्रफल है। यहाँ लगभग 52 हजार लोग रहते हैं, जिनकी प्रमुख भाषा मलयालम है। द्वीप समूह की जनसंख्या का घनत्व 1616 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी है। द्वीप समूह की साक्षरता दर लगभग 82 प्रतिशत है। समाज मातृ प्रधान है, जिसे देखते हुए मार्को पोलो ने इस द्वीप समूह के एक भाग मिनीकाय को नारी द्वीप कहा था। द्वीप समूह के प्रमुख नृत्य परिचाकली और लावा हैं।

लक्षद्वीप अरब सागर में एक सुंदर प्राकृतिक रमणीक स्थल है। हालाँकि यहाँ देश के मुख्य भाग से बहुत कम सैलानी आते हैं, फिर भी विदेशियों के लिए यह अछूता नहीं रहा है। द्वीप में लगभग 5000 लोग प्रतिवर्ष आते हैं। द्वीप की मुख्य जल-क्रीड़ाएँ डोंगी खेवन, गहरे पानी में मत्स्यन, स्कूबा डाइविंग और स्नोर्कलिंग हैं।

द्वीप में नारियल के पेड़, परवाली चट्टानें, समुद्री जीव-जंतु और समुद्री तट पर्यटकों के लिए एक अच्छे वातावरण का सृजन करते हैं। यह द्वीप शांत एवं प्रदूषण मुक्त है।

द्वीप का पर्यटन कार्यालय कोचीन के विलिंगडन द्वीप के इंदिरा गाँधी रोड पर भी है। यह पर्यटन कार्यालय कोचीन से द्वीप समूह के कदामत, कवरत्ती, कलपेनी और मिनिकॉय द्वीपों का छह दिवसीय टूर संचालित करता है। द्वीप का तापमान 32°से और 27°से के मध्य रहता है। यहाँ वर्ष भर कभी भी जाया जा सकता है, परंतु अक्तूबर से मार्च तक का मौसम जल-क्रीड़ाओं के लिए सर्वोत्तम होता है और मानसून के दिनों में हवाई मार्ग से जाना ही उपयुक्त रहता है। कदामत इस्लैंड रिसोर्ट में "लकादीव" नामक गोताखोरी सिखाने का एक स्कूल भी है।

पर्यटन संबंधी औपचारिकताएँ

द्वीप समूह की यात्रा करने के लिए पर्यटकों को संघ शासित क्षेत्र की सरकार से पूर्वानुमति लेनी होती है, जिसके लिए कोचीन में प्रशासक के सचिव; प्रबंधक, ऐस. पी. ओ. आर. टी. ऐस, इंदिरा गाँधी रोड, विलिंगडन द्वीप, कोचीन अथवा संपर्क अधिकारी, लक्षद्वीप, 301, कस्तूरबा गाँधी मार्ग होस्टल, नई दिल्ली को आवेदन करना होता है। पैकेज टूर के यात्रियों को यह अनुमति लेने की आवश्यकता नहीं होती।

ठहरने सुविधाएँ

लक्षद्वीप समूह में ऐस्स. पी. ओ. आर. टी. ऐस. की ओर से कवरत्ती, कलपेनी, कदामत ओर मिनिकॉय में ठहरने की सुविधा है। अगत्ती में 20 बिस्तरों वाला एक रिसोर्ट और बंगारम् में कैसीनो ग्रुप की तरफ से हटों तथा कॉटेजों की व्यवस्था है। कुछ टूरिस्ट हटें बीच पर भी हैं। लक्षद्वीप प्रशासन की तरफ से रात को समुद्री जहाजों में ठहरने की व्यवस्था भी की जाती है। द्वीप समूह में इनके अलावा ठहरने की और कोई व्यवस्था नहीं है। खाने की व्यवस्था भी केवल टूरिस्ट हटों में ही है तथा द्वीप समूह में और कोई रेस्टोरेंट नहीं है।

664. कवरत्ती कवरत्ती लक्षद्वीप समूह की राजधानी है। यहाँ एक संग्रहालय, उज्रा मस्जिद और मछली घर है।

उपलब्ध सुविधाएँ यह शहर देश के अन्य भागों से वायु तथा जल मार्ग से जुड़ा हुआ है। जल मार्ग से जाने के लिए कोचीन से समुद्री जहाज लेना होता है। ठहरने तथा पर्यटन संबंधी अन्य सुविधाओं के लिए कृपया ऊपर देखें।

***

सिक्किम

ऐतिहासिक विवरण

सिक्किम का इतिहास तेरहवीं शताब्दी से आरंभ होता है। तेरहवीं शताब्दी में यहाँ के लेपचा सरदार ठेकांगा-ठेक और तिब्बत के राजकुमार खे-भुमसा के मध्य कावी में एक मैत्री समझौता हुआ था। 1642 में यहाँ नामग्याल वंश का शासन स्थापित हुआ।

1835 में यहाँ के राजा ने कुछ वार्षिक राशि के बदले अंग्रेजों को दार्जिलिंग और आस-पास के इलाके दे दिए थे। सिक्किम के राजा और अंग्रेजों के मध्य ये संबंध 1849 तक बने रहे। 1849 में सिक्किम के राजा ने कुछ अंग्रेजी डाक्टरों का सम्मान नहीं किया, जिससे क्रोधित होकर डलहौजी ने सिक्किम पर आक्रमण कर दिया। अंत में सिक्किम के राजा ने अंग्रेजों को दार्जिलिंग सहित 1700 वर्गमील क्षेत्र सौंपकर शांति स्थापित की। 1860 में सिक्किम के दीवान का अंग्रेजों के साथ झगड़ा हो गया। अंग्रेजों ने युद्ध में उसकी सेना को हरा दिया और इस घटना की जिम्मेदारी राजा पर थोपी। राजा ने अंग्रेजों के साथ 1861 में एक और संधि की, जिसके तहत उसने दीवान तथा उसके संबंधियों को सिक्किम से बाहर कर दिया, अंग्रेजों को 7000 रु. क्षतिपूर्ति दी, उन्हें सिक्किम में व्यापार करने की अनुमति दे दी और अपने राज्य से होकर तिब्बत जाने वाले अथवा वहाँ से आने वाले माल पर शुल्क कम कर दिया। सिक्किम के राजा ने जब तिब्बत की सहायता से अपने आपको ब्रिटिश नियंत्रण से मुक्त करने की कोशिश की, तो 1888 में तिब्बत ने ही उस पर कब्जा करने का प्रयास किया, परंतु अंग्रेजों ने तिब्बतियों को हरा दिया। यह समस्या चीन के साथ 1890 में हुए समझौते के बाद सुलझ गई। चीन ने सिक्किम पर ब्रिटिश संरक्षण को स्वीकार कर लिया, जिसके फलस्वरूप सिक्किम के आंतरिक और विदेशी मामलों में अंग्रेजों को सर्वाधिकार प्राप्त हो गया। 1975 तक एक स्वतंत्र देश के रूप में रहा

स्केल में नहीं

सिक्किम 1975 में भारत का एक राज्य बन गया।

सिक्किम मुख्य रूप से एक पर्वतीय इलाका है। यहाँ 28208 फुट ऊँची कंचनजंगा नामक चोटी विश्व की दूसरी सबसे ऊँची चोटी है। सिक्किम के एक तिहाई भाग में वन हैं। सिक्किम का क्षेत्रफल 7096 वर्ग किमी है।

राज्य की जनसंख्या का घनत्व 57 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी और साक्षरता दर लगभग 57 प्रतिशत है। यहाँ पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण नाम के चार जिले हैं, जिनमें लेपचा, भूटिया, नेपाली और लिंबू भाषाएँ बोली जाती हैं।

उत्सव

सिक्किम के लोग मुख्य रूप से भूटिया, लेपचा और नेपाली मूल के हैं। इनमें से भूटिया जाति के फांग लाबसेई, लासोंग और लोसार उत्सव; लेपचा जाति के नामसूंग उत्सव तथा नेपाली जाति के माघे संक्रांति, दुर्गा पूजा, लक्ष्मी पूजा और चैता दासाई उत्सव मनाते हैं। इनके अतिरिक्त प्रदेश में सागा दावा, द्रुक्पा त्सेशी, पाँग ल्हाबसोल, काम्यात और मठों में चाम उत्सव उत्सव भी मनाए जाते हैं।

नृत्य

सिक्किम में चेरेमू और मोन्द्रयाक लोक नृत्य किए जाते हैं। मोन्द्रयाक लोक नृत्य यहाँ की लेपचा जन-जाति के पुरुषों का है।

हेलीकोप्टर से पर्यटन

सिक्किम में हेलीकोप्टर से पर्यटन की एक अनूठी सेवा भी उपलब्ध है। यह सेवा सिक्किम हेलीकोप्टर सर्विस द्वारा 5 सीटों वाले हेलीकोप्टर से उपलब्ध कराई जाती है। इस सेवा के अन्तर्गत यह संगठन गंगटोक दर्शन (20 मिनट) के लिए 1200/- रु. प्रति व्यक्ति, गंगटोक-सिंगटाम-गेजिंग-युक्सोम-दिक्यू-गंगटोक दर्शन (60 मिनट) के लिए 3250/- रु., गंगटोक-माँगन-तीसता नदी के साथ-साथ होकर चुँगथाँग-लाचुँग-गंगटोक दर्शन (70 मिनट) के लिए 3750/- रु. और गंगटोक-माँगन-चुँगथाँग-लाचेन-जेमु ग्लेशियर-ग्रीन-लेक-गंगटोक दर्शन (90 मिनट) के लिए 5000/- रु. किराया लेता है। संगठन इनसे कम दूरी की यात्रा भी कराता है और उसके लिए किराया आनुपातिक रूप से कम कर देता है। उड़ानें प्रतिदिन 7 से 12 बजे के मध्य भरी जाती हैं। पर्यटकों की सुविधा को देखते हुए इनके समय में परिवर्तन भी कर दिया जाता है। उड़ान की बुकिंग उड़ान भरने के पहले दिन सायं चार बजे तक किसी टूर आपरेटर से करा लेनी चाहिए। बुरे मौसम के कारण रद्द हुई उड़ान का पूरा किराया वापस कर दिया

जाता है। कंचनजंगा की उड़ान के दौरान हेलीकोप्टर में आक्सीजन उपलब्ध रहती है। इस उड़ान के दौरान पर्यटकों को स्नो गोगल लगा लेने चाहिए। पर्यटक हेलीपैड पर उड़ान के समय से 25 मिनट पूर्व पहुँच जाएँ। सिक्किम पर्यटन विभाग पर्यटकों को अपने केंद्र से हैलीपैड तक निःशुल्क लाता और वापस छोड़ता भी है। अधिक जानकारी के लिए सिक्किम सरकार के किसी भी पर्यटक सूचना केंद्र से संपर्क किया जा सकता है।

पर्यटन संबंधी औपचारिकताएँ

सिक्किम में त्सोमगो और युमथाँग जाने के लिए भारतीय पर्यटकों को पुलिस अधीक्षक, चेक पोस्ट डिविजन, गंगटोक से तथा चार या इससे अधिक विदेशी पर्यटकों के समूह को गंगटोक स्थित सिक्किम के पर्यटन विभाग से परमिट लेना होता है। विदेशी पर्यटक चुँगथाँग को छोड़कर सभी क्षेत्रों के लिए 15 दिन तक का परमिट अवश्यक कागजात दिखाकर विदेशों में स्थित भारतीय दूतावासों तथा दिल्ली, कलकत्ता, सिलिगुड़ी और गंगटोक स्थित सिक्किम सरकार के पर्यटन विभाग से 24 घंटे पहले तक प्राप्त कर सकते हैं। ट्रैकिंग परमिट गंगटोक स्थित पर्यटन विभाग से सभी कार्य-दिवसों को मिलता है

वन्य जीव विहार देखने के लिए कृपया मुख्य वन्य जीव संरक्षक, वन सचिवालय, देवराली, गंगटोक से संपर्क करें।

665. उत्तर सिक्किम सिक्किम के इस भाग में गंगटोक से 17 किमी दूर काबी लंगचोक, 24 किमी दूर फेनसांग मठ, 38 किमी दूर फोडोंग मठ, 42 किमी दूर लाब्रांग मठ, 69 किमी दूर कंचनजंगा देखने का स्थान सिंघिक, 95 किमी दूर चुँगथाँग घाटी, 116 किमी दूर लाचुँग मठ तथा 140 किमी दूर युमथाँग घाटी दर्शनीय हैं।

666. कंचनजंगा राष्ट्रीय पार्क यह पार्क 1977 में सिक्किम के उत्तर-पश्चिमी भाग में स्थापित किया गया था। इसके उत्तर में जेमो ग्लेशियर है, जहाँ से जेमा नदी निकलती है। यहाँ पर रींछ, कस्तूरी मृग, तेंदुए, लमचित्ते, भरल, हिमालयी थार तथा सेराँव मिलते हैं। इनके अतिरिक्त यहाँ फेजेंट तथा हिम कुक्कट पक्षी भी मिलते हैं।

667. गंगटोक यह शहर हिमालय पर्वत की पूर्वोत्तर श्रृंखलाओं में 5800 फुट की ऊँचाई पर बसा हुआ है और सिक्किम प्रदेश की राजधानी है। यहाँ का मौसम बहुत सुहावना रहता है।

पर्यटन स्थल गंगटोक के अधिकांश पर्यटन स्थल बौद्ध धर्म और संस्कृति से संबंधित हैं। यहाँ बौद्ध दर्शन तथा धर्म का तिब्बती विद्या एवं अनुसंधान केंद्र है। बौद्ध धर्म से संबंधित एक संग्रहालय भी है। दो-द्रुल स्तूप सिक्किम के प्रमुख स्तूपों में से एक है। इसका निर्माण त्रुल्सी रिंपोछे ने करवाया था। इनके अतिरिक्त यहाँ आर्किड सेंक्चुरी, आर्किडेरियम, सरास्मा गार्डन, सिक्किम का सबसे पुराना मठ पेमायांगत्से, हिरन पार्क तथा रसुक ला स्वांग मठ दर्शनीय हैं।

गंगटोक के आस-पास के दर्शनीय स्थानों में तीन किमी दूर 200 वर्ष पुराना इंचे मठ, 5 किमी दूर सा-न्गोर-चोत्सोग सेंटर, 8 किमी दूर ताशी व्यू प्वाइंट, 11 किमी दूर हनुमान टोक, 16 किमी दूर वाटर गार्डन, 24 किमी दूर रूमटेक मठ, 38 किमी दूर सिक्किम के छह प्रधान मठों में से एक फोडोंग मठ और 42 किमी दूर लाब्रांग मठ प्रमुख हैं। इनके अतिरिक्त चाँगू लेक (35 किमी), 40 किमी दूर त्सोम्गो झील और चाँगू पर्वत भी हैं, जिन्हें देखने के लिए एक दिन का समय लगता है।

उपलब्ध सुविधाएँ गंगटोक देश के अन्य भागों से केवल सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ से निकटतम रेलवे स्टेशन सिलीगुड़ी (114 किमी) अथवा न्यूजलपाईगुड़ी (125 किमी) और निकटतम हवाई अड्डा 124 किमी दूर बागडोगरा है। गंगटोक के ऐस ऐन टी बस स्टैंड पर रेलवे टिकट बुक कराने की आउट एजेंसी भी है। दार्जिलिंग तथा हवाई अड्डे से गंगटोक के लिए टैक्सियाँ, जीप और मिनि बसें तथा राज्य पर्यटन विभाग के लग्जरी कोच मिलते हैं। गर्मियों में यहाँ का अधिकतम तापमान 21°से और सर्दियों में न्यूनतम तापमान 7°से होता है। यहाँ जाने के लिए मार्च से मई व अक्तूबर-नवंबर का समय ठीक रहता है।

पर्यटन संबंधी सूचना सिक्किम सरकार का पर्यटन विभाग उपर्युक्त सभी स्थानों के लिए कंडक्टिड टूर की बसें, जीपें तथा कारें उपलब्ध कराता है। यह विभाग ऐल्पाइन, त्शोगो तथा र्होडोडेंड्रोन के पैकेज टूर भी आयोजित करता है। गंगटोक में पर्यटक सूचना केंद्र महात्मा गाँधी रोड पर है। पर्यटन स्थलों की यात्रा के लिए बस, कार अथवा जीप बुक कराने के लिए सिक्किम पर्यटन विभाग का केंद्र पर्यटक सूचना केंद्र के नीचे है। मानसून के दौरान अपनी गाड़ी से यात्रा करने वाले पर्यटक पहले ऐस ऐन टी बस स्टैंड पर स्थित सिक्किम पर्यटन कार्यालय और तीस्ता पुल पुलिस चेक पोस्ट से सड़क की हालत के बारे में जानकारी प्राप्त कर लें।

668. दक्षिण सिक्किम दक्षिण सिक्किम में गंगटोक से 52 किमी

दूर टेमी टी गार्डन, लगभग 65 किमी दूर रांवांग्ला, 78 किमी दूर नामची की प्राकृतिक दृश्यावली, 80 किमी दूर टेंडांग पहाड़ी, 85 किमी दूर बोरोंग और मेनाम पहाड़ी तथा वेरसी अभयारण्य दर्शनीय हैं।

669. पश्चिम सिक्किम पश्चिम सिक्किम में ताशीडिंग मठ (गंगटोक से 82 किमी), पेमायांग्त्से मठ (99 किमी), 1641 से 1814 तक सिक्किम की पहली राजधानी रही युक्सोम (101 किमी) और इसके पास दुबड़ी मठ, पेमायांग्त्से के पास 1814 से सिक्किम की दूसरी राजधानी रही रेबडेंत्से के खंडहर और खेच्योपालड़ी झील (101 किमी) दर्शनीय स्थल हैं।

670. रूमटेक यह स्थान गंगटोक से 24 किमी दूर है।

धार्मिक महत्त्व रूमटेक तिब्बती बौद्धों के सबसे प्रमुख पंथ कर्मापा का निर्वासन में चल रहा मुख्यालय है, जिसकी स्थापना चीनी शासन के खिलाफ 1959 में नाकामयाब आंदोलन के बाद तिब्बत से भागकर आए सोलहवें कर्मापा रंगजुंग रिंगपे दोरजी द्वारा की गई थी। यहाँ उसके प्रतीक के रूप में उसका काला टोप रखा हुआ है। रूमटेक विश्व की सबसे धनी पीठों में से एक है।
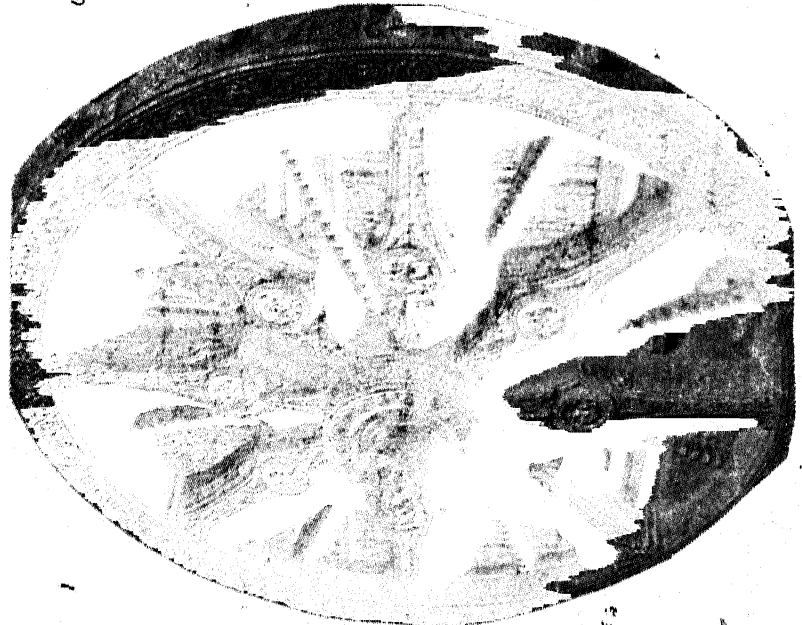
कोणार्क के सूर्य मंदिर का पहिया

हरियाणा

ऐतिहासिक विवरण

हाल ही तक हरियाणा का इतिहास वैदिक काल जितना पुराना माना जाता था, परंतु 1999 में हरियाणा के हिसार जिले के राखीगढ़ी गाँव में की गई खुदाइयों से प्रमाणित होता है कि यह क्षेत्र हड़प्पा सभ्यता का भी एक केंद्र रहा है। यह राज्य उस भरत वंश के राजाओं की कर्मभूमि रहा है, जिनके कारण देश का नाम भारत अर्थात् भरत का देश पड़ा। हरियाणा ही महाभारत की युद्ध स्थली रहा है। श्रीकृष्ण ने अर्जुन को गीता का ज्ञान यहीं के ज्योतिसर स्थान पर दिया था। अर्जुन ने धरती में बाण मारकर यहाँ के ही बाण गंगा नामक स्थान से पानी की धार निकालकर मरणासन्न भीष्म पितामह की प्यास बुझाई थी। इस प्रदेश ने मुहम्मद गजनी, महमूद गौरी, तैमूर लंग, चंगेज खाँ, नादिरशाह, अहमदशाह अब्दाली और मुगलों के आक्रमण झेले। यहाँ के पानीपत शहर में तीन ऐतिहासिक युद्ध हुए। अकबर से पानीपत की दूसरी लड़ाई प्रदेश के रेवाड़ी शहर के निवासी हेमू (जो इब्राहिम लोदी का प्रधान मंत्री था) ने ही लड़ी थी। प्रथम स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेने के कारण अंग्रेजों ने यहाँ के झज्जर और बहादुरगढ़ के

झूमर नृत्य, हरियाणा

नवाब, बल्लभगढ़ के राजा तथा रेवाड़ी के राव तुलाराम से उनकी रियासतें छीन ली थीं। उनके इलाके या तो अंग्रेजों ने अपने साम्राज्य में मिला लिए या पटियाला, नाभा और जींद के राजाओं को दे दिए। इस प्रकार यह क्षेत्र पंजाब का एक भाग बन गया। देश की स्वतंत्रता के बाद 1 नवंबर, 1966 को इसे पंजाब से अलग करके एक अलग राज्य बना दिया गया।

ऐसा माना जाता है कि यह प्रदेश हरियाली वाला होने के कारण इसका नाम हरियाणा पड़ा। यह भी मिथक है कि हरि (श्रीविष्णु) के अवतार (श्रीकृष्ण) की कर्मभूमि रहने के कारण भी प्रदेश का नाम हरियाणा (हरि का प्रदेश) पड़ा।

हरियाणा का क्षेत्रफल 44212 वर्ग किमी है। राज्य में जनसंख्या का घनत्व 372 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी और इसकी साक्षरता दर लगभग 56 प्रतिशत है। राज्य में 19 जिले हैं, जिनमें प्रमुख रूप से हिंदी बोली जाती है।

उत्सव

हरियाणा में संक्रांति, होली, रक्षा बंधन, शिवरात्रि, बासोड़ा, लोहड़ी, टीका, गोवर्धन (पड़वा के दिन), भैया दूज, तीज, आखा तीज, करवा चौथ, बसंत पंचमी, दुर्गा अष्टमी, कृष्ण जन्माष्टमी, राम नवमी, दशहरा, निर्जला ग्यास, द्वादसी, धन तेरस, नरक चतुर्दशी, अमावस तथा दिवाली (पूर्णमासी के दिन) त्यौहार धूम-धाम से मनाए जाते हैं। सूरजकुंड में प्रति वर्ष फरवरी माह में शिल्प मेला लगता है।

धमाल नृत्य, हरियाणा

मकर संक्रांति और सूर्य ग्रहण के अवसर पर कुरूक्षेत्र में बहुत बड़ा मेला लगता है।

नृत्य

हरियाणा में धमाल, घोड़ी बाजा, सांग, घूमर, झूमर, तीज, खोड़िया, लूर, गणगौर, खेड्डा, चौपाया, दीपक, गुगा, फागुन आदि कई नृत्य किए जाते हैं। धमाल, घोड़ी बाजा और सांग पुरुषों के नृत्य हैं, शेष महिलाओं के। धमाल नृत्य में बीन, बाँसुरी, ढोलक, खड़ताल तथा चिमटे का प्रयोग किया जाता है। यह नृत्य गुड़गाँव, महेंद्रगढ़, फरीदाबाद और रोहतक जिले के कुछ भाग में किया जाता है। घोड़ी बाजा नृत्य विवाह के अवसर पर होता है। सांग नाट्य परंपरा के माध्यम से राजा-महाराजाओं की कथाएँ बताई जाती हैं। घूमर नृत्य में महिलाएँ रबी की फसल की कटाई के बाद अपने घाघरे को नाच-नाचकर छाते की तरह फैला लेती हैं। झूमर नृत्य में वे झूमर की आकृति में खड़ी होकर नाचती हैं। सावन के महीने में ब्याहता और कुँआरी लड़कियाँ तीज नृत्य करती हैं। खोड़िया नृत्य महिलाएँ उस समय करती हैं, जब लड़के की बारात चली जाती है। लूर नृत्य फागुन और चैत के महीनों में फसल पकने के अवसर पर किया जाता है। सिरसा, भिवानी व हिसार के इलाकों में गणगौर नृत्य किया जाता है। खेड्डा नृत्य बड़े व्यक्ति की मृत्यु पर कैथल, करनाल और जींद में किया जाता है, परंतु अब यह लुप्तप्राय हो

चुका है। चौपाया नृत्य अकेले पुरुषों द्वारा तथा पुरुषों और स्त्रियों द्वारा दोनों तरह किया जाता है। यह नृत्य फाल्गुन मास का है। दीपक नृत्य प्रदेश के जोगियों का है। जन्माष्टमी के अगले दिन यहाँ गुगा नृत्य किया जाता है। फाल्गुन के महीने में महिलाएँ फागुन नृत्य करती हैं।

671. अग्रोहा यह स्थान हिसार से 22 किमी दूर हिसार–सिरसा मार्ग पर है। इसकी स्थापना द्वापर युग के अंत और कलियुग के प्रारंभ के समय लगभग 5000 वर्ष पहले महाराजा अग्रसेन ने की थी। उन्होंने इसे अपनी राजधानी भी बनाया था। उस समय इस स्थान का नाम अग्रोदक था। अपने शासन के अट्ठारह गणों के प्रतिनिधियों के आधार पर उन्होंने अट्ठारह गोत्र प्रारंभ किए और अग्रकुल प्रर्वतक कहलाए। अग्रोहा पर सिकंदर, समरजीत तथा 1194 में मुहम्मद गौरी ने आक्रमण किए।

पुरातात्विक महत्त्व अग्रोहा के अवशेष 566 एकड़ में 87 फुट ऊँचे टीले के रूप में पाए गए हैं। अग्रोहा के टीलों की खुदाई के लिए पहला प्रयास 1888 में सी.जे.रोजर्स ने किया। इस खुदाई में उन्हें ईंटों की दीवारें और गलियाँ, सिक्के, मनके और मूर्तियों तथा खिलौनों के टुकड़े मिले। 1938-39 में यहाँ भारतीय पुरातत्व विभाग ने खुदाई की। यहाँ मिली मुद्राओं की लिपि पहली-दूसरी सदी की है। यहाँ मिले चाँदी के पाँच सिक्के ईसा पूर्व दूसरी या पहली शताब्दी के पश्चिमोत्तर देशों और यूनानी राजाओं के हैं। यहाँ एक बर्तन में मिले 51 सिक्कों पर एक ओर अमरोदक, अगाच्य जनपद लिखा है तथा दूसरी ओर वृषभ या वेदिका की आकृति बनी हुई है। इसके बाद 1979-80 और 1981-82 में भी खुदाई की गई। इन खुदाइयों में एक चौकोर चबूतरा मिला है। पुरातत्व विभाग की 1978-79 की रिपोर्ट में लिखा है कि यह स्थान महाभारत में वर्णित आग्रेह गणतंत्र की राजधानी था। इतिहासकार जियाउद्दीन बर्नी के उल्लेख से पता चलता है कि फिरोजशाह तुगलक के काल में अग्रोहा का अस्तित्व था। इब्न बतुता के अनुसार हिसार-ए-फिरोजा के निर्माण में भी अग्रोहा के अवशेषों का उपयोग किया गया था, जिससे इस स्थान का नामो-निशान भी मिट गया। अग्रोहा में महाराजा अग्रसेन का मंदिर दर्शनीय है। यहीं पर अग्रकुल देवी लक्ष्मी का मंदिर भी निर्माणाधीन है। इसका गुंबद 180 फुट ऊँचा है। अग्रोहा मंदिर के मुख्य कक्ष में एक साथ 5000 आदमी बैठ सकते हैं। महालक्ष्मी के मंदिर के बाहर ऋद्धि-सिद्धि की प्रतिमाएँ तथा कक्ष में सुंदर झाँकियाँ हैं। मंदिर के पीछे 300 x 400 फुट आकार का शक्ति सरोवर है, जिसके बीच में समुद्र मंथन को दर्शाती हुई भव्य श्वेत प्रतिमा है। सरोवर के चारों ओर 15000 फुट लंबे बरामदे हैं।

मंदिर परिसर में बच्चों के लिए एक अप्पू घर भी है, जहाँ झूलों, सवारियों, नौकायन आदि की सुविधा है।

उपलब्ध सुविधाएँ अग्रोहा में ठहरने के लिए 250 कमरों की एक बहुत बड़ी धर्मशाला है। यहाँ खाने की सुविधा भी है। यहाँ एक प्राकृतिक चिकित्सालय, वानप्रस्थ आश्रम और एक विशाल पुस्तकालय खोलने पर भी विचार किया जा रहा है। अग्रोहा में हर वर्ष पूर्णिमा और महावीर जयंती के अवसर पर एक विशाल मेला लगता है। पूर्णिमा के अवसर पर शक्ति सरोवर में कुंभ का भी आयोजन किया जाता है और सर्वश्रेष्ठ अग्रवाल बंधुओं को सम्मानित किया जाता है।

672. आनंदवन कला वाटिका आनंदवन कला वाटिका देश में अपनी तरह की एक अलग वाटिका है, जिसे हम स्कलप्चर गार्डन भी कह सकते हैं। यह वाटिका सूरजकुंड-बडखल-फरीदाबाद मार्ग पर है और इसके सृजक हैं भारत के प्रसिद्ध शिल्पी राम सुतर। यह दिल्ली, फरीदाबाद और गुड़गाँव तीनों की सीमाओं के पास है।

राम सुतर ने अपने शिल्प कौशल के लिए देश-विदेश में नाम कमाया है। उन द्वारा बनाई गई शिला-प्रतिमाएँ देश में अनेक जगहों को सुशोभित कर रही हैं। दिल्ली के विलिंगडन क्रीसेंट पर उनकी डांडी मार्च की ग्यारह मूर्तियों की भव्यता और उसका कला-कौशल देखते ही बनता है। संसद भवन में लगी गाँधी की प्रतिमा भी उन्होंने ही बनाई है और इंडिया गेट की छतरी में लगाने के लिए बनाई गई गाँधी की प्रतिमा अभी लगने का इंतजार कर रही है।

सोचा जा सकता है कि जब आनंदवन के सृजक राम सुतर हैं, तो इसे देखने में आनंद कैसा आएगा। यह वाटिका अभी बनने की प्रक्रिया में है। फिर भी जो मूर्तियाँ बन चुकी हैं, वे अपना प्रभाव पूरी तरह छोड़ती हैं। एक मूर्ति डॉ. अंबेडकर की है, जो बैठी हुई अवस्था में है। कई प्रतिमाएँ महात्मा गाँधी की हैं। एक प्रतिमा में वे दो हरिजन बच्चों के साथ हैं। दो मूर्तियाँ जवाहर लाल नेहरू की हैं। एक-एक मूर्ति मौलाना आजाद, इंदिरा गाँधी और भीमराव अंबेडकर की है। एक प्रतिमा शिल्प गढ़ते हुए किसी अज्ञात शिल्पी की है।

यह वाटिका जितनी भी तैयार हुई है, देखने लायक है; इस कारण और भी कि यह फरीदाबाद जिले के दो पर्यटन स्थानों सूरजकुंड और बड़खल के पास ही है।

इस वाटिका के लिए स्थान तत्वदर्शी कंपनी के प्रबंध निदेशक दिनेश कुमार अग्रवाल ने उपलब्ध करवाया है तथा अशोक अग्रवाल ने इसके निर्माण में विशेष सहयोग दिया है। स्थल का नक्शा राम सुतर के वास्तुकार पुत्र अनिल

सुतर ने तैयार किया है।

वाटिका देखने के लिए साल में कभी भी जाया जा सकता है। इसे तब अवश्य देखना चाहिए, जब आप सूरजकुंड अथवा बड़खल देखने का कार्यक्रम बना रहे हों। वाटिका देखकर दुपहर में ही दिल्ली, फरीदाबाद अथवा गुड़गाँव लौटा जा सकता है।

हरियाणा को यह गौरव देने वाले राम सुतर, अनिल सुतर, दिनेश कुमार अग्रवाल तथा अशोक अग्रवाल को शत् शत् प्रणाम् और साधुवाद !

673. करनाल यह शहर दिल्ली के 125 किमी उत्तर में है।

ऐतिहासिक महत्त्व करनाल थानेश्वर तथा कन्नौज के शासक हर्षवर्धन और उज्जयिनि के प्रतिहार शासक महेंद्रपाल प्रथम (885-910) के राज्य का एक भाग रहा है। फरवरी, 1739 में यहाँ मुगल तथा नादिरशाह की सेनाओं के मध्य एक युद्ध हुआ था, जिसमें नादिरशाह की विजय हुई। सम्राट मुहम्मदशाह का सेनापति खान दुरान अमीर-उल-उमरा इस युद्ध में मारा गया।

674. कुरूक्षेत्र यह शहर दिल्ली के उत्तर में लगभग 150 किमी दूर है।

ऐतिहासिक महत्त्व यह उत्तर वैदिक काल में आर्यावर्त का एक प्रमुख केंद्र था। यहाँ कौरवों और पांडवों के बीच महाभारत का प्रसिद्ध युद्ध लड़ा गया था। इस युद्ध में 18 अक्षौणी सेना ने भाग लिया था। इसमें से 11 अक्षौणी सेना कौरवों की और सात अक्षौणी पांडवों की थी। युद्ध में पांडवों की विजय हुई। इसे अधर्म पर धर्म की विजय कहा गया। इसीलिए कुरूक्षेत्र को धर्मक्षेत्र और कर्मक्षेत्र भी कहा जाता है। थानेश्वर यहाँ से कुछ ही दूरी पर है, जहाँ से हर्षवर्धन ने राज्य किया था।

धार्मिक महत्त्व एवं पर्यटन स्थल कुरूक्षेत्र में 360 मंदिर हैं, जिनमें स्थानेश्वर महादेव, भद्रकाली, बिड़ला और कौरव मंदिर विशेष उल्लेखनीय हैं। यह स्थान सूर्य-ग्रहण के अवसर पर विशेष रूप से दर्शनीय होता है। ऐसा माना जाता है कि सूर्य-ग्रहण के अवसर पर यहाँ के ब्रहम सरोवर और सन्निहित सरोवर में स्नान करने और पिंड दान करने से पुण्य मिलता है। इसलिए उस समय यहाँ लाखों की संख्या में लोग इन सरोवरों में स्नान करते हैं। ब्रह्म सरोवर की परिधि 3 किमी है। इसमें एक साथ 5 लाख लोग स्नान कर सकते हैं। यह दो भागों में बँटा हुआ है, जिनमें से इसके पूर्वी तालाब का आकार 1700 x 1500 फुट और

जयराम विद्यापीठ मंदिर (ऊपर) और ब्रह्म सरोवर (नीचे), कुरुक्षेत्र

पश्चिमी तालाब का आकार 1500 x 1500 फुट है। ब्रह्म तथा सन्निहित दोनों सरोवर 15-15 फुट गहरे हैं। सन्निहित सरोवर आकार में ब्रह्म सरोवर से आठ गुणा कम है, परंतु असली धार्मिक महत्त्व इसी सरोवर में स्नान करने का है। इसीलिए लोग पहले सन्निहित सरोवर में स्नान करते हैं और फिर ब्रह्म सरोवर में। 1702 के सूर्य-ग्रहण के अवसर पर गुरु गोबिंद सिंह ने भी यहाँ स्नान किया था। मराठा सरदार रघुनाथराव और मल्हारराव होल्कर ने भी लाहौर तथा सरहिंद पर विजय प्राप्त करने के बाद दक्षिण वापस लौटते समय कुरुक्षेत्र में 5 जून, 1758 को धार्मिक अनुष्ठान किया था। मकर संक्रांति पर भी इन सरोवरों पर

स्नानार्थियों की काफी भीड़ रहती है। यहाँ के अन्य पुण्य सरोवरों में ज्योतिसर, स्थानेश्वर और नाभि कमल सरोवर प्रमुख हैं। ब्रहम् सर के दक्षिण में चार किमी दूर बाण गंगा है, जहाँ अर्जुन ने धरती में बाण मारकर भीष्म पितामह के लिए पानी निकाला था। ज्योतिसर में भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को गीता का उपदेश दिया था।

उपलब्ध सुविधाएँ यह शहर दिल्ली-अंबाला मार्ग पर है और चारों ओर से रेल तथा सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। दिल्ली, अंबाला, चंडीगढ़, पटियाला, शिमला आदि शहरों से कुरूक्षेत्र के लिए बसें हर समय तैयार रहती हैं। इसलिए इन स्थानों से यहाँ सड़क मार्ग से पहुँचने में काफी आसानी रहती है और एक ही दिन में पहुँच कर वापस भी लौटा जा सकता है। निकटतम् हवाई अड्डा 125 किमी दूर चंडीगढ़ तथा 150 किमी दूर दिल्ली हैं।

675. कैथल दिल्ली की गद्दी पर बैठने वाली प्रथम और एकमात्र मुस्लिम महिला रजिया बेगम जब सरहिंद के सूबेदार इख्तियारुद्दीन अल्तूनिया का विद्रोह दबाने के लिए गई, तो उसे व उसके प्रेमी याकूत को कैद कर लिया गया। इस स्थिति से निपटने के लिए उसने अल्तूनिया से विवाह का प्रस्ताव भी रखा, परंतु इसका कोई फायदा न हुआ। अंत में जब वह दिल्ली की ओर आ रही थी, तो अल्तूनिया के सैनिकों ने उसका साथ छोड़ दिया। उसके भाई मुइजुद्दीन बहराम ने उसे 13 अक्तूबर, 1240 को कैथल के निकट हराकर अगले ही दिन याकूत सहित मौत के घाट उतार दिया। तुगलक वंश के अंतिम शासक महमूद शाह का भी फरवरी, 1412 में यहीं स्वर्गवास हुआ था। बंदा बहादुर के नेतृत्व में सिखों ने 1710 ई० के आस-पास कैथल पर कब्जा कर लिया था। 1807 में इस पर रणजीत सिंह ने कब्जा किया था। यहाँ के जवाहर पार्क में बाबा कमाल शाह की दरगाह है, जिसका पुजारी एक हिंदू है। लोग यहाँ काफी संख्या में मन्नत माँगने आते हैं।

676. गुड़गाँव गुड़गाँव दिल्ली की सीमा पर बसा प्रदेश का एक प्रमुख नगर है। ऐसा माना जाता है कि महाभारत काल में यह गुरु द्रोणाचार्य का निवास स्थान था। इसीलिए इसे गुरुग्राम भी कहा जाता है। महाभारत के युद्ध-स्थल कुरूक्षेत्र से केवल 150 किमी और तत्कालीन इंद्रप्रस्थ से केवल 30-40 किमी दूर होने से भी इस तथ्य को बल मिलता है। गुरु द्रोणाचार्य के नाम से यहाँ एक महाविद्यालय भी है।

पर्यटन स्थल यह शहर पश्चिमी भारत से आने वालों के लिए दिल्ली दर्शन के लिए एक प्रवेश द्वार का काम करता है। यह इसी नाम के गाँव में स्थित शीतला माता के मंदिर और मारुती फैक्टरी के लिए दूर-दूर तक जाना जाता है। मंदिर पर साल में दो बार मेला लगता है, जिसमें भारी संख्या में लोग उमड़ते हैं। शहर के विकास के साथ यहाँ के सैक्टर 14 व 15 के उद्यान पर्याप्त रूप से आकर्षक बनाए गए हैं। शहर में गुरुद्वारा और बस अड्डे के पास महावीर पार्क पुनर्निर्माण के बाद बड़े सुंदर रूप में उभर कर आ रहे हैं। **यहाँ 46/22, गाँधी नगर में श्रीमती हुशियारी और उनका परिवार एक हस्त-शिल्प संग्रहालय का विकास कर रहे हैं। यह संग्राहलय देखने वालों के लिए आकर्षक रूप ले रहा है।** डाकघर के पीछे रामलीला ग्राउंड में हनुमान और राम दरबार की रंग-बिरंगी तथा अलंकृत मूर्तियाँ बहुत सुंदर हैं।

गुड़गाँव की नगर सीमा के पास संभालका गाँव में फन एंड फूड विलेज है। इस विलेज में पानी के तरह-तरह के खेल हैं, जिनमें लगभग 15-20 फुट की ऊँचाई से पानी में फन स्लाइड अथवा वृताकार स्लाइड, तैराकी, किड्डीज राइड, फन बॉल, टोरा टोरा, वेव पूल आदि प्रमुख हैं। वेव पूल में थोड़ी-थोड़ी देर में समुद्री लहरें बनती हैं। विलेज में कस्ट्यूम किराए पर तथा लाइफ जैकेट निशुल्क उपलब्ध हैं। गुड़गाँव में ही जी टी रोड पर थर्टी सेकंड माइल स्टोन नामक मनोरंजन स्थल है। इसमें गो कार्टिंग, स्नूकर, बिलियाड्र्ज, बोलिंग एली, फायर बाल और लैजर वार खेल हैं।

46/22, गुड़गांव में विकासशील संग्रहालय की कला का एक नमूना

गुड़गाँव के आस-पास के स्थानों में लगभग बीस किमी दूर सूरजकुंड-बड़खल-फरीदाबाद मार्ग पर आनंदवन कला वाटिका है, जिसका सृजन प्रसिद्ध शिल्पी राम सुतर ने किया है। उन्होंने इस वाटिका में स्वतंत्रता संग्राम के नेताओं की शिला-प्रतिमाओं में प्राण फूँककर केवल हरियाणा के लिए ही नहीं, पूरे देश के लिए एक धरोहर का सृजन किया है।

गुड़गाँव से पंद्रह किमी दूर आपनो घर है। इसमें कोलंबस मिनी जू, बोटिंग, ज्वाय राइड आदि खेल हैं। गुड़गाँव-महरौली रोड पर मंगलापुरी में रिज कोर्ट है। इसमें वीडियो गेम्ज,

बोलिंग आदि खेल हैं। इनके अतिरिक्त लगभग बीस किमी दूर सोहना, पंद्रह किमी दूर सुल्तानपुर पक्षी विहार, शहर की सीमा के पार दिल्ली में बिरला कानन में शिव की 108 फुट ऊँची प्रतिमा मंगल महादेव, बीस किमी दूर कुतुब मीनार तथा इतनी ही दूर प्रसिद्ध सुरजकुंड झील का नाम गर्व से लिया जा सकता है।

इन सब स्थलों के अलावा गुड़गाँव में रहकर उन सब पर्यटन और मनोरंजन स्थलों का आनंद उठाया जा सकता है, जो दिल्ली के गौरव हैं। इन्हें देखकर शाम को गुड़गाँव वापस आया जा सकता है। गुड़गाँव से 80 किमी दूर रेवाड़ी है, जहाँ की लड़की संतोष यादव ने एवरेस्ट पर दो बार चढ़ने का गौरव प्राप्त किया है। कुछ वर्ष पहले रेवाड़ी गुड़गाँव जिले का ही एक भाग था। अब यह एक स्वतंत्र जिला है।

उपलब्ध सुविधाएँ गुड़गाँव देश के अन्य भागों से रेल एवं सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। दिल्ली का पालम राष्ट्रीय हवाई अड्डा तथा इंदिरा गाँधी अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा शहर की सीमा से लगते हुए हैं। स्थानीय भ्रमण के लिए यहाँ रिक्शे तथा आटो रिक्शे मिलते हैं। ठहरने के लिए यहाँ पर्यटन विभाग हरियाणा का शमा टूरिस्ट कंप्लेक्स, ग्रूवी होटल, सॉलिटेयर प्लाजा, दिगंबर जैन धर्मशाला तथा कुछ छोटे-छोटे होटल एवं गेस्ट हाउस हैं। यहाँ वर्ष में कभी भी जाया जा सकता है।

677. टोपड़ा यह स्थान अंबाला जिले में है। यह अशोक के स्तंभ लेख के लिए जाना जाता है। इस शिलालेख में उसकी नीति पर प्रकाश डाला गया हे। 1356 ई० में फिरोजशाह तुगलक इस स्तंभ लेख को दिल्ली ले गया था। आजकल यह दिल्ली में दिल्ली गेट के निकट उसके कोटला फिरोजशाह नाम के किले में स्थापित है।

678. थानेश्वर यह स्थान कुरुक्षेत्र के पास है। आजकल इसे थानेसर कहा जाता है।

ऐतिहासिक महत्त्व गुप्त काल के पतन के बाद मगध, बल्लभी, सौराष्ट्र, मालवा आदि क्षेत्रों में स्वतंत्र राज्यों का उदय हो गया था। इसी प्रकार हरियाणा में हूण शासक पुष्यभूति ने छठी शताब्दी में स्तवंत्र शासन स्थापित कर लिया। कालांतर में सत्ता वर्धन परिवार के हाथ में आ गई। वर्धन वंश के प्रथम तीन शासकों ने 525 से 600 ई० तक राज्य किया। तीसरा शासक आदित्यवर्धन था, जिसका विवाह परवर्ती गुप्त राजा महासेन गुप्त की बहन से हुआ था। बाण भट्ट द्वारा लिखित हर्षचरित से ज्ञात होता है कि महासेन गुप्त मौखरि राजा शर्व वर्मा, गौड़

के शासकों तथा दक्षिण के शासकों के आक्रमण से तंग आकर मगध छोड़कर मालवा आ गया था, परंतु वहाँ भी उसके एक संबंधी देवगुप्त ने अपने को मालवा का स्वतंत्र शासक घोषित कर लिया और महासेन गुप्त के पुत्र कुमारगुप्त तथा माधवगुप्त को थानेश्वर में अपने फूफा आदित्यवर्धन के यहाँ शरण लेनी पड़ी। आदित्यवर्धन का पुत्र प्रभाकरवर्धन 600 से 605 ई० तक थानेश्वर का सम्राट रहा। उसने अपनी पुत्री राज्यश्री का विवाह कन्नौज के मौखरि राजा गृहवर्मा से किया। प्रभाकरवर्धन ने मालवा के नए शासक देवगुप्त को तंग किया था। प्रभाकरवर्धन के बाद उसका बड़ा पुत्र राज्यवर्धन सम्राट बना। देवगुप्त ने गौड़ के राजा शशांक की सहायता से गृहवर्मा की हत्या करके कन्नौज हड़प लिया। इस पर राज्यवर्धन ने कन्नौज पर चढ़ाई की और देवगुप्त को आसानी से हरा दिया। परंतु देवगुप्त के मित्र शशांक ने राज्यवर्धन को उसके साथ अपनी पुत्री का विवाह करने के बहाने बुला लिया और उसे भोजन में जहर देकर मार दिया। राज्यवर्धन की मृत्यु के बाद उसका छोटा भाई हर्षवर्धन 606 ई० में गद्दी पर बैठा। उसने कामरूप के राजा भास्करवर्मन के साथ मिलकर शशांक को हराकर मगध का साम्राज्य माधवगुप्त को सौंप दिया। भास्करवर्मन ने पूर्वी बंगाल और हर्ष ने पश्चिमी बंगाल पर कब्जा कर लिया। इसके बाद उसने कन्नौज को जीतकर राज्यश्री के अनुरोध पर अपने राज्य में मिला लिया और अपनी राजधानी थानेश्वर से कन्नौज बदल ली। महमूद गजनी ने 1014 ई० में थानेश्वर पर आक्रमण किया। 1043 में इस पर दिल्ली के महीपाल तोमर ने अधिकार कर लिया। दिसंबर, 1759 में अहमदशाह अब्दाली ने यहाँ दत्ताजी सिंधिया को हराकर उसे दिल्ली की ओर भागने को विवश कर दिया था तथा बाद में उसे जनवरी, 1760 में हुई बरारी घाट की लड़ाई में मार दिया।

धार्मिक महत्त्व अशोक ने थानेश्वर में एक 300 फुट ऊँचा स्तूप बनवाया था, जिसके अवशेष अब नहीं मिलते। यह हिंदुओं का एक पवित्र धार्मिक स्थल है। सूर्य-ग्रहण के अवसर पर लोग यहाँ के तालाबों में स्नान करने के लिए लाखों की संख्या में आते हैं।

679. पानीपत यह शहर तीन ऐतिहासिक लड़ाइयों के लिए प्रसिद्ध है। पहली लड़ाई इब्राहिम लोदी और बाबर के मध्य 21 अप्रैल, 1526 ई० को हुई थी, जिसमें इब्राहिम लोदी की हार हुई। इस लड़ाई के परिणामस्वरूप भारत में मुगल शासन की स्थापना हो गई। इस लड़ाई में बाबर ने अपनी तोपों का भारत में पहली बार प्रयोग किया था। लड़ाई में सुल्तान इब्राहिम लोदी और लगभग 40000 सैनिक मारे गए। बाबर ने पानीपत के काबुली बाग में 1526 ई० में एक

जामा मस्जिद बनवाई। दूसरी लड़ाई बैरम खाँ और हेमू के मध्य 3 नवंबर, 1556 को हुई। इस लड़ाई में बैरम खाँ जीत गया। इससे भारत में मुस्लिम शासन की स्थापना को और बल मिला। तीसरी लड़ाई बलाकी विश्वनाथ और अहमदशाह अब्दाली के मध्य 14 जनवरी, 1761 को हुई। इसमें अहमदशाह अब्दाली की विजय हुई और मराठों की शक्ति का काफी ह्रास हुआ।

पानीपत में बस स्टैंड के पास इब्राहिम लोदी की कब्र, बाबर द्वारा अपनी बेगम मुसम्मत जहाँ काबुली की याद में काबुली बाग में बनवाया गया मकबरा तथा पानीपत के तीनों युद्धों में शहीद हुए सेनानियों की याद में शहर से आठ किमी दूर काला आम का शहीद स्मारक दर्शनीय हैं।

680. पलवल यह दिल्ली के दक्षिण में लगभग 70 किमी दूर है।

ऐतिहासिक महत्त्व मुंबई में 7-8 अगस्त, 1942 को कांग्रेस के अधिवेशन में 'भारत छोड़ो आंदोलन' की घोषणा करने के बाद जब महात्मा गाँधी दिल्ली की ओर चले, तो उन्हें 9 अगस्त, 1942 को पलवल स्टेशन से गिरफ्तार करके पूना के आगा खाँ महल में कैद कर लिया गया था।

681. पिंजौर चंडीगढ़ से 22 किमी दूर शिमला मार्ग पर स्थित यह शहर सदियों पुराना है। इसका प्राचीन नाम पञ्चमपुरम् है। ऐसा माना जाता है पाँचों पांडवों ने यहाँ अपने बनवास और अज्ञातवास के कुछ दिन बिताए थे।

पर्यटन स्थल पिंजौर बेबीलोन गार्डन की तरह अपने सात स्तरीय मुगल गार्डन के लिए जाना जाता है। आजकल इस गार्डन को यादवेंद्र गार्डन कहा जाता है। इसे औरंगजेब ने मुगल शैली में बनवाया था। इसका नक्शा तत्कालीन पंजाब के सूबेदार फिदई खान ने बनाया था। यह एक वानस्पतिक उद्यान है, जिसकी आभा बहुत निराली है। उद्यान में शीश महल, रंग महल तथा जल महल हैं। शीश महल फिदई खाँ का दरबार था और रंग महल उसकी रानियों के लिए था। जल महल उद्यान के बीच में पानी की पट्टी में है। उद्यान में फलों और फूलों के वृक्ष और रंग-बिरंगे

पिंजौर गार्डन

फव्वारे हैं। शाम के समय बिजली की जगमगाहट से यह मैसूर के वृंदावन बाग की तरह लगता है। बाग में बच्चों के मनोरंजन के लिए एक छोटा सा चिड़ियाघर भी है। उद्यान के चारों ओर एक दीवार है, जिसमें सात दरवाजे हैं। फिदई खाँ ने 1675 में यह बाग सिरमौर के राजा को भेंट कर दिया था। बाद में 1815 में पटियाला के महाराजा यादवेंद्र ने इसे वापस ले लिया था। गर्मियों के दिनों में बाग की ठंडक शरीर में ताजगी भर देती है। बाग के साथ ऐचऐमटी कारखाना है, जहाँ ट्रैक्टर बनते हैं। पिंजौर में जुलाई के पहले माह में हर वर्ष एक आम मेला लगता है, जिसके दौरान अच्छे आम उगाने वालों को पुरस्कार दिया जाता है और बच्चों के लिए एक चित्रकारी प्रतियोगिता भी आयोजित की जाती है।

उपलब्ध सुविधाएँ पिंजौर से निकटतम रेलवे स्टेशन कालका तथा निकटतम हवाई अड्डा चंडीगढ़ है। शिमला से यहाँ छोटी लाइन की रेलगाड़ी आती है। अन्य शहरों से यह सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। यहाँ एक फ्लाइंग क्लब भी है, जहाँ वायुयान तथा ग्लाइडर उड़ान का प्रशिक्षण दिया जाता है। उद्यान को देखकर रात को चंडीगढ़ या अंबाला भी जाया जा सकता है। यदि यहीं ठहरना हो, तो यहाँ पर्यटन विश्राम गृह है, जिसकी बुकिंग पर्यटन विभाग, हरियाणा, सेक्टर-17 चंडीगढ़ से या मौके पर कराई जा सकती है। कुछ छोटे-छोटे होटल भी हैं। बच्चों के लिए ऊँट की सवारी की व्यवस्था भी है। चंडीगढ़-शिमला मार्ग पर होने के कारण यहाँ आने-जाने वालों का ताँता लगा रहता है। यहाँ का तापमान चंडीगढ़ के बराबर रहता है। यहाँ वर्ष में कभी भी जाया जा सकता है।

682. फतेहाबाद—ऐतिहासिक महत्त्व यह शहर हरियाणा के हिसार जिले में स्थित है। इसकी स्थापना फिरोजशाह तुगलक (1351-88) द्वारा की गई थी। हुमायूँ ने यहाँ एक मस्जिद बनवाई थी, जो अब टूटी-फूटी अवस्था में है। इसे फारसी शैली में चमकीली टाइलों से सुसज्जित किया गया था।

683. बड़खल दिल्ली से 32 किमी दूर हरियाणा के औद्योगिक नगर फरीदाबाद के पास अरावली की पहाड़ियों में स्थित बड़खल झील पर्यटकों को बरबस ही अपनी ओर आकर्षित कर लेती है। यहाँ के कुसुमित वृक्ष, हरी-हरी मखमली घास और झील से प्रकृति का यौवन उमड़ पड़ता हुआ दिखाई देता है। कुल मिलाकर यह झील पिकनिक का एक अच्छा स्थल है।

उपलब्ध सुविधाएँ· बड़खल में जलपान के लिए गरुड़ नामक मोटल है। यहाँ की झील में नौकायन और मत्स्याखेट की सुविधा है। इनके अतिरिक्त यहाँ बार,

रेस्टोरेंट, हटें, कक्ष, तरण ताल, स्टीम बाथ, मालिश, खेल का मैदान, पेट्रोल पम्प तथा बैंक काउंटर भी है। यहाँ साल में कभी भी जाया जा सकता है। यहाँ घूमकर रात को गुड़गाँव, फरीदाबाद अथवा दिल्ली लौटा जा सकता है।

684. बहादुरगढ़ यह स्थान दिल्ली के लगभग 30 किमी पश्चिम में है।

ऐतिहासिक महत्त्व 1689 में जब औरंगजेब के सेनापति मुकर्रब खान ने शिवाजी के पुत्र संभाजी के रायगढ़ किले पर आक्रमण किया, तो वह संगमेश्वर भाग गया था। मुकर्रब खान ने उसे तथा उसके राजकवि कुलेश और उनकी पत्नियों तथा पुत्रियों को पकड़कर औरंगजेब के पास भेज दिया। औरंगजेब उस समय बहादुरगढ़ में दरबार लगाए हुए था। संभाजी तथा कुलेश को दरबार से चार मील दूर से मूर्खों के वेश में ऊँट पर बैठाकर घुमाया गया। मार्च, 1689 में संभाजी को मृत्युदंड दे दिया गया। संभवतः वह इसी योग्य था, क्योंकि मराठा साम्राज्य के संस्थापक छत्रपति शिवाजी का पुत्र होने के बावजूद वह एक कमजोर और ऐशपसंद शासक था। ठहरने के लिए यहाँ गौरैया रेस्टोरेंट तथा कई अन्य छोटे-छोटे होटल हैं।

685. मिताथल यह स्थान भिवानी से 11 किमी दूर है।

पुरातात्विक महत्त्व यहाँ 1968 में श्री सूरजभान द्वारा कराई गई खुदाइयों से इसके सिंधु घाटी सभ्यता का एक स्थल होने के प्रमाण मिले हैं। यहाँ पाई गई महत्त्वपूर्ण वस्तुओं में इमारतों के ध्वंसावशेष, खिलौने, मूर्तियाँ, पहिये, धान्यागार और रंग किए हुए बर्तन शामिल हैं। मिताथल एक बड़ा और सुविकसित शहर था, जिसकी नगर योजना सोच-समझकर बनाई गई थी।

686. मोरनी चंडीगढ़ से 45 किमी दूर मोरनी प्रदेश के अंबाला जिले में शिवालिक की पहाड़ियों का श्रृंगार है। यहाँ की पहाड़ियों की ढलानों पर सीढ़ीनुमा खेती बहुत आकर्षक लगती है। मुगल सरोवर यहाँ का एक अन्य आकर्षण है। मोरनी में एक प्राचीन दुर्ग भी है। इस दुर्ग से चंडीगढ़ शहर भी दिखाई देता है।

उपलब्ध सुविधाएँ मोरनी में ठहरने के लिए लाल मुनिया नामक एक शानदार बंगला है। खेलकूद के शौकीन पर्यटकों के लिए यहाँ तरण-ताल और रोलर स्केटिंग रिंक की व्यवस्था है। पर्यटन के लिए यहाँ वर्ष में कभी भी जाया जा

सकता है। इसे देखकर रात को चंडीगढ़ अथवा अंबाला भी लौटा जा सकता है।

687. राखीगढ़ी राखीगढ़ी हिसार जिले की नारनौंद तहसील का एक गाँव है, जो दिल्ली से 140 किमी दूर राखीखास और राखी शाहपुर गाँवों के बीच पड़ता है।

पुरातात्विक महत्त्व इस गाँव के पुरातात्विक स्थल होने के प्रमाण काफी वर्षों से मिल रहे थे। ऐसे ठोस प्रमाण सबसे पहले कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय के डॉ. सूरजभान को 1963 में मिले थे। परंतु इसकी खुदाई डॉ. अमरेंद्र नाथ के संरक्षण में फरवरी, 1998 में ही आरंभ हुई। खुदाई में पाई गई वस्तुओं से पता चला है कि यह गाँव हड़प्पा सभ्यता का एक स्थल था और वह भी कोई साधारण स्थल नहीं था। हड़प्पा सभ्यता के अब तक पाए गए स्थलों में से यह सबसे बड़ा स्थल है तथा 125 एकड़ क्षेत्र में फैला हुआ है। इस स्थल के बारे में एक विशेष बात यह भी है कि यह इस सभ्यता के मुख्य स्थलों हड़प्पा और मोहनजोदाड़ो (जो पाकिस्तान में हैं) से 300 किमी दूर हरियाणा में है। देश के इस भाग में इस सभ्यता के पनपने के प्रमाण मिलने से हड़प्पा सभ्यता के उन बहुत से रहस्यों से पर्दा उठने की संभावना है, जिनका अभी तक समाधान नहीं हो पाया। संभवतः इससे इतिहासकारों में भी खलबली मच जाए, क्योंकि अब तक सिंधु घाटी सभ्यता का अस्तित्व 2500 ई०पू० के आस-पास होने का अनुमान लगाया जाता रहा है, परंतु राखीगढ़ी की खुदाइयों से लगने लगा है कि यह सभ्यता लगभग 3500 ई०पू० के आस-पास पनपी। इस प्रकार इस सभ्यता का काल 1000 वर्ष पीछे खिसक जाने से तात्पर्य है प्राचीन भारत के इन 1000 वर्षों का इतिहास पुनः लिखा जाना। इस बात को लेकर पुरातत्वविदों और इतिहासकारों में काफी कौतुहल पैदा हो गया है। इससे यह भी तात्पर्य होगा कि यह सभ्यता और वैदिक सभ्यता समकालीन थी, जिससे उस काल के इतिहास पर भारी प्रभाव पड़ सकता है। इन खुदाइयों ने अब तक की इस धारणा को भी नकार दिया है कि सिंधु घाटी सभ्यता केवल सिंधु घाटी के आस-पास ही फैली थी। राखीगढ़ी स्थल सिंधु घाटी की बजाय गंगा की घाटी के अधिक निकट है और पौराणिक दिशावटी तथा सरस्वती नदियों के बाढ़ वाले क्षेत्र में प्राचीन सरस्वती नदी इसके दक्षिण में पूर्व से पश्चिम की ओर बहती थी। सरस्वती नदी का ऋग्वेद में उल्लेख मिलने से इस बात की पुष्टि होती है कि सिंधु सभ्यता और वैदिक सभ्यता दोनों समकालीन ही थीं। यहाँ पाए गए मछली पकड़ने के ताँबे के अनेक काँटे और बुने हुए जालों से भी इस बात के प्रमाण मिलते हैं कि नदी यहाँ से ज्यादा दूर नहीं थी तथा यहाँ कभी मछुआरों की बस्ती हुआ करती थी। यहाँ पाई गई कुछ मुहरों

पर भी मगरमच्छों की तस्वीरें हैं। राखीगढ़ी की खुदाइयों में पाए गए जीवाश्मों से ज्ञात होता है कि मछली पकडने के अलावा लोगों का मुख्य धंधा पशु-पालन और कृषि भी होता था। उन दिनों के कृषि उत्पादों में से यहाँ गेहूँ और जौ के कुछ नमूने मिले हैं। यहाँ एक साधारण धान्यागार भी पाया गया है, जो दो भागों में विभक्त है। इसके सामने वाले भाग में एक बरामदा मिला है। यहाँ के लोग कुशल लुहार, सुनार और ठठेरे होते थे और धनी होते थे। यहाँ सोने की मालाएँ, चाँदी के बर्तन, मिट्टी के खिलौने, ताँबे की बनी चीजें, अर्ध मूल्यवान रत्न, सेलखड़ी की मुहरें, टेराकोटा की चूड़ियाँ, ताँबे का लौटा और अंगूठी तथा सोने के हथफूल मिले हैं। सोने और चाँदी के अलावा यहाँ के लोगों को केवल ताँबे का ही ज्ञान था। यहाँ ताँबे के एक जार में चाँदी की बहुत सी चूड़ियाँ और सोने का एक हेयरबैंड पाया गया है।

यहाँ के लोग अच्छे व्यापारी भी थे। यहाँ पाई गई मैसोपोटामिया की मुहरों से सिद्ध होता है कि इन दोनों जगहों के मध्य व्यापारिक संबंध थे। यहाँ उन दिनों केवल गुजरात में बनने वाली शैल की चूड़ियाँ भी पाई गई हैं। इस स्थल के दक्षिण-पश्चिम में कच्ची ईंटों से की गई घेराबंदी पाई गई है। इससे इसके किलेबंद होने के संकेत मिलते हैं। इस घेरेबंदी में कुछ कोठरियाँ और उनमें ताँबे और हड्डियों की नोक वाले हड़प्पाकालीन तीर भी पाए गए हैं, जिनसे पता लगता है कि ये कोठरियाँ संतरियों की होती थीं।

यह बात कि यह स्थल सिंधु घाटी सभ्यता का ही था, निम्नलिखित तथ्यों से और प्रमाणित होती है। यहाँ हड़प्पा के नमूने पर एक-दूसरे को समकोण पर काटती हुई सड़कें, सुनियोजित जल-निकास व्यवस्था और घरों का विन्यास पाया गया है, जिनसे पता लगता है कि यहाँ नगर योजना सुनियोजित ढंग से बनाई जाती थी। ईंटों की लंबाई-चौड़ाई का अनुपात हड़प्पा की ईंटों की भाँति 1:2 का है तथा ये 14 इंच चौड़ी, 28 इंच लंबी और 7 इंच मोटी होती थीं। इस प्रकार की ईंटे पहले केवल हड़प्पा में ही पाई गई थीं।

यह क्षेत्र कुल छह टीलों का समूह है। खुदाई केवल टीला नं० 1 और 2 की ही की गई है। टीला नं० 3, 4 और 5 पर गाँव बसा है। खुदाई से मिल रहे अवशेष प्रारंभिक और उत्तरवर्ती हड़प्पा काल के हैं। यहाँ के घर, यज्ञ वेदी, गली तथा पकी ईंटों के फर्श के नमूने प्रारंभिक हड़प्पा काल के और कछुआनुमा भट्टी उत्तरवर्ती हड़प्पा काल की है।

हड़प्पा कालीन सभ्यता के लोग वास्तुकला, मिट्टी से वस्तुएँ बनाने की कला तथा नगर निर्माण कलाओं में निपुण थे। बर्तनों पर उकेरी गई आकृतियों से भी साफ जाहिर होता है कि वे कला प्रेमी थे। बलिवेदी से पता चलता है कि

उस वक्त पशु बलि की प्रथा थी। हवन स्थल से लगता है कि धार्मिक अनुष्ठानों में हवन करने की परंपरा थी।

टीला नं० दो के मध्य भाग से कच्ची मिट्टी का चबूतरा मिला है। चबूतरे के चारों ओर गली, पकी ईंटों की नालियाँ और मानवीय आवास के लिए बनाए गए भवनों के अवशेष भी मिले हैं। इसी टीले पर पकी ईंटों की नाली मिली है, जिसके बारे में अनुमान है कि इसमें छोटी-बड़ी नालियाँ आकर मिलती होंगी। कच्ची मिट्टी के चबूतरे पर पशु बलि का स्थान भी मिला है, जहाँ पशुओं की हड्डियों के अनेक टुकड़े मिले हैं। यहीं से सेलखड़ी की चौकोर मुहरें, पकी मिट्टी की सीलिंग, पशुओं और मानव आकृतियों की मृणमूर्तियाँ तथा कपड़े पर छपाई में प्रयुक्त होने वाला हड्डियों का ठप्पा का मिला है।

कृषि कार्यों में प्रयोग होने वाले ऐसे औजारों के अवशेष भी मिले हैं, जो ताँबे के हैं। मिट्टी के 'उत्तरवर्ती हड़प्पाकालीन' बर्तन भी मिले हैं। इनमें अधिकतर बर्तन लाल रंग के हैं, जिन्हें मिट्टी को अच्छी तरह गूंधकर बनाया गया है। इन पर लाल रंग का लेप तथा काले रंग की चित्रकारी की गई है। बाद में ये बर्तन भट्टी में पकाए गए। इन्हें टनकाने पर धातु के बजाने जैसी आवाज आती है।

इन बर्तनों पर ज्यामितीय आकृतियाँ, पीपल के पत्ते, पक्षियों के चित्र आदि बनाए गए हैं। इस प्रकार चित्रित मिट्टी के बर्तन काफी संख्या में मिले हैं। एक विशेष प्रकार की ढाई इंच लंबी किसी देवी की मूर्ति मिली है। कुछ ऐसे कीमती पत्थरों के टुकड़े भी मिले हैं, जो इस इलाके में नहीं मिलते। इससे लगता है कि यहाँ के निवासी दूर-दराज के क्षेत्रों में भी अपनी जरूरतों के लिए जाया करते थे।

इसके अतिरिक्त इस प्रकार के फर्श के अवशेष भी मिले हैं, जिसकी बनावट से लगता है कि उन्हें रंगदारी के लिए उपयोग में लाया जाता था। टीला नं० दो की दक्षिणी ढलान पर किसी किले की एक सुरक्षा दीवार मिली है, जो कच्ची और मोटी—दोनों प्रकार की ईंटों से बनी है। यह साधारण किस्म की दीवार नहीं लगती। लगभग 42 मीटर लंबी इस दीवार की मोटाई भी साधारण दीवार की मोटाई से काफी अधिक है। इसमें 1.30 मीटर चौड़े दरवाजे के अवशेष भी हैं। सुरक्षा दीवार को मजबूत करने के लिए उसे दोनों तरफ पकी ईंटों से मजबूत किया गया है। वैसे हड़प्पाकालीन बस्तियों का गंगा-सिंधु दोआब में स्थित होने का कारण संभवतः इस क्षेत्र में ऐसी मिट्टी का उपलब्ध होना है, जिसमें कपास की खेती आसानी से की जा सकती है। मिट्टी के बर्तनों के आकार और आकृति भी हड़प्पा काल के बर्तनों से मिलते-जुलते हैं। हड़प्पा की भाँति यहाँ भी

हर घर में टेराकोटा के बेलनाकार छिद्रिल बर्तन पाए गए हैं। इन बर्तनों की तली में भी छेद है। यहाँ के लोग धार्मिक प्रवृति के होते थे। खुदाई में पशु बलि के गड्ढ़े, अग्निकुंड, कब्र और उसके ढाँचे पाए गए हैं। कब्रों का ढाँचा गुंबदनुमा होता था, परंतु शवों के साथ भेंट-पूजा की चीजें नहीं पाई गईं। सभी कब्रें पैर की तरफ से खुली पाई गई हैं।

यहाँ पर मैसोपोटामिया काल की दो बेलनाकार मुहरें पाई गई हैं। उन दिनों मैसोपोटामिया में बेलनाकार मुहरें द्विभाषी होती थीं, परंतु ये मुहरें द्विभाषी नहीं हैं। यदि यहाँ द्विभाषी मुहरें खोजी जा सकीं, तो संभवत एक सदी से न पढ़ी जा पा रही हड़प्पा की लिपि को पढ़ने का राज मालूम हो जाए। यहाँ की जा रही खुदाइयों का यही मुख्य उद्देश्य है।

राखीगढ़ी में खुदाई आरंभ होने से बहुत समय पहले से यहाँ के लोगों को छोटी-मोटी खुदाई करने पर ही तरह-तरह की कीमती चीजें मिल रही थीं। कुछ गाँव वालों ने अपनी चीजें भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग को सौंप दीं, जिससे विभाग को इस स्थान की महत्ता के बारे में पता लगा। यहाँ मिली चीजें झज्जर के संग्रहालय में रखी गई हैं।

688. सुल्तानपुर पक्षी विहार यह विहार हरियाणा प्रदेश के गुड़गाँव जिले में गुड़गाँव-झज्जर रोड (वाया चंदू) पर गुड़गाँव से 15 किमी दूर स्थित है। यह गुड़गाँव जिले के प्रसिद्ध गाँव खेंटावास से लगभग छह किमी दूर है। 400 एकड़ में फैले इस विहार की स्थापना पीटर जैकसन नामक प्रसिद्ध पक्षी विज्ञानी की प्रेरणा से 1977 में की गई थी। इसे हाल ही में राष्ट्रीय पार्क का दर्जा दे दिया गया है। यहाँ पर बत्तख, नीलसर, जलपेही, जलमुर्गी साइबेरियाई सारस और लालसर आदि पक्षी देखने को मिलते हैं। यहाँ जाने के लिए सितंबर से मार्च तक का समय उपयुक्त रहता है। विहार में एक गेस्ट हाउस, कॉटेज, रेस्टोरेंट, बार, वाच टावर, मचान और दूरबीन तथा भुस भरे पक्षियों का एक संग्रहालय है।

689. सूरजकुंड यह स्थल फरीदाबाद से 15 किमी की दूरी पर है। यहाँ कभी एक सूर्य मंदिर होता था, जिसके भग्नावशेष आज भी दिखाई देते हैं। अरावली पर्वत की गोद में बसे इस स्थल में एक प्राकृतिक झील है, जिसे सूरजकुंड कहा जाता है। यहाँ रंग-बिरंगे फूल, मोरों का नयनाभिराम नृत्य और तरह-तरह के जल पक्षी एक अलौकिक सौंदर्य का सृजन करते हैं। दिल्ली के निकट होने के कारण यह एक अच्छा पिकनिक स्थल बन गया है। यहाँ पर्यटक प्रतिदिन काफी संख्या में आते हैं। फरवरी माह के दौरान हरियाणा सरकार यहाँ

एक अत्यंत आकर्षक शिल्प मेला आयोजित करती है, जिस दौरान इस स्थल का सौंदर्य देखते ही बनता है। मेले के दौरान अच्छे शिल्पकारों को पुरस्कार दिए जाते हैं। एक फैशन शो भी आयोजित किया जाता है तथा शिल्पियों और चित्रकारों की एक कार्यशाला भी की जाती है।

उपलब्ध सुविधाएँ पर्यटकों की बढ़ती हुई संख्या को देखकर हरियाणा सरकार ने यहाँ राजहंस नाम का मोटल खोला हुआ है। सूरजकुंड में वातानुकूलित और साधारण कमरों, गिफ्ट शोप, हैल्थ क्लब, ब्यूटी पार्लर, सोना/स्टीम बाथ, मालिश, व्यायामशाल, नख-तराशी, चर्म-चिकित्सा, सम्मेलन कक्ष, बैंकिट हाल, बिलियार्ड्ज कक्ष, टेनिस, घुड़सवारी, साइकिल सवारी, शैल आरोहण (रॉक क्लाइंबिंग), नौका विहार, मत्स्याखेट, गोल्फ क्लब और तरणताल की सुविधाएँ हैं। यह स्थल फिल्मों की सूटिंग के लिए भी बहुत उपयुक्त है।

690. सोहना यह स्थान दिल्ली से 56 किमी और गुड़गाँव से 24 किमी दूर है। यह अपने गर्म पानी के चश्मों के लिए जाना जाता है। यहाँ के पानी में नहाने से चर्म रोग ठीक हो जाते हैं। इसलिए यहाँ पर्यटक भारी संख्या में (विशेषकर सर्दियों के दिनों में) आते रहते हैं। यहाँ ठहरने के लिए सस्ती मंहगी हर प्रकार की व्यवस्था है। चश्मों के पास हरियाणा पर्यटन ब्यूरो की तरफ से बारबेट (बसंता) हट, मोटल, कैंपर हट, काफी होम, बार, स्टीम/सोना/सल्फर बाथ, छोटे स्प्लैश पूल तथा गार्डन पार्टियों की व्यवस्था है।

691. हाँसी यह शहर हिसार जिले में है।

ऐतिहासिक महत्त्व 1043 में हाँसी के किले पर दिल्ली के राजा महीपाल तोमर का अधिकार था। बाद में अजमेर के चौहान राजा विग्रहराज चतुर्थ (1153-63) ने दिल्ली पर अधिकार करके हाँसी को भी जीत लिया। 1186 में मुहम्मद गौरी द्वारा पंजाब जीत लिए जाने के बाद अजमेर के चौहान राजा पृथ्वीराज तृतीय ने अपने देश की रक्षा करने के लिए आगे बढ़कर हाँसी पर अधिकार कर लिया। 1192 में तराई के दूसरे युद्ध में विजय के बाद इस शहर पर मुहम्मद गौरी का आधिपत्य हो गया। उसके गजनी वापस जाने के बाद एक चौहान सेनापति ने हाँसी का घेरा डाला, परंतु गौरी के प्रतिनिधि कुतुबुद्दीन ऐबक ने उसे राजपुताना की ओर खदेड़ दिया। फुलकियाँ मिसल के सरदार आला सिंह (1696-1765) ने भी इस पर कब्जा किया था।

692. हिसार इस शहर की स्थापना फिरोजशाह तुगलक (1351-88) ने की थी। उस समय इसका नाम हिसार-ए-फिरोजा था। 1414 में खिज्र खाँ ने दौलत खाँ लोदी को हराकर उसे हिसार में कैद किया था। 1525 ई० में बाबर की तरफ से उसके पुत्र हुमायूँ ने इब्राहिम लोदी के हिसार-ए-फिरोजा के सूबेदार हमीद खाँ को हराकर इस पर कब्जा कर लिया। परंतु हुमायूँ ने अपने शासन काल के दौरान इसे अपने भाई कामरान को दे दिया था। फुलकियाँ मिसल के सरदार आला सिंह (1696-1765) ने भी इस पर कब्जा किया था।

693. होडल दिल्ली-मथुरा मार्ग पर स्थित यह शहर अपने डबचिक पर्यटन केंद्र के लिए जाना जाता है, जो एक अच्छा पिकनिक स्थल है।

उपलब्ध सुविधाएँ डबचिक पर्यटन केंद्र में ठहरने के लिए छोटे-छोटे खम्भों पर झोंपड़ीनुमा अनेक आकर्षक आवास हैं, जिनमें सस्ते व महंगे दोनों तरह के बंगले हैं। जलपान के लिए यहाँ एक रेस्तराँ है और नौकायन का प्रबंध भी है। इनके अतिरिक्त यहाँ बार, कॉटेज, मोटल, कैंपर हट, गिफ्ट शोप, पेट्रोल पम्प, फास्ट फूड की दूकान तथा बच्चों के लिए हाथी की सवारी की व्यवस्था भी है।

उपलब्ध कराई जाने वाली सुविधाएँ इस स्थल के सामने 25 एकड़ भूमि में एक फलदार उद्यान लगाया जा रहा है और एक लोक कला संग्रहालय बनाए जाने की योजना भी है। विदेशी पर्यटकों को भारत के ग्रामीण जीवन की झाँकी दिखाने के लिए पास ही एक पर्यटन ग्राम भी बनाया जा रहा है। यहाँ भ्रमण के लिए वर्ष में कभी भी जाया जा सकता है।

हिमाचल प्रदेश

विवरण

वर्तमान हिमाचल प्रदेश की उत्पत्ति तीस पहाड़ी रियासतों को मिलाकर 15 अप्रैल, 1948 को की गई थी। 1 नवंबर, 1966 को इसमें पंजाब के कुछ हिस्से भी मिला दिए गए। इसे पूर्ण राज्य का दर्जा 25 जनवरी, 1971 को मिला।

राज्य का क्षेत्रफल 55673 वर्ग किमी है। राज्य में जनसंख्या का घनत्व 93 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी और साक्षरता दर लगभग 64% है। राज्य में बारह जिले हैं। राज्य की प्रमुख भाषाएँ हिंदी और पहाड़ी हैं।

उत्सव

प्रदेश में होली, दीवाली, दशहरा, ईद आदि त्यौहार मनाए जाते हैं। सावन अष्टमी के दिन लोग नयना देवी के दर्शन करने जाते हैं। जवालामुखी मेला, मनाली में फरवरी में शरद उत्सव, मंडी में मार्च में शिवरात्रि, स्पिति में जुलाई में लडारचा मेला, चंबा में मिंजर मेला, भरमौर में मणिमहेश मेला, केलांग में अगस्त में जन-जाति उत्सव, किन्नौर में सितंबर में फुलेक उत्सव, कुल्लू में अक्तूबर में दशहरा, रामपुर में नवंबर में लावी मेला तथा नवंबर में ही रेणुका का मेला हिमाचल प्रदेश के प्रमुख मेले हैं।

नृत्य

हिमाचल प्रदेश में सैब्रो लोक नृत्य के अलावा कुल्लु घाटी में नाटी नृत्य भी प्रचलित है। सैब्रो नृत्य में मुख्य रूप से महिलाएँ ही भाग लेती हैं।

694. काँगड़ा यह शहर आधुनिक हिमाचल प्रदेश में है। काँगड़ा में एक प्रसिद्ध किला है, जिसका निर्माण महाभारत काल के दौरान कौरवों के एक साथी सुशर्मा चन्द कटोच द्वारा करवाया गया माना जाता है। यह कोट कटोच राजाओं की राजधानी था। प्राचीन तथा मध्य काल में यहाँ का ब्रजेश्वरी देवी मंदिर अपने वैभव के लिए प्रसिद्ध था। महमूद गजनी ने इस मंदिर तथा काँगड़ा में नगरकोट के किले पर 1009 ई० में आक्रमण किया था, परंतु यहाँ के राजा ने उसके समक्ष आत्म-समर्पण कर दिया। फरिश्ता के अनुसार गजनी 7000 स्वर्ण

दीनार और 700 मन सोना लेकर वापस लौटा। उसने नगरकोट के किले को इसके राजा के ही सुपुर्द कर दिया। मांडू के परमार राजा लक्ष्मण देव (1086-94) ने पंजाब के मुस्लिम सूबेदार महमूद से बदला लेने के लिए काँगड़ा पर आक्रमण किया था। फिरोजशाह तुगलक ने काँगड़ा किले पर 1331 ई० में आक्रमण किया। काँगड़ा दुर्ग अभेद्य था, परंतु तुगलक ने इसका छह महीने तक घेरा डाले रखा, जिसके बाद किले के राजा ने फिरोजशाह को कुछ उपहार दिए। फिरोजशाह अपने साथ यहाँ के पुराने ज्वालामुखी मंदिर से संस्कृत की कुछ पांडुलिपियाँ भी ले गया। 16 जनवरी, 1399 को इस पर तैमूर लंग ने कब्जा करके यहाँ लूट-पाट मचाई। पन्द्रहवीं शताब्दी में सिकंदर लोदी ने ब्रजेश्वरी देवी मंदिर की मूर्तियाँ तोड़ दीं। 1540 में इसे ख्वास खाँ ने लूटा इस प्रकार यह मंदिर कई बार बना और कई बार उजड़ा। 1905 के भूकंप में मंदिर और किला बुरी तरह ध्वस्त हो गए। वर्तमान मंदिर का निर्माण 1920 में हुआ था। इस का रख-रखाव राज्य सरकार द्वारा किया जाता है। जहाँगीर के पुत्र खुर्रम ने चौदह महीनों तक घेरा डालने के बाद काँगडा को 1617 ई० में जीता। जहाँगीर ने इसके किले

स्केल में नहीं

में एक मस्जिद बनवाई। अट्ठारहवीं शताब्दी में इसे राजा संसार चंद कटोच द्वितीय ने मुगलों से छीनकर काँगड़ा की सीमा चंबा और कुल्लू घाटी तक बढ़ा ली। 1809 ई० में महाराजा रणजीत सिंह ने इसे गोरखा राजा संसार सिंह से छीन लिया। 1744 से 1773 के बीच गुलेर के राजा गोवरधन सिंह ने मुगल दरबार से भागकर आए अनेक चित्रकारों को शरण दी। इससे अट्ठारहवीं शताब्दी के मध्य में मुगल सूक्ष्म चित्रकारी के आधार पर यहाँ एक नई शैली की चित्रकला पनपी, जिसे काँगड़ा शैली की चित्रकला कहा गया। राजा संसार चंद के एक गद्दी कन्या के साथ प्रेम की कथा भी इसी शैली की चित्रकला में अंकित है।

ब्रजेश्वरी मंदिर, काँगड़ा

695. कुल्लू कुल्लू घाटी हिमाचल पर्वत पर 1219 मी० की ऊँचाई पर है। इस नगर में दशहरा बड़ी धूम-धाम से मनाया जाता है। इस अवसर पर यहाँ आस-पास की कई जगहों से स्थानीय देवताओं की पालकियाँ आती हैं। कुल्लू अपनी हस्तकला और ऊनी शालों के लिए प्रसिद्ध है। कुल्लू में लकड़ी का बना धूंगड़ी मंदिर दर्शनीय है।

पर्यटन स्थल कुल्लू से आठ किमी दूर बिजली महादेव प्राचीन मंदिर के लिए प्रसिद्ध है। कुल्लू से 4 किमी दूर वैष्णो देवी मंदिर, 5 किमी दूर देवी जगन्नाथी मंदिर, 12 किमी दूर दयार में विष्णु मंदिर तथा 13 किमी दूर 1433 मी की ऊँचाई पर रायसन नामक आकर्षक शिविर है, जहाँ से घाटी के विभिन्न ट्रैकिंग स्थलों का आनंद उठाया जा सकता है। कुल्लू से 15 किमी दूर कैशधार तथा 19 किमी दूर 1417 मी की ऊँचाई पर घाटी का सबसे विशाल क्षेत्र कटराई है। कटराई से 5 किमी दूर 1768 मी की ऊँचाई पर जगतसुख नगर है, जो कभी कुल्लू रियायत की राजधानी होती थी। यहाँ का किला मध्य कालीन वास्तुकला का एक अच्छा नमूना है। यहीं निकोलस रोरिक का कला संग्रहालय भी है। इसी प्रकार 15 किमी दूर बशेश्वर महादेव का मंदिर है। 42 किमी दूर कासोल तथा 44 किमी दूर पार्वती घाटी में मणिकर्ण है, जहाँ गर्म पानी के चश्मे बहते रहते हैं। 69 किमी दूर शोजा भी दर्शनीय है।

उपलब्ध सुविधाएँ कुल्लू से निकटतम हवाई अड्डा 10 किमी तथा रेलवे स्टेशन जोगिंदर नगर 95 किमी दूर है, जहाँ से बस या टैक्सी द्वारा कुल्लू जाया जा सकता है। सड़क मार्ग से यह दिल्ली, चंड़ीगढ़, शिमला, धर्मशाला आदि कई शहरों से जुड़ा हुआ है। यहाँ ठहरने के लिए छोटे-बड़े अनेक होटल हैं। कुल्लू का तापमान गर्मियों में 31°से और 18°से के बीच तथा सर्दियों में 16°से और 5° से के बीच रहता है।

696. ग्रेट हिमालयन राष्ट्रीय पार्क इस पार्क की स्थापना 1984 में कुल्लू जिले में की गई थी। यहाँ पर बाघ, तेंदुए, घुरल, कस्तूरी मृग, काले भालू, थार, हिम गुलदार, मौगल, खलीज, फेजेंट आदि जीव मिलते हैं। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय अप्रैल से जून और सितंबर से अक्तूबर तक का होता है। यहाँ से निकटतम शहर शमसी मात्र 40 किमी की दूरी पर है।

697. चंबा चंबा 996 मी की ऊँचाई पर रावी नदी के उत्तरी किनारे पर स्थित एक ऐतिहासिक नगरी है। इस शहर को राजा साहिल वर्मा ने 920 ई० में बसाया था और इसका नाम अपनी पुत्री चंपावती के नाम पर रखा। यह शहर प्राकृतिक हरियाली और हिमाचली संस्कृति का विशेष केंद्र है।

पर्यटन स्थल चंबा में प्राचीन लक्ष्मी नारायण मंदिर समूह है, जिसमें कुल छह मंदिर हैं। इनका निर्माण आठवीं शताब्दी में किया गया था। चंबा में चौगान नामक एक हरा-भरा मैदान भी है, जहाँ जुलाई-अगस्त में पिंजर उत्सव होता है। यहाँ से एक किमी दूर चामुंडा देवी का मंदिर है, जो अपनी लकड़ी की नक्काशी के लिए प्रसिद्ध है। 20 किमी दूर सहो में चंद्रशेखर मंदिर है। 30 किमी दूर कटासन में भी एक मंदिर है। 10 किमी दूर झमवाड़, 11 किमी दूर सरोल, 56 किमी दूर सलूनी घाटी, 78 किमी दूर भंदाल घाटी, 137 किमी दूर पांगी घाटी, 65 किमी दूर भरमौर तथा 100 किमी दूर मणिमहेश प्राकृतिक स्थल हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ चंबा से निकटतम रेलवे स्टेशन पठानकोट (120 किमी) तथा हवाई अड्डा अमृतसर (245 किमी) है। आस-पास के अन्य शहरों से यह मुख्य रूप से सड़क मार्ग से ही जुड़ा हुआ है। ठहरने के लिए चंबा में कई होटल व धर्मशालाएँ हैं। भ्रमण की सुविधा के लिए होटल इरावती स्थित पर्यटन कार्यालय से संपर्क किया जा सकता है। यहाँ भ्रमण के लिए मार्च से जून तथा अक्तूबर-नवंबर के महीने उपयुक्त होते हैं।

698. डलहौजी डलहौजी शहर धौलाधार की पहाड़ियों में 2036 मी की ऊँचाई पर बसा है। इस स्थल को सर्वप्रथम लार्ड डलहौजी ने 1850 में अपने रहने के लिए चुना था। यहाँ चीड़ और देवदार के वृक्ष ज्यादा मात्रा में हैं। यहाँ से बालुन, कबलोग, पोटरीन, तेहरा और बकरोटा नामक पहाड़ियों के दृश्य दिखाई देते हैं। इनके अतिरिक्त यहाँ भूरी सिंह संग्रहालय, अखंडचंडी महल, रंग महल खजियार (24 किमी) भी दर्शनीय हैं। प्राकृतिक सौंदर्य से भरपूर इस स्थान में पंजपुला नामक स्थान पर शहीद भगत सिंह के क्रांतिकारी चाचा शहीद अजीत सिंह की समाधि है। यहीं पर खजियार में एक झील है, जहाँ सोने के गुंबद वाला एक मंदिर है। पंजपुला के रास्ते में ही सतधारा है, जहाँ सात झरने बहते हैं। इसी प्रकार जंदड़ी घाटी, आठ किमी दूर काला टोप और दस किमी दूर डायन कुंड अच्छे दर्शनीय स्थल हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ यहाँ से निकटतम हवाई अड्डे जम्मू एवं अमृतसर (दोनों 188-188 किमी) हैं। निकटतम रेलवे स्टेशन पठानकोट (80 किमी) है। सड़क मार्ग से यह देश के सभी भागों से जुड़ा हुआ है। डलहौजी घूमने के लिए अप्रैल से जून तथा सितंबर से नवंबर तक का समय उपयुक्त रहता है। यहाँ का तापमान 24° और 1°से के मध्य रहता है। ठहरने के लिए यहाँ यूथ होस्टल, डलहौजी क्लब तथा खजियार में पर्यटन विभाग का टूरिस्ट बंगला और पीडब्ल्यूडी का रेस्ट हाउस है।

699. धर्मशाला 1852 में यह शहर काँगड़ा रियासत की राजधानी थी। अक्तूबर 1959 में जब चीन ने तिब्बत पर आक्रमण किया, तो दलाई लामा अपने 80000 शरणार्थियों समेत यहाँ आ गए थे। तभी से यह शहर संसार भर में जाना जाने लगा है। 1960 में दलाई लामा ने यहाँ मैक्लाडगंज को अपनी निर्वासित सरकार का मुख्यालय बनाया। चीन सरकार ने अपने आक्रमण के दौरान ल्हासा स्थित तिब्बत भवन को नष्ट कर दिया था। यह भवन पुनः बनाया गया है। यहाँ एक तिब्बती ग्रंथागार तथा संग्रहालय भी है। धर्मशाला से तीन किमी दूर कुनाल पठारी में एक शिला मंदिर है। चिन्मय तपोवन (10 किमी) में एक वृद्धाश्रम, भगसुनाग (2 किमी) तथा मछरियाल में एक झरना, मसरूर (40 किमी) में 15 मंदिर, नूरपुर (66 किमी) में प्राचीन किला तथा कृष्ण मंदिर हैं। इनके अतिरिक्त नामग्याल मठ, नीचुँग मठ, त्रियूंड (10 किमी) व डल झील (11 किमी) में पिकनिक स्थल तथा करेरी (22 किमी) में हरा-भरा मैदान है। 11 किमी दूर धर्मकोट से धौलाधार की चोटियों के दर्शन होते हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ धर्मशाला से निकटतम हवाई अड्डा और रेलवे स्टेशन पठानकोट (85 किमी) है। धर्मशाला जाने के लिए मार्च से जून तथा सितंबर से नवंबर तक का मौसम उपयुक्त रहता है। यहाँ ठहरने के लिए छोटे-बड़े कई होटल हैं। धर्मशाला में हिमाचल प्रदेश का पर्यटन कार्यालय कोतवाली बाजार में है।

700. नगरकोट यह स्थान प्रदेश के काँगड़ा जिले में है। महमूद गजनी ने यहाँ के किले पर 1009 ई० में आक्रमण करके सोने की 7000 दीनारें, 700 मन सोने-चाँदी के बर्तन, 200 मन सोना, 2000 मन चाँदी और 20 मन मणियाँ लूटीं। 1043 में दिल्ली के महीपाल तोमर ने नगरकोट के किले पर अधिकार कर लिया।

701. नैनादेवी जीव विहार यह विहार बिलासपुर जिले में स्थापित किया गया है। यहाँ पर नाना प्रकार की वनस्पतियाँ मिलती हैं। यहाँ तेंदुए, जंगली सूअर, घुरल, भालू, थार, गुलदार, नीलगाय और देशी-विदेशी पक्षियों की भरमार रहती है।

702. पालमपुर यह स्थान धर्मशाला से 3.5 किमी दूर 1249 मी की ऊँचाई पर है। इसके चारों ओर चाय के बाग हैं। यहाँ से बर्फ से ढकी चोटियों के मनोहारी दर्शन होते हैं। न्यूघाल खुड झरना यहाँ का मुख्य आकर्षण है। पालमपुर प्रसिद्ध चित्रकार सरदार शोभा सिंह का निवास स्थान भी रहा है। पालमपुर के पास अप्रतिम सौंदर्य से भरपूर अल-हिलाल भी दर्शनीय है।

703. पिनघाटी राष्ट्रीय पार्क इस पार्क की स्थापना का मुख्य उद्देश्य बर्फ में रहने वाले पशु-पक्षियों की सुरक्षा करना है। यहाँ पर बर्फ में रहने वाली चील, भेड़ व बकरियाँ पाई जाती हैं। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय जून से सितंबर तक का होता है। रामपुर यहाँ का प्रसिद्ध नगर है।

704. पौंग झील जीव विहार इस जीव विहार की स्थापना 1983 ई० में पौंग बाँध के चारों ओर की गई। इसी क्षेत्र में साइबेरिया के पक्षी सबसे अधिक आते हैं। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय नवंबर से मार्च तक का होता है। चंबा यहाँ से निकटतम शहर है।

705. पौंटा साहिब यमुना नदी के किनारे बसा यह शहर (398 मी) हिमाचल प्रदेश की सीमा पर है और देहरादून से 44 किमी दूर है। इसकी

स्थापना गुरु गोविंद सिंह ने की थी।

पर्यटन स्थल पौंटा साहिब में गुरुद्वारा पौंटा साहिब (200 मी), यमुना मंदिर (200 मी) और राम मंदिर (मंदिर श्री देई जी साहिबा) दर्शनीय हैं। पौंटा साहिब से 4.5 किमी दूर पाटलियाँ में शिव मंदिर, 8 किमी दूर बाबा गरीब नाथ का मंदिर, 12 किमी दूर सिंबलवाड़ा वन्य जीव विहार, इतनी ही दूर गुरुद्वारा शेरगढ़ साहिब, 16 किमी दूर सिरमौर, 30 किमी दूर कटासन देवी मंदिर, 45 किमी दूर सिरमौर के राजा करन प्रकाश द्वारा 1621 में स्थापित नाहन, 60 किमी दूर सकेती का जीवाश्म उद्यान और 63 किमी दूर त्रिलोकपुर में बालासुंदरी का मंदिर भी अच्छे दर्शनीय स्थल हैं। इनके अतिरिक्त किला लोहगढ़, भूरेशाह की मजार और आसन बाँध भी देखे जा सकते हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ पौंटा साहिब से निकटतम हवाई अड्डा और रेलवे स्टेशन देहरादून है। ठहरने के लिए यहाँ होटल यमुना तथा अन्य होटल हैं।

706. बैजनाथ यह स्थान मंडी-पालमपुर रोड पर है।

धार्मिक महत्त्व प्राचीन काल में इसे किरनगाम कहा जाता था। यहाँ वैद्यनाथ को समर्पित एक मंदिर के कारण इस नाम बदलकर बैजनाथ हो गया। नागरी शैली में बने इस मंदिर में चामुंडा देवी, सूर्य और कार्तिकेय की मूर्तियाँ स्थापित हैं। मंदिर के गर्भगृह में स्थापित लिंग भारत के बारह ज्योतिर्लिंगों में से एक है। शिवरात्रि के पर्व पर यहाँ लोग भारी संख्या में आते हैं।

707. मंडी यह शहर (800 मी) जोगिंदर नगर से 55 किमी दूर है इसका नामकरण मांडव्य ऋषि के नाम पर हुआ माना जाता है।

पर्यटन स्थल मंडी शहर अपने 81 मंदिरों के लिए जाना जाता है। इनमें से शहर के मध्य स्थित भूतनाथ मंदिर, सतरहवीं शताब्दी में राजा श्यामा सेन द्वारा निर्मित श्यामाकल (तारणा देवी) मंदिर, त्रिलोकनाथ मंदिर, पंचवक्त्र मंदिर, अध्र्नारीश्वर मंदिर तथा ग्यारह रूद्र मंदिर प्रमुख हैं। इनके अतिरिक्त रानी अमृत कौर पार्क, जिला पुस्तकालय भवन और ऐंप्रेस ब्रिज भी देखने लायक हैं।

मंडी की सीमा पर मंडी के राजा सूरज सेन द्वारा 1625 में बनवाया गया कामलाह किला, 16 किमी दूर पंडोह बाँध, 22 किमी दूर सुंदर नगर (1175 मी), 40 किमी दूर पराशर झील (2730 मी), 67 किमी दूर झंझेली (2200 मी) और 82 किमी दूर शिकारी देवी का मंदिर मंडी के आस-पास के दर्शनीय स्थलों में प्रमुख हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ मंडी से निकटतम रेलवे स्टेशन जोगिंदर नगर और निकटतम हवाई अड्डा कुल्लू (59 किमी) है। ठहरने के लिए यहाँ होटल मांडव तथा अन्य होटल हैं।

708. मनाली मनाली प्रदेश में कुल्लू घाटी के उत्तर में 1915 मी ऊँचाई पर स्थित है। मनाली शहर हरे-भरे चरागाहों, ब्यास नदी तथा बर्फ से ढकी चोटियों, फल से लदे बगीचों, देवदार के वृक्षों और हस्तकला की वस्तुओं के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ का प्राकृतिक वातावरण बहुत रमणीय और आकर्षक है।

पर्यटन स्थल मनाली में हिडिंबा का प्रसिद्ध मंदिर है। इसका निर्माण पगौडा शैली में राजा बहादुर सिंह ने 1553 में करवाया था। इस मंदिर में प्रयुक्त लकड़ी में नक्काशी का काम किया गया है। यहाँ हर साल मई में एक मेला लगता है। मनाली से छह किमी की दूरी पर जगतसुख नामक जगह है, जो कभी कुल्लू रियासत की राजधानी होती थी। यहाँ पत्थरों के अनेक प्राचीन मंदिर हैं। इनमें आठवीं शताब्दी में बना गौरीशंकर का मंदिर सबसे पुराना है। मनाली से तीन किमी दूर 1982 मी की ऊँचाई पर वशिष्ठ नामक जगह पर गर्म पानी के चश्मे, छह किमी दूर रोहताँग मार्ग पर नेहरू कुंड नामक जगह पर शुद्ध एवं स्वच्छ जल के चश्मे और सोलह किमी दूर राहला खील नामक जगह पर दूधिया जल के चश्मे हैं। मनाली से 12 किमी दूर कोठी नामक जगह एक अच्छा पिकनिक स्थल है। यहाँ से घाटी का अनुपम प्राकृतिक सौंदर्य देखा जा सकता है। 15 किमी दूर अर्जुन गुफा है। ऐसा माना जाता है कि अर्जुन ने यहाँ पाशुपत अस्त्र प्राप्त करने के लिए इंद्र की आराधना की थी। मनाली से 13 किमी दूर सोलन घाटी है। यहाँ से बर्फ से ढकी चोटियों और ग्लेशियरों के नजारे भी देखे जा सकते हैं। 3980 मी की ऊँचाई पर रोहताँग दर्रा है, जो केवल जून और अक्तूबर के बीच खुलता है। यहाँ से चार किमी दूर एक जीव विहार है, जिसकी स्थापना 1954 में की गई थी। विहार में तेंदुए, घुरल, हिम गुलदार, जंगली सूअर, हरिण, मोनाल और तरह-तरह के पक्षी देखने को मिलते हैं। यहाँ भ्रमण का उपयुक्त समय मई से जून और सितंबर से अक्तूबर तक का होता है।

उपलब्ध सुविधाएँ मनाली से निकटतम हवाई अड्डा और रेलवे स्टेशन 280 किमी दूर शिमला है, जहाँ से बस या टैक्सी द्वारा मनाली जाया जा सकता है। मनाली सर्दियों में स्कीइंग तथा गर्मियों में ट्रैकिंग के लिए प्रसिद्ध है। सर्दियों में यहाँ विंटर कार्निवाल का आयोजन किया जाता है। मनाली में ठहरने के लिए छोटे-बड़े अनेक होटल हैं। मनाली में हिमाचल प्रदेश का पर्यटन कार्यालय द

माल में है। इसका तापमान सर्दियों में 15°से और 3°से के मध्य तथा गर्मियों में 25°से और 12°से के मध्य रहता है।

709. रेणुका यह स्थान नाहन के पूर्व में है। रेणुका झील (672 मी), परशुराम ताल और रेणुका मंदिर (100 मी) यहाँ के प्रमुख दर्शनीय स्थल हैं। यहाँ से 2 किमी दूर एक छोटा चिड़ियाघर तथा शेर शफारी, 5 किमी दूर जटाऊँ और 8 किमी दूर जम्मू पीक है। रेणुका में एक जीव विहार भी है, जिसकी स्थापना 1964 में की गई थी। यहाँ तेंदुए, चीतल, जंगली सूअर, काकड़, घुरल, गुलदार, फेजेंट, मोनाल, तीतर, बटेर आदि जीव-जंतु मिलते हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ रेणुका से निकटतम रेलवे स्टेशन और हवाई अड्डा 95 किमी दूर चंडीगढ़ है। ठहरने के लिए यहाँ होटल रेणुका है। रेणुका में नौकायन तथा ट्रैकिंग की सुविधा भी है। यहाँ घूमने का उपयुक्त समय मार्च से मई और अक्तूबर से दिसंबर तक का होता है।

710. लाहुल-स्पिति लाहुल-स्पिति प्रकृति के रहस्य, रोमांच से भरपूर स्थल है। ये दोनों स्थल अलग-अलग हैं और हिमाचल प्रदेश के केलांग जिले में रोहतांग दर्रे (13500 फुट) के उस पार हैं। लाहुल के लिए मनाली (122 किमी) तथा स्पिति के लिए शिमला (399 किमी) से मुख्य रास्ते जाते हैं। इनकी आबादी चंद्र और भागा नदियों के किनारे बसी हुई है।

पर्यटन स्थल इस क्षेत्र में हिमालय की अजंता कहा जाने वाला ताबो मठ समुद्र तल से 3050 मी की ऊँचाई पर है। इसका निर्माण 996 ई० में हुआ था। यहाँ 9 मंदिर, 23 स्तूप, एक भिक्षु कक्ष तथा एक भिक्षुणी कक्ष दर्शनीय हैं। यह विहार तिब्बत के थोलिंग विहार के बाद दूसरा सबसे बड़ा विहार है। ताबो मठ से ऊपर 3660 मी की ऊँचाई पर कांजा है, जहाँ किब्बर सरीखा विश्व-प्रसिद्ध गाँव दर्शनीय है। कांजा से 'की' नामक बौद्ध विहार 4205 मी की ऊँचाई पर है। यहाँ से कुछ और ऊपर 4551 मी की ऊँचाई पर लाहुल घाटी का प्रवेश द्वार कुंजम दर्रा है, जो वर्ष भर बर्फ से ढका रहता है। यहीं पास में चंद्र नदी का बहुत रमणीक स्रोत चंद्रताल झील है तथा थोड़ा आगे भागा नदी का स्रोत सूरजताल झील है। ये दोनों नदियाँ मिलकर चंद्रभागा और उसके आगे चिनाब बनती हैं। केलांग लाहुल घाटी का सर्वाधिक सुंदर तथा खुला क्षेत्र है। इसके रास्ते में कोंकसर, सिस्सु, गोंधला दर्शनीय हैं। केलांग में कई बौद्ध मंदिर हैं, जिनमें गुरू घंटाल में सतरहवीं सदी के गोंपा (मंदिर) हैं। इन मंदिरों में बुद्ध की विशालकाय

मूर्ति, ग्रंथ, वाद्ययंत्र, भित्तिचित्र, अन्य वस्तुएँ तथा ध्यान कक्ष होते हैं। केलांग से 75 किमी आगे 4890 मी की ऊँचाई पर बारालाचा दर्रा है।

उपलब्ध सुविधाएँ ये स्थान देश के अन्य शहरों से केवल सड़क मार्ग से जुड़े हुए हैं। इनसे निकटतम रेलवे स्टेशन लगभग 400 किमी दूर शिमला है। केलांग के लिए कुल्लू तथा काजा के लिए शिमला का हवाई अड्डा निकट पड़ता है। लाहुल के लिए मनाली-रोहतांग होकर तथा स्पिति के लिए भारत-तिब्बत मार्ग से किन्नौर होकर बसें जाती हैं। दिल्ली से किन्नौर के रास्ते न जाकर सीधे लाहुल जाना हो, तो चंडीगढ़-मंडी-कुल्लू-मनाली-रोहतांग-केलांग मार्ग अपनाना चाहिए। इस रास्ते में शिमला नहीं आता। शिमला से स्पिति के लिए रामपुर-बुशहर-टापरी-पूह-ताबो-काजा रास्ते से होकर जाएँ।

लाहुल-स्पिति भ्रमण के लिए जुलाई से सितंबर तक के महीने सर्वोत्तम होते हैं। अक्तूबर-नवंबर में यहाँ तेज हवाएँ चलती हैं। दिसंबर से अप्रैल तक बर्फ पड़ती रहने के कारण रास्ते बंद रहते हैं तथा मई-जून के महीने ग्लेशियर पिंघलने और रास्ते खुलने में लग जाते हैं। जुलाई से सितंबर में भी कुल्लू, मनाली अथवा निचले भागों में बाढ़ के कारण रास्ते टूटते रहते हैं, अतः चलने से पहले रास्तों की जानकारी कर लेनी चाहिए। चंडीगढ़ व शिमला से इन स्थानों के लिए सर्दियों में हेलीकॉप्टर सेवा भी चलती है।

लाहुल-स्पिति क्षेत्र में भ्रमण के लिए ऐचपीटीडीसी मई से सितंबर के मध्य शिमला-काजा (430 किमी) तथा मनाली-लेह (480 किमी) पैकेज टूर आयोजित करता है। यह निगम दिल्ली से हिमालयन परिक्रमा टूर भी संचालित करता है, जो दिल्ली-शिमला-काजा-रोहतांग-मनाली-दिल्ली के रास्ते पूरा होता है। इस रास्ते में ताबो, काजा-कुंजम दर्रा, नालदेहरा, चैल, सराहन, नारकंडा, रामपुर, बुशहर, कल्पा तथा सागला जैसे खुबसूरत पड़ाव आते हैं। इन सभी स्थानों पर भोजन व ठहरने की अच्छी व्यवस्था है। यह पैकेज टूर 2011 किमी लंबा है तथा इसमें दस दिन का समय लगता है।

लाहुल-स्पिति क्षेत्र में केलांग प्रमुख शहर है, जहाँ ठहरने के लिए मुख्य बाजार में ऐचपीटीडीसी का पर्यटक बंगला और लोक निर्माण विभाग का विश्राम गृह है। यहाँ ठहरे हुए पर्यटक मनाली पर्यटक केंद्र से संपर्क करके काजा में ठहरने की व्यवस्था कर सकते हैं। काजा (स्पिति) में ठहरने के लिए मुख्य बाजार के पास ऐचपीटीडीसी का पर्यटक लॉज तथा तंबू से बने गाँव के अतिरिक्त लोक निर्माण विभाग का विश्राम गृह तथा कई होटल हैं।

711. शिमला शिमला हिमाचल प्रदेश की राजधानी है। यह 2421 मी की ऊँचाई पर बसा हुआ है। इसे अंग्रेजों ने 1824 ई० में बसा कर अपनी ग्रीष्म कालीन राजधानी बनाया था। देवदार के हरे-भरे वृक्षों से घिरे तथा ऐतिहासिक भवनों से पूर्ण इस शहर को पहाड़ों की रानी भी कहा जाता है। वसंत ऋतु आते ही यहाँ चारों ओर फूल ही फूल दिखाई जाते हैं। तब यह जगह और भी सुंदर लगती है। यहाँ पतझड़ सितंबर माह में आती है।

दर्शनीय स्थल शिमला के दर्शनीय स्थलों में गेयटी नाट्यशाला, शिमला की सबसे ऊँची चोटी जाखू पर बना जाखू मंदिर, माल रोड, वायसरायगल लॉज, चाडविक झरना तथा प्रास्पेक्ट हिल प्रमुख हैं। इनके अतिरिक्त यहाँ से 16 किमी दूर स्कीइंग तथा याक की सवारी के लिए कुफरी और 22 किमी दूर गोल्फ मैदान तथा महेश मंदिर के लिए नालदेहरा भी दर्शनीय हैं। यहाँ से कुछ दूर चैल में संसार का सबसे ऊँचा क्रिकेट मैदान है।

उपलब्ध सुविधाएँ शिमला देश के अन्य शहरों से वायु, रेल एवं सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। रेल मार्ग द्वारा जाने के लिए पहले कालका जाना होता है। कालका रेल मार्ग से देश के सभी प्रमुख शहरों से जुड़ा हुआ है। कालका से शिमला के लिए एक छोटी गाड़ी चलती है। ठहरने के लिए शिमला में छोटे-बड़े अनेक होटल एवं आवास गृह हैं। शिमला में हिमाचल प्रदेश का पर्यटन कार्यालय द माल में है। यदि हिमपात का नजारा देखना हो, तो शिमला सर्दियों के मौसम में जाना बेहतर होगा अन्यथा यहाँ वर्ष के किसी भी समय जाया जा सकता है।

712. सकेती सकेती हिमाचल प्रदेश के नाहन नगर से 14 किमी दूर है। यहाँ भू-विज्ञान सर्वेक्षण अधिकारियों को 1968 ई० में कशेरूकी जीवों के अश्मों का एक विपुल भंडार मिला था। भारतीय भू-वैज्ञानिक सर्वेक्षण विभाग ने हिमाचल प्रदेश सरकार के सहयोग से सकेती में 1974 में शिवालिक जीवाश्म उपवन की स्थापना की। यह उपवन एशिया का पहला जीवाश्म उपवन है और विश्व के प्रमुख जीवाश्म उपवनों में से एक है। यह उपवन सकेती गाँव के निकट मारकंडा घाटी में बनाया गया है। ये जीवाश्म हिमालय पर्वतमाला में प्राणि-सभ्यता के अतीत तथा कालक्रमिक विकास को दर्शाते है और अतीत को वर्तमान से जोड़ते हैं। यहाँ के जीवाश्म दस से 25 लाख वर्ष पूर्व प्राग-ऐतिहासिक काल के हैं। इनके अतिरिक्त यहाँ ढाई करोड़ वर्ष पुराने कशेरूकी जीवों के पुरावशेष भी हैं। इस उपवन में जगह-जगह पर प्राग-ऐतिहासिक काल के माडल भी हैं, जिनमें से छह बहुत सुंदर हैं। ये माडल स्टीगोडान गणेश, दरियाई घोड़े, विशाल कछुए,

जिराफ, खजरदंती बाघ और एक घड़ियालनुमा जीव के हैं। यह उपवन 100 एकड़ से अधिक भूमि में फैला हुआ है।

कैसे जाएँ सकेती जाने के लिए पहले हिमाचल प्रदेश के नाहन नगर जाना होता है। हरियाणा की ओर से सकेती जाने के लिए पहले काला अंब जाना होता है। चंडीगढ़ से काला अंब पंचकूला एवं नारायणगढ़ होते हुए लगभग दो घंटे का रास्ता है। काला अंब से यह उपवन मारकंडा नदी के साथ-साथ लगभग चार किमी दूर है। सकेती तक जीप, कार या स्कूटर से जाया जा सकता है। ऐचपीटीडीसी ने यहाँ जाने के लिए कोई सुविधा उपलब्ध नहीं कराई है। यह उपवन देखने के बाद रात को ठहरने के लिए नारायणगढ़, नाहन, पंचकूला, चंडीगढ़, अंबाला अथवा कालका जाना होगा। यहाँ जाने का सर्वाधिक उपयुक्त समय सितंबर से मार्च तक का होता है। इस दौरान यहाँ सर्दी पड़ती है।

713. सोलन सोलन कालका-शिमला राष्ट्रीय राजमार्ग पर शिमला से 52 किमी और कालका से 41 किमी दूर है। यह जगह अपनी खुंबियों के लिए बहुत जानी जाती है।

पर्यटन स्थल मोहन पार्क (भित्तिचित्र तथा मूर्तियाँ), चिल्ड्रंज पार्क (जवाहर पार्क) तथा एक छोटा चिड़ियाघर यहाँ के दर्शनीय स्थल हैं। यहाँ से चार किमी दूर बड़ोग, सात किमी दूर 7000 फुट की ऊँचाई पर गोरखाओं का किला, आठ किमी दूर 375 फुट लंबी हिमाचल की सबसे प्राचीन सुरंग करोल, 15 किमी दूर यंग ड्रम मठ, 25 किमी दूर कसौली, 29 किमी दूर सनावर, 15 किमी दूर डगशाई, 50 किमी दूर अर्की तथा चैल भी दर्शनीय हैं।

उपलब्ध सुविधाएँ यह शहर देश के अन्य शहरों से रेल व सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। रेल मार्ग से जाने के लिए पहले कालका जाना होता है। कालका से सोलन के लिए छोटी गाड़ी मिलती है।

❖❖❖

अफगानिस्तान

714. कंधार—ऐतिहासिक महत्त्व हीरोडोटस के समय में यह शहर बहुत भीड़ भरा और समृद्ध माना जाता था। उसने इसे अपना एक स्त्रप (प्रांत) बनाया था। इसकी राजधानी तक्षशिला ईरानी और आर्य दोनों संस्कृतियों का संगम स्थल थी। प्रथम कुषाण शासक कुजुल कदफिस ने कंधार पर 30 ई० में अधिकार किया था। उसके बाद विम कदफिस 64 से 78 ई० तक और कनिष्क 78 से 102 ई० तक राजा बना। उसकी राजधानी पुरुषपुर थी। फारस के राजा दारियस प्रथम ने इस पर 518 ई०पू० में आक्रमण करके इसे जीत लिया था। चंद्रगुप्त मौर्य के समय में यहाँ का राजा सेल्युकस था। चंद्रगुप्त मौर्य ने 305 ई०पू० में उसे हराकर कंधार को अपने राज्य में मिला लिया था और उसकी पुत्री से विवाह भी किया। हुमायूँ ने इसे अपने भाई कामरान को दे दिया था। परंतु 1540 में जब शेरखाँ से हारने के बाद हुमायूँ ने ईरान के राजा ताहमास्प के यहाँ शरण ली, तो उसे यह शरण इस शर्त पर मिली थी कि वह 14000 सैनिकों की सहायता से उसके लिए कंधार जीतकर देगा। हुमायूँ ने उसे कंधार जीतकर दे दिया। ताहमास्प की मृत्यु के बाद हुमायूँ ने कंधार अपने लिए वापस ले लिया। 1595 ई० में अकबर के सेनानायक मीर मासूम ने इसे फारस के शाह से छीनकर मुगल साम्राज्य में मिला लिया, परंतु 1622 ई० में जहाँगीर को वहाँ के शाह अब्बास के हाथों मात खानी पड़ी। 1638 ई० में शाहजहाँ ने इसे वहाँ के सूबेदार अली मर्दान से पुनः प्राप्त कर लिया, लेकिन उसे भी इसे 1649 ई० में शाह अब्बास द्वितीय को खोना पड़ा। शाहजहाँ ने इसे प्राप्त करने के लिए औरंगजेब के नेतृत्व में 1649 और 1652 में तथा दारा के नेतृत्व में 1653 में सेना भेजी, परंतु सफल नहीं हो सका। भारत पर आक्रमण से पूर्व नादिरशाह ने कंधार पर 1738 ई० में कब्जा कर लिया था। प्रथम अफगान युद्ध के दौरान सर जॉन शोर ने इस पर अप्रैल, 1839 में कब्जा किया।

व्यापार मौर्य-पूर्व काल में यहाँ से श्रावस्ती तक एक महामार्ग जाता था। व्यापार गाड़ियों द्वारा होता था।

715. कंभोज यह स्थान निषाद पर्वत के दक्षिण में है। ऐसा माना

जाता है कि राजसूय यज्ञ के अवसर पर अर्जुन यहाँ भी आए थे। छठी शताब्दी ई०पू० में कंभोज में कश्मीर का दक्षिण-पश्चिमी इलाका और कफिरस्तान का कुछ भाग भी शामिल था। चंद्रगुप्त मौर्य ने 305 ई०पू० के शीघ्र बाद इस पर भी विजय प्राप्त की थी।

716. काबुल—ऐतिहासिक महत्त्व काबुल प्राचीन काल से ही ऐतिहासिक महत्त्व का शहर रहा है। पहली शताब्दी ई० में यह कुषाणों के अधीन था। प्रथम कुषाण शासक कुजुल कदफिस ने काबुल पर 30 ई० में, उसके पुत्र विम कदफिस ने 64 से 78 ई० तक तथा कनिष्क ने 78 से 102 ई० तक शासन किया। बाद में यहाँ तुर्की शाही वंश का शासन स्थापित हुआ। आठवीं शताब्दी में कश्मीर के राजा ललितादित्य मुक्तापीड़ (724-60) ने काबुल जीता। नौवीं शताब्दी में तुर्की शाही वंश के एक शासक लगर्तूमान को हिंदू ब्राह्मण जाति के उसके एक मंत्री कल्लर ने गद्दी से हटाकर यहाँ हिंदू शासन की स्थापना की। उसका राज्य तुरूक्षों के क्षेत्र (काबुल घाटी) से दरदों के क्षेत्र (कश्मीर में किशन गंगा घाटी) तक फैला हुआ था। उसने कश्मीर के शासक शंकरवर्मन के आक्रमण को सफल नहीं होने दिया। 870 में शफारिद याकूब इब्न लाइथ ने काबुल पर कब्जा कर लिया। परंतु शीघ्र ही कश्मीर के शासक गोपाल वर्मन ने उसे हटाकर कल्लर के बेटे तोरमाण को गद्दी पर बैठा दिया और उसका नाम कमलुक रखा। कमलुक के बाद भीम तथा जयपाल राजा हुए। जयपाल ने दसवीं शताब्दी के अंतिम दो-तीन दशकों में शासन किया। उसने 986-87 में गजनी पर आक्रमण किया, परंतु हार गया और उसे एक अपमानजनक संधि पर हस्ताक्षर करने पड़े। जब उसने संधि की शर्तें तोड़ दीं, तो सुबुक्तगीन ने 989 में उस पर आक्रमण कर दिया। कुर्रम घाटी में हुए युद्ध में उसकी हार हुई और उसे पुनः एक अपमानजनक संधि पर हस्ताक्षर करने पड़े तथा लमगान और पेशावर के इलाके छोड़ने पड़े। 1001 ई० में उसे सुबुक्तगीन के पुत्र महमूद ने हरा दिया। इन पराजयों से हुए अपने अपमान के कारण उसने आत्म-हत्या कर ली। 1004-05, 1008,1013 तथा 1014 में महमूद ने उसके पुत्र आनंदपाल को भी हराया।

1305 ई०पू० में चंद्रगुप्त मौर्य ने सेल्युकस को हराकर काबुल को अपने राज्य में मिला लिया था। 1505 ई० में बाबर ने इसे उलूग बेग मिर्जा के नाबालिग बेटे अब्दुल रजाक से छीन लिया। मार्च, 1527 में कन्वाह के आक्रमण में विजय तक बाबर ने काबुल से ही भारत पर शासन किया। इस विजय के बाद उसने अपनी राजधानी आगरा बदल ली। परंतु हुमायूँ और उसके भाई कामरान के बीच झगड़े के कारण काबुल पर इनका स्वामित्व बार-बार बदलता रहा। हुमायूँ, जिसने

काबुल खो दिया था, ने 1544 में इसे पुनः प्राप्त कर लिया। फिर कामरान ने 1546 में, हूमायूँ ने 1547 में, कामरान ने पुनः 1548 में, हूमायूँ ने पुनः उसी वर्ष, कामरान ने फिर 1549 में और इसके शीघ्र बाद हुमायूँ ने इस पर कब्जा कर लिया। इस बार उसने कामरान की आँखें निकलवा दीं। बाद में अकबर के भाई हाकिम मिर्जा ने इस पर नियंत्रण कर लिया और उसकी मृत्यु के बाद अकबर ने इसे 1585 ई० में अपने साम्राज्य में मिला लिया। जून, 1773 में अहमदशाह अब्दाली की मृत्यु के बाद उसका आलसी और कमजोर पुत्र तैमूर शाह (1773-93) काबुल का शासक बना। उसके बाद उसका पाँचवाँ बेटा जमान शाह 1793 में गद्दी पर बैठा। वह एक शक्तिशाली शासक था, परंतु एक गृह कलह में उसे अंधा कर दिया गया था। उसके बाद महमूद शाह (1800-03) शासक बना। वह बरकाजाई नेता फतेह खाँ के हाथों की कठपुतली था। 1803 में उससे अहमद शाह दुरानी के पोते शाह शुजा ने गद्दी छीन ली। परंतु वह एक अयोग्य शासक था और 1809 में महमूदशाह को फिर शासक बना दिया गया। उसने 1818 में फतेह खाँ को मरवा दिया, जिससे बरकाजाई लोग क्रोधित हो गए और उन्होंने कुछ ही वर्षों में हेरात को छोड़कर पूरे अफगानिस्तान पर कब्जा कर लिया। 1826 में बरकाजाई जाति का एक व्यक्ति दोस्त मुहम्मद यहाँ का शासक बन गया और आमीर घोषित हुआ। उसने 1833 में रणजीत सिंह की सहायता से शाह शुजा के काबुल का शासक फिर बनने के प्रयास को विफल कर दिया। प्रथम अफगान युद्ध के दौरान सर जॉन शोर ने इस पर 3 अगस्त, 1839 को कब्जा कर शाह शुजा को दुबारा गद्दी पर बैठा दिया। यहाँ के शास्क दोस्त मुहम्मद ने 1840 में आत्म-समर्पण कर दिया। उसे कलकत्ता में कैद करके रखा गया। परंतु 2 नवंबर, 1841 को काबुल में विद्रोह हो गया। भीड़ ने बर्नज को उसके घर से निकालकर मार डाला अंग्रेज़ सेनापति एलफिंस्टोन के कमजोर होने के कारण उसके मिलिट्री आयुद्ध पर कब्जा कर लिया। फलस्वरूप अंग्रेज राजनैतिक अधिकारी मैकनोटन ने 11 दिसंबर, 1841 को दोस्त मुहम्मद के पुत्र अकबर खाँ के साथ एक संधि की, जिसके अनुसार दोस्त मुहम्मद को उसकी गद्दी वापस देना, शाह शुजा को पेंशन देकर भारत में रखना और अंग्रेजों द्वारा काबुल छोड़ना तय हुआ। अकबर खाँ ने अंग्रेजी सेना को अपने संरक्षण में सुरक्षित लौट जाने देने का वचन दिया। परंतु मैकनोटन ने संधि की शर्तों का पालन करने की बजाय उसका उल्लंघन किया। उसने विद्रोही कबिला जातियों से संपर्क करना शुरू कर दिया। जब अकबर खाँ के विद्रोहियों को इस बात का पता लगा, तो उन्होंने मैकनोटन को मार डाला। 2 जनवरी, 1842 को दूसरी संधि हुई। 6 जनवरी, 1842 को जब 16000 अंग्रेजी सैनिक अफगानिस्तान से वापस जा रहे

थे, तो अफगानों ने उन पर आक्रमण करके हजारों सैनिकों को मार दिया। जब लार्ड ऑकलैंड स्थिति को न संभाल सका, तो उसकी जगह लार्ड एलनबोरो को भारत का गवर्नर जनरल बना दिया गया। इसी दौरान अफगानों ने शाह शुजा को मार डाला। ऐलनबोरो ने 15 सितंबर, 1842 को काबुल वापस ले लिया। दोस्त मुहम्मद को कलकत्ता से वापस लाकर गद्दी पर फिर बैठा दिया गया। इसके बाद दोस्त मुहम्मद ने काबुल से 1863 तक राज्य किया। उसके बाद उसके 16 पुत्रों में राज्याधिकार का युद्ध छिड़ गया। फलस्वरूप 1864 में शेर अली, 1866 में अफजल खाँ, 1867 में आजिम खाँ और 1868 में पुनः शेर अली काबुल का शासक बना और लारेंस ने इन सभी को आमीर के रूप में मान्यता दे दी। लारेंस ने इनके आंतरिक मामले में दखल न देने की नीति भी अपनाई। जब लारेंस के बाद लार्ड मेयो (1869-72) भारत का गवर्नर जनरल बना, तो शेर अली ने उससे अंबाला में मिलकर कोई निश्चित संधि करने, प्रति वर्ष निश्चित सहायता देने, विदेशी आक्रमणों से अफगानिस्तान की रक्षा करने और उसके पुत्र अब्दुल्ला जान को उसके उत्तराधिकारी के रूप में स्वीकार करने का आग्रह किया, परंतु मेयो ने उसकी बातें नहीं मानीं। कुछ ही वर्षों बाद रूस ने अफगानिस्तान के पास के इलाकों पर कब्जा कर लिया। इससे शेर अली को अपनी सुरक्षा की चिंता हो गई। उसने पहले लार्ड नार्थब्रुक (1872-76) और बाद में लार्ड लिटन से सहायता की माँग की, परंतु उसे कोई सहायता न मिली। बाद में लिटन ने उसकी अंबाला वाली माँगें इस शर्त पर मानने का प्रस्ताव रखा कि शेर अली को काबुल में एक अंग्रेज प्रतिनिधि रखना होगा, परंतु शेर अली ने इसे मानने से मना कर दिया। परंतु इसी दौरान उसे रूसी राजदूत स्टोलीटोफ को अपने यहाँ जबरदस्ती रखना पड़ गया। इससे क्रुद्ध होकर लिटन ने चेंबरलेन को अपना राजदूत बनाकर काबुल भेज दिया और 2 नवंबर, 1878 को शेर अली को उसे स्वीकार करने का निर्देश भेज दिया। जब शेर अली ने इस निर्देश का कोई जवाब नहीं दिया, तो लिटन ने 21 नवंबर, 1878 को दूसरे अफगान युद्ध की घोषणा कर दी। युद्ध में शेर अली की हार हुई। वह रूसी तुर्किस्तान भाग गया। लिटन ने उसके पुत्र याकूब खाँ को आमीर बनाकर उसे 26 मई, 1879 को इस आशय की संधि करने के लिए विवश कर दिया कि वह अंग्रेजों को खैबर और मिसनी दर्रे तथा कुर्रम पिसिन और सीवी के जिले दे देगा; अपनी विदेश नीति में अंग्रेजों की सलाह लेगा तथा काबुल में एक ब्रिटिश राजदूत रखेगा। बदले में अंग्रेजों ने उसे 6 लाख रु. की वार्षिक सहायता देने और विदेशी आक्रमण के समय अफगानिस्तान की रक्षा करने का वचन दिया। संधि के फलस्वरूप कावागनरी को काबुल में अंग्रेजी राजदूत रख दिया गया। परंतु अफगानियों ने उसे 3 सितंबर, 1879 को ही मार

दिया। तब अंग्रेजों ने काबुल और कंधार पर तुरंत कब्जा कर लिया। याकूब खाँ को उन्होंने अपनी शरण में ले लिया, परंतु अफगानियों ने याकूब खाँ के पुत्र मुहम्मद जान को अफगानिस्तान का शासक घोषित कर दिया। फिर भी वे अफगानिस्तान पर नियंत्रण रखने में सफल नहीं हो सके। उन्हीं दिनों याकूब खाँ अपनी गद्दी की दावेदारी छोड़कर भारत आ गया। इसके बाद अंग्रेजों ने दोस्त मोहम्मद के पोते अब्दुल रहमान को शासक बनाकर उसके साथ भी वही संधि की, जो उन्होंने याकूब खाँ के साथ की थी, परंतु इस बार उन्होंने अंग्रेजी सहायता की राशि को छह लाख से बढ़ाकर बारह लाख कर दिया। प्रथम विश्व युद्ध के दौरान जर्मनी ने काबुल के आमीर हबीबुल्ला को भड़काकर उससे भी भारत के सीमा प्रांतों पर हमला करवा दिया, परंतु इसका कोई परिणाम नहीं निकला। 1921 में हबीबुल्ला ने भी अंग्रेजों के साथ एक संधि की, जिसके बाद अंग्रेजों और अफगानियों में मैत्रीपूर्ण संबंध कायम हो गए।

717. गजनी—ऐतिहासिक महत्त्व दसवीं शताब्दी में गजनी समन राज्य के अधीन एक छोटा सा प्रदेश था। इसके गुलाम सूबेदार अलप्तगीन ने अपनी शक्ति बढ़ाकर 943 ई० में गजनी में एक स्वतंत्र शासन स्थापित कर लिया। उसके बाद उसका गुलाम और दामाद सुबुक्तगीन यहाँ का शासक बना। उसके काल में हिंदू राजा जयपाल ने 986-87 ई० में गजनी पर आक्रमण कर दिया, परंतु वह हार गया और उसे अपमानजनक संधि पर हस्ताक्षर करने पड़े। संधि तोड़ने पर सुबुक्तगीन ने जयपाल पर 989 में आक्रमण कर दिया। कुर्रम घाटी में हुए युद्ध में जयपाल की हार हुई। उसे लमगान तथा पेशावर तक के क्षेत्र छोड़ने के अलावा पुनः एक अपमानजनक संधि करनी पड़ी। सुबुक्तगीन अपनी वृद्धावस्था में अपने बड़े बेटे महमूद गजनी से नाराज हो गया था। अतः उसने अपने छोटे बेटे इस्माइल को अपना उत्तराधिकारी बना दिया। सुबुक्तगीन की मृत्यु के बाद महमूद 998 में इस्माइल को पराजित करके स्वयं गद्दी पर बैठ गया। गजनी का शासक बनने के बाद उसने भारत पर कई आक्रमण किए और लूट-पाट मचाई। 1001 में उसने जयपाल तथा 1004-05 तथा 1008, 1013 और 1014 में उसके पुत्र आनंदपाल को हराया। 1031 में उसकी मृत्यु हो गई। उसके बाद उसका पुत्र मसूद गजनी का शासक बना। 1037 में मसूद ने भारत पर आक्रमण करके पूर्वी पंजाब पर अधिकार कर लिया। कुछ समय बाद उसकी हत्या हो गई। उसके बाद उसका पुत्र मोदूद शासक बना। उसके राज्यकाल में तुर्कों ने गजनी पर आक्रमण किया। इसके बाद गजनी और गौर के तुर्कों में संघर्ष तेज हो गया और 1157 में गजनी पर गौर के शासक ग्यासुद्दीन मुहम्मद का कब्जा

हो गया। गजनी का शासक बहराम लाहौर भाग आया। ग्यासुद्दीन मुहम्मद ने अपने भाई शाहबुद्दीन मुहम्मद गौरी को 1174 में गजनी का सूबेदार बना दिया। 1203 में ख्वारिज्म के युद्ध में हार के बाद मुहम्मद गौरी जब गजनी पहुँचा, तो उसके गुलाम और उसकी अनुपस्थिति में गजनी के शासक ताजुद्दीन एल्दोज ने उसे गजनी में आने नहीं दिया और अपने आपको स्वतंत्र घोषित कर लिया। 1214 में एल्दोज ने भारत आकर अल्तमश के साथ युद्ध किया और हार गया। अल्तमश ने उसे पकड़कर बदायूँ के किले में बंद कर दिया, जहाँ बाद में उसकी मृत्यु हो गई। इस प्रकार गजनी अल्तमश के हाथों में चला गया। परंतु बलबन (1266-86) के समय में इस पर मंगोलों ने कब्जा कर लिया। प्रथम अफगान युद्ध के दौरान सर जॉन शोर ने इस पर जुलाई, 1939 में कब्जा किया।

तिब्बत

618. कैलाश मानसरोवर कैलाश मानसरोवर हिमालय पर्वत पर तिब्बत में 19500 फुट की ऊँचाई पर स्थित है और हिंदुओं का पवित्र तीर्थ स्थल है। यह आजकल चीन के कब्जे में है। अतः यहाँ जाने के लिए विदेश मंत्रालय से अनुमति लेनी पड़ती है, जिसके लिए पर्यटक के पास पासपोर्ट होना अनिवार्य है। इस यात्रा का आयोजन जून से सितंबर माह के दौरान किया जाता है। यात्रा में 18 वर्ष से अधिक आयु के वे भारतीय नागरिक भाग ले सकते हैं, जो वहाँ केवल धार्मिक उद्‌देश्य से जाना चाहते हों।

यात्रा की अवधि 30 दिन की होती है। इसके अतिरिक्त वीजा संबंधी औपचारिकताएँ पूरी करने तथा चिकित्सा-जाँच के लिए तीन-चार दिन नई दिल्ली में भी रुकना होता है। यात्रियों को लगभग 35 टोलियों में भेजा जाता है। प्रत्येक टोली में लगभग 15-16 व्यक्ति होते हैं। यात्रा के लिए आवेदन पत्रों की संख्या अधिक होने के कारण उन्हीं व्यक्तियों को प्राथमिकता दी जाती है, जो पहले इस यात्रा पर न गए हों।

कैलाश मानसरोवर की यात्रा अत्यंत दुर्गम तथा कष्टकर है। 30 दिन की यात्रा में से 18 दिन की यात्रा पैदल या खच्चर से करनी होती है। अतः यात्री को स्वस्थ एवं नीरोग होना चाहिए। उच्च रक्त चाप, मधुमेह, दमा, हृदय रोग, मिरगी आदि से पीड़ित व्यक्ति वहाँ न जाएँ। यह यात्रा दुर्गम पहाड़ों और प्रतिकूल मौसम में होने के कारण आवेदक को भारी जोखिम उठाना पड़ सकता है। भारतीय पर्वतारोही फाउंडेशन ने इस यात्रा को ट्रैकिंग अभियान के रूप में मान्यता दे दी है।

यात्रा पर जाने के इच्छुक यात्रियों को आवेदन निर्धारित प्रपत्र में अवर सचिव (चीन), कमरा नं 271-ए, साउथ ब्लाक, विदेश मंत्रालय (पूर्व एशिया प्रभाग), नई दिल्ली-110011 को 31 मार्च के आस-पास तक करना होता है। आवेदन पत्र के साथ किसी डाक्टर का चिकित्सा प्रमाण-पत्र लगा होना चाहिए, जिसमें इस बात की पुष्टि की गई हो कि आवेदक ऊँचे पहाड़ों की यात्रा करने लिए शारीरिक रूप से स्वस्थ है। विभाग चुने गए व्यक्तियों को सूचना यात्रा की प्रस्थान तिथि से तीन-चार सप्ताह पूर्व देता है। चुने हुए यात्रियों को नई दिल्ली

के किसी अस्पताल में विशिष्ट चिकित्सा-जाँच करानी होती है। इसके अतिरिक्त ऊँचाई पर चढ़ सकने की शारीरिक योग्यता की जाँच गुंजी में होती है। यात्रा पर जाने के लिए इन दोनों जाँचों में पास होना पड़ता है। गुंजी में हुई चिकित्सा-जाँच में अयोग्य पाए जाने पर कुमाऊँ मंडल विकास निगम द्वारा लिया गया शुल्क वापस नहीं मिलता।

यह यात्रा काफी खर्चीली है। 1999 में इसका व्यय लगभग 35000 रु. था। यह राशि कुमाऊँ मंडल विकास निगम तथा चीनी पक्ष को दी जाती है। इसके अलावा यात्रियों को आवश्यक उपकरणों, कपड़ों तथा सामान पर भी व्यय करना होता है।

विदेश मंत्रालय को यात्रा के लिए निम्नलिखित फार्म (जिसके साथ पता लिखा पोस्ट कार्ड तथा चिकित्सा प्रमाण-पत्र लगा हो) में आवेदन करना होता है :

कैलाश मानसरोवर यात्रा के लिए आवेदन पत्र
(केवल हिंदी अथवा अंग्रेजी में भरें)

1. नाम (उपनाम पहले) :..................................
2. पिता का नाम :..................................
3. जन्म की तारीख :..................................
4. व्यवसाय :..................................
5. लिंग :..................................
6. पासपोर्ट संख्या :..................................
   पासपोर्ट जारी करने की तारीख :..................................
   तथा स्थान ....
7. पत्राचार का पता तथा पिन कोड :..................................
8. टेलीफोन नं० तथा एस.टी.डी. कोड :..................................
9. आपात स्थिति में उस नजदीकी :..................................
   रिश्तेदार का नाम, पता और टेली. ....
   नं०, जिसे सूचित किया जाना है ....
10. क्या आप इससे पहले भी कैलाश :..................................
   मानसरोवर की यात्रा पर गए थे ? ....
   यदि हाँ, तो किस वर्ष ? ....

कृपया अपने हाल के खींचे हुए पासपोर्ट आकार के दो फोटो संलग्न करें, जिनमें से एक फोटो यहाँ चिपकाएँ।

दिनांक : हस्ताक्षर

नेपाल

719. कपिलवस्तु इसका नामकरण कपिल साधु के नाम पर हुआ था। यह नेपाल की पहाड़ियों की तलहटी में है। बुद्ध के पिता शाक्य राजा शुद्धोधन यहीं के शासक थे। बुद्ध यहाँ से कुछ दूर लुंबिनि में 567 ई०पू० में पैदा हुए थे। अशोक ने कपिलवस्तु की धार्मिक यात्रा 249 ई०पू० में की थी और यहाँ एक स्तूप स्थापित कराया था। फाहियान और ह्यून सांग की यात्रा के दौरान कपिलवस्तु जीर्ण-शीर्ण अवस्था में थी। शाक्य वंश के पतन के बाद कपिलवस्तु का राजनैतिक महत्त्व समाप्त हो गया, परंतु बुद्ध की कई यात्राओं के कारण यह एक धार्मिक स्थान बना रहा। यह स्थान भारत के उत्तर प्रदेश राज्य में है।

720. निगलिवा यह स्थान नेपाल की तराई में है। अशोक ने यहाँ 249 ई०पू० में एक स्तंभ लेख स्थापित करवाया था। इस लेख से पता चलता है कि उसने बुद्ध के जन्म स्थान लुंबिनि की यात्रा की थी।

721. रामपुरवा यह स्थान नेपाल की तराईं में है।

पुरातात्विक महत्त्व अशोक के सात स्तंभ लेखों में से एक लेख यहाँ भी पाया गया है। यह उसने 243-42 ई०पू० में स्थापित कराया था। इसमें उसने धर्म और अहिंसा के संबंध में अपने सिद्धांतों का वर्णन किया है।

722. रुमिनिदेई यह स्थान नेपाल की तराई में है।

पुरातात्विक महत्त्व अशोक ने 249 ई०पू० में यहाँ एक स्तंभ लेख स्थापित कराया था, जिसमें लिखा है कि उसने बुद्ध के जन्म-स्थान लुंबिनि की यात्रा की थी।

723. ललितपटनम् इस शहर की स्थापना सम्राट अशोक ने की थी।

724. लुंबिनि यह स्थान कपिलवस्तु के पास है।

धार्मिक महत्त्व महात्मा बुद्ध शाक्य राजा शुद्धोधन के घर 567 ई०पू० में यहीं पैदा हुए थे। यह बौद्ध धर्म के चार प्रमुख धार्मिक स्थानों में से एक है। रुमिनिदेई लेख से पता चलता है कि अशोक ने 249 ई०पू० में इस स्थान की यात्रा की थी और यहाँ एक स्तंभ लेख तथा एक स्तूप स्थापित करवाया था। माया देवी मंदिर, एक स्तूप और विहार के खंडहर, एक कुआँ तथा लुंबिनि ताल यहाँ के प्रमुख पर्यटन स्थल हैं।

हिमाचल प्रदेश की संतुलन कला

पाकिस्तान

725. अमरकोट—ऐतिहासिक महत्त्व शेरखाँ से हारने के बाद जब हुमायूँ ईरान जा रहा था, तो उसने पहले 1540 ई० में अमरकोट के राजा के यहाँ शरण ली थी। 1542 में अकबर का जन्म यहीं हुआ था। सिंध के विलय के दौरान सर चार्लेस नैपियर के अधीन अंग्रेजी सेना ने इस पर 24 मार्च, 1843 को कब्जा किया था।

726. आमरी यह शहर आधुनिक पाकिस्तान में सिंधु नदी पर है।

ऐतिहासिक महत्त्व यह सिंधु घाटी सभ्यता का एक स्थल था। यहाँ की गई खुदाई से पता चलता है कि यहाँ मकानों की नींव पत्थर से डाली जाती थी, जिस पर कच्ची ईंटों की दीवारें बनाई जाती थीं। ईंटें 53 सेंमी x 10 सेंमी साइज की होती थीं। यहाँ के मिट्टी के बर्तन वजन में हल्के और रंग में पीले तथा गुलाबी होते थे। इन पर सिग्मा तथा चौके के निशान बने होते थे। आमरी संस्कृति 3000 ई०पू० के काल की मानी जाती है।

727. उच्छ—ऐतिहासिक महत्त्व 1175 में मुलतान पर विजय के बाद मुहम्मद गौरी ने उच्छ की रानी को प्रलोभन देकर अपने साथ मिला लिया था, परंतु उसने उसे जो प्रलोभन दिया था, वह कभी पूरा नहीं किया। मुहम्मद गौरी की मृत्यु के बाद उसके प्रतिनिधि नासिरुद्दीन कुबेचा ने यहाँ 1206 में अपना शासन स्थापित कर लिया। यह एक सुंदर नगर था और व्यापार का केंद्र था।

728. ओहिंद इसे उद्भांडपुर भी कहा जाता था। तुर्की शाही वंश के अंतिम राजा लंग तोरमाण को उसके ब्राह्मण मंत्री कल्लर ने मारकर यहाँ हिंदू शाही वंश की नींव डाली। उसने ओहिंद को अपनी राजधानी बनाया। उसके बाद उसका पुत्र तोरमाण गद्दी पर बैठा, परंतु उसे किसी ने गद्दी से उतार दिया। दसवीं शताब्दी के अंत में यहाँ जयपाल का राज्य था। 977 ई० में सुबुक्तगीन ने उस पर जबरदस्त हमला किया। अकस्मात बर्फीला तूफान आ जाने के कारण

जयपाल पराजित हुआ और उसे सुबुक्तगीन को बहुत से हाथी, दस लाख दिरहम तथा कई दुर्ग देने पड़े। बाद में इन दोनों में फिर युद्ध हुआ और जयपाल फिर हार गया। 1000 ई० में सुबुक्तगीन के पुत्र महमूद गजनी ने जयपाल को फिर हराया। महमूद ने ओहिंद पर अधिकार कर लिया। जयपाल को महमूद के पास अपना एक पुत्र छोड़ना पड़ा तथा बहुत सा धन और वार्षिक कर देना पड़ा। परंतु वह यह ग्लानि बर्दास्त न कर सका और उसने आत्म-हत्या कर ली। 1008 में यहाँ महमूद गजनी और जयपाल के पुत्र आनंदपाल के मध्य फिर युद्ध हुआ। इस युद्ध में भी तुर्की सेना की विजय हुई।

729. कोटजी यह पाकिस्तान में आमरी के उत्तर-पूर्व में 160 किमी दूर सिंधु नदी के तट पर है।

ऐतिहासिक महत्त्व यहाँ 1955-56 में की गई खुदाई से सिंधु घाटी सभ्यता-पूर्व काल से मिलते-जुलते शहर के भग्नावशेष पाए गए हैं। यहाँ एक किला भी पाया गया है। इस किले की दीवारें बहुत मजबूत थीं। इस किले में पत्थर अथवा कच्ची मिट्टी की एक आयताकार मीनार भी पाई गई है। यहाँ एक सतह में उन स्थानों पर 2400 ई०पू० की राख पाई गई है, जहाँ सिंधु घाटी सभ्यता के बर्तनों से मिलते-जुलते बर्तनों का प्रयोग करने वाले लोग रहते थे। कोटजी के मिट्टी के बर्तन पीले रंग के होते थे और उन पर लाल धारियाँ होती थीं।

730. गाजीशाह—पुरातात्विक महत्त्व यह सिंधु घाटी सभ्यता का एक स्थल था।

731. चाह्नूदाड़ो—पुरातात्विक महत्त्व यह स्थान मोहनजोदाड़ो के दक्षिण-पूर्व में 130 किमी दूर सिंधु सभ्यता के मुख्य स्थलों में से एक था। चाह्नूदाड़ो में की गई खुदाई की सबसे निचली परत से झुकार और झंगड़ संस्कृतियों के अवशेष मिले हैं। यहाँ पाए गए बर्तन, मुहरें, ताँबे के औजार आदि सिंधु घाटी सभ्यता के अन्य केंद्रों पर पाए गए औजारों से मिलते हैं।

732. झंगड़—पुरातात्विक महत्त्व यह सिंधु घाटी सभ्यता का एक स्थल था।

733. झुकार—पुरातात्विक महत्त्व यह स्थान आधुनिक पाकिस्तान में मोहनजोदाड़ो के उत्तर-पूर्व में है। यह सिंधु घाटी सभ्यता का एक स्थल था।

734. डाबरकोट–पुरातात्विक महत्त्व यह सिंधु घाटी सभ्यता एक स्थल था।

735. तक्षिला यह शहर पाकिस्तान के उत्तर-पश्चिमी सीमा प्रांत में रावलपिंडी के उत्तर-पश्चिम में 30 किमी दूर है। आजकल इसे सिरकप कहते हैं। इसका भारतीय नाम तक्षशिला है।

ऐतिहासिक महत्त्व यह कंधार राज्य की राजधानी थी। अशोक ने कुणाल को यहाँ अपना राज्यपाल नियुक्त किया था। मगध में नंद वंश के अंतिम शासक धननंद के प्रतिनिधि व यहाँ के राज्यपाल अंभीक ने सिकंदर महान् के समक्ष आत्म-समर्पण कर दिया था। मोर्यों के पतन के बाद तक्षिला पर इंडो-बक्टीरीयाई, पार्थियाई, शकों और कुषाण शासकों का शासन रहा। यहाँ से शासन करने वाले पार्थियाई शासकों में मिथेडेटस प्रथम माउस, मिथेडेटस द्वितीय और गंडोफरनीज (20-45 ई०) प्रमुख थे। यहाँ का प्रथम शक् क्षत्रप मोअ या माउस था। उसके बाद एजेज प्रथम और एजेज द्वितीय ने यहाँ से शासन किया। तक्षिला के अन्य क्षत्रप अस्यवर्मा, सस, सपेदन, शत-वस्त्र तथा जियोनीस थे। ये क्षत्रप संभवतः कुषाण शासकों के अधीन थे। शक् क्षत्रपों के बाद कुजुल कदफिस (30-64), विम कदफिस (64-78) और कनिष्क (78-102) कुषाण काल के शासक थे।

पुरातात्विक महत्त्व अशोक ने यहाँ एक सौ फुट ऊँचा स्तूप बनवाया था, जिसमें उसने अपना नाम प्रियनामदर्शी लिखवाया था। उसके धौली लेख से पता चलता है कि उसने तक्षिला में नगर महामात्य नियुक्त किए थे। यहाँ उसके काल के गहने, प्रथम शताब्दी ई० के काँच के बर्तन तथा यूनानी-इटली शैली की काँसे की सुंदर मूर्तियाँ पाई गई हैं। प्राचीन काल में यहाँ बौद्ध विश्वविद्यालय भी हुआ करता था। यहाँ की गई खुदाइयों में कुणाल के समय के सिक्के, मुहरें और एक स्तूप पाया गया है। यहाँ यवन प्रभाव वाली कंधार शैली की कला का प्रचलन था। तक्षिला में 800 ई०पू० के उत्तर वैदिक काल के काली पालिश वाले मिट्टी के बर्तन भी मिले हैं। तक्षिला के ध्वंसावशेष भीर टीले और सरसुख में मिले हैं।

व्यापार तक्षिला के पूर्व में विदेह से और पश्चिम में मध्य एशिया तक व्यापारिक संबंध थे। तक्षिला से एक सड़क निकलती थी, जो सिंधु घाटी के निचले भाग के साथ से गुजरती थी। यह मार्ग रेशम मार्ग के रूप में प्रसिद्ध था। भारत आते समय फाहियान पहले 405 ई० में तक्षिला ही आया था और उसके बाद पाटलीपुत्र की ओर रवाना हुआ था।

736. थट्टा—पुरातात्त्विक महत्त्व यह पाकिस्तान में सिंधु नदी के मध्य एक द्वीप है। यह अरब और ईराक के व्यापारियों के लिए आकर्षण का मुख्य केंद्र था। मिनहास और इब्न बतूता जैसे बहुत से अरबी लेखकों ने इसकी शान का वर्णन बड़े रुचिकर ढंग से किया है। व्यापारियों के लिए यह एक अच्छी आरामगाह थी। यह मुलतान तथा अन्य नगरों से सड़क मार्ग से और लाहौर से जल मार्ग से जुड़ा हुआ था। मुहम्मद तुगलक अपनी बीमारी के कारण 1351 ई० में यहीं स्वर्ग सिधारा था। फिरोजशाह तुगलक ने इस पर 1362-63 में विजय प्राप्त की थी। 1758 में यहाँ ईस्ट इंडिया कंपनी ने एक फैक्टरी लगाई थी, परंतु उसे 1775 में ही हटा लिया गया था।

737. दीपालपुर—ऐतिहासिक महत्त्व 1399 में दिल्ली से वापस लौटते समय तैमूरलंग ने खिज्र खाँ को यहाँ का सूबेदार नियुक्त किया था। बाबर ने इब्राहिम की सेना को हराकर इस पर 1524 में विजय पाई थी। दौलत खाँ लोदी बाबर से दीपालपुर में ही मिला था। बाबर ने उसे जालंधर, सुल्तानपुर और कुछ अन्य जिले तथा आलम खाँ को दीपालपुर दे दिया। परंतु दौलत खाँ लोदी ने इसे शीघ्र ही आलम खाँ से छीन लिया। आलम खाँ बाबर के पास चला गया। बाबर ने उस पर आक्रमण करके पंजाब को दिलावर खाँ, आलम खाँ और मुगल सरदारों में बाँट दिया। दौलत खाँ शिवालिक की पहाड़ियों में भाग गया। भारत पर दुबारा शासन करने के लिए आते समय हुमायूँ ने मई, 1555 में इस पर कब्जा किया था।

738. देवल यह सिंधु नदी के मुहाने पर एक बंदरगाह है।

ऐतिहासिक महत्त्व अरबों ने इस बंदरगाह पर अधिकार करने के लिए इस पर समुद्र के रास्ते से 643 और 708 में दो बार आक्रमण किए थे, परंतु वे दोनों ही बार हारे। देवल इतिहास में एक अन्य घटना के लिए प्रसिद्ध है। 708 ई० में ईराकियों का एक जहाज लंका से अरब जा रहा था। कुछ समुद्री डाकुओं ने उसे देवल के निकट लूट लिया। उन्होंने कुछ स्त्रियों को भी बंदी बना लिया। ईराक के राज्यपाल हज्जाज ने सिंध के राजा दाहिर को उन स्त्रियों को मुक्त कराने के लिए लिखा। दाहिर ने सूचना भेजी की उसका समुद्री डाकुओं पर कोई नियंत्रण नहीं है, अतः वह उन्हें मुक्त नहीं करा सकता। इस पर हज्जाज ने सिंध को जीतने के इरादे से देवल पर तीन बार आक्रमण किया। दो आक्रमणों में वह असफल रहा। उसने तीसरा अभियान मोहम्मद-बिन कासिम के नेतृत्व में भेजा। कासिम ने देवल के किले पर अधिकार करके इसे खूब लूटा और यहाँ के

निवासियों का तीन दिन तक वध किया। सिंध की जनता में अनेक बौद्ध और हिंदू दाहिर के विरुद्ध होने के कारण कासिम ने सिंध के अन्य नगरों पर भी बिना किसी कठिनाई के अधिकार कर लिया।

739. नाल—पुरातात्विक महत्त्व यह स्थान उत्तरी बलोचिस्तान में है। यह सिंधु घाटी सभ्यता का एक स्थल था। यहाँ की गई खुदाइयों से पता चलता है कि यहाँ दीवारों की नींव पत्थर की होती थी। दीवारें सामान्यतः 53 सेंमी x 10 सेंमी साइज की और कच्ची ईंट की होती थीं। यहाँ पाए गए मिट्टी के बर्तन पीले और लाल रंग के हैं, जिन पर पशुओं और पौधों के चित्र बने हैं। कुछ बर्तनों पर ज्यामितीय चित्र भी पाए गए हैं। यहाँ पाई गई एक मुहर पर एक गिद्ध का चित्र है। नाल में ताँबे की कुल्हाड़ी, छैनी, भाला और आरा भी पाए गए हैं।

740. पुरुषपुरा कृपया पेशावर देखें।

741. पुष्कलावती यह स्थान काबुल और सिंधु नदी के मध्य नया पेशावर है। प्रथम शताब्दी ई० में यह व्यापार का एक केंद्र था। यह प्राचीन कंधार राज्य का भाग था। हस्ती अथवा अष्टक यहाँ का राजा था। उसने यूनानियों के साथ तीस दिन तक युद्ध किया था, जिसके बाद वह लड़ाई में मारा गया। ह्यून सांग की यात्रा के दौरान यह एक समृद्ध नगर था। यहाँ से तक्षिला-उज्जैन-भड़ौंच के रास्ते दूसरे देशों से अनेक वस्तुओं का व्यापार किया जाता था। यह स्थान कान्यकुब्ज, प्रयाग, पाटलीपुत्र और ताम्रलिप्ति से भी सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ था।

742. पेशावर—ऐतिहासिक महत्त्व पेशावर का प्राचीन नाम पुरुषपुरा है। यह कुषाण शासक कनिष्क की राजधानी थी। उसने यहाँ कई बड़ी-बड़ी इमारतें बनवाईं। उसने यहाँ भगवान बुद्ध की स्मृति में 180 मी ऊँची मीनार भी बनवाई थी। इस मीनार की 14 मंजिलें थीं और इसकी चोटी लोहे की थी। इसके चारों ओर बुद्ध की अनेक प्रतिमाएँ थीं। कनिष्क ने पेशावर के निकट एक मठ और एक बड़ा स्तूप भी बनवाया। स्तूप में उसने बुद्ध के अवशेष रखे। खुदाई करने पर वहाँ काँसे की मंजूषा और बुद्ध की अस्थियों के अतिरिक्त बुद्ध, ब्रह्मा, इंद्र, सूर्य और चंद्रमा के बीच उसकी खड़ी अवस्था की मूर्तियाँ भी मिली हैं। कनिष्क के बाद वासिष्क (102-106) और हुविष्क (119-38), कनिष्क द्वितीय और वासुदेव प्रथम (152-76) यहाँ के शासक बने। 1000 ई० में महमूद गजनी

ने राजपूत राजा जयपाल को यहीं हराकर उसे पकड़ लिया था। उसने उसे 250000 दीनारें लेकर ही छोड़ा, परंतु जयपाल इस अपमान को सहन नहीं कर सका और उसने आत्म-हत्या कर ली। 1179 में मुहम्मद गौरी ने पेशावर पर आक्रमण करके इस पर कब्जा कर लिया। भारत पर अपनी चढ़ाइयों का आधार स्थल बनाने के लिए 1519 ई० में बाबर ने भी इस पर कब्जा करने का असफल प्रयास किया था। कामरान ने इस पर अपने भाई हुमायूँ के काल में कब्जा किया था। 1823 में महाराजा रणजीत सिंह ने इस पर कब्जा कर लिया था, परंतु उसने इसे अपने राज्य में 1834 में ही मिलाया। उसके काल में यहाँ सैयद अहमद ने 1827 से 1831 के मध्य बगावत कर दी थी।

743. बारवेरीकम—व्यापारिक महत्त्व यह सिंधु नदी के मुहाने पर आधुनिक अलकंद है। मौर्य काल में यह एक प्रसिद्ध बंदरगाह थी। यहाँ से निर्यात की जाने वाली वस्तुओं में खाल मुख्य थी। दूसरी जगहों से यहाँ पटसन के कपड़े और काँच के बर्तन मंगाए जाते थे।

744. मानसेरा यह स्थान पाकिस्तान के हजारा जिले में है।

पुरातात्विक महत्त्व मानसेरा में अशोक ने 257-56 ई०पू० में एक शिलालेख स्थापित करवाया था। इस शिलालेख में उसके प्रशासन और नैतिक नियमों का वर्णन है।

745. मुलतान—ऐतिहासिक महत्त्व मुहम्मद-बिन-कासिम ने 712-14 ई० में मुलतान पर धावा बोलकर दो महीने के घेरे के बाद इसे अपने राज्य में मिला लिया था। भारत पर यह उसका आखिरी आक्रमण था। इसके बाद बगदाद के खलीफा ने उसे वापस बुला लिया और 714 ई० में उसका वध कर दिया। महमूद गजनी ने भी जयपाल के पुत्र आनंदपाल को लगभग 1008 ई० में हराकर मुलतान जीत लिया। इस्माइला मुस्लिमों को हराकर मुहम्मद गौरी ने इसे 1175 ई० में जीतकर नासिरूद्दीन कुबेचा को यहाँ का सूबेदार बना दिया। भारत में यह उसकी पहली विजय थी। 1206 में गौरी की मृत्यु के बाद भारत में उसके प्रतिनिधि कुतुबुद्दीन ऐबक ने कुबेचा से अपनी पुत्री का विवाह करके उसे अपना दामाद बना लिया। 1210 में ऐबक की मृत्यु के बाद कुबेचा स्वतंत्र हो गया। अल्तमश ने उस पर आक्रमण करके उसे अपनी अधीनता मानने के लिए विवश कर दिया। परंतु अल्तमश के दिल्ली वापस आते ही उसने फिर स्वतंत्र होने का प्रयत्न किया। अल्तमश ने 1227 में उस पर फिर आक्रमण किया और

उसे मारने के बाद मुलतान पर अपना अधिकार कर लिया। बलबन के समय में यहाँ मंगोलों ने लूट-पाट मचाई थी। 1398 के आरंभ में तैमूर लंग के पोते पीर मुहम्मद ने इसका छह महीने तक घेरा डालने के बाद इस पर कब्जा कर लिया था। अक्तूबर 1398 में इसे जीतने के बाद तैमूर लंग ने 1399 में खिज्र खाँ को यहाँ का गवर्नर नियुक्त किया। तैमूर लंग के आक्रमण के बाद दिल्ली सल्तनत की शक्ति क्षीण हो गई और मुलतान फिर स्वतंत्र हो गया। 1520 में कंधार के गवर्नर शाह बेग के पुत्र हुसैन ने मुलतान जीत लिया था। 1543 में शेरशाह के सूबेदार हैबत खाँ ने फतेह खाँ जाट को हराकर शेरशाह के लिए मुलतान जीत लिया। फतेह खाँ ने दिल्ली और मुलतान के बीच का रास्ता असुरक्षित बना दिया था। 1751 में अहमदशाह अब्दाली ने भारत पर एक बार पुनः आक्रमण करके लाहौर और मुलतान की माँग की। कमजोर मुगल शासक अहमदशाह ने उसकी यह माँग मान ली। उसने 1759 में दुबारा आक्रमण करके मुलतान पर कब्जा कर लिया। अपने जीवन काल (1783-1839) के दौरान 1818 में रणजीत सिंह ने भी इसे जीता था। 1844 से पूर्व सावनमल यहाँ का राज्यपाल था। 1844 में उसका पुत्र मूलराज राज्यपाल बना। लाहौर दरबार के ब्रिटिश रेजीडेंट ने उसे एक करोड़ रु. उत्तराधिकार शुल्क देने को कहा, जिसके न देने पर उसे 19 अप्रैल, 1848 को पद से हटा दिया गया। अगले ही दिन मूलराज ने विद्रोह करके शासन का कार्य-भार लेने आए दो अंग्रेज अधिकारियो एंडरसन और एगन्यू को मार दिया। अंग्रेजों ने इस घटना में रानी जिन्दाँ का हाथ समझा। उन्होंने उसे बनारस भेज दिया। जनवरी, 1849 में अंग्रेजों ने मुलतान को अपने कब्जे में कर लिया। मूलराज के आत्म-समर्पण करने पर उस पर कत्ल का मुकदमा चलाकर उसे फाँसी दे दी गई।

व्यापार प्राचीन और मध्य काल के दौरान मुलतान धर्म और व्यापार का एक बड़ा केंद्र था। यहाँ विदेशी व्यापारी पड़ाव डाला करते थे। कंधार-क्वेटा मार्ग पर होने के कारण व्यापारिक गतिविधियों में इसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। यह थट्टा, अजोधन, देवल आदि से सड़क मार्ग से भली-भाँति जुड़ा हुआ था। लोग यहाँ के सूर्य मंदिर को देखने के लिए भारी संख्या में आया करते थे।

746. मेही—पुरातात्विक महत्त्व यह सिंधु घाटी सभ्यता का एक स्थल था।

747. मोहनजोदाड़ो यह स्थल आधुनिक पाकिस्तान के सिंध प्रांत के लरकाना जिले में सिंधु नदी के दाएँ किनारे पर हड़प्पा से 640 मील दूर है।

पुरातात्विक महत्त्व मोहनजोदाड़ो सिंधु घाटी सभ्यता का मुख्य स्थल था। इसकी खोज सर्वप्रथम आर. डी. बैनर्जी ने 1922 ई० में की थी। यहाँ की गई खुदाइयों में 32.5 मी x 23.5 मी आकार का एक विशाल सार्वजनिक स्नानागार, इसके मध्य में एक बड़ा कुआँ, 60.8 मी x 45.7 मी आकार का एक बड़ा धान्यागार, 366 मी x 183 मी आकार के चबूतरे पर बना एक किला, पशुपति तथा कुबड़े बैल की मुहरें और एक नृतकी की काँसे की मूर्ति पाई गई है। यहाँ मातृदेवी का एक चित्र भी पाया गया है। यहाँ पाया गया विशाल स्नानागार सिंधु घाटी सभ्यता का पकी ईटों की वास्तुकला का एक उत्तम नमूना है। मोहनजोदाड़ो की नगर योजना बड़ी सोच-समझकर बनाई गई थी। इसकी जल-निकास व्यवस्था बड़ी अच्छी थी। कुछ मकान दुमंजिले थे। यहाँ पाई गई अन्य महत्त्वपूर्ण वस्तुओं में सुंदर-सुंदर बर्तन, एक छोटी मानव मूर्ति तथा चूना-पत्थर से बनी एक खोपड़ी सम्मिलित हैं। यहाँ की सड़कें एक-दूसरी को समकोण पर काटती थीं। खुदाई में पाई गई इस शहर की सात परतों से पता चलता है कि यहाँ यह शहर सात बार बना था। एक मुहर में एक देवता पीपल के वृक्ष की दो शाखाओं के बीच खड़ा हुआ दिखाया गया है। यह शहर लगभग तीन मील के घेरे में बसा हुआ था और व्यापार का प्रमुख केंद्र था।

748. लाहौर—ऐतिहासिक महत्त्व रावी नदी के किनारे स्थित इस शहर को चंद्रगुप्त मौर्य ने पंजाब से सेल्युकस को खदेड़कर 325 ई०पू० में जीत लिया था। भारत पर अपने आक्रमणों के दौरान महमूद गजनी ने 1000 ई० में लाहौर के राजा जयपाल, 1008 ई० में आनंदपाल और 1021 में त्रिलोचनपाल को हराया। 1031 में उसकी मृत्यु के बाद उसके पुत्र मसूद ने नियाल्तिगीन को पंजाब का शासक नियुक्त किया। मसूद की हत्या के बाद उसका पुत्र मोदूद, 1085 में महमूद और 1160 में खुसरो मलिक पंजाब का सूबेदार बना। मुहम्मद गौरी ने खुसरो मलिक के शत्रु जम्मू के राजा विजयदेव की सहायता से उसे हराने का प्रयत्न भी किया था, परंतु वह सफल नहीं हो सका। फिर भी उसने 1186 ई० में उसे एक षडयंत्र से मरवाकर पंजाब को अपने अधीन कर लिया और कुतुबुद्दीन ऐबक को यहाँ का गवर्नर बना दिया। 1206 ई० में गौरी की मृत्यु के बाद कुतुबुद्दीन ऐबक स्वतंत्र हो गया और उसने लाहौर को अपने साम्राज्य की राजधानी बना लिया। 1241 और 1285 ई० में इस पर मंगोलों ने आक्रमण किया। 1285 में बलबन का पुत्र मुहम्मद उनका सामना करने के लिए रवाना हुआ, परंतु मारा गया।

मुहम्मद तुगलक द्वारा अपनी राजधानी दिल्ली से देवगिरि बदल लिए जाने

के बाद भी मंगोलों ने 1328 ई० में तरमाँशीरी खाँ के नेतृत्व में खूब लूट-पाट की। मुहम्मद तुगलक ने उन्हें धन देकर वापस भेज दिया। 1399 में तैमूरलंग ने खिज्र खाँ को यहाँ का गवर्नर नियुक्त किया। 1414 में खिज्र खाँ ने दिल्ली में सैयद वंश की स्थापना की। वहाँ के सैयद वंश के अंतिम शासक मुहम्मद शाह के काल में बहलोल लोदी यहाँ का तथा सरहिंद का सूबेदार था। 1524 ई० में इब्राहिम लोदी ने बिहार खान, मुबारक खाँ लोदी और भिकम खाँ नूहानी के नेतृत्व में सेना भेजकर लाहौर पर कब्जा कर लिया था। यहाँ का शासक दौलत खाँ शहर छोड़कर भाग गया। परंतु जल्दी ही बाबर ने इब्राहिम को हराकर लाहौर पर कब्जा कर लिया। मोहम्मद आदिल के समय में शेरशाह सूरी का भतीजा अहमद खाँ सूर लाहौर में विद्रोह करके सिकंदर शाह सूर के नाम से स्वतंत्र शासक बन गया। फरवरी, 1555 में हुमायूँ ने उसे हराकर लाहौर को अपने कब्जे में लिया। जहाँगीर की मृत्यु के बाद शहरयार यहाँ का स्वतंत्र शासक बन गया, खुर्रम ने उसे आसफ खाँ की सहायता से हराकर "अब्दुल मुजफ्फर शहबाब-उद्-दीन मोहम्मद शाहजहाँ" की पदवी धारण की। 1743 ई० में इस पर अहमदशाह अब्दाली ने अपना आधिपत्य कर लिया। 1751 ई० में उसने भारत पर पुनः आक्रमण करके मुगल सम्राट से मुलतान तथा लाहौर पर हक छोड़ देने के लिए कहा। दिल्ली के कमजोर सम्राट को उसकी यह माँग माननी पड़ी, परंतु भारत से वापस जाने के तुरंत बाद अगले सम्राट आलमगीर द्वितीय ने उससे ये क्षेत्र फिर छीनकर मीर मुनीम को यहाँ का सूबेदार बनाया। 1756 ई० में उसने भारत पर पुनः आक्रमण करके कश्मीर की मुगलाई बेगम की सहायता से लाहौर पर फिर अधिकार कर लिया। 1758 ई० में उसने भारत पर फिर आक्रमण किया और लाहौर को फिर अपने कब्जे में कर लिया। परंतु जालंधर दोआब के सूबेदार अदीना बेग की सहायता से पेशवा बालाजी बाजीराव के सेनानायकों मल्हार राव होल्कर और रघुनाथ राव ने 1758 ई० में ही इस पर अपना कब्जा करके अहमदशाह अब्दाली के पुत्र तैमूरशाह को लाहौर से खदेड़ दिया। उन्होंने अदीना बेग को पंजाब का सूबेदार नियुक्त किया। इससे अब्दाली क्रोधित हो गया और उसने 1759 ई० में फिर आक्रमण करके लाहौर को पुनः जीत लिया। पानीपत की तीसरी लड़ाई जीतने के बाद जब वह वापस जा रहा था, तो सिखों ने उसकी सेना को गुजराँवाला में हराकर लाहौर पर अपना नियंत्रण कर लिया। 1762 ई० में वह फिर भारत लौटा और उसने सिखों को करारी हार दी। उसने लाहौर पर कब्जा करके भारी मार-काट का आदेश दे दिया। सिख इतिहास में इसे दूसरे घल्लूघारा का नाम दिया। दो वर्ष बाद ही 1764 ई० में सिख संगठन खालसा ने इस पर फिर कब्जा कर लिया। खालसा संगठन अनेक मिसलों में विभक्त था,

जिनमें 12 मिसलें प्रमुख थीं। चरतसिंह नामक एक व्यक्ति शुक्रचकिया मिसल का नेता था। उसने अपने आस-पास की भूमि पर कब्जा करके अपनी शक्ति काफी बढ़ा ली थी। उसकी मृत्यु के बाद उसका बेटा महासिंह और महासिंह की मृत्यु के बाद उसका बेटा रणजीत सिंह 1792 में मिसल का उत्तराधिकारी हुआ। 1799 में अफगान शासक जमानशाह के भारत पर आक्रमण के समय रणजीत सिंह ने उसकी काफी सहायता की। जमानशाह ने खुश होकर उसे 7 जुलाई, 1799 को लाहौर का राज्यपाल बना दिया और उसे राजा की पदवी दी। परंतु रणजीत सिंह ने बहुत जल्दी जमानशाह की अधीनता त्यागकर लाहौर में अपना स्वतंत्र शासन स्थापित कर लिया। 1802 में उसने अमृतसर जीत लिया। अगले चार वर्षों में उसने सब मिसलों को अपने अधीन कर लिया। 1806 में उसने पटियाला पर आक्रमण करके वहाँ के राजा साहिब सिंह से कर वसूल किया। वापसी में उसने लुधियाना, जगरौंव और घूमग्राणा पर कब्जा कर लिया। कुछ दिनों बाद वह पटियाला के महाराजा और उसकी रानी के बीच विवाद को समाप्त करने के लिए पटियाला फिर आया। वापसी में उसने कैथल, कोटकपूरा, नारायणगढ़ और जीरा पर कब्जा कर लिया। 1809 में उसने अंग्रेजों के साथ अमृतसर की संधि की, जिसके तहत उसने सिस-सतलुज राज्यों को संरक्षण देना स्वीकार किया। अब उसने दूसरी दिशा में आक्रमण करके गोरखाओं से काँगड़ा छीन लिया और 1813 में कटक पर कब्जा कर लिया। अंग्रेजों और रणजीत सिंह में कोई मतभेद न था। उन दिनों अफगानिस्तान से भागा हुआ शासक शाह शुजा रणजीत सिंह के अधीनस्थ शहर लुधियाना में अंग्रेजों के पेंशनर के रूप में रह रहा था। महाराजा रणजीत सिंह ने शरण देने के बदले उससे 1814 में कोहिनूर हीरा ले लिया। बाद में उसने मुलतान, पेशावर और कश्मीर पर भी कब्जा कर लिया। 26 जून, 1838 को उसने लार्ड ऑकलैंड और शाह शुजा के साथ एक संधि की, जिसके अनुसार उसने शाह शुजा को उसकी गद्दी वापस दिलाने के लिए सहायता देने की स्वीकृति दी। 1839 में 59 वर्ष की आयु में रणजीत सिंह की मृत्यु हो गई। उसकी मृत्यु के बाद उसका सबसे बड़ा पुत्र खड़क सिंह लाहौर की गद्दी पर बैठा, परंतु वह एक निर्बल शासक होने के कारण उसके समय में अराजकता बनी रही। उसने पुराने वजीर ध्यान सिंह को हटाकर चेत सिंह को नया वजीर बना दिया, परंतु ध्यान सिंह के समर्थकों ने उसे राजा की उपस्थिति में ही मार दिया। शीघ्र बाद ही उन्होंने खड़क सिंह को गद्दी से उतारकर उसके पुत्र नौनिहाल सिंह को राजा और ध्यान सिंह को वजीर बना दिया। 5 नवंबर, 1840 को खड़क सिंह की मृत्यु हो गई। जब नौनिहाल सिंह अपने पिता का दाह संस्कार करके वापस आ रहा था, तो दरवाजा गिरने से उसकी भी मृत्यु हो गई।

नौनिहाल सिंह की मृत्यु के बाद गद्दी के लिए संघर्ष और भी तेज तथा हिंसक हो गया। दरबार में एक दल ने महाराजा रणजीत सिंह के दूसरे पुत्र शेरसिंह का तथा दूसरे दल ने नौनिहाल की माता माई चाँद कौर के संरक्षण में नौनिहाल के भावी शिशु का पक्ष लिया। अंत में जनवरी, 1841 में शेर सिंह ने शासन पर अधिकार कर लिया। सितंबर, 1843 में शेरसिंह की हत्या कर दी गई। उसके बाद ध्यान सिंह राजा बना, परंतु उसकी भी हत्या कर दी गई। तब ध्यान सिंह का पुत्र हीरा सिंह रणजीत सिंह के पाँच वर्षीय आठवें पुत्र दलीप सिंह को गद्दी पर बैठाकर स्वयं उसका प्रधान मंत्री बना तथा दलीप सिंह की माँ रानी जिंदाँ उसकी अभिभाविका बनी। दिसंबर, 1844 में हीरा सिंह की भी हत्या हो गई। अब शक्ति रानी जिंदाँ के भाई जवाहर सिंह और उसके प्रेमी लाल सिंह के हाथ में आ गई। नवंबर, 1844 में मेजर ब्रॉडफूट को लाहौर में ब्रिटिश एजेंट नियुक्त कर दिया गया। अपनी नियुक्ति के शीघ्र बाद उसने घोषणा कर दी कि दलीप सिंह की मृत्यु के बाद लाहौर दरबार के कब्जे वाले सिस-सतलुज क्षेत्र कंपनी के साम्राज्य में मिल जाएँगे। दिसंबर, 1845 में जवाहर सिंह को मार दिया गया। लाल सिंह प्रधान मंत्री बना। तेजा सिंह प्रमुख सेनापति बना। प्रथम सिख युद्ध में भाग लेने के लिए 11 दिसंबर, 1845 को सिख सेना ने सतलुज पार की। सेना की अनुपस्थिति में गुलाब सिंह ने लाहौर की गद्दी पर कब्जा कर लिया। प्रथम सिख युद्ध में भी उसने अंग्रेजों का ही साथ दिया, लाल सिंह भी अंग्रेजों की तरफ हो गया था। फलस्वरूप मुडकी, फिरोजशाह, आलीवाल और सबराँव में हुई लड़ाइयों के बाद फरवरी, 1846 में लाहौर पर अंग्रेजों का कब्जा हो गया। प्रथम सिख युद्ध की समाप्ति के बाद मार्च, 1846 में सर हेनरी हार्डिंग और सिखों के मध्य लाहौर की संधि हुई, जिसके अनुसार सिस-सतलुज क्षेत्र तथा जालंधर दोआब और हजारा अंग्रेजों ने हथिया लिए। सिखों पर डेढ़ करोड़ रु. का हर्जाना लगाया गया, जिसमें से उन्होंने 50 लाख रु. नकद दे दिए और शेष एक करोड़ के बदले अंग्रेजों ने जम्मू कश्मीर राज्य को डोगरा सरदार गुलाब सिंह को बेच दिया। सिखों को केवल 22000 पैदल सैनिक और 12000 घुड़सवार रखने की अनुमति दी गई। सर हेनरी लारेंस को लाहौर का रेजीडेंट नियुक्त कर दिया गया। महाराजा रणजीत सिंह और अन्य शासकों के माध्यम से महाराजा दलीप सिंह के हाथ में आया कोहिनूर हीरा अंग्रेजों ने ले लिया। लाल सिंह को दलीप सिंह का मुख्य मंत्री बना दिया गया। उस समय दलीप सिंह की उम्र केवल 11 वर्ष थी। सिखों के खर्चे पर लाहौर में अंग्रेजी सेना रख दी गई। परंतु 1848 में मुलतान में मूलराज के विद्रोह के बाद हुए दूसरे सिख युद्ध के बाद 29 मार्च, 1849 को महाराजा दलीप सिंह को हटाकर उसे 50000 पौंड वार्षिक पेंशन दे दी गई।

उससे इस आशय की संधि पर हस्ताक्षर करवा लिए गए कि वह तथा उसके वारिस पंजाब के राज्य पर कोई दावा नहीं करेंगे। बाद में वह इंग्लैंड चला गया और ईसाई बन गया। पंजाब का शासन एक बोर्ड को सौंप दिया गया, जिसका अध्यक्ष लार्ड डलहौजी स्वयं बना। परंतु 1853 में इस बोर्ड को तोड़ दिया गया। हेनरी लारेंस को हटाकर जॉन लारेंस को पंजाब का पहला मुख्य आयुक्त नियुक्त किया गया। 1716 में बंदा बहादुर की मृत्यु के बाद लाहौर के कुछ गवर्नर इस प्रकार रहे – जकारिया खाँ (1726-45), शाह नवाज (1746-47), मीर मनु (1747-53), मुगलानी बेगम तथा अदीना बेग (1758 तक)।

स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान लाहौर को 1915 में उस समय ख्याति मिली, जब क्रांतिकारियों ने देश के कई शहरों में बंब बनाने के कारखाने खोले और लाहौर, बनारस तथा मेरठ में अंग्रेजी सेना में भर्ती होने की योजना बनाई। परंतु कृपाल सिंह नाम के एक व्यक्ति की गद्दारी के कारण यह योजना असफल हो गई और अंग्रेजों ने 24 क्रांतिकारियों को मृत्यु दंड दे दिया। इस कांड को लाहौर षड्यंत्र नाम दिया गया। 1920 में कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में पारित स्वराज्य की मांग को लाहौर के 31 दिसंबर, 1929 के अधिवेशन, जो जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता में हुआ था, में पूर्ण स्वराज्य में बदल दिया गया, जिसके फलरुवरूप 1930 में 26 जनवरी पहली बार पूर्ण स्वराज्य दिवस के रूप में मनाई गई। 1928 में साइमन आयोग भारत आया, जिसके विरोध में हिंदुस्तान समाजवादी रिपब्लिकन पार्टी के बैनर तले लाला लाजपत राय ने लाहौर में आंदोलन कर दिया। इससे क्रोधित होकर सांडर्स ने उन पर लाठियाँ बरसवा दीं। लाठियों के प्रहार से घायल लाला लाजपात राय ने 17 नवंबर, 1928 को दम तोड़ दिया। परंतु इसके ठीक एक महीने बाद 17 दिसंबर, 1928 को शिवराम, राजगुरू और भगत सिंह ने सांडर्स को मार गिराया। अखिल भारतीय मुस्लिम लीग ने पाकिस्तान प्रस्ताव 23 मार्च, 1940 को लाहौर अधिवेशन में ही पास किया था।

पुरातात्विक महत्त्व गुरू अर्जुन देव ने 1606 ई० में लाहौर में एक बावली बनवाई थी। बाद में जहाँगीर ने उसे यहीं मरवाया था। 1627 ई० में जहाँगीर की मृत्यु के बाद उसे लाहौर में शाहदरा नामक स्थान पर दफनाया गया था। नूरजहाँ ने इस स्थान पर एक मकबरा बनवाया था। शाहजहाँ ने यहाँ निशात बाग और औरंगजेब ने बादशाही मस्जिद बनवाई थी।

व्यापार प्राचीन काल में लाहौर मुलतान, थट्टा, भाखड़ आदि से जल मार्ग से जुड़ा हुआ था। इसके ज्यादातर लोगों का पेशा व्यापार था। तेरहवीं शताब्दी में

लूट-पाट करने वाली खोखर जाति के लुटेरों द्वारा लाहौर को अपनी गतिविधियों का केंद्र बना लिए जाने से व्यापारियों ने यहाँ जाना बंद कर दिया और लाहौर का व्यापारिक महत्त्व कम हो गया। बलबन और अन्य सुल्तानों ने इसका यह गौरव वापस लौटाने का काफी प्रयास किया, परंतु वे सफल न हो सके। इसे यह महत्त्व पुनः मुगलों के काल में ही मिल पाया। उस समय यह फारस से आयात का एक मुख्य केंद्र बन गया था।

सामाजिक गतिविधियाँ स्वामी दयानंद ने लाहौर में 1877 ई० में आर्य समाज की दूसरी शाखा खोली थी। उन्होंने 1886 ई० में यहाँ डीएवी कालेज की स्थापना भी की। सत्यानंद अग्निहोत्री ने यहाँ 1887 में देव समाज की स्थापना की। प्रथम असहयोग आंदोलन के दौरान यहाँ नैशनल कालेज खोला गया।

749. लोहुनजोदाड़ो—पुरातात्त्विक महत्त्व यह स्थान सिंधु घाटी सभ्यता का एक स्थल था।

750. शाकल कृपया सियालकोट देखें।

751. शाहदरा यह स्थान लाहौर के निकट है। जहाँगीर ने यहाँ अपने जीवन काल में ही अपना मकबरा बनवाना शुरू कर दिया था, परंतु यह उसकी बेगम नूरजहाँ द्वारा ही पूरा करवाया गया। जहाँगीर की मृत्यु के बाद उसे यहीं दफनाया गया।

752. शाहबाजगढ़ी यह स्थान पेशावर जिले में है।

पुरातात्विक महत्त्व इतिहास में शाहबाजगढ़ी का महत्त्व पुरातात्विक दृष्टि से अधिक है। अशोक ने यहाँ 257-56 ई०पू० में खरोष्ठी लिपि नें एक शिलालेख स्थापित कराया था, जिसमें उसने कलिंग विजय पर पश्चाताप प्रकट किया है और इसकी बजाय धर्म विजय पर बल दिया है। इस लेख में उसने अपने नैतिक नियमों तथा उन राजाओं का भी उल्लेख किया है, जो उसका आदेश मानते थे।

753. सिंध—ऐतिहासिक महत्त्व फारसी राजा डारियस प्रथम ने 518 ई०पू० में भारत पर आक्रमण करके सिंध को जीतकर अपने साम्राज्य में मिला लिया था। सेल्युकस के वंशज बक्टीरियाई राजा डिमेट्रियस ने सिंध को जीता था। इसी वंश के मिनांदर (अथवा मिलिंद) ने भी सिंध नदी पार करके सिंध को 155 ई०पू० में जीता। पहली शताब्दी में इस पर कनिष्क ने भी विजय

प्राप्त की। 130 से 150 ई० तक यहाँ उज्जयिनी के शक् रूद्रदामा का शासन था। ऐसा माना जाता है कि सम्राट हर्ष ने भी इसे जीता था। सातवीं शताब्दी के अंतिम दशक में यहाँ एक बौद्ध धर्मावलंबी राजा का शासन था। बाद में राय शहरी, चच और दाहिर यहाँ के राजा हुए। 712 ई० में दाहिर से इसे मुहम्मद बिन कासिम ने छीनकर यहाँ स्थित रावर किले पर कब्जा कर लिया। इस हार के बाद दाहिर का पुत्र जयसिंह ब्राह्मणवाड़ा चला गया। कासिम ने उसे भी जीत लिया। परंतु कासिम की मृत्यु के बाद जयसिंह ने ब्राह्मणवाड़ा पर अधिकार कर लिया। अरब सेनापति हबीब ने कुछ प्रदेश वापस जीता। 727 ई० में खलीफा उमर द्वितीय ने उसे इस शर्त पर सिंध पर शासन करने का अधिकार दे दिया कि वह मुसलमान बन जाए। जयसिंह ने शर्त मान ली, परंतु कुछ ही वर्ष बाद वह पुनः हिंदू बन गया। तब सिंध के सूबेदार जुनैद ने जयसिंह को हराकर सिंध में हिंदू राजवंश का अंत कर दिया। चेदि के कलचूरी राजा कोकल्ल (845 ई०) ने यहाँ की अरबी सेना को हराया था। 1182 में मुहम्मद गौरी ने निचले सिंध पर अधिकार किया था। 1206 में उसकी मृत्यु के बाद उसके प्रतिनिधि कुतुबुद्दीन ने यहाँ के सूबेदार नासिरुद्दीन कुबेचा से अपनी पुत्री का विवाह करके उसे अपना दामाद बना लिया। 1210 में ऐबक की मृत्यु के बाद कुबेचा स्वतंत्र हो गया, परंतु अल्तमश ने उस पर आक्रमण करके उसे अपनी अधीनता मानने के लिए विवश कर दिया। अल्तमश के दिल्ली वापस आते ही उसने फिर स्वतंत्र होने का प्रयत्न किया। अल्तमश ने 1227 में उस पर पुनः आक्रमण करके उसे मरवा दिया। सिंध अल्तमश के कब्जे में आ गया। बलबन के समय में मंगोलों ने भी सिंध में लूट-पाट मचाई थी। मुहम्मद तुगलक के शासन काल के अंतिम दिनों में सिंध स्वतंत्र हो गया था, परंतु उसकी मृत्यु के तुरंत बाद यहाँ के सूबेदार ऐन-ए-मुल्क जाहरू के निमंत्रण पर फिरोजशाह तुगलक ने सिंध पर दो बार आक्रमण किया। वह वहाँ 1365-69 ई० के मध्य दो बार रहा। 1398 में तैमूरलंग के आक्रमण के बाद दिल्ली सल्तनत की शक्ति क्षीण हो गई और सिंध ने अपने आपको उससे स्वतंत्र कर लिया। 1535 ई० में कंधार के सूबेदार शाह बेग ने यहाँ के सुमड़ा शासक को हराकर इसे अपने प्रांत में मिला लिया। 1543 ई० में इसे हैबत खाँ ने शेर खाँ के लिए तथा 1591 ई० में खान-ए-खानन अब्दुर रहीम ने जानी बेग को हराकर अकबर के लिए जीत लिया। 1832 में विलियम बैंटिक ने सिंध के अमीर के साथ एक संधि की, जिसके तहत यह तय हुआ कि सिंध की सड़कों और नदियों से हिंदुस्तान के व्यापारी व्यापार कर सकते हैं, परंतु वे कोई सैनिक वाहन अथवा सामान नहीं लाएँगे। 1834 में इस संधि की पुनः पुष्टि भी की गई, परंतु ज्यों ही पहला अफगान युद्ध शुरू हुआ, अंग्रेजों ने इस संधि को

तोड़ने के साथ-साथ सिंध के आमीरों के सामने यह भी माँग रख दी कि उन्हें शाह शुजा को खिराज की बकाया राशि चुकानी है। आमीरों ने कहा कि शाह शुजा स्वयं ब्रिटिश संरक्षण में है तथा उसने 1833 की संधि के द्वारा इसे स्वयं त्याग दिया था, अतः वह अब इसे कैसे माँग सकता है। परंतु लार्ड ऑकलैंड नहीं माना और उसने 1839 में आमीरों के साथ एक नई संधि की, जिसके तहत आमीरों द्वारा अपने यहाँ ब्रिटिश रेजीडेंट रखा जाना, शिकारपुर और शुक्कर में ब्रिटिश सेना रखना और उसके रख-रखाव के लिए तीन लाख रु. वार्षिक राशि देना तय हुआ। प्रथम अफगान युद्ध के दौरान ऑकलैंड के उत्तराधिकारी लार्ड एलनबोरो ने आउटरम के बदले सर चार्लेस नैपियर को सिंध का गवर्नर बनाकर भेजा था। उसने अफगान युद्ध के दौरान अंग्रेजों का साथ न देने का बहाना लगाकर 1839 की संधि में परिवर्तन कराया। नई संधि के अनुसार तीन लाख रु. वार्षिक राशि न देने के बदले आमीरों द्वारा कुछ क्षेत्र अंग्रेजों को देना, सिंध नदी से गुजर रहे अंग्रेजी वाहनों को इंधन देना और सिक्के बनाना बंद करना तय हुआ। अंग्रेजों द्वारा डाले गए इतने दबाव से युद्धप्रिय बलूचियों का धैर्य जाता रहा। उन्होंने 15 फरवरी, 1843 को ब्रिटिश रेजीडेंसी पर आक्रमण कर दिया। अंग्रेज सेनापति के रूप में वापस आ चुके आउटरम् को जान बचाकर भागना पड़ा, परंतु 17 फरवरी, 1843 को ही नैपियर ने एक भारी बलूची सेना को मियानी में हरा दिया। अंत में मीरपुर और अमरकोट जीतने के बाद अगस्त, 1843 में सिंध को जीतकर ब्रिटिश साम्राज्य में मिला लिया गया। शेर मुहम्मद (मीरपुर का आमीर) सिंध से भाग गया तथा अन्य आमीरों को देश निकाला दे दिया गया। नैपियर को सिंध का नया गवर्नर बना दिया गया।

754. सियालकोट—ऐतिहासिक महत्त्व इसका प्राचीन नाम शाकल है। दूसरी शताब्दी ई०पू० में यह अपालोडोटस, डिमिट्रियस द्वितीय और मिनांदर (मिलिंद) की राजधानी थी। 515 ई० में हूण शासक तोरमाण के पुत्र मिहिरकुल ने भी इसे अपनी राजधानी बनाया था। वह अत्यंत शक्तिशाली और क्रूर राजा था। सिकंदरिया के कास्मास के अनुसार उसके पास 2000 हाथी और बहुत बड़ी अश्व सेना थी। उसने भारतीयों पर अत्याचार करके उन्हें कर देने के लिए विवश किया। ह्यून सांग लिखते हैं कि जब मिहिरकुल ने बौद्धों पर अत्याचार किया, तो बालादित्य ने कर देना बंद कर दिया और उसे एक युद्ध में हराकर बंदी बना लिया। परंतु बाद में उसने मिहिरकुल को छोड़ दिया। मालवा के यशोधर्मा ने भी उसे हराया। मिहिरकुल ने कश्मीर के राजा के यहाँ शरण ली, परंतु बाद में मिहिरकुल ने उसे ही गद्दी से उतारकर कंधार को भी जीत लिया।

उसने श्रीनगर में मिहिरेश्वर मंदिर बनवाया और कंधार के ब्राह्मणों को अनेक दान दिए।

1181 में सियालकोट मुहम्मद गौरी के अधीन आ गया। 1520 ई० में बाबर ने भी सियालकोट पर आक्रमण किया, परंतु उसी समय शाह बेग अर्गुन के काबुल पर चढ़ आने के कारण उसे वापस लौटना पड़ा।

1716 में बंदा बहादुर की मृत्यु के बाद सिखों ने नवाब कपूर सिंह के नेतृत्व में बुड्ढ़ा दल और तरुण दल बना लिए थे। उन्होंने 1739 में नादिरशाह की लौटती हुई सेना पर आक्रमण किया था। बाद में उन्होंने सियालकोट पर भी आक्रमण करके उन सभी काजियों और मुल्लाओं को मार दिया, जो हकीकत राय के वध के लिए जिम्मेदार थे। तब नादिरशाह के पंजाब के गवर्नर जकारिया खाँ ने 1746 में सिखों को बसोली पहाड़ियों के निकट हराकर लगभग 7000 को मौत के घाट उतार दिया और 3000 को कैद कर लिया। सिख इतिहास में इस घटना को पहला घल्लूघारा नाम दिया गया।

व्यापार मिनांदर के समय में यह शहर व्यापार का एक बड़ा केंद्र था। नगर में बनारसी मलमल, रत्न और बहुमूल्य वस्तुओं की बड़ी-बड़ी दुकानें थीं। नगर में काफी बाग और तालाब थे। मिनांदर के सिक्के भड़ौंच में भी पाए गए हैं, जिनसे संकेत मिलता है कि उसके भड़ौंच के साथ व्यापारिक संबंध थे।

755. हड़प्पा यह स्थान पंजाब प्रांत के मिंटगुमरी जिले में लाहौर से 160 किमी दूर रावी नदी के तट पर है।

पुरातात्विक महत्त्व हड़प्पा सिंधु घाटी सभ्यता के प्रमुख स्थलों में माना जाता है। आर. बी. दयाराम ने 1921 में इस स्थल का निरीक्षण किया तथा यहाँ 1923, 1934 और 1946 में खुदाई की गई। खुदाइयों से ज्ञात हुआ है कि यह एक किलेबंद शहर था तथा यह मोहनजोदाड़ो से भी बड़ा था। यह सिंधु घाटी सभ्यता के उत्तरी भाग की सांस्कृतिक राजधानी थी। यहाँ बैलों, गैंडों, चीतों, मगरमच्छों और हाथियों की मुहरें पाई गई हैं। यहाँ पर बलि प्रथा को साबित करने वाली मुहरें भी पाई गई हैं। इनके अतिरिक्त यहाँ एक किला, छह धान्यागार, सुंदर-सुंदर बर्तन, गहनों के टुकड़े, औजार तथा कुछ लेख भी पाए गए हैं। इन लेखों को अभी तक पढ़ा नहीं जा सका है। इन लेखों से सिद्ध होता है कि यहाँ लिखने की कोई लिपि प्रयोग में लाई जाती थी। हड़प्पा में पत्थर की बनी मानवाकृति और मातृदेवी का चित्र भी मिला है। यहाँ मिले एक विशेष चित्र में मातृदेवी के गर्भाशय से उगता हुआ एक पौधा, भाला पकड़े हुए एक व्यक्ति तथा अपने हाथ ऊपर की

ओर फैलाए हुए एक स्त्री दर्शाए गए हैं। कुछ मुहरों में पीपल के वृक्षों के चारों ओर बाड़े बनाए हुए दिखाए गए हैं। रोपड़ की खुदाइयों से सिद्ध हुआ है कि हड़प्पा की सभ्यता सबसे पुरानी थी, जहाँ इस सभ्यता की दो परतों में धूसर रंग के मिट्टी के चित्रित बर्तन पाए गए हैं।

बांग्ला देश

756. ढाका—राजधानी के रूप में यह शहर आधुनिक बांग्ला देश की राजधानी है। देश में हुई अनेक राजनैतिक उथल-पुथलों के कारण ढाका 1905 तक बंगाल प्रांत का, 1905 से 1911 तक पूर्वी बंगाल प्रांत का, 1911 से 1947 तक पुनः बंगाल प्रांत का, 1947 से 1971 तक पूर्वी पाकिस्तान का और 1971 के बाद बांग्ला देश का प्रमुख शहर रहा है।

व्यावसायिक एवं व्यापारिक महत्त्व अट्ठारहवीं शताब्दी के दौरान ढाका भारतीय हस्तकला का एक प्रमुख केंद्र था। इसकी इसी कला से इसे विदेशों से काफी आमदनी होती थी। यह शहर अपनी मलमल के लिए ज्यादा प्रसिद्ध था। 1787 ई० में इसे मलमल के व्यापार से लगभग 30 लाख रु. आमदनी हुई थी। यह शहर काफी बड़ा था और भारत का मानचेस्टर कहलाता था। परंतु इसके उद्योगों के नष्ट-भ्रष्ट हो जाने के बाद इसके कामगार यहाँ से चले गए और 1817 तक यह एक छोटा सा शहर रह गया।

757. ससाराम यह स्थान पूर्वी बगांल (अब बांग्ला देश) के शाहबाद जिले में है।

पुरातात्विक महत्त्व अशोक ने ससाराम में 258-57 ई०पू० में एक लघु स्तंभ लेख स्थापित करवाया था, जिसमें उसने बुद्ध धर्म में अपना विश्वास प्रकट किया है।

❖❖❖

VII. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशन स्थल (1885 से 1947 तक)

वर्ष	शहर	वर्ष	शहर
1885	मुंबई	1910	इलाहाबाद
1886	कलकत्ता	1911	कलकत्ता
1887	चेन्नई	1912	बाँकेपुर
1888	इलाहाबाद	1913	कराँची
1889	मुंबई	1914	चेन्नई
1890	कलकत्ता	1915	मुंबई
1891	नागपुर	1916	लखनऊ
1892	इलाहाबाद	1917	कलकत्ता
1893	लाहौर	1918	मुंबई और दिल्ली
1894	चेन्नई	1919	अमृतसर
1895	पुणे	1920	कलकत्ता और नागपुर
1896	कलकत्ता	1921	अहमदाबाद
1897	अमरावती (आं.प्र.)	1922	गया
1898	चेन्नई	1923	काकीनाड़ा (गुज.)
1899	लखनऊ	1924	बेलगाम
1900	लाहौर	1925	कानपुर
1901	कलकत्ता	1926	गुवाहाटी
1902	अहमदाबाद	1927	चेन्नई
1903	चेन्नई	1928	कलकत्ता
1904	मुंबई	1929	लाहौर
1905	बनारस	1930	कराँची
1906	कलकत्ता	1931	कोई अधिवेशन नहीं
1907	सूरत	1932	कोई अधिवेशन नहीं
1908	चेन्नई	1933	कलकत्ता
1909	लाहौर	1934	मुंबई

1935	लखनऊ	1942	कोई अधिवेशन नहीं
1936	कोई अधिवेशन नहीं	1943	कोई अधिवेशन नहीं
1937	फैजपुर	1944	कोई अधिवेशन नहीं
1938	हरिपुरा	1945	कोई अधिवेशन नहीं
1939	त्रिपुरि (म. प्र.)	1946	मेरठ
1940	रामगढ़	1947	कोई अधिवेशन नहीं
1941	कोई अधिवेशन नहीं		

ϖϖϖ

VIII. ऐतिहासिक मानचित्र

अशोक का साम्राज्य
रूस
परोपनिशदय
हेरात
काबुल
शाहबाजगढ़ी
मनसेरा
अफगानिस्तान
पुरुषपुर
तक्षशिला
कंधार
चीन
लौरिया ऐराराज
लौरिया नन्दनगढ़
तिब्बत
टोपरा
कालसी
आरकोशिया
ईरान
पाकिस्तान
इन्द्रप्रस्थ
(दिल्ली)
मेरठ
नेपाल
रामपुरवा
भूटान
बैरात
मथुरा
निग्लिव
रूमिनदेई
कौशाम्बी
प्रयाग
सारनाथ
पाटलिपुत्र
मगध
बांग्लादेश
सौराष्ट्र
उज्जयिनी
साँची
रूपनाथ
भारत
गिरनार
ताम्रलिप्ति
पुलीदास
पीटनीखाँस
टोसाली (दौली)
जौगड़ा
सोपारा
संकेत
अशोक का साम्राज्य
प्रान्त की राजधानी
शिलालेख
स्तम्भलेख
बंगाल की खाड़ी
आंध्र
मास्की
स्वर्णगिरि
कोपवाल
एरागुडी
नेलौर
सिद्धपुर
कलिंग
स्केल में नहीं

भारत—150 ई० में
यारकद
खुतान
रूस
कपिसा
हेरात
काबुल
गंधार
अफगानिस्तान
पुरुषपुर
तक्षशिला
क्वेटा
सुई बिहार
पाकिस्तान
ईरान
तिब्बत
मेरठ
इन्द्रप्रस्थ
मथुरा
नेपाल
भूटान
कामरूप
सिन्ध
मालवा
प्रयाग
काशी
पाटलिपुत्र
मगध
बांग्लादेश
बदसा
सौराष्ट्र
उज्जयिनी
साँची
भारत
ताम्रलिप्ति
गिरनार
भड़ौच
नासिक
सोपारा
प्रतिष्ठान
कार्ली
बंगाल की खाड़ी
अमरावती
चोल
पांड्य
संकेत
कनिष्क साम्राज्य
पश्चिमी क्षत्रप
सातवाहन राज्य
कनिष्क की राजधानी
स्केल में नहीं

रूस
काबुल
पुरुषपुर
श्रीनगर
गुप्त साम्राज्य–400 ई० में
तक्षशिला
तिब्बत
ईरान
पाकिस्तान
मेरठ
इन्द्रप्रस्थ
(दिल्ली)
मथुरा
नेपाल
भूटान
कन्नौज
वैशाली
काशी
प्रयाग
पाटलिपुत्र
बांग्लादेश
मदसौर
एरण
बोध गया
उज्जयिनी
सांची
वल्लभी
भृगुकच्छ
भारत
ताम्रलिप्ति
सोपारा
अजंता
एलोरा
स्केल में नहीं

हर्ष के राज्यकाल में भारत
647 ई०

रूस
अफगानिस्तान
काबुल
गजनी
पेशावर
कश्मीर
भारत लगभग 1200 ई० में
लाहौर
मुल्तान
ईरान
पाकिस्तान
गजनवी
साम्राज्य
दिल्ली
तोमर
तिब्बत
नेपाल
भूटान
चौहान
इलाहाबाद
बनारस
पटना
पाल
बांग्लादेश
चालुक्य
परमार
चन्देल
भारत
गंग
चालुक्य
बंगाल की खाड़ी
वेंगी
कांची
तंजौर
श्री
लंका
स्केल में नहीं

अलाउददीन का साम्राज्य
1316 ई०
स्केल में नहीं
काबुल
कांगड़ा
लाहौर
मुल्तान
दिपालपुर
उच्छ
दिल्ली
बदायूं
अवध
मेवात
जैसलमेर
अजमेर
रणथम्भौर
चित्तौड़
चन्देरी
प्रयाग
कड़ा
लखनौती
गौड़
बंगाल
अन्हलवाड़
खम्भात
धार
उज्जैन
भिलसा
भड़ौच
सूरत
एलिचपुर
देवगिरी
वारंगल
तेलंगाना
द्वारसमुद्र
मदुरा
रामेश्वरम्

तुगलक साम्राज्य
1388 ई०
काश्मीर
लाहौर
मुलतान
दिपालपुर
दिल्ली
राजपूताना
मालवा
स्केल में नहीं

बाबर का साम्राज्य
1530 ई०
स्केल में नहीं
पानीपत
दिल्ली
सीकरी
आगरा
जोधपुर
जौनपुर
बनारस
पटना

अकबर का साम्राज्य
1605 ई०
गज़नी
कन्धार
मुलतान
लाहौर
पटना
बिहार
बंगाल
गुजरात
अहमदनगर
गोंडवाना
सूरत
इलाहाबाद
स्केल में नहीं

शिवाजी का राज्य
1680 ई0
ताप्ती न0
सूरत
औरंगाबाद
अहमदनगर
कल्याण
पूना
नलदुर्ग
शोलापुर
हैदराबाद
कोल्हापुर
बीजापुर
बेलगांव
रायचूर
कृष्णा न0
गोदावरी न0
बल्लारी
मैसूर
पोर्ट नोवो
मदुरा
स्केल में नहीं
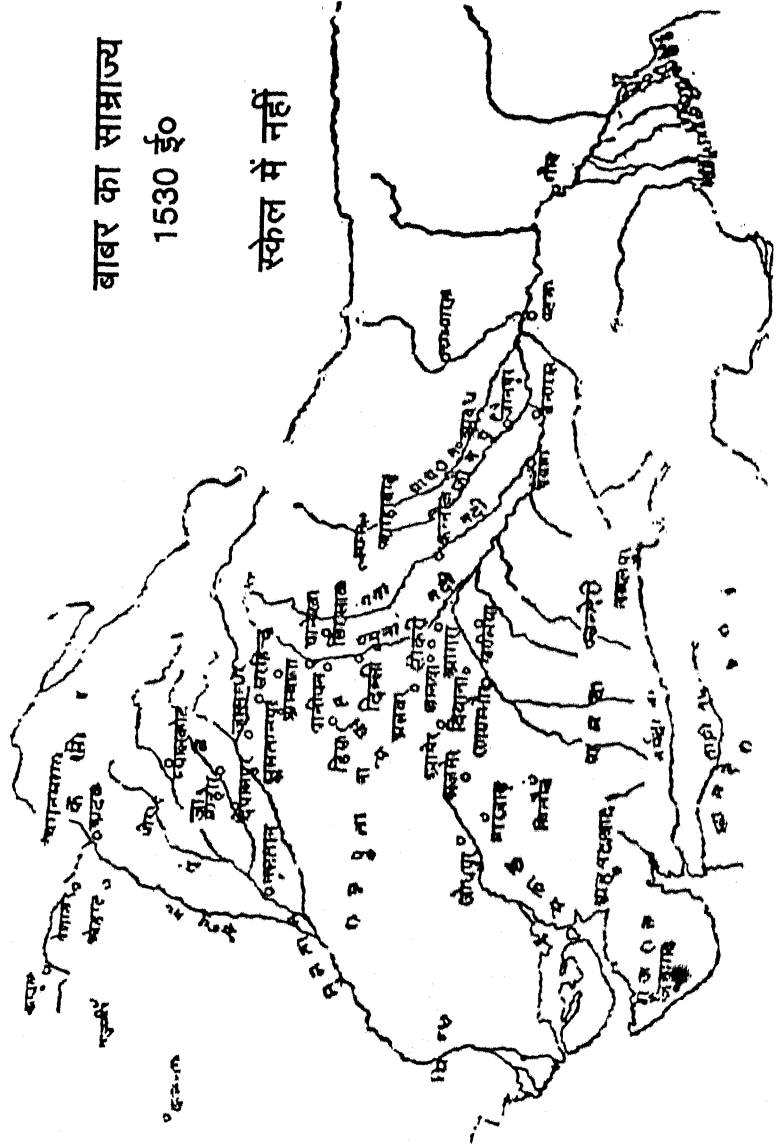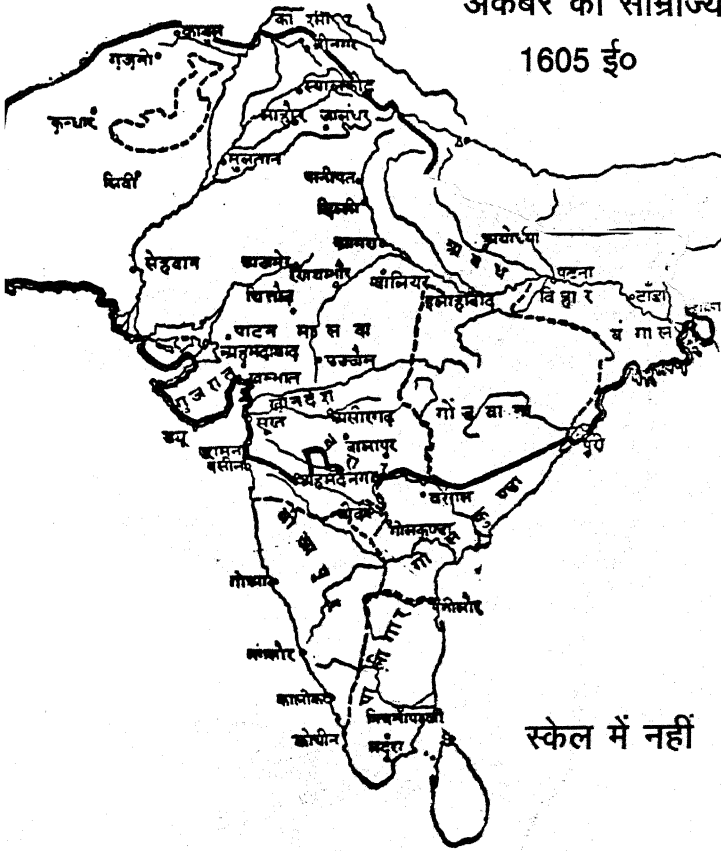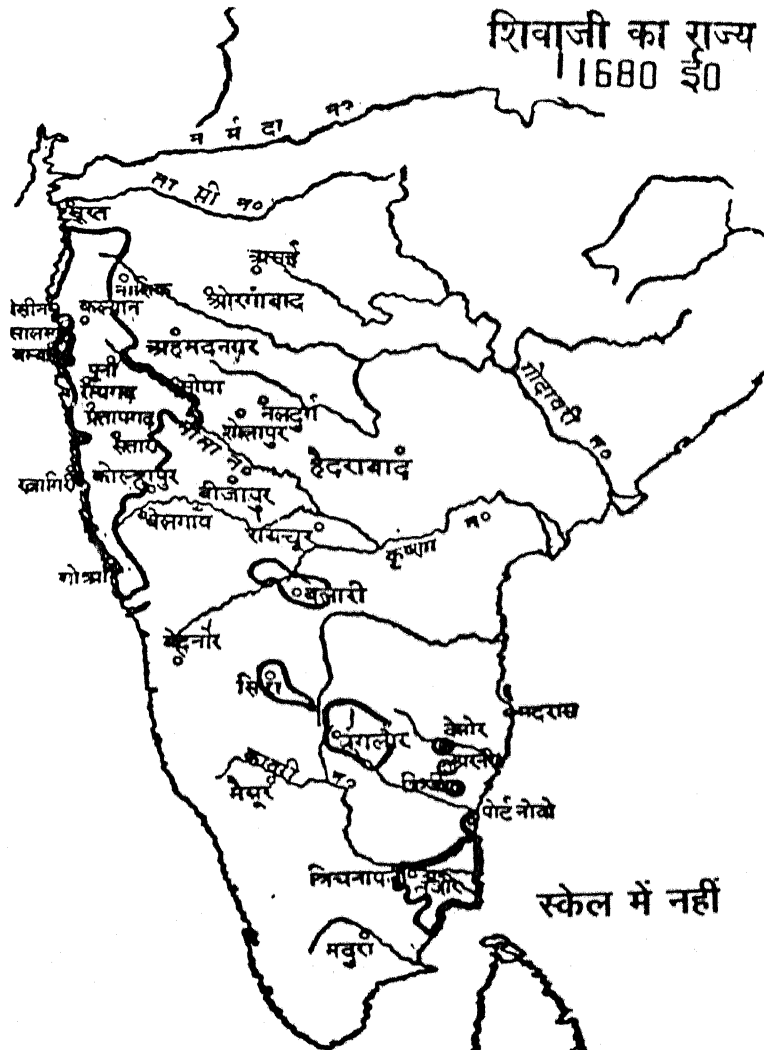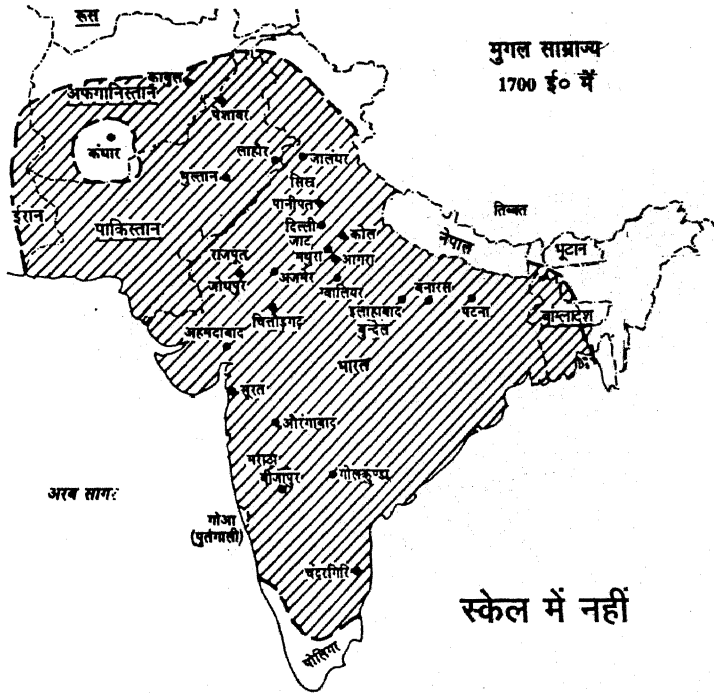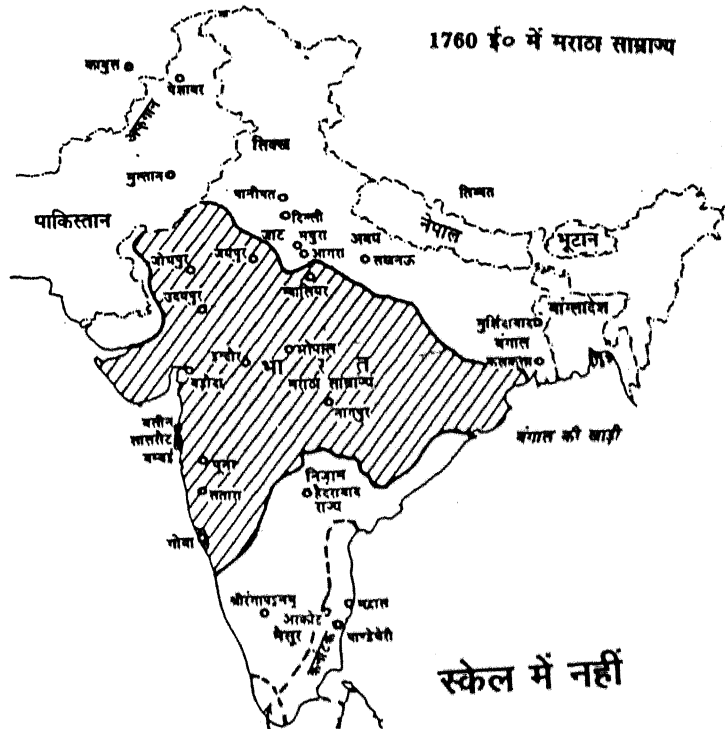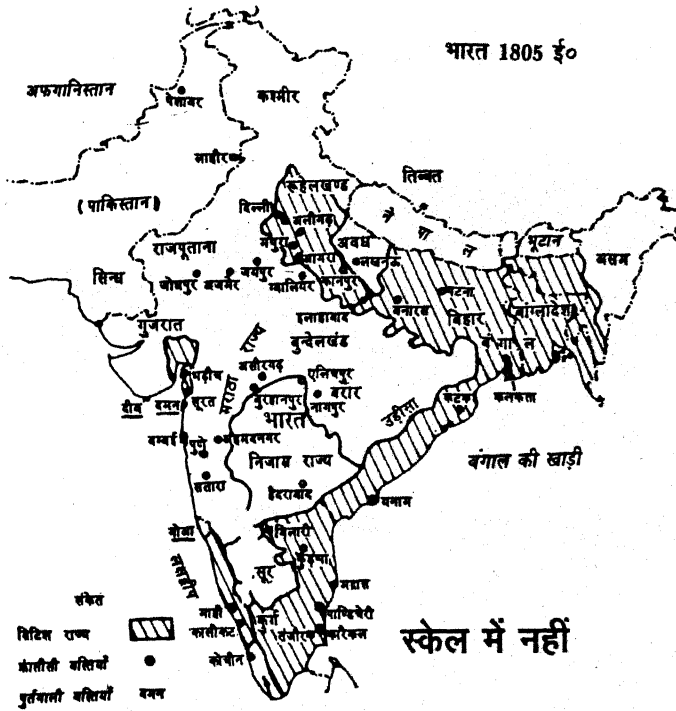
महाराजा रणजीत सिंह का राज्य
अफगानिस्तान
कश्मीर
पेशावर
श्रीनगर
रावलपिण्डी
बन्नू
चीन
जम्मू
चिलियाँवाला
स्यालकोट
डेरा इस्माइल खाँ
कांगड़ा
लाहौर
अमृतसर
जालन्धर
तिब्बत
फिरोजपुर
फरीदकोट
पटियाला
डेरा गाजी खाँ
मुल्तान
नाभा
थानेसर
नेपाल
बहावलपुर
पाकिस्तान
राजपूताना
स्केल में नहीं

भारत 1856 या 1857 ई० में
काबुल
अफगानिस्तान
कश्मीर
पेशावर
लाहौर
मुल्तान
पटियाला
तिब्बत
सिक्किम
नेपाल
भूटान
पाकिस्तान
बहावलपुर
राजपूताना
अजमेर
आगरा
अवध
जयपुर
सिन्ध
जोधपुर
ग्वालियर
इलाहाबाद
लखनऊ
बिहार
झांसी
जैतपुर
बनारस
पटना
बांग्लादेश
अहमदाबाद
होल्कर
बंगाल
भोपाल
गुजरात
सम्बलपुर
कलकत्ता
सूरत
नागपुर
दमन
भारत
बंगाल की खाड़ी
अरब सागर
बम्बई
पूना
सतारा
हैदराबाद
गोआ
नलूर
मैसूर
मद्रास
माही
पाण्डिचेरी
कालीकट
कारैकल
कोचीन
स्केल में नहीं
ट्रावनकोर
श्री लंका

भारत
राजनैतिक
अफगानिस्तान
जम्मू और कश्मीर
चीन
पाकिस्तान
राजस्थान
जयपुर
उत्तर प्रदेश
बिहार
गुजरात
मध्य प्रदेश
महाराष्ट्र
अरब सागर
आन्ध्र प्रदेश
गोआ
कर्नाटक
तमिलनाडु
स्केल में नहीं

भारत
प्रमुख रेलमार्ग
अफ़गानिस्तान
पाकिस्तान
चीन
तिब्बत
भूटान
बांग्ला-देश
कर्क रेखा
म्यनमार
(बर्मा)
अरब सागर
बंगाल की खाड़ी
अंडमान सागर
श्री लंका
स्केल में नहीं

भारत
(नदियाँ)
अफ़गानिस्तान
पाकिस्तान
चीन
तिब्बत
नेपाल
भूटान
बांग्ला देश
सिंधु नदी
झेलम नदी
चिनाब
रावी नदी
व्यास नदी
सतलुज नदी
घग्घर नदी
सांभर
नमक
झील
लूनी नदी
नर्मदा नदी
ताप्ती नदी
महानदी
दामोदर नदी
गंगा नदी
गोदावरी नदी
कृष्णा नदी
कावेरी नदी
चिल्का झील
कच्छ की खाड़ी
खम्भात की खाड़ी
अरब सागर
बंगाल की खाड़ी
कर्क रेखा
मन्नार
श्रीलंका
स्केल में नहीं

IX. संदर्भिका

अज्ञात	प्राचीन भारत का इतिहास।
ओम प्रकाश	प्राचीन भारत का इतिहास, (चौथा संस्करण), विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा० लि०, नई दिल्ली।
जगमोहन नेगी	संपूर्ण भारत के सांस्कृतिक पर्यटन स्थल, तक्षशिला प्रकाशन, 23/4762, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-2
डॉ. ईश्वरी प्रसाद	भारतवर्ष का इतिहास (1963), इंडियन प्रैस (पब्लिकेशन्स) प्रा० लि०, इलाहाबाद।
डॉ. शिव प्रसाद नौटियाल	भारत के वन्य जीव विहार, सामयिक प्रकाशन, दिल्ली।
चतुर्वेदी, द्वारकाप्रसाद शर्मा तथा पं० तारिणीश झा	संस्कृत-शब्दार्थ कौस्तुभ (द्वितीय संस्करण), प्रकाशक रामनारायण लाल, इलाहाबाद।
प्रेरणा स्कूल एटलस	सुमन प्रकाशन प्राइवेट लि०, नई दिल्ली।
विभिन्न पत्रिकाएँ	पर्यटन विशेषाँक
हरिश्चन्द्र वर्मा	मध्यकालीन भारत (750-1540), हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।
हिंदी-7	हरियाणा स्कूल शिक्षा बोर्ड, भिवानी
India 1998	Publications Division, Ministry of information and Broadcasting, Govt. of India.
Khanna and Chopra	An Introduction to Indian History and Culture. Mcmillan Co. of India ltd.
K.K. Bhardwaj	Indian History from Marathas to Mahatama Gandhi (Second edition). Sudha Publications
L. Prasad	Indian History (Modern India), Bookhive Publishers Pvt. Ltd., New Delhi.

Nilkanta Shastri	A History of South India (Fourth edition, Sixth impression), Oxford University Press, Madras.
P.N. Chopra	India, S. Chand & Co., Ram Nagar, New Delhi-55
R.C. Rawat	A Map Study of Indian History (Eighth edition), Surjeet Book Depot, New Delhi.
Robin Danuhorn and Richard Moore	Fodor's India, 1980, Hodder and Stoughton, London.
R.K. Majumdar and A.N. Srivastava	Mughal Rule in India (Second edition), Surjeet Book Depot, New Delhi.
The Hindustan Times	of different dates.
Tourism brochures	of different States and U.Ts.
U.D. Mahajan	India Since 1526 (12th edition), S. Chand & Co., New Delhi.

βββ

IX. वर्णक्रमानुसार सूची*

*इस सूची में स्थल के साथ दी गई संख्या पुस्तक में आई उसकी पृष्ठ सं० है।

ल

व

श

श्र

स

xxx